सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२७

(मई-जुलाई १९२५)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भूमिका

इस खण्डमे मईसे लेकर जुलाई, १९२५ तककी सामग्री सगृहीत है। इन तीन महीनोंकी अवधिमे गांधीजी बगालके दौरेपर थे। इस अवधिकी सबसे प्रमुख घटना है १६ जूनको दार्जिलिंगमे चित्तरंजन दासका देहावसान। इस महान् शोक-प्रसंगकी छाया पूरे खण्डमें देखनेको मिलेगी। चूँकि गांधीजी इन दिनों बंगालमें थे, इसलिए खण्डमें शान्तिनिकेतन और खादी-प्रतिष्ठान-जैसी सस्थाओं तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर और सुरेन्द्रनाथ बनर्जी-जैसे महान् व्यक्तियोंकी चर्चाका बार-बार आना तो स्वाभाविक ही है। स्वदेशी, साम्प्रदायिक एकता और अस्पृश्यता-निवारणको उत्तेजन देनेके लिए उन दिनों सामान्य रूपसे जो देशव्यापी आन्दोलन चल रहा था, उसे स्थानीय परिस्थितियोंसे अलग-अलग छटाएँ और भगिमाएँ मिलती रहती थी। हम देखते है कि इस अवधिमे गाधीजीने राजनीतिक प्रश्नोंकी चर्चा बहुत कम और धीमे स्वरमे ही की और राजनीतिमे उन्होंने जितनी-कुछ रुचि ली, उसका सम्बन्ध अधिकाशत: स्वराज्यवादी दलकी राजनीतिसे ही रहा। उन्हे सबसे अधिक चिन्ता रचनात्मक कार्यक्रमको लागू करनेके साधनके रूपमे काग्रेसके पुनर्गठन की थी। उनके स्वरमे तीव्रता तो इस अवधिके उन अन्तिम दिनोंमे आई, जब ब्रिटेनकी हठधर्मिता अपनी पराकाष्ठापर पहुँच गई। तब उनका यह बदला हुआ स्वर सविनय अवज्ञाको अपनानेकी सम्भावनाओंका स्पष्ट संकेत देने लगा।

राजनीतिक कार्यक्रम और रचनात्मक कार्यक्रम दोनोंको उपयोगी और आवश्यक मान लिया गया। स्वराज्यवादियोंने अपना ध्यान राजनीतिक कार्यक्रमपर केन्द्रित किया और स्वयं गाधीजी तन-मनसे रचनात्मक कार्यक्रमको सम्पन्न करनेमे जुटे रहे। यों दोनों पक्ष एक-दूसरेको ठीक-ठीक समझकर एक-दूसरेकी सहायता करनेका भी प्रयत्न करते रहे। इस अवधिमे रचनात्मक कार्यक्रमके सम्बन्धमे गांधीजीके विचार ज्यादा निखर कर सामने आये। उन्हे इस बातका पूरा विश्वास हो गया कि तत्कालीन स्वदेशी आन्दोलन १९०५-८ के आन्दोलनकी तुलनामे अधिक ठोस आधारपर स्थित था। उनके लेखे, १९०५-८ के आन्दोलनके पीछे यद्यपि एक भव्य कल्पना थी, किन्तु उसमे संगठनका लगभग अभाव था और वह आधारित था बम्बई तथा अहमदाबादकी मिलोंपर, जो अन्तत. बालूकी भीतें साबित हुईं। अब कताई विशिष्ट वर्गोको सर्वसाधारणसे जोड़नेवाला सूत्र बन गई और चरखेके माध्यमसे सबको यह प्रतीति होने लगी कि हम सब एक देशकी सन्तान है। गांधीजीको तो चरखेकी लगन लगी ही हुई थी, अब देशके अन्य लाखों लोगोंको भी उसकी लगन लग गई। उन्होंने चाहा कि उसे शान्तिनिकेतनमे भी और अधिक स्थान दिया जाये (पृष्ठ १८५)। उन्होने देशबन्धु चित्तरंजन दाससे अनुरोध किया कि वे सूत कातना सीखे और निष्ठापूर्वक करोड़ों लोगोंकी खातिर ईश्वरके नामपर आधा घंटा अवश्य काते (पृष्ठ २३६)।

राष्ट्रीय काग्रेसके अपने भीतरी कार्यक्रमका उद्देश्य विभिन्न जातियोंके बीच एकता स्थापित करना था, और हिन्दू-मुस्लिम एकता इस बृहत्तर एकताका प्रतीक थी। अपने दौरोंमे उन्होंने जो-कुछ देखा, उससे उन्हे लगा कि दोनों बडे समुदाय — हिन्दू और मुसलमान — एक-दूसरेको अविश्वासकी दृष्टिसे देखते हैं। १४ मईको नवाखलीमें बोलते हुए उन्होंने इस वैमनस्यके लिए दोनों पक्षोंको दोषी ठहराया और घोषणाकी कि यदि दोनो समुदायोके लोग एक होकर रहनेके लिए कृतसकल्प हो जाये तो ससारकी कोई भी शक्ति उन्हे अलग नही कर सकती। आग्ल-भारतीयोके एक प्रतिनिधिको उन्होने स्पष्ट आश्वासन दिया कि बडे समुदायोंका छोटे समुदायोंके प्रति यह एक पवित्र कर्त्तव्य है कि वे उन्हे सरक्षण दे (पृष्ठ १८७)। उन्होने एक समुदाय द्वारा दूसरेको ठोस सहायता देनेकी सलाह देते हुए लोगोसे बगालके आदर्शका अनुकरण करनेको कहा, "जहाँ बाढके दिनोमे मुख्य रूपसे मुसलमान बस्तियोंकी सहायता उन सगठनोने की थी जिनमे हिन्दुओंकी प्रधानता थी" (पृष्ठ २०६)।

जब किसीने ताना कसते हुए उनसे यह कहा कि और जातियोकी बात तो छोडिए, खुद हिन्दुओमे खान-पान, पूजा-पाठमे न जाने कितनी विभिन्नता है, तो गाधीजीने छूटते ही जवाब दिया "मैं जिस ऐक्यके लिए लालायित हूँ, वह हृदयोका ऐक्य है। यह सभी बन्धन-बाधाओंसे परे है तथा उनके होते हुए भी कायम रह सकता है" (पृष्ठ ३३०)। इस समस्याके प्रति अपने यथार्थवादी दृष्टिकोणका परिचय देते हुए उन्होंने साम्प्रदायिक मतभेदोके बावजूद एनी बेसेट-जैसे लोगो द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए किये जा रहे प्रयत्नोंकी सराहना की। उनके विचारसे उन दोनो ही तरहके लोगोका प्रयत्न सही था — उनका भी जो मतभेदोके बावजूद स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहे थे और उनका भी जो स्वतन्त्रताका मार्ग प्रशस्त करनेके लिए मतभेदोको मिटाना चाहते थे (पृष्ठ ४२३)।

अस्पृश्यताकी समस्या उनके हृदयको मथती रही। अस्पृश्योंको उन्होने मनमे "बदला लेनेकी भावना" रखनेके बजाय "गरिमापूर्ण रुख" अपनानेकी सलाह दी (पृष्ठ १४)। उन्होंने दक्षिणके अन्त्यज सत नन्दका दृष्टान्त सामने रखकर उनसे उनका अनुकरण करनेको कहा। इस सतको उन्होंने "सत्याग्रहकी मूर्ति" कहा (पृष्ठ ७२)। दूसरी ओर उन्होंने सवर्ण हिन्दुओंसे इन तिरस्कृतोंका सत्कार करनेका अनुरोध किया (पृष्ठ २८४)। अस्पृश्यताके पीछे उन्हे घृणाका भाव दिखाई देता था; उन्होंने सवर्णोंसे कहा कि इस भावको हर हालतमे त्याग देना चाहिए (पृष्ठ ३९९)। जो लोग इस सुधार-आन्दोलनकी धीमी प्रगतिसे अधीर हो रहे थे, उनका उचित कर्त्तव्य समझाते हुए उन्होंने कहा कि ऐसे सुधार ऊपरसे थोपे नही जाते; बल्कि वे भीतरसे उद्भूत होते हैं। किन्तु साथ ही उन्होंने स्पष्ट देखा कि अस्पृश्यताके "दुर्गकी नीव दिन-प्रतिदिन खोखली हो रही है।" (पृष्ठ २९९)। उन्होने लोगोको हिन्दू-धर्मकी अपनी यह कल्पना बार-बार समझाई कि वह अपने अनुयायियोंकी सख्याको गिनते रहनेवाला धर्म नही है (पृष्ठ ११०)। इस धर्मकी सम्भावनाएँ तो इतनी विस्तृत हैं कि किसी भी सच्चे हिन्दूको बौद्ध, जैन, ईसाई या मुसलमान, सभी अपने धर्मका अनुयायी मान सकते

है। स्वयं बुद्धका जीवन हिन्दू-धर्मकी भावनासे ओतप्रोत था। उनके लेखे बौद्धधर्म हिन्दू धर्मका ही ऐसा व्यावहारिक रूप था जिसका आचरण सर्वसाधारणके लिए आसान था। तथापि गांधीजी व्यक्तिके अपने पारम्परिक धर्मको उसके जीवन-मरणका सवाल मानते थे। उन्होंने कहा, आदमी जैसे अपनी पोशाक बदल लेता है, वह उसी प्रकार अपना धर्म परिवर्तन नही कर सकता। धर्म तो हृदयका विषय होता है (पृष्ठ १९३–९४)। ईसाई धर्मका प्रचार,करनेवाली महिलाओंकी सभामे बोलते हुए उन्होंने राजनीतिक और धार्मिक बातोंका भेद पूछते हुए कहा, "क्या जीवनके ऐसे कोई एक-दूसरेसे बिलकुल ही अलग-थलग विभाग किये जा सकते है? . . . धर्म-विहीन राजनीतिसे दुर्गंध आती है और राजनीतिसे विच्छिन्न धर्म निरर्थक है" (पृष्ठ २०९)।

उनके कर्म-सकुल जीवनकी सभी कठिनाइयोंमे राम-नाम उनका ऐसा अचूक सम्बल था, जो बराबर उनकी रक्षा करता रहा। हम इसे उनकी आस्थाकी पुंजीभूत अभिव्यक्ति कह सकते है। एक लेखमें रामनामकी महिमा बताते हुए वे स्वीकार करते है: "मेरा निजी जीवन सार्वजनिक हो गया है। दुनियामे मेरे लिए एक भी ऐसी बात नही है जिसे मैं निजी बना कर रखूँ। मेरे प्रयोग आध्यात्मिक है।. . . इन प्रयोगोका आधार बहुत-कुछ आत्मनिरीक्षण है। मैंने 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' की उक्तिके अनुसार प्रयोग किये है। इनके पीछे मेरी यह मान्यता है कि जो बात मेरे विषयमें सम्भव है वह दूसरोंके विषयमें भी सम्भव होगी" (पृष्ठ १११)। उनका विचार था कि धार्मिक व्यक्ति विनयशील तो होगा ही, इसलिए स्वयंको सुधारे बिना संसारको सुधारनेके लिए व्यग्र रहनेवाले सुधारक उन्हें नहीं रुचते थे। उनका खयाल था कि आध्यात्मिक प्रगति ईश्वरके नामपर की गई सेवाओं द्वारा फलित होती है। १६ जुलाईको च० राजगोपालाचारीको लिखे पत्रमें वे कहते है: "शारीरिक और बौद्धिक तौरसे जिस वातावरणमे मैं रहता हूँ, मुझपर उसका बिलकुल असर नही पडता।. . .आपकी साधना इसीमे है कि आप अपने क्षेत्रका विकास करे तथा हाथ-कताईके अपने सिद्धान्तको व्यावहारिक रूप दे" (पृष्ठ ३९९)।

अहिंसामे उनकी आस्था दृढतर होती चली गई और यह आस्था नित्य नूतन रूपोंमे अभिव्यक्त होती रही। उन्होंने १५ जूनको शरतचन्द्र बोसको लिखा: "अहिंसा तो प्रेम है। वह मौन और करीब-करीब गुप्त रूपसे अपना असर पैदा करती है।. . . मित्रों और सगे-सम्बन्धियोंके बीच प्रेमका कोई करिश्मा नही होता। वे एक-दूसरेको स्वार्थवश प्यार करते है; प्रबुद्धताके आधारपर नहीं। वह तो तथाकथित विरोधियोंके बीच ही अपना करिश्मा दिखाता है। इसलिए जरूरत इस बातकी है कि आदमी जितनी भी दयालुता और दानवीरता दिखा सकता है वह सारीकी-सारी अपने विरोधी या आततायीके प्रति दिखाई जाये" (पृष्ठ २४९-५०)। वे क्रान्तिकारियोंसे भी अपनी बात कहते रहे। उदाहरणके लिए हम "फिर वही" (पृष्ठ ४७–५२) और "कूदनेको तत्पर" (पृष्ठ १३५–४०) शीर्षक लेख ले सकते है। उन्होंने उनके साहस और आत्मबलिदानकी भावनाकी सराहना की, किन्तु साथ ही बडे स्पष्ट शब्दोंमे उन्होंने अहिंसामे अपनी अडिग आस्थाकी घोषणा की। उनके विचारसे तबतक स्वयं

वे अथवा देश द्वैतभावसे ऊपर नहीं उठ पाया था। इसलिए उन्होंने सार्वजनिक अहिंसाका प्रचार तो नही किया, किन्तु क्रान्तिकारियोंको समझाते हुए उन्होने कहा "अपने पैर धरतीपर ही जमाये रखे और हिमालयके शिखरोंपर उडाने न भरे, जहाँ कि 'महाभारत'के कवि अर्जुन तथा दूसरे वीरोंको ले गये थे। . . . मेरे लिए भारतवर्षका मैदान ही काफी है" (पृष्ठ १४०)।

ईसाई धर्म-प्रचारकोंकी एक सभामे उन्होंने कहा: "मुझे आपसे पूरी नम्रताके साथ कहना होगा कि मैंने हिन्दू-धर्मको जिस रूपमे जाना है, उस रूपमे वह मेरी आत्माको पूरी शान्ति देता है; उससे मेरा समस्त अस्तित्व आप्लावित है और जो शान्ति मुझे 'भगवद्गीता' और उपनिषदोंको पढ़कर मिलती है, वह 'गिरि-प्रवचन'को पढकर भी नही मिलती। यह बात नही है कि मै उसमे बताये गये आदर्शका मूल्य नही समझता, . . किन्तु मुझे आपके सामने स्वीकार करना चाहिए कि जब मेरा मन शकाओ और निराशाओंसे घिर जाता है और जहाँतक दृष्टि जाती है, मुझे प्रकाशकी एक किरण भी नही दिखाई देती, तब मै 'भगवद्गीता'की शरण लेता हूँ, और उसमे मुझे कोई-न-कोई शान्तिदायी श्लोक मिल ही जाता है और तब मै दारुण दु खके बीच भी तत्काल मुस्करा उठता हूँ। मेरे जीवनमे सासारिक दु ख और शोकके न जाने कितने प्रसंग आये हैं, और अगर वे मुझपर कोई खरौंच नही छोड पाये तो इसका कारण 'भगवद्गीता'की शिक्षा ही है" (पृष्ठ ४५१)। एक सत्यान्वेषीके नाते वे मौनकी अद्भुत क्षमताओंसे परिचित थे। दक्षिण आफ्रिकामे ट्रैपिस्ट मठमे जाकर उन्होंने जो-कुछ देखा और अनुभव किया, उसे वे यावज्जीवन नही भूल पाये। वे कहते हैं: "यदि हम उस मूक और क्षीण स्वरको सुनना चाहते है जो हमारे भीतर सदा उठता रहता है, तो स्वयं लगातार बोलते रहकर उसे नही सुना जा सकता" (पृष्ठ ४५३)।

इस प्रकार राजनीतिक धूल-धक्कड़के बीच गाधीजीका मन निरन्तर अध्यात्मके धरातलपर विचरण करता रहता था। किन्तु, इसका मतलब यह नही है कि वे यथार्थके प्रति सजग नही थे या राजनीतिक प्रवृत्तियों और विचारोके सही मूल्याकन और दिशा-निर्देशनमें उन्होने कुछ कम रुचि ली। स्वराज्यवादी दलके नेता चित्तरजन दास और मोतीलाल नेहरूके प्रति उन्होने पुन. अपना विश्वास व्यक्त किया, और जब चित्तरंजन दासके निधनसे देश शोक-संतप्त हो उठा तो उन्होने उनकी स्मृतिको उन उपायोंसे सम्मानित करनेका प्रयत्न किया जिनसे देशबन्धुकी परम आकाक्षा — अर्थात् सर्वसाधारणका कल्याण — सिद्ध हो सकती थी। स्वराज्यवादी दलके नेताओंमें उनको इतना अधिक विश्वास था कि उनकी स्वीकृतिके बिना वे काग्रेसमे कुछ भी करनेको तैयार नही थे। भारत मन्त्री लॉर्ड बर्कनहेडके भ्रामक वक्तव्यके विषयमे १८ जुलाईको लिखते हुए उन्होंने घोषणा की कि एक ओर पण्डित मोतीलालजी विधानसभामें लडते हुए देशबन्धुकी जगह स्वराज्य दलका नेतृत्व करेगे और दूसरी ओर मै सत्याग्रहके लिए वातावरण तैयार करनेमे जुटा रहूँगा (पृष्ठ ४०६–७)। व्यक्तिशः रचनात्मक कार्य-क्रमको सर्वाधिक महत्त्व देते हुए भी स्वराज्यवादी दलकी खातिर काग्रेसको प्रमुख रूपसे

एक राजनीतिक दल बना देनेपर उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी। सच तो यह है कि वे कांग्रेसको पूर्ण रूपसे पं० मोतीलाल नेहरूके हाथों सौंप देनेके लिए तत्पर थे। किन्तु इस प्रकार प्रसंग आनेपर संघर्ष छेड़ देनेकी तैयारी करते हुए भी वे अंग्रेजोंके प्रति मैत्री-भाव रखनेकी नीतिपर दृढ़ बने हुए थे। इसके प्रमाण-रूपमें २८ जुलाईको फ्रेड ई० कैम्बेलको लिखे गये उनके पत्र और उससे कुछ ही दिन पूर्व एक यूरोपीय मित्रसे कही गई उनकी इस बातका उल्लेख किया जा सकता है कि "मैं अंग्रेजोंके साथ सहयोग करनेके लिए व्यग्र हूँ।" राजनीतिमें उन्होंने अपने आचरणका सार एक वाक्यमें रखते हुए कहा: "असहयोग किसी व्यक्तिके कृत्योंसे किया जाता है; खुद व्यक्तिसे नहीं" (पृष्ठ ८६)।

भारतीय राष्ट्रवादको सर्वथा सही परिप्रेक्ष्यमें प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा: "किसी व्यक्तिके लिए राष्ट्रवादी बने बिना अन्तर्राष्ट्रवादी बनना असम्भव है। अन्तर्राष्ट्रवाद उसी अवस्थामें सफल होगा जब राष्ट्रवाद मजबूत होगा, अर्थात् जब भिन्न-भिन्न देशोंके लोग सुसंगठित होकर एक आदमीकी तरह मिलजुलकर सारे काम कर सकेंगे।. . .भारतका राष्ट्रधर्म. . .सारी मनुष्य-जातिकी हित-साधना और सेवाके लिए अपनेको सुसंगठित या पूर्ण रूपसे विकसित करना चाहता है। मुझे अपनी देशभक्ति या अपने राष्ट्रवादके विषयमें कोई सन्देह नहीं है। ईश्वरने मुझे भारतवर्षके लोगोंके बीच जन्म दिया है, इसलिए मैं उनकी सेवामें गफलत करूँ तो मैं अपने सिरजनहार-का अपराधी बनूँगा। यदि मैं उनकी सेवा करना नहीं जानता तो मुझे मानव-जातिकी सेवा करना कभी नहीं आयेगा। और जबतक मैं अपने देशकी सेवा करता हुआ किसी दूसरे राष्ट्रको नुकसान नहीं पहुँचाता तबतक मैं पथभ्रष्ट नहीं हो सकता" (पृष्ठ २५७)। इस प्रकार, कहा जा सकता है कि भारतका स्वतन्त्रता संग्राम एक ऐसे बृहत्तर विश्वव्यापी आन्दोलनका ही अंग था जो समस्त मानव-जातिके कल्याण और हित-साधनसे जुड़ा हुआ था।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गाधी स्मारक निधि व संग्रहालय, नई दिल्ली; राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली; सार्वजनिक पुस्तकालय, इलाहाबाद; श्री काशीनाथ न० केलकर, पूना; श्री छगनलाल गाधी, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्री पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास; श्री मीराबहन, गादेन, आस्ट्रिया; श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता; श्रीमती सुशीलकुमार रुद्र, इलाहाबाद; तथा 'बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने'; और 'बापुनी प्रसादी', इन पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा निम्नलिखित समाचारपत्रों और पत्रिकाओके आभारी है: 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'नवजीवन', 'फॉरवर्ड', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'यंग इडिया', 'सर्च-लाइट', 'स्टेट्समैन', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गांधी स्मारक सग्रहालय, इंडियन कौसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली; साबर-मती सग्रहालय और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली और कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायताके लिए सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका फोटो विभाग, नई दिल्ली; हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

पाठकोंको सूचना

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमे अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही अनुवादकी भाषा सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके सक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। यह ध्यान रखा गया है कि नामोंको सामान्यत: जैसे बोला जाता है वैसे ही लिखा जाये। जिन नामोंके उच्चारण सदिग्ध हैं उनको वैसा ही लिखा गया है, जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोंमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीचमे चौकोर कोष्ठकोंमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधी-जीने किसी लेख, भाषण, वक्तव्य आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द, जो गाधीजीके कहे हुए नही है, विना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमे छापे गये हैं।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है; परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है, वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमे की गई है और जहाँ आवश्यक हुआ, उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' के अनेक सस्करण होनेसे उनकी पृष्ठ संख्याएँ विभिन्न हैं; इसलिए हवाला देनेमे केवल उनके भाग और अध्यायका ही उल्लेख किया गया है।

साधन-सूत्रोंमे 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागजपत्रोका और 'सी० डब्ल्यू०' कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय) द्वारा सगृहीत पत्रोंका सूचक है।

पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ सामग्री परिशिष्टोंमें दे दी गई है। साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ अन्तमे दी गई हैं।

विषय-सूची

परिशिष्ट

चित्र-सूची

१. सन्देश : जनताके लिए

मुझे आसमानपर चढ़ानेसे कोई लाभ नही। यदि आप सचमुच मुझे खुश करना चाहते हैं तो मेरी सलाहपर चलिए।

महिलाओं और पुरुषों, सभीसे मेरी यही प्रार्थना है कि आप अपनी जेबके मुताबिक ज्यादासे-ज्यादा जितना भी बन पड़े उतना खद्दर खरीदे।

चन्द पैसे शायद आपके लिए बड़ी चीज नही है, किन्तु उन गरीब ग्रामीणोके लिए तो वे बड़ी नियामत है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १-५-१९२५

२. भेंट : 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिसे

कलकत्ता
१ मई, १९२५

श्री गांधीसे सबसे पहले वर्तमान राजनीतिक परिस्थितिमें यूरोपीयों द्वारा अपनाये गये रुखके बारेमें उनके विचार और समय-समयपर राजनीतिक समस्याओंके हलके लिए जो तरह-तरहके रामबाण बतलाये जाते है, उनकी भूल-भुलैयाके बीच एक कोई स्पष्ट नीति निरूपित करनेमें अनेक लोगोंको जो कठिनाई महसूस होती है, उसके बारेमें उनकी राय पूछनेपर उन्होंने उत्तर दिया :

राजनीतिक चिन्तनमें लोगोंके पथ-प्रदर्शनके लिए कोई संगठन होना चाहिए और राष्ट्रीय कांग्रेसको राष्ट्रीय भावनाका प्रतिनिधित्व करना चाहिए। वर्तमान कार्यक्रमके दो पक्ष हैं — आन्तरिक और बाह्य। आन्तरिक पक्षका उद्देश्य भी जातियोंकी एकता सम्पादित करना, ('हिन्दू-मुस्लिम एकता'का अभिप्राय भी यही है), हिन्दुओं द्वारा अस्पृश्यता-निवारण, चरखा और खद्दर है।

बाह्य पक्षमें स्वराज्यवादी दल द्वारा कौंसिलोंमें किया जानेवाला काम आता है; यह दल राष्ट्रीय कांग्रेसका एक अविभाज्य अंग है। सारा राष्ट्रीय कार्यक्रम इतना ही है।

भारतकी आम राजनीतिक परिस्थितिके सम्बन्धमें विचार व्यक्त करनेके लिए कहनेपर, महात्मा गांधीने कहा :

निश्चय ही, मैं निराशावादी नही हूँ, किन्तु मुझे आशाके ज्यादा आसार नजर नही आते। जब कभी हमें अपने आन्तरिक कार्यक्रममें अर्थात् भारतकी सभी

जातियोकी एकता, अस्पृश्यता-निवारण और चरखेके विकास तथा खद्दरके उपयोगके कार्यक्रममें कोई स्पष्ट सफलता दिखने लगेगी, तभी मुझको भी आशा दिखाई देने लगेगी।

"ब्रिटेनके घोषित मित्र" की हैसियतसे मुझे खेदके साथ कहना पड़ता है कि मुझे उनके हृदय-परिवर्तनके कोई चिह्न नहीं दिखाई पड़ते।

यूरोपीय लोग कार्यक्रमके आन्तरिक तथा बाह्य दोनो ही पक्षोको अपना सहयोग दे सकते है और मैं जो बार-बार कहता रहा हूँ, फिर उनसे वही कहता हूँ कि वे कार्यक्रमके दोनो पक्षोपर इस दृष्टिसे विचार करके देखे। जहाँतक बाह्य पक्षका ताल्लुक है अगर उनको इस बातका भरोसा हो जाये कि हम जो कहते है वही करना भी चाहते है और सम्भव होनेपर भी हम अग्रेजोको देशसे बाहर निकाल देने या अग्रेजोसे नाता तोड़ देनेके लिए कतई उत्सुक नही है तो उनको हमारे साथ सहयोग करना चाहिए।

असहयोगके प्रश्नके बारेमें श्री गांधीने कहा:

जहाँतक राष्ट्रका सम्बन्ध है, असहयोगका कार्यक्रम स्थगित कर दिया गया है, किन्तु जहाँतक मेरा अपना सम्बन्ध है, यह स्थगित नही किया गया है; यद्यपि इसे वैयक्तिक रूपसे स्थगित करना आज कोई अधिक अर्थ नही रखता। मैं कभी कौन्सिलमे नही गया; किन्तु मेरे खयालसे कमसे-कम वर्तमान परिस्थितिमे इसे उचित मानना मेरी एक मजबूरी ही है। हालमे ही मुझे जेलकी जो सजा काटनी पड़ी थी, उसके कारण मैं चाहनेपर भी परिषद्में प्रवेश नही कर सकता। और वकालत मैंने बहुत दिन हुए छोड दी थी, किन्तु अब 'सोसाइटी ऑफ इनर टेम्पल'[1] ने मेरी सनद छीनकर मेरे प्रलोभनका अन्तिम सहारा भी मुझसे छीन लिया है।

इस तरह मेरा असहयोगका जो रूप अब रह गया है, वह श्री दासके शब्दोमे एक "मन. स्थिति"-भर है। परन्तु यह एक ऐसी मन स्थिति है जिसे मैं व्यक्तिगत तौरपर बड़ा महत्त्व देता हूँ, क्योकि अब सक्रिय असहयोगी न रहनेपर मैं कही अधिक प्रभावशाली ढगसे अग्रेजोसे बात कर सकता हूँ। मैं उनसे कह सकता हूँ कि मैं सचमुच उनका मित्र हूँ और मित्रके नाते बतलाना चाहता हूँ कि मुझे उनके हृदय-परिवर्तनके अभी कोई आसार दिखाई नही पडते।

मैं जन्मजात सहयोगी हूँ, किन्तु मेरे लिए असहयोग आवश्यक हो गया था। अब मैं उस अवसरकी प्रतीक्षामें हूँ जब मैं फिरसे हार्दिक सहयोगी बननेकी घोषणा कर सकूँ।

श्री गांधीने हिन्दू-मुस्लिम एकताका उल्लेख करते हुए कहा:

मैंने अपने दौरेमे देखा है कि दोनो सम्प्रदायोमे परस्पर अविश्वास और भय है, किन्तु मुझे इसमे जरा भी सन्देह नही कि निकट भविष्यमे दोनो सम्प्रदायोमें एकता स्थापित हो जायेगी। दोनो ही पक्ष इसे एक राष्ट्रीय आवश्यकता मानते है।

१. लन्दनकी उन चार सस्थाओंमें से एक, जिन्हें लोगोको बैरिस्टरी करनेकी सनद देनेका एकाधिकार प्राप्त है।

श्री गांधीने आगे कहा कि इस एकताकी स्थापनासे पहले, हो सकता है कि दोनोंमें टकराव भी हो; उनके टकरावके रूपमें आनेवाली विपत्ति टले चाहे न टले, इतना तो सर्वथा निश्चित है कि आखिरकार दोनोंमें एकता होकर रहेगी।

श्री दासके घोषणा-पत्र तथा समझौतेकी उनकी शर्तोंके बारेमें पूछे जानेपर, श्री गांधीने कहा :

मैं जबतक श्री दाससे परामर्श नही कर लेता तबतक मै चाहूँगा कि मैं उसपर कुछ न कहूँ, मौटे तौरपर मैं इतना जरूर कह सकता हूँ कि समझौतेके अन्तर्गत और समझौता न होता तो भी मेरा कर्त्तव्य है कि मै स्वराज्यवादी दलकी या व्यक्तिगत रूपसे श्री दासकी राजनीतिक गतिविधियोमे कोई अड़चन पैदा न करूँ।

परमश्रेष्ठ वाइसरायके[1] इंग्लैंड जानेके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट करनेके लिए कहनेपर, श्री गांधीने कहा :

मै नहीं जानता कि जो बातचीत चल रही है वह किस प्रकारकी है और मैं अखबारोके विवरणोके आधारपर कोई राय नही बनाना चाहता, विशेषकर ऐसे समय जब कि मुझे अखबारोका एक उदासीन पाठक बननेपर विवश होना पड़ा है। बाजारोमे चलनेवाली बहसोमें मेरी कभी भी दिलचस्पी नही रही। मै नही जानता कि लॉर्ड रीडिंगका उद्देश्य क्या है, मै लॉर्ड बर्कनहेडके[2] भाषणका फलितार्थ भी नही समझा हूँ और परदेके पीछे क्या हो रहा है इसके बारेमें तो और भी कम जानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, २-५-१९२५

३. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे

कलकत्ता
१ मई, १९२५

एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिने आज दोपहर बाद महात्मा गांधीसे भेंट की। उस समय वे कताई कर रहे थे। दास-बर्कनहेडकी बातचीत का उल्लेख करते हुए, महात्माजीने कहा कि मैं तबतक कोई वक्तव्य नहीं दूंगा जबतक कि मै खुद श्री दाससे मिल नहीं लेता। इस समय कोई वक्तव्य देकर मैं उनके मार्गमें कोई अड़चन पैदा नहीं करना चाहता।

मैं बंगालमे श्री दासके कार्यमें बाधा डालने नही बल्कि उन्हें यथाशक्ति सहायता पहुँचाने आया हूँ।

१. लॉर्ड रीडिंग (१८६०–१९३५); इंग्लैंडके मुख्य न्यायाधीश, १९१३–२१; भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल, १९२१-२६; विदेश मन्त्री, १९३१।

२. भारत-मन्त्री १९२४-२८।

बंगालके दौरेकी अवधि बढ़ा देनेके उद्देश्यके बारेमें पूछनेपर, श्री गांधीने कहा कि मैं बंगालमें खादीके प्रचारकी सम्भावनाओंका पता लगाने, अस्पृश्यताकी समस्याका अध्ययन करने और हिन्दू-मुसलमानोंके पारस्परिक सम्बन्धोंको समझनेके लिए आया हूँ। मैंने बहुत दिनोंसे बंगालके कुछ स्थानोंका दौरा करनेका वचन दे रखा था। दक्षिण भारतका दौरा समाप्त करनेके बाद जैसे ही मुझे अवसर मिला मैंने उसका उपयोग बंगाल आनेके लिए किया है। मैं अपनेको स्वस्थ अनुभव कर रहा हूँ और मुझे विश्वास है कि मैं बंगालका कार्यक्रम पूरा कर लूंगा।

प्रतिनिधिने पूछा कि यदि हस्तांतरित विभागोंको और अधिक शक्ति दे दी जाये और औपनिवेशिक स्वराज्यके लिए एक सम्भावित तिथिकी घोषणा कर दी जाये तो आपका क्या रुख होगा? श्री गांधीने मुस्कराते हुए उत्तर दिया:

जब मैं जानता हूँ कि कल ही मैं श्री दाससे मिल सकता हूँ और उनसे बात-चीत कर सकता हूँ, मुझे ठीक-ठीक स्थितिका पता चल सकता है, तब मैं मात्र अनु-मानका सहारा क्यों लूं?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-५-१९२५

४. भाषण: कलकत्ताकी सार्वजनिक सभामें[1]

१ मई, १९२५

मित्रो,

मैं हिन्दुस्तानीमें काफी बोल चुका हूँ और मुझे आशा है कि काफी श्रोताओंने मेरी टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी समझ भी ली है। मुझे इस बातसे हार्दिक वेदना होती है कि जब कभी मैं दक्षिणमें या बंगालमें आता हूँ तो मुझे शिक्षित भाइयोंको अपनी बात समझानेके लिए अंग्रेजीमें बोलनेपर मजबूर होना पड़ता है। मैं चाहता हूँ कि दक्षिण और बंगालके लोग आलस्य छोड़ दें और अपनी मातृभाषाके ज्ञानके साथ-साथ हिन्दी या हिन्दुस्तानीका भी अच्छा ज्ञान प्राप्त करनेका संकल्प कर डालें। हिन्दी, केवल हिन्दी ही भारतमें अन्तर्प्रान्तीय विनिमयकी भाषा बन सकती है। अंग्रेजीको, जैसा कि उसे होना चाहिए, अन्तर्राष्ट्रीय राजनयिक भाषा, और संसारके विभिन्न राष्ट्रोंकी पारस्परिक विचार-विनिमयकी भाषा रहने दिया जाये। किन्तु जो विशेष काम हिन्दी या हिन्दुस्तानीसे सध सकता है, वह अंग्रेजीसे कभी सम्भव नहीं है। आपको यह जानना चाहिए कि भारतके करीब २० करोड़ लोग मेरी टूटी-फूटी हिन्दु-स्तानी समझ लेते हैं। लोगोंको ऐसा कहनेका अवसर मत दीजिए कि भारतके १०

१. मिर्जापुर पार्कमें हुई इस सभामें करीब १० हजार लोग उपस्थित थे। सभाकी अध्यक्षता श्री प्रफुल्लचन्द्र रायने की थी।

करोड़ लोग भारतके २० करोड़ लोगोपर अपनी भाषा या अंग्रेजी भाषा लादना चाहते हैं।

मैंने अपने भाषणके प्रारम्भमे बताया है कि आज सुबह १४८, रसा रोडमे प्रवेश करते समय मुझे कितना दु:ख हुआ। मै जानता हूँ कि वह भवन अब देशबन्धु दासका नही रहा। मै जानता था कि वे उस सुन्दर प्रासादको न्यासियोको सौपनेका विचार कर रहे हैं ताकि वे अपनी धन-सम्पदाके इस एक रहे-सहे चिह्नसे भी अपने-को मुक्त कर सके। धन-सम्पदाके नामपर केवल यही उनके पास बचा था। लेकिन अभीतक दुनियामे रमे हुए मेरे जैसे दुनियादार आदमीने जब यह जानते हुए उस भवनमे कदम रखा कि उसके प्रख्यात स्वामीने स्वेच्छया उसके स्वामित्वसे अपने आप-को वचित कर लिया है तो मेरी आँखे भर आई। मेरा मन यह सोचकर कसक उठा कि यह घर अब दासका नही है और जब मैंने यह सुना कि वे अभीतक अपने गिरे हुए स्वास्थ्यको सँभाल नही पाये है तो मुझे और अधिक पीडा हुई। उनका पैंसिलसे लिखा सक्षिप्त किन्तु सुन्दर और प्यार-भरा सन्देश पढकर तो मेरी पीड़ा कई गुनी बढ़ गई। उस सन्देशमे उन्होने लिखा था कि दोगुना भार सहन करना उनके सामर्थ्यसे बाहर हो गया था, इसीलिए वे पहले ही फरीदपुर पहुँच गये थे। ईश्वर उन्हें इस देशकी सेवाके लिए, जिसे वे इतना अधिक प्यार करते हैं, स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन प्रदान करे।

आप मुझसे यह आशा नही करेगे कि मै राजनीतिक स्थितिके बारेमें कुछ कहूँ। एक समाचारपत्रके सवाददाताने मुझे बताया कि लॉर्ड बर्कनहेड और देशबन्धु दासके बीच वार्ता चल रही है। मुझे इस प्रकारकी किसी भी वार्ताकी कोई जानकारी नही है; किन्तु मै निश्चित रूपसे जानता हूँ कि देशमे आज एक ऐसी स्थिति है जिसे हम राजनीतिक स्थिति कह सकते हैं। किन्तु इस समय उस राजनीतिक स्थितिमे मुझे ज्यादा दिलचस्पी नही है। मैं अपने समयका बिलकुल ठीक-ठीक उपयोग करना चाहता हूँ। मैंने जान-बूझकर स्वराज्यवादी दलको अपनी आम मुख्तारी सौप दी है। वह कांग्रेसका एक अभिन्न अंग है। कांग्रेसके राजनीतिक कार्यक्रमको चलानेकी जिम्मेदारी उसीपर है और चूँकि मुझे पूरा भरोसा है कि स्वराज्यवादी दल राज-नीतिक स्थितिको सँभालनेकी योग्यता रखता है और चूँकि जहाँतक परिषद् सम्बन्धी कार्यक्रमका प्रश्न है, देशबन्धु और पण्डित मोतीलाल नेहरूकी विवेकबुद्धिपर मुझे पूरा भरोसा है, इसलिए जबतक वे खुद न चाहे तबतक उनके क्षेत्रमें दखल देना मेरी धृष्टता ही होगी। इस समय तो ऐसा कोई भी कारण दिखाई नही पडता कि वे [कौंसिलोसे सम्बन्धित किसी बातमे] मेरा हस्तक्षेप चाहे या मेरी राय ले। जब कभी वे चाहेगे मैं उनकी सेवामे हाजिर ही हूँ। किन्तु अधिक महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि जबतक मै देशबन्धु दाससे बात नही कर लेता तबतक मैं राजनीतिक परिस्थितिके बारेमें अपनी कोई निश्चित राय नही दे सकता। मैं स्वराज्यवादी दल या देशबन्धु अथवा स्वराज्यवादी दलके किसी एक सदस्यके रास्तेमे अड़चन पैदा करनेके लिए बंगाल नही आया हूँ, और न इसके लिए सारे देशका दौरा कर रहा हूँ। मैंने ईश्वर-

को साक्षी मानकर संकल्प किया है कि मै अपनी शक्ति-भर इस दलकी सहायता करूँगा। मैने संकल्प किया है कि मै इस दलके कार्यक्रममे हस्तक्षेप करनेकी वात मनमे भी नही आने दूंगा। मैने अपना तन-मन इसके कार्यक्रममे नही लगा दिया है, इसका मात्र कारण यही है कि मेरी अपनी कुछ सीमाएँ हैं, और मैं इस दलकी नीतिसे पूर्णतया सहमत नही हूँ। किन्तु इसका यह अर्थ नही कि मुझे उनकी सहायता नही करनी चाहिए। इसका यह भी अर्थ नही कि उनकी नीति देशके लिए हानिकारक है। इसका इतना ही अर्थ है कि हममे, राजनीतिक कार्यक्रम और रचनात्मक कार्यक्रम इन दोनोमें से किसे कितना महत्त्व दिया जाये और किसपर अपेक्षाकृत अधिक जोर दिया जाये — इस वातको लेकर मतभेद है। मेरी श्रद्धा तो रचनात्मक कार्यक्रमपर ही है। मै जितना ही अधिक आत्म-विवेचन करता हूँ उतना ही अधिक यह महसूस करता हूँ कि इग्लैडके वेजोड राजनयिकोके साथ कूटनीतिक दाँव-पेच करनेकी अपेक्षा देशकी आत्म-शक्तिके विकासके लिए रचनात्मक कार्यक्रमको क्रियान्वित करनेके लिए ही मै अधिक उपयुक्त हूँ। मै आपके सामने स्वीकार करता हूँ कि जबतक मुझे यह नही लगेगा कि हमारे अन्दर आत्मिक शक्ति मौजूद है, तबतक मुझे उनमें से किसी भी अधिकारीके साथ वार्ता चलानेमे बड़ा अटपटापन महसूस होगा। और मै आपको यही वतलाने यहाँ आया हूँ कि आज हमारे अन्दर वह शक्ति नही रह गई है जो १९२१ में हम समझते थे कि हमारे अन्दर पर्याप्त मात्रामे मौजूद है। इसीलिए मैं अपनी समूची शक्ति और योग्यता इसी एक काममे, इसी रचनात्मक कार्यक्रममे लगा देना चाहता हूँ। यही देश और स्वराज्यवादीदल — दोनोकी मेरी सर्वोत्तम सेवा होगी, यही मेरा सर्वोत्तम योगदान होगा। यदि आप, बगालके नवयुवक और नवयुवतियाँ, चाहे आप किसी भी राजनीतिक दलसे सम्बद्ध क्यो न हो, मेरी सहायता करे, यदि आप कृपापूर्वक इस रचनात्मक कार्यक्रमको एक फलता-फूलता रूप प्रदान करनेमें मेरी सहायता करे तो हमारी बेडियाँ स्वयमेव टूटकर गिर जायेगी। यदि आप रचनात्मक कार्यक्रमको सफल वना सके तो जिन लोगोको हमारे विचारसे अन्यायपूर्वक जेलकी सजाएँ दी गई है और जिनको नजरवन्द रखा जा रहा है, जो आज माडलेकी जेलोमे यन्त्रणा पा रहे है, आप देखेंगे कि वे आपके कहे विना ही मुक्त कर दिये जायेगे। पर यह रचनात्मक कार्यक्रम जो मेरी टेक है, असलमे है क्या? मै उन तीनो वातोके वारेमे संक्षिप्तसे-संक्षिप्त रूपमे आपसे कुछ कहूँगा। हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ उन सभी जातियोमे एकता स्थापित करना है जो हमारे इस सुन्दर देशमे वसती है। क्या हम इस कार्यक्रमको पूरा नही कर सकते? क्या यह कार्यक्रम अवाछनीय है? किन्तु मैंने इस सिलसिलेमे अपनी अक्षमता स्वीकार कर ली है। मै स्वीकार कर चुका हूँ कि मै इस रोगके चिकित्सकके रूपमे पूरा नही उतरा हूँ। मुझे ऐसा नही लगा कि हिन्दू या मुसलमान कोई भी मेरे वतलाये इलाजको स्वीकार करनेके लिए तैयार है। इसीलिए मै आजकल सिर्फ सरसरी तौरपर ही इस समस्याका जिक्र करता हूँ। और इससे अधिक कुछ भी नही कहता कि यदि हम देशकी मुक्ति चाहते है, तो हम हिन्दुओ और मुसलमानोको किसी-न-किसी दिन एक

होना ही पड़ेगा। यदि एक होनेसे पहले हमारे भाग्यमे एक-दूसरेका खून बहाना ही बदा है तो मेरा कहना है कि हम जितनी जल्दी ऐसा कर डाले उतना ही अच्छा रहेगा। यदि हम एक-दूसरेके सिर फोड़ना चाहते है तो ऐसा पुरुषोचित ढंगसे खुल्लम-खुल्ला करना चाहिए; हमे परस्पर हमदर्दीका केवल ढोग नही करना चाहिए। आप यदि किसीके प्रति हमदर्दी नही दिखाना चाहते तो किसीसे अपने प्रति हमदर्दी जाहिर करनेके लिए भी न कहे। हिन्दू-मुस्लिम एकताके बारेमे मै इतना ही कहना चाहता हूँ।

क्या हम हिन्दुओके लिए अपने आपको अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त कर लेना बडा ही समय-साध्य या असम्भव कार्यक्रम है? जबतक अस्पृश्यता हिन्दू धर्मको विकृत बनाये हुए है, तबतक मेरे विचारमे स्वराज्य प्राप्त करना सर्वथा असम्भव है। मान ले कि ब्रिटिश सरकार भारतको उपहारके रूपमे स्वराज्य दे देगी; लेकिन अगर हम अपने-आपको इस अभिशापसे मुक्त नही कर पाये तो वह उपहार हमारे पवित्र देशके लिए एक अभिशाप ही सिद्ध होगा। अस्पृश्योकी स्वतन्त्रताके बिना स्वराज्य एक बड़ा अभिशाप सिद्ध होगा। परन्तु अस्पृश्यता-निवारणका वास्तविक आशय क्या है, सो मैं सनातनी हिन्दुओको भली-भाँति समझा देना चाहता हूँ; और यह इसलिए कि मै सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ। मै आपसे यह नही कहता कि आप किसीके साथ खान-पानका व्यवहार करे। मै आपसे यह नही कहता कि आप अस्पृश्योके या किसी भी अन्य जातिके लोगोके साथ बेटी-व्यवहार रखे, लेकिन मैं आपसे यह जरूर कहता हूँ कि आप अस्पृश्यताके अभिशापको दूर करे, ताकि ऐसा न हो कि आप उनकी सेवा करनेसे वंचित रह जाये। मेरे लिए अस्पृश्यता-निवारण उन लोगोकी सेवा करनेके अपने अधिकारका दावा करना है, जिनको हमने धर्मके पवित्र नामपर गुलाम बना रखा है। कलकत्ताके सनातनी हिन्दू मेरी बातपर कान दे; यह हिन्दू-धर्मकी परीक्षाकी घडी है, उसके गुण-दोषोको काँटेपर रखकर देखा जा रहा है। यदि आप अस्पृश्यताको दूर नही करेगे तो इस धर्मके दोषोका पलडा इतना भारी हो जायेगा कि यह रसातलको चला जायेगा। मै अस्पृश्यताके बारेमे इतना ही कहूँगा।

इसके बाद आप अपने कार्यक्रमकी तीसरी मद — चरखे और खद्दर — को ले। मै आपसे क्या चाहता हूँ? कलकत्ताके करोड़पतियो, बैरिस्टरो, और कलकत्तेके विधान-सभासदो तथा पार्षदो, मै आपसे क्या चाहता हूँ? कलकत्ताकी महिलाओ, मै आपसे क्या चाहता हूँ? मै भारतकी विनष्ट होती और भूखो मरती हुई मानवताके लिए ईश्वरके नामपर नित्य आपका आधा घंटा चाहता हूँ। इस कामको करने अर्थात् गरीबोके लिए आधा घटा कातनेको देना क्या आपके लिए बहुत अधिक है? ऐसा करनेसे खद्दर सस्ता हो जायेगा और मै बगालके ग्रामीणोंसे कह सकूँगा कि करोड़-पतियोकी कन्याएँ और उनके पुत्र आपके लिए कताई कर रहे है। क्यों? क्यो आप नही कातेगे? क्या आप जानते है कि ग्रामीणोंका हमपर से, स्वय अपनेपर से और ईश्वरपर से विश्वास उठ गया है? क्योकि वे देखते है, हम उनके पास अकसर जाया करते है, कभी एक कार्यक्रम और कभी दूसरे कार्यक्रमके लिए पैसा इकट्ठा करने। वे नही जानते कि हम उन्हे कहाँ ले जाना चाहते है, इसलिए वे हमपर विश्वास

नही करते; और जब हम अपनी नासमझीमे चरखा लेकर उनके घरोमे जाते है तो वे हमपर मुस्कराते हैं, अविश्वास भरी होती है उनकी वह मुस्कराहट। वे यह नही कहते कि आपके इस उपकरणके बारेमें हम कुछ नही समझते। किन्तु चूँकि हम नही जानते कि चरखेका गूढ अर्थ या आशय क्या है और ग्रामीण लोग इसकी खूबीको, सजीवनी प्रदान करनेवाले इस चरखेके सौन्दर्यको भूल गये है, तब वे इसपर सहज ही विश्वास नही कर पाते। यदि आप चाहते हैं कि वे इस घरेलू धन्धेको सहज विश्वासके साथ अपनाये तो आपके लिए आवश्यक है कि आप स्वय चरखा चलाये। और यह बात याद रखे कि जबतक आप स्वय चरखा नही चलायेंगे तबतक आप इसमे आवश्यक सुधार नही कर सकेंगे, और जबतक आप इसमें आवश्यक सुधार नही करेंगे तबतक आप भारतके इस नष्टप्राय उद्योगकी पुन स्थापना नही कर सकेंगे। अभीतक ससारका कोई भी कृषिप्रधान देश ऐसा नही है जिसने कृषिके साथ कोई अनुपूरक उद्योग न रखा हो। मै प्रत्येक भारतीयको, चाहे वह कितना ही प्रसिद्ध अर्थशास्त्री क्यो न हो, चुनौती देता हूँ कि वह भारतके करोडो लोगोंके लिए जो १९०० मील लम्बे तथा १५०० मील चौडे तथा ७ लाख गाँवोमे — जिनमें से बहुत-से गाँव रेलसे बहुत दूर है — बिखरे हुए हैं, कोई अन्य कारगर अनुपूरक उद्योग बताये। मैं किसी भी व्यक्तिको चुनौती देता हूँ कि वह किसी अन्य कारगर अनुपूरक उद्योगका प्रस्ताव रखे या सुझाये। किन्तु जबतक इसकी जगह ऐसा दूसरा कारगर उद्योग आपके सामने नही रखा जाता, तबतक आप अपना समय बेकार न खोये, भारतकी गरीब पददलित मानवताको आधा घटा समय देनेसे गुरेज न करे। मैं आपसे आधा घटेकी माँग करता हूँ, काग्रेस आधा घटेकी माँग करती है। तब यदि आप चरखेको अपनाते हैं तो उसके उत्पादनका क्या होगा? चरखेकी आवश्यकता क्यो है? इसलिए कि हम मैंचेस्टर या जापानके बने कपडे नही चाहते, न हम बम्बई या अहमदाबादमें बने कपडे ही चाहते है। इन कपडोने बग-भगके समय कोई मदद नही की थी। किन्तु हम चाहते है सुन्दर खद्दर, जो हमारे अपने गाँवके घरोमे बनता है और जो सदैव हमारी मदद करता है। हम चाहते है कि हमारे ग्रामीण समृद्ध होकर मुस्करायें। हम चाहते है कि खुलनाके लोगोको यदि फिरसे दुर्भिक्षका सामना करना पडे तो वे समझ ले कि उन्हे डॉ० राय-जैसे किसी व्यक्ति द्वारा भीखमें दिये गये चावलोपर नही रहना है, बल्कि मै चाहता हूँ कि वे अनुभव करे कि उन्हे किसी रायकी सहायताकी भी आवश्यकता नही, क्योकि उनके पास सहारेके लिए चरखा है। जब उनके हाथमें आजीविकाका एक उपकरण तैयार है, तब उन्हे भिखारी नही बनना चाहिए। यह उपकरण दुर्भिक्षके विरुद्ध गारटी, स्थायी गारटी होगी। इसीलिए तो मैं आपसे कहता हूँ कि आप चरखे और खद्दरको अपनाये। यही वह चीज है जिसके लिए मै बगाल आया हूँ।

आज मैं बगाल या भारतकी राजनीतिमे हस्तक्षेप नही करना चाहता। ऐसे व्यक्ति मौजूद ही हैं जो राजनीतिमे पर्याप्त रूपसे समर्थ है। मैं तो अपनेको चरखा-विशेषज्ञ, खद्दर-विशेषज्ञ समझता हूँ। मेरा विश्वास है कि मुझे प्रत्येक स्त्री और पुरुष-

से इस खद्दरके सन्देशके बारेमें कुछ-न-कुछ कहना है और इसलिए जबतक मैं जीवित हूँ, जबतक बंगाल मेरी बात सुननेके लिए तैयार और इच्छुक है, तबतक मैं अपनी सारी शक्ति लगाकर अपना सन्देश आपको बार-बार देते रहना चाहता हूँ। मैं कहता हूँ कि यदि आप अपने देशके लिए स्वतन्त्रता चाहते है तो आप और जो-कुछ चाहे करे, किन्तु कमसे-कम उसके लिए एक दृढ तथा स्थायी नीव तो डाले ही जिसपर कि आप उपयुक्त और दृढ ढाँचा खडा कर सके। इस बूढेके शब्दोंको, जो आपसे कलकत्तामे बार-बार कह रहा है और जो बगालके इस दौरेमे बार-बार कहता रहेगा, याद रखे कि यदि आपने पक्की नीव नही डाली तो आपको मिलनेवाला कोई भी सुधार और स्वतन्त्रता जिसे आप तो मिली हुई समझेंगे, बालूकी दीवार ही साबित होगी; वह हवाके पहले झोकेके साथ ही ढह जायेगी। इसीलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप इस सन्देशपर, चरखे और खद्दरके सजीव सन्देशपर अमल करे। हिन्दुओ, आप इस अस्पृश्यताके अभिशापको दूर करे। हिन्दुओ और मुसलमानो, यदि यह आपके लिए सम्भव हो तो एक भी बूँद खून बहाये बिना आप एक हो जाये और भाईकी तरह एक-दूसरेको गले लगा ले।

आपने मेरा भाषण धैर्यसे सुना है। इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २-५-१९२५

५. भाषण : फरीदपुरकी औद्योगिक प्रदर्शनीमें

फरीदपुर

२ मई, १९२५

प्रदर्शनीका उद्घाटन करते हुए, श्री गांधीने कहा कि किसानका पुत्र होनेके नाते मैं खेती-बाड़ीके बारेमें थोड़ा-बहुत जानता हूँ। मुझे भारत तथा दक्षिण आफ्रिकाके किसानोंके बारेमें बहुत-कुछ जानकारी है। मैंने दक्षिण आफ्रिकामें अपने जीवनके २० से अधिक वर्ष बिताये हैं। मैं इन दोनो देशोंके कृषि-विभागोंका काम देख चुका हूँ। ये विभाग साधारण गरीब किसानोंको भी सहायता देनेके लिए उत्सुक रहते थे। दुर्भाग्यसे इस दिशामें व्यावहारिक रूपसे कुछ भी नहीं किया गया है। यह कहा गया है कि भारतके किसान आलसी होते हैं; मैं इससे सहमत नहीं हूँ। मैं इस बातको अवश्य स्वीकार करता हूँ कि वे वास्तवमें सालमें छः महीने खाली बैठे रहते हैं। यह इसलिए नहीं कि वे आलसी हैं, बल्कि इसलिए कि उनके पास करनेको कोई काम नहीं रहता। वे इन महीनोंमें कताईका काम अच्छी तरहसे कर सकते हैं और अपनी स्थिति सुधार सकते हैं। मैं अपनी पूरी शक्तिके साथ घोषणा करनेके लिए तैयार हूँ कि भारतकी मुक्ति चरखेमें ही है। इसके बारेमें कोई मतभेद हो ही नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-५-१९२५

६. भाषण : अखिल बंगाल हिन्दू सम्मेलनमें[1]

फरीदपुर
२ मई, १९२५

अध्यक्षका अनुरोध है कि मैं आपके सामने तीन बातोके बारेमे अपने विचार प्रकट करूँ। पहली है हिन्दू-मुस्लिम एकता। यह एक मार्मिक प्रश्न है। मैंने इसपर बहुत अधिक विचार किया है। मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें शान्ति, जिसके हम इतने इच्छुक है, प्रदान करे। इस समय हिन्दू और मुसलमान आपसमे लड रहे है और दोनोमे बडी कटुता पैदा हो गई है। उनमे हृदयकी एकता नही है। मैंने एकता स्थापित करनेके लिए भरसक प्रयत्न किया; और मुझे यह स्वीकार करनेमे लज्जाका अनुभव नही होता कि मुझे उसमे सफलता नही मिली। मै केवल यह चाहता था कि वे लडें तो पुरुषोचित ढगसे, मर्दानगीके साथ लड़े, न्यायालयोकी शरणमे तो न जाये; तभी वे जान सकते है कि एक जाति दूसरी जातिको बिलकुल नष्ट नही कर सकती और न सारे भारतको हिन्दू धर्म या मुसलमान धर्म ही स्वीकार कराया जा सकता है। तब यह चिरवाछित एकता अपने-आप पैदा हो जायेगी।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमे मेरे विचार सर्वविदित है; और मै हजारो बार विभिन्न मचोसे उन्हे प्रकट कर चुका हूँ। मेरा विश्वास है कि जबतक हिन्दुओमे अस्पृश्यता है तबतक उनका कुछ भी भला नही हो सकता। यह एक जबर्दस्त पाप है। इसके लिए धर्मकी कोई भी अनुमति नही है। यदि हिन्दू अपने लाखो भाइयोको अस्पृश्य कहकर अपमानित करते है तो वे बड़े कैसे बन सकते है? इसलिए मैं यहाँ उपस्थित प्रत्येक व्यक्तिसे अपील करता हूँ कि वे इस अस्पृश्यताके कलकको दूर करे और दूसरोको भी इसके लिए प्रेरित करे। अस्पृश्यता-निवारणका यह अर्थ कभी नही है कि वर्णाश्रम धर्मका उन्मूलन किया जाये। वह तो बडी ही सुन्दर और लाभप्रद वस्तु है, वह बुरी तो है ही नही। किन्तु मैं जानता हूँ कि आज वर्णाश्रम धर्मके नामपर बहुत-से गलत काम हो रहे है। उन्हे निश्चित रूपसे दूर कर देना होगा। इसका यह अर्थ भी नही है कि हम सबमे परस्पर रोटी-बेटीका व्यवहार हो? आपको अस्पृश्यता और वर्णाश्रम धर्मके बीचका भेद नही भूलना चाहिए।

चरखे और खद्दरके सम्बन्धमे मेरा कहना है कि चरखा भारतका जीवन है और मैंने इसकी तुलना सुदर्शनचक्र तथा कामधेनुसे की है। हिन्दुस्तानमे गरीबी चरखे-के विनाशके साथ शुरू हुई; इसलिए गरीबी दूर करनेके लिए हमे पुन. चरखेको उसके स्थानपर स्थापित करना होगा। चरखेको हमारे घरोमे पहला स्थान मिलना चाहिए। अपने भूखे भाइयोकी मुक्तिके लिए आपको प्रत्येक घरमे ईश्वरके नामपर

१. अध्यक्ष आचार्य रायने गांधीजीसे प्रार्थना की कि वे देशके महत्त्वपूर्ण मौजूदा प्रश्नोंपर बोलें। गांधीजीने हिन्दीमें भाषण दिया था। मूल भाषण उपलब्ध नहीं है।

प्रतिदिन आधा घंटा चरखा चलाना चाहिए। इसे सबसे पहले शिक्षित लोगोंको अपनाना चाहिए ताकि अन्य लोग उनका अनुसरण कर सकें। सुबह जब मैंने औद्योगिक प्रदर्शनीका उद्‌घाटन किया तब मुझे चरखेकी बनावटमें बहुत-सी त्रुटियाँ नजर आईं। वे तभी दूर हो सकती हैं जब शिक्षित लोग उसमें अपना दिमाग लगायें। आप जानते हैं कि सुधरे हुए चरखोंने — मेरा मतलब मैंचेस्टरकी मिलोंसे है — भारतीय जनतामें तबाही मचा दी है, इसलिए मेरी इच्छा है कि कोई भी घर बिना चरखेका नहीं रहना चाहिए। मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप खद्दर पहनें। चार वर्ष पूर्व जब मैं ढाका गया था, मेरा हृदय ढाकाकी मलमलको देखकर दुखी हो गया था। वह अब उस विदेशी सूतसे बनती है जो इंग्लैंड या जापानसे आता है। जैसा खद्दर आपके प्रदेशमें तैयार किया जाता हो आप वैसा ही खद्दर पहनें। एक दिन एक बंगाली लड़की, जो अत्यन्त महीन सूत कात सकती थी, मेरे पास आई। उसका नाम अपर्णा देवी था। मैंने उससे मिलकर अपनेको भाग्यशाली माना। मैं बंगाली महिलाओंसे अपील करता हूँ कि वे ऐसा प्रयास करें कि अपने पतियों तथा पुत्रोंके पहननेके लिए स्वयं महीन खादी तैयार कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-५-१९२५

७. भाषण: बंगाल प्रान्तीय युवक सम्मेलनमें

२ मई, १९२५

अध्यक्षने[1] महात्माजीसे प्रार्थना की कि वे वहाँ एकत्र देशके आशावादी तरुणोंसे सलाहके तौरपर कुछ कहें। महात्माजी काफी देरतक भाषण देते रहे। अपने भाषणके दौरान उन्होंने बताया कि तरुणोंने देशके पुनरुत्थानमें क्या भाग लिया है। उन्होंने कहा कि मैं भाषणोंसे तंग आ गया हूँ, किन्तु मैं आप लोगोंके साथ दिल खोलकर बात करना चाहता हूँ। नवयुवकोंको अपने मनसे सारे बुरे विचार निकाल बाहर कर देने चाहिए। आपके जीवनका आदर्श सेवा होना चाहिए या एक शब्दमें कहूँ तो आपके जीवनकी अनिवार्य शर्त ब्रह्मचर्य होनी चाहिए। ब्रह्मचर्य केवल हिन्दू धर्मतक ही सीमित नहीं है — वास्तवमें यह सभी युगोंमें सभी धर्मोंका अनिवार्य आधार रहा है। इसके बाद, उन्होंने कुछ ऐसे प्रतिभाशाली नवयुवकोंके उदाहरण दिये जिन्होंने ब्रह्मचर्यके अभावमें अपना जीवन नष्ट कर दिया और कहा कि मैं आपमें से प्रत्येकसे इस बातका आश्वासन चाहता हूँ कि आप शुद्ध जीवन बितायेंगे।

फिर उन्होंने असहयोग आन्दोलनका उल्लेख करते हुए कहा कि यह आन्दोलन और कुछ नहीं, केवल आत्मशुद्धिका आन्दोलन है। आपको मेरी सलाह यह है कि

१. जितेन्द्र मोहन राय।

आप अपनेको ईश्वरकी इच्छापर छोड़ दें। अब मैं अपने शाश्वत सन्देशपर आता हूँ। वह सन्देश है — खद्दर, अस्पृश्यता-निवारण और हिन्दू-मुस्लिम एकता। मैं चरखेकी क्षमताके सम्बन्धमें जोर देकर कहता हूँ कि यह एकाग्रता और आत्म-शुद्धिका साधन है। और ये दोनों चीजें वर्तमान समयके लिए नितान्त आवश्यक हैं। मैं आप लोगोंको आशीर्वाद देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको भारतकी उच्चादर्शपूर्ण परम्पराओंको कार्यरूपमें परिणत करनेकी क्षमता दे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ८-५-१९२५

८. अस्पृश्योंके साथ बातचीत

फरीदपुर

[३ मई, १९२५ या उससे पूर्व][1]

गांधीजीने सबसे पहले बंगालमें अस्पृश्यताके बारेमें जानकारी माँगी। उन्हे बताया गया कि बंगालमें अछूतोंके विभिन्न तबके हैं — शाहा, कैवर्त, नामशूद्र तथा मेहतर — और इनमें भी छोटे-बड़ेकी भावनाके कलंकने घर कर लिया है। तब उन्होंने उन निर्योग्यताओंके बारेमें पूछा जिनका सामना उन्हें करना पड़ता है। एक सज्जनने स्वीकार किया कि बंगालमें उस प्रकारकी अस्पृश्यता नहीं है, जैसी हम पश्चिमी और दक्षिणी भारतमें देखते हैं, किन्तु छोटे-बड़ेकी भावना तो है ही। नामशूद्र उच्च हिन्दूके घरमें प्रवेश तो कर सकता है, किन्तु उन कमरोंमें नहीं जा सकता जहाँ पानी रखा हो। कोई भी हिन्दू उसके हाथका पानी नहीं पियेगा। उसे मन्दिरोंमें भी नहीं जाने दिया जाता। वह नाई और धोबीकी सेवाएँ प्राप्त नहीं कर सकता। एक सज्जनने पूछा कि साहब, हम इन निर्योग्यताओंको कैसे दूर कर सकते हैं?

यह आपने बड़ा अच्छा प्रश्न पूछा है। इसके बहुत-से तरीके हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जो अत्याचारी पक्षके विरुद्ध हिंसाका प्रयोग करके बलपूर्वक उससे सुधार करायेंगे। मेरी भेंट ऐसे मित्रोंसे पूनामें हुई थी। वे मुझे एक मानपत्र भेंट करना चाहते थे। मानपत्र हिन्दी या मराठीमें नहीं, बल्कि अंग्रेजीमें था, क्योंकि इस समारोहका आयोजन एक अंग्रेजी जाननेवाले युवकने किया था। वह उनका नेता होनेका दावा करता था। मानपत्रमें धमकी दी गई थी कि यदि उच्च वर्णके लोग उनके प्रति अपना व्यवहार नहीं सुधारेंगे तो वे उनके विरुद्ध बलप्रयोग करके उन्हें सबक सिखा देंगे। यह भी एक तरीका है। मैंने उन्हें बताया कि यह विचारशील लोगोंकी सद्भावनाको खो देने तथा अपने उस उद्देश्यको — जिसे वे सिद्ध करना चाहते हैं — निष्फल बना

१. गांधीजी १ से ४ मईतक फरीदपुरमें थे। सोमवार, ४ मईको उनका मौनवार था। इसलिये यह वार्तालाप ३ मई या इससे पहले हुआ होगा।

देनेका एक निश्चित तरीका है। साथ ही इससे उन्हे सहायता देनेके सुधारको द्वारा किये जानेवाले प्रयत्न भी व्यर्थ हो जायेगे। एक और तरहके लोग भी है। मै उनसे दक्षिणमे मिला। वे हिन्दू धर्मको छोडकर ईसाई या मुसलमान बननेकी धमकी देते है। मैंने उनसे कहा कि यदि आप लोगोमे कोई धर्म है तो उसकी अब परीक्षा हो रही है और यदि आप उसे इसलिए छोड़ना चाहते है कि आपके साथ दुर्व्यवहार होता है तो आपका धर्म ठीकरेके मोल भी महँगा है। मेरे इग्लैड जानेके कारण, मुझे जातिसे वहिष्कृत कर दिया गया था। मेरे विचारमे वैसा करना गलत था, किन्तु क्या उस कारण मुझे अपने धर्मका परित्याग कर देना चाहिए था? मेरे विचारमे तीसरा तरीका और एकमात्र शुद्ध तरीका आत्मशुद्धिका है अर्थात् वह तरीका ऐसा है जो आपपर लगाये जानेवाले सभी आरोपोसे मुक्त है।

एक वकील मित्रने उत्तर दिया कि मै समझता हूँ, हिंसा और धमकी: 'जिनका वर्णन आपने किया है, अच्छी चीजें नहीं है।'

हाँ, आत्मशुद्धि एक तरीका है। क्या आप मरे हुए पशुका मास खाते है?

नहीं, हममें से बहुत ही कम लोग मांस खाते हैं। हममें जो लोग वैष्णव है, वे मांस बिलकुल नहीं खाते; हाँ, हम मछली जरूर खाते है।

अच्छा, तब आपको आत्मशुद्धिके लिए औरोकी अपेक्षा कम प्रयत्न करना पड़ेगा। आप लोगोमे जो अपने-आपको उच्च समझनेकी थोड़ी-सी भी भावना है तो उसे आपको छोड देना चाहिए। आप उन सारी बुराइयोको दूर करनेका प्रयत्न करें जिनका आरोप कट्टरपन्थी हिन्दू आपपर, सम्भवत· किसी आधारपर, लगाते है। इस प्रकार आप उनके पूर्वग्रहोपर विजय प्राप्त कर लेगे। इसका मतलब यह नही है कि बुराइयाँ उनमे नही है। लेकिन आपका यह काम नही कि आप उनसे नफरत करने लगे। हो सकता है कि यह लम्बी प्रक्रिया हो, किन्तु यही एक अचूक तरीका है। मैं जानता हूँ कि एकाध बार कडी कार्रवाई करके भी आप उनसे घुटने टिकवा सकते है। उदाहरणके लिए, कलकत्ता-जैसे नगरोमे भगी यदि इस बातपर हडताल कर दे कि आप हमारी निर्योग्यताओको दूर नही करते तो हम काम नही करेगे, तब मेरा विश्वास है कि वे सफल जरूर हो जायेगे, किन्तु इससे विरोधी पक्षका हृदय नही बदलेगा। उनकी घृणा और भी बढ जायेगी। आपके लिए एकमात्र रास्ता यह है कि आप अपनेको इन सभी बुराइयोसे ऊपर रखे; शेष सुधारकोपर छोड़ दे। जैसा कि आप जानते है, मैं इस बुराईके विरुद्ध अपनी सारी शक्ति लगाकर सघर्ष कर रहा हूँ। यह मेरे लिए पूर्ण रूपसे धार्मिक प्रश्न है।

आप चाहते हैं कि हम सुधारकोंपर भरोसा करें। हम आपपर भरोसा करते है, लेकिन दूसरोंपर हम कैसे भरोसा कर सकते हैं। वे आज इसलिए अस्पृश्यताकी बातें करते हैं कि हम राजनीतिकी शतरंजमें उनके लिए उपयोगी मोहरे हैं। ज्यों-ही उनके राजनीतिक स्वार्थ सिद्ध हुए, वे हमें मँझधारमें छोड़ देंगे। हम नहीं समझते कि वे हृदयसे यह विश्वास करते है कि यह उनके लिए आत्मशुद्धिका प्रश्न है या यह कि अस्पृश्यता-निवारणके बिना स्वराज्य निरर्थक है। यह मैं स्वीकार करता हूँ

कि डा० राय एक ऐसे व्यक्ति है जो हमारे लिए जबर्दस्त संघर्ष कर रहे है। उनके हृदयमें हमारे लिए गहरी सहानुभूति है। किन्तु मुझे दूसरोंपर ऐसा भरोसा नहीं। वस्तुतः देशबन्धु दास भी हैं, किन्तु वे भी जितना-कुछ कर सकते हैं, उतना नहीं कर रहे हैं।

लेकिन मै विश्वास दिलाता हूँ कि उन्हे आप लोगोसे कोई शिकायत नही है और वे भी उतना ही सुधार चाहते है जितना कि मै चाहता हूँ। क्या आप जानते है कि वे उतनी दिलचस्पी क्यो नही ले सकते, जितनी कि मै लेता हूँ।

साहब, मै जानता हूँ, उनको बहुत-से काम है और उनके पास इतना समय नहीं।

हाँ, यही बात है। एक और बात भी है। वे अनुभव करते है कि जबतक हम फौरन राजनीतिक कार्यवाही करके स्वतन्त्रता नही प्राप्त कर लेते तबतक कोई दूसरा काम नही किया जा सकता। उनके और मेरे बीच यही एक भेद है। किन्तु वे इस समस्याको लेकर सचमुच बडे चिन्तित है और वे भी उतनी ही जल्दी इस अभिशापको दूर करना चाहते है जितनी जल्दी कि आप और मै।

मै मानता हूँ। किन्तु तब क्या आप चाहते है कि हम केवल सुधारकोपर निर्भर रहें? आप जानते है, हुआ ऐसा है कि जब भी हमने उनके विरुद्ध संघर्ष किया, वे झुक गये है; और जब भी हम हाथपर-हाथ धरे बैठे रहे, उन्होंने हमारी उपेक्षा की, . . .[1] कहते है कि हमें उनसे कोई भी सरोकार रखनेसे इनकार कर देना चाहिए। हमें उनसे सामाजिक मेल-मिलाप रखनेसे भी इनकार कर देना चाहिए। हमें उनसे उसी प्रकार जल लेनेसे इनकार कर देना चाहिए जैसे कि वे हमसे लेनेसे करते है।

आप जानते है, ऐसा कहनेवाला बदहवास है। आप ऐसा कोई काम न करे। आप सवर्ण हिन्दुओको और भी कट्टर विरोधी बना लेगे। आप उनके प्रति चाहे कोई प्रेम अनुभव न करे। किन्तु मेरा निश्चित विचार है कि आप उनके प्रति अपनी सारी घृणाको दूर कर सकते है। आप गरिमापूर्ण रुख अपनाइए। गरिमा ही ठीक रहेगी, बदला लेनेकी भावना नही।

हम इन परिस्थितियोंमें राष्ट्रीय कार्यक्रममें कैसे भाग ले सकते हैं?

क्यो नही? आजका राष्ट्रीय कार्यक्रम है क्या? हिन्दुओ द्वारा अस्पृश्यता-निवारण, खद्दर और हिन्दू-मुस्लिम एकता। मेरे विचारमे ये तीनो बाते आपकी कठिनाइयोका हल निकालनेमें सहायक होगी। यहाँतक कि हिन्दू-मुस्लिम एकताका अर्थ भी अस्पृश्यताके प्रश्नको थोड़ा-बहुत हल करना ही है। और खद्दर हमको इस प्रकार एक कर सकता है जिस प्रकार अन्य कोई वस्तु नही कर सकती। हाँ, यदि लोग स्वराज्यकी कोई ऐसी योजना लेकर आपके पास आये जिसमें आपके लिए कोई व्यवस्था न हो और वे केवल तात्कालिक राजनीतिक दाँवपेचोकी दृष्टिसे ही आपकी सहमति चाहते हों, अथवा यदि कोई धर्मप्रचारक तरह-तरहकी ऐसी योजनाये लेकर

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड दिया गया है।

आपके पास आये जिनमें आपके लिए विशेषाधिकारोंकी माँग की गई हो तो आपको सतर्क रहना चाहिए। आपको दोनो ही को परे हटा देना चाहिए।

आप ठीक कहते है। मुझे ऐसे धर्म-प्रचारक मिले हैं। हमारी निर्योग्यतायें विभिन्न प्रकारकी है और हमें सभी स्थानोंपर कठिनाई झेलनी पड़ती है।

ये कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी। इस क्षेत्रमें वहुतसे कार्यकर्त्ता काम कर रहे है। वहुतसे उच्चवर्णके हिन्दू अपना सारा समय इसी समस्याको हल करनेमे लगा रहे हैं। आपको उस भलमनसाहतपर भी भरोसा रखना पड़ेगा जो सहज ही मनुष्यके स्वभावमे रहती है। जब आप अपनेको शुद्ध कर लेगे तब आपके विरोधी भी निश्चय ही अपने कर्त्तव्यके प्रति जागरूक हो जायेंगे। मुझे दक्षिण आफ्रिकामे यही निर्योग्यताये भोगनी पडी थी, जिनको आप भोग रहे है और मै चाहता हूँ कि आप भी वैसा ही करे जैसा मैंने किया था। आप जानते है कि मैंने क्या किया था? यूरोपीय नाइयोंने मेरे वाल काटनेसे इनकार कर दिया था। मै एक दिन सुवह एक कैंची ले आया और शीशेके सामने खड़े होकर अपने वाल काटने लगा। उसी समय एक यूरोपीय मित्र अन्दर आये और उन्होंने मुझे अपने बाल बनाते हुए देखा। उन्होने पूछा—'आप क्या कर रहे है?' मैंने जवाब दिया—'यदि यूरोपीय नाई मेरी सेवा नही करते तो मै स्वयं अपनी सेवा करूँगा।' इसके बाद उन्होने कहा कि मै आपके वाल काट दूंगा। और मेरे वाल वडे ही मजेदार ढगके कट गये; बालोंका एक गुच्छा यहाँ खडा था तो दूसरा वहाँ; बीचमे जगह खाली थी।[1] बच्चोंको स्कूल भेजनेमे भी मुझे यही कठिनाई उठानी पडी। उन्होंने कहा—'आपके बच्चोके लिए विशेष रियायत की जायेगी और उन्हे अंग्रेजी स्कूलमे जाने दिया जायेगा।' मैंने जवाब दिया, 'नही, जबतक स्वच्छ रहनेवाले सभी भारतीय बच्चोको अंग्रेजी स्कूलोमे जानेकी छूट नही मिल जाती तवतक मै अपने बच्चोको वहाँ नही भेजूंगा।' और मैंने अपने वच्चोको बिना स्कूली शिक्षाके ही रहने दिया। मुझपर यह भी आरोप लगाया जाता था कि मै अपने बच्चोकी शिक्षाकी उपेक्षा कर रहा हूँ। उफ! वहाँ बहुत-सी निर्योग्यताये थी। कठिनाइयोंके वारेमे मै भी आपके समान ही महसूस कर सकता हूँ, क्योकि मुझे भी उनसे गुजरना पड़ा है। मै एक वार एक बसमे चढ़ा और एक सीटपर वैठ गया। उस सीटसे, जो मुझे दी गई थी, उठनेको कहा गया और उठनेसे इनकार करनेपर मुझे लातोंसे मारा गया और मै वर्बरतापूर्वक घायल कर दिया गया।[2] उस आदमीके वर्तावसे अन्य मुसाफिर इतने उद्विग्न हुए कि उन्होने उसे बुरा-भला कहा और उसने शर्मके मारे ही अपना हाथ रोका। किन्तु आप जानते ही है कि मैंने वदला लेकर नही, स्वय कष्ट सहन करके ही समय आनेपर इन पूर्वग्रहोको दूर कर दिया। मेरा निश्चित रूपसे विश्वास है कि समुद्र-पारके हमारे देशवासियोके साथ जो दुर्व्यवहार होता है वह इसी दुर्व्यवहारका प्रतिशोध है जो आपके साथ भारतमे होता है। जव मै प्रत्येक व्यक्तिसे वार-बार यह कहता हूँ कि

१. देखिए आत्मकथा, भाग ३ अध्याय ९।
२. देखिए आत्मकथा, भाग २ अध्याय ९।

हमने अपनेको साम्राज्यमे 'पैरिया' बना दिया है तो मेरा मतलब यही है, और यदि हम समयपर सचेत होकर इस अभिशापसे मुक्त नही होते तो हिन्दू-धर्म ससारसे मिट जायेगा।

साहब, मैं जानता हूँ आपने यह कई बार कहा है और प्रत्येक व्यक्ति वैसा महसूस भी करता है। परन्तु अस्पृश्यता इतने लम्बे समयसे चली आ रही है। अब इसका कैसे उन्मूलन होगा?

क्यो? क्या भारतके कुछ भागोमे मानव-भक्षण और सतीकी प्रथाएँ नही थी? क्या आप सोचते है कि यदि वे प्रथाएँ कायम रहती तो हिन्दूधर्म उनको सहन कर सकता था? उन्हे तो मिटना ही था। विचारशील लोगोने इन भयावह प्रथाओके विरुद्ध विद्रोह किया और अब अस्पृश्यताकी भयावहताके विरुद्ध सभी स्थानोपर लोगोकी चेतना जाग्रत हो गई है, इसलिए यह भी निश्चित रूपसे मिट जायेगी। हममे से प्रत्येकमे यह चेतना जाग्रत होती जा रही है कि हिन्दू-धर्म आज कसौटीपर है। और यदि इसे उसपर खरा उतरना है तो यह जरूरी है कि वह अपने-आपको इस अभिशापसे मुक्त कर ले।

तब आपका विचार है कि हम कांग्रेसमें शामिल हो जायें?

आपको होना चाहिए और राष्ट्रीय कार्यक्रममें जितना आपसे हो सके, सहायता दे। राष्ट्रीय कार्योमे लग जाये; चरखेको अपनाये, खद्दर पहने, और अपनेको शुद्ध बनाये। और सबसे बड़ी बात तो यह कि चरित्रकी आन्तरिक शक्ति और उसके महात्म्यको भलीभाँति समझे। आपका चरित्र ही अन्ततोगत्वा आपके कामका परिणाम निश्चित करेगा।

सब लोगोंने जानेकी इजाजत माँगते हुए कहा कि हम सचमुच आपके अत्यन्त आभारी है और आपके सुझावोंपर अमल करनेका प्रयत्न करेंगे। कृपया इतनी राततक कष्ट देनेके लिए आप हमें क्षमा करें। गांधीजीने अत्यन्त नम्रताके साथ कहा:

नही, आपके साथका यह वार्तालाप मेरे लिए अत्यन्त आनन्ददायक रहा। अगर ऐसा नही होता तो मै इतने विस्तारपूर्वक आपके साथ बात न करता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९२५

१. भाषण: मानपत्रके उत्तरमें[1]

[३ मई, १९२५ या उससे पूर्व]

आपने मुझे जो मानपत्र दिया है, उसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। आपने यहाँतक[2] आनेका जो कष्ट उठाया है मैं उसके लिए आपका और भी अधिक आभारी हूँ। मैंने आपको जो सन्देश भेजा था उसमे कुछ भावना मनोविनोदकी भी थी। असलमे मैं आपको सूत कातनेका पदार्थ-पाठ देना चाहता था और यह बताना चाहता था कि चरखा चलाना हिन्दुस्तानके उद्धारके लिए अनिवार्य धर्म है। आप केवल पूनीमे से तार निकलता देख रहे हैं; किन्तु मेरा दृढ विश्वास है कि इस तारके निकलनेके साथ-साथ हिन्दुस्तानके भाग्यका निर्माण होता जा रहा है। हर तारके साथ मेरा यह विश्वास अधिकाधिक दृढ़ होता है कि चरखेके बिना हमारे देशका उद्धार न होगा। इसलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप बाते करने, गप्पे मारने, खेलने-कूदने या बेकार घूमनेमे जो समय लगाते हैं उसमें से रोज केवल आधा घटा निकालकर सूत काता करे।

हिन्दू धर्ममे अस्पृश्यताके विकारके घुस आनेसे उसका तत्त्व और राष्ट्रीयताका मर्म अन्दरसे खोखला हुआ जा रहा है। यह छूत महामारीसे भी अधिक फैलती है। इसका पारसी, ईसाई और मुसलमानोपर भी बुरा प्रभाव पड़ा है। फलत. हम सभी हिन्दुस्तानसे बाहरके देशोमे अस्पृश्य हो गये हैं। यह बुराई कैसे दूर की जा सकती है? इस सम्बन्धमे जो सज्जन मुझसे मिले, मैंने उनसे कहा कि यह कार्य तो सवर्ण लोगोके प्रयत्नोसे ही सम्भव है। इसपर उन्होंने मुझसे सरल भावसे पूछा कि यदि आप हमे खेलमे केवल मुहरा बना डाले तो? शायद आप स्वराज्य मिलने-पर हमसे यह कह दे कि तुम अपने रास्ते जाओ और हम अपने रास्ते जाते है तब हमारा क्या होगा? उनकी इस आलोचनामें सत्य था। हमे इन लोगोको विश्वास दिला देना चाहिए कि अन्त्यजोके उत्थानकी प्रवृत्तिमे कोई भी राजनीतिक उद्देश्य नही है। हमारा हेतु केवल धार्मिक कर्त्तव्यका पालन करना और प्रायश्चित्त करना है। यदि हम इस ऋणको अदा न करेगे तो हम ईश्वरके सम्मुख अपराधी ठहरेगे। तब हम न हिन्दू रह जायेगे और न मनुष्य ही।

एक युवकने मुझसे पूछा है कि यदि मैं अन्त्यजोके उत्थानका कार्य करते हुए जातिसे वहिष्कृत कर दिया जाऊँ तो क्या होगा? मैंने कहा कि यदि जातिमें तुम्हारी

१. यह मानपत्र फरीदपुरके छात्र सम्मेलनमें आये हुए छात्रों द्वारा दिया गया था।

२. यह मानपत्र एक नाट्यशालामें, जहाँ छात्र-सम्मेलन हो रहा था, दिया जानेवाला था; किन्तु गांधीजीने श्री जे० बी० कृपलानीके हाथ सन्देश भेजा कि अपने शिविरमें ही, जहाँ वे उस समय चरखा चला रहे थे, मानपत्र लेना चाहते है। इसलिए छात्र गांधीजीके शिविरमें गये और वहाँ गांधीजीने सूत कातते-कातते उनके सम्मुख यह प्रवचन दिया था।

कुछ प्रतिष्ठा हो और तुम जातिसे बहिष्कृत कर दिये जाओ तो मुझे इससे प्रसन्नता होगी। किन्तु लोग इस तरहसे अपनी प्रतिष्ठा गँवानेके लिए तैयार नही है। मै काठियावाड़में एक जगह गया था। वहाँ हजारो लोगोने मुझपर यह छाप डाली कि वे अस्पृश्यताके विरुद्ध है। वहाँसे आते समय मै एक अच्छे कार्यकर्त्ताको वहाँ जानेका निर्देश दे आया था। यह कार्यकर्त्ता ब्राह्मण है, किन्तु वह अपने साथ अपने कार्यमे सहायता लेनेके लिए एक हरिजन बालक रखता है। यदि आप उस बालकको देखे तो आप यह नही कह सकते कि उस बालकमें और आपके स्वच्छसे-स्वच्छ तरुणमे कोई भी अन्तर है। जब मैंने लोगोसे उन दोनोको वहाँ रखकर सेवा लेनेके लिए कहा तब उन लोगोने प्रसन्नता व्यक्त की और कहा कि हमे अपने यहाँके अन्त्यजोकी सेवाके निमित्त उनकी आवश्यकता है। किन्तु जब यह कार्यकर्त्ता और वह अन्त्यज बालक वहाँ गये तब जिस मनुष्यने उनको निमन्त्रित किया था वह डर गया और उनको वहाँ न रख सका। उस क्षण उस मनुष्यकी परीक्षा ही हुई और वह उसमें खरा नही उतर सका। वह गिर गया और उसने अपना हिन्दुत्व गँवा दिया। मै आपसे ऐसे अवसरोपर साहस दिखानेकी आशा करता हूँ।

इसके अतिरिक्त अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ वर्णाश्रम धर्मका नाश नही है। किन्तु आपको यह बात समझनी चाहिए। मानव जातिकी सेवा करनेके लिए मुझे किसी मनुष्य विशेषके साथ खाने-पीनेकी अथवा किसी पुरुष विशेषको अपनी बेटी व्याहनेकी जरूरत नही पडती। एन्ड्रयूज मेरे साथ नही खाते-पीते और न शौकत अली ही मेरे साथ खाते है। फिर भी मै दोनोको अपने सगे भाईसे भी अधिक मानता हूँ। मै शौकत अलीके साथ बैठकर खा ही नही सकता, क्योकि वे मासाहारी है। यदि मै कोई ऐसी चीज खाता होऊँ जो शौकत अलीके लिए जायज न हो तो वे भी मेरे साथ नही खायेगे। किन्तु इससे मेरे प्रति उनके प्रेममे कोई अन्तर नही आयेगा। खानपान और विवाह सम्बन्धी प्रतिबन्धोसे सेवाकार्य करनेमे कोई बाधा नही आती। यदि किसी प्राणीकी सेवा करनेमे ईश्वर भी मेरे मार्गमे बाधक हो तो मै उसका भी विरोध करूँगा। किन्तु मै एक बातका खुलासा और कर दूं। मै यह नही चाहता कि आप अन्त्यज अथवा नामशूद्रोके साथ खाये-पिये अथवा विवाह-सम्बन्ध करे, किन्तु आप जैसा व्यवहार शूद्रोसे करे वैसा ही उनसे भी करे, यह मै अवश्य चाहता हूँ। मैंने सुना है कि हिन्दू लोग नामशूद्रोके हाथका पानी नही पीते। यदि आप शूद्रके हाथका पानी पीते है तो नामशूद्रके हाथका पानी न पीना अपराध है। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि धोबी नामशूद्रोके कपडे नही धोते और नाई उनके बाल नही काटते। यह मानव जातिके विरुद्ध अपराध है। किसी भी प्राणीकी सेवा करनेसे इनकार करना उच्च भावना कदापि नही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-५-१९२५

१०. गोरक्षा

हम इस बीच एक कदम आगे बढ़े हैं। बम्बईकी सभाने[1] माधव बागमें उस संविधानको बहुमतसे स्वीकार किया है जो कि 'नवजीवन' मे प्रकाशित हो चुका है। उसमे चार लोगोने इसके खिलाफ हाथ उठाये थे। एक सज्जनने उसके एक नियमका विरोध करना चाहा था। मैं उन्हे इजाजत न दे सका। मैं सिर्फ इतनी ही सलाह दे सका कि यदि उनका मतभेद सिद्धान्तका हो तो उन्हे सारे संविधानका विरोध करना चाहिए, किन्तु यदि उनका मतभेद सिद्धान्तका न हो तो उन्हे संविधान स्वीकार करना चाहिए। मेरा नम्र मत है कि इस तरहकी सभाओंमें दूसरे प्रकारसे काम चलाया ही नही जा सकता। मैं चाहता हूँ कि मेरे इस निर्णयका कारण सब लोग समझ ले। यह सभा एक संस्थाका श्रीगणेश करनेके लिए बुलाई गई थी। यह सार्वजनिक सभा किए बिना भी किया जा सकता था; क्योकि संविधान गोरक्षा परिषद्[2] द्वारा नियुक्त की हुई समितिने बनाया था और वह समिति उसे स्वीकार करके तुरन्त अ० भा० गोरक्षा सभाका श्रीगणेश कर सकती थी। परन्तु ऐसा करनेके बजाय संविधानको अधिक महत्त्व देनेके उद्देश्यसे उसे स्वीकार करनेके लिए सार्वजनिक सभा की गई। ऐसी सभामें किसी नियम-विशेषका विरोध व्यक्त नही किया जा सकता। पर हाँ, जो ऐसी संस्थाको न चाहता हो अथवा जिसे वह संविधान ही पसन्द न हो वह सारी संस्था या सारे संविधानके खिलाफ अपनी राय जाहिर करनेका हक रखता है और मैंने अध्यक्षकी हैसियतसे विरोध करनेवाले महाशयको यही हक दिया था।

मेरा भाषण अन्यत्र दिया गया है।[3] मैं उसकी ओर पाठकोका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। मेरे लिए गोरक्षा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। मेरा यह मत है कि हमने गोरक्षा-जैसे महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर पूरी तरह विचार नही किया है। गोरक्षाके नामपर प्रचलित अधर्म किस तरह रोका जा सकता है? जब मैं इस सम्बन्धमे विचार करने बैठता हूँ तब मेरी बुद्धि चकरा जाती है। श्रद्धावान् हिन्दू गोरक्षाके नामपर लाखो रुपया देते हैं; किन्तु उससे गायोंकी रक्षा तो नही होती। जहाँ गोरक्षा धर्म माना जाता है, वही गायोकी कमसे-कम रक्षा होती है — न गायोका वध बन्द होता है और न गायपर होनेवाले अत्याचार। वधके लिए गायको बेचनेवाले भी हिन्दू हैं और उसपर अत्याचार करनेवाले भी हिन्दू हैं। रक्षाके अनेक उपाय

१. यह सभा गांधीजीकी अध्यक्षतामें २८ अप्रैल, १९२५ को हुई थी; देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ५४९-५३।

२. यह परिषद् बेलगाँवमें गांधीजीकी अध्यक्षतामें २८ दिसम्बर, १९२४ को हुई थी; देखिए खण्ड २५ पृष्ठ, ५४९-५५।

३. देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ५४९-५३।

तजवीज किये गये है, किन्तु उनमें से एक भी फलीभूत नही हुआ और एक भी ऐसा नही है जो फलीभूत होने लायक हो। इस स्थितिका क्या कारण है?

इस अ० भा० सस्थाको इस सम्बन्धमे विचार करना होगा। परन्तु विचार करेगा कौन? अध्यक्ष, मन्त्री, या समिति? विचारके लिए अध्ययनकी आवश्यकता है। गायोकी कैसी दशा है? बैलोकी कैसी दशा है? उनकी सख्या कितनी है? वे सचमुच भारतमे भाररूप है या उनका उपयोग होता है? उनके वधके कारण क्या है? उनकी दुर्बलताके कारण क्या है? हमे ऐसे अनेक प्रश्नोपर विचार करना होगा।

इतना समय कौन दे? इसमे इतनी दिलचस्पी किसे है? विना दिलचस्पीके काम किस तरह हो सकता है? इसीलिए मैंने कहा है कि गोरक्षाके लिए तप, सयम, अध्ययन आदिकी आवश्यकता है। इसलिए जो लोग, गो-सेवक होना चाहते हो उनसे मै केवल धनकी ही आशा नही रखता, वल्कि विचार और अध्ययनकी भी आशा रखता हूँ।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३-५-१९२५

११. टिप्पणियाँ

काठियावाड़का धन-संग्रह

भाई मणिलाल कोठारी २०,००० रुपये इकट्ठे करनेके लिए काठियावाडमे घूम रहे हैं। उनके तारसे मालूम होता है कि उन्होने निम्न राशियाँ और एकत्र की है:

माणावदरमे और चन्दा	१,१०० रुपये
चोरवाडमे भाई जीवनलालसे	२,५०० रुपये
चोरवाडमे अन्य लोगोसे	२०० रुपये
वेरावलमे	२,५०० रुपये
कुल	६,३०० रुपये

मुझे आशा है कि काठियावाडमे निश्चित समयके भीतर पूरा रुपया इकट्ठा हो जायेगा। मै वम्वईवासी काठियावाडियोके दानकी राह देख रहा हूँ। मै चाहता हूँ कि सब काठियावाड़ी इस बातको ध्यानमे रखे कि २०,००० रुपयेकी यह पूरी रकम काठियावाडमे ही काममे लाई जायेगी।

जातिबन्धन

मैंने जातिवन्धनको सयमकी वृद्धिमे सहायक मानकर स्वीकार किया है। परन्तु आजकल जाति सयममे सहायक नही है वल्कि केवल वन्धन वनकर रह गई दिखाई देती है। सयम मनुष्यको शोभा देता है और स्वतन्त्र वनाता है। वन्धन एक वेडीके

समान है और वह मनुष्यकी अवनति करता है। आजकल जातिका जो अर्थ होता है वह न वाछनीय है और न शास्त्रीय। आज जिस अर्थमे उसका प्रयोग होता है उस अर्थमे यह शब्द शास्त्रमे है ही नही। हाँ, वर्ण है; परन्तु वे चार ही है। अब तो अगणित जातियाँ है और उन जातियोमे भी विभाग हो गये है और उनमे परस्पर बेटी-व्यवहार बन्द है। ये लक्षण उन्नतिके नही, अवनतिके है। नीचे दिये गये पत्रको[1] पढ़कर मेरे मनमे ये विचार आ रहे है।

यह बात यदि सच हो तो दु:खद है। अध्यक्षपद और मन्त्रिपदके लिए झगड़ा क्यो होना चाहिए? सूरती, आगरी, दमणी[2] इत्यादि भेद किसलिए? मै जब लाड-युवक मण्डलकी सभामे गया था तब मुझपर उसकी अच्छी छाप पड़ी थी। अध्यक्ष-पद सेवाके लिए होता है, मानके लिए कदापि नही। मन्त्री तो समाजका नौकर होता है। यदि इस स्थानके लिए स्पर्धा हो भी तो वह मीठी होनी चाहिए। आशा है कि दोनो पक्ष आपसमे सद्भावसे यह झगडा मिटा लेगे। वणिक्-मात्र मिलकर एक जाति क्यो न हो? ऐसा धर्म कही नही बताया गया है कि वणिक् जातिमे परस्पर कन्याका लेनदेन नही हो सकता। मै अगर उपजातियोको कुछ हदतक मानता हूँ तो उसका कारण केवल समाजकी सुविधा है। परन्तु जब पूर्वोक्त घटनाओंका अनु-भव होता है तब यही इच्छा होती है कि ऐसे बन्धनोको तोड़कर उनसे प्रयत्नपूर्वक मुक्ति करना और कराना चाहिए।

'मूर्तिपूजक' और 'मूर्तिभंजक'

प्रसंग आनेपर मैने अपने एक भाषणमे कहा था कि मै मूर्तिपूजक हूँ और मूर्तिभजक भी हूँ। यह बात जिस भाषणमे मैने कही थी यदि वह पूरा छापा गया होता तो इसका अर्थ अच्छी तरह समझमे आ गया होता। मैने भाषणकी रिपोर्ट नही देखी है। एक सज्जन मेरे विचारोंको उद्धृत करते हुए लिखते है:

> "मुझ-जैसे लोगोंको जिनकी श्रद्धा मूर्तिपूजासे उड़ गई है, पर फिर भी जो ज्यादातर मूर्तिपूजाके रूपको (जिस तरह कि मृत पिताके चित्र या मृत मित्रके पत्रको) आदरकी दृष्टिसे देखते है।"
>
> आप इन शब्दोंका अर्थ समझाकर यदि मार्गदर्शन करेंगे तो बड़ा उपकार होगा।

यहाँ मूर्ति शब्दके अर्थ पृथक्-पृथक् है। यदि मूर्तिका अर्थ प्रतिमा लिया जाये तो मै मूर्तिभजक हूँ। यदि मूर्तिका अर्थ ध्यान करने अथवा श्रद्धा प्रकट करने या स्मरण करानेका साधन लिया जाये तो मै मूर्तिपूजक हूँ। मूर्तिका अर्थ केवल आकृति नहीं है। जो व्यक्ति किसी पुस्तककी पूजा आँखे मूंदकर करता है वह भी मूर्तिपूजक अथवा बुतपरस्त है। बुद्धिका प्रयोग किये बिना, सारासारका विवेचन किये बिना,

१. यहाँ नही दिया गया है। पत्र-लेखकने कहा है कि उसकी 'लाड' जातिमें कई उपजातियाँ हैं और उनमें कभी-कभी इतना तीव्र मतभेद हो जाता है कि वे परस्पर लड़ बैठते है।

२. लाड जातिकी उपजातियाँ, जिनका सम्बन्ध क्रमशः सूरत, आगरा और दमनसे है।

अर्थकी छान-बीन किये विना, 'वेद' मे जो-कुछ लिखा है उस सवको मान लेना मूर्ति-पूजा है, वुतपरस्ती है, अत. त्याज्य है। जिस मूर्तिको देखकर तुलसीदास पुलकितगात होते थे, ईश्वरमय, राममय वनते थे, उसका पूजन करते हुए उनका रूप शुद्ध मूर्ति-पूजकका था और इसलिए वे वन्दनीय तथा अनुकरणीय हैं।

अन्धविश्वास मात्र वुतपरस्ती अथवा निन्द्य मूर्तिपूजा है, जो हर तरहके रिवाजको धर्म मान लेते हैं वे निन्द्य मूर्तिपूजक हैं। अतः ऐसी जगह मैं मूर्तिभजक हूँ। कोई भी मुझसे शास्त्रके प्रमाण देकर असत्यको सत्य, कठोरताको दया और वैर-भावको प्रेम' नही मनवा सकता। इसलिए और इस अर्थमे मैं मूर्तिभजक हूँ। कोई मुझे द्वयर्थक या क्षेपक श्लोक उद्धृत करके अथवा धमकी देकर अन्त्यजोका तिरस्कार या त्याग करना या उनको अस्पृश्य मानना नही सिखा सकता और इसलिए मैं अपनेको मूर्तिभजक मानता हूँ। मैं माँ-वापकी अनीतिको भी अनीतिकी तरह देख पाता हूँ और इस देशपर अथाह प्रेम होते हुए भी इसके दोषोको देखकर उन्हे सबके सामने रख सकता हूँ, और इसलिए मैं मूर्तिभजक हूँ।

मेरे मनमे वेदादिके प्रति पूरा-पूरा और स्वाभाविक आदरभाव है। मैं पाषाण-मे भी परमेश्वरको देख सकता हूँ। मेरा मस्तक साधु पुरुषोकी प्रतिमाओके प्रति अपने-आप झुक जाता है, इस अर्थमे अपनेको मूर्तिपूजक मानता हूँ।

इसका अर्थ यह है कि गुण-दोष विशेष-रूपसे वाह्य कार्यकी अपेक्षा आन्तरिक भावमे होता है। किसी भी कार्यकी परीक्षा कर्त्ताके भावको देखकर की जा सकती है। माताका सविकार स्पर्श पुत्रको नरकवास कराता है, और उसीका निर्विकार स्पर्श उसे स्वर्ग प्रदान करवाता है। द्वेषभावसे चलाई छुरी प्राण हर लेती है, प्रेमभावसे लगाई छुरी प्राणदान करती है। विल्लीके वे ही दाँत चूहेके लिए घातक, परन्तु अपने वच्चोके लिए रक्षक होते हैं।

दोष मूर्तिकी पूजामें नही है, दोष ज्ञानहीन पूजामें है।

पेटलादके सत्याग्रहियोंका कर्त्तव्य

जिस समय पेटलादके सत्याग्रहियोके संघर्षका शुभ अन्त हुआ मैं उस समय सफरमे था, इसलिए मुझे उसके सम्बन्धमे कुछ भी मालूम नही हो पाया था। अव मुझे मालूम हुआ है कि सत्याग्रही नेताओने जो प्रस्ताव स्वीकार किया है उसे अनेक सत्याग्रही सैनिक माननेसे इनकार करते हैं। यदि यह वात सत्य हो तो यह खेदजनक है। सिपाहगरीका पहला लक्षण यह है कि नेता जवतक ईमानदार है तवतक यदि भूल कर रहा हो तो भी सैनिकोको चाहिए कि वे उसके कार्यको स्वीकार करे। जव नेताके सम्वन्धमे यह निश्चयपूर्वक कहा जा सके कि वह दगावाज निकल गया है तभी सैनिकोको उसे पदच्युत करने या उसके कार्यको माननेसे इनकार करनेका अधिकार होता है। यदि हम इस नियमको नही मानेंगे तो लोगोकी सघशक्ति स्थिर या टिकाऊ नही हो सकती। इतना ही नही, वल्कि इससे प्रजा अपने धर्मसे च्युत हो जायेगी। किन्तु मुझे इस मामलेमे तो नेताओकी भूल कही भी दिखाई नही देती। वहाँ सत्याग्रह पैसेके लिए नही था, वल्कि सिद्धान्तके लिए किया गया था; सत्याग्रह

केवल आर्थिक लाभके निमित्त तो कभी नही किया जाता। उसके पीछे कोई-न-कोई सिद्धान्त होता है, इसलिए वह लोकहितार्थ किया जाता है। पेटलादके सत्याग्रहके सम्बन्धमें स्वीकार किया गया प्रस्ताव मेरे सम्मुख है। इससे मुझे मालूम हुआ है कि लोगोकी मान्यताके अनुसार नया बन्दोबस्त कानूनके मुताविक नही था और लोगोकी माँग इतनी ही थी कि गायकवाड़ सरकार इस सम्बन्धमे जाँचके लिए अधिकारियोकी एक समिति नियुक्त करे। समिति नियुक्त कर दी गई है और उसकी नियुक्ति होते ही जनताकी जीत हो गई। उस जीतपर खुशी भी मनाई गई थी। अव जो अन्तिम निर्णय किया गया है उसमे सिद्धान्तकी दृष्टिसे कहने योग्य कोई बात नही जान पडती। दीवान साहबने प्रतिनिधियोको बुलानेकी शिष्टता भी दिखाई और अपना निर्णय उन्हे दिखा देनेके अनन्तर ही प्रकाशित किया। इस निर्णयमे आर्थिक लाभ बहुत नही दिखाई देता। वह भी रहा होता तो अधिक ठीक होता। किन्तु सिद्धान्तकी रक्षा हो जानेपर निस्सन्देह केवल आर्थिक लाभके लिए सघर्ष नही छेडा जा सकता। सत्याग्रहके प्रस्तावमे आर्थिक लाभकी तो माँगतक नही की गई थी; उसमे केवल न्यायकी माँग की गई थी। इस स्थितिमे सैनिकोका प्रतिनिधियोके स्वीकार किये हुए प्रस्तावको अंगीकार न करना उचित नही है। इसलिए मुझे आशा है कि जिन लोगोंने इस निर्णयको माननेसे इनकार करनेकी भूल की है, वे अपनी भूल समझेगे और उसे सुधार लेगे।

एक शिक्षककी कताई

वराडके राष्ट्रीय कुमारमन्दिरके आचार्य रा० झवेरभाईने एक पत्रमें[1] लिखा है:

मै श्री झवेरभाई पटेलको इतने अधिक उत्साहके लिए धन्यवाद देता हूँ। दूसरे शिक्षकोंको उनका अनुकरण करना चाहिए। मुझे श्री झवेरभाईको एक सुझाव देनेकी इच्छा हो रही है। तीन लाख गज सूतका वजन १८ सेर हो तो इसका अर्थ हुआ छः अकका सूत। वारडोलीकी रुई तो अच्छी होती है। फिर वह हाथसे ओटी और हाथसे धुनी हुई हो तो उससे बीस अकका सूत सहज ही काता जा सकता है। सम्भव है कि बीस अंकका सूत कातनेमे अधिक सावधानीकी जरूरत हो और उतना सूत कातनमे समय भी कुछ अधिक लगे। उसमे समय चाहे अधिक लगता हो, किन्तु २० अकका सूत कातनेमे रुईकी बचत होती है। इतना ही नही, अब हमे गुजरातमे भी वारीक सूत कातना आरम्भ करनेकी जरूरत है। जो लोग प्रेम और लगनसे सूत कातते है, सबसे पहले उन्हीसे वारीक सूत कातनेकी आशा की जा सकती है। झवेरभाई-जैसे लगनसे कातनेवाले भाई और बहिन तो अब गुजरातमे काफी सख्यामे मिल जाते है। मै उनका ध्यान बारीक सूत कातनेकी ओर खीचता हूँ। वे स्वयं मोटी खादी पहनना चाहे तो भले ही खरीद कर पहिने और अपना काता हुआ वारीक सूत शौकीन भाइयों और बहनोंके लिए दे दे। मै मानता हूँ कि खादी-मण्डल

१. यहाँ नही दिया गया है। लेखकने इसमें लिखा था, "मैंने स्वयं चार महीनेमे ७ मन कपास चुनी, ओटी, धुनी और उसकी पूनियाँ बनाई। इसमें से लगभग १८ सेर (तीन लाख गज) सूत मैंने स्वयं काता है। मैं इस महीनेमें अपना अवकाशका सारा समय सूत कातनेमें ही लगाना चाहता हूँ।

बुनने योग्य बारीक सूत लेकर मोटे सूतकी खादी देनेका काम सहज ही कर सकता है। यदि ऐसा किया जाये तो बारीक सूत कातनेवाले मध्यम वर्गके लोग, जो स्वयं मोटी खादीसे सन्तुष्ट रहते है, बारीक खादी गुजरातमें ही तैयार करनेमें अच्छा योगदान दे सकते हैं।

वृद्धाका प्रमाणपत्र

मैं यह अंश[1] अमरेली खादी कार्यालयसे प्राप्त एक पत्रसे उद्धृत कर रहा हूँ:

यह भावना एक ही वृद्धाकी नही है, बल्कि बहुतोंकी है। मैंने कितनी ही वृद्धाओंके मुँहसे ये शब्द सुने हैं, 'चरखा तो बरकत देता है।' विधवाओंका तो यह "सहारा" ही है। बहुत-सी विधवाओंका कहना है कि दुखियोंका शरणदाता तो चरखा ही है। एक मित्रको जब क्रोध आता है तब वे चरखेको ढूँढते है और उसकी शान्त-गतिसे उनकी आत्माको शान्ति मिलती है। ऐसा अनुभव सभीको नही होता, यह स्वाभाविक है। 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।'

खादीका प्रचार कैसे बढ़े?

नेलौर तमिल-तेलुगू प्रदेशका एक भाग है। वहाँके खादीप्रचारके सम्बन्धमें एक भाई लिखते हैं:[2]

जहाँ खेती करना बहुत लाभदायक है, वहाँ भी लोगोंको सूत कातनेके लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। वे मार्चसे अक्तूबरतक अर्थात् आठ महीने मजेमें कताई कर सकते हैं। और उससे प्रति मास ५ रुपयेके हिसाबसे आय हो सकती है। सूत कातनेवाली स्त्रियाँ विदेशी कपड़े पहनती हैं, यह बात दुःखजनक है। किन्तु इसका उपाय तो यह है कि जब सभ्य समझे जानेवाले लोग अपने हाथकते सूतका बना कपड़ा ही पहननेमें गौरव और प्रतिष्ठा समझने लगेंगे तब ये बेचारे गाँवोंके लोग भी, जो शहरी लोगोंका अनुकरण करनेवाले होते हैं, हाथकते सूतका कपड़ा पहननेमें अपनी प्रतिष्ठा मानने लगेंगे। असल बात यह है कि सूत कातनेवाली स्त्रियाँ सभी प्रदेशोंमें ऐसा नही करती। मैं जिन गाँवोंमें गया हूँ उनमें मैंने देखा है कि सूत कातनेवाली स्त्रियाँ अपने हाथसे काते सूतके बने कपड़ेके अलावा दूसरा कोई कपड़ा नही पहनती। जिन गाँवोंमें पैसा जरूरतसे ज्यादा है, यह बात वहाँकी स्त्रियोंपर लागू होती है।

ध्यान देने योग्य दूसरी बात यह है कि जहाँ स्त्रियाँ स्वयं ही सूत कातनेका आग्रह करती हैं वहाँ वे अच्छी पूनियाँ बनानेकी व्यवस्था कर लेती हैं। इस विवरणसे यह बात स्पष्ट होती है कि वे धुनिएको बुलाकर उससे सिर्फ धुनाईका काम करा लेती हैं। वे सामने खड़े होकर अपने सन्तोषके लायक काम करवा लेती हैं और फिर पूनियाँ बनानेका काम फुर्सतके वक्त स्वयं करती है। अच्छी पूनियाँ बनानेके लिए

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें कहा गया था कि आज सस्ती पूनियाँ खरीदनेके लिए लोगोंकी भीड़ उमड़ पड़ी थी। इसमें एक ६० सालकी वृद्धा भी थी। वह बेहद खुश थी, क्योंकि वह अब काम कर सकती थी और पराश्रित नहीं रहना चाहती थी।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

रुई अच्छी धुनी हुई होनी चाहिए, यह तो आवश्यक है ही, किन्तु पूनियाँ बनानेका काम भी सावधानीसे किया जाना चाहिए। यदि पूनियाँ बनानेमें रेशोंको सिर्फ घुमा-घुमा कर गोला बना दिया जाये तो अच्छी धुनी हुई रुई भी बेकार हो जाती है।

यदि चिकने पटरेपर रूई एक-सी बिठाकर उसपर सलाई रखकर पाँच या छः बार हाथसे घुमाये तो रेशे अच्छी तरह लम्बे होकर लिपट जाते है और बढिया पूनियाँ बनती है। ऐसी बनी हुई पूनियोंसे सूत कातनेमे कितना आनन्द आता है, यह तो सूत कातनेवाले ही जानते है। यदि हम हथेलीको उसपर दो-एक बार और फेर दे तो और भी अच्छी पूनी बन जाती है। इसके विपरीत यदि एक-दो बार हाथसे यो ही घुमाकर पूनियाँ बना ली जाये तो उससे काते हुए सूतमे सफाई नही आती और एकसार सूत आसानीसे नही कत सकता। ऐसी पूनियोमे रेशे उलझकर लिपट जाते है जिससे एकसार सूत निकलनेमे कठिनाई होती है। नेलौर ताल्लुकेके आसपासकी सूत कातनेवाली बहनें यह बात जरूर जानती होगी और इसीलिए वे पूनियाँ बनानेका काम धुनिएको नही सौपती। यदि रुई ठीक धुनी हुई न हो तो यह दोष तुरन्त दिखाई दे जाता है और दूर किया जा सकता है। किन्तु यदि पूनियाँ लापरवाहीसे बनाई गई हों तो उन्हे बादमे सुधारना असम्भव होता है।

मुझे आशा है कि सूत कातनेके प्रेमी इन बातोपर ध्यान रखेंगे।

कंचनलाल मोतीलाल बर्फीवाला

उक्त नामका युवक सूरतमे रहता है। उसकी आयु लगभग २१ वर्षकी है। उसके माता-पिताको १९८०की आषाढ सुदी ३से[1] उसका कोई पता नही है। वह खादी पहनता था और उसकी रुचि सार्वजनिक कार्यमे थी। वह चश्मा लगाता है। 'नवजीवन'का पाठक था। वह क्यों और कहाँ चला गया, यह उसके सम्बन्धी नही जानते। यदि 'नवजीवन'का यह अंक उसकी नजरमे पड जाये तो मेरी उससे प्रार्थना है कि वह तुरन्त अपने संरक्षकोंको अपना समाचार देकर उन्हे चिन्तामुक्त करे। ऐसा लगता है कि आजकल कुछ युवक किसीको बताये बिना अदृश्य हो जानेमे कोई बडाई या विशेषता मानते हैं। किन्तु वे यह अनुमान नही कर सकते कि इससे उनके सम्बन्धियोको कितनी व्यथा होती है। यदि किसी पाठकको कंचनलालका पता लगे तो मैं उससे प्रार्थना करता हूँ कि वह उसकी खबर उसके माता-पिताको राणी तालाब, सूरतके पतेसे दे दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३-५-१९२५

१. तदनुसार ५-७-१९२४।

१२. पत्र : बृजकृष्ण चाँदीवालाको

फरीदपुर
वैशाख सुदी १०, रविवार
[३ मई, १९२५]

भाई व्रजकृष्ण,

तुमारा खत मीला है। मेरा अभिप्राय है कि रु० ५,००० से कारखाना नहि चलेगा। और कितनी भी मूश्किल कर चलाया जावे तो भी उसमे से तात्कालिक लाभ उठानेकी आशा व्यर्थ समजता हु। जो कोई मनुष्य धन देवे वह फायदेकी लालचसे न देवे। जो मनुष्य खद्दरके सब मद न जानता हो, सूतकी क्रियाओको नहि जानता है उससे सफलता मीलना असभावित समजता हु। इन सब बातोको समझकर जो कुछ कार्य करना है कीया जावे। मेरा अभिप्राय है कि इस बारेमे भाई विट्ठलदास जेराजानी जो मुंबईकी दूकान चलाते हैं उनकी राय ली जाय।

मैं मो० महमद अलीको एक मुसलमानको देनेका लीखता हु। खद्दर सस्ती करनेका रास्ता आजकल तो कापुसकी भिक्षा मागना माना जाता है। गूजरातमे यही प्रयोग चल रहा है। छ हफ्ता तक तो मैं बगालमे हु। साथमे महादेव और कृष्णदास है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

बगालमे मेरा पता
१४८, रसा रोड, कलकत्ता

मूल पत्र (जी० एन० २३५६) की फोटो-नकलसे।

१३. भाषण : फरीदपुरमें[1]

३ मई, १९२५

महात्मा गांधीने कहा कि नगरपालिकाके कार्यकलापमें मेरी बड़ी रुचि है। जब भी मेरा ऐसे किसी व्यक्तिसे सम्पर्क हुआ जो नगरपालिकाकी सेवामें हो, मैंने उस सम्पर्कको अपना एक विशेषाधिकार ही माना। नगरपालिका वास्तवमें उस विस्तृत

१. टाउन हालके सामने नगर-निगमकी बैठकमें गाधीजी और चित्तरजन दासको अभिनन्दन-पत्र दिये गये थे। चित्तरजन दासके अनुरोधपर गाधीजीने इनका उत्तर दिया था।

राजनीतिक जीवनकी आधारशिला है, जिसके पीछे हम सभी पड़े हुए हैं। किन्तु जबतक आधारशिला बिलकुल समतल नहीं होगी और उसे पक्की तौरपर जमाया नहीं जायेगा, तबतक उसपर विशाल जीवनकी कोई इमारत खड़ी नही हो पायेगी। नगरपालिकाका कार्य सेवाका कार्य है। आपको नागरिकोंके स्वास्थ्यकी देखभाल करनी है। आपको जल-वितरणकी देखभाल करनी है। यह बंगालके लिए एक बहुत बड़ी आवश्यकता है, विशेषकर पूर्वी बंगालके लिए।

मैं जानता हूँ कि अभिनन्दन-पत्रमे उल्लिखित मलेरिया-उन्मूलनके बारेमें उपचारकी आवश्यकता है, किन्तु मुझ-जैसे दुर्बलकाय अपूर्ण मानवके लिए कोई बना बनाया नुस्खा बताना असम्भव है। मै कोई ऐसा डाक्टर या वैद्य तो नहीं हूँ जिसकी जेबमें बहुत-सी औषधियाँ पड़ी हों, जिनमे से किसी एकको वह जीवनकी सभी बीमारियोंके लिए रामबाणकी तरह दे दे। मैं जानता हूँ कि इनका उपचार नगरपालिकाके सेवा-कार्यके जरिये ही किया जा सकता है। आप इस सेवाको ऊपरसे शुरू नही कर सकते। यह नीचेसे ही प्रारम्भ करनी होगी। यही बात मैं समय-असमय चरखेके बारेमें भी कहता आया हूँ। यह आपके शहरोंमें गाँवों-जैसी सादगी ला रहा है और चरखेका यही सन्देश है। चूंकि गाँव ही नगरोंका भरण-पोषण कर रहे है, इसलिए गाँवोंके इस महान उपकारके बदले शहरोंके लोगोंको भी गाँवोंका कुछ भला तो करना चाहिए। मुझे आशा है कि आप चरखेकी ओर ध्यान देंगे। जैसा कि मैंने बताया है, चरखा ही आपके बृहत्तर राजनीतिक जीवनकी आधार-शिला है। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि उस बृहत्तर जीवनका क्रम आपके चलाये बिना स्वयं ही चलता रहेगा, पर स्वराज्य — जो मेरे जीवनका स्वप्न है — तबतक हासिल नहीं किया जा सकता जबतक कि आप इन साधारण-सी छोटी-छोटी चीजोंको स्वयं नहीं करेंगे। मुझे आशा है कि देहाती क्षेत्रोंसे आनेवाले सदस्य अपनी-अपनी नगरपालिकाओंके स्कूलोंमें चरखे शुरू करायेंगे और कताई करनेवाले दल तैयार करायेंगे। वे खद्दर पहनना अनिवार्य बना सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ४-५-१९२५

१४. भाषण : बंगाल प्रान्तीय परिषद्में

फरीदपुर
३ मई, १९२५

सभापति महोदय और मित्रो,

स्वागत समितिके अध्यक्ष तथा हमारे सुयोग्य सभापतिने मेरे बारेमे जो सौजन्य-पूर्ण और उदारतापूर्ण शब्द कहे है, उनके लिए धन्यवाद देना मेरा कर्त्तव्य है। सबसे पहले मै विषय समितिको एक पूर्णत सामजस्यपूर्ण ढगसे सारी चर्चा और कार्रवाई समाप्त करनेके लिए बधाई देता हूँ। सारी कार्रवाई खुले रूपसे हुई — आज तो राजनीतिके सम्बन्धमे हमारे पास रहस्य-जैसी कोई चीज रही ही नही है। इसीलिए हम खुशीसे खुफिया पुलिस तकको उपस्थित रहनेकी अनुमति देते आ रहे है, यहाँ-तक कि हम उन्हे आमन्त्रित भी करते है कि वे आकर हमारी नीतिमे, हमारे कार्योमे, राष्ट्रनीतिके लिए या उससे बाहर किये जानेवाले हमारे कार्योमे त्रुटियाँ निकाल सके। किन्तु जैसा मैने कहा है, अब यह भी एक खुला रहस्य है कि आज दोपहरके बाद सदनके सामने पेश किये जानेवाले प्रस्तावोपर, कुछ वादविवाद, या मतभेद या विमतियाँ प्रकट की गई थी। किन्तु अन्त भला तो सब भला। मुझे तो याद नही पडता कि कोई ऐसी विषय-समिति कही रही है जिसमे थोडे-बहुत मतभेद या वादविवाद न हुए हो। मेरा खयाल है कि चाहे भारतमे हो या अन्य देशोमे, मतभेद अन्ततक हमारे साथ चलेगे। यूरोपीय मन्त्रि-परिषदोके भी अपने रहस्य होते है, किन्तु यदि हमे उनके तथा उनकी विषय-समितियोके रहस्योका पता लगानेकी अनुमति दी जाये, तो मेरा खयाल है कि उनके बारेमे भी उसी प्रकारकी बाते सुननेको मिलेगी जिस प्रकारकी हमारे मतभेदो और विरोधोके बारेमे मिलती है। इसलिए हमे इन मतभेदो और विरोधोको आवश्यकतासे अधिक तूल नही देना चाहिए और अपने सामने सदा ही यह विचार बनाये रखना चाहिए कि जो भी हो, अन्तमे हम सब एक हो सकते है, और कुछ कर दिखानेके लिए एक हो सकते है। (खूब! खूब!)

मैने देशबन्धुका भाषण पढा। मुझे उसका अग्रेजी अनुवाद पढनेका सुख और सौभाग्य मिला। मै नही जानता कि मूल बगला है या अग्रेजी अनुवाद, बगलाके विद्वानोने मुझे बताया है कि बगला पाठ भी अंग्रेजीके समान ही मधुर और वाक्पटुता-पूर्ण है। जो भी हो, जब मै कलकत्तेमे था, मुझे अग्रेजी भाषणकी यह अग्रिम प्रति देशबन्धुकी सक्षिप्त, प्रेमभरी, मधुर टिप्पणीके साथ कि यदि मै कुछ मिनट निकाल सकूं तो इस भाषणको पढ लूं, उपलब्ध हुई थी। हाँ, तो मै वह भाषण आरम्भसे लेकर अन्ततक पढ गया और मुझे लगा कि कही उन्होने मेरी सभी भावनाएँ तो नही चुरा ली। (हँसी)। पर मैने देखा कि भाषा तो मेरी नही है। वह भाषा एक विद्वान्की है, ऐसे देहातीकी नही जो अपनेको कतैया, भगी, बुनकर, किसान और

अब यहाँतक कि नामशूद्र कहनेमें भी प्रसन्न होता है। (हँसी)। और इस प्रकार मैंने देखा कि भाषा मेरी नही है, किन्तु मालूम पडता है कि विचार मेरे चुराये गये है, इसलिए मैंने तुरन्त अपने मनमे कहा, यदि वे मुझसे कहेगे कि मै इसपर अपनी स्वीकृति दूं तो मुझे ऐसा करनेमे कोई संकोच नही होगा और शायद इसके लिए मुझे उसका एक भी शब्द या मुहावरा बदलनेकी जरूरत नही पडेगी। शायद आपमें-से कुछ लोग ऐसा सोचे कि यह और कुछ भी क्यों न हो, भाषणकी प्रशंसा नही है; बल्कि इसके विपरीत यह इस बातकी निश्चित गारटी है कि वह भाषण पोखरके जलके समान नीरस होगा। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यह वैसा नीरस नही है। लेकिन किसलिए मैं आपको ऐसा आश्वासन दूं? आपने उसे सुना है, आपने उसे पढा है। जो चीज पढनेमे नीरस न लगे, आप भरोसा कर सकते है कि उसमे दम होता है।

मै मुहावरोपर ध्यान नही देना चाहता; मै भाषाके बारेमे नही सोचना चाहता। मै केवल उसमे निहित विचारोपर और उसमे हमारे लिए जो सन्देश है, उसपर ध्यान देना चाहता हूँ। यदि हम अपने प्रति सच्चे है, यदि हम अपने राष्ट्रके प्रति सच्चे है, यदि हम उस नीतिके प्रति सच्चे है जो हमने पहली बार कलकत्तेमें १९२० मे बहुत सोच-विचारके बाद घोपित की थी, तो हमें उस भाषणमे नुक्ताचीनी करने लायक कुछ भी नही मिलेगा। वह भाषण उस नीतिका पुर्ननिरूपण, एक जोरदार और सुस्पष्ट पुर्ननिरूपण है, जिसे कांग्रेसके इतिहासमे पहली बार १९२० मे निर्धारित किया गया था। जब मैं यह कहता हूँ कि यह उस समय कांग्रेसके इतिहासमे पहली बार निर्धारित किया गया था, तब इसका मतलब यह नही है कि कांग्रेस कभी हिंसाकी नीतिपर भी विश्वास करती थी; और न यह मतलब है कि कांग्रेसका कभी ऐसा मत भी रहा है कि हम वैध और उचित तरीकोके अलावा दूसरे तरीके भी अपनायें। मतलब सिर्फ इतना है कि कांग्रेसने इसकी पहले कभी घोषणा नही की थी। १९२० मे हमने जान-बूझकर दुनियासे यह कहनेका निश्चय किया कि हमारा मशा स्वराज्य प्राप्त करनेका है और उस लक्ष्यको प्राप्त करनेके लिए हम ऐसे साधनोका उपयोग करना चाहते है जो सर्वथा शान्तिपूर्ण और वैध है। और अब चूंकि मैंने इन दो शब्दों अथवा दो फिकरोका अनुवाद "अहिंसा और सत्यमूलक" साधन किया है, इसलिए आप बताये कि क्या यह अनुवाद अथवा यह व्याख्या आपको ठीक लगती है? क्या आप इसको मानते है? इन पाँच वर्षोके दौरान देशबन्धु दास उन व्यक्तियोमे से रहे है जिन्होने इन दो शब्दोके अनुसार राष्ट्रीय नीतिको ढालनेमे योग दिया है। आपको उनसे इसके अतिरिक्त और इससे अधिक किसी और कामकी आशा रखनेका कोई अधिकार नही है। मै इससे अधिक इसलिए कहता हूँ कि हममे से कुछ भोजनमे नमक-मिर्च पसन्द करते है, चटखारापन चाहते है। इस कार्यक्रममें से फिलहाल चटखारेपन, उत्तेजना पैदा करनेवाले प्रचारादिको निकाल दिया गया है। हमने इस बातपर विचार किया है, प्रत्येक नेताने इसपर विचार किया है, अतः हमारे लिए नमक और मिर्च या आग और बारूदके जरिये स्वतन्त्रता प्राप्त करना सम्भव

नही है। हम अपना राष्ट्रीय पुनरुत्थान—कह सकते है कि राष्ट्रीय मुक्ति—केवल अहिंसात्मक तथा सत्यमूलक साधनोसे प्राप्त कर सकते है। यह जरूरी नही है कि इसे हम अपना धर्म बना ले। यह हमारी नीति भी रहे, तो काफी है, यदि हम इसे किसी अन्य या उच्चतर उद्देश्यसे न सही, केवल कार्य-साधकताके उद्देश्यसे ही स्वीकार करते है तो भी काफी है।

हमे भारतमे ऐसी समस्याओको हल करना है जो कि विश्वके किसी अन्य राष्ट्रके सामने नही रही। यदि हम हिन्दू है तो हमे अपने मुसलमान देशवासियो, ईसाई देशवासियो, पारसी देशवासियो, सिखो और हिन्दुओके बहुत-से ऐसे सम्प्रदायो और उप-सम्प्रदायोकी पटरी आपसमे बैठानी है जो हिन्दू धर्मसे अपना अलग अस्तित्व रखते है। ऐसे विभिन्नतामूलक तत्त्वोके बीच एक सोद्देश्य एकता, कर्मकी एकता स्थापित करनेके लिए ऐसे ही साधन उपयुक्त रहेगे जिनपर किसीको कोई आपत्ति न हो। ऐसे साधन अहिंसा और सत्याचरण ही है। हम अपने मुसलमान देशवासियोसे या हिन्दू देशवासियोके साथ अन्य किसी भी तरीकेसे पेश नही आ सकते। और इसके अतिरिक्त हममे प्रान्तीयता भी है। बगाल सोचता है कि उसे सारे भारतपर हुकूमत करनी चाहिए और सारे भारतको इस छोटे-से प्रान्त बगालमे समा देना चाहिए (हँसी), और गुजरात भी शायद ऐसा ही सोचता है। गुजरात—जो बगालके मुकाबले केवल समुद्रमे एक बूँदके समान, है—सोचता है कि हमे सारे भारतपर हुकूमत करनी होगी और सारे भारतको गुजरातमे लीन कर देना होगा। इसके बाद आप बहादुर मराठोको ले और उनकी हालकी परम्पराओपर गौर करे। उन्हे भी क्यो नही सोचना चाहिए कि भारतके भाग्य तथा नीतिका निर्माण वे ही करे? मुसलमान अपनी अभी हालकी ही परम्पराओके कारण सोचता है कि उसे मुस्लिम साम्राज्यकी स्थापना या पुन. स्थापना करनी चाहिए। इन विरोधी तत्त्वो तथा प्रान्तीयतासे बचनेका उपाय अहिंसक तथा सत्यमूलक साधनोके अतिरिक्त और कोई नही है, कारण यह है कि अगर हम कोई दूसरा रास्ता अपनाते है तो समझ लीजिए कि हम ऐसी सुरगपर बैठे है जिसमे किसी भी समय विस्फोट हो सकता है। यदि हमारी नीति जरा भी विकृत हुई तो हम शायद नष्ट ही हो जायेगे। इसीलिए मैने बार-बार ऐसी नीति अपनानेपर जोर दिया है जो धार्मिक नीति नही है, बल्कि अहिंसा और सचाईकी नीति है। अपने लक्ष्यको पूरा करनेके बाद आप अपने देशके साथ जो भी चाहे, कर सकते है।

अपने देशके सम्मानकी स्थापनाके लिए आप किसी भी ऐसे साधनका उपयोग कर सकते है जिसे आप वैध और उचित समझते हो। किन्तु मै अपने बारेमे तो कोई लाग-लपेट नही रखता, बिलकुल स्पष्ट कहता हूँ कि मेरे लिए यही पहला और अन्तिम अर्थात् एकमात्र साधन है। यही मेरा धर्म है। अहिंसा और सत्य-निष्ठा मेरी साँस है। मै चाहता हूँ कि मै अहिंसा और सत्यनिष्ठाके लिए यहाँ उपस्थित प्रत्येक नवयुवकमे वही उत्साह और वही भक्ति भर दूँ, जो मुझमें है।

मै बहुत-से बगाली नवयुवकोको जानता हूँ। मै जानता हूँ कि उनमे अद्वितीय साहस है। वे अपने देशकी खातिर आज जिस प्रकार जी रहे है उसी प्रकार वे

उसकी स्वतन्त्रताकी खातिर मरनेके लिए भी लालायित हूँ। यदि यह मेरी धृष्टता न समझी जाये तो मेरा दावा है कि जैसे आज मैं देशके लिए जी रहा हूँ उसी प्रकार मुझमें देशके लिए मरनेकी भी क्षमता है। किन्तु जैसा मैं कह चुका हूँ कि यह जीवन मरणान्तक यन्त्रणाका जीवन है। फाँसीपर चढ़कर मरनेमें मुझे जरा भी भय नही लगता। मेरा विश्वास है कि यदि मैं निर्दोष हूँ तो मैं ओठोपर मुस्कराहट लिए फाँसीपर चढकर मर सकता हूँ। यदि मेरे हाथ और मेरा हृदय हिमके समान निष्कलक और निर्दोष है तो मृत्यु मेरे लिए किसी प्रकार भी भयप्रद नही। बगालके प्रत्येक नवयुवकके लिए मृत्यु ऐसी ही भयविहीन रहे। देशबन्धुने आपके लिए यही नीति पुनर्निरूपित और पुनः प्रतिष्ठित कर दी है। क्या उन्होने गयाके अपने सुन्दर भाषणमे यही बात नही कही? मैंने वह भाषण अभीतक नही पढा, किन्तु मुझे उसकी खबर यरवदा जेलमे मिल गई थी। मैंने वह खबर चुपके-चुपके नही मँगाई थी। मै जेलकी सभी हिदायतोका पालन करता था, किन्तु कभी-कभी जेलर और आनेवाले लोग मुझे बता देते थे कि जेलकी दीवारोके बाहर क्या हो रहा है। इसी तरह मुझे पता चल गया था कि देशबन्धुने जोरदार शब्दोमे अहिंसा और सचाईकी नीतिका पुर्निरूपण और पुन. प्रतिष्ठापन किया है। वे आपके लिए, मेरे लिए, अपने लिए और देशके लिए इसी प्रकार सोचते हैं। आप जानते ही है कि उनकी कितनी कटु आलोचना की गई है। उनके कटु आलोचकोमे यूरोपीय ही नही, बल्कि हमारे अपने देशके लोग भी हैं। आलोचक उनके अपने शिविरमें भी है। तब वे क्या करे? क्या उन्हे तटस्थ रहना चाहिए? बेशक वे तटस्थ रह सकते थे, यदि उनके हृदयमे अपने देशका हित न होता, यदि वे अपने देशकी मुक्तिके स्वप्न न देखते और यदि वे अत्यन्त मधुर शैलीमे यह कहनेके लिए तैयार न होते कि गाधीजी, मैं आपके लिए दीर्घायु होनेकी कामना नही कर सकता क्योंकि आपकी किस्मतमे लिखा हुआ है कि जिस क्षण हमे स्वराज्य मिलेगा उसी क्षण आप मर जायेंगे। आप स्वराज्यके लिए, केवल स्वराज्यके लिए जी रहे हैं; और चूँकि मैं भारतके लिए तत्काल स्वराज्य चाहता हूँ, इसलिए मैं ईश्वरसे यह प्रार्थना नही कर सकता कि महात्मा गाधी चिर-जीवी हो। उससे मेरे स्वराज्य आनेमे विलम्ब होगा। मैं उनके इस विचारको बहु-मूल्य समझता हूँ और उस विचारमे, यद्यपि वह विनोदी भावसे प्रकट किया गया है, उन्होंने मुझे ऐसा सम्मान दिया है, जिससे बड़ा सम्मान मुझे वे या आप दे ही नही सकते, क्योंकि यही बिलकुल सही और सच्चा सम्मान है।

मैं स्वराज्यके लिए अत्यधिक अधीर हूँ; उतना ही अधीर जितना कि आपमे से कोई हो सकता है। किन्तु मैं जानता हूँ कि हमारे कर्तव्य क्या है, मैं जानता हूँ कि हमे क्या करना है। यदि मादक उपायोकी एकाध खुराकसे स्वराज्य पाना सम्भव होता तो मै आज ही शक्तिशाली ब्रिटिश सम्राट्के विरुद्ध खुल्लमखुल्ला विद्रोह कर देता और कह देता कि आप यहाँसे चले जायें, मैं आज ही स्वराज्य चाहता हूँ। किन्तु वैसा सम्भव नही है। मैं खुल्लमखुल्ला ऐसा विद्रोह कर सकनेकी अपनी अक्षमता स्वीकार करता हूँ। मैं अपने देशकी आजकी अक्षमताको स्वीकार करता हूँ। हाँ,

मैं चाहूँ तो कुछ अंग्रेजोंके सिर जरूर काट सकता हूँ; ऐसा तो कोई भी व्यक्ति कर सकता है। उसके लिए मजबूत बाजुओंकी जरूरत नहीं है। इसके लिए मजबूत हृदयकी जरूरत है। आपमें से कोई भी एक छोटा-सा तमचा लेकर उन्हें निशाना बना सकता है; मैं भी वैसा ही कर सकता हूँ। किन्तु लॉर्ड रीडिंग, लॉर्ड लिटन या किसी अन्य अंग्रेजके सिर काटनेसे लाभ क्या होगा? मैं उस सिरको घोड़ेपर घुमा कर यह तो नहीं कह सकता कि अब मेरा देश मुक्त हो गया। देशकी मुक्ति अपेक्षाकृत कठिन साधनोंसे प्राप्त होगी। हमें अपने भीतर न केवल मरनेकी क्षमताका विकास करना होगा, न केवल मारनेकी क्षमताका विकास करना होगा, बल्कि जैसा डाक्टर बेसेंटने एक बार कहा था कि जिन लोगोंको हम अपने निकटतम और अत्यन्त प्रिय समझते हैं, उनके विद्वेष, निन्दा, उपेक्षा और बहिष्कारके बीच रहनेके लिए भी एक तरहके साहसकी आवश्यकता होती है, [हमें उस तरहके साहसका अपने भीतर विकास करना होगा।] उन्होंने यह ठीक ही कहा था। मैं अपने जीवन-भर हर अवसरपर यही कहता आया हूँ कि इस प्रकारके तूफानों और संघर्षोंके बीच रहनेके लिए भी एक तरहका साहस दरकार है।

तब फिर देशकी स्वाधीनता प्राप्त करनेका उपाय क्या है? निश्चय ही मार-काट नहीं; वर्तमान परिस्थितिमें निश्चय ही अपनी कुर्बानी देकर भी नहीं, बल्कि निरन्तर जुटे रहकर। इसीलिए मैंने बड़ी विनम्रताके साथ आपके सामने तीन चीजें रखनेका साहस किया है। वे हैं : हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता-निवारण और चरखा। परन्तु हिन्दू-मुस्लिम एकताके काममें कोई भी युवक पूरे २४ घंटे नहीं खपा सकता। यह तो हमारा सिद्धान्त है। जिस प्रकार एक मुसलमान कल्मा पढ़ता है और बात खत्म हो जाती है, फिर शेष सारा समय उसके लिए कल्मेके आदेशपर अमल करना ही रह जाता है। जिस प्रकार मैंने गायत्री पाठ किया और पाठ या जपकी बात वहीं खत्म हो गई; फिर उसे दिनमें ५ करोड़ बार पढ़नेकी आवश्यकता नहीं, केवल उसके आदेशपर चलना रह जाता है। इसलिए हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता-निवारण एक सिद्धान्त ही है। किन्तु हममें से प्रत्येकको कोई ऐसा काम भी कर सकना चाहिए, जो अधिक मूर्त, ठोस और व्यावहारिक हो। हममें से प्रत्येक चरखा चलानेमें अपने हाथोंका उपयोग कर सकता है। आप जो सूत कातते हैं उसके प्रत्येक गजके साथ आप भारतका एक गज भाग्य भी कातते हैं। मैं क्रान्तिके जितने रूप जानता हूँ उनमें इसीको भारतके लिए सर्वोत्तम समझता हूँ। मैं जानता हूँ, आपमें से कुछ लोग इसपर हँसते हैं — यह हँसी अविश्वासकी है। आपमें से कुछ लोग सोचेंगे कि यह मूर्ख आदमी है; समय-असमय चरखेकी रट लगाये रहता है। किन्तु मैं वचन देता हूँ, भविष्यवाणी करता हूँ कि एक दिन ऐसा आयेगा, और वह दिन बहुत दूर नहीं है, जब कोई भी मुझे मूर्ख नहीं कहेगा। इसके विपरीत, मुझे यह सर्वोत्कृष्ट प्रमाणपत्र दिया जायेगा कि गांधीने चरखेके चलनको पुनरुज्जीवित किया है। गांधीने जब हमसे कातनेके लिए कहा तो उसने हमें देहातोंका सरल सन्देश दिया; जब उसने चरखेका सन्देश दिया तब उसके ध्यानमें अपने देशके करोड़ों पद-

दलित लोगोके लिए उपयोगी स्वराज्य था। मुझे अपनी भावी सफलताके बारेमें कोई सन्देह नही है। मेरी सफलता सुनिश्चित है। जबतक मैं चरखेपर डटा रहूँगा, तबतक मेरा भविष्य सुनिश्चित है। मैं आपसे वादा करता हूँ कि यदि यहाँ श्रोताओमें से प्रत्येक, जिनमे देशबन्धु दास भी शामिल है, कहे कि "गाधी गलतीपर है, चरखा कुछ भी नही, यन्त्र और तेज गतिके इस युगमे यह एक मूर्खतापूर्ण वस्तु है", तब भी मैं अपने जीवनकी अन्तिम साँसतक यही कहूँगा: "मुझे चरखा दो और मैं भारतके लिए स्वराज्यका ताना-बाना कात दूँगा।"

आप अन्य किसी शर्तपर स्वराज्य प्राप्त नही कर सकते। हमें कर्मवीरोका राष्ट्र बनना होगा, बाते करनेवालो या आलसी लोगोका नही। हम स्वभावसे आलसी नही है, किन्तु परिस्थितियोके कारण हमारे देशके करोडो लोगोको खाली बैठे रहने-पर विवश होना पड़ता है। आप खाली बैठी हुई इस जनताके बारेमे उतना नही जानते जितना मैं जानता हूँ। मैं चम्पारनके १७ लाख लोगोके बीच छः महीने या उससे भी अधिक समयतक रहा हूँ और मैंने देखा है कि वे कुछ नही करते थे, बस मेरे चारों ओर चक्कर लगाते रहते थे। वे एक ऐसे व्यक्तिसे कुछ प्रेम पाकर सन्तुष्ट थे जिसे वे अपना सच्चा सेवक समझते थे, किन्तु वे काम कुछ नही करते थे। उस समय मेरे पास यह चरखा नही था, अन्यथा मैं इसे उनके सामने रख देता। वे फाके नही कर रहे थे, भूखो नही मर रहे थे, किन्तु वे अपने हाथ-पैरोका उपयोग करना भूल गये थे। वे थोडी-सी जमीन जोतते, नील उगाते, उसे काटते और कमाते, किन्तु चरखा नही चलाते थे। उनके घरोमे कोई उद्योग-धन्धा नही था। चूँकि उसे वे वर्षों पहले भूल चुके थे, इसलिए वे अब इसे बिलकुल बेकार समझते थे। इसीलिए तो मैं इसे जबरदस्ती थोपा गया आलस्य कहता हूँ। ईस्ट इडिया कम्पनीने हमारे हाथ-पैर बेकार बना दिये थे। मैंने ब्रिटिश शासनपर जितने अपराधोंका आरोप लगाया है, उनमे यह अपराध जघन्यतम है। इसीलिए मैंने कहा है कि जबतक मैं अंग्रेजोमे हृदय-परिवर्तन नही देखता, जबतक वे भारतीय जनताके बारेमें इस ढंगसे महसूस नही करने लगते और यह नही कहते, "हाँ, हमें पश्चात्ताप है, हमने भारतसे जो-कुछ छीना है उसे हमें वापस कर देना चाहिए", तबतक मैं उनकी ओर मैत्रीका हाथ नही बढ़ाऊँगा और कहता रहूँगा, "यदि आप मुझे अपना भाई नही कहते तो मैं आपसे हाथ नही मिला सकता।" जबतक वे भारतीय जनताके साथ हमदर्दी जाहिर नही करते, तबतक मैं हाथ नही बढा सकता। शासन समय-समयपर हम-दर्दीका एक छोटा-सा टुकड़ा उठाकर जनताके मुँहपर फेंकता है। मैं इसे काफी नही समझता। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अंग्रेज शासक जनताकी भावनाओको समझे, जनताके आर्थिक सगठन और प्रणालीको समझे। इसे वे स्वय अपनी आँखोंसे देखें-समझे, यूरोपीय अर्थशास्त्रियोकी पुस्तकोके माध्यमसे नही, चाहे वह कितना ही विख्यात अर्थशास्त्री क्यों न हो। उन्हें जनताको ध्यानमे रखकर सोचना चाहिए। जिस क्षणसे अंग्रेज जनताको ध्यानमे रखकर सोचने लगेगा उसी क्षण आप मुझे उसके चरणोमे दण्डवत् पायेंगे, क्योकि मैं उसके गुणोको, उसकी क्षमताओको जानता हूँ।

किन्तु जबतक वह सही दिशामे चलना शुरू नही करता तबतक मै ऐसा नहीं कर सकता। इसलिए जबतक अग्रेज सही दिशामे चलना शुरू नही करता तबतक मेरा उसके साथ बात करनेका भी क्या फायदा, क्योंकि उसने जघन्यतम अपराध किया है — उसने मेरे चरखेपर डाका डाला है।

किन्तु मै उसपर आरोप किस मुँहसे लगाऊँ, जब कि मेरे देशवासी स्वय आप लोग आधा घटा भी चरखा चलानेसे इनकार करते है, जब आप ही सन्देश भेजते है या कभी-कभी लिखते है कि इस मूर्ख गाधीने हमारे ऊपर यह घृणित कताई सदस्यता थोप दी है, हमे इससे छुटकारा पाना चाहिए, क्योंकि इसने हमपर यह बेमतलबका भार डाल दिया है। किन्तु सवाल यह है कि जब वह ईश्वरके नामपर, देशके लिए कातनेको कहता है, चाहे वह आधा घटा ही क्यो न हो, तब क्या वह आपसे कोई ऐसा अजूबा करतब करनेको कहता है जो आपके सामर्थ्यके बाहर हो? जब वह आपसे कहता है कि आप सिरसे पाँवतक हाथ-कते और हाथ-बुने कपडे पहने, तब क्या वह आपसे कोई ऐसा काम करनेको कहता है, जिसे आप नही कर सकते? यदि आप इस छोटी-सी व्यावहारिक चीजपर भी अमल नही कर सकते तो मै आपसे क्या कहूँ, मै आपके साथ कैसा व्यवहार करूँ, अथवा मै अपना स्वराज्य कैसे प्राप्त करूँ? वे आपपर, बगालियोपर दोषारोपण करते है कि आपमे व्यावहारिकता नही है; और कुछ हदतक वे सच भी कहते है। हम सब-कुछ चाहते है, किन्तु चाहते है कि वह पर्याप्त श्रम किये बिना ही मिल जाये। हम किसी चीजके बारेमे बाते तो बहुत करते है, हम प्रस्ताव भी पास करते है, किन्तु उनपर अमल करनेका समय आते ही हम उससे कतरा जाते है। इसलिए वे जो राष्ट्रके लिए किये जानेवाले कामसे कतराते है, उन्हे याद रहे कि भारतका भाग्य बनानेमे, भारतके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेमे उनका कोई हाथ नही रहेगा। इसलिए मेरा अनुरोध है कि इस सूतकी शर्तवाले मताधिकारको आप कायम रखेगे। आप चाहे तो सूतकी मात्रा कुछ घटा सकते है। लेकिन यदि मात्रा घटाई जाये तो प्रत्येक स्त्री-पुरुषके लिए, प्रत्येक लडकी और लडकेके लिए यह अनिवार्य बना दे कि जो भी काग्रेस-जैसे जीवन्त सगठनके जरिये भारतकी सेवा करना चाहता है, वह आधा घटा सूत काते और खद्दर पहने। ऐसा केवल समारोहोके अवसरोपर नही, काग्रेसके कामके लिए नही, बल्कि सभी कार्योके लिए अनिवार्य बना दे। अपने घरोमे भी आप खद्दरके सिवा और कुछ न पहने। ऐसे वस्त्र पहननेकी अपेक्षा जिसका सूत घरमे आपकी बहनोने न काता हो और जिसे आपके भाइयोने न बुना हो, बल्कि जो कारखानेमे बुना गया हो, आपके लिए बिलकुल नगा रहना ही ज्यादा अच्छा होगा। यही चरखेका सन्देश है। यही एक सरल, छोटी-सी माँग है। यह माँग मै ऐसे प्रत्येक स्त्री और पुरुषसे करता हूँ जो भारतसे प्यार करता है और जो भारतकी स्वाधीनता चाहता है।

आपको मुझसे यह सुनकर आश्चर्य नही होना चाहिए कि यदि आप माण्डलेकी जेलकी दीवारोके अन्दर बन्द कैदियोको छुडाना चाहते है, यदि आप सुभाषचन्द्र बोस तथा अन्य लोगोकी रिहाई चाहते है तो आप चरखा काते। बिना कर्मके यह असम्भव

है। यदि आप सम्मान और प्रतिष्ठाके साथ उनकी और उनके साथी कैदियोकी रिहाई चाहते है तो मै कहता हूँ कि आप चरखा अवश्य काते।

मुझसे वादा कीजिये कि इसके बाद प्रत्येक बगाली स्त्री-पुरुष केवल खद्दर, और सिवा खद्दरके और कुछ भी नही पहनेगा, प्रत्येक स्त्री-पुरुष चरखेके पास उसी आनन्दके साथ जायेगा जैसे कि भोजनके लिए जाता है या जैसे कि कोई नवयुवक प्रेमी अपनी प्रेमिकाके पास जाता है। उस हालतमे मै उन नौजवानोको तुरन्त मुक्ति दिलवानेका वादा करता हूँ।

आप देखेगे कि यह अत्यन्त सीधी-सादी वस्तु जनताको मुक्ति दिला देगी, क्योकि यह आपके इस दृढ सकल्पका प्रतीक होगी कि आप पारिश्रमिक की आशा किये बिना भारतके लिए काम करेगे। मैने भारतकी खातिर केवल आधा घटेके नि शुल्क श्रमकी माँग की है। मैने आपसे यह कोई बहुत बडी चीज नही माँगी है। किन्तु आपमे विश्वासकी कमी है; क्योकि आपको अपनी जनतापर कोई विश्वास नही है, क्योकि आपको अपने-आपपर कोई विश्वास नही, क्योकि आपको अपने देशपर कोई विश्वास नही है, इसीलिए आप कताईसे इनकार करते है, और फिर भी सोचते है कि देशबन्धु जेलकी कुजी हासिल कर लेगे, आपकी बेडियाँ तोड देगे और दरवाजे खोल देगे। उनके लिए ऐसा करना असम्भव है।

आपमे से कुछ लोग सोचते है कि वे गुप्त रूपसे सरकारके साथ बातचीत चला रहे है। जहाँतक मै जानता हूँ उनके पास कोई रहस्य नही है। काग्रेसकी राजनीतिमे किसी भी बातको गुप्त रखनेकी मनाही है। जब किसीने उनसे पूछा कि इस सबके पीछे क्या है तो उन्होने उत्तर दिया कि इसके पीछे भी वही है जो इसके सामने दिख रहा है (हँसी)। लॉर्ड बर्कनहेडने उन्हे कोई गुप्त सन्देश नही भेजा। वे उनसे कोई गुप्त बातचीत नही चला रहे है। उन्हे जो-कुछ कहना है, उसे आप उनके सुन्दर अभिभाषणमे पायेंगे। आप उसे उनके लेखो, उनके भाषणोमे पायेगे। आप उसे उनके उस जीवनमे पायेगे जिसे वे अपने घरके भीतरके छोटे-से कमरेमे बिताते है या जब वे इस विशाल पण्डालमे बैठे हुए होते है। यदि आप उनका दिल टटोले तो भी मै जानता हूँ कि वे आपको देशकी मुक्ति चाहनेवाले व्यक्तिके रूपमे ही दिखाई देंगे। यही वह कडी है जो मुझे उनसे जोडे हुए है। यही वह कडी है जो श्रोताओंको उनसे जोड़ सकती है। यही एक कडी है जिसे आपके और उनके बीच सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए।

हो सकता है कि आप हमारे तर्कोंसे आश्वस्त न हो। किन्तु आप कह सकते है कि आप ठीक रास्तेपर है, इसलिए हमारा हृदय सन्तुष्ट है और हम सब तबतक आपकी सलाहपर चलते रहेगे जबतक कि आप हमारे आदर्श बने रहेगे। आपके लिए यही तरीका है। यही आपके लिए उन लोगोके साथ व्यवहार करनेका तरीका है, जिन्हे आप प्यार करते है। आप सिपाहियो और सैनिकोके समान है। इसलिए एक बार अपना नेता चुन लेनेके बाद फिर कोई शका करना आपके लिए ठीक नही। यदि आपने अपने नेताका चुनाव नही किया है और आपको चुनाव करनेके लिए

कहा जाता है तो आप अपनी विवेक-बुद्धिका जितना उपयोग कर सकते है, करे। उम्मीदवारोको सिरसे परतक खूब बारीकीसे परख लें। किन्तु, अपना चुनाव कर लेनेके बाद और गलेमे माला डाल देनेके बाद, सीताके समान आप अपने चुने हुए नेतासे कभी विमुख न हो, और सीताके समान आप उसके साथ आगके बीच गुजर जायें तब फिर आपके सभी काम सध जायेगे। (तालियाँ)

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ८-५-१९२५

१५. बंगालके संस्मरण

४ मई, १९२५

फरीदपुरसे लौटकर सोमवारको मै ये सस्मरण देशबन्धु दासकी पुरानी कोठीकी छतपर बैठा हुआ लिख रहा हूँ। बगालमें आये आज मुझे चार दिन हो गये है। परन्तु इस कोठीमे मेरे दिलको पहले-पहल जो चोट लगी उसकी कसक अभीतक नही गई है। मै जानता था कि यह कोठी देशबन्धुने सार्वजनिक कार्यके लिए दान कर दी थी। मै जानता था कि उनपर कर्ज है। परन्तु उसके साथ ही मै यह भी जानता था कि वे यदि वकालत करे तो एक वर्षसे कम समयमे ही सारा कर्ज अदा करके कोठीके मालिक बन सकते थे। परन्तु उन्हे वकालत तो करनी नही थी या यो कहे कि वे तो बिना फीस लिए देशकी वकालत करना चाहते थे; इसलिए उन्होने इस महल-जैसी कोठीको दान करनेका निश्चय किया और उसे न्यासियोको सौप दिया। परन्तु उनकी इच्छा थी कि मै इस यात्राके दौरान कलकत्तेमे तो उनके इस पुराने मकानमे ही ठहरूँ। मै इसीलिए यहाँ आकर ठहरा हूँ।

परन्तु जानना एक बात है, और देखना दूसरी बात। इस घरमें प्रवेश करते समय मेरा हृदय रो उठा। मेरी आँखोमे आँसू भर आये। उसके मालिक और उसकी मालिकीके बिना मुझे वह मकान जेल-जैसा मालूम हुआ। मेरे लिए उसमे रहना मुश्किल हो गया और मेरे मनमे यह भाव अभीतक बना ही हुआ है।

मै जानता हूँ कि यह मोह है। देशबन्धुने इस मकानका कब्जा देकर अपने सिरपर से एक बोझ उतारा है। इस दम्पतीके लिए इस मकानका, जिसमे वे खो जा सकते है, क्या उपयोग था? वे इच्छा करते ही झोपडीको राजमहल बना सकते हैं। उन दोनोने इसे स्वेच्छासे त्यागा है। इसमें खेद करनेकी बात ही क्या है? यह तो हुई ज्ञानकी बात। यदि मुझमें यह ज्ञान न हो तो मुझे आजसे ही महल बनानेका उद्यम आरम्भ करना पड़े।

परन्तु देहाध्यास कही जाता है? जैसा दासने किया, क्या ससार ऐसा करता है? दुनिया तो महल मिले तो महलको ही लेना चाहती है। परन्तु इस मनुष्यने उसका त्याग कर दिया। धन्य है यह मनुष्य! मेरे आँसू प्रेमके है। मुझे जो चोट

लगी है वह भी इस प्रेमके कारण ही। और क्या यह स्वार्थमूलक नही है? यदि देशबन्धुके साथ मेरा कुछ भी सम्बन्ध न होता और मैंने इस मकानमें उनके राज्य करनेकी बात न सुनी होती तो मुझे यह चोट न लगती। मैंने महल तो बहुत-से देखे हैं, जिनके मालिक उन्हे छोड़कर दुनियासे ही चले गये। परन्तु उनमे प्रवेश करते हुए मेरी आँखोंसे आँसू नही गिरे, इसलिए मेरा यह रोना स्वार्थमूलक भी है।

चित्तरजन दासने महल-जैसी कोठीका त्याग करके ठीक ही किया है। क्योंकि इससे उनकी सेवाकी कीमत बढ़ गई है।

बंगाली लोग दीवाने हैं। जिस तरह दास दीवाने हैं उसी तरह प्रफुल्लचन्द्र राय भी दीवाने हैं। जब वे मचपर आकर व्याख्यान देते हैं तब मानो नाचते हैं। तब कोई नही मान सकता कि वे ज्ञानी है। वे मेजपर हाथ मारते हैं और जमीन-पर पैर पटकते है। अपनी बगलामे जब चाहते हैं अग्रेजी भी मिला डालते हैं। जब बोलते हैं तब अपनेको भूल जाते हैं। वे अपने विचारोके आवेशमें ही मग्न हो जाते हैं। दूसरे लोग हँसेंगे या क्या कहेंगे, उन्हे इस बातकी परवाह शायद ही होती है। हम जबतक उनकी बातें न सुने और उनकी आँखोसे अपनी आँखें न मिलावे तब-तक हमे उनकी महत्ताका कुछ भी पता नही लग सकता। मुझे एक घटना याद आती है। तब मै कलकत्तामे गोखलेके साथ रहता था और आचार्य राय उनके पडोसमे रहते थे। एक बार हम तीनो स्टेशनपर गये। मेरे पास तो मेरा तीसरे दर्जेका टिकट था। वे दोनो मुझे पहुँचाने आये थे। तीसरे दर्जेके मुसाफिरको पहुँचानेके लिए आनेवाले तो भिखारी ही हो सकते है। परन्तु गोखलेका भरा हुआ चेहरा, रेशमी पगड़ी और रेशमी किनारीकी धोती, टिकट बाबूकी दृष्टिमें काफी थे। परन्तु इस अस्थिपजर-जैसे ब्रह्मचारीको जो मैला-सा कुरता पहने दुबला-पतला भिखारी-जैसा दिखता था, बिना टिकट कौन अन्दर जाने देता? जहाँतक मुझे याद है, वे बिना दुःख अनुभव किये बाहर ही खड़े रहे। और गोखले उस खचाखच भरे डिब्बमे किसी तरह मेरे घुस जानेपर मेरी हठधर्मीकी टीका करते हुए उनके पास लौटे। आचार्य राय असख्य छात्रोके हृदयपर राज्य क्यो करते है? वे भी त्यागी हैं; और अब तो वे खादीके दीवाने हो गये हैं। शिक्षा-विभागकी एक बगालिन अधिष्ठात्रीसे यह कहते हुए उन्हें जरा भी संकोच नही हुआ था, 'आप खादी नही पहनती तो किस काम की?' वे ऐसा न कहे तो उनके खुलनाके भिखारियोकी बनाई खादीको कौन खरीदे?

हम उसी रात फरीदपुर रवाना हो गये। भाई शंकरलालने मेरे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें सतीश बाबूको बहुत डरा दिया था; अतः वे मेरे लिए कोई कमी कैसे रख सकते थे? वे भी तो इन्ही दीवानोंके दलमे है न? उन्होने छोटी-छोटी बातें भी पूछ रखी थी। मेरी पीठको आराम देनेके लिए जहाँ भी मैं बैठता वहाँ एक पीठिका तैयार रहती थी। उसे सादी-और कीमती न होनेसे मै बरदाश्त कर लेता था। परन्तु जब हम स्टेशनपर पहुँचे तो देखा कि मेरे लिए और मेरे साथियोके लिए पहले दर्जेका डिब्बा तैयार है। इसमें फरीदपुरकी स्वागत समितिका भी हिस्सा था। अभी हाल ही मे एक सज्जनने 'यग इडिया' में एक सवाल पूछा था कि आप

अमीर है या गरीब? मुझे लगा मानो बंगालने इसका जवाब दे दिया है? मैंने पूछा कि दूसरा दर्जा मेरे आरामके लिए काफी नही समझा गया, क्या बंगालमे इसलिए इस पहले दर्जेके डिब्बेकी व्यवस्था की गई है? जवाब मिला कि हमने तो दूसरे दर्जेका किराया देकर पहला दर्जा हासिल किया है। किन्तु क्या मुझे इससे सन्तोष हो सकता था? मेरे सिद्धान्तके अनुसार तो कोई अनुचित वस्तु मुफ्त दे तो भी हम उसे इस्तेमाल नही कर सकते। यदि कोई ऐसा मूर्ख या दीवाना मिल जाये जो मुझे हीरेका हार मुफ्त पहनाये तो क्या मुझे वह पहनना चाहिए? क्या मेरे साथी भी जो मेरे लेखनका काम करते है और पाखाना भी साफ कर सकते है, मुझ-जैसे ही नाजुक है? इतने नाजुक है कि उनके लिए भी दूसरे दर्जेके किरायेमे पहले दर्जेकी व्यवस्था करनी जरूरी हो? फिर यह काम रेलविभागकी कृपादृष्टिके बिना सम्भव नही है। क्या हम ऐसा निजी एहसान ले सकते है? मुझे तो इसमे प्रेमका पागलपन या अतिरेक ही दिखाई दिया।

अब इसका मुझे उपाय करना है। हरि इच्छा बलीयसी।

परन्तु यह प्रेमका पागलपन एकतरफा न था। हम रातको फरीदपुरके लिए रवाना हुए। मैंने समझा था कि मुझे रास्तेमे पर्याप्त शान्ति मिलेगी और मैं अपनी नीदकी पिछली कमी पूरी कर सकूँगा। परन्तु ऐसा हुआ नही। 'आलो आलो' तथा दूसरी आवाजोसे नीद मुश्किलसे ही आ सकी। गाडी भी प्राय· हर स्टेशनपर रुकती थी। हर स्टेशनपर लोगोकी भीड। 'दर्शन' की पुकार। मैंने तो रातको 'दर्शन' न देनेका निश्चय कर रखा था सो मैं पडा तो रहा, परन्तु फायदा क्या हुआ? मेरे साथी भी लोगोको बहुत समझाते थे। वे ज्यों-ज्यों समझाते थे, लोग त्यो-त्यो अधिक उत्सुक होते थे। 'वन्देमातरम्', 'महात्मा गाधीकी जय', 'आलो आलो' का घोष ऊँचा ही चढता जाता था। 'आलो' कहते है बत्तीको। डिब्बेकी बत्ती बुझा दी गई थी। लोग बत्ती जलवाकर अन्तत मुझे सोता हुआ ही देख लेना चाहते थे। फरीदपुर पहुँचनेतक हर स्टेशनपर यही हालत रही। मैं प्रार्थना करता रहा — 'हे ईश्वर! तू इस प्रेमसे मेरी रक्षा कर।'

फरीदपुर पहुँचे, वहाँ देखा कि भीड बहुत है। परन्तु वहाँ प्रबन्ध सामान्यत अच्छा था। स्वागत समितिके अध्यक्ष बाबू सुरेन्द्र विश्वासने लोगोसे कह रखा था कि वे शोरगुल और धक्का-मुक्की न करे। उन्होने उतरनेकी जगह ही मोटर खडी कर रखी थी; इसलिए हम बिना दिक्कत नगरमे पहुँच गये।

प्रदर्शनी

मुझे ठहरनेके मुकामपर पहुँचनेसे पहले प्रदर्शनीके उद्घाटनकी रस्म पूरी करनी थी। प्रदर्शनीमे सरकारी कृषि-विभागसे अनाजके बीजो आदिकी सहायता ली गई थी। परन्तु मुख्य भाग खादीका ही था। विश्वास बाबूने निश्चय किया था कि हाथकते सूत, ऊन या रेशमसे बने कपडेके सिवा कोई दूसरा कपडा प्रदर्शनीमे न रखा जायेगा। इससे प्रदर्शनीके खादी-विभागको बहुत सहायता मिली। लोगोका ध्यान उसकी तरफ ज्यादासे-ज्यादा गया और उन्हे मिलके कपडेसे उसका मुकाबला करनेका मौका नही

आया। खादीम महीन कपडा भी बहुत दिखाई दिया। महीन सूतका भी खासा वड़ा ढेर था। एक जगह दो मनुष्य कुर्सीपर बैठकर सूत कातते रहे थे। उन्हे सूत लपेटनेकी क्रिया करनेमे अलग समय नही देना पडता था। सूत जैसे-जैसे कतता जाता था वैसे-वैसे लिपटता जाता था। इस चरखेसे प्रति घटा ज्यादा सूत कतता हुआ तो दिखाई नही दिया; परन्तु इतना अवश्य था कि इससे एक क्रिया कम करनी पडती थी और चूँकि उसका चक्र पाँवसे चलता था, इसलिए दोनो हाथ खाली रहते थे।

सिरामपुरके सरकारी कारखानेसे इस शर्तपर करघे लाये गये थे कि उसमे ताने-वाने, दोनोमे हाथका ही सूत काममे लाया जायेगा। और पूछताछसे मालूम हुआ कि आजकल उक्त कारखानेमे विद्यार्थियोको हाथसे सूत कातनेकी क्रिया भी सिखाई जाती है। फटका करघे वहुतसे थे और उन सवमे हाथकते सूतका ताना लगाया जाता था। इस विभागमे सन और ऊन भी हाथसे काते जाते थे।

वहाँ चमड़ा रगने और कमाने आदिकी क्रियाएँ भी दिखाई जाती थी।

कताईकी प्रतियोगितामे अनेक स्त्री-पुरुष भाग ले रहे थे इसलिए दोनो विभाग जुदे-जुदे रखे गये थे। लगभग सब महीन सूत ही कातते थे। इससे मेरे मनपर तो यह छाप पडी है कि यदि बगाल उत्साहपूर्वक काम करेगा तो खादीमे प्रथम स्थान प्राप्त कर लेगा। बंगालमे खादी न पहननेका हठ ठाननेवाले लोग कम देखे जाते है। कलाके प्रति रुचि वहुत है। सूत कातनेका कौशल भी वहुत है। मध्यम वर्गकी वहुत-सी स्त्रियाँ सुन्दर सूत कातती है और भावपूर्वक कातती है। मै स्वागत समितिके अध्यक्षके घरमे ठहराया गया था। उनकी धर्मपत्नीने अपने परिवारके लिए बहुत सूत काता है। वे अपने घरके वाडेमे देव-कपास बोती है और रुईको धुने विना ही सूत कातती है। मेरे लिए पूनियाँ तो इस भली बहनने ही बनाई थी। पूनियाँ बहुत वढ़िया थी। वे जरूरतके अनुसार कपासको हाथसे उतार कर व्यवस्थित रूपसे रखती जाती है और वातकी-बातमे पूनियोंका ढेर लगा देती है। लगता है कि बगालमे स्वराज्यवादी बड़ी तादादमे चरखा चलाने लगे है। बिश्वास बाबू खुद स्वराज्यवादी है। कलकत्ताकी एक काग्रेस कमेटीके अध्यक्ष भी स्वराज्यवादी है। उन्होने सार्वजनिक सभामे मेरे पास अपना काता हुआ सूत भेजा था। फरीदपुरमें तो बहुतसे लोग पूर्ण रूपसे खादी पहने हुए दिखाई दिये। स्त्रियोकी एक खास सभा की गई थी। उसमे भी दूसरी और जगहोसे——खासतौरसे गुजरातसे——ज्यादा स्त्रियाँ खादी पहने हुए थी। मैंने देखा कि बगाली वहनें साड़ीमे चुन्नट नही रखती, इसलिए उनको इतनी लम्बी साडीकी जरूरत नही होती। किन्तु खादीकी साड़ी पहननेवाली बहनोकी सख्या अधिक थी, इसका कारण यह नही था। यही कहा जा सकता है कि उनमे समझ अधिक है। हाँ, यह बात सच है कि कितनी ही स्त्रियो और पुरुषोने खादी सिर्फ इसी अवसरके लिए पहनी थी।

यह तो फरीदपुरकी जो छाप मुझपर पडी, वही मैंने दी। मै यह दौरा खादीके ही निमित्त कर रहा हूँ। इसलिए अभी तो मुझे वहुत अनुभव होगा। तमाम अनुभवो-का योगफल क्या होगा——सो तो पाठकोंको बादमें ही मालूम होगा। प्रदर्शनीमे प्रवेश शुल्क कुछ नही रखा गया था। इसलिए उससे हजारो लोगोने लाभ उठाया। फरीद-

पुरसे रवाना होनेसे पहले दूसरे दिन खादीकी भिन्न-भिन्न क्रियाएँ करनेवालोको इनाम बाँटा गया। पदक तथा पुरस्कार प्राप्त करनेवालोमे स्त्रियों और पुरुषोकी संख्या सम्भवत. बरावर थी। पदक पानेवालोमें तीन मुसलमान थे। उत्तम पीजनेवालों, पूनियाँ बनानेवालो, कातनेवालो और बुननेवालोको श्रेणीके अनुसार पदक और पुरस्कार दिये गये थे।

परिषद्में[1]

देशबन्धुका शरीर बहुत ही दुर्वल दिखाई दिया। उनकी आवाज मंद हो गई है। कमजोरी बहुत है। सच कहे तो अभी उनका स्वास्थ्य ऐसे कामोमें भाग लेनेके योग्य नही हो पाया है। अभी तो डाक्टरोंने उन्हे सलाह दी है कि वे शक्ति प्राप्त करनेके लिए यूरोप या दार्जिलिंग जाये। परन्तु वे वहाँ मजबूरीमे ही जाना चाहते है।

परिषद्के लिए खास तौरपर खादीका मण्डप बनाया गया था। उसमें सादगी बहुत थी। बैठनेका इन्तजाम फर्शपर ही रखा गया था। कुर्सी एक भी नही थी। मण्डप बनानेका काम तम्बू बनानेवालोके जिम्मे रखा गया था। वे कहते हैं कि उन्होंने वह शुद्ध खादीका बनाया है। पर हम सबको इसमे बहुत शक है कि वह सचमुच खादीका ही है। मै जाँच कर रहा हूँ। पर मुख्य बात यह है कि व्यवस्थापकोका मंशा शुद्ध खादीका ही मण्डप बनवानेका था और उन्होने मान लिया था कि वह खादीका ही है।

देशबन्धुका भाषण संक्षिप्त और रोचक था। उनके प्रत्येक वाक्यमे अहिंसाकी गूँज थी। उन्होने उस भाषणमे स्पष्ट बताया कि हिन्दुस्तानका उद्धार अहिंसात्मक संघर्षसे ही हो सकता है। यदि कोई मुझसे इस भाषणके नीचे सही करनेके लिए कहे तो मुझे शायद ही कोई वाक्य या शब्द बदलनेकी जरूरत होगी।

प्रस्तावोका उनके भाषणके अनुसार होना स्वाभाविक ही था। इससे विषय-समितिमें खासा झगड़ा भी हुआ। यहाँतक नौबत आई कि देशबन्धुको इस्तीफा देनेकी बात कहनी पड़ी। परन्तु अन्तमे उनके प्रभावकी जय हुई और परिषद्के महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव निर्विघ्न पास हो गये।

अंजुमनकी सभा

मुसलमान भाइयोने अलग सभाका[2] आयोजन किया था। उसमें हम दोनो निमन्त्रित थे। इसलिए देशबन्धु, उनकी धर्मपत्नी श्रीमती वासन्ती देवी और मै वहाँ गये थे। फरीदपुरमें कुछ कटुता फैल रही है। उसके लिए मैंने पंचसे फैसला करानेका सुझाव देकर मुसलमानोको सलाह दी कि वे परिषद्मे शरीक हो जाये। फलत. कोई १०० सज्जन रविवारको सायं परिषद्मे आये थे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-५-१९२५

१. बंगाल प्रान्तीय कृषि परिषद्।

२. यह ३ मई सन् १९२५ को हुई थी।

१६. भाषण: प्रवर्तक आश्रम, चन्द्रनगरमें

५ मई, १९२५

महात्मा गांधीने कहा कि इस आश्रममें बहुत दिनोंसे आनेकी इच्छा थी, मुझे प्रसन्नता है कि अन्तमें वह पूरी हो गई। मैंने संघके आन्तरिक जीवन और इतिहासके बारेमें निर्मल बाबूसे[1] बहुत-कुछ सुना है। मैं इसके उच्च आदर्श और उद्देश्यकी हार्दिक सराहना करता हूँ।' मुझे बताया गया है कि संघकी आधारशिला आध्यात्मिक जीवनपर रखी गई है। सदस्य आत्मिक ज्ञान और अन्तःप्रेरणाका अनुसरण करते हैं तथा सनातन धर्मके पुरातन अविकल आदर्शके अनुरूप आचरण करते हैं। उनका सिद्धान्त केवल त्याग नहीं है, वह केवल भौतिकताको नकारनेका दर्शन भी नहीं है, बल्कि सृष्टिके मूलमें ईश्वरका जो आशय है उसे चरितार्थ करनेके लिए जीवनको उसकी समग्रताके साथ स्वीकार करना भी उसमें शामिल है। यह वैदिक धर्म है और इसकी आधारशिला आत्मदर्शन या आध्यात्मिक आत्म-साक्षात्कार है। यह कहना सोलह आने सही नहीं है कि मेरे जीवनका आदर्श इससे सर्वथा भिन्न होनेके साथ-साथ अधिकांशतया राजनीतिक है। मैं जो-कुछ करता हूँ, मैं कहूँ तो उसमें मेरा आदर्श परमार्थ रहता है। मैं इस अर्थमें सच्चा मुमुक्षु या मोक्षार्थी हूँ कि मैं देश और मानवताकी सेवा और मुक्तिके द्वारा ही अपनी मुक्ति चाहता हूँ। मैं इस बातमें सचमुच ही अध्यात्मवादी हूँ, क्योंकि मेरा उद्देश्य आत्मोत्सर्ग है और मेरा सारा जीवन और कार्य पूरी तौरपर श्रीकृष्ण और भारतमाताके चरणोंमें अर्पित है। इसलिए मैं जोर देकर कहता हूँ कि मेरा आदर्श प्रवर्तक संघके आदर्शसे किसी प्रकार भी भिन्न नहीं है। अब मैं उस उत्कृष्ट प्रणालीके बारेमें कुछ कहना चाहता हूँ जिसके अन्तर्गत आश्रममें आध्यात्मिक शिक्षा दी जाती है। मुझे इस बातसे प्रसन्नता है कि आपका आदर्श-वाक्य स्वावलम्बन है। मेरा विश्वास है कि आर्थिक नींवसे हीन आध्यात्मिकता लँगड़ी है। संघने आध्यात्मिक जीवन तथा आर्थिक तपस्याके बीच जो अद्वितीय सामञ्जस्य स्थापित किया है, मैं उसके लिए बधाई देता हूँ।

इसके बाद चरखा और खादीका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जब मैं यह जान लूँगा कि संघने मिलावटी सूत का सर्वथा बहिष्कार कर दिया है तब मुझे और भी अधिक प्रसन्नता होगी। अब मैं जहाँ भी जाऊँगा लोगोंसे जिस प्रकार यह कहूँगा कि आप चन्द्रनगरके प्रवर्तक आश्रममें आध्यात्मिक संस्कृति तथा अनुकरणीय चरित्र-निर्माणके सम्बन्धमें होनेवाले उत्तम कार्यको देखनेके लिए जायें, उसी प्रकार मेरी यह कहनेकी भी लालसा है कि संघ एक आदर्श संस्थाके रूपमें केवल शुद्ध खादीका कार्य कर रहा है।

१. निर्मलकुमार वसु।

उन्होंने आगे बताया, जब मैं यह देखता हूँ कि भारतके करोड़ों पुत्र और पुत्रियाँ जिन्हे प्रतिदिन एक कौर भोजन भी उपलब्ध नहीं होता, नितान्त कष्ट भोग रहे हैं, तब मेरा हृदय उनके लिए भर-भर आता है। गरीबीके भारसे पीड़ित भारतके इन करोड़ों लोगोंके लिए तथा राष्ट्रव्यापी एकताके लिए मैं खद्दर, हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा अस्पृश्यता-निवारणके त्रिसूत्री धर्मका उपदेश देता हूँ। यही मेरे लिए व्यावहारिक वेदान्त है, क्योंकि मैं सब में व्याप्त एक आत्मामें विश्वास करता हूँ और अपने जीवनके लिए किसीको भी कोई हानि नहीं पहुँचाऊँगा। यही मेरे अहिंसाके आदर्श-का सच्चा अर्थ है। मैं आप लोगोंसे आग्रह करता हूँ कि आप कातें, बुनें और खद्दर पहनें, क्योंकि भारतके करोड़ों लोगोंके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेका एकमात्र साधन मुझे यही दीख पड़ा है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ८-५-१९२५

१७. भाषण: अष्टाङ्ग आयुर्वेद विद्यालयके शिलान्यास-समारोहमें

कलकत्ता

६ मई, १९२५

मित्रो,

मैंने इस महान संस्थाके शिलान्यासके निमन्त्रणको अत्यन्त संकोचके साथ स्वीकार किया है। आप जानते हैं कि कुछ वर्ष पहले मैंने तिब्बिया कालेजका[1] उद्घाटन किया था, जिसके कर्त्ता-धर्त्ता मेरे सम्मानित मित्र और बन्धु हकीम अजमलखाँ थे। उस अवसरपर मुझे काफी संकोच हुआ था। किन्तु मैं उस निमन्त्रणको अस्वीकार नही कर सका था, क्योंकि वह मुझे मेरे एक अन्तरंग मित्रने दिया था। इसी प्रकारका निमन्त्रण मेरे एक दूसरे अन्तरंग मित्रने जब मेरे पास भेजा, तो उसे भी मैं अस्वीकार नही कर सका। किन्तु यदि मैं चिकित्सा-पद्धतियोंके, खास तौरपर आयुर्वेदिक और यूनानी पद्धतियोंके, बारेमें और आम तौरपर चिकित्सकोंके पेशेके बारेमें अपने हार्दिक विचार व्यक्त न करूँ तो वह मेरे अपने साथ तथा यहाँ उपस्थित लोगोंके साथ ईमानदारी नही होगी। मैंने पहले-पहल १९०८ में इस चिकित्सा-पद्धति और पेशेके बारेमें अपने विचार व्यक्त किये थे।[2] मैंने उस समय जो-कुछ लिखा था उसमें इतने वर्ष बीत जानेपर भी, मैं एक शब्दतक नही बदल पा रहा हूँ। इसमें कोई सन्देह नही कि १९०८ में मैंने जो-कुछ लिखा था वह संक्षिप्त था। वह इस विषयका सरसरी तौरपर किया गया

१. देखिए खण्ड १९, पृष्ठ ३६०-३६२।

२. यहाँ १९०९ होना चाहिए। देखिए खण्ड १०, हिन्द स्वराज्य।

उल्लेख था। और वह बहुतसे अन्य विषयोंके साथ एक छोटी-सी पुस्तिकामें सम्मिलित किया गया था। उसके बाद मै अपने उसी विचारका और अधिक विस्तार करता रहा हूँ। परन्तु मैने जो विचार १९०८ मे प्रकट किया था उसके तर्क-बलमे कोई कमी नही आने दी। जब भी मै चिकित्सकोंके पास जाता हूँ और उनकी औषधियोंका उपयोग करता हूँ, मै मनमें डरता रहता हूँ और मेरे बदनमें कँपकँपी छूटती है। और यह इस बातके बावजूद कि यरवदा जेलमे[1] मुझे एक ऐसे शल्य-चिकित्सकके तेज चाकूके सामने आत्म-समर्पण करना पडा जिससे मै भली प्रकार परिचिततक न था। मनुष्य तथा मित्रके रूपमे मुझे कर्नल मैडॉकपर[2] पूरा-पूरा विश्वास था, लेकिन उनके तरीकों तथा उनकी बताई औषधियोपर मुझे पूरा विश्वास नही था। यदि आज आप उनके पास जाये तो वे आपको दो प्रकारके प्रमाणपत्र देंगे — एक मेरे पक्षमे और दूसरा मेरे विपक्षमे। वे प्रमाण पत्र देगे कि कुछ हदतक मै उनकी बात माननेवाला और उनपर उनकी आशासे अधिक भरोसा रखनेवाला मरीज था। किन्तु वे यह भी कहेंगे और प्रमाणित करेंगे कि उन्हे जितने रोगियोसे अबतक साबका पडा था उनमें वे मेरी गिनती सबसे मुश्किल किस्मके मरीजोमे करते हैं। उनको मेरे निषेधोंसे निबटना पडता था। मै कहा करता था मै फलाँ चीज पिऊँगा, फलाँ नही। और मेरी स्वीकृतियोंकी अपेक्षा मेरे निषेध, सख्यामे अधिक होते थे। इसलिए जब कभी वे चाहते कि मेरा वजन कुछ बढ़ जाये, वे हमेशा मेरे पास परेशानसे आते, वे मुझे उन औषधियोको लेनके लिए राजी करनेमे अत्यन्त कठिनाईसे ही सफल हो पाते, जिन्हे वे समझते थे कि मुझे लेनी ही चाहिए और मै समझता था कि मुझे नही लेनी चाहिए (हँसी)। स्थिति ऐसी ही थी। मैंने इस पेशेके सम्बन्धमे अपने विचारोंका एक खाका ही आपके सामने रखा है, किन्तु अगर मै आपको बतला दूँ कि मै उच्चादर्शपूर्ण, वर्द्धमान किन्तु अभी मुट्ठीभर लोगोंतक ही सीमित उस विचारधाराका पोषक हूँ जो रोगकी चिकित्सा-की अपेक्षा उसके आमूल निवारणमे ज्यादा विश्वास करती है, जो यह मानती है कि प्रकृति अपने काम स्वय पूरे कर लेती है और जो पीडित मानवताके लिए भी प्रकृतिको अपना काम स्वय करने देनेमे विश्वास करती है तो आप मेरे विचारको ज्यादा अच्छी तरह समझ सकेंगे। जरूरत केवल इस बातकी है कि हम प्रकृतिको अपना काम करने दे। मै उस विचार धाराका माननेवाला हूँ जिसके अनुसार डाक्टरो व वैद्यो और शल्य चिकित्सकोकी ओरसे जितना ही कम हस्तक्षेप होगा उतना ही मानव-समाज और उसकी नैतिकताके लिए कल्याणकारी होगा। मैं उस चिकित्सक-वर्गका हूँ जो तेजीके साथ इस निष्कर्षपर पहुँच रहा है कि चिकित्सकोका कर्त्तव्य केवल शारीरिक आवश्यकताओकी पूर्ति करना नही, बल्कि यह भी उनका धार्मिक कर्त्तव्य है कि वे शरीरके अन्दर रहनेवाली उस आत्माका भी खयाल करे जो आखिरकार अविनाशी, अजर-अमर है। मै उन चिकित्सकोकी विचार धाराका पोषक हूँ जो सोचते हैं कि वे शरीरके लिए ऐसा कुछ भी नही करेंगे, जिससे आत्माको, अन्त करणको, लेशमात्र भी

१. सन् १९२४ में, देखिए खण्ड २३।

२. ससून अस्पताल, पूनाके सबसे बड़े सर्जन, जिन्होंने गांधीजीका ऑपरेशन किया था।

हानि पहुँचती हो। जब मैं अपने कुछ प्रख्यात चिकित्सक मित्रोको — जो सचमुच मेरे मित्र ही है — बहुधा यह बहस करते हुए सुनता हूँ कि क्या आत्मा नामकी कोई वस्तु है भी, यदि होती तो वह उनके तेज चाकूसे बचकर नही जा सकती थी, तब — आप मेरी बातपर विश्वास कीजिए — मुझे बहुत दु.ख होता है। उनको इस बारेमें कुछ भी मालूम नही है। शल्य चिकित्सकका चाकू आत्माको कोई नुकसान नही पहुँचा सकता और चीरफाड़ चाहे जितनी गहरी की जाये, चाकू आत्मातक नही पहुँच पाता (हँसी)। इसलिए मुझे इस समारोहमे सम्मिलित होते बडा सकोच हो रहा है।

क्या अन्य स्थानोकी अपेक्षा किसी स्थान विशेषमे अस्पतालोकी सख्याका अधिक होना उसकी अपेक्षाकृत उन्नत सभ्यताका सूचक माना जाना चाहिए? क्या सचमुच यह सभ्यताकी कसौटी है? औषधोके सूचीपत्रमे और चिकित्सकोकी निर्देशिकाओकी यह जानकारी कि औषधियोकी बिक्री और अस्पतालोमे तथा दवाखानोमे मरीजोंकी सख्यामे दिन दूनी, रात चौगुनी वृद्धि हो रही है, क्या वास्तविक प्रगतिका लक्षण है? मुझे इसमे सन्देह है। किन्तु मै जानता हूँ कि इसका दूसरा पक्ष भी है। मैं इस प्रश्नके एक पक्षपर ही जोर देनेकी चेष्टा नही करना चाहता। किन्तु मैंने पूरी विनम्रताके साथ [ये बाते] उन लोगोके सामने विचारके लिए रखी हैं जिनको इस महान सस्थाके प्रबन्धका दायित्व सौपा गया है। मैंने अबतक चिकित्सा-पद्धति और शल्य चिकित्साके ही सम्बन्धमे सामान्य तौरपर कुछ बाते कही हैं, किन्तु जब मैं आयुर्वेदिक और यूनानी पद्धतियोपर आता हूँ तो मुझे और भी सन्देह होने लगता है। आप शायद न जानते हो कि मैं अपने बचपनसे ही बहुतसे वैद्योके सम्पर्कमे रहा हूँ। उनमे से कुछ तो अपनी बस्तियोमें काफी प्रसिद्ध थे। एक ऐसा भी समय था जब मैं आयुर्वेदिक औषधियोका बहुत बडा हामी था। और मैं पाश्चात्य औषधियोका ही सेवन करनेवाले अपने मित्रोको वैद्योके पास जानेके लिए कहता था। किन्तु मुझे आपके सामने यह स्वीकार करते खेद होता है कि अब मेरा सारा भ्रम दूर हो चुका है। मैंने देखा है कि वैद्यो और हकीमोमे विवेकशीलताका अभाव है। उनमे मानवीयताकी भी कमी है। विनयके बदले, मैंने उनमे यह अहकार देखा है कि वे सब-कुछ जानते हैं (हँसी), और ऐसी कोई बीमारी नही जिसका वे इलाज नही कर सकते (पुन हँसी)। मैंने देखा, उनका यह विश्वास है कि वे नाडी देखकर ही जान सकते हैं कि रोगी 'एपेंडिसाइटिस' या इसी प्रकारके अन्य किसी रोगसे पीडित है या नही। जब मैंने समझ लिया कि उनका निदान गलत, और अधिकतर मामलोमे अपूर्ण होता है तब मेरे मनमे यह विचार आया कि यह तो पाखण्ड ही है। जब मैंने औषधियोके विज्ञापनोपर नजर डाली — मै ऐसा नही कहता कि ये विज्ञापन कविराजोके थे — वे हकीमों और वैद्यराजोके थे — तब मुझ लज्जासे सिर झुका लेना पडा। ये विज्ञापन मनुष्यकी निम्नतम वासनाको उभारते है और हमारे समाचारपत्रो और पत्रिकाओको विकृत बनाते हैं। मैंने इन्हे ऐसी पत्रिकाओमें देखा है जो स्त्री-शिक्षासे सम्बन्धित हैं। मैंने इन्हे ऐसे पत्रोमे भी देखा है जो नवयुवकोकी शिक्षा और ज्ञान-वृद्धिसे सम्बन्धित

हैं। मैंने पाया है कि ये विज्ञापन मनको ललचानेवाले तो होते हैं और ऐसी निन्द्य वस्तुओके विज्ञापन छपानेवालोको इनसे निश्चय ही अर्थ-लाभ भी होता है, पर मैंने महसूस किया कि ये लोग पीड़ित मानवताके मर्मस्थलोको गहरा आघात पहुँचा रहे हैं।

इसीलिए इस भव्य संस्थाका शिलान्यास करनेके साथ ही, और प्रार्थनापूर्ण हृदयसे इसकी सफलताकी कामना करनेके साथ ही मैं चाहता हूँ कि इसके आयोजनकर्त्ता मेरी मर्यादाओको भी समझ ले और मेरी उस चेतावनीका अभिप्राय समझ ले जो मैंने उन लोगोको दी है जिनसे सस्थाको आर्थिक सहायता देनेके लिए कहा गया है। मै यह चेतावनी अत्यन्त विनम्रताके साथ दे रहा हूँ। ईश्वर करे यह सस्था उन लोगोके लिए उपयोगी सिद्ध हो जो सचमुच पीडित है। ईश्वर करे यह सस्था न केवल शारीरिक आवश्यकताओकी ओर ध्यान दे बल्कि उस अविनाशी आत्माकी ओर भी ध्यान दे जो शरीरमे वास करती है। ईश्वर करे, इस संस्थाके बारेमें कभी कोई ऐसा न कह पाये कि यह मानवकी निम्नतम प्रवृत्तिको उभारती है, यह बगालके नवयुवकोकी निम्नतम रुचियोकी तुष्टि करती है। मैं बंगालके नवयुवकोंको जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि चिकित्सक औषधियाँ पिला-पिलाकर उनके सुन्दर जीवनको किस तरह खोखला बनाते जा रहे हैं। चिकित्सक भी ऐसे है, जो लॉर्ड जस्टिस स्टीफेनके शब्दोमे, 'लोगोके शरीरोमें ऐसी औषधियाँ भरते जा रहे हैं जिनके बारेमे उनकी जानकारी बहुत ही थोड़ी है और लोगोके शरीरके सम्बन्धमे उनका ज्ञान उतना भी नही है।'[1] इसलिए मै वर्तमान व्यवस्थापको और साथ ही भावी व्यवस्थापकोसे उसी प्रकार आग्रहपूर्वक कहता हूँ जिस प्रकार कि मैंने मद्रासके इसी प्रकारके एक समारोहमें[2] कहा था कि वे विवेक, मानवीयता और सचाईसे काम लें और ईश्वरसे डरे। इन शब्दोके साथ, मैं अपना भाषण समाप्त करता हूँ। आप लोग मुझे रास्ता दे तो मुझे उस स्थानपर जानेमें अत्यन्त प्रसन्नता होगी, जहाँ मुझे आधारशिला रखनी है। मुझे सस्थाकी सफलताके लिए प्रार्थना करनेमे भी उतनी ही प्रसन्नता होगी।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ८-५-१९२५

१. देखिए खण्ड ११, पृष्ठ ४३०।

२. देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ३८३-८४।

१८. गो-रक्षा

सही हो या गलत, मैंने, बडे हिचकते, डरते और कांपते मनसे अखिल भारतीय गो-रक्षा मण्डलके सचालनका भार अपने कन्धोपर लिया है। इस मण्डलकी स्थापना गत मासकी २८ तारीखको बम्बईके माधव बागमे की गई थी।

यह एक बहुत बडा काम है जिसके लिए मै सर्वथा अनुपयुक्त हूँ। मेरा खयाल है कि मै रोगको समझता हूँ। मै उसका उपचार भी जानता हूँ, किन्तु न तो मेरे पास समय है और न ऐसे आदमी ही है कि जो उन विचारोको कार्यान्वित करे, जिनके अनुसार इस सस्थाको चलाना है।

गो-रक्षा मेरे लिए केवल गौओकी रक्षा नही है। इसका अर्थ है ससारके समस्त असहाय और निर्बल प्राणियोकी रक्षा करना। परन्तु अभी इस समय तो गो-रक्षाका अर्थ मुख्यतया गौ और उसकी सन्तति और व्युत्पत्तिके अनुसार सभी पशुओ, जैसे कि भैसोकी क्रूरता और वधसे रक्षा करना है।

ससारमे भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ २० करोडसे भी अधिक लोगोके लिए गो-रक्षा एक धार्मिक कर्त्तव्य है। फिर भी भारतके मवेशी कृशकाय और दुर्बल है, उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है, उन्हे पेट भर खाना नही मिलता, उनसे बहुत अधिक काम लिया जाता है, उनकी नस्ल बिगडती जा रही है और उनके बारेमे यहाँतक कहा जाता है कि ये देशके लिए भार-स्वरूप है। अन्य किसी भी देशमे केवल इस कारण दूध देनेवाले मवेशियोको बूचडखानेमे नही ले जाया जाता कि वे समयसे बहुत पहले ही दूध देना बन्द कर देते है। कदाचित् अन्य किसी देशके मवेशी उनके घासचारे इत्यादिपर होनेवाले खर्चसे कम कीमतका दूध नही देते।

इस हालतको कैसे सुधारा जाये? नि सन्देह ऐसी गो-रक्षा समितियोकी सख्या बढानेसे नही जो अपने कर्त्तव्यको नही जानती, और नि सन्देह मुसलमानोके साथ ऐसी बातोके लिए झगडनेसे भी नही जो यदि वे चाहे भी तो उनके बसमे नही है। यहाँ मै उन मुसलमानोके बारेमे नही कह रहा हूँ जो हिन्दुओकी भावनाको आघात पहुँचाने-के खयालसे ही इरादतन अन्य पशुओके सुलभ होते हुए भी, गोवध इस ढगसे करते है मानो वे हिन्दुओको दिखानेके लिए ही कर रहे हो। ऐसे उदाहरण अपवाद स्वरूप है। मै मवेशी सम्बन्धी आय-व्ययकी बात सोच रहा हूँ। यदि हम उनकी देखभाल करे, तो शेष स्वयमेव ठीक हो जायेगा। यदि हमारे मवेशी आर्थिक रूपसे भार बने रहेगे, और यदि यह दशा सुधारी नही जा सकती तो कोई भी उन्हे नष्ट होने तथा मारे जानसे कदापि नही बचा सकता। इसलिए इस समस्यापर शान्त भावसे, भावावेशमें आये बिना, विचार करनेकी आवश्यकता है। यदि धर्मके पीछे विवेक और प्रबुद्धता न हो तो वह एक निरर्थक भावना बनकर रह जाता है और तत्त्वहीनता के कारण उसका विनाश अवश्यम्भावी हो जाता है। वह ज्ञान ही है जो अन्तमे मुक्ति प्रदान करता है। यदि गो-भक्तिके साथ ज्ञानका मेल न हो तो उसे अकाल मृत्युके मुँहमें

ढकेलनेका यह एक अचूक उपाय है। इसलिए जिस व्यक्तिको पशु समस्याका यथार्थ ज्ञान है, यदि उसके पास गायके प्रति दयाभाव है तो वह अपनेमे सभी वर्तमान और भावी गो-रक्षा समितियोका प्रतिनिधित्व करता है। इस अखिल भारतीय मण्डलकी स्थापना इसी उद्देश्यको सामने रखकर ऐसे व्यक्तियोकों खोज-निकालनेके लिए की गई है जो पवित्र आचरणवाले हो, निर्मल हृदय हो, गोप्रेमी हो, शिक्षित हो और जो अपना सारा समय अनुसन्धान तथा प्रबन्धके कार्योमे लगा सके। इसलिए मैं ऐसा मन्त्री चाहता हूँ जिसकी योग्यताका उल्लेख मैंने अपने उद्घाटन भाषणमे किया है, जो इन्ही पृष्ठोमे अन्यत्र प्रकाशित है। कोषाध्यक्षकी अभी नियुक्ति करनी है। इस बीच प्रारम्भिक काम चलानेके लिए अस्थायी समिति, अस्थायी कोषाध्यक्ष तथा अस्थायी मन्त्रीकी नियुक्ति कर ली गई है। यह समिति किसी भी रूपमे सम्पूर्ण भारतका प्रतिनिधित्व नही करती क्योकि समितिकी नियुक्ति उन्ही लोगोमे से करना जरूरी था जो उपस्थित थे। इस अस्थायी समितिके सदस्योने मण्डलकी दूसरी बैठक होनेसे पहले अर्थात् अगले तीन मासके अन्ततक बारह सौ से अधिक सदस्य बनानेका काम अपने जिम्मे लिया है। यदि इस मण्डलको प्रतिनिधि सस्था बनाना है तो इसमे सभी प्रान्तोके सदस्य होने चाहिए। अस्थायी मन्त्री बम्बई-निवासी श्रीयुत नगीनदास अमूलखराय है। और अस्थायी कोषाध्यक्ष झवेरी बाजार, बम्बईके श्रीयुत रेवाशकर जगजीवन झवेरी[1] है। मुझे आशा है कि जो लोग गो-रक्षामे दिलचस्पी रखते है वे अपना चन्दा मन्त्री या कोषाध्यक्षके पास भेज देंगे। चन्दा ५ रुपया प्रतिवर्ष है जो पहले ही ले लिया जाता है, या रुपयोके स्थानपर दो हजार गज हाथकता सूत प्रतिमास भेजा जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९२५

१९. फिर वही

उन क्रान्तिकारी महाशयने फिरसे पत्र लिखा है, परन्तु मैं उनसे यह कहे बिना नही रह सकता कि इस पत्रको लिखनेमे उन्होने इतने धैर्यसे काम नही लिया है जितना कि पिछले पत्रमें[2] लिया था। इसमे उन्होने बहुत-सी असम्बद्ध बाते लिख मारी हैं और अपनी दलीलोमे लापरवाहीसे काम लिया है। जहाँतक मैं देख पाया हूँ उनकी दलीलोका भण्डार खाली हो चुका है और उनके पास कहनेके लिए कोई नई बात नही रह गई है। पर यदि वे फिर भी पत्र लिखना चाहे तो उसे कृपापूर्वक अधिक सावधानीके साथ लिखना और विचारोको सक्षिप्त रूप देना बेहतर होगा। अबके उनका यह काम मैंने किया है। पर वे तो प्रकाश पानेके उत्सुक है; इसलिए उन्हे चाहिए कि वे मेरे लेखोको ध्यानपूर्वक पढे, शान्त चित्तसे उनपर विचार करे और तब जो लिखना हो साफ ढगसे और सक्षेपमे लिख भेजे। यदि वे सिर्फ

१. डा० प्राणजीवन मेहताके भाई।

२. देखिए खण्ड २६, पृष्ठ १३४-३६, ४७८-८४।

प्रश्न पूछना चाहते हैं तो केवल प्रश्न ही लिख कर भेज दे — दलीले देते हुए मुझे अपनी बातका कायल करनेकी कोशिश न करे। क्रान्तिकारी गतिविधिके सम्बन्धमे मै सभी-कुछ जाननेकी डीग नही हाँकता, परन्तु चूँकि उसके सम्बन्धमे मुझे बहुत-कुछ विचार, अवलोकन और लेखन करना पडा है, अतएव पत्र-लेखकके पास मुझे बतानेके योग्य नई बाते बहुत नही हो सकती। इसलिए जहाँ मै उनकी बातपर खुले दिलसे विचार करनेका वचन देता हूँ वहाँ मेरा उनसे यह भी अनुरोध होगा कि कृपया राष्ट्रके एक कार्यव्यस्त सेवक तथा क्रान्तिकारियोके एक सच्चे हितैषीको उन सब बातोको पढनेके परिश्रमसे बचाइए, जिनके पढनेकी जरूरत उसे है ही नही। मै क्रान्तिकारियोकी बातोसे वाकिफ रहनेके सम्बन्धमे उत्सुक जरूर हूँ और उसके लिए यह साप्ताहिक ही मेरा साधन बन सकता है। उनके लिए मेरे हृदयमे सद्भाव और स्नेह है, क्योकि एक चीज उनमे और मुझमे समान रूपसे मौजूद है और वह है कष्ट-सहनकी क्षमता। लेकिन चूँकि मै विनम्रभावसे उन्हे गलतीपर तथा गुमराह मानता हूँ, मेरी अभिलाषा उन्हे उनकी गलतीसे विरत करने या खुद अपनी भूलको दुरुस्त करने की है।

मेरे क्रान्तिकारी मित्रका पहला प्रश्न है:

> "क्रान्तिकारियोंने देशकी प्रगतिमें बाधा पैदा कर दी है।" आपने खुद ही बंग-भंगके सिलसिलेमें जो लिखा था अब क्या आपका वह खयाल नहीं रहा? आपने लिखा था, "विभाजन होनेके बाद लोगोंने देखा कि प्रार्थनापत्रके पीछे बल चाहिए, लोगोंमें कष्ट उठानेकी शक्ति चाहिए। यह नई भावना ही विभाजनका मुख्य परिणाम मानी जायेगी। . . .जो बातें लोग डरते-डरते या लुके-छिपे करते थे, वे खुल्लम-खुल्ला कही और लिखी जाने लगीं। . . .पहले अंग्रेजोंको देखते ही छोटे-बड़े सब भाग जाते थे। अब उनका डर चला गया। लोगोने मारे-पीटे जानेकी भी परवाह नहीं की। जेल जानेमें उन्होंने बुराई नहीं मानी और इस समय 'भारतके पुत्ररत्न' निर्वासित होकर [विदेशोंमें] विराजमान हैं।"[1] बंग-भंगके बाद वाला आन्दोलन क्रान्तिकारी आन्दोलन ही था। अधिक सही तो यह कहना होगा कि उसे जनताके असन्तोषका मूर्तिमन्त रूप माना जाये — और वे 'भारतके पुत्ररत्न' जिनका आपने उल्लेख किया है अधिकांशमें क्रांतिकारी या अर्ध-क्रान्तिकारी थे। तब ये कथित अज्ञानी और गुमराह लोग देशकी भीरुता, यदि नष्ट नहीं तो कम कैसे कर पाये? क्या महज इसलिए कि क्रान्तिकारी लोग आपके विचित्र अहिंसा-सिद्धान्तको नही समझ पाते, आप उन्हें अज्ञानी कहेंगे?

'हिन्द स्वराज्य' में[2] व्यक्त किये गये मेरे विचारोमे जिन्हे लेखकने उद्धृत किया है तथा मेरे आजके विचारोमे कोई अन्तर नही है। जिन लोगोने बग-भगके विरोधमे

१. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ १२।
२. देखिए खण्ड १०, पृष्ठ ६-६९।

उठाये गये आन्दोलनका नेतृत्व किया था, उन्होने वे कोई भी और कैसे भी क्यो न रहे हो, निस्सन्देह लोगोके मनसे अंग्रेज लोगोका डर दूर कर दिया था। यह देशकी स्पष्ट सेवा थी। परन्तु वीरता और आत्म-त्यागका अर्थ किसीको मार डालना नही है। ये क्रान्तिकारी महाशय याद रखे कि 'हिन्द स्वराज्य' नामक पुस्तिका, जैसा कि उस पुस्तिकासे स्पष्ट है, लिखी गई थी एक क्रान्तिकारीकी ही दलीलो और तरीकोके उत्तरमे। पुस्तक लिखनेका अभिप्राय यह था कि क्रान्तिकारियोको उस चीजसे जो उनके पास है, कही अधिक उत्तम वस्तु दी जाये, और जिससे उनके अन्दरकी तमाम वीरता और आत्मत्यागके भाव भी बने रहे। मै क्रान्तिकारियोको केवल इसलिए अज्ञानी नही कहता कि वे मेरे साधनोको नही समझते या उनकी कदर नही करते, बल्कि इसलिए कि वे मुझे युद्ध-कलाके ज्ञाता भी प्रतीत नही होते। जिन-जिन वीरोका उल्लेख उन्होने किया है वे युद्ध-कलाका ज्ञान रखते थे और उनके पास अपने आदमी भी थे।

दूसरा प्रश्न यह है—

> **क्या टेरेंस मैक्स्विनी जिसने ७१ दिनका उपवास करके प्राण त्यागे, हिंसा षड्यन्त्रादिसे नितान्त अनभिज्ञ कोई भोलाभाला व्यक्ति था? वह अन्ततक गुप्त षड्यन्त्रों, खूँरेजी और आतंकवादका हामी रहा और अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'स्वतन्त्रताके सिद्धान्त' में लिखित विचारोंका प्रतिपादन करता रहा। यदि आप मैक्स्विनीको भोलाभाला और स्वच्छ मतिवाला व्यक्ति कह सकते है तो क्या गोपीमोहन साहाके[1] लिए भी उन्हीं शब्दोंका प्रयोग करनेको तैयार न होंगे?**

खेद है कि मै मैक्स्विनीका जीवन-चरित्र इतना नही जानता कि कोई राय दे सकूँ। पर यदि उसने गुप्त षड्यन्त्र, खूँरेजी और आतकवादकी हिमायत की हो तो उसके साधनोपर भी वही आक्षेप किये जा सकते है जो मै इन पृष्ठोमे कर चुका हूँ। मैने उन्हे कभी भोलाभाला और पाक-साफ नही माना। जब उनके उपवासकी बात प्रकाशित हुई थी, तभी मैने उसपर अपनी यह राय प्रकट की थी कि मेरी दृष्टिमे उनकी यह भूल थी। मै हर प्रकारके उपवासका समर्थन नही करता।

तीसरा सवाल इस प्रकार है—

> **आप वर्ण-व्यवस्थाको मानते है। इसलिए यह स्वयंसिद्ध है कि आप क्षत्रियोंको भी अन्य वर्णोकी तरह उपयोगी मानते है। इस निःक्षत्रिय युगमें, भारतवर्षमें क्रान्तिकारी लोग क्षत्रिय होनेका दावा करते है। 'क्षतात् त्रायते इति क्षत्रियः'। मै भारतको आज अभूतपूर्व क्षतकी अवस्थामें देखता हूँ और इसलिए वह समय आ गया है जब देशको क्षत्रियोंकी अत्यन्त आवश्यकता है। महान स्मृतिकार मनु महाराजने क्षत्रियोंके लिए चार साधनोंकी व्यवस्था की है—साम, दाम, दण्ड, भेद। इस सम्बन्धमें मै स्वामी विवेकानन्दके ग्रन्थसे**

१. 'गोपीनाथ साहा' होना चाहिए; देखिए खण्ड २४, पृष्ठ २०५-६।

कुछ वाक्य उद्धृत करता हूँ। आशा है कि आप उनसे सब बातें बखूबी समझ जायेंगे।

सभी महान् आचार्योंने कहा है 'न पापे प्रति पापः स्यात्,' अर्थात् उन्होंने अप्रतिकारको सर्वोच्च नैतिक आदर्श माना है। किन्तु हम सब जानते हैं कि यदि संसारकी वर्तमान अवस्थामें लोग इस सिद्धान्तका पालन करने लगें तो समाज-व्यवस्था खण्ड-खण्ड हो जायेगी, समाजका विनाश हो जायेगा, हिंस्र और दुरात्मा लोग हमारे जन-धन और प्राणतक का हरण कर लेंगे। एक ही दिवसके ऐसे निष्क्रिय प्रतिरोधके परिणामस्वरूप देश तहस-नहस हो जायेगा। मुझे मालूम है कि असमंजसकी इस अवस्थामें आप क्या कहेंगे। आप उसका भिन्न अर्थ लगायेंगे। परन्तु आप देखेंगे कि उन्होंने इस प्रकारका अर्थ लगानेका अवसर ही नहीं दिया है, क्योंकि वे उसी स्थलपर कहते हैं: "आपमें से कुछ लोगोंने तो भगवद्गीताको पढ़ा होगा और आपमें से पश्चिमके बहुतसे लोगोंको पहले अध्यायमें यह देखकर ताज्जुब हुआ होगा कि श्रीकृष्णने अर्जुनको, जब वह अपने प्रतिपक्षियोंमें अपने गुरुजनों और सम्बन्धियोंको देखता है और अप्रतिकारको प्रेमका सर्वोच्च आदर्श बताता हुआ युद्ध करनेसे इनकार कर देता है, पाखण्डी और भीरु कहा है। इससे हम एक बड़ी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं — किसी भी बातके दोनों छोर एकसे ही हुआ करते हैं; आत्यन्तिक भाव और आत्यन्तिक अभाव दोनोंका स्वरूप सदा ही एक समान होता है; जब प्रकाशकी लहरोंका कम्पन बहुत कम होता है तब हम कुछ नहीं देख सकते और जब वे बहुत तेज होती हैं तब भी हम नहीं देख पाते। यही बात ध्वनिपर घटित है। जब वह बहुत धीमी होती है तब भी हम उसे नहीं सुन सकते और जब बहुत ऊँची होती है तब भी नहीं सुन सकते। यही बात प्रतिकार और अप्रतिकारपर घटित होती है।. . .सबसे पहले हमें यह समझनेकी कोशिश करनी चाहिए कि हमारे पास प्रतिकारकी शक्ति है भी या नहीं। पर यदि वह हमारे पास हो और फिर हम उसका प्रयोग न करें तो हमारा वह कृत्य महान् प्रेमका कृत्य होगा; परन्तु यदि हम मुकाबिला नहीं कर सकते और फिर भी हम यह दिखायें या अपने मनमें यह मान लें कि हम तो उच्च प्रेमभावसे प्रेरित होते हैं तो हम नीतिकी दृष्टिसे जो बात ठीक बैठती है उसके ठीक विपरीत आचरण करेंगे। अर्जुन अपने सामने सबल सेनाको देखकर भयभीत हो गया, उसका 'प्रेम' देश और राजाके प्रति अपने कर्त्तव्यको भुला देनेका कारण बन बैठा। इसीलिए श्रीकृष्णने उसे दम्भी कहा — 'अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।' इसलिए 'उठ और युद्ध कर।'" अब मैं कुछ प्रश्न करनेके अलावा और कुछ नहीं कहना चाहता। क्या आपका खयाल है कि आपके ये पक्के शान्तिप्रेमी कहलानेवाले शिष्य इस विदेशी नौकरशाहीका

मुकाबिला भौतिक बल द्वारा कर सकते है? यदि हाँ, तो किस तरह? यदि नहीं तो फिर आपकी यह अहिंसा सबलका अस्त्र किस तरह है? इन प्रश्नोंका असन्दिग्ध उत्तर दीजिए, जिससे कि कोई उसका अन्य अर्थ न लगा सके।

इसके साथ ही मै आपसे ये प्रश्न और पूछ रहा हूँ। इन प्रश्नोंका सीधा सम्बन्ध आपके वक्तव्यसे है। क्या आपके स्वराज्यमें सेनाके लिए कोई स्थान है? क्या आपकी स्वराज्य सरकार फौज रखेगी? यदि हाँ तो क्या वह लड़ेगी या वह अपने शत्रुओंके मुकाबिलेमें सत्याग्रह करेगी?

हाँ, मेरे जीवन-सिद्धान्तोमे क्षत्रियोके लिए स्थान जरूर है पर मैंने उनकी परिभाषा 'गीता' से प्राप्त की है। जो समरसे अर्थात् खतरेसे पलायन नही करता वह क्षत्रिय है। ज्यों-ज्यो ससार प्रगति करता जाता है, त्यो-त्यो पुराने शब्द नया मूल्य ग्रहण करते जाते है। मनु तथा अन्य स्मृतिकारोने आचारके शाश्वत — सर्वकालीन सिद्धान्त निर्धारित नही किये थे। उन्होंने जीवनके कुछ शाश्वत सिद्धान्तोंका निरूपण किया और उन्ही सिद्धान्तोको सामने रखकर, उनको थोडा या बहुत आधार मान कर अपने युगके लिए आचार-नियमोकी सृष्टि-रचना की। मैं स्वर्गमे प्रवेश पानेके लिए भी घूस और छल-कपटके साधनोको अपनानेके लिए तैयार नहीं हूँ, फिर भारतकी स्वतन्त्रताकी तो बात ही क्या है? क्योकि यदि ऐसे साधनोसे स्वतन्त्रता या स्वर्ग मिला तो न वह आजादी आजादी होगी, न वह स्वर्ग स्वर्ग ही होगा।

स्वामी विवेकानन्दके जो वाक्य उद्धृत किये गये है उनकी पुष्टि मैंने नहीं की है। इस उद्धरणमे न तो वह ताजगी है न वह सक्षिप्तता ही जो उस महापुरुषकी अधिकांश रचनाओमे पाई जाती है। पर वे चाहे उनके ग्रन्थोसे लिये गये हो अथवा न लिये गये हों, उन्हे मेरा दिल गवारा नही कर रहा है। यदि बहु-सख्यक लोग अप्रतिकारके सिद्धान्तका पालन करने लगे तो ससारकी दशा वह न रहे जो आज है। जिन व्यक्तियोने उसका पालन किया है उन्होने गँवाया कुछ भी नही है। हिंसक व्यक्तियों और दुष्टात्माओने उन्हे कत्ल नही कर डाला; बल्कि इसके विपरीत अहिंसा-प्रेमी और सौजन्यपूर्ण व्यक्तियोके समक्ष उनकी हिंस्रभावना और दुष्टता दोनों दूर हो गई है।

'गीता' का अपना अर्थ मै पहले ही प्रकट कर चुका हूँ। उसमें पुण्य और पापके शाश्वत युद्धका वर्णन है। और, जब पुण्य और पापकी विभाजक रेखा बहुत सूक्ष्म हो जाती है, और जब कर्तव्यका निर्णय इतना कठिन हो, तब अर्जुनकी तरह किसमें मोह उत्पन्न नही होता?

फिर भी मैं इस बातका हृदयसे समर्थन करता हूँ कि सच्चा अहिंसा-परायण व्यक्ति वही है जो कि प्रहार करनेकी क्षमता रखते हुए भी अहिंसात्मक बना रहता हो। इसलिए मै यह दावा जरूर करता हूँ कि मेरा शिष्य (और मेरा शिष्य सिर्फ एक ही है — मैं स्वयं) प्रहार करनेकी काबलियत जरूर रखता है। हाँ, यह मैं मानता हूँ कि वह इसमे प्रवीण नही है और शायद कारगर तौरपर प्रहार न भी कर सके। पर उसे ऐसा करनेकी जरा भी अभिलाषा नही है। मेरे जीवनमे मुझे अपने प्रतिपक्षि-

योको गोलीसे उड़ा देनेके और शहादतका ताज पहननेके कितने ही मौके आये; पर उनमे से किसीपर गोली चलानेको मेरा दिल तैयार न हुआ, क्योकि मै नही चाहता था कि वे मुझपर गोली चलाये — चाहे वे मेरे साधनोको कितना ही नापसन्द क्यो न करते हो। मै तो यह चाहता था कि वे मुझे मेरी गलती समझा दे। मै भी उन्हे उनकी गलती समझानेकी कोशिश कर रहा था। 'आत्मन. प्रतिकूलानि परेषाम् न समाचरेत्।'

अफसोस! आजके मेरे स्वराज्यमे सैनिकोके लिए स्थान है। मेरे ये क्रान्तिकारी मित्र इस बातको जान ले कि मैने अग्रेजोके द्वारा इस सारे देशके नि शस्त्रीकरणको और लोगोमे तज्जनित पौरुषहीनताको अग्रेजोका महाजघन्य अपराध बताया है। मै देशको सार्वत्रिक अहिंसाका उपदेश करनेकी क्षमता नही रखता। इसलिए मै अहिंसाका सकुचित रूपमे ही उपदेश करता हूँ। वह देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके उद्देश्यतक और इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धोको शान्तिमय साधनोसे नियमित करनेके उद्देश्यतक परिमित है। परन्तु यहाँ मेरी अक्षमताका कोई गलत अर्थ न समझे — उसे अहिंसा-सिद्धान्तकी अक्षमता न समझ ले। वह मुझे अपनी बुद्धि द्वारा ज्वलन्त दिखाई देता है। मेरा हृदय उसपर मुग्ध है; परन्तु अभी मै अपने जीवनमे उसको इतना नही उतार सका हूँ जितना कि अहिंसाके सार्वत्रिक और सफल प्रचारके लिए आवश्यक है। इस महान् कार्यके लिए मेरी अभी आवश्यक प्रगति नही हो पाई है। अभी मेरे अन्दर क्रोध मौजूद है — अब भी मेरे अन्दर द्वैतभाव बना हुआ है। मै क्रोध या विकारोको नियन्त्रित कर सकता हूँ, उन्हे अपने अधीन रखता हूँ, परन्तु अहिंसाके सार्वत्रिक और सफल प्रचारके लिए मुझे विकारोसे पूर्णत रहित हो जानेकी आवश्यकता है। मेरी स्थिति ऐसी हो जानी चाहिए कि मुझसे कोई पाप बने ही नही। इसलिए क्रान्तिकारी लोग मेरे साथ और मेरे लिए ईश्वरसे प्रार्थना करे कि मै शीघ्र ही उस अवस्थाको पहुँच जाऊँ। परन्तु तबतक वे मेरे साथ एक कदम आगे बढे जो मुझे सूर्यके प्रकाशके सदृश स्पष्ट दिखाई पड रहा है, अर्थात् — भारतकी स्वाधीनता बिलकुल शान्तिमय उपायोसे प्राप्त करना। और स्वराज्य प्राप्त हो जानेपर जबतक मै या और कोई देशके अन्दर शान्ति-सुव्यवस्था कायम रखने और बाहरी आक्रमणकारियोका मुकाबला करनेके लिए पुलिस-सेनासे कोई बेहतर उपाय नही सुझाता तबतक इन दायित्वोका निर्वाह करनेके लिए स्वराज्यके अन्तर्गत भी मै और आप लोग शिक्षित, बुद्धिमान और अनुशासित पुलिस-सेना रखेगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९२५

२०. टिप्पणियाँ

मुझे देवता न बनाइये

डूंगरगढ़ स्टेशनपर एक मुस्लिम मित्रने कहा कि मुझे देवता-पदपर बैठानेकी कार्रवाई, खासकर गोंड लोगोमे, जारी है। ऐसी बुतपरस्तीपर मै अपनी घोर व्यथा और जबरदस्त नापसन्दगी कई बार जाहिर कर चुका हूँ। मै तो एक मामूली मर्त्य प्राणी हूँ और मानवीय शरीरमे पाई जानेवाली तमाम कमजोरियाँ मुझमे है। गोंड लोग मुझे देवता-पदपर प्रतिष्ठित करनेकी मूर्खता करे, इसकी अपेक्षा उन लोगोको मेरे सीधे-सादे पैगामका मतलब समझाया जाये तो कही ज्यादा अच्छा होगा। उनके ऐसा करनेसे न तो उन्हे ही लाभ होगा, और न मुझे ही; उलटा उनके सदृश भोले-भाले लोगोका अधविश्वासी स्वभाव बढेगा। मै हर काग्रेसीसे इस बातमे सहायताकी याचना करता हूँ कि वे गोंडोको इस भूलसे सावधान कर दे और उन्हे धोखेसे बचाये।

अस्पृश्य

कलकत्ता जाते हुए रास्तेमे एक स्टेशनपर कितने ही अस्पृश्योको जमा हुए देखकर मुझे बडा हर्ष हुआ। उन्होने मुझे अपने हाथका कता-बुना खादीका थान भेंट किया। कार्यकर्त्ताओने मुझे बताया कि ठोस और मजबूत काम तो वास्तवमे इन अस्पृश्योके द्वारा ही हो रहा है। वे शराब पीना और मुरदार माँस खाना छोड रहे है और खादीको अपना रहे है। यदि मुझसे कोई यह नही कहता कि उस झार-सोंगड़ा स्टेशनपर मिलनेवाले लोग अस्पृश्य है तो मै उन्हे उस जनसमूहमे पहचान ही न पाता।

खादी

मै यह सुनकर दग रह गया कि रायगढमे एक भी चरखा नही चल रहा है। जो लोग मुझसे मिलने आये थे उन्होने मुझसे कहा कि हममे से बहुतेरे तो देहातोसे गरीब भाइयो द्वारा लाया गया कपडा पहने हुए है। उन्होने बताया कि गाँवके लोगोमे तो खादी बहुत प्रिय हो गई है और यदि उनके अन्दर प्रचार और ज्यादा दिलचस्पीसे किया जाये तो वह आसानीसे घर-घर पहुँच सकती है। मध्यप्रान्त और छत्तीसगढ़के लोगोमे चरखे और करघोंपर काम करनेकी विशेष योग्यता है, बस जरूरत है सिर्फ सगठनकी।

बालकी खाल निकालना

उस दिन एक प्रसिद्ध काग्रेसी मुझसे मिले थे। मै उनको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखता हूँ और वे तो अनुशासनके बडे कायल भी है। उनके बदनपर सब कपड़े खादीके नही थे। मैने तो समझा था कि उनके तनपर सब कपडे खादीके ही होगे। पर जो लोग उन्हीके नगरमे रहते थे वे उनको ज्यादा जानते-बूझते थे। वे मुझसे

कहने लगे, 'गाधीजी! जरा इनको समझाइए कि ये काग्रेसके प्रस्तावका तो पालन किया करे।' उन महाशयने साफ शब्दोमें स्वीकार करते हुए कहा कि मेरे वदनपर सव कपडे खादीके नही है—पर दलील यह पेश की कि इस समय मै आपसे मिलने आया हूँ—काग्रेसके कामके लिए नही आया हूँ। यह वालकी खाल खीचना था। खासकर एक अनुशासनप्रिय मनुष्यके मुँहसे ऐसी बात सुननेकी आशा मैंने न की थी। उनके साथ मेरा कोई खानगी ताल्लुक न था। वे मुझसे सार्वजनिक मामलोके बारेमें बाते करने आये थे और इसलिए मैंने सोचा कि मुझसे मिलनेके लिए आना काग्रेसका या सार्वजनिक कार्य नही तो और क्या है? पर उन सज्जनने इसके खिलाफ कहा कि नही, मै तो आपसे मिलनेके लिए आया हूँ, काग्रेसके कामसे नही। तब मैंने उनसे कहा कि ऐसे बालकी खाल निकालनेसे स्वराज्य प्राप्त होनेमे देरी हो रही है। मेरी रायमे काग्रेसका प्रस्ताव काग्रेसके सदस्यको अवसर विशेषपर यह छूट देता है कि वह खादी न पहननेपर भी काग्रेसका सदस्य बना रह सकता है। उसके द्वारा कोई सदस्य सदा खादी पहननेके दायित्वसे मुक्त नही हो सकता। यदि चोटीके लोग खादी न पहननेके पक्षमे ऐसे सूक्ष्म भेद-प्रभेद खोजने लगेगे तो जनसाधारणके लिए खादी पहननेको तैयार होना तबतक असम्भव रहेगा जबतक वह विदेशी मलमलसे भी सस्ती न हो जाये और आसानीसे न मिलने लगे। जनता उम्मीद तो यह रखती है कि हमारे नेता लोग उनसे की जानेवाली शत-प्रतिशत अपेक्षाएँ पूरी करे, ताकि जनता कमसे-कम पचीस फीसदी अपेक्षाएँ पूरी कर सके।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ७-५-१९२५

२१. बंगालके अनुभव

[७ मई, १९२५]

पहले दरजेका अपवाद

गुजरात समझता है कि वह और प्रान्तोकी अपेक्षा मेरे शरीरकी ज्यादा चिन्ता रख सकता है। लेकिन जान पडता है बगालका ख्याल इससे अलग है। बगालका कहना है, "मुझको पहले दरजेके सैलूनमे यात्रा करनी चाहिए।" मेरी यात्राके लिए पहले दरजेके सैलूनके प्रबन्ध सम्बन्धी अपवादके बारेमे मैंने सतीश बाबूसे पूछा तो उन्होने कहा, इसके लिए फरीदपुरकी स्वागत समिति जिम्मेवार है। उन्होने दूसरा कारण यह बताया कि रातमे गाडी बदलनेकी दिक्कतसे बचनेके लिए पूरा डिब्बा ले लिया गया है और पूरे डिब्बेमे पहले दरजेका हिस्सा जरूर रहता है; फिर रेलवे अधिकारियोने उदारतापूर्वक पहले दरजेकी सीटोके लिए किराया दूसरे दरजेके बराबर ही लिया है। पाठक इस बातको जान ले कि एक डिब्बेका मतलब है, दूसरे दरजेकी कमसे-कम १० टिकटोका किराया देना। यह कहा गया है कि मेरे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे यह सब

जरूरी है और मै जबतक बगालमे हूँ तबतक व्यवस्थापकोंकी किसी भूल-चूकसे मेरे स्वास्थ्यको कोई खतरा हर्गिज पैदा नही होना चाहिए।

लेकिन मेरी राय तो यह है कि यदि मै इस तरह गादी-गदैलोमे लिपटा रहा तो मेरी इस यात्रासे कुछ ज्यादा लाभ नही हो सकता। मुझे तो जहाँतक हो सके अपने लाखो गरीब भाई-बहनोकी तरह रहना और घूमना-फिरना चाहिए या फिर लोकहितकी दृष्टिसे यात्रा करना बिलकुल बन्द कर देना चाहिए। मुझे इस बातका पूरा यकीन है कि जैसे वाइसराय शिमलाके अपने अगम्य भवनमे रहते हुए लाखो भारतवासियोके हृदयपर अधिकार नही कर सकते, वैसे ही मै भी पहले दरजेका दुगुना ही नही, पँचगुना किराया खर्च करके अपना सन्देश लाखो लोगोको प्रभावकारी रूपमे नही पहुँचा सकता। ज्यादासे-ज्यादा दूसरे दरजेकी एक सीटका किराया खर्च करनेकी बात तो सहन की जा सकती है। आरामदेह पहले दरजेमे यात्रा करते देखकर गरीब लोग मुझे अपने-जैसा नही मान सकते। इसलिए वे जब-जब डिब्बेके नजदीक आते थे, सहमे-सहमे झाँकते थे। मुझे भी उन्हे देखकर बेचैनी मालूम होती थी। मेरे शरीरको चाहे ज्यादा आराम मिला हो, परन्तु मेरी आत्मा तो विकल थी। मुझे यकीन हो चुका है कि जबतक हम गरीबोके साथ कष्ट सहन करना न सीखेंगे तबतक हम उनका स्नेह नही प्राप्त कर सकते। मैने हमेशा यह पाया है कि मै जब भी तीसरे दरजेमे सफरके लायक नही रहा या मैने यह माना कि मै तीसरे दरजेमे सफर करने लायक नही हूँ तभी गरीबोकी सेवा करनेकी मेरी आधी उपयोगिता चली गई। यदि मैने तीसरे दरजेमे यात्रा न की होती तो मै कभी उनको न समझ पाता और न अपनेको गरीबो-जैसा महसूस कर पाता। मै अपने जीवनमे अपने तीसरे दरजेके सफरके अनुभवोको निहायत कीमती मानता हूँ। अत मुझे लगता है कि दूसरा दरजा मेरी हद है और मुझे उससे आगे नही जाना चाहिए। यदि मित्रगण चाहते हो कि मै भ्रमण द्वारा देशकी सेवा करूँ तो वे मुझे इस हदसे आगे न ले जाये और न उसका लालच दे। जब मै दूसरे दरजेमे भी यात्रा करने लायक न रह जाऊँ तो मुझे यात्राके द्वारा सेवा करना बन्द कर देना चाहिए। परमेश्वर स्पष्ट चेतावनी नही देता। वह सकेत-मात्र देता है और जो लोग समझना चाहे वे उसे समझ सकते है। स्वागत समितिकी व्यवस्थामे तो मै बहुत फेरफार नही कर रहा हूँ; परन्तु अबसे मै अपने मित्रोको नोटिस दे रहा हूँ कि वे अपने प्रेमकी अतिशयतासे मेरा दम न घोटे। वे उतनी ही सावधानी बरतें जो औचित्यकी सीमाको पार न कर जाये। किन्तु उन्हे कुछ बाते तो ईश्वरपर भी छोड देनी चाहिए। यदि ईश्वरकी इच्छा होगी कि मै यात्रा न करूँ तो हमारी कोई भी सावधानी काम नही आ सकती और यदि वह चाहेगा कि मै भ्रमण करके कुछ सेवा करूँ तो सावधानी न बरतनेपर भी मै बीमार नही पड़ूँगा। मै उन्हे यह भी यकीन दिलाना चाहता हूँ कि मै खुद ही अपने शरीरकी बहुत-कुछ चिन्ता रखता हूँ और आवश्यक शारीरिक जरूरतोकी उपेक्षा नही करता। मै यह बात भी कृतज्ञतापूर्वक कह देना चाहता हूँ कि किसी भी प्रान्तने — यहाँतक कि गुजरातने भी मेरे प्रति बंगालसे अधिक प्रेम प्रदर्शित नही किया है। यह मेरे लिए बडे सौभाग्यकी बात है कि किसी भी प्रान्तमे मुझे परायेपनका अनुभव नही हुआ — बगालमे तो बिलकुल ही नही।

उचित दण्ड

यद्यपि स्वागत समितिने मेरी सुख-सुविधाका बहुत अधिक ध्यान रखा था, फिर भी दैवेच्छा कुछ और ही थी, क्योकि फरीदपुर जाते हुए रास्तेमे लगभग हर स्टेशनपर दर्शनार्थियोकी भीड़ने रातभर नीदमे विघ्न डाला। मेरे साथियोने इन अन्धभक्तोको शान्त करनेके बहुत प्रयत्न किये, किन्तु वे सब व्यर्थ हुए। मेरे साथियोने बहुत कहा कि मैं थकावटसे चूर-चूर हूँ, अत मुझे आराम देनेकी जरूरत है, किन्तु उन्होने उनकी बात नही सुनी। वत्ती, वत्ती — की जय' की आवाजोसे आकाश गूँज उठता और सोते हुए मुसाफिरोको बहुत कष्ट होता। भीडको उनका भी कोई खयाल नही था। मैं अटल रहा। यद्यपि इससे मेरे 'महात्मापन' के चले जानेका भय था किन्तु मैं अपने विस्तरसे नही उठा। मैं ऐसे असयत और अर्थहीन प्रेमकी माँग पूरी करना अपराध मानता था। इसमे कोई सन्देह नही है कि हमे अति कठोर अनुशासनकी आवश्यकता है। हमारा व्यक्तियो या देशके प्रति प्रेम सविवेक होना चाहिए। जबतक इसको सयत नही किया जाता तबतक यह व्यर्थ ही नष्ट होता रहेगा और अनजानमे प्रस्फुटित होकर कभी-कभी हानि भी पहुँचायेगा। हर गाँवमे मौन, विनयशील और समझदार कार्यकर्ता होने चाहिए जो लोगोका नेतृत्व करे और उनके प्रेमको देशके लिए सच्ची शक्तिके रूपमे बदले। 'जिसका कर्म शिव है, वही शिव है।' सच्चा प्रेम आधी रातके समय जयजयकार करनेमे नही है; बल्कि मौन रहकर राष्ट्रीय कार्य करनेमे है। यात्राके मध्य आनेवाले सब स्टेशनोके लोग मुझे या अपनी श्रद्धाभक्तिके भाजन अन्य व्यक्तियोको नही देख सकते। किन्तु वे सभी इन अवसरोका उपयोग अपनी काहिलीको छोड़ने और अधिक राष्ट्रीय कार्य करनेमे कर सकते है।

पागल बंगाली

बगाली पागल है। देशबन्धु चित्तरजन दासने अपना महल-जैसा घर राष्ट्रीय कार्यके निमित्त न्यासियोको दे दिया। मैं जानता हूँ कि इस इमारतपर कुछ कर्जा है। किन्तु यदि देशबन्धु चाहते तो अपनी शानदार वकालत फिर शुरू करके इसे एक सालमें ही चुका सकते थे। मैं जब इस इमारतमे घुसा तो मेरा मन उदास हो गया और मेरी आँखोमे बरबस आँसू आ गये। इस बातपर विचार करूँ तो मैं देख सकता हूँ कि इस भवनका त्याग करके वे एक भारसे मुक्त ही हुए है। किन्तु एक ससारीके रूपमे मैं यह भी जानता हूँ कि ऐसे लाखो लोग है जो ऐसा भार प्रसन्नतापूर्वक उठा लेगे और ऐसी भारी-भरकम इमारतमे रहते हुए सुख अनुभव करेगे। इसलिए जब मैंने घरमे प्रवेश किया और मुझे उसी कमरेमें ठहराया गया जिसमे कल तक भारतका महान देशभक्त रहता था तब मैं अपने आपको सँभाल न सका। किन्तु उनका पागलपन यही समाप्त नही हो सकता। वे बीमार है और कमजोर है। उन्हे बैठनेमे तकलीफ होती है और वे अपनी जगहसे तकलीफके साथ ही उठ सकते है। उनकी आवाजमे पहली-जैसी कडक नही रही है। किन्तु वे फिर भी अध्यक्षता अवश्य करेगे — यश कमानेके लिए नही, बल्कि सेवार्थ। वे विषय-समितिकी बैठकमे देरतक अवश्य बैठेंगे। वे उन लोगोसे बहस भी करेगे, जो यह समझना नही चाहते या

समझ नही सकते कि उनके लिए अपनी स्थितिका स्पष्टीकरण करना कितना आव-श्यक है।

एक वे ही पागल बगाली हो, यह वात भी नही है। महान् आचार्य राय भी तो हैं। वे जब मंचपर उछल-कूद करते हैं और कभी इस पैरको पटकते हैं और कभी उस पैरको, तब बिलकुल आत्मविस्मृत हो जाते हैं। बीच-बीचमे वे अपने बगला-भाषी श्रोताओंके सम्मुख बिना जरूरत अंग्रेजी बोलने लगते हैं। दूसरे लोग उनके बारेमे क्या खयाल करेंगे, वे इसकी परवाह ही नही करते। वे अपने विषयमे लीन हो जाते हैं। क्या कोई ऐसा मनुष्य, जो उन्हे भली-भाँति नही जानता, उन्हे देखकर कभी सोच सकता है कि वे ससारके एक महान वैज्ञानिक हैं? उन्हे अपने विज्ञान कालेजसे अब भी प्रेम है। उनके प्राण तो मानो उसीमे बसे हैं। किन्तु वे खादीके पीछे पागल हैं। उनका प्रेम विज्ञान और खादी दोनोंके बीच बँटा हुआ है। शायद वे खादीको वैज्ञानिक अनुसधानकी सच्ची उपज मानते हैं। जो भी हो, जिस मनुष्यको प्रकृतिसे उसके मूल्यवान रहस्योंको छीननेके लिए अतिसूक्ष्म उपकरणोंके प्रयोगमे रत होना था, वह यदि अपने समयका उपयोग चरखा चलानेमे करता है तो वह अवश्य ही पागल होगा। मैं ऐसे अनेक पागल बगालियोंके नाम गिना सकता हूँ। किन्तु पाठकोंको इन दो उज्ज्वल नररत्नोंके उदाहरणोंसे ही सन्तोष मानना चाहिए।

पीछे कुछ नहीं

मुझे देशबन्धुकी बात फिर उठानी ही होगी। कितने ही लोगोंने मुझसे पूछा: 'आखिर देशबन्धुके इस घोषणा-पत्रके पीछे क्या है?' मैंने प्रश्न करनेवालोंकी तरफसे यही बात उनसे पूछी थी। उन्होंने इसका जोरदार और अपने ही ढंगका उत्तर दिया:

> जितना सामने है, उतना ही उसके पीछे है। मेरा घोषणा-पत्र और मेरा भाषण यूरोपीय मित्रोंकी चुनौतीके जवाब हैं। मैंने उनसे बार-बार कहा है कि मैं हिंसासे घृणा करता हूँ। मैं मानता हूँ कि हिन्दुस्तानको आजादी अहिंसाके द्वारा ही मिल सकती है। तब उन्होंने मुझसे कहा, आप यही बात सर्वसाधा-रणमे दृढतापूर्वक स्पष्ट रूपसे कह दें। मुझे ऐसा करनेमे न तो कोई आपत्ति थी और न कोई हिचकिचाहट। मेरे घोषणा-पत्र और मेरे भाषणका सारा इति-हास यही है। उसमे मैंने क्रान्तिकारियोंके हिंसाभावकी और सरकारके दमनकी, जो कि हिंसाका ही दूसरा नाम है, दोनोंकी निन्दा की है। मैंने उनमे वे शर्ते भी पेश कर दी हैं जो मेरे जैसे एक स्वाभिमानी मनुष्यके सहयोगके लिए जरूरी हैं। कोई भी समझदार आदमी शान्त चित्तसे उनपर विचार करे और यदि उनमें या मेरी स्थिति सम्बन्धी वक्तव्यमे उसे दोष दिखाई दे तो वह मुझे बताये। अब आगे कार्रवाई करना यूरोपीयोंका और सरकारका काम है।

देशबन्धुका आशय जो मैंने समझा है, यही था। मैं उनके शब्दोंको देनेमे समर्थ नही हो पाया हूँ — मैंने तो सिर्फ उनके भावोंको — विचारोंको ही प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया है। उनका वक्तव्य बहुत ही सक्षिप्त, स्पष्ट और सयत है। उसमे

विचारपूर्वक इस वातका ध्यान रखा गया है कि उससे किसीका दिल न दुखे। उन्होने हिंसाकी जो निन्दा की है वह मीन-मेखसे परे है। यदि मुझसे इसका समर्थन करनेके लिए कहा जाये तो शायद मै इसमे एक भो शब्द या वाक्याश न वदलूं। मेरी रायमें उन्होने अग्रेजो और हमारे बीच विद्यमान खाईको सुन्दर ढगसे पाट दिया है। उसका लाभ उठाना अब उनका काम है।

प्रस्ताव

प्रस्ताव मुख्यत· भाषणसे निष्पन्न है। उनकी उपादेयताके सम्बन्धमे शका की गई है, क्योकि विषय समितिमे कुछ प्रस्तावोंके सम्वन्धमे मतभेद है। मतभेद तो थे, किन्तु मेरी रायमे इसी कारण इन प्रस्तावोंका महत्त्व और भी बढ जाता है। ये प्रस्ताव पूरे विचार और विवेचनके बाद स्वीकृत किये गये हैं। मतभेद व्यक्त करना प्रगतिका शुभ लक्षण है, उनको अमलमे लानेकी असमर्थताका नही।

खद्दरके विकासकी सम्भावनाएँ

बगालमें खादीके प्रचारके सम्बन्धमे जो नई बाते मालूम हुई है, मुझे इनकी आशा नही थी। फरीदपुरमे जो कृषि और उद्योग सम्वन्धी प्रदर्शनी हुई थी, उसे खद्दर प्रदर्शनी ही कहे तो ज्यादा ठीक होगा। प्रदर्शनीमे खद्दरको कोई मामूली स्थान नही दिया गया था। वह तो अन्य सभी प्रदर्शित वस्तुओपर छाया हुआ था। प्रदर्शनीमे कई जुलाहे थे, उनमें से कुछ कलापूर्ण नमूने बुन रहे थे, किन्तु सभी हाथ-कता सूत या रेशम काममें ला रहे थे। श्रीरामपुरके सरकारी औद्योगिक सस्थानने भी अपने कार्यकर्त्ता भेजे थे। वे पटसनका धागा कातकर और उससे सम्वन्धित अन्य प्रक्रियाएँ करके दिखाते थे। पटसन बगालमें एक बहुत बडा उद्योग है, अत. उससे बहुतसे लोगोंको घर बैठे सम्मानपूर्ण धन्धा मिल सकता है। इस समय पटसन खेतोसे सीधा कारखानोमे चला जाता है और उससे जूट-उत्पादक किसानोको किसी भी तरह विशेष लाभ नही हो पाता। बगालमे सामान्यत जो सूत काता जाता है वह आन्ध्रमे कते सूतसे सम्भवतः अधिक अच्छा होता है। प्रदर्शनीमें जो कताई प्रतियोगिता की गई थी उससे स्वेच्छासे कातनेवाले लोगोकी एक विशेष कुशलता व्यक्त होती थी जो कदाचित् कही अन्यत्र दिखाई नही देगी। खादीके नमूने आन्ध्रकी सर्वोत्कृष्ट खादीके नमूनोसे अच्छे ही होगे। यदि बगालमें सूत कताईका काम सुसगठित कर दिया जाये तो वहाँ सम्भवतः एक वर्षमे ही आन्ध्रसे अधिक बारीक सूत कताई होने लगे। इस मामलेमे कदाचित बगालसे कोई अन्य प्रान्त स्पर्धा नही कर सकता।

फरीदपुरकी प्रदर्शनीकी तरह मिरजापुर पार्कमे भी खादी प्रतिष्ठानकी तरफसे एक प्रतियोगिताकी व्यवस्था की गई थी। नाकीपुरके एक प्रसिद्ध जमीदार राय यतीन्द्रनाथ चौधरी और एक नामी कवयित्री श्रीमती कामिनी रायने उसमे भाग लिया था। उसमे वाबू श्यामसुन्दर चक्रवर्ती और प्रान्तीय काग्रेस कमेटीके मन्त्री सतीश बाबू भी शामिल हुए थे, यहाँतक कि खुद आचार्य रायने भी भाग लिया था। वे इस समय भी कोई बारह अंकका अच्छा एकसार सूत कात लेते हैं। वे कहते है कि चरखा दिन-दिन उनके हृदयमें घर करता जाता है और उन्हे सूत कातनेमे बहुत

आनन्द आता है। इस चरखा-प्रतियोगितामे कोई १८० कातनेवालोंने भाग लिया होगा। मैं नही समझता कि भारतके दूसरे किसी प्रान्तमे उच्च मध्यम वर्गके इतने स्त्री-पुरुष ऐसी प्रदर्शनीमे भाग ले सकते है और ऐसी कुशलतासे सूत कात सकते है। यहाँ मैं यह बात भी कह देता हूँ कि बहुतसे स्वराज्यवादी भी खुद नियमपूर्वक और उमगसे सूत कातते है। मैं फरीदपुरमे पक्के स्वराज्यवादी बाबू सुरेश बिश्वासकी पत्नीका अतिथि हूँ। वे बहुत बारीक सूत कातती है। वे और उनके बच्चे चरखेके बहुत प्रेमी है। वे अपना सारा फुरसतका वक्त सूत कातनेमे लगाती है। परन्तु मुझसे कहा गया है कि अभी मैं अपनी इस यात्रामे, जो वस्तुत: आज ही आरम्भ होती है (मैं ये टिप्पणियाँ कलकत्तामे ७ मईको लिख रहा हूँ), बंगालके खादीकार्यके और भी बढिया नमूने देखूंगा। इसमे कोई सन्देह नही कि यदि बगाल चाहे तो और अनेक बातोकी तरह खादीमे भी सबसे आगे बढ सकता है। उसके पास बुद्धि है, उत्कृष्ट कल्पनाशक्ति है, कवित्व शक्ति है, उसका आत्मत्याग भी महान है, उसमे आवश्यक कौशल भी है और उसके पास साधन-सामग्री भी है। क्या वह इन सब गुणोके साथ खादी-कार्य करनेको इच्छाका भी योग करेगा? परमात्मा उसे ऐसी इच्छा दे।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९२५

२२. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

कलकत्ता
७ मई, १९२५

प्रिय गुरुदेव,

सुनीति देवी कहती है कि वे आपके ६४वे जन्म-दिवस समारोहमे भाग लेनेके लिए बोलपुर जा रही है। कल आपके स्वास्थ्य और दीर्घजीवनके लिए जो शुभ कामनाएँ और प्रार्थनाएँ आपको भेजी जायेगी, उनमे मैं अपनी भी प्रार्थनाएँ जोड देना चाहता हूँ।

एन्ड्रयूजने अपने एक पत्रमे लिखा है कि आपका स्वास्थ्य अच्छा नही है। आशा है कि अब कमजोरी दूर हो गई होगी और आप पहलेसे अच्छे होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर
शान्तिनिकेतन

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ४६२८) की फोटो-नकलसे।

१. इसके बादकी दो टिप्पणियाँ यहाँ उद्धृत नहीं की गई। देखिए "सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी", १७-५-१९२५।

२३. भाषण : बुद्ध जयन्तीके अवसरपर[1]

कलकत्ता
७ मई, १९२५

मित्रो,

इस सेवाको निभाना मेरे लिए अब एक सुखद कर्त्तव्य है। मैं इस सभामे पढ़े गये विवरणके बारेमें कुछ नही कहूँगा। डा० धर्मपालने[2] इस सेवा-कार्यको एक कारुणिक पुट दे दिया है। उन्होने मेरे कन्धोपर एक ऐसा भार डाल दिया है जिसे वहन करनेके लिए मैं अपने आपको अनुपयुक्त मानता हूँ। गत वर्ष जब मैं स्वास्थ्य-लाभ कर रहा था श्री नटराजनने मुझे जयन्ती समारोहके[3] अवसरपर अध्यक्षता करनेके लिए कहा था, तब मुझे सकोच हुआ था, परन्तु मैं श्री नटराजनका अनुरोध अस्वीकार न कर सका, क्योकि उनसे मेरा अत्यधिक गहरा प्रेम है। मैंने तभी समझ लिया था कि प्रतिवर्ष भारतके किसी न किसी भागमें ऐसे समारोह होते ही रहते है और उनमे भाग लेनेके लिए सम्भवत मुझे निमन्त्रित किया ही जायेगा। मैं कलकत्ता आया तो फिर वैसा ही हुआ। यह एक बहुत ही विचित्र बात है कि ससारके प्राय सभी महान धर्मोके मतावलम्बी कहते है कि मैं उनका अपना हूँ। जैन मुझे जैन समझनेकी भूल करते है। सैकडो बौद्ध भाई समझते है कि मैं बौद्ध हूँ। सैकडो ईसाई अब भी यही मानते है कि मैं ईसाई हूँ; और कुछ ईसाई मित्र तो परोक्ष रूपसे मुझपर कायर होनेका दोष मढते भी नही हिचकते, वे कहते है, "हम जानते है कि आप ईसाई है, किन्तु आप यह स्वीकार करनेसे डरते है। आप साहसके साथ खुले आम यह क्यो नही कह देते कि आप ईसा और उसके द्वारा मुक्तिमे विश्वास रखते है? मेरे अनेक मुसलमान मित्रोका खयाल है कि यद्यपि मैं अपनेको मुसलमान नही कहता फिर भी व्यवहारत मैं मुसलमान हूँ। और कुछ मुसलमान मित्र सोचते है कि मैं इस्लाम अपनानेकी राहपर हूँ और इस्लामके बहुत ही निकट आ गया हूँ, हालाँकि अभी काफी कसर है। यह मेरे लिए बडी ही तारीफकी बात है और इसे मैं अपने प्रति उनके स्नेह और आदरभावका ही प्रतीक समझता हूँ। किन्तु मैं स्वय अपनेको एक तुच्छतम हिन्दू समझता हूँ और मैं जितनी ही गहराईसे हिन्दूधर्मका अध्ययन करता हूँ उतना ही मेरा यह विश्वास दृढ होता जाता है कि हिन्दू धर्म विश्वके समान व्यापक है और ससारमे जो-जो बाते अच्छी है उन सबको वह अपने

१. यह भाषण महाबोधि सोसाइटीके तत्त्वावधानमें बौद्ध विहारमें आयोजित "बुद्ध जयन्ती" समारोहके अध्यक्षपदसे दिया गया था।

२. सोसाइटीके महामन्त्री, बुद्धके उपदेशों और बुद्धका कार्य बगालमें किस प्रकार चलाया जा रहा है इसके सम्बन्धमें वे पहले बोल चुके थे।

३. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ ८७-८९

भीतर ग्रहण किये हुए है। मैं इस्लाममे भी वे ही बाते पाता हूँ तथा इस्लामकी खूबियोको समझ सकता हूँ और उसकी प्रशसाके गीत गा सकता हूँ। वैसा ही भाव मैं अन्य धर्मोके माननेवालोके प्रति रखता हूँ। फिर भी मेरे अन्दर कोई कहता है कि मैं इन बहुतसे धर्मोके प्रति जो इतना आदर-भाव व्यक्त करता हूँ, वह मेरे हिन्दू होनेका ही द्योतक है। इससे मेरे हिन्दुत्वमे किंचित भी कमी नही आती।

करीब ४० या ३८ वर्षोकी बात है तब मैं किशोर था, इग्लैंड गया था। मेरे हाथमे जो सबसे पहली धार्मिक पुस्तक रखी गई, वह थी 'लाइट ऑफ एशिया।' मैंने संसारके किसी भी धर्मके बारेमे कुछ भी नही पढ़ रखा था, इसलिए हिन्दू धर्मके बारेमे भी कुछ नही। मैं हिन्दू धर्मके बारेमे उतना ही जानता था जितना कि मेरे माता-पिताने मुझे सिखाया था, वह भी प्रत्यक्ष रूपसे नही बल्कि परोक्ष रूपसे, अर्थात् अपने आचरणसे। मुझे एक ब्राह्मणसे भी जिसके पास वे मुझे 'रामरक्षा स्तोत्र' पढ़नेके लिए भेजते थे, कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ था। इसी पूँजीके साथ मैं इग्लैंडके लिए रवाना हुआ था। इसलिए 'लाइट ऑफ एशिया'को पाकर मैं उसे ध्यानसे पढ गया।

एक-एक पृष्ठ करके मैं उसे पढ़ता गया। मैं वास्तवमे साहित्यमे कोई रुचि नही लेता था। पर इस पुस्तकके प्रत्येक पृष्ठसे मुझे जो मिला उसके कारण और आगे पढ़ते जानेका लोभ मैं सवरण नही कर सका और पुस्तक समाप्त करते-करते उन उपदेशोपर मेरी श्रद्धा बड़ी गहरी जम गई। सर एडविन आर्नोल्डने उनको बड़े ही सुन्दर ढगसे सँजोया था। दक्षिण आफ्रिकामे अपनी वकालत प्रारम्भ करते समय मैंने उस पुस्तकको फिरसे पढा। तबतक मैंने ससारके अन्य महान धर्मोके बारेमे थोड़ा-बहुत पढ़ लिया था, किन्तु उस पुस्तकको दूसरी बार पढनेसे भी उसके प्रति मेरी श्रद्धामे कोई कमी नही आई। वस्तुत. बौद्ध धर्मसे मेरा इससे अधिक और कोई परिचय नही है। यरवदा जेलमे भी मुझे कुछ धर्मग्रन्थोको पढनेका अवसर मिला, किन्तु मुझे इस प्रकारके समारोहोमे अध्यक्षता करनेके लिए क्यो बुलाया जाता है, इसका कारण मैं जानता हूँ। समारोह चाहे बुद्धके सम्बन्धमे हो, चाहे महावीरके, या चाहे वे ईसामसीहके सम्बन्धमे हो, इनमें मुझे इसलिए बुलाया जाता है कि मैं उनके उन श्रेष्ठतम उपदेशोके अनुसार चलनेका यथाशक्ति प्रयत्न करता हूँ जिन्हे मैं अपने सीमित ज्ञानके बलपर समझनेमे समर्थ होता हूँ। बहुतसे मित्रोका विचार है कि मैं बुद्धके उपदेशोको अपने जीवनमे उतार रहा हूँ। मैं उनके इस प्रमाणपत्रको स्वीकार करता हूँ, और नि सकोच कहता हूँ कि मैं उन उपदेशोका अनुसरण करनेका यथा-शक्य प्रयत्न कर रहा हूँ। बौद्ध आचार्यो तथा हिन्दू विद्यार्थियो —मैं विद्यार्थियोके स्थानपर दार्शनिकोको कहना चाहता था—की तरह मैं बौद्धधर्म और हिन्दूधर्मकी मूलभूत शिक्षाओ, उपदेशोके बीच कोई भेद नही करता। मेरे विचारमे, बुद्धने अपने जीवनमे हिन्दू धर्मका ही अनुसरण किया था। इसमे कोई सन्देह नही कि वे अपने उस एक बड़े विकट युगके सुधारक थे। तात्पर्य यह है कि वे गहरी सत्य-निष्ठावाले सुधारक थे, और उन्होने अपने आत्मिक विकास तथा अपनी शारीरिक मुक्तिके लिए जिस सुधारको अपरिहार्य समझा उसे पूरा करनेमे किसी भी त्याग या कष्टके सामने

हार नही मानी। यदि ऐतिहासिक अभिलेख सही है, तो उस कालके विवेकहीन ब्राह्मणोने स्वार्थलोलुप होनेके कारण ही उनके सुधारोको ठुकरा दिया था। किन्तु जनता तो दार्शनिक नही थी कि दार्शनिक व्याख्याओमे अपना समय बर्बाद करती। जनता तो दर्शनको कर्ममे उतारनेमे विश्वास करती थी। उसकी व्यवहारबुद्धि वडी प्रवल थी, इसलिए उसने ब्राह्मणोके गर्व अर्थात् उनकी स्वार्थपरताको एक ओर रखकर बुद्धको अपने धर्मका सच्चा व्याख्याता स्वीकार करनेमें जरा भी सकोच नही किया। इसलिए जनताका ही एक आदमी होने तथा उनके बीच रहनेके कारण, मुझे भी लगा कि बौद्ध धर्म उस हिन्दू धर्मके अतिरिक्त और कुछ भी नही है कि जिसे जनताके हितोके अनुरूप ढाल दिया गया है। इसलिए कभी-कभी शिक्षित लोग बुद्धके अत्यन्त सरल उपदेशोसे सन्तुष्ट नही होते। वे उन्हे अपने बौद्धिक सन्तोषके लिए पढते हैं, और उनको निराश होना पडता है। धर्मका सम्बन्ध मुख्यतया हृदयसे है, इसलिए जो व्यक्ति बौद्धिक अहके साथ उसके पास जाता है, उसे तो निराश ही होना पडेगा।

मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि बुद्ध नास्तिक नही थे। जो व्यक्ति या भक्त ईश्वरके पास अहं लेकर जाता है, वह उसे नही मिलता। वह ऐसे व्यक्तियोका विश्वास नही करता जो प्रार्थनामे अपनी नाक जमीनपर रगडते है। वह नाकपर ऐसे निशान नही देखना चाहता। आपमे से कुछ लोग शायद यह जानते भी न हो कि बहुतसे मुसलमानोके माथेपर वास्तवमें इस रगडका चिह्न दीख पडता है, क्योकि वे मस्जिदोमे नमाजके समय रोज इस प्रकार अपने माथे रगडते है कि उनपर रुपयेके बराबर और कभी-कभी इससे भी बडा निशान पड जाता है। ईश्वर इन निशानोको नही चाहता। वह तो मनुष्यके मर्मको, उसके समूचे अस्तित्वको आरपार देख लेता है। कोई व्यक्ति चाहे अपनी नाक काटकर रख दे और उसे जमीनपर रगडता रहे, पर ईश्वर ऐसे व्यक्तिको भक्तके रूपमे स्वीकार नही करता जो नाक रगडकर भक्तिका प्रदर्शन न करनेवाले लोगोकी उपेक्षा करता हो, जिसके हृदयमे व्यथा न हो और जिसका हृदय दूसरोके लिए सहज ही सहानुभूतिसे न भर आता हो। चूँकि जनता अर्थात् साधारण जन अहसे सर्वथा अपरिचित रहते है, इसलिए वे अत्यन्त विनम्रताके साथ उसके पास पहुँच जाते है और दार्शनिक विचारोको कर्ममे परिणत कर देते हैं, और हम इसीलिए नि सकोच होकर उनका अनुसरण कर सकते हैं। मेरे विचारमे बौद्धधर्मकी यही मूलभूत शिक्षा है। यह मुख्य रूपसे जनताका धर्म है। मुझे उसके पास जाकर निराशा नही होती। मै एक क्षणके लिए भी यह नही मानता कि बौद्धधर्म भारतसे निर्वासित हो चुका है। मै देखता हूँ कि बौद्धधर्मकी प्रत्येक सारभूत विशेषताको बौद्धधर्मकी दुहाई देनेवाले देशो, चीन, लका तथा जापानकी अपेक्षा, भारतमें ही अधिक व्यवहारमें लाया जा रहा है। मै साहसके साथ कहता हूँ कि हम अपने बर्मी मित्रोकी अपेक्षा भारतमे बहुत अधिक और बहुत अच्छे ढगसे बौद्ध धर्मके अनुसार आचरण करते है। बुद्धको यहाँसे हटाना असम्भव है। आप ऐसा नही कह सकते कि वह भारतमे पैदा नही हुए थे। वे अपने जीवनमें ही अपना नाम अमर कर गये थे। वे आज लाखों व्यक्तियोके जीवनमें बसते है।

एक छोटेसे मन्दिरमे जाकर उनकी प्रतिमा पूजने या उनका नाम लेने-न-लेनेसे क्या होता है। मेरा हिन्दूधर्म मुझे सिखाता है कि यदि मेरा हृदय शुद्ध है तो मै चाहे श्रीरामकी जगह 'मरा' ही क्यो न कहूँ, फिर भी मै उतने ही बलसे या उससे अधिक बलसे उसे रट सकता हूँ कि जितने बलसे शिक्षित ब्राह्मण रटते है। इसलिए मै डा० धर्मपालसे कहता हूँ, उन्हे बहुतसे लोगोका समर्थन मिले या न मिले, होनोलुलुकी कोई महिला एक बडी धनराशि दानमे दे या न दे, इससे कोई अन्तर नही पडता। मेरा तो विनम्र मत यही है कि बुद्धने हमे सिखाया है कि जो व्यक्ति सत्यका अन्वेषण करता है उसके साथ लाखो लोगोका होना कोई आवश्यक बात नही है।

प्रत्येक व्यक्तिको अपने-आपसे पूछना चाहिए कि जिस दया और करुणाका सदेश हमे बुद्धने सुनाया था उसे हमने किस हदतक अपने जीवनमे उतारा है और जिस हदतक हम उसे अपने जीवनमे उतार पाये है उतनी ही हदतक हम उस महान् विभूतिको श्रद्धाजलि चढ़ानेके अधिकारी है। मुझे जरा भी सन्देह नही कि जबतक यह ससार रहेगा तबतक उनका दर्जा मानवताके महानतम शिक्षकोमे रहेगा। बुद्धने लगभग २५०० वर्ष पूर्व जो विचार दिया था वह कभी नष्ट नही होगा। विचार यद्यपि मद गतिसे आगे बढते है फिर भी वे अपने निशान छोड जाते है। यद्यपि सम्भव है कि बौद्धधर्म भी अन्य सभी धर्मोके समान ही इस समय पतनोन्मुख ही दिखाई पडता हो, पर वास्तवमे इसका बीज अकुरित हो रहा है। मै अब भी आशा करता हूँ कि हमारा दिन आ रहा है, वह दिन जब सभी महान् धर्मोको कपट, पाखण्ड, असत्याचरण, अविश्वसनीयता अर्थात् "पतन" के साथ जुडे हुए सभी लक्षणोसे मुक्ति मिल सकेगी। वचनासे मुक्ति पाकर वे शुद्ध हो जायेगे और एक दिन आयेगा जब सीखनके इच्छुक लोग सीख लेगे कि सत्य और प्रेम एक ही सिक्केके दो पहलू है। वही और केवल वही सिक्का खरा है, अन्य सभी खोटे है।

भगवान बुद्धने कई सौ वर्ष पूर्व जो सन्देश मानवताको दिया था, ईश्वर हमे उसका सत्य महसूस करनेकी शक्ति दे और हममें से प्रत्येक उसे अपने जीवनमे उतारनेका प्रयत्न करे, चाहे हम अपने-आपको हिन्दू कहे या न कहे।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९-५-१९२५

२४. भाषण: लोहागंजमें[1]

८ मई, १९२५

श्री गांधीने अभिनन्दन-पत्र तथा थैली स्वीकार करते हुए एक छोटा-सा भाषण दिया और कहा कि मुझे दुःख है कि मैं अली भाइयोंको अपने साथ नहीं ला सका, वे अपने कार्यमें व्यस्त थे। यदि आप लोगोंको स्वराज्य चाहिए तो आपको अपना निश्चय पक्का कर लेना होगा। इसीलिए कांग्रेसने घोषणा की है कि स्वराज्य प्रेम और अहिंसाके जरिये ही प्राप्त करना है और उसने बार-बार लोगोंसे कहा है कि सभी लोगोंको, चाहे वे किसी भी धर्मके हों, इस कार्यमें मन लगाकर जुट जाना चाहिए। साथ ही, उसने अस्पृश्यताको मिटानेके लिए कहा है। आपका धर्म आपसे कहता है कि आप किसीसे भी घृणा न करें। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा सूत कातें और हाथका बुना खद्दर पहनें। मुझे यह कहते हुए दुःख हो रहा है कि इस समय भी बहुत कम लोग खद्दर पहनकर आये हैं। आपको अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए और चरखा चलाना चाहिए। इसके अतिरिक्त मैं आपसे यह भी आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि आप अपने लड़के-लड़कियोंको राष्ट्रीय-पाठशालाओंमें भेजें। भेंटमें मिली इस थैलीका उपयोग मैं अपने लिए नहीं करूँगा, बल्कि चरखों और करघोंके लिए करूँगा। इसलिए आपसे मेरा सविनय निवेदन है कि आपने जो धनराशि[2] देनेका वचन दिया है उसे पूरा करें। मुझे देखने और मेरे भाषण सुननेका कोई उपयोग नहीं है। आपने जो धन देनेका वादा किया है उससे आपको और देशको बहुत लाभ पहुँचेगा। मैं आशा करता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि मैंने जो हिदायतें दी हैं, उन्हें अमलमें लाया जाये।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९-५-१९२५

१. यह भाषण विक्रमपुरके निवासियोंकी ओरसे दिये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें दिया गया था। ५,५०० रु० की एक थैली भी गांधीजीको भेंट की गई थी।

२. भाषणसे पूर्व डा० प्रफुल्लचन्द्र घोषने १५,००० रु० जमा करनेके लक्ष्यका उल्लेख किया था।

२५. भाषण : मलिकन्दामें[1]

८ मई, १९२५

भाषण देते हुए महात्माजीने कहा कि मुझे यह देखकर दुःख हुआ कि आपमें से कुछ लोग खद्दर नहीं पहने हुए हैं। मैं आपसे तीन बातोंके बारेमें कहना चाहता हूँ और मुझे विश्वास है कि यदि आप मेरे सन्देशको क्रियान्वित करेंगे तो स्वराज्य आपको स्वयमेव मिल जायेगा। इस सम्बन्धमें पहली बात यह है कि हिन्दू और मुसलमान आपसमें पूरी तरह मेलजोलसे रहें। वे एक-दूसरेके प्रति सहिष्णु बनें और एक-दूसरेसे प्यार करें। मैं यह बात जोर देकर कहता हूँ कि अस्पृश्यताके अभिशापको मिटा देना चाहिए। मेरा आपसे आग्रहपूर्ण निवेदन है कि आप खद्दर पहनें और चरखा चलाएँ। हो सकता है कि आपको अपनी आजीविकाके लिए कातना आवश्यक न हो, किन्तु यदि आपको देशकी विशाल धनराशिको बाहर जाते रहनेसे बचाना है तो आपको प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा सूत कातना चाहिए। मुझे आशा है कि आप डा० प्रफुल्लचन्द्रके कुशल पथ-प्रदर्शनमें शीघ्र ही कातना सीख लेंगे और विदेशी कपड़ा त्याग देंगे। मैंने सुना है कि यहाँ नाई लोग नामशूद्रोंकी हजामत नहीं बनाते और धोबी उनके कपड़े नहीं धोते। यह अस्पृश्यता है। हिन्दू धर्मका सार सत्य, अहिंसा और प्रेम है; नाइयों और धोबियोंका नामशूद्रोंकी सेवा न करना उनके प्रति प्रेम प्रदर्शित करना नहीं, बल्कि घृणा व्यक्त करना है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-५-१९२५

२६. बातचीतका अंश[2]

८ मई, १९२५

इन चरखोको देखकर मेरे दिलको चोट पहुँची है। कोई आश्चर्य नही, यदि हम यहाँ चरखेको लोकप्रिय नही बना पाये। अच्छा हुआ कि मैं यहाँ आ गया। नही तो मैं असफलता मिलनेपर गाँववालोको ही दोष देता। अब मैं देखता हूँ कि सारी गलती हमारी ही है। जरा इन कमजोर चरखो और मोटे तकुओकी

१. मलिकन्दामें खादी प्रदर्शनीका आयोजन किया गया था। गांधीजीने हिन्दीमें जो भाषण दिया था, वह उपलब्ध नहीं है।

२. गाधीजीने ये बातें दिघीरपुर राष्ट्रीय पाठशालाके प्रबन्धक, जतीन्द्रनाथ कुशारीसे कही थीं। बातचीतका विवरण महादेव देसाई द्वारा लिखित गाधीजीकी बगाल-यात्राके विवरणसे उद्धृत है।

ओर देखिए। कातनेवालेको सूत कातनेके प्रयत्नमे चरखा वहुत ज्यादा घुमाना पडता होगा; और जरा इन चरखोकी घरघराहटका मुलाहिजा तो कीजिए। यदि चरखेकी आवाज लडकोके गानेके साथ मेल न खाये तो वे कातते समय गा कैसे सकते है? सन्तोषकी वात केवल यह है कि लड़के कातना जानते है। उन्होने इसे उसी प्रकार सुगमतासे अपना लिया है जैसे मछली पानीको अपनाती है। उनके पास अगुलियोका कौशल है और मै देख रहा हूँ कि चरखोकी हालत बुरी होनेपर भी वे अच्छा सूत कात रहे है। यदि चरखे अच्छे होते और तकुवे पतले होते तो वे इससे दुगुना सूत आसानीसे कात लेते। आप कहते है कि आपकी अधिकसे-अधिक गति ३०० गज प्रति घटा है। मै यकीन दिलाता हूँ कि जैसे ही आप इन चरखोमे सुधार कर लेगे, यह गति ६०० गज प्रति घटा हो जायेगी। जिस दक्षतासे आपके यहाँके लड़के इन्हे चलाते है उससे आपको जान लेना चाहिए कि कताईकी सम्भावनाएँ कितनी वडी है। यदि आप आज चरखेकी कला और तकनीकको नही जानते तो आपको एक वर्षतक कठिन परिश्रम करके उसे अच्छी तरह सीख लेना चाहिए।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९२५

२७. भाषण : दिघीरपुरकी सार्वजनिक सभामें[१]

९ मई, १९२५

दस हजारसे अधिक लोगोंकी सभामें भाषण देते हुए गांधीजीने कहा कि मुझे दुःख है कि अस्पृश्यता-निवारणके लिए कांग्रेसी लोगों द्वारा किये गये प्रयत्न निष्फल रहे। अस्पृश्यताके सम्बन्धमें अपने दृष्टिकोणकी सफाई देते हुए उन्होंने कहा कि मैंने यह कदापि नहीं कहा है कि किसीको नामशूद्रोके साथ एक ही थालीमें बैठकर खाना खाना चाहिए। उस पानीको जिसे मेरी माँने ही जूठा क्यो न किया हो, मैं कभी नहीं पिऊँगा, किन्तु यदि मेरी माँ या अन्य कोई व्यक्ति मुझे साफ बर्तनमें पानी दे तो मेरे लिये उसे लेनेसे इनकार करना पाप होगा। इसी प्रकार, यदि किसी स्थानके नाई और धोबी अपने नामशूद्र भाइयोंकी सेवा नहीं करते तो यह पाप माना जायेगा। मैं जोर देकर कहता हूँ कि हिन्दू धर्मका मतलब है — सेवा करना और सेवाका मतलब है — समानता और प्रेम। हिन्दू-मुस्लिम एकताके विना स्वराज्य असम्भव है। इसीलिए मैं अपने दौरोंमें अली भाइयोंमें से किसी एकको अपने साथ रखता हूँ। मुझे यह देखकर प्रसन्नता होती है कि इस स्थानपर चरखे और खद्दरके सम्बन्धमें कुछ काम हो रहा है। मै हिन्दुस्तानसे गरीबी दूर करना चाहता हूँ, किन्तु मुझे यह देखकर दुःख

१. यह भाषण दिघीरपुरके संघ निकाय द्वारा स्थानीय जनताकी ओरसे दिये गये एक अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें दिया गया था।

होता है कि यहाँ बहुत कम लोग खद्दर पहने हुए हैं। मुझे प्रसन्नता है कि संघ निकाय (यूनियन बोर्ड) ने मेरे आनेके अवसरपर पाँच चरखे भेंट किये हैं।

अन्तमें गांधीजीने छात्रोंसे सानुरोध कहा कि आप अपने माता-पिताका सम्मान करें, अपने अध्यापकों तथा अपने परिवारके सभी सदस्योंसे प्रेम करें और अपने साथी छात्रोंके साथ सौहार्दपूर्वक रहें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-५-१९२५

२८. भाषण: तालटोलाके कार्यकर्त्ताओंकी बैठकमें[1]

९ मई, १९२५

सबसे पहले मैं आपसे यह कह देना चाहता हूँ कि हमारी मुक्तिका साधन केवल चरखा है, ऐसा मैंने कभी नही कहा। मैंने कहा है कि जनता चरखेके बिना स्वराज्य प्राप्त नही कर सकती। किन्तु मैं आज पहली बातका समर्थन करनेके लिए भी तैयार हूँ। मेरा आपसे निवेदन है कि आप अपनी कल्पनाशक्तिसे काम ले। जिस प्रकार आप हिमालयमें देवी-देवताओंकी कल्पना करते है, क्योंकि आपका मन पवित्रतासे परिपूर्ण है, उसी प्रकार यदि आप कताईके कार्यक्रमको सफलतापूर्वक कार्यान्वित करनेके बारेमें दत्तचित्त होकर विस्तारपूर्वक विचार करे तो आप कताईकी बड़ी-बड़ी सम्भावनाओंकी अनुभूति करने लगेंगे। जिस कार्यको हम कर रहे हैं, उसे चालू रखनेके लिए महान् प्रयत्नकी आवश्यकता है। लाखों लोगोंको सूत कतवानेके लिए तो और भी अधिक प्रयत्नकी आवश्यकता है। हममें से प्रत्येकको छोटीसे-छोटी बातोंकी ओर ध्यान देना और ठीक अनुशासनमें रहना होगा। कताईको सार्वभौम बना पानेका अर्थ है अन्य अनेक प्रश्नोंका स्वयमेव हल हो जाना। अस्पृश्यताकी समस्याको ही लीजिए। अस्पृश्यताकी समस्याको हल किये बिना चरखेका प्रयोग व्यापक करना असम्भव है। क्या आप नही जानते हैं कि जबतक अस्पृश्योंको नही अपनाया जाता, तबतक वे खद्दरसे कोई वास्ता न रखेंगे? वे कहेंगे, "जब हम अस्पृश्य माने जाते हैं, तब हम खद्दरका क्या करेंगे?" और जबतक उनका सहयोग नही मिलता तबतक आप खादीके कार्यक्रमको पूरी तरह सफल नही बना सकते। यही बात हिन्दू-

१. कार्यकर्त्ताओंकी एक बैठकका आयोजन किया गया था, किन्तु यह सोचकर कि नावमें बैठक कर लेना ज्यादा सुविधाजनक रहेगा, कार्यकर्त्ता गांधीजीके साथ नावसे नारायणगंजतक गये। डॉ० प्रफुल्लचन्द्र घोष गांधीजीके साथ थे। उन्होंने कहा कि 'कार्यकर्त्ताओंका विश्वास क्षीण होता जा रहा है। उनमें से बहुत-से लोग यह विश्वास नहीं करते कि चरखेमें ही हमारी मुक्ति है, यद्यपि वे उसकी आर्थिक उपयोगिता मानते हैं। किन्तु हममें से कुछ लोग महसूस करते है कि यह उपयोगिता किसी मतलब की नहीं है और कांग्रेसका सदस्य बनना अनावश्यक है। मेरी प्रार्थना है कि यदि हो सके तो आप हमारे सन्देहोंको दूर करके हमारे विश्वासको दृढ बनायें।' गांधीजीने इन सन्देहोंको ध्यानमें रखकर भाषण दिया।

मुस्लिम प्रश्नके बारेमे भी है। दोनो चीजे साथ-साथ चलती है। इस प्रकार आप देखेंगे कि केवल कताईसे स्वराज्य मिलना सम्भव है।

किन्तु मैं आपको कुछ और गहराईमे ले जाना चाहता हूँ। क्या आप जानते है कि वायलिनके बाजेका जो तार मेरे हाथमे है उसे छोडकर शेष सभी तारोपर सरकारकी अंगुलियाँ जमी हुई हैं? जो तार मेरे हाथमे है वह है अहिंसा। आप स्वराज्य केवल अहिंसासे प्राप्त कर सकते हैं, हिंसासे कभी नही। यदि आपका इस बातपर विश्वास जमता है तो आपकी समझमे शीघ्र ही आ जायेगा कि केवल कताईके जरिये आप स्वराज्य प्राप्त कर सकते है, क्योंकि अहिंसाको कार्यरूपमे परिणत करनेका केवल यही मार्ग है कि चरखेको घर-घरमे स्थान दिलानेके शान्तिपूर्ण कार्यक्रमको पूरा किया जाये। आप हिन्दू-मुस्लिम समस्याको किस प्रकार हल करेंगे? केवल इस प्रकार ही न कि हिन्दू लोग मुसलमानोंके लिए खादीका कार्य करे और मुसलमान लोग हिन्दुओके लिए। और इस बातके लिए कि हिन्दू, मुसलमान तथा अछूत साथ-साथ मिलकर कार्य करने लग जाये, इसके लिए आप लोगोको विश्वास और श्रद्धाके साथ अथक परिश्रम करते रहना होगा। सबसे आसान बातको ही पहले लीजिए, कठिन बात जाने दीजिए। कठिन बातके क्षेत्रमे आते है महाराजा, नवाब आदि। हमको देश-भरमे कुशल बुनकरो और कतैयोका जाल-सा बिछा देना चाहिए और चरखेको कार्यक्रमका केन्द्र बना लेना चाहिए। ऐसा मत कहिए कि वातावरण बिगड़ा हुआ है। मतभेद है तो रहने दे। आप उनके रहते हुए भी कातना जारी रखे। आप देखेंगे कि एक दिन आयेगा जब आपके चारो ओर आप जैसे ही कातनेवाले पैदा हो जायेंगे। यदि आप साफ है तो एक दिन निश्चित रूपसे आपके इर्द-गिर्दके सब लोग सफाई अपना लेगे। क्या मैं ब्रह्मचर्य, सत्य और अहिंसाको महज इसलिए त्याग दूँ कि मेरे चारो ओर इनके विपरीत आचरण किया जा रहा है? नही, मुझे अपना कार्य इस विश्वासके साथ जारी रखना होगा कि मेरा तरीका सही है, भले ही इस तरीकेसे काम करनेवाला अकेला मैं ही क्यो न रह जाऊँ।

आप पूछते है कि कातनेवाले किस प्रकार स्वराज्य प्राप्त करायेंगे? मैं कहता हूँ कि यदि आपने चरखेको सार्वभौम बना लिया तो इसके बाद कुछ भी करनेकी आवश्यकता नही रहेगी। तब आपके पास ऐसी शक्ति और ऐसा बल आ जायेगा जिसे हरएक शख्स खुद-ब-खुद मानने लगेगा।

किन्तु हो सकता है कि हमारा सघर्ष लम्बे अर्सेतक चले। परन्तु इससे छोटा कोई रास्ता है ही नही। मैं केवल १००० सच्चे कार्यकर्ताओको लेकर काग्रेसको एक जीवन्त संस्था बना सकता हूँ। दस लाख न कातनेवाले लोग, जो ४ आने चन्दा देनेमे अपने कर्त्तव्यकी इतिश्री समझते हैं, बोझ ही नही, उससे भी बदतर होगे। ईश्वरमे मेरा विश्वास है और इस बातमे भी कि वास्तवमें समय आनेपर उक्त थोडे-से लोग ही काम कर दिखायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९२५

२९. भाषण : मलखानगरमें

९ मई, १९२५

पहली वात तो यह है कि कातनेसे ही स्वराज्य मिल सकता है, यह मैंने नही कहा, यद्यपि मेरा विश्वास यही है। सूत काते विना स्वराज्य नही मिल सकता है, यह वात मैंने वार-वार कही है। मै ये दोनों वाते सिद्ध करके दिखानेके लिए तैयार हूँ। कातनेका अर्थ क्या है? कातनेका अर्थ यह है कि हमे कताईको सार्वजनिक वना देना है, अर्थात् लुढाई, धुनाई और कताई यह सब क्रियाएँ हमे जान लेनी चाहिए और कते हुए सूतकी खादी वुनवा लेनी चाहिए। इन सव क्रियाओको स्वय कर सकने और करोडो लोगोको सूत कातनेमें लगानेके लिए भगीरथ प्रयत्नकी आवश्यकता है। इसका अर्थ है समस्त देशमे एक सजीव तन्त्र स्थापित करना। जैसे वडे जहाजमे कप्तानका हुक्म जहाजके सव लोग मानते हैं और यदि वे न माने तो उसे उनको गोलीसे उड़ा देनेका अधिकार होता है, ऐसे तन्त्रकी व्यवस्था करना क्या कोई छोटा-मोटा काम है? यदि आप करोड़ो लोगोको सूत कातनेमे लगा देगे तो उससे अस्पृश्यता-निवारणका प्रश्न भी हल हो जायेगा और हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यका भी। अस्पृश्यता इससे कैसे दूर हो सकती है? अस्पृश्य लोग आज खादीके काममे जो भाग लेते है सो मेरी खातिर। मद्रासमे अस्पृश्योने मुझसे कहा कि जव लोग हमे अस्पृश्य मानते हैं तव हमे उनका काम करनेकी क्या जरूरत है? हम उनके लिए खादी क्यो वुने? फिर भी वे मेरी खातिर उनकी खादी वुनते हैं। जव अस्पृश्यता मिट जायेगी तव वे स्वेच्छापूर्वक इस कार्यमे पूरा रस लेने लगेगे और जव वे पूरा रस लेने लगेगे तव अस्पृश्यता भी लुप्त हो जायेगी। जवतक हिन्दू और मुसलमान एक होकर काम नही करते तवतक क्या खादीके कार्यकी साधना पूरी हो सकती है? इस प्रकार सव जातियोको सूत कातनेमे लगानेके लिए आपको ऐसी सीलनभरी जगहोमे जीवन विताना पड़ेगा।

किन्तु आप पूछेगे कि कताईका अर्थ स्वराज्य कैसे है? मेरा उत्तर यह है कि यदि आप कताईका प्रचार सर्वत्र कर देगे तो आज काग्रेसके सम्मुख जो तीन जवरदस्त प्रश्न हैं—ये तीनो हल हो जायेगे, और जव ये तीनो प्रश्न हल हो जायेगे तव वाकी कौनसा प्रश्न रह जायेगा? जव ये तीनो काम पूरे हो जायेगे तव हम अपनी निश्चित शर्तें पूरी करानेकी माँग पेश कर सकेगे। उसके वाद यदि अग्रेजोको जाना हो तो वे चले जायें और यदि उन्हे हमारी शर्तोपर रहना मजूर हो तो वे रहे। अब आप प्रश्न करेगे कि जिन अग्रेजोसे हम इतने लडे और जिन्होने हमपर इतने अत्याचार किये क्या आप उनसे सहयोग करेगे? मेरा उत्तर है, हाँ, जरूर करूँगा, क्योकि मुझे तो शत्रुको भी मित्र वनाना है।

कातनेसे ही स्वराज्य मिल सकता है, यह वात समझनेके लिए आपको एक वात भली-भाँति जान लेनी चाहिए। वह यह है कि आप किस उपायसे स्वराज्य

लेना चाहते है? यदि आप हिंसाके द्वारा स्वराज्य लेना चाहते हो तो आपको कताई-का विचार त्याग देना चाहिए किन्तु आप हिंसासे अग्रेजोको नही जीत सकते, यह मुझे प्रत्यक्ष दीख रहा है। आजके खेलमे सभी मुहरे उनके हाथमे है। मेरे हाथमे केवल एक मुहरा है — वह है अहिंसाका। हम उन्हे इस अहिंसाके मुहरेसे ही जीत सकते है। यदि आप इस बातको मान ले तो आप यह समझ सकेगे कि सूत काते विना तो हमारा काम ही नही चलेगा, क्योकि अहिंसाकी पद्धतिका केन्द्र ही चरखा है। कार्यक्रमकी अन्य बाते इसीके इर्द-गिर्द घूमती है।

वातावरण तो बिगडा हुआ नही है। सरकार उपद्रव चाहती है और उसे उपद्रवप्रिय लोग भी मिल जायेगे, किन्तु आप तो यही कहेगे कि चाहे जितनी ही विघ्न-बाधाये आये, हम तो फिर भी कातते ही रहेगे। दूसरे लोग कातना छोड दे, तब भी आप थोडे ही कातना छोड सकते है? दूसरे सब स्वच्छ रहना छोड दे, ब्रह्मचर्यका पालन छोड दे और अहिंसाका भी त्याग कर दे तो क्या इससे आप भी इनको छोड देगे?

इस प्रकार जो सच्चे कातनेवाले है वे समय आनेपर जरूर आगे आ जायेगे। काग्रेसके न कातनेवाले ३ करोड सदस्य हो तो भी मै उनसे कोई काम नही ले सकूंगा। किन्तु यदि ३०० सच्चे [कातनेवाले] सदस्य होगे तो मै उन्हीसे देशको जगा सकूंगा। आप पूछेंगे कि ये लोग समय आनेपर कैसे आगे आ जायेगे तो मै इसका उत्तर नही दे सकूंगा। मै तो सिर्फ इतना ही कहूँगा कि ईश्वर उन्हे आगे बढायेगा। ईश्वरपर मेरा इतना विश्वास है कि मै इसीपर निर्भर होकर बैठा हूँ कि अवसर आनेपर वह सबको जागृत कर देगा। ट्रान्सवालमे क्या हुआ था? आखिर वक्ततक किसीको [सघर्षमे आनेके लिए] नही कहा गया था, किन्तु जब कुलियोने यह देखा कि हम सब जेल पहुँच गये है, तब तो वे भी मैदानमे आ गये। हरबत-सिंह[1] तो [गिरमिटसे] मुक्त हो चुके थे। उन्हे कर नही देना था, किन्तु उनको भी जोश आया। वे भी जेल गये और वहाँ मर गये। खानोको ही जेल बना दिया गया। मजदूर उन्हीमे कैद कर दिये गये। उन्होने वहाँ बहुत कष्ट झेले। मुझे इसका जरा भी अनुमान नही था कि यह सब होनेवाला है। किन्तु ईश्वरमे श्रद्धाकी बात ऐसी ही है। इसलिए जब लोग पूछते है कि मै सविनय-अवज्ञा कब करूँगा तो मै उनको कोई भी उत्तर नही देता। मै यही कहता हूँ कि ईश्वर उस अवसरको प्रस्तुत करेगा।

मै अब इस प्रश्नपर आता हूँ कि काग्रेसमे रहनेसे क्या लाभ? मै मानता हूँ कि इससे अधिक लाभ नही है। किन्तु यदि हम काग्रेसमे न रहे तो स्वराज्यवादियोको नाहक ही दुख होगा। इसका अर्थ यही होगा कि हम उनको अपनी सहानुभूति देनेके लिए भी तैयार नही है। इस वर्ष तो सदस्य बनकर जितना काम हो सके उतना करनेके अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग ही नही है। यदि अगले वर्ष उनको इसकी भी जरूरत न रहेगी तो देखा जायेगा। तब हम कातनेवालोका सघ बना सकेंगे। किन्तु इस

१. देखिए खण्ड १२, पृष्ठ ३१४-१५।

प्रकार वह सघ वर्षके कार्यका परिपक्व फल होगा। यदि आप यह मानते हो कि काग्रेसमे रहनेसे कोई लाभ नही है तो उसमे हानि भी तो किसी तरहकी नही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-५-१९२५

३०. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे

९ मई, १९२५

श्री गांधीने स्वीकार किया कि जैसे श्री घोषने[1] बताया है विभिन्न बस्तियोंकी अपनी-अपनी विशिष्टता होती है और काम प्रत्येक बस्ती की विशिष्टताको देखते हुए ही आगे बढ़ाया जाना चाहिए। किन्तु मेरे विचारमें चरखा सभी जगहोंपर रचनात्मक कार्यका मुख्य भाग बन सकता है; प्रत्येक बस्तीकी परिस्थिति विशेषको देखकर अन्य बातें इसके साथ जोड़ी जा सकती हैं। प्रत्येक बस्तीमें चरखा घर-घर चलाया जाना चाहिए। इसके बाद श्री घोषने गांधीजीके फरीदपुरके भाषणका[2] उल्लेख किया जिसमें उन्होंने कहा था कि देशको मुक्त करानेके लिए मजबूत हृदयकी जरूरत है, मजबूत भुजाओंकी नहीं। इसपर श्री गांधीजीने कहा कि हम मजबूत हृदयसे स्वराज्य तो ले सकते हैं, लेकिन आन्तरिक शान्ति स्थापित करने तथा देशको बाहरी शत्रुओंसे बचानेके लिए मजबूत भुजाओंकी आवश्यकता पड़ेगी। श्री गांधीने कहा कि मैंने इस प्रश्नका उत्तर 'यंग इंडिया'[3] में दिया है और वहाँ मैंने ऐसा नहीं कहा है कि मजबूत भुजाओंकी आवश्यकता है ही नहीं। जब हम स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे तब तो देशकी रक्षाके लिए पुलिस और सेनाकी आवश्यकता होगी ही, परन्तु स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए सबसे पहले हमारे पास मजबूत हृदय होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १२-५-१९२५

१. कालिमोहन घोषने गांधीजीसे पूछा था कि क्या रचनात्मक कार्यके अंगके रूपमें चरखा अलग-अलग विशेषताएँ रखनेवाले सभी इलाकोंके लिए समान रूपसे उपयुक्त रहेगा यद्यपि सभी बस्तियोंकी अपनी-अपनी विशेषता हुआ करती है; और क्या संगठनात्मक कार्यमें इन विभिन्नताओंका विचार नही करना चाहिए।

२. देखिए "भाषण : बंगाल प्रान्तीय परिषद्में", ३-५-१९२५।

३. देखिए "फिर वही", ७-५-१९२५।

३१. अन्त्यज साधु नन्द

नन्दकी यह कथा दक्षिणके साहित्यसे महादेवभाईने साररूपमे ली है। मै चाहता हूँ इसे सव लोग रुचिपूर्वक पढे। कोई भी यह न माने कि यह कथा कपोल-कल्पना मात्र है। सम्भव है उसमे कुछ अत्युक्ति हो। परन्तु नन्द नामक एक साधुचरित अन्त्यज छ सौ साल पहले दक्षिणमे हुआ है और उसने अपने चरित्र-वलसे मन्दिरोमे जानेका अधिकार प्राप्त कर लिया था। उसकी पूजा हिन्दुओमे आज भी अवतारी पुरुषके रूपमे की जाती है। इसपर तो सन्देह किया ही नही जा सकता। नन्दकी इस पवित्र कथासे हमे यह शिक्षा मिलती है कि यद्यपि जन्म कर्मका फल है, फिर भी विधाताने हमारे लिए पुरुषार्थ नामकी वस्तु भी वनाई है, और नन्द-जैसा अन्त्यज चरित्रके वलसे इसी जन्ममे पवित्र हुआ और पवित्र माना गया। ब्राह्मणोने उसे प्रेमपूर्वक अपनाया। यदि नन्द इसी जन्ममे पवित्र हो सका तो हमे यह मानना ही होगा कि यह शक्ति सव लोगोमे निहित है। इसलिए हर अन्त्यजको पूजाके लिए मन्दिरोमे प्रवेश करनेका अधिकार दिया जाना चाहिए।

मैं आशा रखता हूँ कि कोई ऐसा तर्क न करेगा कि नन्दने तो अग्निमें प्रवेश किया था, अन्त्यज लोग ऐसा करके मन्दिरोमें जाना चाहे तो जाये। अग्नि-प्रवेशकी वात काव्यकी अत्युक्ति है। यदि हम इसे सच मान ले तो भी नन्दने स्वेच्छासे ही वैसा किया था। वहुत-से ब्राह्मण नन्दको स्नान-मात्र कराकर मन्दिरमे दर्शनार्थ जाने देनेके लिए तैयार थे। इस कथाका सार हमे यही समझना चाहिए कि अन्त्यज अपने पुरुषार्थसे इसी जन्ममे पवित्र हो सकते है, अर्थात् जिस शर्तपर दूसरे हिन्दू मन्दिरमें जा सकते है उसी शर्तपर अन्त्यजोको भी मन्दिरमे जानेकी छूट दी जानी चाहिए।

मैंने इतना तो कहा उच्च वर्णी कहे जानेवाले हिन्दुओके लिए।

अन्त्यजोको तो नन्दकी कथा प्रोत्साहन देनेवाली और पावन करनेवाली है ही। मै चाहता हूँ कि इसका पाठ हर अन्त्यजके घरमे किया जाये। परन्तु वे केवल इसका पाठ करके ही सन्तुष्ट न हो जाये। जो-कुछ नन्दने किया है वह प्रत्येक अन्त्यजको करना चाहिए। मै चाहता हूँ कि सभी अन्त्यजोमे नन्दकी-सी पवित्रता दिखाई दे और उसका धीरज, उसकी क्षमा, उसका सत्य और उसकी दृढता भी आये। नन्द सत्याग्रहकी मूर्ति था। नन्दने नास्तिकोको आस्तिक वनाया था। ईश्वर करे, प्रत्येक अन्त्यज नन्दका आख्यान पढकर अपने दोषोको दूर करनेके लिए उत्सुक हो और उसमे समर्थ हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १०-५-१९२५

३२. पत्र : मगनलाल गांधीको

रविवार

वैशाख बदी २ [१० मई, १९२५][1]

चि० मगनलाल,

पुनैयाका पत्र तुमने वापस माँगा था; वह इसके साथ है। तुम देखोगे कि मैंने उसका उपयोग 'यग इडिया' और 'नवजीवन'मे कर लिया है।

मै चि० रुखीके[2] सम्वन्धमे तुमको लिख ही चुका हूँ। यहाँ खादी-कार्यका मुझे अच्छा अनुभव हो रहा है। इनका कुछ काम हमारे कामसे अच्छा है। हमारा कताई और पिंजाईका काम वहुत स्वच्छतासे और नियमपूर्वक चलता है न? मेरा स्वास्थ्य अभीतक तो वहुत अच्छा रहा है। भाई रमणीकलाल आ गये हो तो[3] कहना कि चरित्रविजयजीका[4] पत्र आया है। उन्होने तो हर चीजसे इनकार किया है। वे जितने प्रमाण . .और .के विपयमे इकट्ठे कर सके, करे। मै इन दोनो वातोको भूला नही हूँ और भूलना चाहता भी नही।. . .के सम्वन्धमें तो तुम जानते ही हो? उनपर पैसा खाने और व्यभिचार करनेके आरोप है। जिसने मुझसे यह बात कही है वह इन आरोपोके वारेमे दृढ है। यदि कोई वात तुमको या छगनलालको मालूम हुई हो तो मुझे सूचित करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वासे कहना कि मै हरिलालसे मिला था, मैंने उससे तीन घटे बाते की। हरिलालने खास तौरसे कहा है कि बा कलकत्ता न आये। वह इस समय अपने किसी मित्रके साथ रहता है।

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६२०६) से।
सौजन्य . राधावहन चौधरी

१. विषय-वस्तुसे मालूम होता है कि गांधीजीने यह पत्र १९२५ में बंगालके दौरेके दिनोंमें लिखा होगा।

२. मगनलालकी पुत्री।

३. रमणीकलाल मोदी; साबरमती आश्रमके सदस्य।

४. सोनगढ (सौराष्ट्र) में खादी प्रचारके लिए छात्रों और अन्य लोगोंको प्रशिक्षित करनेके उद्देश्यसे खोले गये महावीर रत्न आश्रमके संस्थापक।

३३. भाषण : पूरनबाजारके व्यापारी संघमे

१० मई, १९२५

अभिनन्दन-पत्रका उत्तर देते हुए, गांधीजीने शुरूमें ही कहा कि मुझे अत्यन्त दुःख है कि मैं अली भाइयोंमें से किसी एकको भी अपने साथ नही ला सका। केवल मेरे गुणगान करनेसे कुछ नहीं होगा। मैं तो बस यही चाहता हूँ कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच पूर्ण रूपसे एकता स्थापित हो, अस्पृश्यता दूर हो। मैं मानता हूँ कि बंगालमें वैसी अस्पृश्यता नहीं, जैसी कि दक्षिण भारतमें है। किन्तु मैंने नामशूद्रोंसे सुना है कि उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार होता है। हिन्दुस्तानकी गरीबी दूर करनेके लिए आप सभीको चरखा अपनाना चाहिए और खद्दर पहनना चाहिए। मैं देशको सभी बुराइयोंसे मुक्त करना चाहता हूँ; इसमें मद्यपानकी बुराई भी शामिल है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जबतक आप मेरे द्वारा तैयार किये गये त्रिसूत्री कार्यक्रम-पर अमल नहीं करेंगे तबतक आपको स्वराज्य नहीं मिलनेका।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-५-१९२५

३४. भाषण : चाँदपुरमे[1]

१० मई, १९२५

महात्माजीने सबसे पहले स्वागत-समिति तथा नगरपालिकाको मानपत्रके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि यह मेरे प्रति आपका प्रेम ही है जिसके कारण मानपत्रोंमें आपने मेरे गुणोंका उल्लेख किया है। मैं आपका प्रेम स्वीकार करता हूँ और उन गुणोंको प्राप्त करनेके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा। अतएव मैं इस प्रशंसा-को आपके प्रेमके प्रतीकके रूपमें स्वीकार करता हूँ।

स्वागत-समिति द्वारा दिये गये मानपत्रमें कार्यके परिमाणके सम्बन्धमें व्यक्त की गई निराशाका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि यदि मनुष्य ईमानदारी, त्याग और विनम्रताके साथ काममें जुटा रहे तो निराश होनेकी कोई बात नहीं।

परमात्माका वचन है कि फलकी अपेक्षा किये विना हमे निरन्तर अपना कर्त्तव्य करते रहना चाहिए।

१. यह भाषण जनता तथा नगरपालिकाकी ओरसे दिये गये मानपत्रके उत्तरमें दिया गया था। गाधीजीने उत्तर हिन्दीमें दिया था। मूल भाषण उपलब्ध नही है।

महात्माजीने उक्त कथनपर जोर देते हुए कहा कि हमारा धर्म हमें अपने कार्यमें रत रहनेकी शिक्षा देता है। आपके कार्यमें मन्द प्रगति होनेका क्या कारण है सो मैं समझता हूँ। यह इसलिए हुआ कि देश वास्तविक कर्मभूमिमें अभी हाल ही में उतरा है।

अबतक तो हमने कामके बारेमे केवल बाते की है, हमने गम्भीरतापूर्वक काम करना शुरू नही किया था। अब हम बातोकी दुनियासे कामकी दुनियामे आ रहे है। चूँकि हम कर्मक्षेत्रमें पदार्पण कर चुके हैं, इसलिए हमे कर्मकी साधनाके जरिये आध्यात्मिक जीवनकी ओर बढना है। हमने १० वर्ष पूर्व, उसी समय अपनी स्थितिको समझ लिया था जब भाषण, प्रशसा और ताली बजाना ही राजनीतिके क्षेत्रमे एक फैशन बना हुआ था। तब हमारे पास हजारो कार्यकर्त्ता थे। इसमे आश्चर्यकी कोई बात नही कि आज चरखेपर काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओकी सख्या उससे कम है।

महात्माजीने कहा कि कांग्रेसके सदस्योंमें असाधारण रूपसे कमी आ जाने और चरखोंकी संख्यामें वृद्धि न होनेके कारण मैं जरा भी निराश नहीं हूँ। मैं अनुभव करता हूँ कि इससे मुझे अधिक निश्चयके साथ काम करनेका बल मिला है। इसी कारण मैं अपने भाइयों और बहनोंसे कहता हूँ कि वे अपने कार्यमें विश्वास करें। मैं कांग्रेसके ऐसे एक करोड़ सदस्योंकी अपेक्षा जो सिर्फ चार आने चन्दा दें और कुछ भी न करें, उन तीस सदस्योंको अधिक मूल्यवान निधि समझूँगा जो कताई-सदस्यता, हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा अस्पृश्यता सम्बन्धी-शर्तोंको पूरा करते हों। पाँच या सात खरे और सच्चे सिक्के एक करोड़ खोटे सिक्कोंसे अधिक मूल्यवान होते हैं। खोटे सिक्कोंको तो नदीमें फेंक देना चाहिए, त्याग देना चाहिए।

इसलिए कांग्रेसका कताईकी शर्तवाला मताधिकार सच्चे कार्यकर्त्ता खोज निकालनेकी एक कसौटी है। इससे नकली मालके ढूँढ निकालनेमे सहायता मिलेगी। यदि कोई व्यक्ति यह कहे कि उसे चरखेमे विश्वास नही है तो उसे चरखेको छोड़ देना चाहिए। किन्तु यदि आपको चरखेकी उपयोगितामे विश्वास है तो आपको इसलिए निराश नही होना चाहिए कि दूसरे लोग इसे नही अपनाते। आपको अपने कर्त्तव्यके प्रति जागरूक रहते हुए अपना काम करते रहना चाहिए।

महात्माजीने जोर देकर कहा कि यदि देशका एक व्यक्ति भी चरखेके पक्षमें न रहे तो भी मैं अकेला अपने घरमें रहकर प्रतिदिन ८ घंटे चुपचाप चरखा चलाता रहूँगा।

स्वागत-समितिके मानपत्रमें बताया गया था कि अन्नके अभावके कारण लोगोंकी कैसी दयनीय दशा हो गई है। इसका पुनः उल्लेख करके गांधीजीने कहा कि मैंने सुना है कि इस प्रदेशमें "वॉटर हायसिन्थ" नामके पौधे फैले हुए हैं। ये हर साल फसलोंको बहुत नुकसान पहुँचाते हैं।

मेरा खयाल ऐसा है कि हम अपने आलस्यके कारण ही दुःख भोग रहे है और इसी कारण बिना किसी रोक-थामके 'वाटर हायसिन्थ' भी बढ़ते जा रहे है।

मैं भारतके लोगोको विपत्तियो और सकटोसे मुक्ति दिलानेके लिए ही चरखेका उपदेश दे रहा हूँ। चरखेके साथ-साथ हमारी मुक्तिके लिए अन्य जरूरी कार्योको भी हाथमे लिया जा सकता है। चरखा निराशाके मध्य आशा बँधाता है। इन्सान अपना दुश्मन और अपना दोस्त आप होता है। जब आप कठिनाईमे हो, ईश्वरको याद करे। ईश्वर इतना निर्दयी है कि जबतक आप कर्त्तव्यपरायण नही होते, तबतक आप किसी भी कार्यमे उससे सहायताकी आशा नही कर सकते। मै आग्रहपूर्वक सबसे कहता हूँ कि ईश्वरको याद रखे, और कार्य करते जाये।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १३-५-१९२५

३५. भाषण: चाँदपुरकी राष्ट्रीय पाठशालामें

१० मई, १९२५

महात्माजी राष्ट्रीय पाठशालामें छात्रोसे मिले। वहाँकी कार्यवाही अत्यन्त दिलचस्प थी। उन्होंने पहले उन लड़कोको बुलाया जो अपनेको सबसे अधिक दुष्ट मानते थे। पहले तो कोई भी आगे नहीं आया; बादमें कुछ लड़कोंने आगे आकर स्वीकार किया कि वे दुष्ट हैं। इसके बाद महात्माजीने उन लड़कोंको बुलाया जो अपन-आपको मूढ़ और बुद्धिहीन समझते थे। बहुत-से लड़के आगे आ गये। इसपर काफी हँसी हुई। इसके बाद महात्माजीने दुष्ट तथा अज्ञानी लड़कोके गुणोंका वर्णन किया और उन्हे कुछ हिदायतें दीं, जिन्हें अत्यन्त ध्यानसे सुना गया। उन्होंने छात्रोंसे कहा कि आप देशकी बढ़ती हुई गरीबीको समझें। जो लड़के चरखा कातते हैं, वे इसका अनुभव कर सकते हैं। इसीलिए मैं आपसे आग्रह करता हूँ कि आप प्रतिदिन सूत कातनेकी पूरी कोशिश करें। जो लड़का अनेक निराशाओके बावजूद अपने सामने कोई आदर्श नहीं रखता, वह नटखट लड़का है; और मूढ वह है जो खाली हाथ बैठे रहनेमें सन्तोष मानता है। जितना ही अधिक कोई छात्र सूत कातेगा उतना ही अधिक वह अनुभव करेगा कि उसने अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। स्वराज्यके संघर्षमें ऐसे लड़कोंका दल अपरिहार्य है। अन्तमें मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपने माता-पिताका आदर करें, अपने अध्यापकों तथा अपने परिवारके सभी सदस्योके प्रति प्रेमभाव रखें और अपने साथियोंसे मित्रतापूर्ण व्यवहार करें। मेरा हार्दिक आशीर्वाद आपके साथ है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १३-५-१९२५

३६. भाषण : चाँदपुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

१० मई, १९२५

गांधीजीने शुरूमें ही कहा कि चूंकि इस सभामें मुसलमानोंकी संख्या ज्यादा है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि मैं हिन्दू-मुस्लिम एकताके सम्बन्धमें अली भाइयोंसे हुई अपनी बातचीतके बारेमें आपको कुछ बतला दूं। उन्होंने निर्णय किया है कि हमें आपसमें फिर कभी नहीं लड़ना चाहिए। जबतक हम आपसमें मेलजोलसे नहीं रहेंगे तबतक स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव है। आप लोगोंको संकल्प कर लेना चाहिए कि आपसमें नहीं लड़ेंगे और आपको चरखा चलाना चाहिए। यहाँ हिन्दू या मुसलमान, कोई भी चरखा नहीं चला रहे हैं।

गांधीजीने प्रसंग उठनेपर कहा कि मुसलमान लोग कम संख्यामें खद्दर पहनते हैं और चरखा भी कम चलाते हैं। मैं आपसे सविनय निवेदन करता हूँ कि आप अधिक काम करें। आप लोगोंको याद रखना चाहिए कि पूर्वी बंगालकी बाढ़के समय प्रफुल्लचन्द्र रायने कितना शानदार काम किया था और किस प्रकार उन्होंने चरखेके जरिये बहुत-सी मुसलमान बहनोंकी सहायता की थी। मैं मुसलमान बहनोंसे भी चरखा चलानेके लिए कहता हूँ। करोड़ों हिन्दू भूखों मर रहे हैं। उनके लिए चरखा चलानेके सिवा और कोई विकल्प नहीं। इसी कारणसे मैं भारतका दौरा कर रहा हूँ और मैं उनसे चरखा चलानेके लिए कह रहा हूँ। तभी, केवल तभी आप लोग देशसे गरीबी दूर कर सकते हैं। जिससे भी मैंने कहा है उसने स्वीकार किया है कि कातना चाहिए और विदेशी कपड़ेका बहिष्कार करना चाहिए। फिर भी वे स्वदेशी कपड़ेका उपयोग नहीं करते। इसका कारण यह है कि वे अपने देशको प्यार नहीं करते और दूसरी बात यह है कि उनके हृदयमें अपने देशके प्रति कोई सम्मान नहीं।

अस्पृश्यताका उल्लेख करते हुए, गांधीजीने कहा कि नामशूद्रोंको बहुत कष्ट उठाना पड़ रहा है, यद्यपि उतना अधिक नहीं जितना कि दक्षिण भारतमें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-५-१९२५

१. इसके बाद गांधीजीने महिलाओंकी एक सभामें भी भाषण दिया था।

३७. पत्र : बृजकृष्ण चाँदीवालाको

रविवार [१० मई, १९२५ या उसके पश्चात्][1]

भाई ब्रिजकिसन,

तुमारा पत्र मीला। मेरा तुमारे पर विश्वास है परतु इस तरह किसीके लीये द्रव्यकी सहाय मागना मेरे क्षेत्रके वाहर है। यदि मैं इस तरह धनिक मित्रोसे व्यवहार रखुं तो मेरा सवध अस्वच्छ वन जायगा। इस काममे तुमारे हि पुरुपार्थसे तुमारे सकटका इलाज कर लेना चाहिये।

वापूके आशीर्वाद

मूल पत्र (जी० एन० २३७०) की फोटो-नकलसे।

३८. एक कार्यकर्त्ताकी कठिनाई

[११ मई, १९२५]

मेरी वगालकी यात्राके वीच मुझे अनेक सुझाव दिये जा रहे हैं। मैं सवको कार्यान्वित भले ही न कर सकूँ, लेकिन मैं उन्हे पसन्द करता हूँ। एक सच्चे कार्य-कर्त्ताका सुझाव है।[2]

मैं ये टिप्पणियाँ अपने मौनवारको[3] लिख रहा हूँ। खादी प्रतिष्ठानके सचालक सतीश वावू मेरे पास वैठे है। इसलिए मैंने कार्यकर्त्ताके सुझावको, जवावके लिए उनके सुपुर्द कर दिया है, क्योकि वे वगालकी परिस्थितियोको, जितना खुद मैं जाननेकी आशा कर सकता हूँ, उसकी अपेक्षा अधिक जानते है। उनका उत्तर यह है.

> पत्र-लेखकका खयाल है कि बंगालमें खादीके प्रचारकी वास्तविक कठिनाई रुईकी ऊँची कीमत है। जिस इलाजका सुझाव दिया गया है वह है कपासकी खेती शुरू करना तथा उसे प्रोत्साहन देना।
>
> बंगालमें निश्चित रूपसे यह कठिनाई है कि वहाँ कपास सभी जगह पैदा नहीं की जाती। लेकिन एकमात्र यही कठिनाई नहीं है और न ही यह कोई गम्भीर कठिनाई है। मंचेस्टर अपने कारखानोंके लिए रुई अमरीका और बम्बईसे खरीदता है और उनका तैयार कपड़ा भारतको भेजता है। निश्चय ही बंगालको जितनी रुई चाहिए उतनी वह भारतकी किसी भी रुईकी मण्डीसे

१. लगता है कि यह पत्र ३ मई, १९२५ को चांदीवालाको लिखे पत्रके वाद लिखा गया था, उसके वादका रविवार १० मईको पडा था।

२. यहां नहीं दिया जा रहा है।

३. ११-५-१९२५।

खरीद सकता है। बंगालमें लाखों रुपयेकी कपास पैदा की जाती है तथा चटगाँव और कलकत्ताके बंदरगाहोंसे बाहर भेजी जाती है। बंगाल जितनी कपास पैदा करता है उसका एक हिस्सा भी घरोंमें सूत कातनेके लिए इस्तेमाल नहीं करता, वह अपनी चटगाँव और कोमिल्ला-रुई घरोंमे सूतकी कताईके लिए इस्तेमाल कर सकता है तथा उसके अलावा जितनी और आवश्यक हो, बिहार तथा उत्तर प्रदेशके बाजारोंसे खरीद सकता है।

खादीके प्रसारमें वास्तविक कठिनाई न तो रुईकी ऊँची कीमतें हैं और न कपासकी खेतीका न किया जाना। खादीके प्रसारके लिए आवश्यकता है सूत कातनेकी तथा खादीके इस्तेमालकी इच्छाकी तथा एक ऐसे संगठनकी जो इस इच्छाको बढ़ाये तथा उसकी पूर्ति करे।

वह आश्रम जहाँसे लेखकने टिप्पणी भेजी है कपासको 'सस्ते' दामोंमें अर्थात् उचित बाजार-भावसे बेचनेका केन्द्र बनाया जा सकता है। आश्रम एक आदमीको कातने तथा धुननेका प्रशिक्षण देकर दक्ष बना सकता है तथा फिर पड़ोसकी बहनोंके सम्मुख इन कलाओंको प्रदर्शित करके यह बता सकता है कि अच्छी पूनियों तथा एक अच्छे चरखेसे सूत कातनेमें कितना आनन्द आता है। जब सूत कातना क्लेशप्रद हो जाता है तभी खादी-प्रसारकी काल्पनिक कठिनाइयाँ दिखाई पड़ती हैं।

यदि बंगालकी बहनोंको उन संस्थाओंकी सहायता मिले जिनके चरखा-विशेषज्ञ सेवा करनेमें रुचि रखते हैं तो फिर हर कठिनाई दूर हो जायेगी और फिर मैं किसानोंको बिना किसी प्रलोभनके कपासकी खेती करते भी देख सकता हूँ।

कातना एक मुख्य प्रक्रिया है। उसके पहले तथा बादमें दूसरे काम करने पड़ते हैं। कपासकी खेती करना, कपास ओटना तथा रुई धुनना पहले किये जाते हैं तथा सूत कातना और कपड़ा बुनना बादमें आते हैं। हमें अभी अपना ध्यान कुशलतापूर्वक धुनने, कातने, तथा बुननेतक सीमित रखना चाहिए। कुशल संस्थाओंके दृढ़ संकल्प कार्यकर्त्ताओं द्वारा किये गये गम्भीर प्रयत्नसे सभी कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी तथा बंगालमें सूत कातनेका प्रयोग सफल हो जायेगा। निकट भविष्यमें ही मैं ऐसा दिन देखनेकी आशा करता हूँ।

मैं इस उत्तरका पूर्ण समर्थन करता हूँ और साथ ही यह भी कहना चाहता हूँ कि सूत कातनेके लिए पुरुषोमे भी उतने ही सगठनकी आवश्यकता है जितनी कि स्त्रियोमे। बिना पुरुषोके सगठनके स्त्रियोसे सहयोग लेना अत्यन्त कठिन है। हम सूत कातनेवाली स्त्रियोको पैसा लेकर सूत कातनेके लिए तभी सगठित कर सकते हैं जब हमारे पास स्वेच्छया सूत कातनेवालोका दल हो। हम केवल उनके पतियो अथवा पिताओ अथवा भाइयोके जरिये ही चरखेमे सुधारकी आशा कर सकते हैं। कार्यकर्त्ताओ-मे ज्यादातर पुरुष हैं। अत. वे यह भी नही देख सकते कि स्त्रियाँ किस तरह कार्य

कर रही है। लेकिन कताईकी प्रदर्शनियोको देखकर मै कल्पना कर सकता हूँ कि पर्देके पीछे क्या हो रहा है। उनके चरखोकी यदि सुचारु रूपसे देखभाल की जाये तो अबसे दुगुना सूत प्राप्त किया जा सकता है। इसका मतलब हुआ बहुत थोडे ही प्रयाससे दूनी आमदनी। कभी-कभी कातनेवालोको जर्जर चरखोपर, जिनमे तकुओके स्थानमे भारी छडे लगी हुई है, सूत कातते देखकर दु ख होता है। यदि चरखे मजबूत बनाये जाये तथा छडोके स्थानपर उचित आकारके तकुए लगा दिये जाये तो तुरन्त दुगुना सूत मिलने लगे।

रही कपासकी बात, बगालके सभी भाग इसके लिए उपयुक्त नही है। इसलिए किसी हदतक आयातकी जरूरत सदैव रहेगी। प्रत्येक नवीन उद्योगको सरक्षणकी जरूरत होती है। राज्यका सरक्षण हमे शायद अभी नही मिल सकता। इसलिए इसका उपाय केवल स्वेच्छया सरक्षण ही हो सकता है। और स्वेच्छया सरक्षणका एक तरीका पारिश्रमिकके रूपमे कुछ लिये बिना सूत कातना है। काग्रेसकी कताई सदस्यताका एक यह भी ध्येय है। दूसरा तरीका रुई माँगना तथा गुजरातकी तरह पूनियाँ अथवा रुई आधी कीमतमें बेचना तथा उन लोगोके सूतको आधी कीमतमे बुनवाना भी है जो अपनी आवश्यकताओ के लिए काफी सूत कात सकते है। मिलोके साथ तुलना एक बेकारका कालाक्षेप है। कल्पना यह भी की जा सकती है कि जापान और मैन्चेस्टर हमारे पुनर्जीवित हो रहे घरेलू कताईके कुटीर उद्योगको नष्ट करनेके लिए अपना कपडा प्राय मुफ्त दे दे। फिर भी ऐसे आदमी होगे जो विदेशी अथवा मिलका कपड़ा मुफ्त लेना भी स्वीकार न करेगे। ऐसे ही लोगोके जरिये हम चरखेके प्रसारकी तथा उसे सफल बनानेकी आशा कर सकते है।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २१-५-१९२५

३९. भेंट : हरदयाल नागसे

चाँदपुर
[१२ मई, १९२५ से पूर्व]

गांधीजीसे बाबू हरदयाल नागने भेंट की और उन्होंने उनसे जो प्रश्न पूछे वे गांधीजी द्वारा दिये गये उत्तरोंके साथ इस प्रकार है:

प्रश्न: क्या आपका अब भी यही विश्वास है कि स्वराज्य बाहरसे नहीं आ सकता?

उत्तर: हाँ, यह मेरा पक्का विश्वास है।

तो फिर आपने दासके स्वराज्य-सम्बन्धी इस नये मतका खण्डन क्यों नहीं किया कि वह उपहारके रूपमें प्राप्त होगा और अनिवार्यतः साम्राज्यके अन्तर्गत ही रहेगा?

मैं नही समझता कि श्री दासने फरीदपुरके अपने अध्यक्षीय भाषणमे ऐसी कोई बात कही है। आपने उस भाषणका जो अर्थ समझा है, उससे बिलकुल ही भिन्न मैंने

समझा, क्योंकि देशबन्धु दास यह नही कहते कि स्वराज्यका ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत रहना अनिवार्य है। इसके विपरीत, वे इस सूत्रपर दृढ हैं कि 'स्वराज्य हो सके तो साम्राज्यके अन्तर्गत और यदि जरूरी हुआ तो उसके बाहर भी।'

क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि कुछ लोग केवल प्रशासनका बाहरी रूप-रंग बदलनेकी कोशिशमें हैं, वे उसका वास्तविक स्वरूप बदलनेकी कोशिश नहीं कर रहे हैं।

मैं जानता हूँ कि कुछ लोग केवल उसका रूप-रग ही बदलना चाहते है, वास्तविक स्वरूप नही।

मेरा कुछ ऐसा खयाल है कि स्वराज्यवादी लोग ऊँचे पद हथियानेवाले वर्गोंमें एक और वर्ग जोड़ देनेकी कोशिश कर रहे हैं। इस नये वर्गको थोड़ी-बहुत सत्ता हस्तान्तरित कर दी जायेगी, जो वास्तवमें सत्ता होगी ही नहीं।

मुझे ऐसी आशका नही है और न मेरा ऐसा विश्वास ही है। जहाँतक मै देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलाल नेहरूको जानता हूँ, मुझे पूरा यकीन है कि वे प्रशासनके ऊपरी रंग-रूप बदल दिये जानेसे सन्तुष्ट होनेवाले व्यक्ति नही है।

उदाहरणके तौरपर मैं कलकत्ता निगमका दृष्टान्त सामने रखता हूँ। यथासम्भव उसके प्रत्येक विभागमें स्वराज्यवादी ही भरे हुए हैं। मेरा खयाल है कि स्वराज्यवादी लोग प्रान्तीय और स्थानीय प्रशासनको महज इसलिए अपने दलके अधीन कर लेना चाहते हैं कि उसके सब पदोंपर वे स्वराज्यवादियोंको नियुक्त कर सकें।

मै नही जानता कि कलकत्ता निगममे क्या हो रहा है।

मेरा तथा अन्य बहुतेरे लोगोंका खयाल है कि स्वराज्यका विकास देशके भीतरसे ही [और धीरे-धीरे] होना चाहिए और उसके निर्माणका आधार गाँव होने चाहिए एवं उसकी आधारशिला एकमात्र चरखा ही हो सकता है। क्या आप मेरे इस विचारसे सहमत हैं?

मैं आपके विचारका अक्षरश अनुमोदन करता हूँ। लेकिन हमे लगता है कि स्वराज्यवादियोकी असहानुभूतिके कारण हमारा काम बहुत कठिन हो गया है। बगालमे प्राय सभी कांग्रेसी सस्थाएँ उनके हाथमें है और वे चरखेकी उपयोगिताको मानते ही नही हैं। ऐसी परिस्थितिमे प्रान्तीय या जिला संगठनोके अभावके फलस्वरूप चरखेको बड़ा नुकसान पहुँच रहा है।

क्या आप चरखा और खादी-आन्दोलनके हितकी दृष्टिसे कोई अलग संगठन खड़ा करनेके विचारको पसन्द करेंगे?

मुझे यदि पता चले कि स्वराज्यवादी लोग चरखेमे विश्वास नही रखते तो मुझे बहुत दु ख होगा। मैं यह तो जानता हूँ कि उनमे से कुछ लोगोका चरखेपर उतना विश्वास नही है जितना आपको और मुझे है, लेकिन जहाँतक मुझे मालूम है, मुझे एक भी स्वराज्यवादी ऐसा नही मिला जिसने चरखेके प्रति अपनी अश्रद्धा व्यक्त की हो। मान लीजिये कि वे चरखेमे कतई विश्वास नही करते तो भी मैं आपके द्वारा निकाले

गये इस निष्कर्पको नही समझ पा रहा हूँ कि उनकी सहानुभूति आपकी अथवा मेरी प्रगतिमे वाधा कैसे डाल रही है। इसके विपरीत आपको और मुझको उनकी उदासीन मनोवृत्तिके कारण और अधिक प्रयत्न करना चाहिए। इसलिए मै चरखेके विकासके लिए अलगसे सगठन वनाना तवतक जरूरी नही समझता, जवतक स्वराज्यवादी लोग चरखेका विरोध नही करने लगते।

क्या आप इस तथ्यको स्वीकार करते हैं कि अपने-अपने कामकी हदतक कांग्रेस-दल और स्वराज्यवादी दल एक-दूसरेसे मिलकर नहीं चल रहे हैं?

मै इसे सही नही मानता। लेकिन अगर दोनो परस्पर सद्भावनासे न चल रहे हो तो स्वराज्यवादियोकी अपेक्षा मैं इसमे अपरिवर्तनवादियोका दोष अधिक मानूँगा। केवल इसलिए कि गैर-स्वराज्यवादियोको स्वराज्यवादियोके रास्तेमे रोडे अटकानेका कोई भी कारण नही है। मेरा खयाल है कि कमसे-कम उन्होने तो अपना मार्ग अन्तिम रूपसे चुन लिया है। अव उन्हे चाहिए कि अपने फैसलेपर अडिग रहे और उसीके अनुसार कार्य करे।

लेकिन आप तो दोनों दलोंके विधिवत् मान्य नेता हैं। इस बातको ध्यानमें रखते हुए क्या आपका कर्त्तव्य इतनेसे ही पूरा हो जाता है कि आप किसी एक दलको दोषी ठहरा दें?

हॉ, अवश्य, क्योकि भले ही मै नामके लिए दोनो दलोका प्रधान होऊँ, पर मै स्वय गैर-स्वराज्यवादी दलका व्यक्ति हूँ। इसलिए गैर-स्वराज्यवादियोको अधिक दोषी ठहरानेका मुझे हक है।

निश्चय ही हममें से बहुतोको व्यक्तिगत रूपसे स्वराज्य हासिल करनेके साधन रूपमें अहिंसात्मक असहयोगपर पूर्ण विश्वास है। अब यह स्पष्ट हो गया है कि स्वराज्यवादी लोग केवल अपने वर्ग अथवा दलके हित साधनके विचारसे असहयोगकी निन्दा कर रहे हैं और वे सहयोगका अपना मशा भी सूचित कर चुके हैं — हाँ, यह जरूर है कि उन्होने सहयोगके लिए कुछ शर्तें लगाई हैं। परन्तु वे शर्तें ऐसी हैं जो देशके खयालसे महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। इन हालतोंमें श्री दासने फरीदपुरमें अपना अध्यक्षीय भाषण देते हुए असहयोगको असफल बताया है, आपने अहिंसा और सत्यके पालनपर जोर तो दिया लेकिन देशबन्धु दासके प्रहारसे असहयोगकी रक्षा करनेके लिए एक भी शब्द नही कहा। क्या आप इस सम्बन्धमें कुछ प्रकाश डालेंगे?

श्री दासके भाषणमे मुझे असहयोगपर कोई प्रहार दिखाई नही दिया। इसलिए असहयोगपर कुछ कहना प्रस्तुत विषय नही था। इसके अलावा चूँकि असहयोगके स्थगन-का प्रस्ताव वेलगाँवमे मैने ही रखा था, मैने असहयोगके वारेमे काग्रेसके मचसे एक भी शब्द जान-बूझकर नही कहा है। लेकिन मेरी निजी राय सारे ससारको मालूम है और सहयोगसे मेरा अलग रहना मेरे विचारोका स्पष्ट परिचायक है।

यह ठीक है कि फरीदपुरमें आपने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्षकी हैसियतसे भाषण नहीं दिया था, अपने व्यक्तिगत रूपमें दिया था और आपने वहाँ

जिन शब्दोंका प्रयोग किया वे थे अहिंसा और सत्यनिष्ठा। लेकिन असहयोगके बारेमें आपने एक भी शब्द नहीं कहा। मेरे खयालसे अहिंसा असहयोगके बिना अर्थहीन है। कायरतामें भी तो अहिंसा रहती है। यदि अहिंसात्मक असहयोगपर आपका विश्वास दृढ़ है तो आप किसी स्वराज्यवादीके उसके विरुद्ध बोलनेका प्रतिवाद किये बिना कैसे रह सकते हैं?

जैसा कि मैंने आपको बताया है, जहाँतक मुझे मालूम है, देशबन्धुके भाषणमे असहयोगके विरुद्ध एक शब्द भी न था। फिर हमे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि मै कांग्रेसके सिद्धान्तके सम्बन्धमे बोल रहा था। कांग्रेसके सिद्धान्तमे असहयोगका कोई जिक्र नही है। "शान्तिपूर्ण और वैध उपायो" का उल्लेख उसमे अवश्य है, मैंने अपने भाषणमे इतनी सावधानी अवश्य बरती थी कि अपना आशय इन दोनो शब्दोके साथ अहिंसा और सत्याचरणका विशेषण जोड़कर प्रकट किया था।

आपने फरीदपुरमे घोषणा की थी कि आपने मोटे तौरपर देशबन्धु दासको अपना वकील मान लिया है और उन्हें अधिकार दे दिया है कि वे कौंसिलोंमे जो-कुछ करना चाहें कर सकते हैं। कोई भी व्यक्ति इसका यही निष्कर्ष निकाल सकता है कि कौंसिलमें वे जो-कुछ करते हैं मुख्यतया आपकी ओरसे करते हैं; और वे वहाँ केवल आपके मुख्तार हैं। मालिक और मुख्तारके दस्तूरके मुताबिक आपके कथनका ऐसा अर्थ निकालनेके लिए किसीको भी दोष नही दिया जा सकता। क्या बात ऐसी ही है? देशबन्धु दास कौंसिलमें जो-कुछ भी करते हैं, क्या आप उसका समर्थन करते हैं?

जब मैंने देशबन्धु दास या स्वराज्यवादियोके 'एजेन्ट' होनेकी बात कही तब उस आयरिश व्यक्तिके लहजेमे कही थी जिसने अपनेको साम्राज्यका एक मालिक बताया था। मैंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस नामकी व्यावसायिक पेढ़ीके एक हिस्सेदारकी हैसियतसे वह बात की थी। चूँकि कांग्रेसने स्वराज्यवादियोको अपना कौंसिल कार्यक्रम चलानेका अधिकार दे दिया है। इसलिए मै समझता हूँ कि मेरा स्वराज्यवादियोको कौंसिल सम्बन्धी काम करनेके लिए अपना मुख्तार बताना कोई अनुचित कार्य नही हुआ। किन्तु इस तर्कके आधारपर प्रान्तीय कौंसिलोमे या विधान-परिषदोमें बरती जानेवाली उनकी नीतिके हरएक नुक्तेका समर्थन करनेकी जरूरत नही है। एक बुद्धिमान और कार्यकुशल व्यक्तिकी तरह एक बार अपने मनपसन्द अभिकर्त्ताओको मुख्तारनामा दे देनेके बाद, मै इस बातकी व्यर्थ चिन्ता नहीं करता कि वे वहाँ क्या कर रहे हैं।

यदि स्वराज्यवादी लोग नौकरशाहीसे किसी समझौतेके आधारपर कुछ रियायत पानेमें सफल हो जाते हैं तो क्या आप उस समझौतेमे साझेदार होंगे?

ओह! जब नौकरशाहीके साथ हुए किसी समझौतेकी शर्तें सामने आयेगी, तब मुझे उन शर्तोपर विचार तो करना ही होगा। सरकारसे किसी भी प्रकारका समझौता करनेके लिए मैंने किसी भी व्यक्तिको मुख्तारनामा नही दे रखा है। इसलिए अन्य किसी कांग्रेसीकी तरह मै भी राष्ट्रके सामने स्वीकृतिके लिए पेश किये जानेवाले समझौतेकी विवेचना स्वय करनेका अधिकार अपने लिए सुरक्षित रखता हूँ।

क्या आप प्रान्तीय स्वायत्त-शासनसे देशबन्धु दासका जो अभिप्राय है, उसे समझते हैं?

मैं अनुमान लगा सकता हूँ।

आपका अनुमान क्या है?

मैं उसका वही अर्थ मानता हूँ जो कोषमें दिया हुआ है।

क्या इस मुद्देपर मैं आपसे एक स्पष्ट उत्तरकी आशा नहीं कर सकता?

यही इसका उत्तर है, क्योंकि मैंने फरीदपुरमें दिये गये देशबन्धुके भाषणका बहुत ही बारीकीसे अध्ययन किया है। वहाँ उन्होंने इस विषयकी विस्तारसे चर्चा नहीं की थी। इसलिए मुझे प्रान्तीय स्वायत्त-शासनका वही सामान्य अर्थ लगानेका अधिकार है जो अंग्रेजी भाषामें माना जाता है।

क्या फरीदपुरके भाषणका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि देशबन्धु दासने प्रान्तीय स्वायत्त-शासनके सम्बन्धमें अपने विचार बदल दिये हैं?

मैं ऐसा नहीं समझता। निश्चय ही मुझे ऐसा नहीं लगा।

तो फिर वे अपने अध्यक्षीय भाषणमें उन शब्दोंके इस्तेमालसे कतराये क्यों?

क्या इस विषयपर अर्थात् प्रान्तीय स्वायत्त-शासनपर उन्होंने जोर दिया था? इसका वहाँ कोई अवसर ही नहीं था। उन्होंने तो स्वराज्यपर ही जोर दिया था, और स्वराज्य एक ऐसा शब्द है जो मेरी दृष्टिमें अधिक व्यापक है, क्योंकि उसमें प्रान्तीय स्वायत्त-शासनके अतिरिक्त और भी बातें आ जाती हैं।

लेकिन क्या आप हमें इसका कारण बतला सकते हैं कि जिस शब्दका प्रचार वे लगातार करते आये हैं उस शब्दको जबानपर न लानेके बारेमें उन्होंने इतनी सतर्कता क्यों बरती?

महज इसलिए कि वे उससे भी अधिक प्रचलित और व्यापक शब्दका प्रयोग कर रहे थे।

क्या आप अन्दाज लगा सकते हैं कि स्वराज्यवादियोंके कौंसिलोंमें किये जाने-वाले कार्यका अन्तिम फल क्या होगा?

मुझे अन्दाज लगानेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि जब कभी मैं यह जानना चाहूँगा कि उन्होंने क्या किया है तब मैं अपने पास रखी हुई समाचारपत्रोंकी फाइलें देख लूँगा। और फिर, ऐसे सारे कार्योंका मूल्य आँकनेके लिए मेरे पास अपना एक अलग मापदण्ड है। और मैं जानता हूँ कि उनके द्वारा कौंसिलोंमें किया गया कार्य उस कामसे किसी भी तरह कमोबेश न होगा जो हम और आप कौंसिलोंके बाहर रहकर गाँवोंमें कर रहे हैं। चूँकि जो लोग कौंसिलोंमें गये हैं उन्होंने घोषणा की है, वह की भी जानी चाहिए थी कि उनका बल जनताके खुदके किये कामपर और उसके द्वारा स्वशासनके लिए पैदा की गई शक्तिपर निर्भर करता है। मेरा सुझाव है कि आप और अन्य सभी लोग इस मापदण्डको स्वीकार कर लें। उस हालतमें हमें समाचारपत्रोंकी फाइलें नहीं उलटनी पड़ेंगी और न अटकलबाजीके निरर्थक खेलमें समय बरबाद करना पड़ेगा।

क्या आप यह महसूस नहीं करते कि आपने स्वराज्यवादियोंको जो बहुत अधिक ढील दे रखी है, असहयोगको उसके कारण सबसे ज्यादा क्षति पहुँच रही है?

मैं ऐसा कतई नही समझता, मेरी धारणा तो यह है कि उसे क्षति पहुँचनेका कारण असहयोगियोकी कमजोरी है।

क्या आपको मालूम है कि स्वराज्यवादियोंने अभीतक अपने तरीके नहीं बदले हैं?

कौनसे तरीके ?

उनके अपने तरीके और काम करनेकी नीति। मैं इसका एक उदाहरण देता हूँ। क्या आप फरीदपुरमें बंगाल प्रान्तीय सभाके अध्यक्ष-पदपर प्रफुल्लचन्द्र रायके निर्वाचनके बावजूद किसी दूसरेको प्रतिष्ठित करनेके बारेमे कुछ जानते है?

मै इसके बारेमे कुछ नही जानता। क्या हुआ था?

निर्वाचनके समय डॉ० राय दूसरे नम्बरपर और श्री बी० एम० सस्मल प्रथम निर्वाचित हुए थे। श्री सस्मलके त्याग-पत्र दे देनेपर, डॉ० रायका निर्वाचन एक तरफ रखकर श्री दासको निर्वाचित कर लिया गया था। क्या आपको इसके बारेमें कोई जानकारी है?

मै इसके बारेमे कुछ नही जानता।

यदि मैं इसे स्वराज्यवादियोंके तौर-तरीकोंके एक दृष्टान्तके रूपमें पेश करूँ तो आप क्या कहेंगे?

मै इसके बारेमे स्वराज्यवादियोंकी बात सुने बगैर और पूरे तथ्य जाने बगैर कोई राय नही दे सकता।

क्या आप तथ्योंकी जाँच करनेको राजी है?

जो बात खत्म हो चुकी है उसपर मैं समय बरबाद नही करूँगा।

मैं यह मामला स्वराज्यवादियोंके तौर-तरीकोंके एक स्पष्ट उदाहरणके रूपमें आपकी जानकारीमें ला रहा हूँ। इसपर आपका क्या कहना है?

मै उनके तौर-तरीकोके बारेमे कुछ भी नही जानता। किसी मामलेकी जाँच किये बिना मैं कोई राय भी नही दे सकता; क्योकि मैं स्वराज्यवादियोके या किसीके भी बारेमें काजी नही बनना चाहता; खासकर वहाँ, जहाँ उसकी कोई जरूरत न हो।

जब आप देखते है कि स्वराज्यवादियोंने अभीतक अपने रंग-ढंग नहीं बदले है तो क्या आप विशुद्धिवादियोंको उनकी अक्षमताके लिए दोषी ठहरा सकते है?

पहली बात तो यह है कि आप यह माने ले रहे है कि स्वराज्यवादियोके तौर-तरीके आपत्तिजनक है। इसलिए आपको इस बारेमें मुझे सन्तुष्ट करना है। दूसरे, जिन लोगोंको आपने विशुद्धिवादी कहा है, किस अधिकारसे कहा है, इसका पता मुझे नही है —उन्हे मैंने उनकी अक्षमताके लिए दोषी नही ठहराया है। लेकिन अपने उद्देश्यमें विश्वासके अभावका दोष उनपर मैंने जरूर लगाया है। और यदि तर्कके लिए ऐसा मान भी ले कि स्वराज्यवादियोके तरीके आपत्तिजनक है तो उससे विशुद्धिवादियोकी

शुद्धताको क्या लेना-देना है? यदि मेरे चारो ओर ससार अशुद्धिमय है तो क्या मुझे भी अशुद्ध हो जाना चाहिए। क्या ठीक वही समय हमारे लिए अपनी शुद्धताकी शक्ति-परीक्षाका नही है? मै तो केवल इतना ही और कहना चाहूँगा कि विशुद्धि-वादियोने अपने दावेके फलितार्थोको ठीकसे नही समझा है। यदि उन्हे अपने दावे सही सिद्ध करने है तो उन्हे शिकवा-शिकायत नही करनी चाहिए, उन्हे ससारके किसी भी व्यक्तिमे दोष नही खोजना चाहिए, फिर उनके साथ तो बिलकुल ही नही जिनके साथ वे अभीतक सहयोगीके रूपमे काम करते आये है। वल्कि उन्हे सामने आनेवाली बाधाओका मुकाबिला शान्तिके साथ और दृढतापूर्वक करना चाहिए और परीक्षाकी घडीमे अधिकसे-अधिक तेजस्वी बनना चाहिए।

स्वराज्यवादियोंका वर्तमान रुख क्या खुली दुश्मनीके रुखसे भी ज्यादा बुरा नहीं है?

यदि चरखेके प्रति स्वराज्यवादियोके दिलोमे सचमुच ही श्रद्धा नही है तो मै यह ठीक मानता हूँ कि भीतर ही भीतर उसका विरोध करनेकी अपेक्षा खुले तौरपर विरोध करना कही बेहतर होगा।

यदि स्वराज्यवादी वास्तवमें चरखेके प्रति उपेक्षाभाव रखते है तो क्या चरखे और खद्दरके लिए एक पृथक् संगठनका होना उचित नहीं होगा?

हाँ, अवश्य।

यदि ऐसा है तो फिर क्या एक नये ही अखिल भारतीय असहयोग संगठनकी बात सोचनेका समय नहीं आ गया है?

मै समझता हूँ कि अभी वह समय नही आया है। इस कामके बारेमे कोई निश्चित मत प्रकट करने या कोई निश्चित कदम उठानेसे पहले हमे यह पूरा वर्ष तो साथ-साथ काम करके देख ही लेना चाहिए।

बहुतेरे कट्टर असहयोगी स्वराज्यवादियोंके साथ काम करनेमें परेशानी महसूस करते है। क्या आप इसका कोई दूसरा हल सुझा सकते है?

किसी भी निष्ठावान् असहयोगीको स्वराज्यवादियोके साथ काम करनेमे परेशानी महसूस नही करनी चाहिए, क्योकि यदि उसे उनके साथ कौसिलमे काम नही करना है तो स्वराज्यवादीके साथ काम करनेका इसके सिवाय और क्या अर्थ है कि चरखेका काम साथ मिलकर किया जाये। मेरा खयाल है कि एक खरा असहयोगी वाइसराय तक के साथ काम करनेको तत्पर रहेगा बशर्ते कि वाइसराय महोदय बराय मेहरबानी चरखा चलाने बैठ जाये।

लेकिन महात्माजी, आप तथ्योंको अनदेखा नहीं कर सकते; वे अनुकूल नहीं है।

तो फिर मै कहूँगा कि वे असहयोगी ही नही है, क्योकि वे असहयोगके मर्मसे अपरिचित है। असहयोग किसी व्यक्तिकी कृतियोसे किया जाता है, खुद व्यक्तिसे नही।

हम आपके विचारोंको समझते तो है परन्तु सचाई यह है कि हम (उनके साथ काम करनेमें) परेशानी महसूस करते है। वे हमारे काममें अड़चनें पैदा कर रहे है।

वे अडचने पैदा कर रहे है, इस आरोपका समर्थन करनेवाला एक भी वक्तव्य मेरी नजरसे नही गुजरा है। यदि वे सूत नही कात रहे है, तो यह कोई अडचन नही है। अडचन पैदा करना तो तब माना जायेगा, जब आप गाँवोमे जाकर जनतासे सूत कातनेको कहे कि सूत कातना विलकुल बेकार है। लेकिन ऐसा आरोप किसी एक भी स्वराज्यवादीपर नही लगाया जा सकता।

क्या आप नहीं जानते कि उन्होंने गाँवोंके पुनर्गठनके लिए जो योजना रखी है, उसमे चरखेको कोई स्थान नहीं दिया है।

मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि फरीदपुरमे खद्दरकी प्रदर्शनीकी व्यवस्था स्वराज्यवादियोने ही की थी और वह शुद्ध चरखा प्रदर्शनी थी। देशबन्धु दासने अपने अध्यक्षीय भाषणमे कांग्रेसके अन्दर ऐसे रचनात्मक कार्यक्रमपर बल दिया है और कहा है कि इसके बिना हम कुछ भी हासिल नही कर सकते। मैं यह भी कह दूँ कि मैं कमसे-कम एक ऐसे स्वराज्यवादी परिवारको जानता हूँ जो कताईके प्रति उतना ही निष्ठावान है, जितना कि मैं या आप।

आपने फरीदपुर परिषद्का जो उल्लेख किया है उससे मुझे स्वराज्यवादियोंके एक और आपत्तिजनक तरीकेकी याद आ गई। उन्होंने बंगालमें असहयोग आन्दोलन समाप्त करनेके लिए आपको आमन्त्रित किया था, लेकिन उन्हें निराशा हुई।

आप बहुत ही सन्देहशील, बहुत ही पस्तहिम्मत आदमी है।

लेकिन आदमीके मनमें कुछ होता है, और विधाताके मनमें कुछ और। श्री देसाईने दिल्लीसे मुझे लिखा कि महात्माजी अभी शीघ्र ही बंगाल नहीं जायेंगे। आपने जब फरीदपुर परिषद्में शरीक होनेका निमन्त्रण स्वीकार किया तब सम्मेलनके आयोजकोंने ऐसा नहीं सोचा था कि आप बंगालका दौरा भी करेंगे। लेकिन जब आपने हमारा निमन्त्रण स्वीकार कर लिया, तब वे चक्करमें पड़ गये। हमारे लिए तो वह भगवानकी देन थी। क्या आप नहीं जानते कि वे नहीं चाहते थे कि आप बंगालका दौरा करें?

मेरा खयाल है कि आप जरूरतसे कही ज्यादा सन्देहशील है।

हाँ, मेरी मनोवृत्ति ऐसी ही है।

आप बिलकुल ही गलत सोच रहे हैं; क्योंकि मेरे दौरेका प्रबन्ध स्वराज्यवादियों और गैर-स्वराज्यवादियों — दोनोने मिलकर किया है। स्वराज्यवादी ही मुझे चटगाँव और नवाखली ले जा रहे है, क्योकि चटगाँव और नवाखली सतीशबाबूके द्वारा बनाये गये कार्यक्रममे नही थे।

क्या आपने इस बातपर गौर नही किया कि फरीदपुरमें कट्टरपंथी असहयोगियों-की अनुपस्थितिकी ओर सबका ध्यान जाता था?

मैंने खयाल नही किया। वे शायद अनुपस्थित थे। किन्तु यदि ऐसा हुआ है तो यह उनका दोष है।

क्या आप इसका कोई कारण बता सकते है?

नही! इतना ही कह सकता हूँ कि यदि वे अनुपस्थित थे तो यह उनका ही दोष था।

मेरे खयालसे कि उनकी अनुपस्थितिका कारण यह है कि अपना अस्तित्व बनाये रखनेका उनके पास यही एक रास्ता रह गया था।

मेरा खयाल है कि यह मिथ्या आरोप लगाना है।

क्या आप महसूस करते हैं कि रचनात्मक कार्यमें विश्वास रखनेवाले और कौंसिल-प्रवेशके रास्तेमें अड़चन पैदा करनेमें कतई विश्वास न रखनेवाले लोगोंका यह अस्वाभाविक मेल जनताके मनमें एक राजनीतिक अविश्वास पैदा कर रहा है?

जनताका मन केवल कार्यसे प्रभावित होता है। ठोस कार्यके अतिरिक्त उसपर अन्य किसी भी चीजका प्रभाव नही पडता। ठोस काम और आत्मत्यागको देखते ही जनताका मन सहज ही प्रभावित हो जाता है, अन्यथा जनताका मन कुम्भकर्णकी तरह सो जाता है, वह कुछ भी नही सुनता।

क्या आपका विचार है कि जनताको शिक्षा देनेके लिए किसी राजनीतिक शिक्षाकी जरूरत है?

हाँ, और चरखा ही वह राजनीतिक शिक्षा है।

यदि ऐसा है तो वह शिक्षा देनेका काम किसे करना चाहिए?

निस्सन्देह उन ही लोगोको जिनके मनमे उसके प्रति अभीतक जीवन्त आस्था बनी हुई है। ऐसे ही लोगोको जनताको शिक्षित करनेका काम करना चाहिए।

क्या उनको इसके लिए किसी संगठनकी दरकार नहीं?

मै अभी कलकत्तासे आ रहा हूँ। मैंने वहाँ देखा है कि दो नवयुवक आर्थिक या अन्य तरहकी किसी भी मददके बिना अपना काम बिलकुल ठीक-ठीक, कुशलतापूर्वक और व्यवस्थित रूपसे कर रहे है। उनको किसी सगठनकी जरूरत नही। चरखेकी यही खूबी है।

क्या अपनेको सिंहके गुणोंसे युक्त माननेवाले, हमारे शासकोंमें हृदय-परिवर्तन भी सम्भव है?

उनमे हृदय परिवर्तन सम्भव है, अन्यथा असहयोगका कोई उपयोग नही। पहले तो असहयोगियोमें हृदय परिवर्तन होने दीजिए, फिर शासकोके हृदयोमे परिवर्तन होगा ही। मेरे मनमे इस सम्बन्धमे कोई सशय नही है।

मैं आपका ध्यान पशु-जगतकी ओर आकर्षित करता हूँ। क्या आप समझते हैं कि शेर और भेड़ सचमुच एक घाट पानी पी सकते हैं?

नही; लेकिन इस उदाहरणसे मानव-जगतके बारेमे कोई निष्कर्ष नही निकाला जा सकता क्योकि मानव तो आखिर मानव रहेगा, फिर चाहे वह सूत कातनेमे विश्वास करता हो या कौंसिलोके काममे बाधाएँ पैदा करनेमे अथवा चाहे वह निरकुश शासक और गुलामोकी प्रथामे विश्वास करता हो, चाहे मानव समाजकी बन्धुत्व भावनामे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १४-५-१९२५

४०. पत्र : जी० वी० केतकरको

गाड़ीमें
१२ मई, १९२५

प्रिय श्री केतकर[1],

श्री केलकर[2] द्वारा भेजा गया 'गीता-बीज' पर आपका लेख पढकर मुझे प्रसन्नता हुई। मै सचमुच यह नही मानता कि 'गीता' एक वैज्ञानिक पुस्तक है, जिसकी व्याख्या वैज्ञानिक ढगसे की जानी चाहिए। हाँ, हम इसके आधारपर विज्ञानका निरूपण कर सकते है। आपका चुनाव निश्चित रूपसे बुद्धिमत्तापूर्ण है और उसका समर्थन सुन्दर तर्को द्वारा किया गया है। पर मै यह नही कह सकता कि यही सर्वोत्तम है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री जी० वी० केतकर
'केसरी' कार्यालय
पूना नगर

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ७९६३) की फोटोनकलसे।

४१. भाषण : चटगाँवकी सार्वजनिक सभामें[3]

१२ मई, १९२५

गांधीजीने अपने भाषणमें कहा कि मैं मानपत्रोंके लिए आप लोगोंका आभारी हूँ। किन्तु मुझे दुःख है कि मैं अली भाइयोंमें से किसीको भी अपने साथ नहीं ला सका। मुझे इस बातका भी दुःख है कि श्री सेनगुप्त उपस्थित नहीं हैं। पिछली बार जब मैं आपके नगरमें आया था, सरकारने मेरे भाषणपर प्रतिबन्ध लगा दिया था। नगरपालिका शानदार काम कर रही है, इसके लिए मैं उसे धन्यवाद देता हूँ। मैं नहीं जानता कि शिक्षाको अनिवार्य बना देना उपयोगी रहेगा या नहीं। इस

१. केसरीके सम्पादक।

२. न० चि० केल्कर; केसरी और मराठाके सम्पादक; लो० तिलकके सहयोगी; एक समयमें कांग्रेसके मन्त्री।

३. इस सभामें २०,००० से भी अधिक लोग उपस्थित थे। यह भाषण चटगाँवकी नगरपालिका, गांधी स्वागत समिति तथा करदाता संघकी ओरसे दिये गये मानपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था। गांधीजीने अपना भाषण पहले हिन्दी और फिर अंग्रेजीमें दिया। हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

विषयमें दो मत हैं। फिर भी मैं इस मामलेपर सावधानीके साथ विचार करूँगा। मैं नगरपालिकाको धन्यवाद देता हूँ कि उसने मद्यपानपर प्रतिबन्ध लगाया और अपने कर्मचारियोंको खद्दर पहननेके लिए कहा है। केवल खद्दर ही हमारे सब काम बना सकता है। खद्दरके बिना सविनय अवज्ञा असम्भव है। देशकी गरीबी दूर करनेके लिए चरखा चलाना आवश्यक है। यह आन्दोलन आत्मशुद्धिके लिए है। मैं ऐसी कोई बात नहीं कहूँगा जिसे मैं स्वयं नहीं करता।[1]

कुछ शब्द अंग्रेजीमें कहनेके लिए मुझसे अभी-अभी कहा गया। मैं जानता हूँ कि बंगालियोंको अंग्रेजीसे कितना मोह है। मैंने जो-कुछ कहा है उसके प्रत्येक शब्दका पर्याप्त रूपसे शुद्ध अनुवाद आपने अपनी मातृभाषा बंगलामें सुना है। मैं तो सोच भी नहीं सकता कि मैं एक ऐसी भाषाके माध्यमसे, जो आपके लिए भी उतनी ही विदेशी है जितनी कि मेरे लिए, आपको इससे अधिक आग्रहपूर्वक और स्पष्ट शब्दोंमें सत्यकी प्रतीति करा सकूँगा। किन्तु मुझे तो अपना काम करना है और यदि मैं अंग्रेजी भाषाके माध्यमसे ही कुछ लोगोंको खादी-भक्त बना सकूँ या कुछको, यदि वे पहलेसे ही अहिंसाकी शक्ति और मर्मके कायल नहीं हों और मैं उन्हें उसका कायल कर सकूँ तो मुझे जरूर ऐसा करना चाहिए। और इसलिए यदि मैं अब अंग्रेजीमें भाषण करके आपका समय लेता हूँ तो वह केवल उन लोगोंके सन्तोषके लिए जो चाहते हैं कि मैं अंग्रेजीमें बोलूँ। ऐसा करनेमें मेरा हेतु यह है कि यदि वे इस नितान्त सरल सत्यको जिसे मैं भारतकी जनताके सामने रखता आ रहा हूँ, किन्तु जिसे वह अबतक नहीं समझ सके हैं, उनको समझा सकूँ।

मेरे एक साथी कार्यकर्त्ताने कुछ वर्ष पूर्व चरखेके बारेमें लिखते हुए कहा था कि इसकी सादगीके कारण ही शिक्षित वर्ग इससे भयभीत है। उन्होंने यह बात कही थी और उनकी इस बातमें बहुत-कुछ सचाई है कि चरखेकी सादगीके कारण ही शिक्षित भारतीय उसके सौन्दर्य तथा उसके उदात्त अभिप्रायको समझनेमें असमर्थ हैं। चरखा यद्यपि एक इतनी सरल-सी चीज है, पर वर्षोंतक निरन्तर और गहराईसे विचार करनेके बाद मुझे इस बातका पूरा भरोसा हो गया है कि भारतके सामने अपने बहुतसे कष्टोंका निवारण करनेके लिए चरखा और खद्दरसे अधिक अचूक अन्य कोई उपाय नहीं।

हमारे प्यारे देशकी समस्याएँ इतनी विशाल और इतनी जटिल हैं कि वे एक अत्यन्त ही सरल उपचारके सिवा और किसी प्रकारसे हल नहीं होंगी। हमारी शिक्षा बड़ी ही पेचीदा और बेमेल किस्मकी रही है। इसके साथ हमें जो प्रशिक्षण मिला है उसने हमारे विचारोंको उलझाकर रख दिया है, हमारे मस्तिष्कको जड़ बना दिया है और जबतक हमारे सामने कोई भी चीज बड़ी गूढ़ बनाकर, जटिल रूपमें पेश नहीं की जाती तबतक उसमें निहित सत्यको हम देखनेके लिए तैयार नहीं होते।

१. यह अनुच्छेद १३-५-१९२५ के हिन्दूसे लिया गया है। बादका अंश १५-५-१९२५ के अमृत-बाजार पत्रिकामें दिये गये विवरणसे अनूदित है।

किन्तु यदि आप और गहराईसे सोचें, इससे भी अच्छा यह होगा कि आप अपने कमरेमें जायें और ईश्वरके सामने घुटने टेककर यह प्रार्थना करें कि वह आपका मार्गदर्शन करे तो वह आपको ठीक मार्गपर ले जायेगा और निश्चय ही आपको चरखेके पास बिठा देगा। हम बातें बहुत कर चुके हैं, हम भाषण दे चुके हैं, हम समाचारपत्रोंमें लिख चुके हैं, हम किताबें प्रकाशित कर चुके हैं, यहाँतक कि हम अनुसन्धान भी काफी कर चुके हैं; किन्तु बोलनेका युग, लिखनेका युग, भाषण देनेका युग लद गया है और वह अब लौटनेवाला नहीं है। कर्मका युग आ गया है। आपको भाषण देनेवाली कौमके विरुद्ध संघर्ष नहीं करना है, बल्कि जन्मजात कार्यकर्त्ताओंकी एक जातिके विरुद्ध संघर्ष करना है — ऐसी जाति जो झुकना नहीं जानती, ऐसी जाति जिसके पास दृढ़ निश्चय है और ऐसी जाति जो संसारके कुछ श्रेष्ठतम सैनिकोंसे बनी है। जो काम हम सबके सामने पड़ा है उसे किसी भी प्रकारकी कूटनीतिका सहारा लेकर नहीं किया जा सकता। आप जन-जागरण चाहते हैं, आप जनताका सहयोग चाहते हैं। आप चाहते हैं कि पार्षदगण अधिकारके साथ बोलें। इस समय उनके शब्दोंमें कोई शक्ति नहीं है; उनके प्रस्तावोंमें कोई बल नहीं है। इसका कारण यह नहीं है कि उनको बोलना नहीं आता। देशबन्धुने दिखा दिया है कि सरकारके प्रस्तावको और उसकी नीतिको गिराकर वे अपने बुद्धि-कौशलसे उसे किस प्रकार पराजित कर सकते हैं। किन्तु जबतक उनके पीछे जनताकी शक्ति न हो तबतक वे कुछ नहीं कर सकेंगे। आप और मैं, हममें से सभी तो कौंसिलोंमें नहीं जा सकते। मैंने बार-बार कहा है कि मैं कौंसिलोंमें विश्वास नहीं करता। लेकिन जो उनमें विश्वास रखते हैं, उनको मेरी ओरसे वहाँ जानेकी अनुमति है। मैं चाहता हूँ कि वे अधिकारयुक्त हों और सरकार उनकी बात आदर और ध्यानके साथ सुने और वे वहाँ जानेके पश्चात् अपनी हँसी न उड़वाएँ। ऐसा कैसे हो? ऐसा बड़ी-बड़ी सभाएँ करके नहीं होगा, प्रस्ताव पास करके नहीं होगा, प्रस्तावोंकी नीतिका समर्थन करके नहीं होगा, बल्कि ऐसा तभी होगा जबकि उन्हें कुछ शक्ति प्रदान की जाये। आप तबतक उन्हें शक्ति प्रदान नहीं कर सकते, जबतक कि आप स्वयं अपनेमें उस शक्तिका विकास नहीं कर लेते। हममें शक्ति नहीं है। जो व्यक्ति सरकारकी हिंसाका मुकाबला हिंसासे करनेका दम भरता हो, वह सामने आये। मैं कहता हूँ कि वह सरासर भूलपर है। दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें चाहे कुछ भी हुआ हो, लेकिन मेरा दृढ़ विश्वास है कि हम हिंसाके जरिये स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते।

इसलिए मैंने अच्छी तरह सोच-समझकर ही अहिंसाका कार्यक्रम रखा है। मैंने ऐसा इस खयालसे नहीं किया कि यह एक धार्मिक कृत्य है, जैसा कि मैं उसे मानता हूँ, बल्कि इस खयालसे कि यह कार्य-साधक उपाय है। देशके लिए एकमात्र राजनीति यही है। जिसके पास जरा भी राजनीतिक समझदारी होगी वह इस नतीजेपर पहुँचे बिना न रहेगा कि हिंसाके साधनोंसे कोई काम सधनेवाला नहीं है। मैं उन लोगोंकी अधीरताको समझता हूँ, उनकी प्रशंसा भी करता हूँ जिनके हृदयोंमें देशको गुलामीकी बेड़ियोंसे मुक्त करनेकी तीव्र लालसा है किन्तु देशकी गुलामीकी बेड़ियोंको

काटनेके लिए मेरी आतुरता किसीसे भी कम नही है। किन्तु मै अपनेको एक विवेकशील व्यक्ति मानता हूँ। मै समझता हूँ कि मुझमे व्यावहारिक ज्ञान प्रचुर मात्रामे है। मै अपनेको एक ऐसा व्यक्ति मानता हूँ कि जिसने ससारको बहुत-कुछ देखा है। मै अपनी किशोरावस्थासे ही सघर्ष करता आया हूँ—जन्मजात योद्धा हूँ। मै लडनेसे नही चूकता फिर चाहे मेरा वास्ता अपने भाई, मित्र, पत्नी, बच्चो या अपने सहधर्मानुयायीसे ही क्यो न पडा हो; यदि किसी मुसलमानसे पड़ा तो उससे भी। किन्तु इस सम्पूर्ण अवधिमे मैने यही देखा है कि इन तमाम लडाइयोमे मेरा अस्त्र एक ही रहा है, अहिंसा।

मै अपनी पत्नीसे हिंसात्मक रीतिसे नही लडा, मै अपने भाइयोसे हिंसात्मक रीतिसे नही लडा, मै मुसलमानोसे हिंसात्मक ढगसे लडनेको तैयार नही हूँ और मै उन हिन्दुओसे भी हिंसात्मक रीतिसे लडनेका साहस नही करता जिनमें से कुछ अस्पृश्यताके प्रश्नपर मेरा विरोध कर रहे है। इसलिए मै अनुभवकी इस निधिसे यह निष्कर्ष निकाल सकता हूँ कि हिंसाको अपनाकर मै अग्रेजोसे भी नही लडूँगा। आपने मेरे किसी लेखमे पढा होगा कि मेरे प्रयत्नोके फलस्वरूप जितने अग्रेज भारतके प्रति प्रेमभाव रखने लगे है उतने आजकी पीढीके किसी भी अकेले व्यक्तिके प्रयत्नसे नही रख सके। मै जानता हूँ कि यह एक बहुत बडा दावा है, यह गर्वोक्ति है, किन्तु यह एक विनयशील व्यक्तिका दावा है, और उसने यह दावा अत्यन्त विनम्रभावसे किया है। मै अनुभव करता हूँ कि यदि हमें अहिंसाके जरिये लडाई लडनी है तो यह केवल शब्दोके जरिये नही लडी जा सकती। अहिंसाको कार्यरूपमें परिणत करना होगा। भारतकी मुक्तिका एक ही उपाय है और वह है अनवरत कार्य। बिना आरामके, बिना विश्रामके, बिना सुस्ताये, बिना एक क्षणके लिए भी रुके, ठहरे, और इस बातमें दृढ़ विश्वास रखते हुए कि यह एक बहुत अचूक उपाय है। और यही एक उपाय है जिसे मै उन छोटी-छोटी बालिकाओ, बालको, वयस्क लोगो, कवियो और दार्शनिकों, सन्यासियो, राजनीतिज्ञो, विद्वान् प्राध्यापको, भगियों, महिलाओ, तथा स्वस्थ पुरुषोके हाथोमें सौप सकता हूँ। जो अति व्यापक एकमात्र उपचार आज मेरी समझमें आ रहा है, वह चरखा ही है। आप इस चरखेकी शक्तिको बढाते जाइए और तबतक कातते जाइए जबतक ३० करोड व्यक्ति चरखा चलाने नही लग जाते। तब आप मुझे बताये कि इसकी शक्ति कितनी होगी, और यह बतायें कि यह क्या नही कर सकेगा। क्या कोई ऐसी चीज नही है जिसके बारेमे हम यह दावा कर सके कि यह हमारे लिए प्रतिष्ठाजनक है या हमारे सामर्थ्यके अन्दरकी चीज है। राजनीतिक जीवनके ४० वर्षोके इस लम्बे और नीरस अर्सेमे हम दुनियाको एक भी काम पूर्णताके साथ सम्पन्न करके नही दिखा सके है। हमने अभीतक अपने सामने बहुतसे कार्यक्रम रखे। अब मै राष्ट्रके सामने केवल एक ही कार्यक्रम रखता हूँ और उससे कहता हूँ कि वह पहले इस कार्यक्रमको पूरा कर दिखाये और इसके बाद ही अन्य किसी कार्यक्रमकी बात सोचे। मेरा कार्यक्रम यह है। चाहे खद्दर महँगा हो, चाहे खुरदरा और मोटा हो किन्तु हमे खद्दरके सिवा और कुछ नही पहनना

चाहिए। क्या यह कार्यक्रम असम्भव है? यदि खद्दर महँगा पडता है, तो इसके दो टुकड़े कर ले और आधेसे अपना तन ढँके। आपका यह कृत्य जीवनकी बहीमे आपके जमा खातेमे लिखा जायेगा। यदि यह खुरदरा है, तो भारतकी खातिर उस खुरदरे कपड़ेको ही पहनिए। समझ लीजिए कि भारतकी गुलामी खुरदरेसे-खुरदरे खद्दरसे भी ज्यादा खुरदरी है, समझ लीजिए कि भारतकी कगाली उस खुरदरेसे-खुरदरे खद्दरसे भी जो चटगाँवमे बनायी जा सकी है, कई-कई गुनी खुरदरी है। यदि आपके पास भारतके करोड़ो भूखे लोगोके प्रति सहानुभूति है, यदि आपके पास कातनेकी इच्छा है, तो आप तबतक कातते जाइए जबतक आपके हाथ शक्तिहीन नही हो जाते और तबतक खद्दर ही पहने जबतक कि आप मोटी खादीमे पसीने-पसीने नही हो जाते। यदि आप यह करेगे तो आपको मालूम होगा कि मेरे स्वप्नका और आपके स्वप्नका स्वराज्य क्षितिजपर उदय हो गया है और तब आप खुशीके मारे नाच उठेगे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १५-५-१९२५

४२. भाषण : विद्यार्थियोंके समक्ष, चटगाँवमें

१३ मई, १९२५

अच्छा, तब मेरा यही कहना है कि सच्ची राष्ट्रीय शिक्षाका आरम्भ कताईके शिक्षणसे होता है। जिस प्रकार इग्लैडमे प्रत्येक लड़का नाविकके कामकी शिक्षा लेता है, और बगालमे आप लोगोको स्वभावतः तैरना और पतवार चलाना आता है, उसी प्रकार हिन्दुस्तानके सात लाख गाँवोकी रक्षाके लिए खेतीके अलावा सूत कातनेके धन्धेकी जरूरत है। अमरीकामे भी सहायक धन्धोपर जोर दिया जाता है, यद्यपि वहाँ संयुक्त परिवारोकी समस्या नही है और उनका अपना राज्य है। हिन्दुस्तानमे किसान खेतीके अतिरिक्त किसी दूसरे धन्धेसे थोड़ी कमाई किये बिना जीवित नही रह सकते और यह अतिरिक्त कमाई सूत कातनेसे ही हो सकती है। बुनाई अनुकूल नही आ सकती, क्योंकि उसमे बचा हुआ वक्त देनेसे ही काम नही चल सकता। मै स्त्रियोकी सभामे हो आया हूँ और उनको सूत कातनेकी व्यावहारिक शिक्षा दे आया हूँ। मेरा चरखा इस छोटी-सी थैलीमे है।[1] यह तकली आपको अधिक सुन्दर नही लगेगी। मेरे पास एक सुन्दर तकली थी, मै उसे फरीदपुरमें कुमारी घोषको दे आया हूँ। वे वहाँके शिक्षा-विभागकी प्रधान है। उन्हे वह पसन्द आई है और उन्होने मुझे यह लिखा है कि वे खुद सूत कातेगी तथा अपने परिचितोको भी कातना सिखायेगी। आप जब गप्पें मारते है, मित्रोसे मनोविनोद करते है और ज्यामिति सम्बन्धी प्रश्नोपर विचार करते है तब भी इसको चला सकते है। हमारे यहाँ तो गडरिये इसे राह चलते-

१. यह उन्होंने अपनी तकली दिखाते हुए कहा।

चलते चलाते रहते है। उनकी निगाह अपनी भेडोपर होती है और साथ ही तकली भी चलती रहती है। यदि आपकी समझमे मेरी दलील न आती हो तो आप सतीश बाबूसे पूछे। वे अपनी रासायनिक उद्योगशाला और उससे होनेवाली आमदनी छोडकर इसमे पडे है। वे आपको हिसाब लगाकर मेरी अपेक्षा अधिक अच्छी तरह बता सकेगे, क्योकि उनका मस्तिष्क शोधशील है। यदि आपको यह लगता हो कि आपको अपने देशके भूखसे तडपते हुए लोगोकी खातिर यह दैनिक यज्ञ करना चाहिए तो आप इसे करनेमे लगे।

इतना कहनेके बाद गांधीजीने पूछा कि "बोलिये आपमें से कितनोंने मेरी बात समझी है?'" भाषण प्रारम्भ होनेसे पहले यह पूछनेपर कि कितनोंको कातना आता है, बहुत-से लोगोंने हाथ उठाये थे। और इस प्रश्नपर कि कितने कातते हैं, कोई हाथ नहीं उठा था। जब यह पूछा गया कि कितने लोग कातनेका वचन देते हैं, दस विद्यार्थियोंने ही हाथ उठाये। सप्रयोग भाषणके बाद यह पूछनेपर कि 'अब आपमें से कितने लोग कातनेका वचन देते है?' बीस-एक हाथ उठे। विद्यार्थियोंमें प्रामाणिकताकी चेतना कितनी बढ़ती जा रही है, इसका प्रमाण खोजने अन्यत्र जानेकी जरूरत नही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-५-१९२५

४३. भाषण: व्यापारियोंकी सभा, चटगाँवमें

१३ मई, १९२५

व्यापारियोसे मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है। मेरा दृढ विश्वास है कि हमने हिन्दुस्तानको व्यापारियोकी मार्फत खोया है और हम उसे उन्हीकी मार्फत वापस लेगे। हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रता शिक्षित वर्गकी मार्फत कभी नही मिलेगी। समस्त विश्वमे कही भी शिक्षित-वर्गकी मार्फत स्वतन्त्रताकी रक्षा हुई हो, यह हम नही जानते। देशकी रक्षा करनेवाले तो व्यापारी और सैनिक ही होते है। और फिर हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रता लडाईसे नही गई है, केवल व्यापारसे ही गई है। इसीलिए मै आपसे कहता हूँ कि जब मुझे अपने काममे व्यापारियोसे पूर्ण सहायता मिलेगी तब आप हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रता मिली ही समझे। मेरी प्रार्थना है कि व्यापारी लोग खादी-प्रचारके सार्वजनिक सेवाकार्यमे पूरा योग्य दे। आप यज्ञके रूपमे आधा घटा [नित्य] चरखा चलाये और शुद्ध खादी पहने। मेरे एक दो करोडपति मित्र खादी पहनते और सूत कातते है। आप भी ऐसा ही क्यो नही करते? आपसे तो मै धन और बुद्धि दोनोकी सहायता ले सकता हूँ। जो काम मै कर रहा हूँ यदि उसे करनेका आप निश्चय करे तो आप

१. यहां ५०-६० विद्यार्थियोंने हाथ उठाये।

मुझसे अधिक काम कर सकते हैं। मेरी प्रार्थना है कि आप इस कार्यमे तन, मन और धन, तीनोसे सहायता करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-५-१९२५

४४. कर्नाटकमें खद्दर

वीजापुर जिलेमे खद्दर सस्ता करनेके लिए एक प्रयोग किया जा रहा है। उस प्रयोगके बारेमे श्रीयुत एच० एस० कौजलगीसे प्राप्त वर्णन मैं सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ।[1]

[माँग-माँगकर] रुई इकट्ठा करनेका यह तरीका निश्चय ही सफल हो रहा है। श्री भरूचाने पूर्वीय खानदेशमे रुईके अच्छे परिमाणमें संग्रह किए जानेका समाचार भेजा है, वहाँ स्थानीय लोगोके अतिरिक्त मारवाड़ियो और पारसियोने भी रुई देनेमे हाथ बँटाया है। जिन अन्य स्थानोमे इसी तरहके प्रयोग किए जा रहे हो, वहाँसे भी विवरण पाकर मुझे प्रसन्नता होगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९२५

४५. टिप्पणियाँ

बुनकरोंकी शिकायत

अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी अहमदाबादके प्रस्तावको कार्यान्वित करनेके रूपमें जो सूत भेजा गया था उसके विषयमे एक कार्यकर्त्ता लिखते हैं:

> 'बुनकर इस बातकी शिकायत कर रहे हैं कि महीन सूतमे बट नहीं है। इसलिए ज्यादातर प्राप्त सूत बुनाईके कामका नहीं है। ऐसा लगता है कि कातनेवालोंके मनमें अच्छा सूत कातनेकी सावधानीकी अपेक्षा इस बातका श्रेय पानेकी इच्छा रही है कि उन्होंने सूत काता। मेरा खयाल है कि आपने वहाँ गुण्डियोंको जाँचा नहीं था। कुछ बुनकर तो तानेकी पाई कर लेनेके बाद भी ऐसे सूतको लौटा रहे हैं। उनकी दूसरी शिकायत गुण्डियोंके विभिन्न आकारोंके सम्बन्धमे है। बुनकरोने मुझे बताया है कि इन परिहार्य दोषोंके कारण वे

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र लेखकने लिखा था कि उन्होंने लोगोंको साथ लेकर घर-घर जा कर माँगकर रुई इकट्ठी की। उसका सूत कतवाकर कपड़ा बुनवाया गया और लोगोंको सस्ते दामोंपर मुहैया किया गया।

दिन-भरमें एक गज भी नहीं बुन पा रहे हैं और इस तरह दो आना रोज भी कमानेमें असमर्थ हूँ।

यह एक वाजिब शिकायत है। इन पृष्ठोंमें मैंने कहा है कि जो सूत आसानीसे बुना न जा सके, वह सूत कदापि नहीं है — जिस तरह जो रोटी खाई न जा सके, वह रोटी नहीं है। यह शिकायत सूत कातनेवाले सदस्योंकी जबरदस्त असावधानी-का प्रमाण प्रस्तुत करती है। कभी-कभी खराब ढंगसे किया गया काम कुछ काम न करनेसे भी ज्यादा बुरा होता है। जो वकील अपने मुकदमेकी पैरवी कुशलतासे नहीं करता, वह अपने मुवक्किलका पैसा चुरानेवाला चोर है। जो डाक्टर अपने मरीजका इलाज लापरवाहीसे करता है, वह भी मरीजका पैसा ही चुराता है और मानव-हत्यातक का दोषी कहा जा सकता है। इसी तरह जो सूत कातनेवाला व्यक्ति कातनेमें लापरवाही बरतता है और उसकी मजबूतीकी जाँच किये बिना ही अपना सूत भेज देता है वह व्यक्ति अप्रामाणिक रूपसे सूत कातनेका श्रेय प्राप्त करनेका दोषी है।

स्वराज्यमें सरकारकी बागडोर हमारे ही हाथोंमें होगी। तब यदि अधिकारी-गण अपना काम इसी तरह लापरवाहीसे किया करेंगे, जैसा कदाचित् सूत कातनेवालोंने इस बार किया है तो फिर काम कैसे चलेगा? सूत कातना एक सरल कार्य है, लेकिन वह हमारी योग्यताकी कसौटी भी है। इस अर्थमें कोई अन्य कार्य भी निश्चय ही हमारे लिए कसौटीके रूपमें होंगे। लेकिन सूत कातनेका कार्य इसलिए चुना गया है कि देशमें इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है। सार्वजनीन कसौटी एक ही हो सकती है। सार्वजनीन होनेके लिए काम सादे ढंगका हो, सीखनेमें आसान हो और जरूरी है कि उसमें हर व्यक्तिको कमसे-कम समय लगे, ताकि उस काममें लगे हुए लोग अन्य सार्वजनिक अथवा निजी कार्योंमें अपना समय और ध्यान दे सकें। सूत कातना ही ऐसी सार्वजनीन कसौटी है और यदि इस कार्यको अपनानेवाले लोग भी अपना काम लापरवाहीसे, बेमनसे या भद्दे ढंगसे करेंगे तो वे एक ऐसी कसौटीपर खरे उतरे हुए नहीं माने जाएँगे जो व्यावहारिक और इतनी सरल है कि जिससे अधिक सरल किसी कसौटीकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। हो सकता है कि लोग सूत कातना पसन्द न करते हों या उसमें विश्वास न रखते हों, तब तो सबसे सीधा रास्ता यही होगा कि वे कातें ही नहीं। लेकिन बेमनसे कातना अपने-आपको और राष्ट्रको धोखा देना है।

हाथकरघा

वाणिज्य एवं उद्योग विभागके अधीन हाथकरघेकी बुनाईपर सूचना विभागके निदेशकने एक स्मरणपत्र जारी किया है। उस स्मरणपत्रका मुख्य अंश मैं नीचे प्रकाशित कर रहा हूँ।[1]

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। स्मरणपत्रमें पिछले पन्द्रह वर्षोंमें हाथ करघेकी बुनाईमें की गई प्रगतिका ब्योरा दिया गया था। विभागने कृषिप्रधान क्षेत्रोंमें कुछ स्कूल खोले थे ताकि लोगोंको बुनाई और रंगाईमें प्रशिक्षण दिया जा सके।

यह बात पहलेसे ही निश्चित है कि खेतिहरोके घरोमे हाथकरघाका प्रचलन शुरू करानेके प्रयत्न असफल होगे, क्या इस तथ्यकी ओर मैं विभागका ध्यान खीच सकता हूँ? कृषि जीवनका थोडा-सा ही ज्ञान हो जानेपर यह जाहिर हो जाएगा कि हाथकरघोको इस तरहसे दाखिल करना अव्यावहारिक है। हाथसे बुनाई करना एक लम्बी प्रक्रिया है, जिसके लिए लगातार श्रम करना जरूरी है। उसके अन्तर्गत अनेक प्रक्रियाएँ है जिनमे एकाधिक लोगोके एक ही साथ काम करनेकी जरूरत है। यह सब किसी कृषककी झोपडीमे हो सकना असम्भव है। इसलिए पुरातन कालसे हाथकी बुनाई एक अलग पेशा और आजीविकाका एक स्वतन्त्र एवम् पूर्ण साधन रही है। कृषक कोई ऐसा पूरक धन्धा चाहता है, जिसे वह जब चाहे करे और जब चाहे न करे। करोडो लोगोके लिए ऐसा काम हाथसे सूत कातना ही है। निस्सन्देह ऐसे और भी काम है जिनसे खाली समयका उपयोग किया जा सकता है। लेकिन करोड़ो आदमियो और औरतोके लिए हाथसे सूत कातना ही एक समान काम हो सकता है। इसलिए यदि उद्योग विभाग अपने अस्तित्वका औचित्य सिद्ध करना चाहता है और व्यक्तियोके सोचनेके बजाय करोड़ो लोगोके बारेमे सोचना चाहता है और इग्लैंडके बजाय भारतकी बात सोचना चाहता है तो वह अपना ध्यान मुख्य रूपसे हाथकताईकी ओर लगायेगा, ग्रामीणोमे कताईका सगठन करेगा और हाथसे कताईके विभिन्न तरीकोमे सुधार करेगा। मुझे यह देखकर हर्ष होता है कि बगालमें इसी प्रकारके विभागने हाथकताईकी ओर ध्यान देना शुरू किया है, हालाँकि अभी वह ढीलेढाले ढगसे ही हो रहा है। सरकार यदि जरा भी सदाशयतासे काम ले तो हाथकताई ही एक ऐसा काम है जिसमे वह जनतासे सहयोग कर सकती है और उसे सफल बना सकती है। हमें बहुधा सरकारसे सहयोग करनेके लिए कहा जाता है, लेकिन स्वाभाविक और उचित तो यही है कि सरकार जनतासे सहयोग करे, उनकी जरूरतोको पहलेसे ही समझे और उन्हे पूरी करनेका प्रबन्ध करे। मैं विभागका ध्यान इस तरफ भी दिलाना उचित समझता हूँ कि जबतक वह बुनाईके पूर्वकी सब प्रक्रियाओपर नियन्त्रण नही रखेगा, हमारी रुई कच्चे मालके रूपमे मैंचेस्टर, जापान या बम्बई ही जाती रहेगी। विभागका काम यह है कि प्रत्येक ग्रामीणको इस बातका प्रशिक्षण दे कि वह अपने खेतोमे पैदा होनेवाली सारी कपासको अपने ही घर या गाँवमे ओटे, धुने, काते और बुने ताकि उसके पास कई तरहके काम करनेके लिए हो और जब अकाल या बाढ-जैसी विपत्ति आए और जब उसके खेतोमे फसल न खडी हो और उसके पास कोई काम न हो तो वह अपनेको बेकार और असहाय महसूस न करे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-५-१९२५

४६. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

नवाखली
१४ मई, १९२५

मेरे प्यारे चार्ली,

तुम्हारा पत्र मिला। निश्चय ही हम लोग शान्तिनिकेतन जा रहे है, वर्दवान-मे भेट होगी।

तुमने श्री मैकमिलनके विषयमे जो लिखा है, उसपर मैने गौर किया। अगर कोई व्यक्ति मृत्युके बाद मिलनेवाले दण्डके भयसे असत्यसे बचता है तो उससे क्या लाभ? फिर भी, यदि लोग जनमतके दबावके कारण ही नैतिक बधनोका पालन करते हो तो क्या उनके बने रहनेकी अपेक्षा उनके विनाशको हम अधिक पसन्द करेगे? यदि कोई सज्जन सन्तति-नियमनकी हिमायत करते है, तो वे स्पष्टत: स्वीकार करते है कि उनका नैतिक बन्धनोमे विश्वास नही है और वे वैवाहिक जीवनमे सम्भोगकी स्वच्छदताको ही आदर्श स्थिति मानते है। इसपर मुझे हैरानी होती है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
मोहन

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज,
द्वारा श्री चालीहा
जोरहाट, असम

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ९६६) की फोटो-नकलसे।

४७. पत्र : वसुमती पण्डितको

गुरुवार
वैशाख वदी ६ [१४ मई, १९२५][1]

चि० वसुमती,

आज तुम्हारा पत्र मुझे यहाँ मिला। सब-कुछ चला गया और जो घर बचा है वह भी चला जाये तो भी इससे क्या होता है? अभी तो तुम्हे नवीवन्दर[2]

१. देवदास १९२५ में नवीवन्दर गये थे। वैशाख वदी ६ उस वर्ष १४ मईको पड़ी थी। इस दिन गांधीजी नवाखलीमें थे।

२. सौराष्ट्रमें।

जाना चाहिए, क्योंकि वहाँ देवदास गया है। वह वहाँ अधिक तो क्या रहेगा? किन्तु वह स्थान है एकान्त। मैंने उसे देखा नहीं है; प्रशंसा सुनी है। आशा है, तुम स्वस्थ होगी। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

चि० वसुमती धीमतराय
दौलतराय काशीरामकी कम्पनी

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४६२) से।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

४८. पत्र : मणिबहन पटेलको

वैशाख बदी ६, गुरुवार [१४ मई, १९२५][1]

चि० मणि,

तुम्हारा लम्बा पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। स्त्रियोंमें काम करना मुश्किल तो है ही; मगर धीरजसे जितना हो सके तुम्हे उतना करते जाना चाहिए। डाह्याभाई आबू अथवा नवीबन्दर गये ही होंगे। अवश्य चूड़ियोंकी[2] बात मेरे ध्यानमें है। मैं लाना नही भूलूँगा। वे ढाकेमें मिलती है और मुझे वहाँ दो-तीन दिनमे ही जाना है। क्या बापू[3] हवा खानेके लिए कही जानेवाले हैं?

बापूके आशीर्वाद

चि० मणिबहन
द्वारा वल्लभभाई पटेल बैरिस्टर
अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. शंखकी चूड़ियाँ, जो मणिबहनने गांधीजीसे मँगवाई थीं।
३. वल्लभभाई पटेल।

४९. भाषण: नवाखलीकी सार्वजनिक सभामें[1]

१४ मई, १९२५

श्री गांधीने अभिनन्दन-पत्रोंका उत्तर देते हुए कहा कि जो अभिनन्दन-पत्र मुझे भेंट किये गये हैं उनके लिए मैं आप लोगोंको धन्यवाद देता हूँ। मुझे यह सुनकर दुःख हुआ कि श्रीयुत सत्येन्द्र मित्र यहाँ उपस्थित नही हैं, मांडलेकी जेलमें हैं। आशा है कि श्री मित्र थोड़े ही दिनोंमें वापस आ जायेंगे। हिन्दू-मुस्लिम एकताके बारेमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि चूँकि अली बन्धुओंमें से एक भी यहाँ मौजूद नहीं है, इसलिए मेरी जिम्मेदारी दुगुनी हो गई है। वे अपने काममें व्यस्त हैं। मैंने तो सुना था कि आप लोगोमें कोई अनबन नहीं है, लेकिन यहाँ मुझे वह नजर आ रही है। दोनोमें से एक भी जाति मेरी सलाह माननेको तैयार नहीं है। मुझे जब कभी ऐसा प्रतीत हुआ है कि दोनों जातियोंमें अनबन है तब मैंने उसके लिए दोनोंको ही जिम्मेदार माना है। यदि दोनो एकताके लिए कृतसंकल्प हों तो संसारकी कोई भी शक्ति उन्हे अलग नही कर सकती और यदि दोनों समाज अपने-अपने मन साफ नहीं कर लेते तो इसका उत्तरदायित्व दोनोपर ही होगा। अभीतक ये दोनों जातियाँ, मेल-मिलापसे रहती आई हैं।

अस्पृश्यताका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जबतक छुआछूत कायम रहेगी तबतक भारतका प्रगति कर सकना असम्भव है। मैं सनातनी हिन्दू हूँ और कहता हूँ कि हिन्दूधर्ममें अस्पृश्यता-जैसी कोई चीज नहीं है। अछूत वर्गके उद्धारके लिए आपके द्वारा किये गये प्रयत्नोके लिए आपको मैं धन्यवाद देता हूँ, लेकिन मुझे बताया गया है कि कुछ ब्राह्मण आपके रास्तेमें रोड़े डाल रहे हैं। लेकिन मुझे विश्वास है कि आप लोग अस्पृश्यता-निवारणके लिए दृढ़तापूर्वक कार्य करेंगे। मुझे आशा है कि नवाखलीके निवासी अस्पृश्यताको पूर्ण रूपसे मिटा देनेका यथासम्भव प्रयत्न करेंगे। मैं यह भी आशा करता हूँ कि आप लोग यह बात धोबियोको समझा दें।

भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने कहा कि आप जानते हैं कि देशके बहुत-से लोगोंके पास सालमें चार महीने कुछ काम नहीं रहता है और इसके परिणामस्वरूप वे और भी गरीब होते जा रहे हैं। संसारके सभी देशोंमें किसान लोग खेतीके साथ-साथ और भी काम किया करते हैं। हिन्दुस्तानमें इस दृष्टिसे चरखे-जैसा दूसरा कोई उद्योग नहीं है। इसीलिए मैं चरखेको 'अन्नपूर्णा' कहता हूँ। खेतोंसे आप चावल पा सकते हैं, लेकिन अपनी हालत आप केवल चरखे द्वारा ही बेहतर कर सकते हैं।

१. कचहरीके अहातेमें आयोजित सभामें गांधीजीको चार अभिनन्दन-पत्र भेंट किये गये थे। सभामें २५,००० से अधिक लोग आये थे, जिनमें मुसलमान ही अधिक थे।

गांधीजीने मध्यम वर्गके लोगोंसे जोर देते हुए कहा कि आप लोग जहाँ-कहीं भी हों, कमसे-कम आधा घंटा प्रतिदिन चरखा जरूर चलायें। यदि आप गरीबोंकी खातिर चरखा चलायेंगे तो इससे बढ़कर और कोई काम नहीं है। इस बातपर जोर देनेके लिए मैं विभिन्न स्थानोंका दौरा करता रहता हूँ। इसके बाद गांधीजीने नवाखलीमें नदीके बहावके कारण जमीन कटनेका जिक्र किया।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १६-५-१९५५

५०. भेंट: जिला अध्यापक संघके प्रतिनिधियोंसे

नवाखली
१४ मई, १९२५

प्रतिनिधियोंने महात्माजीसे शिक्षाकी वर्तमान प्रणालीके सम्बन्धमें कुछ प्रश्न किये और पूछा कि मौजूदा परिस्थितियोंमें अध्यापक अपने देशकी सच्ची सेवा किस तरह कर सकते हैं। महात्माजी मुस्कराये और बोले "कातो और खूब कातो।" आप अपने चरित्र और कार्यका उदाहरण प्रस्तुत करके बालकोंके मनपर, जो पूरी तरहसे आपके नियन्त्रणमें हैं, प्रभाव डालकर शिक्षा-संस्थाओंका साराका-सारा नैतिक वातावरण ही बदल डालिए। यदि अध्यापक सच्चे दिलसे प्रयत्न करें तो निरीक्षकों द्वारा सरकारके मनमाने हस्तक्षेपसे भी उनके उद्देश्य विफल नहीं हो सकते; क्योंकि अध्यापक सरकारी मुलाजिम नहीं हैं। यद्यपि बंगालके अध्यापकोंका और एक तरहसे समस्त भारतके अध्यापकोंका अलग ही वर्ग है फिर भी आज किसी सम्मिलित प्रयत्नकी आशा नहीं की जा सकती; लेकिन सच्ची लगनवाले शिक्षकोंको व्यक्तिगत रूपसे अपने हिस्सेका दायित्व साहसपूर्वक पूरा करना चाहिए। अन्तमें महात्माजीने कहा कि मैं अध्यापकोंके कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व पहले भी सूचित कर चुका हूँ; परन्तु यह काम अब 'यंग इंडिया' के स्तम्भोंमें लेख लिखकर और भी जोरके साथ और निश्चयात्मक ढंगसे करना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २१-५-१९२५

५१. भाषण : नवाखलीमें[1]

१४ मई, १९२५

कौन कहता है कि स्त्रियाँ पराधीन हैं? शास्त्रोंमें कहीं नहीं लिखा है कि स्त्रियाँ पराधीन रहें। सीता रामकी अर्धांगिनी थीं और उनका रामके हृदयपर प्रभुत्व था। दमयन्ती पराधीन नहीं थी। महाभारतको पढ़ कर कौन ऐसा कह सकता है कि द्रौपदी पराधीन थी? जब पाण्डव उसकी रक्षा न कर सके तब कृष्णकी स्तुति करके अपनी रक्षा करनेवाली द्रौपदीको पराधीन कौन कहेगा? हमारे यहाँ सात सती नारियाँ प्रातः स्मरणीय मानी गई हैं, क्या वे पराधीन थीं? जिनमें पवित्र रहनेकी शक्ति है और जिनमें अपने शीलकी रक्षा करनेकी क्षमता है, उनको पराधीन कहना भाषाकी हत्या करना है—अधर्म है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-५-१९२५

५२. भाषण : कोमिल्लाकी सार्वजनिक सभामें[2]

१५ मई, १९२५

महात्माजीने समुचित उत्तर देते हुए कहा कि यह अभिनन्दन-पत्र बंगलामें दिया जा सकता था। भविष्यमें जो लोग मुझे अभिनन्दन-पत्र देना चाहें, वे यदि बंगला या हिन्दीमें देंगे तो मुझे अच्छा लगेगा। मुझे बताया गया है कि कोमिल्ला खादीके काममें आगे बढ़नेका इच्छुक है, लेकिन तथ्योंसे इस बातकी पुष्टि नहीं होती। मुझे इस बातका जरा भी खेद नहीं है कि कांग्रेसकी सदस्यताकी शर्तमें चरखेको रखनेमें मेरा मुख्य हाथ था। आप इस तथ्यको स्वीकार करते हैं कि आपका काम गाँवोंसे शुरू होना चाहिए; और आप किसी भी कार्यकर्त्तासे पूछिए, वह निस्संकोच यही जवाब देगा कि चरखा ही एकमात्र उपाय है—वही जनताकी बढ़ती हुई गरीबीको मिटानेका सबसे कारगर रास्ता है। इसके बाद महात्माजीने उस इलाकेके लोगोंको इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि वे पूरे मेलजोलसे साथ-साथ रह रहे हैं। उन्होंने स्वराज्य हासिल करनेके लिए इसकी नितान्त आवश्यकतापर बल दिया।

उन्होंने इस बातपर दुःख प्रकट किया कि अलीबन्धु उनके साथ नहीं आये हैं। उन्होंने कहा कि मौलाना शौकत अली बम्बईका काम खत्म करनेके पहले वहाँसे

१. यह भाषण स्त्रियों द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें दिया गया था।

२. यह भाषण नगरपालिका, जिला बोर्ड, व्यापारी संघ और शान्ति-सेनाकी ओरसे भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

आना नहीं चाहते थे; और मौलाना मुहम्मद अली इसलिए दिल्ली नहीं छोड़ सके कि उन्हें दो-दो अखबारोंका संचालन करना होता है। लेकिन मैं कोमिल्ला कुछ नई बातें बतानेके लिए नहीं आया हूँ। एक अभिनन्दन-पत्रमें निराशाकी ध्वनि है, लेकिन निराशाकी ध्वनि तो भारतमें सर्वत्र ही है। कांग्रेसकी सदस्यताके लिए मताधिकारकी शर्तके सम्बन्धमें मुझे कोई अफसोस नहीं है। मैं भारतके लिए चरखेके सिवाय दूसरा इलाज सोच ही नहीं सकता। मैं मध्यवर्गके लोगोंसे अपनी आजीविका चलानेके लिए चरखा अपनानेकी बात नहीं कहता, बल्कि उनसे गरीबोंके लिए दृष्टान्त रूप होने और हिन्दुस्तानके लिए कुर्बानी करनेकी दृष्टिसे चरखा चलानेको कहता हूँ। इसके अलावा हिन्दुओं और मुसलमानोंको अपने दिलोंसे द्वेषभाव मिटा ही देने होंगे; और प्रसन्नताकी बात है कि इसके बारेमें दोनों वर्गोंमें मतभेद नहीं है। भाषणके अन्तमें उन्होंने अस्पृश्यताके बारेमें भी अपने विचार व्यक्त किये।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७-५-१९२५

५३. भाषण : विद्यार्थियोंके समक्ष[1]

कोमिल्ला
१५ मई, १९२५

महात्माजीने अपना भाषण अंग्रेजीमें दिया। उन्होंने विद्यार्थियोंको अपनी स्थिति साफ-साफ बता देनेके लिए धन्यवाद देते हुए कहा कि याद रखिये भारतका भविष्य आप नवयुवकोंपर ही निर्भर करता है। उन्होंने स्वराज्यके आदर्शको पुनः स्पष्ट रूपसे समझाते हुए कहा कि यह 'अधर्मराज्य' नहीं बल्कि 'धर्मराज्य' है। आप लोग ब्रह्मचर्यका पालन करें, देशके पुनर्निर्माणमें आप लोगोंको कितनी गम्भीर जिम्मेदारियाँ उठानी है, उन्हें समझें; आप लोग पुस्तकोंका अध्ययन जरूर करें परन्तु मेरे खयालसे पुस्तकोंका स्थान गौण होना चाहिए, क्योंकि मनुष्यका प्रथम कर्त्तव्य तो अपने चरित्रका निर्माण करना है; उसके बिना समस्त ज्ञान निरर्थक हो जाता है। इस बातकी मजबूतीसे गाँठ बाँध लीजिए कि चरखा आपके चरित्र-निर्माणमें सहायक होगा।

चरखेकी उपेक्षाके कारणोंका विश्लेषण करते हुए महात्माजीने कहा कि इसका मुख्य कारण यह है कि आप लोग भारतमें बसनेवाले करोड़ों लोगोंकी भीषण गरीबीको

१. गांधीजीको विद्यार्थियोंकी ओरसे भेंट किये गये एक अभिनन्दन-पत्रमें कहा गया था कि २ प्रतिशत विद्यार्थी ही सूत कातते और शुद्ध खादी पहनते हैं। इस मन्द प्रतिक्रियाका कारण है विद्यार्थियोंका चरखेमें विश्वासका अभाव और आलस्य।

नहीं समझ पाये है। चरखा चलानेसे ठीक आमदनी नहीं होती, इस आपत्तिके सम्बन्धमें उन्होंने विद्यार्थियोंको हल्की-सी फटकार बताते हुए कहा कि इस प्रकारके तर्क उपस्थित करनेकी आदत बचपनसे ही डाल लेना और अपने भावी जीवनको नष्ट करना उचित नहीं है। आप लोग इस विषयपर विचार करते समय अधिक व्यापक दृष्टिकोणसे काम लें और चरखेमें विश्वास कायम रखें। आप अपने सुख-चैनकी बात न सोचें, बल्कि इस बातको समझनेकी कोशिश करें कि आपका काता हुआ एक-एक गज सूत भारतकी समस्याओंको सुलझानेमें सहायक होगा। उपाय आपके हाथोंमें है और मुझे आशा है कि आप मेरे कार्यक्रमके अनुसार कार्य करेंगे।

हिन्दू-मुस्लिम समस्याका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जो बुजुर्ग लोग सरकारी नौकरीके बारेमें सोचते है, जो लोग कौंसिलोंमें जाना चाहते हैं, वे झगड़ें तो झगड़ें, लेकिन विद्यार्थियोंको न तो इससे कोई सरोकार होना चाहिए और न उनके पास इसके लिए समय ही है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७-५-१९२५

५४. भाषण : कोमिल्लामें[1]

१५ मई, १९२५

इस मानपत्रके लिए आभार मानना शिष्टाचार-मात्र कहा जायेगा, क्योंकि इस आश्रमको अस्तित्वमें लानेमे मेरा भी हिस्सा है,[2] यह बात आपने स्वीकार की है। जब मै बंगालमें आनेकी तैयारी कर रहा था तब मेरी आप-जैसे युवकोसे मिलने और आपका काम देखनेकी प्रबल इच्छा थी। आप-जैसे युवकोके स्वार्थत्यागसे मै भली-भाँति परिचित हूँ। मै जानता हूँ कि जबतक ऐसे स्वार्थत्यागी लोग हिन्दुस्तानमे पर्याप्त सख्यामे उत्पन्न नही हो जाते तबतक देशके स्वतन्त्र होनेकी आशा नही है। प्रत्येक युवकके लिए त्याग ही भोग होना चाहिए। मैंने त्यागको कभी दु.खकी अवस्था नही माना है और जो मनुष्य त्यागको दु ख मानता है, उसका त्याग सदा नही टिक सकता। इसलिए अपने भ्रमणमे जब-जब महान् त्यागके उदाहरण मेरे सामने आते है और मै ५०० या १००० रुपये मासिक वेतन छोडकर बहुत कम पैसे लेकर अपना गुजारा करनेवाले युवकोको देखता हूँ तब मुझे कोई दु ख नही होता; प्रत्युत मुझे यह अनुभव होता है कि ऐसे युवकोने खोया कुछ नही है, क्योंकि वे बहुत धन बटोरनेकी झझटसे मुक्त हो गये हैं।

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत। यह आश्रमकी ओरसे दिये गये मानपत्रके उत्तरमें दिया गया था।

२. गांधीजी जब १९२० में बंगालका दौरा कर रहे थे तब उन्होंने इस आश्रमकी स्थापनाकी योजना स्वीकृत की थी।

किन्तु मैं एक बातपर पूरा जोर देना चाहता हूँ। हम जब सेवाके निमित्त किसी वस्तुका त्याग करते हैं तब किसी-न-किसी अन्य वस्तुको ग्रहण भी करते हैं। मैं जानता हूँ कि कुछ युवक यह मानते हैं कि किसी वस्तुका त्याग करना ही मानो सब-कुछ पा जाना है। ऐसा सोचना भारी भूल है। हमें त्यागके साथ उस कार्यका ज्ञान भी होना चाहिए जो हमें करना है; और तभी हमारा जीवन सन्तोषमय हो सकता है। इसका मतलब यह है कि हमें अपने समस्त कार्य विवेकपूर्वक करने चाहिए। मेरे विचारसे आज भारतकी सेवा करनेके लिए जो युवक तैयार हैं उनके सम्मुख एक ही आदर्श रहना चाहिए, वह यह है कि हम करोड़ो निरुद्यमी लोगोको उद्यमी कैसे बनायें। अतः चरखेको इसके एकमात्र साधनके रूपमे स्वीकार किये बिना काम नही चलनेका। इसीलिए मैं यहाँकी चिकित्सा सम्बन्धी और [चिकित्सा] विद्यालय सम्बन्धी प्रवृत्तिको गौण मानता हूँ।[1] इन दोनो प्रवृत्तियोको उसी हदतक स्थान दिया जा सकता है जिस हदतक ये चरखेकी प्रवृत्तिकी पूरक हो। इसलिए आपके विद्यालयमे भी चरखे और खादीकी प्रवृत्ति चलती है, यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई। मेरी सलाह है कि इस विद्यालयके संचालक यह प्रतिज्ञा कर ले कि एक निश्चित तारीखके बाद विद्यालयमे खादी पहनकर न आनेवाले किसी लड़के या लडकीको प्रवेश नही दिया जायेगा। सभी माता-पिताओंको सूचना भेज दी जानी चाहिए कि विद्यालयके लड़कों और लड़कियोको अनिवार्य रूपसे सूत कातना होगा और खादी पहननी होगी। औषधालयके सम्बन्धमे भी यही नियम लागू होगा। मैं जिसकी चिकित्सा करता उसे भी खादी पहनानेकी बात मेरे मनमें जरूर आती। यो तो औषधालय बहुतेरे है। यह कोई नई प्रवृत्ति नही है, इसीलिए युवकोमे इसे करनेकी क्षमता है। मै आशा करता हूँ कि जिन्होने सेवा और स्वार्थत्यागकी दीक्षा ली है वे देशमे ऐसी प्रवृत्तिमे भाग लेगे जो कठिनसे-कठिन, व्यापकसे-व्यापक और अधिकसे-अधिक फलदायिनी हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९२४

१. भाषणसे पूर्व डॉ० सुरेश बनर्जीने कहा था कि हम, 'औषधालय ही नहीं, एक चिकित्सा-विद्यालय भी खोलना चाहते हैं।' गांधीजीने यह बात उसके उत्तरमें कही थी।

५५. विक्रमपुरके कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत

कोमिल्ला
१५ मई, १९२५

विक्रमपुरके कुछ कार्यकर्त्ताओंसे बातचीतके दौरान गांधीजीने कताई-सदस्यताकी प्रस्तावित मंसूखीके बारेमें अपनी स्थिति स्पष्ट रूपसे समझाई। उन्होंने कहा :

अभी कांग्रेससे अलग हो जानेका समय नही आया है और न अखिल भारतीय कताई-संघकी स्थापनाका समय ही आया है। यदि कताई-सदस्यता समाप्त कर दी जाती है, तब किसी पृथक् संगठनके बारेमे सोचनेका समय आयेगा, लेकिन जिस प्रकार आज स्वराज्यवादियोको कांग्रेसके एक अभिन्न अंगके रूपमें अपने कार्यक्रमपर अमल करनेकी छूट है, उसी प्रकार मुझे भी अलगसे अपने कार्यक्रमपर अमल करनेकी छूट मिली तो मैं पृथक् संगठन नही चाहूँगा। परन्तु यदि वह अनुमति न मिली तो मुझे अलग संगठन खड़ा करना ही होगा।

हिन्दुओं और मुसलमानोंमें पूर्ण एकताके सम्बन्धमें महात्माजीने कहा :

मैं हिन्दुओ और मुसलमानोमें पूर्ण ऐक्यकी उम्मीद नही रखता; मैं सिर्फ स्वराज्य प्राप्त करनेके उद्देश्यसे, चाहे वह आज प्राप्त हो या सौ साल बाद, काम-चलाने लायक एकताकी आशा जरूर रखता हूँ। ऐसी काम चलाने योग्य एकता कायम होनी ही चाहिए। इस एकताका अभिप्राय सरकारसे कुछ सत्ता प्राप्त कर लेना नही है।

अस्पृश्यताके अर्थके सम्बन्धमें महात्माजीने कहा :

अस्पृश्यता तो स्वच्छतासे सम्बन्धित एक सवाल है। यदि कोई व्यक्ति साफ-सुथरा है तो मैं उसके हाथसे न केवल पानी ही ले सकता हूँ वरन् उसे अपना भोजन पकानेकी भी इजाज़त दे सकता हूँ। लेकिन यह सहभोज नही है। यदि कोई व्यक्ति मेरी थाली ही में से मेरे साथ भोजन करता है तो उसे मैं सहभोज मानता हूँ। मैं अपनी थालीमें से अपनी पत्नीको भी नही खाने देता। वह एक हिन्दू पत्नी है और इसलिए प्राय. उसकी इच्छा मेरी थालीमे ही भोजन करनेकी हुआ करती है। लेकिन जैसे मै हिन्दूधर्मकी हर बातको हमेशा नही ग्रहण करता, वैसे ही मैं पत्नीको अपनी थालीमे भोजन करनेकी अनुमति नही देता।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७-५-१९२५

५६. भेंट : एक मित्रसे[1]

[१५ मई १९२५ के पश्चात्]

उस मित्रने कहा : "महात्माजी" हम अपनी पिछली भूलें फिर दोहरा रहे हैं। १९०५–१९०८ में हमने ताशके पत्तोंका एक घर बनाया था, वह खड़ा होते ही बिखर गया और अब फिर हम वही करने जा रहे हैं।

आप उस समयके स्वदेशी आन्दोलनकी मौजूदा आन्दोलनसे तुलना कर रहे हैं? आप भूलते हैं कि अब हमें दिखावटी काम नही करना है, खामोशीके साथ काम करना है।

श्रीमन्, मैं यह जानता हूँ, लेकिन कोई संगठन तो है नहीं।

क्षमा कीजिएगा, आपको वस्तुस्थितिका ज्ञान नही है। उदाहरणके लिए, क्या आप जानते हैं कि बगालमें, तमिलनाडमे और गुजरातमें हमारे पास अच्छेसे-अच्छे सगठन हैं? क्या आप समझते हैं कि खादी प्रतिष्ठान और अभय आश्रम, कोमिल्ला-जैसी संस्थाएँ बन्द हो जानेवाली सस्थाएँ हैं?

लेकिन वे चलेंगी भी कैसे? हम गुजारे-भरका पैसा लेकर कार्य कर रहे हैं और अपने नौजवानोंसे उससे भी कममें ही गुजर कर लेनेको कहते हैं। यह कब तक चल सकता है?

कबतक? क्यों? हमारा पूरा इतिहास [ऐसे त्यागसे] भरा पडा है। क्या आप समझते है कि हमारे नौजवानोमें धैर्य और साहस नही है? उन्होने अच्छी तरह देखभाल कर इस काममे हाथ डाला है और वे उसे किसी भी हालतमे छोड़नेवाले नही है, अभय आश्रम, जिसे कुछ दिन पहले मैंने देखा था, एक रमणीक स्थानपर बसाया गया है। उनके पास साफ-सुथरी छोटी-छोटी कुटियाँ है, एक सुन्दर तालाब और अच्छी खासी खुली जमीन है। वे अपना भोजन स्वय पकाते है, स्वय ही सफाईका काम करते है और एक अस्पतालकी आमदनीसे अपना खर्च चलाते है। डॉ० सुरेश कोई बच्चे नही है। वे अपना काम समझते है और वे इस बातका ध्यान रखेगे कि उनपर तथा उनके सहयोगियोपर चाहे कुछ भी बीते उनका खद्दरका काम दिनोदिन प्रगति करता रहे। और खादी प्रतिष्ठानके पास, जिसके द्वारा तैयार किये गये मालकी दर आप बहुत ऊँची बताते है, अभी इतनी माँगे आई पड़ी है कि उन्हे वह पूरा नही कर पाता। सतीश बाबूका काम देखिए। क्या आप कभी बाढग्रस्त क्षेत्रोमें गये है? बाढ-पीड़ित सहायताके काममे अब वे स्थायी रूपसे जुट गये है। आपको मालूम होना चाहिए कि खादी प्रतिष्ठान गुजारा-मात्रकी आयमे विश्वास नही रखता। वह अपने कर्मचारियोंको बाजारके हिसाबसे वेतन देता है।

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

श्रीमन्, उनका व्यापार तो आपके दौरेके कारण ही चमका है।

नही, इससे कोई फर्क नही पड़ता। आप चाहे तो इसे यो कह सकते है कि मेरे दौरेके कारण कुछ समयके लिए उनके व्यापारमे तेजी आ गई थी। किन्तु व्यापार फिर-से अपनी सामान्य अवस्थामे पहुँच जायेगा और वह सामान्य अवस्था पूर्णत. सन्तोषजनक है। सूतकी हाटमे जाइए। जहाँ पहले कुछ ही मन सूत बिकने आता था, आज सैकडो मन बिक रहा है। सैकड़ों परिवार यदि चरखेसे अपनी पूरी जीविका नही कमा रहे है तो अपनी आमदनी तो बढा ही रहे हैं। हाटके दिन लोग कार्यकर्त्ताओको किस तरह घेरते है और उनसे कताईके लिए रुई माँगते है, यह एक देखने लायक दृश्य होता है। आप पूछ सकते है कि यदि ये कार्यकर्त्ता अपने कार्य क्षेत्रसे हट जायें तो क्या होगा? लेकिन वे हट नही सकते। उन्होने अच्छी आमदनीवाले अपने धन्धोको यो ही नही त्यागा है। अभय आश्रमके लोगोके धनुषमे तीन प्रत्यचाएँ है। एक तो औषधालय, जिससे वे गुजर-बसरके लायक आमदनी कर लेते हैं। इसे सुरेश बाबू एक चिकित्सा विद्यालय खोलकर बढ़ाना भी चाहते है। उनमे चिकित्सा विषयक काफी प्रतिभा है। इस आश्रममें खादीके कामके अलावा, जो कि उसका मुख्य कार्य है, वे लड़कोका एक काफी बड़ा स्कूल चला रहे हैं। वे इन लडकोके जरिये लोगोको और ज्यादा प्रभावित करनेकी आशा करते है। और फिर प्रवर्त्तक संघके कार्यकर्त्ता भी है। मै उनके कामसे परिचित नही हूँ, लेकिन इतना जानता हूँ कि उनकी संख्या २०० है और वे अनेक कठिनाइयोके बावजूद काम कर रहे हैं।

लेकिन ऐसी केवल तीन ही संस्थाएँ है। प्रश्नकर्त्ताने अब भी अपना असन्तोष जाहिर करते हुए कहा।

बिलकुल नही; कई और संस्थाएँ हैं जो अपने विनम्र ढगसे काम कर रही है और यदि वे केवल तीन ही होती, तो भी क्या था? जमनालालजी, राजगोपालाचारी, शकरलाल बैंकर-जैसे लोग है, जो अपने चौबीसो घंटे इसी कामको देते हैं। वे पूरे मनोयोगसे और दृढ़तापूर्वक काम कर रहे हैं। वे इतने धैर्यके साथ काम कर रहे है कि सौ साल भी लगा रहना पड़े तो भी हटनेवाले नही। किन्तु साथ ही वे ऐसी मनोकामनासे काम कर रहे है कि सफलता कल ही मिल जाये। और क्या आप यह नही जानते कि १९०५-१९०८ का स्वदेशी आन्दोलन मौजूदा आन्दोलनसे भिन्न किस रूपमे है? वह आन्दोलन ऐसा था जिसकी अवधारणा तो बहुत सुन्दर थी, लेकिन उसके पीछे कोई ज्ञान या सगठन नही था। उसने विदेशी कपड़ोके बहिष्कारको एक परिचायक सकेत शब्दके रूपमे रख छोड़ा था और बम्बई तथा अहमदाबादकी असमर्थ मिलोपर भरोसा कर रखा था। आज आप उन सभी विपत्तियोंके प्रति सतर्क है जो पहलेवाले आन्दोलनपर आ पड़ी थी। आज आप यह भली-भाँति दिखा देनेकी स्थितिमें हैं कि यदि भारतकी सभी मिले जला दी जायें तो भी आप अपने कुटीर-स्थित कतैयों और बुनकरोंके बनाये कपडेसे सारे भारतको कपड़ा पहना सकते हैं।

हमें अत्यधिक आत्मविश्वास भी नहीं कर बैठना है। आप उन लोगोकी बात जानते है जिन्हें उन दिनों कपड़ेकी कमीके कारण फंदेसे लटककर प्राण त्यागने पड़े थे।

मेरे मित्र, आप बाबा आदमके जमानेकी बात कर रहे है। उस समय बुनकरोको बहकाकर यह विश्वास दिलाया दिया गया था कि वे मशीनके काते सूत या विदेशी सूतके सिवाय और किसी सूतसे बुनाई नही कर सकते। मै आज इस पूरे सगठनसे यह कह रहा हूँ कि इसके प्रत्येक अंगकी व्यवस्था विवेकी और समझदार लोग करे। कोई भी आन्दोलन तबतक व्यापक नही बनाया जा सकता जबतक उसका प्रचार विदेशी माध्यमका जरा भी सहारा लिये बिना किया जा सके। लेकिन मेरा आपसे यही कहना है कि चीजोका अध्ययन कीजिए। आन्दोलनके शुरूमे खद्दरके दामोपर और आजके दामोपर गौर कीजिए, खद्दरकी किस्म देखिए; जो सूत हम तैयार कर रहे है उसपर गौर कीजिए; सक्षेपमें चरखे और खद्दरके विकासका अध्ययन कीजिए और तब आपको जो भी कहना हो, कहिए।

क्या हम अपने मिल-उद्योगके विकासपर निर्भर नहीं रह सकते?

'यग इडिया' के पृष्ठोके जरिये मैंने अकसर उन लोगोकी भ्रान्तिपर प्रकाश डाला है जो मिलोके पक्षमे दलीले पेश किया करते है। उस मुद्देपर आज और कुछ कहना नही चाहता। मै मिलोका मोहताज नही बनना चाहता। मै चाहता हूँ कि मिले मेरी मोहताज रहे। सार रूपमे मुझे इतना ही कहना है।

हम अपनी राष्ट्रीय मिलें तो खड़ी कर सकते हैं।

ठीक है, जो व्यक्ति इस प्रस्तावका सुझाव रखे, उसे स्वय इस सुझावको कार्यान्वित करना चाहिए।

मैं नहीं जानता कि वे महाशय आश्वस्त होकर गये या नहीं, लेकिन उन्होंने गांधीजीको श्रमित कर देनेके लिए क्षमा माँगी। गांधीजीने उन्हें विश्वास दिलाया कि चरखेके बारेमें बात करते समय मैं थकनेवाला व्यक्ति नहीं हूँ।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-७-१९२५

५७. एक मुसलमान सज्जनसे बातचीत

[१५ मई, १९२५ के पश्चात्]

एक मुसलमान सज्जन शिकायतोंकी एक लम्बी सूची लेकर आये। पहली शिकायत हिन्दुओं द्वारा मुसलमानोंके प्रति बरती जानेवाली अस्पृश्यताकी थी। दूसरी-का सम्बन्ध गोहत्याके विषयमें मतभेदसे था। तीसरी थी, अपर्याप्त प्रतिनिधित्व; चौथीका सम्बन्ध इस्लामके खिलाफ छपी पुस्तकों और पर्चोसे था। पाँचवीं शिकायत मुसलमानों द्वारा किये गये अपहरणों तथा ऐसे ही दूसरे अपराधोंके अखबारोंमें प्रकाशित समाचारोंके खिलाफ थी। छठी शिकायत नौकरियोंसे वंचित किये जानेके सम्बन्धमें थी। सातवीं महाजनों द्वारा [सूदके] अधिक पैसे ऐंठनेके बारेमें थी। आठवीं शिकायत काली पूजाके अवसरपर जमींदारों द्वारा लगायें गये अबवाबके खिलाफ थी। गांधीजीने उन महाशयको बताया कि उनके द्वारा प्रस्तुत कुछ शिकायतें तो

स्थानीय ही है, कुछ शिकायतें व्यक्तियोंसे सम्बन्धित है, और कुछ ऐसी है जो हिन्दू और मुसलमान, दोनोंको एक-दूसरेसे है; सच्ची शिकायत तो पहली शिकायत ही है। उन महाशयने स्वीकार किया कि वही मुख्य शिकायत है अन्य शिकायतें तो उसमें से ही निकलती हैं। उन्होंने कहा कि गांधीजी, हिन्दू दुकानदार तो हमारे हाथ मिठाई भी नहीं बेचते।'

हाँ, मै समझा। यह एक वास्तविक शिकायत है; लेकिन हर बातको बढाचढा कर शिकायतका रूप नही देना चाहिए, जैसा कि आपने शुरूमे किया था। उससे तो ऐसा लगता है मानो पूरी मुसलमान जाति उसका शिकार है। मैं हिन्दुओंसे कहता हूँ कि यदि वे हिन्दूधर्मकी रक्षा अस्पृश्यता सम्बन्धी किसी वृहत् आचारसंहिताके अनुसार कर रहे है, तो बेहतर होगा कि हिन्दूधर्म समाप्त हो जाये। आप भारतको ज़जीरत-उल-अरबमे नही बदल सकते। अतीतमें हिन्दुओंने सभी राष्ट्रोके लोगोको अपनेमे मिलाया था। मुझे विश्वास है कि हमे अपने छुआछूत सम्बन्धी नियमोमें परिवर्तन करने होगे और उन अनावश्यक प्रतिबन्धोको, जो हिन्दूधर्मको बलशाली बनानेके बजाय उसका गला घोटते हैं; दूर करना होगा। हम अलग रहनेवाले कभी नही थे, हम सबसे मिलजुल कर रहनेवाले थे। हिन्दूधर्मकी खूबी है कि वह कभी इस्लाम या ईसाई धर्मकी तरह मिशनरी धर्म नही रहा, जो कि अनुयायियोकी सख्या गिननेमें ही रहते हैं। यह धर्म एक तरहसे सहज सहविकास करता हुआ अनजाने ही लोगोको अपनेमे मिलाता रहा है। मैं अपने हिन्दू मित्रोसे पूछता हूँ कि जब किसी यूरोपीय व्यापारीसे चाकलेट इत्यादि खरीदनेमे हमे कोई आपत्ति नही है तब हम अपने हलवाइयोंको मुसलमानोके हाथ मिठाइयाँ बेचनेसे क्यो रोकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-७-१९२५

५८. भाषण : स्त्रियोंकी सभा कोमिल्लामें[1]

१६ मई, १९२५

महात्माजीने अभिनन्दन-पत्रके जवाबमें कहा कि इस अभिनन्दन-पत्रको लेते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। उस समय मुझे और भी प्रसन्नता होगी, जब सभी बहनें सूत कातने लगेंगी और खद्दर पहनने लगेंगी। आप लोग सीताके आदर्शका अनुकरण करें। सीताजीका आदर्श नितान्त शुचिताका आदर्श था। उस जमानेमें चरखेसे काते हुए सूतके बने कपड़ेका प्रयोग होता था और उस युगमें देशमें गरीबी थी ही नहीं। विदेशी कपड़ा अशुद्ध है; वह आपके शुद्ध शरीरपर पहनने योग्य वस्त्र नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग विदेशी वस्त्र न पहननेकी शपथ लेंगी। आप लोगोंसे

१. सभामें भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें गांधीजीने हिन्दीमें भाषण दिया था। मूल भाषण उपलब्ध नहीं है।

मेरा सादर निवेदन है कि आप अस्पृश्यताका कलंक मिटा दें। जो लोग साथी मानवों-को धर्मके तथाकथित आदेशके कारण तिरस्कारकी दृष्टिसे देखते हैं, वे एक अपवित्र और धर्मविहीन कार्य करते हैं। रामचन्द्र निषाद — एक चाण्डाल — को हृदयसे लगाकर और भी शुद्ध हुए।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७-५-१९२५

५९. रामनामकी महिमा

एक भाई पूछते हैं :[1]

> आपने एक बार काठियावाड़में भाषण देते हुए कहा था, मैं जो तीन बहनोंके साथ पापमें लिप्त होनेसे बचा सो केवल रामनामके बलपर ही। इस बारेमें 'सौराष्ट्र' पत्रने कुछ ऐसी बातें लिखी हैं जो समझमें नहीं आतीं। इसका अधिक खुलासा करेंगे तो कृपा होगी।

इस पत्रके लेखकसे मेरा परिचय नही है। जब मैं बम्बईसे रवाना हुआ था तब उन्होंने यह पत्र अपने भाईके हाथ मेरे पास भेजा था। उससे उनकी तीव्र जिज्ञासा व्यक्त होती है। ऐसे प्रश्नोंकी चर्चा आमतौरपर सार्वजनिक रूपसे नही की जा सकती। यदि सर्वसाधारणजन मनुष्यके खानगी जीवनमें गहरे पैठनेका रिवाज डाले तो यह स्पष्ट है कि उसका परिणाम बुरा हुए बिना न रहेगा।

परन्तु मैं इस उचित अथवा अनुचित जिज्ञासासे नही बच सकता। मुझे इससे बचनेका अधिकार नही है और ऐसी मेरी इच्छा भी नही है। मेरा निजी जीवन सार्वजनिक हो गया है। दुनियामें मेरे लिए एक भी ऐसी बात नही है जिसे मैं निजी बनाकर रखूं। मेरे प्रयोग आध्यात्मिक हैं। उनमें से कुछ नये हैं। इन प्रयोगोंका आधार बहुत कुछ आत्म-निरीक्षण है। मैंने 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्ड' की उक्तिके अनुसार प्रयोग किये हैं। इनके पीछे मेरी यह मान्यता है कि जो बात मेरे विषयमें सम्भव है वह दूसरोंके विषयमें भी सम्भव होगी। इसलिए मुझे कुछ गुह्य प्रश्नोंके उत्तर देनेकी भी जरूरत पड़ जाती है।

फिर मुझे पूर्वोक्त प्रश्नका उत्तर देते हुए रामनामकी महिमा बतानेका अवसर भी अनायास ही मिलता है। उसे मैं हाथसे कैसे जाने दे सकता हूँ?

किन्तु इस प्रश्नकर्त्तासे और जो अन्य लोग बादमें प्रश्न करें उनसे भी मुझे यह कह देना जरूरी है कि यदि वे किसी अखबारके आधारपर कोई प्रश्न पूछें तो वे उस अखबारको मेरे पास अवश्य भेजें। मैं कई बार कह चुका हूँ कि मैं अखबार नही पढता, क्योंकि मेरे लिए वह सम्भव नही है। 'सौराष्ट्र' में क्या लिखा है यह

१. अंशतः उद्धृत।

मैं नहीं जानता। मेरे भाषणोंकी रिपोर्ट लेना मुश्किल होता है। महादेव भाई रिपोर्ट लेते हैं, किन्तु मैं उसे भी सदा सही नहीं मानता, क्योंकि जहाँ सूक्ष्म अथवा नये विचार व्यक्त किये जाते हैं, वहाँ एक शब्दकी भी भूल होनेसे अनर्थ हो सकता है। अतः जहाँ मेरे विचारोंसे अपरिचित संवाददाता मेरे भाषणोंकी रिपोर्ट लेते हैं वहाँ उनकी रिपोर्ट कभी विश्वसनीय नहीं हो सकती। मैंने कई बार कहा है कि पाठक उनको पूरे तौरपर सही मानकर न चलें। जब उन्हें किसी बातपर सन्देह हो तो वे मुझे पत्र लिखकर पूछ लें और साथमें जिस पत्रमें मेरा वह भाषण पड़ा हो मुझे उसका वह अंक भी भेजें।

इस प्रस्तावनाके पश्चात्, 'सौराष्ट्र' ने क्या लिखा है यह न जानते हुए भी मैं यह बताता हूँ कि मैं किस तरह इन तीनों प्रसंगोंमें ईश्वरकृपासे बच सका। ये तीनों प्रसंग बार-बधुओंसे सम्बन्ध रखते हैं। मुझे इनमें से दो के पास भिन्न-भिन्न अवसरों-पर मेरे मित्र ले गये थे।

पहले अवसरपर[1] मैं मित्रका झूठा लिहाज करके वहाँ पहुँच गया और यदि ईश्वरने न बचाया होता तो जरूर पतित हो जाता। इस मौकेपर मैं जिस वेश्याके कोठेपर ले जाया गया था, उस वेश्याने ही मुझे तिरस्कृत किया, क्योंकि मैं यह बिलकुल नहीं जानता था कि ऐसे अवसरपर किस तरह, क्या बोलना चाहिए और कैसा व्यवहार करना चाहिए। मैं इससे पहले ऐसी स्त्रियोंके पास बैठनातक लज्जा-जनक मानता था; इसलिए मैं इस घरमें दाखिल होते समय भी काँप रहा था। भीतर पहुँचनेपर उसके मुँहकी ओर भी न देख सका, अतः मुझे पता नहीं कि उसकी मुखाकृति कैसी थी। ऐसे मूढ़को वह चपला निकाल बाहर न करती तो और क्या करती? अतः उसने तो मुझे दो-चार खरी-खोटी सुनाकर चलता किया। मैं उस समय तो यह न समझ सका कि मुझे ईश्वरने बचाया है। मैं खिन्न होकर वहाँसे चला आया। मैं शर्मिन्दा हुआ और अपनी मूढ़तापर दुःखी भी हुआ। मुझे ऐसा लगा मानो मुझमें पौरुष ही नहीं है। मैं पीछे यह समझ सका कि मेरी मूढ़ता ही मेरी ढाल थी। ईश्वरने मुझे मूढ़ बनाकर उबार लिया, नहीं तो मैं बुरा काम करने-के विचारसे इस पापके आवासमें जाकर पतित होनेसे कैसे बच सकता था?

दूसरा प्रसंग इससे भी भयंकर था। इस बार मेरा मन जैसा विकाररहित पहले अवसरपर था वैसा विकाररहित न था, हालाँकि मैं जागरूक अधिक था। फिर मेरी पूज्य माताजीके सामने की हुई प्रतिज्ञाकी ढाल भी मेरे पास थी। परन्तु मैं इस अवसर-पर इंग्लैंडमें था। तब मैं पूर्ण युवक था। हम दो मित्र एक ही घरमें रहते थे और कुछ दिनोंके लिए ही उस शहरमें गये थे।[2] मकान-मालकिन वेश्या-जैसी ही थी। हम दोनों उसके साथ ताश खेलने बैठे। मैं उन दिनों विशेष प्रसंग आनेपर ताश खेल लेता था। इंग्लैंडमें माँ-बेटा भी निर्दोष-भावसे ताश खेल सकते हैं और खेलते हैं। उस समय भी हम इसी तरह ताश खेलने बैठे थे। आरम्भ तो बिलकुल निर्दोष

१. देखिए आत्मकथा, भाग १, अध्याय ७।
२. देखिए आत्मकथा, भाग १, अध्याय २१।

था। मुझे यह पता नही था कि मकान-मालकिन वेश्यावृत्तिसे आजीविका कमाती है। पर ज्यो-ज्यो खेल जमने लगा त्यो-त्यो रग भी बदलने लगा। उस स्त्रीने कटाक्ष आदि शुरू किये। मै अपने मित्रको ध्यानसे देख रहा था। उन्होंने मर्यादा छोड दी थी। मैं ललचा गया। मेरे चेहरेका रंग बदल गया। और उसपर काम-विकार उभर आया। मैं अधीर हो उठा था।

पर जिसे राम बचाता है, उसे कौन मार सकता है? उस समय मेरे मुखमें तो राम न था, पर मेरे हृदयमे अवश्य था। मेरे मुखमे तो वासनाको भड़कानेवाली भाषा थी। मेरे इस भले मित्रने मेरा रग-ढग देखा। हम एक-दूसरेसे अच्छी तरह परिचित थे। उन्हे ऐसे कठिन प्रसगोकी स्मृति थी जब मैं अपने सकल्पबलसे अपवित्र होनेसे बच सका था। परन्तु इस मित्रने देखा कि इस समय मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। उन्होने यह समझ लिया कि यदि यही हालत रही और अधिक रात बीती तो मै भी पतित हुए बिना न रहूँगा।

विषयी मनुष्योमे भी सद्वृत्तियाँ होती है। इस बातकी अनुभूति मुझे इस मित्रके द्वारा पहले-पहल हुई। मेरी दीन दशा देखकर उन्हे दु:ख हुआ। मै उनसे उम्रमे छोटा था। उनके माध्यमसे रामने मेरी सहायता की। उन्होने प्रेमबाण छोडे, "मोनिया, (मोहनदासका दुलारमे बनाया हुआ रूप। मेरे माता, पिता तथा हमारे कुटुम्बके सबसे बड़े चचेरे भाई, मुझे इसी नामसे पुकारते थे। इस नामसे पुकारनेवाले चौथे ये मित्र थे जो मेरे धर्म-भाई साबित हुए।) सावधान! मै तो गिर चुका हूँ, यह बात तू जानता है। परन्तु मैं तुझे नही गिरने दूँगा। तू अपनी माँसे की हुई प्रतिज्ञा याद कर। यह काम तेरा नही है। तू भाग यहाँसे। जा, सो जा। नही जाता? रख पत्ते!"

मैंने कुछ जवाब दिया या नहीं, यह मुझे याद नही पडता। मैंने ताश रख दिये। एक क्षणके लिए दु:खी हुआ। मुझे लज्जा आई और मेरी छाती धड़कने लगी; फिर मै उठ खड़ा हुआ और अपने बिस्तरपर जा लेटा।

मुझे नीद नही आई और मैं रामनाम जपने लगा। मनमें कहने लगा, 'कैसा बचा, मुझे किसने बचाया? प्रतिज्ञाको धन्यवाद। माँको धन्यवाद। मित्रको धन्यवाद। रामको धन्यवाद।' मेरे लिए तो यह चमत्कार ही था। यदि मेरे मित्रने मुझपर रामबाण न छोड़ा होता तो मै आज कहाँ होता?

राम-बाण वाग्यां रे होय ते जाणे
प्रेम-बाण वाग्यां रे होय ते जाणे?[1]

मेरे लिए तो यह अवसर ईश्वरके साक्षात्कारका था।

अब यदि मुझे सारा संसार कहे कि 'ईश्वर नही है, राम नही है तो मैं उसे झूठा कहूँगा। यदि उस भयंकर रातको मेरा पतन हो गया होता तो आज मैं सत्याग्रहकी लडाइयाँ न लड़ता होता, अस्पृश्यताके मैलको न धोता होता, चरखेकी पवित्र

१. जिसे रामबाण लगा है, जिसके प्रेमबाण लगा है, वही जान सकता है कि वह क्या चीज है।

ध्वनि न गुंजारता होता, आज अपनेको करोड़ो स्त्रियोके दर्शन करके पावन होनेका अधिकारी न मानता होता और मेरे आसपास लाखो स्त्रियाँ आज उस प्रकार निःशक न बैठती होती, मानो वे एक बालकके आसपास बैठी हो। मैं उनसे दूर भागता होता और वे भी मुझसे दूर भागती होती और यह उचित भी था। मैं अपनी जिंदगीका सबसे अधिक भयकर समय इस प्रसगको मानता हूँ। मैंने असयमकी ओर जाते हुए सयम सीखा। मुझे रामसे विमुख जाते हुए रामके दर्शन हुए। कैसा चमत्कार है यह!

रघुवर तुमको मेरी लाज!
हौं तो पतित पुरातन कहिए
पार उतारो जहाज!

तीसरा प्रसग हास्यजनक है[1]। एक यात्रामे एक जहाजके कप्तानके साथ मेरा अच्छा मेल-जोल हो गया और एक अग्रेज यात्रीके साथ भी। जहाँ-जहाँ जहाज लगर डालता रहा वहाँ-वहाँ कप्तान और कुछ यात्री वेश्यालय खोजते। कप्तानने मुझे अपने साथ बन्दरगाह देखनेके लिए चलनेका न्योता दिया। मैं उसका अर्थ नही समझता था। हम एक वेश्याके घरके सामने जाकर खडे हो गये। तब मैंने समझा कि बन्दरगाह देखनेके लिए जानेका अर्थ क्या है। हमारे सामने तीन स्त्रियाँ खडी कर दी गई। मैं तो स्तब्ध ही रह गया। शर्मके मारे न कुछ बोल सका और न वहाँसे भाग सका। मुझे स्त्री-सगकी इच्छा तो जरा भी न थी। वे दो तो कमरोमे दाखिल हो गये। तीसरी स्त्री मुझे अपने कमरेमे ले गई। मै विचार कर ही रहा था कि क्या करूँ; इतनेमे वे दोनो बाहर आ गये। मैं नही कह सकता उस स्त्रीने मेरे सम्बन्धमें क्या ख्याल किया होगा। वह मेरे सामने मुसकरा रही थी। मेरे मनपर उसका कुछ असर न हुआ। हम दोनोकी भाषाएँ भिन्न थी। सो उससे बातचीत करनेकी तो गुजाइश थी ही नही। जब उन मित्रोने मुझे पुकारा तो मैं बाहर निकल आया। मै कुछ शरमाया तो जरूर। उन्होने अब मुझे इस सम्बन्धमे मूर्ख मान लिया। उन्होंने आपसमे मेरी खिल्ली भी उडाई। उन्हे मुझपर तरस तो आया ही। मै उसी दिनसे कप्तानकी निगाहमे दुनियाके मूर्खोमे गिना जाने लगा। उसने मुझे फिर कभी बन्दरगाह देखनेके लिए चलनेका न्योता नही दिया। यदि मैं अधिक समय वहाँ रहता अथवा उस स्त्रीकी भाषा जानता होता तो मै नही कह सकता, मेरी क्या हालत होती। पर मैंने इतना तो समझ लिया कि मैं उस दिन भी अपने पुरुषार्थके बलसे नही बचा था, बल्कि ईश्वरने ही मुझे इस सम्बन्धमे मूढ रखकर बचाया था।

उस भाषणके समय मेरे मनमें ये तीन ही प्रसग थे। पाठक यह न समझे कि मेरे सम्मुख ऐसे और प्रसंग नही आये थे, किन्तु मैं यह जरूर कहना चाहता हूँ कि मैं हर अवसरपर रामनामके बलपर बचा हूँ। ईश्वर खाली हाथ जानेवाले निर्बलको ही बल देता है।

१. देखिए आत्मकथा, भाग २, अ० ६।

जब लग गज बल अपनो बरत्यौ
नेक सर्‌यो नहिं काम।
निर्बल ह्वै बल राम पुकार्‌यो
आये आधे नाम।

तब यह रामनाम है क्या चीज? क्या तोतेकी तरह रामनाम रटना? हरगिज नही। यदि ऐसा हो तो हम सब रामनाम रटकर पार हो जा सकते है। रामनामका उच्चारण तो हृदयसे ही किया जाना चाहिए। फिर उसका उच्चारण शुद्ध न हो तो हर्ज नही। हृदयकी तोतली बोली ईश्वरके दरबारमे कबूल होती है। हृदय भले ही 'मरा मरा' पुकारता रहे—फिर भी हृदयसे निकली पुकार जमा खातेमे लिखी जायेगी। परन्तु यदि मुख रामनामका शुद्ध उच्चारण करता रहे और हृदयका स्वामी रावण हो तो वह शुद्ध उच्चारण भी नामेकी ओर लिखा जायेगा।

तुलसीदासने 'मुखमे राम बगलमे छुरी' की उक्ति चरितार्थ करनेवाले बगला भगतके लिए रामनाम-महिमा नही गाई। उसके सीधे पासे भी उलटे पड़ेगे। किन्तु जिसने रामको हृदयमे स्थान दिया है उसके उलटे पासे भी सीधे पडेगे। 'बिगरी'का सुधारनेवाला राम ही है और इसीसे भक्त सूरदासने कहा है—

बिगरी कौन सुधारे?
राम बिन बिगरी कौन सुधारे रे।
बनी-बनीके सब कोई साथी,
बिगरीके नहिं कोई रे।

इसलिए पाठक खूब समझ ले कि रामनामके जपका सम्बन्ध हृदयसे है। जहाँ वाणी और मनमे एकता नही वहाँ वाणी केवल मिथ्या चीज है, दम्भ है, शब्दजाल है। ऐसे जपसे चाहे ससार भले धोखा खा जाये, पर वह अन्तर्यामी राम कही धोखा खा सकता है? हनुमानने सीताकी दी हुई मणिमालाके मनके फोड डाले—क्योकि वे देखना चाहते थे कि उनके भीतर रामनाम अकित है या नही? अपनेको समझदार समझनेवाले सुभटोने उनसे पूछा, 'सीताजीकी मणिमालाका ऐसा अनादर क्यो?' हनुमानने उत्तर दिया, 'यदि उसके मनकोमे रामनाम अकित न हो तो वह सीताजीकी दी हुई होनेपर भी मेरे लिए भार-रूप ही होगी।' तब उन समझदार सुभटोने मुँह बनाकर पूछा, 'क्या तुम्हारे भीतर रामनाम अकित है।' हनुमानने तुरन्त छुरीसे अपना हृदय चीरकर दिखाया और कहा, 'देखो, इसमे रामनामके सिवा और कुछ हो तो मुझे बताओ।' सुभट लज्जित हुए। हनुमानपर पुष्पवृष्टि हुई और उस दिनसे रामकथाके समय हनुमानका आवाहन आरम्भ हुआ।

हो सकता है यह कथा हो या नाटककारकी मनगढन्त रचना हो, पर उसका सार नित्य सत्य है। जो हृदयमे है वही सच है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-५-१९२५

६०. सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी

सर सुरेन्द्रनाथ वनर्जीका नाम कौन नही जानता? एक समय था जव वे वगाल-के सिंह माने जाते थे। उन दिनो वे कांग्रेसके महान् नेताओमे से एक थे। नववगाल उनकी पूजा करता था। उनका सिंहनाद सुननेके लिए हजारो युवक उत्कण्ठित रहते थे। जव सुरेन्द्रनाथ बोलनेके लिए खड़े होते थे तव लोग उनके भाषण सुनते-सुनते थकते ही नही थे। सन् १८९५मे जव पूनामे कांग्रेसका अधिवेशन हुआ था, तव सर सुरेन्द्रनाथ उसके अध्यक्ष थे। उनका पूरा भाषण अठवरक आकारके अस्सी पृष्ठोकी पुस्तिकामे आया था। उन्होने यह भाषण लिखकर तैयार किया था, किन्तु पूरा भाषण मौखिक ही दिया था और फिर भी छपे भाषण और मौखिक भाषणमें एक शब्दका भी अन्तर नही था। केवल कुछ आँकडे पढनेके लिए उन्होने अपना कागज उठाया था। भाषण देनेमे उन्हे तीन घटे लगे थे। कहा जाता है कि लोगोने तीन घंटेका यह भाषण ध्यानपूर्वक सुना था।

अव जमाना वदल गया है। आज तो लोग अच्छेसे-अच्छे वक्ताको एक घटा भी देनेके लिए तैयार नही हैं। शानदार भाषणोका मोह अब वहुत-कुछ चला गया लगता है।

किन्तु केवल उनकी चमत्कारी स्मरणशक्ति अथवा ऊँची वक्तृत्व कला ही सर सुरेन्द्रनाथके गुण न थे। उन्होने सरकारसे जमकर लोहा भी लिया और वे जेल भी गये। वे उच्च कोटिके शिक्षक भी रह चुके हैं। उनकी सेवाएँ वहुमूल्य थी। आज हम उनका उतना मूल्य नही मानते, इसमें दोष हमारा ही है। उन्होने अपने समयमे जो काम किया, उसे कोई दूसरा शायद ही कर सकता था। समय वदल जानेके कारण पिछले जमानेके लोगोके गुणोको भूल जाना कृतघ्नता है। उन लोगोकी सेवाका माप उस समयके मापदण्डसे ही करना चाहिए। यदि हम उनके लिए आजका माप-दण्ड काममे लेते हैं तो हम उनके और अपने, दोनोके साथ अन्याय करते हैं। अपने साथ अन्याय इसलिए कि यदि हम अपनी अतीतकी पूँजीको भुला देंगे तो उस हद तक हमे हानि सहनी पड़ेगी। सर सुरेन्द्रनाथके और मेरे विचारोमे वहुत कम साम्य है, फिर भी मेरे मनमें उनके प्रति जितना आदरभाव पहले था उतना ही आज भी है। उन्होने देशकी जो सेवा की है, मैं तो उसे कदापि नही भूल सकता। इसलिए मैंने जव उनकी वीमारीकी खवर सुनी तो मैं उनके वगलेपर उनके दर्शनार्थ गया।[1] मैंने उनका वंगला पहले कभी नही देखा था। वे कलकत्तेके एक शान्त उपनगर वैरक-पुरमे रहते हैं। उनका वगला एक वड़ी जमीनमे सुन्दर उद्यानके वीचमे है। उसके सामने गगा वहती है। एकान्तमे होनेसे वगलेमे वहुत शान्ति है।

मेरा खयाल था कि वे मुझे चारपाईपर पड़े मिलेंगे, किन्तु वे तो पुस्तकोसे लदी एक मेजके पास कुर्सीपर वैठे हुए थे। वे मुझे देखकर खडे हो गये और वहुत

१. ६ मई, १९२५को।

प्रेमसे छातीसे लगा कर मिले। वे क्षीणकाय तो हो गये थे, किन्तु फिर भी सीधे खड़े थे। उनकी आवाजमे कोई कमजोरी नही थी। उनकी उम्र ७७ साल है, फिर भी वे हर बातकी चर्चा १७ वर्षीय नवयुवककी तरह दिलचस्पीसे करते थे। मैंने जब उनकी स्मरणशक्तिकी प्रशसाकी तो उन्होने कहा, 'मेरी स्मरणशक्ति तो आज भी ज्योकी-त्यो है। मै जब पाँच वर्षका था तबकी बाते भी मुझे इतनी अच्छी तरह याद है कि मै उनका वर्णन हू-बहू कर सकता हूँ।' उन्होने अपने सस्मरणोकी पुस्तक अभी हालमें ही प्रकाशित की है। उसे लिखनेमे उनको नौ वर्ष लगे थे। उन्होने जिन कापियोमे ये सस्मरण लिखे थे वे मुझे दिखाईं। वे फुलस्केप आकारकी पाँच या सात कापियाँ थी। उनकी लिखावट इतनी साफ और एकसार है कि उसको देखकर मुझे गर्वका अनुभव हुआ। लिखते समय उनका हाथ कही भी काँपता दिखाई नही दिया।

मैंने पूछा, 'इस समय आप क्या-क्या पढ रहे है?' उन्होने हँसकर कहा, 'बताऊँ? मै तो अपने सस्मरणोको ही दूसरी आवृत्तिके लिए पढ रहा हूँ। मुझे उनमे कुछ सशोधन-परिवर्धन करना है। पुस्तक-विक्रेताओने सूचित किया है कि एक वर्षके भीतर सब प्रतियाँ बिक जायेगी, इसलिए मै [दूसरी आवृत्तिके लिए] तैयार हो जाना चाहता हूँ।'

वे अपनी आसपासकी तमाम बातोमे उत्साहसे दिलचस्पी लेते है। उन्होने मुझसे यह वादा करा लिया है कि बगाल छोड़नेसे पहले मै उनसे एक बार फिर मिलूँ। उन्होने कहा, 'यदि आपको बैरकपुर आनेका समय न मिले तो मै खुद आपसे मिलने जरूर आऊँगा।' मैंने जवाब दिया, 'नही, मै आपको तकलीफ नही देना चाहता, मै लौटती बार आपसे मिलनेका वक्त जरूर निकालूँगा।"[1]

जब उनकी शारीरिक शक्तिकी बात आई तो उन्होने कहा, 'मै ९१ वर्षकी आयुतक जीऊँगा। मुझमे अभी भी इतना उत्साह है कि इतने वर्ष कोई अधिक नही लगते।'

भारतभूषण मालवीयजीने अपनी आयु सौ वर्ष नियत की है। इसलिए मैंने पूछा, 'आप मालवीयजीकी तरह अपनी आयु सौ वर्ष क्यो नही कूतते?' उन्होने उत्तर दिया, 'मुझे नही लगता कि मै इतनी आयुतक काम करने योग्य रहूँगा। और अशक्त हो जानेके बाद मै जीना नही चाहता।'

उनका विश्वास है कि उनकी दीर्घायुका रहस्य उनका अखण्ड नियमपालन और विधिवत् काम करनेका अभ्यास है। मै सुन चुका था और उन्होने भी इस बातका समर्थन किया कि उन्होने अपने इतने कार्यव्यस्त जीवनमे भी रातकी निश्चित गाड़ीसे नित्य बैरकपुर वापस आनेमे कभी नागा नही किया। उन्होने कहा, लोकसेवा करते हुए मैंने काममे सलग्न रहनेकी जितनी आवश्यकता समझी थी उतनी ही आवश्यकता नियमित रूपसे आराम करनेकी भी। इसलिए मै रातको आराम न करना सेवाच्युत होनेका पाप मानता हूँ।

१. यह अनुच्छेद यंग इंडियासे उद्धृत है।

महलसे झोंपड़ीमें

मैं जहाँ भी जाता हूँ वहाँ गरीव तो मेरे साथ होते ही है। मै जहाँ भी जाऊँ वे मुझे ढूँढ निकालते हैं। मेरे बैरकपुर जानेकी खवर उनको किसीने नही दी थी। वहाँ आसपास मजदूरवर्गके लोगोकी वस्ती है, यह मुझे मालूम न था। किन्तु मुझे सर सुरेन्द्रनाथके बगलेपर पहुँचे थोडी ही देर हुई होगी कि उनके वगीचेमें आस-पाससे सौ-दो सौ गरीव लोग दौड़ कर आ गये। पता नही, क्षण-भरमे ही उनको मेरे आनेकी खवर कैसे लग गई। सामान्यत. तो ये लोग किसी वड़े आदमीके वगलेमें इस प्रकार घुस आनेमे डरते है, सकोच करते हैं। किन्तु जहाँ मैं जाता हूँ वहाँ उनको भी घुस आनेका अधिकार है, यह मानकर वे निडर होकर भीतर चले आते है और उनको कोई रोकता भी नही है। इन गरीवोमे एक दो विहारी भी थे। वे मजदूरोके मुहल्लेमे पढानेका काम करते थे। बैरकपुर कुछ ऊँचाईपर स्थित है। वहाँ पानीका तालाव है। उसमें गगाका पानी भर दिया जाता है और साफ भी किया जाता है। इस काममे वहाँ सैकडो मजदूर लगे हुए है। ये मजदूर विहार और सयुक्त प्रान्तके जिलोके हैं। एक विहारी अध्यापकने मुझे अपने घर चलनेके लिए निमन्त्रित किया और कहा कि वहाँ चल कर मैं उनका कताईका काम और खादी भण्डार देखूँ। वे लोग ६ चरखोपर काम करते है और विहारसे खादी मँगाकर मजदूरोको वेचते है। इस निमन्त्रणका तिरस्कार अथवा इनकार भला कैसे किया जा सकता था? हम वहाँ गये। मजदूर लोग हमारे इर्दगिर्द इकट्ठे हो गये। उस छोटेसे घरमे चरखे तो अवश्य थे। दूसरी ओर एक वेंचपर तीन या चार सौ रुपयेकी खादी सुन्दर ढगसे सजी हुई रखी थी।

उसने कहा: 'इन चरखोको मैं, मेरा भाई और कुछ मित्र चलाते है। हम पूनियाँ कलकत्तेसे ले आते हैं। हम इस खादीको कोई नफा लिये विना मजदूरोमें वेचते है। हम चार या पाँच लोग तो केवल खादी ही पहनते है। इसके खर्चके लिए पैसा चाहिए इसलिए मजदूर लोग मुझे अपनी कमाईमे से रुपये पीछे एक पैसा देते है। मै उसमे से अपने लिए कुछ नही रखता। किन्तु खादीपर जो अधिक खर्च होता है, वह उसीसे निकलता है।' मैंने पूछा, 'आप वगालमे वनी खादीका व्यवहार क्यो नही करते?' उन्होने उत्तर दिया, 'हमे विहारकी खादी वेचनी चाहिए, हम यहाँ बैठे जितनी सहायता कर सकते है, उतनी करते है।' इस प्रकार ये युवक गरीव मजदूरोमें सालमे लगभग २,५०० रुपयेकी खादी वेचते है। इस प्रकार चुपचाप प्रसिद्धिकी आशा या इच्छा किये विना न मालूम कितने गरीव और नि.स्वार्थी युवक खादीका प्रचार कर रहे होगे। इसकी गिनती कौन कर सकता है? सर सुरेन्द्रनाथ भी खादी या चरखेकी प्रवृत्तिसे सहमत हुए विना नही रह सके। इस गरीव युवकने मुझे अपनी कुटियासे विदा करनेके पूर्व अपना वहीखाता दिखाया जिसमें इस खादीके क्रय-विक्रयका पूरा हिसाव सुन्दर अक्षरोमे लिखा हुआ था।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-५-१९२५

६१. टिप्पणियाँ

सादगी बनाम अव्यवस्था

सार्वजनिक कार्यमे आनेवाली कठिनाइयोकी चर्चा करते हुए एक नवयुवक लिखता है [1]

यह कहना कठिन है कि शिक्षित वर्गके लोग इन कठिनाइयोके कारण सार्वजनिक काम हाथमे लेनेसे किस हदतक रुकते है। मेरी मान्यता तो यह है कि इन कठिनाइयोसे कोई भी सच्चा सेवक सेवा करनेसे विरत नही होता। चाय पीनेवाले चाय पीते है और सेवाधर्मका पालन करते है। वहुतसे कार्यकर्त्ता दूसरे दर्जेमें रेलयात्रा करते है; किन्तु वे फिर भी देशसेवा कर रहे है। चाय पीना या दूसरे दर्जेमे रेलयात्रा करना मूलत. पाप नही। जो चायके विना काम चला सके वह चलाये और दूसरे दर्जेमे रेलयात्राके विना भी काम चला सके तो चला ले। किन्तु जिसका शरीर तीसरे दर्जेमे रेलयात्रा करने लायक न हो वह खुशीसे दूसरे दर्जेमे रेलयात्रा करके सेवाकार्य कर सकता है। यह वात ऐसी है जो स्पष्ट रूपसे समझमे आ सकती है। जो सादगीके नामपर अव्यवस्था और अनियमितता करते है, वे तो पाप ही करते है। सादगी अव्यवस्थाकी विरोधी वस्तु है, क्योकि सादगी गुण है और अव्यवस्था अवगुण। आडम्बरमे भी अव्यवस्था दिखाई देती है। अव्यवस्थित मनुष्य सादा नही माना जा सकता। सादगी सीखनेसे आ सकती है। जिसे मेज-कुर्सी न मिल सके और वह उनके विना काम चलाये तो वह सादा नही होता। उसे तो ज्यादाकी जरूरत होनेपर भी कमसे-कममे काम चलाना पडता है, इसलिए वह दु खी होता है। सादा मनुष्य ज्यादा मिलनेपर भी कममे काम चलाकर सन्तुष्ट रहता है और ज्यादाका उपयोग करनेमे दु ख मानता है।

जो वात अव्यवस्था और अनियमितताके वारेमें ठीक है, वही अस्वच्छताके बारेमें भी ठीक है। सादा मनुष्य कभी अस्वच्छ रह ही नही सकता। फिर भी हम जानते है कि वहुतसे सादा दिखनेवाले मनुष्य वहुत अस्वच्छ रहते है और सादगीको वदनाम करते है। जो लोग खादी पहनते है, उनका धर्म है कि वे खादीके कपड़ेको सदा दूध-जैसा सफेद रखे। वे उसे नित्य धोये और यदि वह फट जाये तो उसमें पैवन्द लगा ले। पैवन्द लगा लेना शर्मकी वात नही है, किन्तु फटा कपडा पहनना आलसी होनेका लक्षण है; अत शर्मकी वात है। सादगीमे सफाई तो होनी ही चाहिए। परिग्रही रहकर स्वच्छता वरतनेकी कोशिश करे तो और भी परिग्रह करना पड़ता

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें लेखकने लिखा था कि आप सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको खान-पान और रहन-सहनमें सादगी रखनेका उपदेश देते हैं; इसका अर्थ वहुतोंने अनियमितता और अव्यवस्था मान रखा है।

है। इसीलिए तो मनुष्य सादगी अपनाता है। इसलिए सादगी अपनानेवालोंको चाहिए कि वे अव्यवस्था और अस्वच्छताको त्याग दे।

ऐसे गुणोंका विकास करनेके लिए थोड़ा-बहुत अवकाश तो अवश्य चाहिए। दुकान-कर्मचारियोंको प्रात कालसे रात गयेतक दुकानोमे बैठना ही पड़ता है। वे इसीलिए अस्वच्छता-जैसे दोषोको त्यागनेका विचारतक नही कर सकते। उन्हे रूढ़िके कारण जितनी स्वच्छता रखनी पड़ती है वे उतनी स्वच्छता रखकर काम चला लेते है। वे सादगीके निमित्त सादगी नही रखते। वे मजबूरीके कारण साधु-जैसे लगते है। यदि वे धन कमा सके तो शक्तिभर पूरा परिग्रह करे। फिर भी ऐसे लोगोके लिए कामके घंटे कम करनेकी बेशक जरूरत है। वे अपने बचे हुए समयका दुरुपयोग करे, यह बिल्कुल सम्भव है; किन्तु यह जोखिम उठानेके ही योग्य है, इसमें कोई सन्देह नही। इसका उपाय स्वय ये मुनीम आदि कर्मचारी ही कर सकते हैं। यदि उनमे आत्मसुधार करनेका उत्साह हो तो वे उसका मार्ग भी खोज निकाल सकते है। यदि मालिकोंके मनमे दया हो या वे अपना स्वार्थ समझते हों तो वे भी उपयुक्त सुधार कर सकते हैं।

कातनेवालोंसे

मै कई बार लिख चुका हूँ कि सूत कातनेका मतलब ज्यो-त्यो करके तार निकालना नही है। आटेको किसी तरह गुमडगुमडा कर जैसे-तैसे बेल-बाल कर चाहे जैसी आगपर कच्चा-पक्का सेक ले तो रोटी पकाना नही हो जाता और यदि उसे रोटी मानकर खाया जाये तो बदहजमी हो जाती है। इसी तरह चाहे जैसी रुई लेकर भली-बुरी धुनकर उसका मोटा-झोटा तार निकाल लें तो वह सूत नही होता। सूत तो वही होता है जो आसानीसे बुना जा सके। हमे इस बारेमे मिलके सूतको अपने लिए आदर्श मानना चाहिए। हम जबतक वैसा सूत नही कातने लगते तबतक यही माना जायेगा कि हममे खामी है। यह अनुभवसिद्ध है कि हम उतना अच्छा ही नही बल्कि उससे भी अच्छा सूत कात सकते है। मिलके अच्छे सूतसे हाथकता अच्छा सूत हमेशा ज्यादा अच्छा होता है। उसके बने कपड़ेमे जो मुलायमी होती है वह मिलके कपड़ेमे कभी नही आती। परन्तु जबतक हम उस स्तरपर नही पहुँच जाते तबतक खादीके खिलाफ शिकायते आती रहेगी और हर बुननेवालेको खादी बुननेके लिए तैयार करनेमे दिक्कत होगी। हालमे अ० भा० खादी बोर्डके पास एक खादी कार्यकर्ताका पत्र आया है। मुझे ये विचार उसके कारण लिखने पडे है। कताई-सदस्यतासे पहले कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्यको अपना सूत अ० भा० खादी बोर्डको भेजना पड़ता था। उस सूतकी खादी बुनवानेमें जो-जो अनुभव हुए हैं वे बड़े कीमती माने जा सकते है। पूर्वोक्त रिपोर्ट इस अनुभवका ही एक परिणाम है। उसमे वे कार्यकर्त्ता लिखते हैं कि सूत इतना कच्चा-कमजोर था कि बुननेवाला उसे बुन नही सकता। फिर सूत ठीक तरह अटेरा नही गया है और अटेरनका माप हरएकने अपनी-अपनी मर्जीके मुताबिक रखा है। इससे बुनकरोंको कड़े भरनेमे बहुत समय लगाना पड़ता है। ये दोनो कठिनाइयाँ दूर की जानी चाहिए। कार्यसमितिके

सदस्य तो इस बारेमे सहज ही सावधानी रख सकते थे। परन्तु लगता है कि उन्होने इसकी चिन्ता ही नही की। फलत या तो ऐसे सूतकी बुनाई बन्द करनी पडेगी या उसे किसी मामूली काममें लेना पडेगा।

अब कर्त्तव्य क्या है?

अब तो कताई सदस्यतामे शामिल हो गई है। इससे कातनेवालोकी सख्या तो बढनी चाहिए। इसलिए पूर्वोक्त बात हर कातनेवालेको समझ लेनी चाहिए। हरएक कातनेवाला इन दो बातोको याद रखे:

१. सूत बटदार और एक-सा काता जाये।

२. सूत चार-फुटे अटेरनपर अटेरा जाये और उसमे हर १०० गजपर बन्द लगाया जाये।

ये दो बाते न हो तो वह सूत, सूत माने जाने लायक नही है। अधिक सावधान कातनेवाले रुई देखकर उसकी किस्मको पहचान ले, उसे भली-भाँति धुने या धुनवाएँ और उससे जितने अकका सूत निकल सके उतने अकका सूत काते तथा हर वक्त सूतपर अटेरनेसे पहले पानीके छीटे दे। इतना करनेपर कहना चाहिए कि उसने अपने प्रति तथा देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभाया है। कह सकते है कि ऐसा व्यक्ति रुईसे जितना ले सकता है उतना लेता है और सूतके अर्थशास्त्रको समझता है। यदि हम आम तौरपर २० अंकका सूत कातने लगे तो खादी बहुत सस्ती हो सकती है और स्त्रियाँ उसका जो विरोध करती है वह विरोध बन्द हो सकता है।

मताधिकारी अपने धर्मको समझ ले तो हमे अच्छेसे-अच्छा सूत रुईके दामो मिल सकता है। यदि हम इतना कर सके तो खादी-सम्बन्धी तमाम कठिनाइयाँ अपने-आप दूर हो जायेगी। मताधिकारियोका प्रामाणिक परिश्रम खादीकी रक्षा है, सहायता है, राज्याश्रय है।

क्या मताधिकारी — कातनेवाले भाई और बहन — मेरी इस प्रार्थनापर ध्यान देगे?

अकालमें मदद

अकालके समयमे चरखा क्या काम कर सकता है इसकी एक मिसाल पजाबसे इस तरह मिली है:[1]

मैने यह अश अ० भा० खादी बोर्डको मिली रिपोर्टसे लिया है। उसके सम्बन्धमे जानने योग्य बात तो यह है कि जहाँ पहले लोगोको अनाज दिया जाता था वहाँ अब उनसे काम लेकर उन्हे पैसे दिये जाते है। हम यह भी देखते है कि काम कराके पैसे देनेसे काम करनेवालेको काम सीखना पडता है। यदि व्यवस्थापक सूतकी किस्मके विषयमे सावधान रहे तो जो बिना सूतकी किस्म देखे सबको एक ही दरसे दाम दे दिये जाते है, वे न दिये जाये, सस्थाका जो पैसा नाहक खर्च होता है, वह न हो और गरीबोके साथ जो अन्याय अभी होता है, वह न होने पाये।

१. यहाँ नहीं दिया गया है।

फिर ऐसे कामोमे हिसाब-किताब तो साफ रखना ही चाहिए। पर हम देखते हैं कि वह नही रहता। इसका कारण अप्रामाणिकता नही बल्कि अनुभवकी कमी और व्यवस्था-विभागकी लापरवाही मालूम होती है। दो पैसे ज्यादा देकर भी कामकी अच्छाई कायम रखी जा सके तो ऐसे काम अधिकाशमे अवश्य ही स्वावलम्बी बनाये जा सकते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १७-५-१९२५

६२. पत्र : देवदास गांधीको

मौनवार

वैशाख वदी १० [१७ मई, १९२५][1]

चि० देवदास,

मै तुम्हारे सम्बन्धमे निर्भय रहता हूँ, इसलिए पत्र नही लिखता। फिर मै जानता हूँ कि तुमको मेरे समाचार तो मिलते रहते है। मुझे तुम्हारा नदी जाना ठीक लगा है। दूसरोको भी कुछ ठडक मिलेगी। करोडो लोगोको तो सर्दी और गर्मी दोनो समान रूपसे सहनी ही होती है। हम उस तरह नही सहते, यह मै चाहता हूँ कि हम भी उनके जैसे रहते। किन्तु हमारा जीवन जिस तरहका बन गया है, वह जल्दी कैसे बदल सकता है।

मै तो प्रसन्न हूँ। सतीश बाबूकी व्यवस्थाके बारेमे तो कुछ कहनेकी जरूरत ही क्या हो सकती है। क्रिस्टोदासको[2] एक दिन ज्वर आ गया था। सब बच्चो और बच्चियोको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २०४६) की फोटो-नकलसे।

१. पत्रपर डाकको मुहर १८-५-१९२५ की है; वैशाख वदी दशमी १७ मईको थी।
२. गांधीजीके सचिव।

६३. भाषण: ढाकाकी सार्वजनिक सभामें[1]

१७ मई, १९२५

मित्रो,

मेरा आम नियम है कि मैं अभिनन्दन-पत्रोका उत्तर हिन्दुस्तानीमे ही देता हूँ। पर इस नियमको मै मुख्यतः जिला बोर्डका अभिनन्दन-पत्र पढनेवाले उन सज्जनके खयालसे तोड रहा हूँ,[2] जो अभिनन्दन-पत्र पढनेके वजाय उसे जवानी ही जैसाका तैसा सुना गये। इससे मुझे सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीके उन दिनो पूनामे दिये गये एक भाषणकी याद आ जाती है जव उन्हे नाइटका खिताब नही दिया गया था। मै तो तव किशोर ही था; किन्तु वहाँ उपस्थित लोगोने मुझे वताया कि उन्होने अठवरक आकारके लगभग ८० पृष्ठोका अपना वह भाषण, एक भी शब्द इधर-उधर किये विना, मुँहजवानी सुनाया था। इससे मुझे वाबू अम्बिकाचरण मजूमदारकी भी याद आ जाती है, जिनका भाषण सुननेका सुअवसर मुझे लखनऊमे मिला था। उन्होने अपना भाषण जवानी सुनाना शुरू किया और डेढ पृष्ठतक तो वे एक भी अक्षर इधर-उधर किये विना सुनाते चले गये। और अगर उन्हे मित्रोंने समाप्त करनेका सकेत न किया होता तो वडे-वड़े ३० पृष्ठोके उस भाषणका सुनना शायद लखनऊके लोगोको गराँ गुजरता और वे उसे सुनाते चले जानेके लिए न कहते।

मुझे पता नही कि उसका शेष भाग किसने सुनाया था। बगाल आनेपर मैंने खुद भेट किये गये अभिनन्दन-पत्रोके सम्वन्धमे अधिकाशत. ऐसा ही देखा।

मुझे आपसे या स्वय अपनेसे मनकी तीव्र वेदना या उत्कण्ठाको छिपाना नही चाहिए। मुझे वगाल आनेपर बगला भाषाकी सुन्दर ध्वनि सुननेको मिलती रही है। इसलिए चाहे कितना ही शानदार क्यो न हो, अग्रेजीके धाराप्रवाह भाषणसे मेरी रक्षा करे। यदि आप हिन्दुस्तानीमे अपनी वात न कह सके तो शुद्ध बगलामे ही कहे। शायद बगाल सारे भारतको एक यही सन्देश देना चाहता है। मेरा खयाल है कि अव वहुत आवश्यक हो गया है कि हम अपनी कार्यवाहियाँ, विशेषकर ऐसी कार्य-वाहियाँ, प्रान्तीय भाषाओ या हिन्दुस्तानीमे ही चलायें। एक समय ऐसा आयेगा जव हम सव अग्रेजी भाषाका प्रयोग करनेमे शर्म मानेगे। मेरा खयाल है कि यह बात मै पहले भी कह चुका हूँ। आपके अभिनन्दन-पत्रोमे व्यक्त उद्‌गारोके लिए आपको धन्यवाद देना मेरा कर्त्तव्य है। लेकिन मै उन सुन्दर मजूषाओंके लिए आपको धन्य-वाद नही देता जिनमे रखकर मुझे अभिनन्दन-पत्र दिये गये है। मेरे पास कोई सम्पत्ति नही है और न ऐसी चीजोका मेरे लिए कोई उपयोग ही है। महत्त्वपूर्ण तो उसमे

१. यह भाषण जिला बोर्ड, नगरपालिका और पीपुल्स एसोसिएशनकी ओरसे भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२. यह वाक्य हिन्दू, १८-५-१९२५ की रिपोर्टपर आधारित है।

रखे हुए कागजके वे टुकडे ही है जो आपके हृदयके उद्‌गार व्यक्त करते है और जिनके लिए मेरे हृदयमे भी स्थान है। आपने ढाकाके गत वैभवकी वात की। यह वहुत ही सच है। मैने एक स्थानसे दूसरे स्थानका भ्रमण करते हुए यह देख लिया है कि वगालके लिए अपने पुराने गौरवको पुन प्राप्त कर लेनेकी असीम सम्भावनाएँ है। ऐसा कुछ कीजिए जिसमें वगाल एक वार फिर अपने कच्चे माल, चावल, जूट या रुईका नही, वल्कि सुन्दर कपडेका निर्यात करने लगे और अपनी उस महान् कलाको पुन प्रतिष्ठित करे, जिसके लिए वह प्रसिद्ध था। यह निश्चित ही समझिए कि जवतक आप हाथकताईकी समस्याको नही सुलझाते, तवतक सुन्दरतम कलाओको पुन प्रतिष्ठित नही किया जा सकता। मुझपर यह आरोप लगाया जाता है कि भारत जिसके लिए इतना प्रसिद्ध रहा है मुझमे उस कलाके सौन्दर्यकी अनुभूतिकी क्षमता नही है। लेकिन मेरा हृदय उस सुन्दर कलाके यहाँसे उठ जानेपर रोता है। हमे अपने वनाये हुए कपडे चाहिए। जवतक हम अपनी जरूरतका सूत खुद नही कातते, हमारे पास अपना वनाया कपडा नही हो सकता। अगर आप पेरिस या जापानसे मलमलका आयात करेगे, तो वह आपका या मेरा नुकसान ही होगा। और अगर आप पेरिस या जापानसे वहुत ही महीन सूतका, जैसा कि मैने ढाकामें देखा, आयात करेगे तो आप इस कलाको फिर कभी प्रतिष्ठित नही कर पायेगे। ऐसी अवस्थामे आप वगालके करोडो मूक लोगोके लिए क्या कर पायेगे? आप उन वहनोके लिए क्या कर पायेगे, जिनका पर्देके पीछे दम घुटा जा रहा है? मैं कोमिल्लाके एक गाँवमे गया था। वहाँ हमारी उन वहनोके, जिन्हे जिला वोर्डमे अपना कोई प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार नही है, एक प्रतिनिधिने इस वातका आग्रह किया कि उन्हे रुई दी जाये और सूत ले लिया जाये। अगर आप वहाँ उनसे सूत प्राप्त करनेकी व्यवस्था कर देते और उससे उन्हे भले ही एक, दो या तीन रुपये ही मिलते है तो आप इस तरह उनको रोटी दे पाते है। यह उनकी कितनी वड़ी सेवा है। क्या आप ऐसा समझते है कि आपका जिला वोर्ड और पीपुल्स एसोसिएशन उनकी मदद कर सकता है?

मै अभी-अभी अस्पृश्योकी, भगियोकी सभासे आया हूँ। ये लोग आपके शहरको साफ-सुथरा रखते है। उनकी सेवाएँ आपके लिए अनिवार्य है। उन्होने मुझे वताया कि उनके ८० वच्चे है, जिन्हे वे पढाना चाहते है, लेकिन उनके लिए कोई स्कूल नही है। उनसे मेरे यह पूछनेपर कि क्या आप उनके लिए कोई स्कूल खुलवाना चाहते है, उनमे से एकने कहा कि 'आपको दिये मानपत्रमें हमने स्कूलकी माँग की है।'

खद्दरपर वोलते हुए महात्माजीने कहा:

अगर आप और मध्यमवर्गीय लोग प्रतिदिन सिर्फ आधा घटा कताईमे लगायें तो मै ढाकाको खद्दरसे भर दे सकता हूँ। फिर तो हम जापान, मैचेस्टर या किसी भी दूसरी जगहसे स्पर्धा कर सकते है। लोग खद्दर पहनना चाहते है। यह पक्की वात है कि वे सव खद्दर पहनने लगेंगे। अगर आप तय करले तो ढाकाको कपड़े की

जरूरत पूरी करनेके लिए काफी खद्दर मिलने लगे। आप ढाकाके वैभवको आसानीके साथ पुन: प्रतिष्ठित कर सकते हैं और पहलेसे भी अधिक शानदार ढगसे। अब मैं आपका अधिक समय नही लूंगा।

आपने हिन्दू-मुस्लिम समस्याकी भी चर्चा की है। मैं इस समय अली-बन्धुओमे से किन्हीको साथ लेकर नही आया हूँ, इसका मुझे अफसोस है। अगर वे होते तो आप लोगोने इसका जो हार्दिक प्रमाण दिया है, मेरे साथ वे भी उसे सुनते।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १९-५-१९२५

६४. ढाकाके विद्यार्थियोंके साथ बातचीत[1]

१७ मई, १९२५

ढाकामे विद्यार्थियोंकी सभा मन्सूख कर दी गई थी; लेकिन गांधीजीने विद्यार्थियोंसे कहा कि सभी सार्वजनिक समारोहोंके समाप्त हो जानेपर वे उनसे आकर मिलें और बातचीत करें। इस तरह विद्यार्थियोको इतना मिला जितनेकी उन्होंने सपनेमें भी कल्पना न की होगी। गांधीजी छेड़ दिए जानेपर अपनी बात बहुत ही अच्छी तरह कहते हैं। एक मित्रने उन्हें यह कहकर उकसा दिया कि चरखा चलाना शक्ति और समयकी बर्बादी है। दूसरेने कहा कि आपकी सलाहमें श्रम-विभाजनके सिद्धान्तका कोई खयाल नहीं रखा गया है। इसपर गांधीजीने खुलकर बोलना शुरू किया।

क्या मैं आपसे सारा दिन कातनेको कहता हूँ? क्या मैं आपसे इसे अपने मुख्य धन्धेके रूपमे अपनानेको कहता हूँ? तब फिर इसमे श्रम-विभाजनके सिद्धान्तका भंग कहाँ हुआ? क्या आप खाने-पीनेमे इस सिद्धान्तको लागू करते हैं? जिस प्रकार हममे से प्रत्येकके लिए खाना, पीना और कपडे पहनना जरूरी है, उसी प्रकार सबके लिए कातना भी जरूरी है। आप कहते हैं कि यह शक्ति और समयकी बर्बादी है? और आप यह भी कहते हैं कि आपके मनमे अपने देशभाइयोके प्रति ममत्वकी भावना है। मानवोचित दयालु प्रकृतिके बिना ममत्व क्या चीज है? क्या आप वैसा कुछ महसूस करते हैं जैसा कि गाय अपने बछड़ेके प्रति, या माँ बच्चेके प्रति महसूस करती है? गायके थनमे और माँके स्तनमें अपने बच्चोको देखते ही दूध उतर आता है। क्या अपने अकाल-पीडित देशभाइयोको देखकर आपका हृदय प्रेमसे भर उठता है? मेरे मित्रो! चरखा चलाना उनके प्रति अपना प्रेम प्रकट करना है। आपका सूत कातना उनको अपना निठल्लापन छोडनेकी प्रेरणा देना है। यदि कोई लोगोके बीचमें जाकर मधुर गीत गाता है और उनके मनको प्रभावित करता है तो क्या यह समय

१. महादेव देसाई द्वारा प्रस्तुत गाधीजीके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

और शक्तिकी बर्बादी है? हाँ, अगर वह बेसुरे सुरमें और दर्पमे भरकर उनके सामने वंदेमातरम्को भी अलापे तो यह जरूर समय और शक्तिकी बर्बादी होगी। लेकिन कताईका मतलब इतना ही नही है। वह उद्देश्यपूर्ण चीज है और उसका मतलब है अधिक उत्पादन। इसका उद्देश्य जनसाधारण और आपके बीच एक कडी कायम करना है। इसके यन्त्रवत् उपयोगसे भी कुछ-न-कुछ हासिल हो जाता है और फिर इसके अलावा दूसरा ऐसा कोई काम नही है जो इतनी कम कोशिश करके ही सीखा जा सकता हो और जिसे हम करोडो लोगोमे से क्या अच्छे और क्या साधारण सभी व्यक्ति कर सकते हो। और विद्यार्थियोमे से तो सभीको कातना चाहिए, क्योकि वे देशके जाग्रत तत्त्व हैं। उनका जीवन अभी शुरू नही हुआ है और नये विचारोको वे जितनी आसानीसे ग्रहण कर सकते हैं उतनी आसानीसे और कोई नही कर सकता। सेवाकी लम्बी अवधि उनके सामने पडी हुई है। फिर नई शराब नई बोतलोमे ही भरी जा सकती है, पुरानी बोतलोमे नही। जरा सोचिए तो सही कि उत्साही और बुद्धिमान विद्यार्थियोका अनुशासित समूह कितना कुछ कर सकता है। सोचकर देखिए कि ढाकाके ११,००० विद्यार्थियो द्वारा प्रतिदिन आधा घटा कताई करनेसे जो उत्पादन होगा, वह कितना जबरदस्त होगा। क्या आप यह जानते है? अगर आप सब खादी पहने तो आपके खर्चे हुए पैसोका अधिकाश कताई करनेवालोको मिलेगा? आप शायद इंग्लैड और उसकी साधन-सम्पन्नताके बारेमे सोचते होगे। लेकिन वह दूसरे राष्ट्रोके शोषणपर जीता है। उसने हमारे श्रमको अपनी मुट्ठीमें कर रखा है। यह एक ऐसी आर्थिक क्षति है, जो उन सभी करो और अन्य आर्थिक क्षतियोसे बढकर है, जिनकी ओरसे दादाभाई नौरोजीने हमे सतर्क किया था। इस अप्रत्यक्ष क्षतिको वे भी नही देख पाये थे। लेकिन मैं, जो उनके चरण-चिन्होपर चलनेवाला उनका शिष्य हूँ, इस अप्रत्यक्ष क्षतिको देख सका हूँ और मेरा कहना है कि हमारे राष्ट्रको निठल्लोका राष्ट्र बना दिए जानेसे हमारी जो आर्थिक क्षति हुई है, वह सर्वाधिक विनाशकारी है।

गांधीजीने जबतक स्पष्ट रूपसे यह समझा नहीं दिया कि हमारे ऊपर थोपे हुए इस आलस्यसे इस शस्यश्यामल भूमि का कैसा विनाश हुआ है। वे जगन्नाथपुरीके अभाव, बिहारकी गरीबी और देशके अन्य भागोंकी उन स्त्रियोकी बात करते हुए, जिनके लिए एक आना प्रतिदिन भगवान्की भेजी सौगात जैसा है, इसी तरह बोलते चले गए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

६५. भाषण : नेशनल कॉलेज, श्यामपुरमें[1]

१७ मई, १९२५

गांधीजीने कहा कि मैं विद्यार्थियोंको अस्पतालके शिलान्यासपर सहर्ष आशीर्वाद दे सकता हूँ; लेकिन वैद्यों और डाक्टरोंमें मेरी श्रद्धा बिलकुल ही नहीं है; मेडिकल कालेजोंमें तो और भी नहीं। बीमार जब डाक्टर और वैद्योंसे इलाज करानेके फेरमें पड़ जाते हैं तो और भी ज्यादा लाचार बन जाते हैं। इस पेशेकी शिक्षा अर्थोपार्जनके लिए ली जाती है, और लोग इसे प्राप्त करनेके बाद अधिकसे-अधिक धन कमानेको उत्सुक रहते हैं। महात्माजीने कहा कि यदि विद्यार्थी मेडिकल कालेजसे बाहर निकलनेके बाद अपना जीवन देशकी खातिर समर्पित करनेकी बात स्वीकार करें तो मैं उन्हें आशीर्वाद दे सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १९-५-१९२५

६६. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

१८ मई, १९२५

प्रिय गुरुदेव,

नेपाल बाबूने मुझे आपका अत्यन्त कृपापूर्ण और प्रेमपूर्ण पत्र भेजा है। मैं जरूर बोलपुरमें एक या दो दिन बिताना चाहता हूँ। मुझसे मिलनेके लिए आपके बोलपुरसे आनेकी बातका सवाल ही नहीं हो सकता। आपके स्वास्थ्यकी हालत कितनी नाजुक है, सो मैं जानता हूँ। मैं अपने आ सकनेकी तारीखकी सूचना आपको दूँगा।[2]

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ४६२९) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीने नारायणगंजसे सुबह श्यामपुर आकर नेशनल कॉलेज अस्पतालकी इमारतका शिलान्यास किया था। नेशनल कालेजके शिक्षकों और विद्यार्थियोंकी ओरसे उन्हें एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया था, जिसका जवाब उन्होंने हिन्दीमें दिया था। मूल भाषण उपलब्ध नहीं है।

२. गांधीजी २९ मईको शान्तिनिकेतन गये थे।

६७. पत्र : मुहम्मद अलीको[1]

१८ मई, १९२५

मेरे प्यारे दोस्त और बिरादर,

आपके लिखनेसे पहले ही मैंने आपकी स्थितिका अन्दाजा लगा लिया था। ईमानदार कार्यकर्त्ताओंका भाग्य ऐसा ही होता है। पहले हम उस दिशामें ज्वारके साथ तैरते चले जा रहे थे, उसमें हमें कुछ करना नहीं पड़ रहा था। हम जब ज्वारकी विपरीत दिशामें तैरते हैं, तभी हमें कोशिश करनी होती है। हमें अब पता चलेगा कि हममें कुछ दम है या नहीं। शत्रु कितना ही दुर्दम हो, उसके विरुद्ध लड़ना सच्चे सिपाहीके लिए बच्चोंका खेल है। लेकिन अपने ही लोगोंमें नैतिक बलकी कमी, सन्देहकी भावना, अनुशासनहीनता और विश्वासकी कमीका मुकाबला बड़ी मुश्किल चीज है। आपको और मुझे इस असलियतका मुकाबला करना है।

मेरी दुआएँ हमेशा आपके साथ हैं और आपके लिए हैं। आप दोनों भाइयोंमें भी मेरा विश्वास अचल है, हालाँकि आपके कामके तरीकेमें नहीं। यदि आप हर कामका वक्त सख्तीके साथ अलग-अलग रखें तो आपको समयकी कमी महसूस नहीं होगी। जो आदमी जितना अधिक व्यस्त रहता है उसके पास और भी कामोंके लिए समय निकल आता है। ईश्वरसे डरनेवाले व्यक्तिके लिए सारा दिन प्रार्थनाका ही समय है। प्रार्थनाका निश्चित समय होना केवल एक इशारा है और उससे यही साफ होता है कि सभी कामोंके लिए हमारा समय निश्चित होना चाहिए। क्या हमने सब कुछ ईश्वरको समर्पित नहीं किया है? हमारा खाना भी एक प्रार्थना हो सकती है और व्रत रखना भी एक प्रवृत्ति। उपदेश काफी हो गया।

मुझे आप लोगोंकी और गुलनारकी[2] बड़ी याद आती है। मेरे सारे फूल और छोटी-छोटी सुन्दर चीजें व्यर्थ चली जाती हैं। उससे कहिए कि इतनी बड़ी न हो जाये कि मैं उसे खिला न सकूँ।

आप सबको सप्रेम,

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. यद्यपि पत्रके मसविदेपर कोई पता नहीं लिखा है, फिर भी विषय-वस्तुसे स्पष्ट हो जाता है कि यह पत्र मुहम्मद अलीको लिखा गया था।

२. मुहम्मद अलीकी बेटी, शुएब कुरैशीकी पत्नी।

६८. मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रका अंश

वैशाख वदी १०, [१८ मई, १९२५][1]

आनन्दपर मेरा [पूर्व जन्मका कुछ] ऋण था न?

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी,

६९. भाषण: महिलाओंकी सभा, मैमनसिंहमें[2]

१९ मई, १९२५

महात्माजीने महिलाओको अभिनन्दन-पत्र तथा उपहारोंके लिए धन्यवाद देनेके उपरान्त कहा कि स्वराज्यसे मेरा अभिप्राय धर्मराज्य या रामराज्यसे है। भारतके लिए धर्म और नैतिकता-हीन स्वराज्य हो ही नहीं सकता। रामराज्यके लिए हमें सीताजीकी अपेक्षा है। सीताजीके ही कारण हम रामचन्द्रकी पूजा कर पाते हैं। सीताके जन्मके बिना रामचन्द्रका अस्तित्व असम्भव है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मेरी बहनें भी सीताके समान हों। सीताने हृदय और शरीरको पवित्र रखा। मैं अपनी बहनोंसे आग्रह करता हूँ कि खद्दर पहनकर वे अपने शरीर शुद्ध बनायें। सीताजी भारतमें बना कपड़ा पहनती थीं। उनके समयमें विदेशी वस्त्रका भारतमें तनिक भी आयात नहीं किया जाता था। लेकिन आजकी महिलाएँ फ्रांस, जापान और मैंचेस्टरसे मँगाया हुआ कपड़ा चाहती हैं। विदेशी वस्त्र पहनना अशुद्ध है, क्योंकि वह सूचित करता है कि वे अपने गरीब भाइयोंको भूल गई हैं। किसी समय हमारी लाखों बहनें चरखेसे सूत कातकर जीविकोपार्जन करती थीं। लेकिन अब हमारे विदेशी वस्त्रोंके इस्तेमाल करनेकी वजहसे उनका चरखेका काम बन्द हो गया है। बहनोको प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा सूत कातना चाहिए। महात्माजीने देशी मिलोमें बने कपड़ेको अर्ध-खद्दर कहा। उन्होंने कहा कि यद्यपि हमारी सब बहनें जो सभामें आई हैं, खद्दर पहने हैं, लेकिन ऐसा इन्होंने या तो मेरे प्रति अपना स्नेह व्यक्त करनके लिए या मुझे धोखा देनेके लिए किया होगा। सबसे ज्यादा जरूरी चीज है बहनोंमें भारतके प्रति प्रेम — उससे उन्हें खद्दर पहननेकी प्रेरणा मिलेगी। यदि मैमनसिंहमें

१. साधन-सूत्रके अनुसार, लेकिन १९२५ में वैशाख वदी १०, १७ मई १९२५ को थी।

२. सुबह आयोजित इस सभामें गांधीजीको हाथकता सूत, जेवर और सिक्के भेंट किये गये थे। अभिनन्दन-पत्र बंगलामें पढ़ा गया था, जिसका उत्तर गांधीजीने हिन्दीमें दिया था। मूल भाषण उपलब्ध नहीं है।

बहनें निम्नलिखित तीन काम करनेकी जिम्मेदारी ले तो मुझे काफी सन्तोषका अनुभव होगा। वे हैं:

१. प्रतिदिन आधा घंटा चरखेपर सूत कातना।

२. खद्दरका इस्तेमाल।

३. उन नामशूद्रोंके प्रति जिन्हें गलतीसे अस्पृश्य माना जाता है, घृणा-भावका त्याग।

अन्तमें महात्माजीने कहा कि मुझे सूत, रुपया और आभूषणके रूपमें जो उपहार दिये गये हैं, उन्हें खद्दर प्रचारमें लगाया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-५-१९२५

७०. भाषण: अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें[1]

१९ मई, १९२५

इस समय अली बन्धुओमें से कोई भी मेरे साथ नहीं है, इसलिए मैं बहुत असहाय महसूस कर रहा हूँ। उनके साथ रहनेपर मुझे भरोसा रहता है कि मैं अपनी बात मुसलमान भाइयोके हृदयतक आसानीसे पहुँचा सकता हूँ।[2]

हिन्दू-मुस्लिम समस्याकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि यह बड़े दुःखकी बात है कि दोमें से कोई भी जाति अपने बड़े-बड़े स्वार्थोको तो क्या, छोटे-छोटे स्वार्थोको भी छोड़नेके लिए तैयार नहीं है। आज तो वे दाल-रोटीके लिए नहीं, बल्कि लकड़ी-पत्थर और सर्वथा महत्त्वहीन चीजोंके लिए झगड़ रहे हैं। मैं महसूस करता हूँ कि जबतक हमारा हृदय साफ और शुद्ध नहीं हो जाता, तबतक हम भाई-भाईकी तरह नहीं रह सकते। मैं चाहता हूँ कि हम स्वार्थकी चट्टानपर पटककर अपनी एकताको टुकड़े-टुकड़े न कर दें। किन्तु मेरा विश्वास है कि समस्याका हल हमारे ऊपर निर्भर नहीं है। मैं आशावादी हूँ और मानता हूँ कि इस देशपर ईश्वर कृपा करेगा और इस लड़ाई-झगड़ेके बावजूद हमें मिल-जुलकर रहनेकी सामर्थ्य देगा।

हिन्दुओ और मुसलमानोको अपने-अपने धर्मोमे यह एक बात और दाखिल कर लेनी चाहिए कि हम एक दूसरेके बिना नही जी सकते। जिस ईश्वरने सात करोड मुसलमानोको बाईस करोड हिन्दुओके बीच रख दिया है, वह हमपर जरूर दया करेगा और वह हमे न चाहते हुए भी भाई-भाईकी तरह रहनेकी शक्ति देगा।[3]

१. यह भाषण महाराजाके महलमें आयोजित सभामें मैमनसिंह नगरपालिका व जिला बोर्डकी तरफसे भेंट किये गये मानपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२. यह अंश यंग इंडिया, २८-५-१९२५ में प्रकाशित महादेव देसाईके यात्रा विवरणसे उद्धृत है।

३. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

खद्दर और कताईकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि अगर आप जनसाधारणके साथ एक होकर रहना चाहते हों तो ये दोनों अनिवार्य हैं। क्या आपने अपने स्वार्थके लिए जनसाधारणका शोषण नहीं किया है? आपने उन्हे बदलेमें क्या दिया है? अगर आप सारे भारतमें घूम कर देखें तो आपको आसानीसे पता चल जायेगा कि आप अपने भाइयोंका खून चूस कर जी रहे हैं। परिणाम यह हुआ है कि गरीबी और कंगाली देशके मर्ममें पैठ गई है और वह उनपर इस तरह हावी हो गई है कि वे यह भी भूल गये हैं कि उनमें मेहनत करनेकी ताकत भी है या नहीं। दर-असल, जनसाधारण लाचार होकर निठल्ला हो गया है। इसलिए आप सब चरखा अवश्य चलायें। यही कारण है कि मैं सभी जमींदारों और प्रमुख व्यक्तियोंसे कातने और इस तरह जनसाधारणको अपनी ओरसे कुछ देनेको कहता हूँ। आपकी शिकायत है कि खद्दर खुरदरा होता है और टिकाऊ तथा अच्छा नहीं होता। जब आप अपने गरीब भाई-बहनोंके लिए प्रतिदिन आधा घंटा भी कात नहीं सकते, तो यह सब हो कैसे सकता है? चरखेसे केवल मनबहलाव करें तो यह सब नहीं हो सकता। चरखेपर आप अधिक सूत नहीं कात पाते; लेकिन क्यों? इसलिए कि इसे आप ठीक तरहसे और नियमपूर्वक नहीं चलाते। बाजारमें अभीतक जो सबसे अच्छा चरखा आया है, वह है खादी प्रतिष्ठानका चरखा।

इसके बाद मैंमनसिंहकी जनताकी ओर मुखातिब होते हुए उन्होंने उनकी राष्ट्रीय भावनाको जगाते हुए यह आशा व्यक्त की कि वे लोग कथनानुसार काम करेंगे। महात्माजीने नकली खद्दरकी तीव्र भर्त्सना की। उन्होंने कहा, अर्ध-खद्दर अपवित्र है और उसे जला देना चाहिए। अगर आप अच्छी, टिकाऊ और सुन्दर खादी चाहते हैं तो आप प्रतिदिन आध घंटेका श्रम जनसाधारणको, उन गरीब भाइयों और बहनोंको दें जो भूखे मर रहे हैं, जो उन्हें गिरानेवाली गरीबीके पाशमें जकड़े हुए हैं। अगर आप आधा घंटेका श्रम मुफ्त दें और देशके लिए रोज आधा घंटा कताई करें, तो मैं आपको वचन देता हूँ कि खादी सस्ती, अच्छी, सुन्दर और टिकाऊ हो जायेगी और मैं आपको यह भरोसा भी दिलाता हूँ कि तब मैं आपको स्वराज्य भी अवश्य ही दिला दूँगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २२-५-१९२५

७१. मैंमनसिंहके जमींदारोंसे बातचीत[1]

१९ मई, १९२५

यदि आपका अपना धोबी है, अपना सफाई करनेवाला भगी है तो आपका अपना बुनकर क्यो नही है? और अच्छे तथा सुन्दर सूतके लिए आपको अपने ही प्रदेशोमें अच्छेसे-अच्छे कातनेवाले भी मिल ही सकते है।

प्रमुख और शिक्षित व्यक्ति चरखा क्यों नहीं चलाते?

क्योकि उन्हे गरीबोके लिए दर्द महसूस नही होता और उन्हे दर्द इसलिए नही महसूस होता कि वे गरीबोके कष्ट नही जानते। कृपया यह न कहिये कि वे आलसी हैं। उन्हे निठल्ला हमने बनाया है। उनमे जीवनके प्रति दिलचस्पी कैसे पैदा करे। आपको और हम सबको रात-दिन परिश्रम करना चाहिए और उस बच्चेकी तरह अधीर नही होना चाहिए जिसने कि आमका बीज बोया, लेकिन जो बीजके जड पकड़ने और वृक्षके रूपमे तैयार होनेके लिए ६ महीने भी इन्तज़ार करनेको तैयार नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

७२. एक असाधारण मानपत्र

मुझे भेट किये गये अधिकाश मानपत्रोमे ऐसे विशेषण प्रयुक्त किये गये हैं जिनके योग्य मै नही हूँ। उनका प्रयोग न तो उनके लेखकोके लिए ही लाभप्रद हो सकता है और न मेरे लिए। उनसे मुझे व्यर्थ ही नीचा देखना पडता है, क्योकि मुझे स्वीकार करना पडता है कि मै उनके योग्य नही हूँ। जब वे मेरे अनुरूप होते है तब उनका उपयोग अनावश्यक होता है। उनसे मुझमे विद्यमान गुणोकी शक्ति बढ नही सकती। यदि मै सचेत न रहूँ तो उनसे मेरे मनमे आसानीसे घमण्ड आ सकता है। आदमी जो भी अच्छाई करे उसका बखान न करना ही ज्यादा अच्छा है। किसीका अनुकरण करना उसकी सबसे सच्ची सराहना करना है। इसलिए मै अपने सभी प्रशसकोको ऐसा करनेकी सलाह देता हूँ। यदि वे मेरा सूत कातना पसन्द करते है तो उन्हे स्वय सूत कातकर उसकी सराहना करनी चाहिए, यदि वे मेरी नियमबद्धताको पसन्द करते है तो उन्हे स्वय नियमबद्ध बनकर मेरी प्रशसा करनी चाहिए। और यदि वे मेरी सच्चाई और अहिंसाको मूल्यवान मानते है तो उन्हे अपने आचरणसे उनके प्रति अपना प्रशसा-भाव दिखाना चाहिए।

१. महादेव देसाई द्वारा प्रस्तुत गांधीजीके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

लेकिन सभी मानपत्रोमे केवल मेरी प्रशंसाके गीत नही गाये जाते। किसी अवसरपर उनसे मुझे मूल्यवान जानकारी मिलती है। चाँदपुरके मानपत्रमें[1] खास बात यह थी कि उसमे वहाँके लोगोने अपनी कठिनाइयाँ साफ-साफ बताई थी। मानपत्रमें मेरे असली अथवा काल्पनिक गुणोका कुछ जिक्र जरूर है, लेकिन उसमे चाँदपुर निवासियोकी कार्यवाहियोका ही अधिक विवरण था। विवरण इस प्रकार है:

१. कांग्रेस सदस्योंकी संख्या — श्रेणी "क" १०, श्रेणी "ख" ६८, कुल ७८
२. चालू चरखोंकी संख्या २४५
३. प्रत्येक चरखेकी औसत क्षमता — १०० गज प्रति घंटा, सबसे अधिक गति ५०० गज प्रति घंटा।
४. औसत अंक १२; सबसे ऊँचा अंक १५२।
५. सूतका मासिक उत्पादन — १ मन।
६. हाथ कते सूत तथा अन्य सूतसे चालू खड्डियोंकी संख्या एक हजारसे अधिक; केवल सात खड्डियाँ शुद्ध खादी तैयार करती है।
७. शुद्ध खादीका मासिक उत्पादन २५० गज।
८. खादी गोदामोंकी संख्या केवल ३।
९. खादीकी खपतका मासिक औसत लगभग ३०० रु०।
१०. राष्ट्रीय स्कूलोंकी कुल संख्या ४, विद्यार्थियोंकी कुल संख्या १६७। जहाँतक शराबखोरीका सम्बन्ध है, यह १९२२ से धीरे-धीरे बढ़ रही है।

फिर अधिकतर विषयोपर एक रोचक टीका है। उसका अन्त निम्नलिखित ढगसे किया गया है:

> हम अनुभव करते है कि यदि हम देशकी जनताकी घोर निर्धनता तथा उसके फलस्वरूप होनेवाली मौतोंका उल्लेख नहीं करते तो हम अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं करते। लोग भारी कर्जेके बोझसे दबे हुए है। उनमें से बहुतोंका हिसाब-किताब देखें तो मालूम पड़ता है कि वे दिवालियेपनकी निराशाजनक स्थितिमें पहुँच गये हैं। कुटीर उद्योगोंके पूर्ण विनाशके परिणामस्वरूप लोग बहुधा गम्भीर अपराध करने लगते हैं तथा हम लोगोंकी इस आर्थिक अधोगतिके अन्तिम परिणामोंको सोचकर दहल उठते हैं।

निश्चय ही यह लेखा ऐसा नही जिसपर गर्व किया जा सके। लेकिन इसमे निराश होनेकी भी कोई बात नही। हममे से हरएक अपनी शक्तिभर परिश्रम कर सकता है। परिणामपर हमारा कोई वश नही है और न हो ही सकता है, क्योकि वह कई अन्य स्थितियोपर निर्भर है। वास्तवमे शक्ति-भर उद्योग कर चुकनेके बाद हम

१. देखिए "भाषण: चाँदपुरकी सार्वजनिक सभामें", १०-५-१९२५।

बिलकुल निश्चिन्त हो सकते हैं। दुर्भाग्यसे हममें से अधिकांश काम नहीं करते अथवा उदासीनतासे करते हैं और फिर भी परिणाम बहुत असन्तोषजनक आनेकी शिकायत करते हैं। यदि हम शक्ति-भर प्रयत्न करे तो फिर सब-कुछ ठीक हो जायगा।

यह सच है कि जो समस्याएँ हमारे सामने हैं वे बहुत बडी हैं तथा अनेक हैं। एक आदमीके लिए तथा बहुतोंके लिए यह मान लेना कि वे उन सभीको एक बारमे ही सुलझा लेगे, सर्वशक्तिमान होनेका दावा करना है। इस प्रकारका कोई भी प्रयत्न अवश्य ही असफल होगा। हमारी कठिनाइयाँ इसलिए बढ जाती हैं कि हमारा राष्ट्र पराधीन है। यदि हम पराधीन न होते तो इनमें से अनेक कठिनाइयाँ दूर की जा सकती थी। लेकिन यह भी उतना ही सत्य है कि हम तबतक अपना सहज स्वत्व प्राप्त नही कर सकते जबतक हम इनमें से अधिकसे-अधिक समस्याओको अभी सुलझा न ले। स्वराज्य न मिलनेतक उन समस्याओको हाथमे न लेनेका मतलब है स्वराज्य तथा समस्याओके हल, दोनो ही को टालना। इसलिए वह व्यक्ति, जो मुख्य समस्याओमे अपनी सम्पूर्ण योग्यतासे सहायता प्रदान करता है, उन्हे हल करने तथा स्वराज्यको निकट लानेमे सहायक होता है।

इस प्रकार यदि चाँदपुरके कार्यकर्त्ताओने शक्तिभर प्रयत्न कर लिया है तो उन्होंने जो परिणाम बताये है, उन्हे निराशाजनक समझनेकी जरूरत नही। कुछ समय बीतनेपर उन्हे अवश्य सफलता मिलेगी, क्योकि ईमानदार और मेहनती कार्यकर्त्ताओ-को दीर्घ उद्योगका फल सदा मिलता ही है। 'क' श्रेणीके १० सदस्योका होना एक भी सदस्य न होनेसे बेहतर है तथा मै तो हमेशा ही ऐसे १० सदस्योका होना बेहतर मानता हूँ बजाय १०,००० ऐसे सदस्योके जो प्रतिवर्ष ४ आने अदा करे और फिर कांग्रेसके बारेमे कुछ भी न सोचे; केवल इतना ही सोचे कि उन्होने अपने चार आने खो दिये। यदि दस सदस्य अपने विश्वासपर कायम रहेगे तो उनकी सख्या शीघ्र ही सौ हो जायेगी। मुझे चरखेके सिवा कोई दूसरी सूरत दिखाई नही देती। जिन्हे कोई विकल्प दिखाई देता है वह उसे जरूर करे। जबतक ऐसी योजना सामने नही आती, तबतक इन दस व्यक्तियोको, जो चरखा चलाते है, निर्भीक होकर मैदानमें डटे रहना चाहिए।

लेकिन मुझे डर यह है कि प्रबन्धकोने पूरी मेहनतसे कार्य नही किया है। मुझे ज्ञात हुआ है कि चाँदपुरमे लगभग १२० स्वयसेवक हैं। उनमे से लगभग १०० सूत कातना जानते हैं, किन्तु उनमे से मुश्किलसे पाँच अथवा छ ही नित्य सूत कातते हैं। एक प्रस्तावके द्वारा स्वयसेवकोके लिए सूत कातना अनिवार्य कर दिया गया है। किन्तु यदि स्वयसेवक ही कताई-सदस्यताके प्रस्तावका सर्वथा पालन नही करता तो और कौन करेगा? स्वागत-समितिको स्वयसेवकोको चुननेमे दृढतासे काम लेना था। यदि इसे पर्याप्त योग्य व्यक्ति नही मिलते थे तो इसे अपना कार्य थोडेसे स्वयसेवकोसे ही चला लेना था। अनाडी डाक्टरका होना डाक्टरके न होनेसे भी बदतर है। उदासीन स्वयसेवक बहुधा सहायक होनेके बजाय रोड़ा अटकाता है। यहाँ बीचमें ही मै यह भी उल्लेख कर दूँ कि मेरे प्रति स्वयसेवकोका व्यवहार बहुत ही अच्छा था। उन्होने अपनी शक्ति-भर सेवा की। सेवा और प्रेम कीमती तो दोनो

हूँ, लेकिन मैं व्यक्तिगत सेवा और प्रेम नही चाहता, मैं राष्ट्रके प्रति सेवा और प्रेम चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ—दृढ कर्त्तव्यपरायणता तथा उन सभी दायित्वोकी पूर्ति जो उनके लिए निश्चित किये गये है और जिन्हे उन्होने स्वीकार किया है।

मानपत्रमे शराबके व्यापारमे वृद्धिका जिक्र किया गया है। यह एक गम्भीर विषय है। इसका उपाय वे कार्यकर्त्ता ही कर सकते है जो कि विशेष तौरसे हुए इस सुधारके काममे लगे। लेकिन मुझे लगता है कि शराबका व्यापार ऐसी बुराइयोमे से है जिन्हे केवल मद्यनिषेध द्वारा ही सफलतापूर्वक काबूमे लाया जा सकता है।

अन्तिम टीका हमारी सामान्य स्थितिकी द्योतक है।

हमारी बढती हुई गरीबी कुटीर उद्योगोके पुनरुज्जीवनसे नही, बल्कि उस एक कुटीर उद्योगके ही पुनरुज्जीवनसे दूर होगी। जब हम एक बार उस कुटीर उद्योगको पुनरुज्जीवितकर लेगे तो अन्य सब बादमे पुनरुज्जीवित हो जायेगे। उनसे देशकी समृद्धि बढेगी। लेकिन केवल चरखा ही अकेला भुखमरीकी सामान्य समस्याको सुलझा सकता है। निस्सन्देह प्रत्येक जिलेकी भिन्न-भिन्न आवश्यकताएँ है। उनकी ओर ध्यान देनेकी आवश्यकता है। लेकिन मै चरखेको ऐसी नीव बनाना चाहता हूँ जिसपर स्वस्थ ग्रामीण जीवनकी रचनाकी जा सके। मैं चरखेको ऐसा केन्द्र बनाना चाहता हूँ जिसपर अन्य सभी क्रियाएँ आधारित हो। कोई भी सूत कातनेवाला ग्राम्य जीवनमें तबतक भाग नही ले सकता जबतक कि वह ग्रामीणोकी अन्य समस्याओके, जिनसे वे त्रस्त है, सम्पर्कमे नही आता तथा उनको हल करनेमे हाथ नही बँटाता। लेकिन यदि कोई कार्यकर्त्ता गाँवमे काम करने जायेगा तथा किसी भी कार्यको, जो सुगमतासे मिले, हाथमें ले लेगा तथा चरखेको नही अपनायेगा तो वह केन्द्र-बिन्दुसे भटक जायेगा और इसलिए एक-एक ग्रामीणतक पहुँचनेके बजाय अन्धकारमे मार्ग ढूँढ़ता फिरेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९२५

७३. कूदनेको तत्पर

एक पत्र-लेखक कुछ प्रश्न पूछनेके बाद, अन्तमे लिखते है:

मै आशा करता हूँ कि आप इन विषयोंपर प्रकाश डालनेकी कृपा करेंगे और जबतक मै अनर्गल बातें न करने लगूँ तबतक मेरे साथ चर्चा जारी रखगे। मैं आपका अनुयायी हूँ, आपके नेतृत्व और पथ-प्रदर्शनमें जेल जा चुका हूँ। जब मै आपके बहुत नजदीक था और आपसे मिलनेका बहुत मौका था तब भी मैंने आपसे कोई बातचीत नहीं की; क्योंकि मै आपका समय लेना नहीं चाहता था। मैंने आपका चरण-स्पर्शतक नहीं किया। पर अब आपकी युक्तियों और राजनैतिक विचारोंपर से मेरा विश्वास हिल गया है। मै क्रान्तिवादी नहीं हूँ; अलबत्ता उस बारमें लगभग कूदने ही वाला हूँ। यदि आप इन प्रश्नोंका जवाब सन्तोषजनक रूपसे देंगे तो आप मुझे बचा लेंगे।

अव मै उनके सवालोको क्रमश लेता हूँ·

अहिंसा क्या है? चित्तकी एक वृत्ति है या प्राणका नाश न करना है? यदि वह प्राणका नाश न करना हो तो क्या उसका पालन सम्भव है? क्या हम इसके तर्कसम्मत छोरतक जाकर इसका पालन कर सकेंगे? हम अपने भोजन इत्यादिमें रोज असंख्य जीवोंकी हिंसा करते हैं। उस अवस्थामें तो हम वनस्पतियोंतक को खा नहीं सकते।

अहिंसा चित्तकी एक वृत्ति भी है और तज्जनित चेष्टा भी। इसमे सन्देह नही कि वनस्पतिमे भी प्राण है, परन्तु वनस्पतिका उपयोग किये विना हम रह नही सकते। वह जीव-नाशसे कम तो किसी तरह नही है। अलवत्ता, वह क्षम्य माना जा सकता है।

दूसरा प्रश्न है:

यदि हम जीव-हिंसासे बच नहीं सकते तो इसके यह मानी नहीं हैं कि हम बिना आगा-पीछा सोचे उसका विनाश करते ही रहें; फिर भी उस हालतमें, सचमुच जरूरी होनेपर उसके सम्बन्धमें सिद्धान्तकी दृष्टिसे आपत्ति नहीं की जा सकती। कार्य-साधकताकी दृष्टिसे भले ही की जा सके।

ऐसे अवसरोपर भी जहाँ हिंसा की आवश्यकता सिद्ध होती हो, 'सिद्धान्तकी दृष्टिसे' हिंसाका समर्थन नही किया जा सकता। उसका बचाव केवल कार्य-साधकता-की दृष्टिसे ही किया जा सकता है।

तीसरा प्रश्न है.

यदि अहिंसाका अर्थ है प्राणका नाश न करना, तो फिर आप किसी व्यक्तिको किसी कार्यके निमित्त अपना प्राण देनेके लिए किस तरह कह सकते हैं — चाहे वह काम कितना ही पवित्र और धार्मिक क्यों न हो? क्या वह स्वयं अपने प्रति हिंसा न होगी?

हाँ, मै किसी आदमीसे बराबर यह कह सकता हूँ कि अमुक कामके लिए अपनी जान दे दो, तिसपर भी मै हिंसाका दोषी न होऊँगा, क्योकि अहिंसाका अर्थ है — औरोको चोट न पहुँचाना।

चौथा प्रश्न यह है.

अपने प्राणसे प्यार करना मनुष्यका स्वभाव है। जबकि किसी व्यक्तिका अपने देश या समाजकी आवश्यकताके लिए अपनी जान दे देना उचित है तो आवश्यकता पड़नेपर वह औरोंकी जान कुरबान क्यों नहीं कर सकता? हमें सिर्फ इतना ही साबित करना होगा कि उसकी जरूरत थी; अर्थात् यह भी कार्य-साधकताका ही सवाल ठहरा।

'जो अपनी जानसे मुहब्बत करेगा वह उसे खोयेगा। जो अपनी जानको गँवायेगा वह उसे पायेगा।' आवश्यकताकी विनापर दूसरेकी जानको कुरबान करनेका समर्थन

नही किया जा सकता, क्योकि आवश्यकताको सावित करना असम्भव है। हम खुद ही इसके काजी नही वन सकते। वल्कि वहाँ एकमात्र काजी वे होगे जिनकी जान हम लेना चाहते हैं। हमारा निर्णय गलत भी हो सकता है। यह अहिंसाके पक्षमें एक अच्छा कारण है। मध्ययुगके ईसाई धर्माधीशोंका अटल विश्वास था कि उनका कार्य धर्मसम्मत है; पर आज हम जानते हैं कि वे सरासर गलतीपर थे।

पाँचवा प्रश्न यह है:

कुरवानी और हत्यामें क्या भेद है?

कुरवानीके मानी है, खुद कष्ट सहना, जिससे कि दूसरेको लाभ पहुँचे। हत्याके मानी हैं, दूसरेको तकलीफ देना—मार डालना, जिससे कि हत्यारे या जिसके लिए हत्या की गई है उसे लाभ हो।

छठा प्रश्न:

क्या जो डाक्टर आपको नश्तर लगाता है वह आपको कुछ समयके लिए तकलीफ पहुँचानेके कारण निन्दाके योग्य है? पर क्या हम उसके चित्तकी वृत्ति अर्थात् वीमारको लाभ पहुँचानेके हेतुपर ध्यान रखकर उसके हिंसात्मक कार्यपर ध्यान न देते हुए उसकी और भी अधिक प्रशंसा नहीं करते?

यहाँ हिंसा शब्दका दुरुपयोग है। हिंसाका अर्थ है किसीको विना उसकी रजामदीके या विना उसे किसी तरहका लाभ पहुँचाये, चोट पहुँचाना। मेरी वावत तो चिकित्सकने मेरे ही हितके लिए, मेरी लिखित रजामन्दीसे मुझे कुछ समयके लिए तकलीफ पहुँचाई थी। पर एक क्रान्तिकारी अपने शिकारको उसके भलेके लिए नही लूटता, वह उसका वध उसके भलेके लिए नही करता—उसे तो वह चोट पहुँचानेके ही काविल समझता है—हाँ, समाजके किसी कल्पित हितके लिए।

सातवाँ प्रश्न इस प्रकार है:

क्या अन्य बलोंकी तरह शारीरिक बल भी जीवनका एक कारगर साधन नहीं है? जिस प्रकार अहिंसाका आश्रय भीरु लोग अपनी भीरुताको छिपानेके लिए ले सकते हैं, उसी तरह क्रूर और निरंकुश शासक हिंसाका भी दुरुपयोग कर सकते हैं। किन्तु इससे यह सावित नहीं होता कि हिंसा खुदमें कोई बुरी चीज है।

शारीरिक वल निस्सन्देह जीवनका एक कारगर साधन है। निरंकुश शासकोंने जरूर ही हिंसाका दुरुपयोग किया है। परन्तु हिंसाकी जो व्याख्या मैंने की है उसमे तो उसके सदुपयोगकी कल्पना भी नही की जा सकती। इससे पहलेवाले सवालके जवावमे इसकी परिभाषाको देखिए।

आठवाँ प्रश्न:

पागलों तथा भयंकर अपराधियोंको, जो समाजको हानि पहुँचाते हैं, आप जेल भेजेंगे; तो क्या आप हमें उन सभ्य अपराधियोंको जो सरकारी अफसरोंके रूपमें काम कर रहे हैं, मारनेके वजाय गिरफ्तार करने तथा हिमालयकी किसी गुफामें ले जाकर कैद रखनेकी इजाजत देंगे?

मैं नही कह सकता कि पागलो और मुजरिमोको, वे खतरनाक हो या मामूली, जेलमें रखना अर्थात् सजा देना ठीक ही है। पागल तो अब भी इस तरह नही रखे जाते। पर हम तेजीसे उस समयके नजदीक पहुँच रहे है जबकि मुजरिमोको भी सजा देनेके खयालसे नही बल्कि उनको अन्तमे सुधारनेके लिए बन्दिगमे, न कि जेलमे, रखा जायेगा। पर हाँ, मै उस सघमे खुशीसे शामिल होऊँगा, जो वाइसराय और हरएक ऐसे असैनिक अग्रेज अथवा हिन्दुस्तानीको, जो जानबूझकर या अनजाने ही आज भारतको निष्प्राण अथवा रक्तहीन बना रहे है, ऐसे जेलोमे भेजनेके लिए कायम होगा, जहाँ उनकी सुख-सुविधाका पूरा ध्यान रखा जायेगा; पर शर्त यह है कि मेरे सामने ऐसी तजवीज पेश की जाये जो हर तरह व्यावहारिक हो। बेशक मै ऐसे सघमे शरीक होनेके लिए तैयार हूँ, लोग चाहे यह भले कहने लगे कि उन्हे इस प्रकार कारावासमे रखना मेरी ही व्याख्याके अनुसार हिंसात्मक कार्य होगा।

नवाँ प्रश्न इस प्रकार है :

इनमें से कौन-सी बात अधिक अमानुषिक और भयंकर है? या यों कहा जाये कि कौन-सी अधिक हिंसात्मक है? ३३ करोड़ मानवकष्ट भोगते रहें, उनकी उन्नतिके सब द्वार बन्द रहे और उनको यों ही सड़ते-गलते मर मिटने दिया जाये या कुछ हजार लोगोंका वध होने दिया जाये? आप किस बातको ज्यादा अच्छा समझेंगे? अधःपतन होते-होते ३३ करोड़ जनताका धीरे-धीरे लोप हो जाना या कुछ सौ लोगोंका संहार कर दिया जाना? हाँ, यह अवश्य सिद्ध करना होगा कि कुछ सौ व्यक्तियोंको मौतके घाट उतार देनसे ३३ करोड़ लोगोंका अधःपतन रुक जायेगा परन्तु यह बात तो तफसीलकी है, उसूलकी नहीं और इस बातका विवेचन आगे चलकर किया जा सकता है कि ऐसा करना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा या नहीं, परन्तु यदि यह साबित कर दिया गया कि कुछ सौ लोगोंको मार डालनेके परिणामस्वरूप ३३ करोड़का अधःपतन रोका जा सकता है तो क्या आप वसी हिंसापर आपत्ति करेंगे?

कोई भी सिद्धान्त, यदि वह पूरी तौरसे अच्छा, कल्याणप्रद न हो तो सिद्धान्त कहलाने योग्य नही है। मै अहिंसाकी दुहाई इसलिए देता हूँ कि मै जानता हूँ कि अकेले उसीकी बदौलत मानवजातिका सर्वश्रेष्ठ हित सधता है — परलोकमे ही नही, इहलोकमे भी। मैं हिंसाके सम्बन्धमे आपत्ति इसलिए करता हूँ कि उसके द्वारा हित होता हुआ दिखाई देता है, परन्तु वह अस्थायी होता है और उससे उत्पन्न होनेवाली बुराई स्थायी होती है। मै नही मानता कि एक-एक करके अग्रेजोका खून कर देनेसे भारतवर्षको किंचिन्मात्र भी लाभ पहुँच सकता है। यदि कोई तमाम अग्रेजोको कल ही मार डाले तो भी करोडो लोग, आजकी तरह ही दुःखी बने रहेगे। मौजूदा हालतके लिए अग्रेजोकी बनिस्बत हमारी जिम्मेवारी ज्यादा है। यदि हम सिर्फ अच्छा-ही-अच्छा करते रहे तो अग्रेज बुरा करनेमे अशक्त हो जायेंगे। इसीलिए मै आन्तरिक सुधारपर निरन्तर जोर देता रहता हूँ।

परन्तु क्रान्तिकारीके सामने तो मै अहिंसाको नैतिकताके सर्वोच्च आधारपर सर्वथा उचित सिद्ध करनेकी कोशिश नही करता बल्कि कार्य-साधकताके निम्नतर

आधारपर ही उचित ठहराता हूँ। मै कहता हूँ कि क्रान्तिकारियोके तरीके भारत-वर्षमे सफल नही हो सकते। यदि खुल्लमखुल्ला लडाई मुमकिन हो तो मै शायद मान सकूँ कि हम हिंसाका पथ ग्रहण करे, जैसा कि दूसरे देशोने किया है और कमसे-कम उन गुणोको ही प्राप्त करे जो रणक्षेत्रमे वीरता दिखानेसे उदय होते है। पर युद्धके द्वारा भारतके स्वराज्यकी प्राप्तिको हम, जहाँतक नजर पहुँचती है, किसी समय भी असम्भव ही मानते है। युद्धके द्वारा हमे चाहे अंग्रेजी शासनतन्त्रकी जगह दूसरा तन्त्र मिल जाये परन्तु वह जनताका स्वराज्य न होगा। स्वराज्यकी तीर्थ-यात्रा परम दुर्गम, महान् कष्टप्रद चढ़ाई है। उसके लिए छोटीसे-छोटी तफसीलपर गौर करना होगा। उसके लिए बहुत बडी सगठनसम्बन्धी योग्यताकी जरूरत है। उसके मानी है, देहातियोकी सेवा करनेके ही उद्देश्यसे देहातमे प्रवेश करना—दूसरे शब्दोमे इसका अर्थ है राष्ट्रीय शिक्षा—जनताकी शिक्षा। इसका अर्थ है जनताके अन्दर राष्ट्रीय चेतना और जागृति उत्पन्न करना। यह स्थिति किसी जादूगरके आमके पेडकी तरह अचानक नही उत्पन्न हो जायेगी। वह तो वट-वृक्षकी तरह बहुत ही धीरे-धीरे, यहाँतक कि उसका बढ़ना शायद दीख ही न पडे, बढेगी। यह करिश्मा खूनी क्रान्ति-के द्वारा सम्भव नही। इस मामलेमे जल्दीसे काम लेना निस्सन्देह कामको बिगाडना है। चरखेकी क्रान्ति ही, जहाँतक कल्पना दौडती है, द्रुततम क्रान्ति है।

दसवाँ और अन्तिम प्रश्न इस प्रकार है॰

जब जीवनके परम स्वार्थका सवाल उपस्थित होता है तब क्या तर्क और युक्ति-को ताकपर नहीं रख दिया जाता? क्या हकीकत यह नहीं है कि थोड़ेसे स्वार्थी, आततायी और हठी लोग तर्क और युक्तिकी बात नहीं सुनते और एक जनसमाज-पर हुकूमत करते है, उसपर जुल्म ढाते है और उसके साथ अन्याय करते रहते है? पाण्डवों तथा आग्रही कौरवोंमें शान्तिपूर्वक मेल करानेमें भगवान श्री कृष्ण भी सफल न हो सके। महाभारत चाहे कोई ऐतिहासिक घटना न हो। कृष्ण चाहे आध्यात्मिक-तामें इतना ज्यादा बढ़े-चढ़े न हों, पर खुद आप भी तो अपने उस न्यायाधीशको इस्तीफा देने और सजाका हुक्म न सुनानेके लिए राजी नही कर सके, हालांकि औरो-की तरह वह भी आपको निरपराध मानता था। ऐसी बातोंमें कोई आत्म-त्यागके द्वारा समझानेसे कहाँतक सफल हो सकता है?

यह बात दु खपूर्ण, पर सच है कि जहाँ स्वार्थका सम्बन्ध आता है, लोग तर्क और युक्तिको ताकपर रख देते है। निरकुश शासक निस्सन्देह बडे दुराग्रही होते है। अग्रेज निरकुश शासकको तो दुराग्रहका अवतार ही समझिए। पर वह सहस्र-मुखी दानव है। वह दुर्दमनीय और अवध्य है। उसे उसीके शस्त्रोसे नही मारा जा सकता, क्योकि हमारे पास उसने ऐसा कोई शस्त्र रहने ही नही दिया है। मेरे पास एक ऐसा अस्त्र है, जो उसके शस्त्रागारमे ढाला नही जाता और जिसे वह चुरा भी नही सकता। उसने अबतक जितने शस्त्रास्त्र बनाये है वह अस्त्र उनसे बढकर है। वह क्या है? वह है अहिंसा। और चरखा उसका प्रतीक है। इसीलिए मैंने उसे देशके सम्मुख पूरे विश्वासके साथ प्रस्तुत किया है। कृष्ण जो-कुछ करना चाहते थे

उसमे, महाभारतकार कहते है, वे असफल हुए ही नही। वे सर्वशक्तिमान थे। उन्हे उनके उच्च पदसे उतारकर यहाँ घसीटना व्यर्थ है। पर यदि उनके विषयमे हम उन्हे निरा मर्त्य मनुष्य समझकर विचार करे तो उनका पलडा हल्का पड़ जायेगा और उन्हे पीछेकी तरफ आसन मिलेगा। 'महाभारत' न तो काल्पनिक है और न जैसा लोगोंका खयाल है इतिहास ही है। वह मानव-आत्माका इतिहास है, जिसमे ईश्वर कृष्णके रूपमे मुख्य पात्र — नायक — है। उस महाकाव्यमे ऐसी कितनी ही बाते है जो मेरी अल्पबुद्धिसे परे है। उसमे कितनी बाते ऐसी है जो स्पष्टत. क्षेपक है। वह रत्नोका खजाना नही है। वह तो एक खान है, जिसके खोदनेकी जरूरत है, जिसमे गहरे पैठनेकी जरूरत है। उसके बाद ही ककड-पत्थर निकालकर अलग कर देनेपर हीरे हाथ आयेंगे। इसलिए जो क्रान्तिका सकल्प ले चुके है या लेने जा रहे हैं अथवा उसकी धारामे कूदनेको तत्पर है, मैं उन मित्रोसे आग्रह करता हूँ कि वे अपने पैर धरतीपर ही जमाये रखे और हिमालयके शिखरोपर उड़ाने न भरे, जहाँ कि 'महाभारत' के कवि अर्जुन तथा दूसरे वीरोको ले गये थे। मै तो हर हालतमे उसपर चढनेकी कोशिश करनेसे भी इनकार करूँगा। मेरे लिए भारतवर्षका मैदान ही काफी है।

अच्छा तो अब मैदानमे उतरकर, प्रश्नकर्ता इस बातको समझ ले कि मै अदालत इसलिए नही गया था कि न्यायाधीशको समझाऊँ कि मै निरपराध हूँ, बल्कि मैं गया था अपनेको पूरा अपराधी कुबूल करने और ज्यादासे-ज्यादा सजा माँगनेके लिएं, क्योकि मैने तो मनुष्य-कृत कानूनको जानबूझ कर तोडा था। न्यायाधीश मुझे निरपराध नही मान सकता था, उसने मुझे वैसा माना भी नही। जेल जानेमे कोई बडी कुर्बानी नही थी। सच्ची कुर्बानी इससे कही कठिन होती है। यह सज्जन अहिंसाके फलितार्थको समझ ले। यह मतपरिवर्तन करानेकी एक विधि है। मुझे इस बातका यकीन हो चुका है। और यह कहनेके लिए क्षमा किया जाऊँ कि मेरी दृढ और अविचल अहिंसाकी भावनाने जितने ज्यादा अंग्रेजोको अपने विचारका कायल किया है, उतने अंग्रेजोको मार डालनेकी सैकडों धमकियाँ और मार डालनेकी घटनाएँ कायल नही कर पाई है। मै कहता हूँ कि जिस दिन भारतमे आम तौरपर विवेकशील अहिंसाका पालन होने लगेगा, स्वराज्य हमसे दूर नही रह जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९२५

७४. टिप्पणियाँ

अभिनन्दन-पत्र देनेवाले ध्यान दें

मैं बार-बार यह कह चुका हूँ कि मुझे दिये जानेवाले अभिनन्दन-पत्रपर जब चौखटा लगा होता है या जब वे कीमती डिब्बेमें रखे जाते हैं तब यात्रामें उनको रखना मुश्किल हो जाता है। फिर भी लोग मुझे भारी-भारी चौखटे और कभी-कभी कीमती मजूषाएँ देते ही जा रहे हैं। जहाँतक बेश कीमती होनेका सम्बन्ध है, कलकत्ता निगम इस बारेमें सबसे ज्यादा गुनहगार है। मुझे वहाँ अभिनन्दन-पत्र माँगकर लाये सोनेके पत्रपर दिया गया था; क्योंकि निगम द्वारा बनवाया गया सोनेका पत्र तब-तक तैयार नही हो पाया था। अब इस यात्रामें देशबन्धुने मुझे वह सुन्दर सुवर्ण-पत्र दिया जिसपर पूरा अभिनन्दन-पत्र अंकित है। इसे पाते ही मुझे हैरानी हुई कि इसे रखूँगा कहाँ? और यही बात उनके बारेमें भी सही थी, हालाँकि वह दिया गया था उनके उसी पुराने भवनमें। जब वे जाने लगे तो वे महादेव देसाईको अलहदा बुलाकर कह गये कि सुवर्ण-पत्र सुरक्षित जगह रखा जाये। सौभाग्यसे सतीश बाबू मुखर्जी मेरे पास थे। मैं उनसे सुवर्ण-पत्रकी बात पहले कह चुका था। उन्होंने उसे अपने जिम्मे ले लिया। यह पत्र भी वही जायेगा जहाँ मुझे प्राप्त दूसरी कीमती चीजें गई है। जिन मित्रोंको मैंने ये सब चीजें सौंपी हैं, वे अभी इस बातका फैसला नही कर पाये है कि वे उन्हें बेचें या किसी अजायबघरमें रखें। जो लोग मुझे अभिनन्दन-पत्र देना चाहते हो, यह जानकर कि मैं बेशकीमती चीजें रख नही सकता, कम खर्चपर तैयार अभिनन्दन-पत्र ही दिया करे तो कितना अच्छा हो। और चौखटे? उनको तो यात्रामें उठाये फिरनेमें बहुत ही असुविधा होती है। बहुतेरे मित्रोंने तो इस बातको समझ लिया है और अब वे खादीपर छपे अभिनन्दन-पत्र देने लगे हैं। मेरी समझमें यह सबसे सीधा-सादा और अच्छा तरीका है। खादी तो मैं अपने साथ चाहे जितनी ले जा सकता हूँ। जितने भी अभिनन्दन-पत्र उसपर छपेंगे उतना ही खादीका प्रसार होगा। अगर खादीके अभिनन्दन-पत्रके साथ भी मजूषा देना जरूरी हो तो मैं भविष्यमें अभिनन्दन-पत्र देनेवालोंका ध्यान फरीदपुरके उदाहरणकी ओर दिलाता हूँ। वहाँ नगरपालिका और जीवशिव मिशनने सस्ती बाँसकी नलियोंमें अभिनन्दन-पत्र रखकर दिये थे। एक नली चितकबरी थी और दूसरीपर चटाई चढ़ाई हुई थी और सिरोंपर चाँदीके सादे ढक्कन लगे थे। ये चाँदीके ढक्कन भी आसानीसे छोड़े जा सकते थे। सादीसे-सादी चीज भी उस जरा-सी कलाके स्पर्शसे सुरूप हो सकती है जिसे हम अपने आसपासके जीवनसे सीख सकते हैं। हिन्दुस्तानमें ग्राम-जीवनका स्तर यद्यपि गिर गया है, तथापि उसमें अब भी इतनी कला और कवित्व है कि हम उसका अनुकरण कर सकते हैं। त्रावणकोरमें तो लोगोंने ताड़के पत्तोंसे खूब काम लिया था। यों तो मैं सभी अभिनन्दन-पत्रोंके बारेमें कलायुक्त सादगी रखनेकी

सलाह दूँगा; परन्तु मुझे दिये जानेवाले अभिनन्दन-पत्रोंके बारेमें तो इसका आग्रह ही करना चाहता हूँ, क्योंकि कीमती और भारी डिब्बे और चौखट अपने पास रखनेकी सुविधा और इच्छा मुझे नहीं है।

औंधी छूतछात

एक पत्र-लेखक लिखता है :

> आपने एक पत्र-प्रेषकके इस प्रश्नका उत्तर दिया है कि स्वयं अछूतोंके बीच प्रचलित छूतछात कैसे मिटाई जा सकती है। मैं इसी प्रकारका दूसरा प्रश्न रखना चाहता हूँ।
>
> कदाचित् आपको मालूम नहीं है कि कुछ अछूत स्वयं सवर्णके छूनेमें अथवा उसके निर्धारित मर्यादासे अधिक निकट जानेमें, अथवा उसके कुएँसे पानी भरनेमें, अथवा उसके मन्दिरमें प्रवेश करनेमें अथवा सवर्णके सम्बन्धमें कोई भी ऐसा कार्य करनेमें, यद्यपि उसके लिए आज्ञा मिल चुकी हो तथा उन्हें निमंत्रित भी किया गया हो, एक तरहका पाप समझते हैं। 'अछूत' सोचता है कि यदि वह कोई भी ऐसा कार्य करेगा तो उससे मर्यादाका उल्लंघन होगा और वह पापका भागी होगा। यह छूतछात सामान्य रूपसे प्रचलित उस छूतछातसे उलटी है जो छोटी जातियोंके खिलाफ ऊँची जातियोंमें (स्पृश्यों और अस्पृश्योंमें) पाई जाती है। यह औंधी अस्पृश्यता है। यह हो सकता है कि इस प्रकारकी अस्पृश्यतामें (जिसके बारेमें कुछ ही लोग जानते हैं, लेकिन जो उतनी ही तीव्र है जितनी कि अन्य प्रकारकी अस्पृश्यता) प्रतिशोधकी भावना न हो, और सवर्ण लोग यह सोचकर प्रसन्न भी हो सकते हैं। फिर भी यह मौजूद तो है ही; 'मैंचेस्टर गार्जियन'के विशेष संवाददाताने भी, जिसने सन् १९२२में आपसे साबरमती जेलमें भेंट की थी[1] तथा भारतका दौरा किया था, गुजरातके आनन्द और बारडोली ताल्लुकोंमें इसे देखा था। समझमें नहीं आता कि आप अस्पृश्यता-निवारणका कार्य करनेवाले कार्यकर्त्ताओंको इस प्रकारकी उलटी अस्पृश्यतासे अछूतोंको मुक्त करनेका क्या उपाय बतायेंगे? क्या अस्पृश्यताकी तरह यह भी एक पाप नहीं है? जिसे हम मर्यादा धर्म कहते हैं, क्या वह ही इस प्रकार हमारे रास्तेमें नहीं आता? क्या कोई सच्चा अछूत, जो इस धर्ममें विश्वास रखता है, डूबते ब्राह्मणको अन्यथा समर्थ होते हुए भी बचा सकता है?

मैं अस्पृश्यताके इस नृशंसतापूर्ण परिणामसे अनभिज्ञ नहीं हूँ, जिसका संवाददाताने उल्लेख किया है। कभी-कभी मैं देखता हूँ कि मेरा स्पर्श करना तो दूर रहा अस्पृश्योंको मेरे पास आनेमें कठिनाई होती है। मैं यह नहीं मानता कि अछूतों द्वारा सवर्णोंको

१. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ ११३-११८।

स्पर्श न करना मूलतः कोई धार्मिक प्रश्न है। वे ऐसा सोच भी नही सकते कि वे उन लोगोको भी छू सकते हैं, जिन्होने उन्हे अबतक अछूत माना है। अधिकाशतः अछूत उन लोगोकी अनुमति होनेपर भी डरके कारण स्पर्श नही करते। यह मामला उस फ्रासीसी कैदीके समान है जो कि वर्षोतक बैसिलके कारागारमे कैद रहनेके बाद छूटनेपर सूर्यके प्रकाशको बर्दाश्त नही कर पाया था। वह अपनी देखनेकी शक्ति लगभग खो बैठा था। लेकिन मैंने बगालमे दिये गये एक सुझावकी बात सुनी थी। वहाँ कथित अछूतोको यह सुझाव दिया था कि उन्हे प्रतिशोधस्वरूप कथित उच्च जातीय हिन्दुओको अछूत समझना चाहिए और उनकी सभी सेवाएँ जो वे अब कर रहे हैं बन्द कर देनी चाहिए तथा उनसे खाना और पानी लेनेसे भी इनकार कर देना चाहिए। मुझे उस दिन बहुत खेद होगा जिस दिन इस प्रकारका प्रतिशोध लिया जायेगा; लेकिन स्वतत्रता तथा मनमानीके इस युगमे, जो आज केवल चर्चाका विषय है, वह कार्यमे परिणत कर दिया जाये और कथित उच्च जातियोके लोग, जिनके भाग्यमे यह बदा है, दण्डके भागी बने तो कोई आश्चर्य की बात न होगी। प्रकृति अन्ततक हमे सुधरनेका मौका देती है तथा यदि हम उसका लाभ नही उठाते हैं तो अन्तमे वह हमे आज्ञा माननेके लिए बाधित कर देती है और उसके साथ सजा भी देती है। यह सजा हमें कमसे-कम परेशान तो करती ही है।

एक पत्र-लेखककी दुविधा[1]

यह है पत्र-लेखककी समस्या। मुझे पता नही कि मैंने जनताके सामने संन्यासीका आदर्श रखा है। मैंने तो भारतके सामने लगातार स्वराज्यका आदर्श रखा है। हाँ, ऐसा करते हुए मैंने सादगीका उपदेश जरूर दिया है। मैंने सदाचारका भी उपदेश किया है। परन्तु सदाचार, सादगी और ऐसे गुण अकेले सन्यासियोकी सम्पत्ति या विशिष्ट अधिकार तो नही हैं। साथ ही मै यह भी कदापि नही मानता कि सन्यासी एकान्तवासी हो और दुनियाकी कुछ भी फिक्र न करे। बल्कि सन्यासी तो वह है जो अपनी चिन्ता न कर, चौबीसो घटे औरोकी फिक्र करे। वह पूर्णतया स्वार्थ भावसे मुक्त होकर भी नि.स्वार्थ कामोमे लगा रहे, जिस तरह ईश्वर अविराम नि स्वार्थ सेवामे लगा रहता है। इसलिए एक सन्यासी तभी सच्चा त्यागी कहा जायेगा जब वह स्वराज्य अपने लिए नही (क्योकि उसे तो वह प्राप्त ही है), बल्कि औरोके लिए प्राप्त करनेकी चिन्ता करे। उसे अपने लिए दुनियामे किसी वस्तुकी आकाक्षा नही रहती। पर इसके यह मानी नही हैं कि वह औरोको दुनियामे अपना स्वत्व पहचानने और प्राप्त करनेमे मदद न दे। यदि प्राचीन कालके सन्यासी समाजके राजनीतिक जीवनकी कोई चिन्ता नही करते थे तो उसका कारण यह है कि उस कालकी समाज-रचना भिन्न प्रकारकी थी, पर आज तो राजनीति जीवनके प्रत्येक अंगको प्रभावित करती है। हम चाहे या न चाहे, सैकड़ो

१. पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है। लेखकने लिखा था: 'मैं आपके लेख और भाषण ध्यानसे पढता हूँ। मुझे उनमें भारी विसंगति दिखाई देती है। एक ओर आप मनुष्यके सामने संन्यासीका आदर्श रखते हैं और दूसरी ओर स्वराज्यके लिए प्रयत्नशील है जिसकी जरूरत सन्यासीको नही। आप इन दोनों विचारोंमें संगति कैसे बैठाते है?'

वातोमे हमारा सम्बन्ध राज्यसे पडता है। हमारे नैतिक जीवनपर राज्यका असर पडता है। इसलिए समाजका सबसे बडा हितैषी और सेवक होनेके कारण सन्यासीका ताल्लुक राजा-प्रजाके बीचके सम्बन्धोसे आये विना नही रह सकता — अर्थात् उसे प्रजाको स्वराज्य प्राप्त करनेका रास्ता दिखाना ही चाहिए। इस तरह विचार करनेपर स्वराज्य किसीके लिए गलत आदर्श नही है। लोकमान्यने देशको, हममें से तुच्छसे-तुच्छको, जो सबसे बडा सत्य सिखाया वह है उनका दिया मन्त्र "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है"। सन्यासी तो स्वय स्वराज्य-प्राप्त होता है, इसलिए उसका रास्ता दिखानेके लिए वही सबसे योग्य है। सन्यासी दुनियामे रहता है, परन्तु वह दुनियादार नही होता। जीवनके तमाम महत्त्वपूर्ण कार्योमे उसका आचरण साधारण मनुष्योके जैसा होता है, सिर्फ उसकी दृष्टि जुदी होती है। हम जिन बातोको रागपूर्वक करते है उन्हे वह वीतराग होकर करता है। वीतराग होनेका प्रयत्न हम सब लोगोके लिए कर्त्तव्य है। निश्चय ही हर व्यक्तिके लिए यह एक उपयुक्त आकाक्षा है।

जानवरोके प्रति निर्दयता

अब चूँकि मैंने अखिल भारतीय गोरक्षा-मण्डलके सचालनका बडा बोझ अपने सिरपर ले लिया है, मेरे पास गोरक्षा विषयक पत्र खूब आने लगे है। उसके फल-स्वरूप मेरा पत्र व्यवहार पहलेसे भी और भारी हो गया है। मै यहाँ एक नमूना देता हूँ [1]

मै कलकत्ताकी सडकोसे होकर बहुधा निकला हूँ। लेखकने गाडियोमें जोते जाने-वाले बैलो, भैंसो तथा घोडोके विषयमे जो-कुछ लिखा है वह बिलकुल सत्य है। लेखकने मालिकोपर जो लाछन लगाये हैं उनमे अतिशयोक्ति नही है, यद्यपि मेरी रायमे मालिक उनसे जान-बूझकर निर्दयताका व्यवहार नही करते, वे सिर्फ लापरवाह है। युक्तिकी बात वे भी मान सकते है जैसे कि माल-ढुलाई करनेवाले और गाडीवान मान लेते हैं। प्रश्न यह है कि उनतक कैसे पहुँचा जाये। नगरपालिकाकी हदमे काममे लाये जानेवाले जानवरोकी हालतकी देखभाल करनेका कार्य सम्बन्धित नगरपालिकाका है। तथापि गैर सरकारी उपकारी सस्थाएँ भी मालिकोको पत्र लिख सकती है और उनसे मुलाकात कर सकती है तथा जहाँ भी शिकायतका कारण हो उसे दूर करनेका अनुरोध कर सकती है। मुझे विश्वास है कि लगातार निगाह रखने तथा सम्बन्धित लोगोसे विचारपूर्ण अनुरोध करनेसे काफी सफलता मिल सकती है।

मुर्गियोके बच्चो तथा टर्कियो हालतकेकी विषयमे मुझे कुछ भी नही मालूम। लेकिन यदि ऐसा अपराध नगरपालिकाके बाजारमे किया जाता है तो निगम आसानीसे उसकी रोकथाम कर सकता है। मनुष्यों द्वारा मूक जीवोके प्रति जो निर्दयता बरती जाती है वह मानवीय शक्तियोके उचित सगठनसे काफी हदतक रोकी जा सकती है। बगाल

१. यहाँ नहीं दिया गया है। बगाल प्रान्तीय महिला परिषद्की ओरसे भेजे गये इस पत्रमें कलकत्तामें पशुओंके प्रति जो निर्दयता बरती जाती है, उसका विस्तृत वर्णन था, और गाधीजीसे इस विषयमें टीका करनेका अनुरोध किया गया था।

प्रान्तीय महिला परिषद् ऐसे मामले, जो उसकी निगाहमे आये, दर्ज करने तथा निगमको अथवा सम्बन्धित मालिकोको सूचित करनेके लिए स्वयसेवक नियुक्त कर सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-५-१९२५

७५. भाषण: दीनाजपुरके अस्पृश्योंके समक्ष[1]

२१ मई, १९२५

गांधीजीने कहा . . . मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि आप अधीर न हों और आप यह सोचकर सन्तोष करें कि आपकी दशा अन्यत्र रहनेवाले आपके भाइयों से कहीं अच्छी है। अगर आप चाहें तो नगरपालिकाको नोटिस दे दें कि अगर आपकी माँगें स्वीकार नहीं की जातीं तो आप सफाईका काम भगवानके भरोसे छोड़कर यहाँसे चले जायेंगे। लेकिन साथ ही आप यह बात भी ध्यानमें रखें कि आप नगरपालिकाके बुलानेपर नहीं, बल्कि अपनी इच्छासे यहाँ आकर बसे थे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९२५

७६. भाषण: दीनाजपुरकी सार्वजनिक सभामें

२१, मई, १९२५

अभिनन्दन-पत्रोंका उत्तर देते हुए गांधीजीने मधुर बंगला[2], हिन्दी, और संस्कृत भाषाओंमें अभिनन्दन-पत्र पानेपर हार्दिक सन्तोष व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि इस सौजन्यके कारण मैं जिलाबोर्ड द्वारा अंग्रेजीमें अभिनन्दन-पत्र दिये जानेकी बात माफ करनेको तैयार हूँ। इसके बाद उन्होंने एकत्रित जन-समुदायके अनुशासनपूर्ण व्यवहार और उनकी इच्छानुसार जो लोगोंने शान्ति बनाये रखी, उसकी सराहना की। उन्होंने सूत कातनेवालोंकी भी तारीफ की। उन्होंने कहा:

अपने बगालके दौरोमें दीनाजपुरके सूत कातनेवालोको देखकर मुझे सबसे ज्यादा खुशी हुई है और उन्हे काम करते देखकर मैं मोहित हुआ हूँ। यह भी एक बड़ा शुभ लक्षण है कि वकील, डाक्टर और समाजके अन्य प्रतिष्ठित लोग संथालो, मेहतरो और अबतक नीची निगाहसे देखे जानवाले अन्य लोगोके साथ बैठकर सूत कातते है।

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

२. स्थानीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष जोगेन्द्रचन्द्र चक्रवर्तीने एक अभिनन्दन-पत्र बंगलामें पढा; इसके बाद तीन और अभिनन्दन-पत्र संस्कृत, हिन्दी, तथा अंग्रेजीमें पढ़े गये।

खद्दर, अस्पृश्यता और हिन्दू-मुस्लिम एकताके त्रिसूत्री कार्यक्रमपर जोर देनेके बाद उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २३-५-१९२५

७७. भाषण : दीनाजपुरके विद्यार्थियोंके समक्ष

२१ मई, १९२५

एक मित्रने मुझसे कहा कि उनके मनमें जब कामविकार उत्पन्न होता है तब वे उसको शान्त करनेके लिए चरखा उठा लेते हैं। एक दूसरे मित्र कहते हैं कि उन्हें जब कभी क्रोध चढ़ता है तब वह चरखा चलानेसे शान्त हो जाता है। इनका अर्थ यह है कि ब्रह्मचर्यकी रक्षाके लिए जिस शान्तिकी आवश्यकता होती है वह चरखेसे मिल जाती है। दो-तीन दिन पहले मुझे दो-एक लड़कोंने कहा, "हमसे चरखा नहीं चलाया जाता; हम तो फाँसीपर चढ़नेके लिए तैयार हैं। आप हमें कोई ऐसा कार्य बतायें जिसका हमपर नशा चढ़ जाये।" मुझे ऐसा लगा कि ये विद्यार्थी ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले नहीं हैं, क्योंकि चरखे-जैसी शान्तिपोषक वस्तु इनको अच्छी नहीं लगती। मुझे तो लगता है कि जीवनको सत्यनिष्ठ निर्मल, शान्त और सेवामय बनानेकी सामग्री चरखेमें निहित है। इसलिए मैं आप सबसे यह अनुरोध करता हूँ कि आप सूत कातनेके रूपमें आधा घंटेका श्रम अवश्य करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-५-१९२५

७८. भेंट : दीनाजपुरके जमींदारसे[1]

२१ मई, १९२५

यह पूछनेपर कि क्या आप अपने बारडोलीके निर्णयको गलत मानते हैं, गांधीजीने जोरदार शब्दोंमें उसका नकारात्मक उत्तर देते हुए कहा :

वह निर्णय मेरे जीवनके सबसे अधिक समझदारीके कार्योंमें से एक है। भावी इतिहासकार मुझे भारतके सबसे अधिक नाजुक समयमें भारतको बचानेवाला मानेंगे। यदि मैंने वह कदम न उठाया होता तो भावी सन्तति मुझे एक राजनीतिक नेताके वेषमें सबसे बड़ा दानव मानती और भारत आगामी कई एक पीढ़ियों तकके लिए अन्धकारमें

१. महाराजाके अतिथिगृहमें हुई इस भेंटमें गांधीजी हिन्दी और अंग्रेजीमें बोले। मूल हिन्दी विवरण उपलब्ध नहीं है।

डूब जाता। आगे बढ रही उस सेनाको पीछे हटनेका हुक्म देनेके लिए अतीव साहसकी जरूरत थी, और मुझे यह बात कहते हुए गर्व होता है कि उस समय मुझमे अनुकूल साहसकी कमी नही पाई गई। वाइसरायको मेरी अन्तिम चेतावनी कोई बडी चीज नही थी, एक बच्चा भी उसपर हस्ताक्षर कर सकता था, लेकिन बारडोली प्रस्तावके लिए सचमुच ही बहादुरो-जैसे साहसकी जरूरत थी। ऐसा लग सकता है कि मै आत्म-प्रशस्ति कर रहा हूँ, लेकिन मै जैसा महसूस करता हूँ, मुझे चाहिए कि वैसा ही मै आपको ईमानदारीसे साफ-साफ बता दूँ।

जैसा कि सर जॉर्ज लायडने[1] स्वयं स्वीकार किया है, आपका कार्यक्रम लगभग सफल हो जानेवाला था। सभी यूरोपीय उस समय बुरी तरह भयभीत थे।

वे भयभीत इसलिए थे कि वे समझे थे कि सविनय अवज्ञाके बजाय उद्धत अवज्ञा होगी। आप तो जानते ही है कि मेरे पास सविनय अवज्ञाका जो शस्त्र है, वह उन्हे जो शस्त्र अवगत है उनसे सर्वथा भिन्न है। उनके पास मेरी शक्ति मापनेका कोई उपाय नही था और इसलिए मेरी कार्यवाहियोसे निपटनेमे वे सर्वथा असहाय थे।

तब फिर रुकनेकी पुकार लगाना क्या भूल नहीं थी, खासकर जब कि आपकी योजना इतनी सफलतापूर्वक चल रही थी?

नही, भाइयो, देश तैयार नही था, जैसा कि चौरी-चौरा काण्डने दिखा दिया। दोष हमारे अपने ही कार्यकर्त्ताओमे था। उद्वेग और पूर्वग्रहोपर उनका काबू नही था, और यदि स्वराज्य स्थापित भी हो जाता तो हमारे आपसके झगडो और मतभेदोके कारण वह एक क्षण भी कायम न रह पाता।

चरखेके सामान्य आर्थिक और राजनीतिक महत्त्वपर जोर देते हुए उन्होंने आगे कहा:

हमारे कार्यकर्त्ताओमे सचाईसे, लगनसे कार्य करनेकी कहाँतक क्षमता है, इसकी भी परीक्षा चरखा है। मुझे पूरा विश्वास है कि इस समय केवल चरखा ही भारत-की मुक्तिका द्वार खोलनेवाली कुजी है।

किन्तु महात्माजी! इसमें सन्देह नहीं है कि बहुमत राष्ट्रीय स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए चरखेकी सामर्थ्य और उपयोगिताको माननेमें आपके साथ नहीं है।

मै इसकी चिन्ता नही करता। यदि इस सवालपर मै अकेला भी होऊँ और सारा भारत मेरे खिलाफ खड़ा हो, तब भी मै सीना तानकर खड़ा रहूँगा। जो लोग मुझसे भिन्न राय रखते है, वे अपने मतानुसार देशकी सेवा कर सकते हैं, लेकिन मैं जितना सम्भव है उतने जोरसे यही बात कहूँगा कि चरखा हमे स्वराज्य दिलायेगा। यह सब आपको कोरी अतिशयोक्ति लग सकता है, लेकिन यह अतिशयोक्ति नहीं है। मेरे लेखे यह एक आम व्यावहारिक बुद्धिकी बात है। जिस तरह एक सगीतज्ञ विश्वासके साथ कह सकता है कि उसके एक विशेष तार छेडनेपर एक निश्चित स्वर निकलेगा, उसी तरह मेरा विश्वास इस समस्याके हलके सम्बन्धमे है।

१. बम्बईके गवर्नर।

इसके बाद महात्माजीको बताया गया कि कट्टर हिन्दू इस बातको ठीक नहीं जानते कि आप अपना अस्पृश्यताका सिद्धान्त कहाँतक ले जाना चाहते हैं। जैसी सीधी-सादी और नपी-तुली भाषामें बोलना उनकी खूबी है, वैसी ही भाषामें उन्होंने कहा:

मैं इसे एक शब्दमे समझाऊँगा। हिन्दुओमे चार वर्ण हैं। मैं पाँचवाँ कोई वर्ण नहीं मानता। मेरा यह विश्वास शास्त्रोके अध्ययनपर आधारित है। तथाकथित अस्पृश्योंके साथ शूद्रों-जैसा बरताव होना चाहिए, उससे घटकर नही। जिन लोगोको शूद्रोके साथ परस्पर खानपानमे कोई आपत्ति नही है, उन्हे अछूतोंसे वैसा ही बरताव करनेमे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए। लेकिन जो लोग शूद्रोके साथ नही खाते, निश्चय ही उनका अछूतोके साथ खानपान भी जरूरी नही है।

किसीने इस बातपर दुःख प्रकट किया कि १९२०–२१ में जैसी हिन्दू-मुस्लिम एकता थी, वह इधर हालमें कम होती जा रही है। महात्माजीने दुःखके साथ जवाब दिया:

यह एकता, एकता कहने योग्य नही थी। यह तो एकताकी दिशामे प्रयत्न-भर था। क्या विश्वकी कोई ताकत मुझसे मेरी पत्नीको अलग कर सकती है? जब दोमे सच्ची अभिन्न-हृदय एकता होगी तो किसी भी तीसरे पक्षकी ओरसे दिया गया कोई भी प्रलोभन या झाँसा उसे अविच्छिन्न नही कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २३-५-१९२५

७९. भाषण : कार्यकर्त्ताओंके स्कूल, बोगूड़ामे[1]

२२ मई, १९२५

मैं आप लोगोसे चरखेके सम्बन्धमें कुछ नही कहूँगा। आप जानते ही हैं कि इस विषयमें अन्य स्थानोपर मै क्या कहता रहा हूँ। अस्तु, मैं अहिंसाके बारेमें आपको कुछ बताऊँगा ताकि आपका विश्वास अहिंसामे दृढ़ हो। ढाकामे एक विद्यार्थीने मुझसे कहा कि चरखा चलानेमे जोशकी कोई गुंजाइश नही है, इसलिए मैं उसे चलानेकी अपेक्षा फाँसीके तख्तेपर अधिक खुशीसे चढ़ूँगा। मुझे इसमे जरा भी सन्देह नहीं है कि उस विद्यार्थीको न तो अहिंसामें विश्वास है और न ब्रह्मचर्यमे ही। चरखा शान्ति और अहिंसाका प्रतीक है और उसीमे मेरी पूरी श्रद्धा है, क्योकि अहिंसा मेरे लिये एक नीति नही है वरन् एक सिद्धान्त, एक धर्म है। मैं अहिंसाको ऐसा क्यों मानता हूँ? इसलिए कि मै जानता हूँ कि ससार जिससे टिका है वह शक्ति हिंसा अथवा विनाशकारी कोई शक्ति नही है। मैं यह जरूर स्वीकार करता हूँ कि संसारमें विनाशकारी शक्ति

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

भी है लेकिन वह अस्थायी है और वह उस सृजनकारी शक्तिके सामने सदा व्यर्थ सिद्ध होती है जो शाश्वत है। यदि विनाशकारी शक्ति अधिक प्रबल होती, तो सभी पवित्र प्रेमसम्बन्ध — माता-पिता और बच्चेके बीच, भाई-बहनोके बीच शिक्षक और शिष्यके बीच, शासको और शासितोके बीच — समाप्त हो जाते। अहिंसा सूर्यके समान है, जिसकी पूजाको हमारे ऋषियोने गायत्रीमे परमेश्वरके प्रतीक-रूपमे चिरस्थायी कर दिया है। जिस प्रकार सूर्य नित्य परिक्रमण करते हुए और अन्धकार, पाप तथा ग्लानिको दूर करते हुए "मनुष्यकी नश्वरताका साक्षी बना रहता है", उसी प्रकार अहिंसाको समझिए। अहिंसा आपको ऐसे प्रेमकी प्रेरणा देती है जिससे बड़े जोग या साहसकी, बात आप सोच भी नही सकते। और इसीलिए इस चरखेमे जो शान्ति और प्रेमका प्रतीक है, ज्यो-ज्यो मै वृद्ध होता जाता हूँ, मेरी आस्था बढती जा रही है। और इसीलिए मै नही समझता कि आपसे बात करते समय मेरा चरखा कातना कोई अनुचित काम है। चरखा घुमाते हुए मै स्वय अपनेसे कह रहा हूँ, "परमात्मा जब कि वह असख्य लोगोको भूखा रखे हुए है, मुझे नित्यकी रोटी क्यो देता है? वह या तो मुझको भी भूखा रखे या फिर मुझे उनकी भूख मिटाने योग्य शक्ति दे।" मै चरखा चलाकर अहिंसा और सत्यका, जो एक ही सिक्केके दो बाजू है, आचरण करता हूँ। अहिंसा मेरा परमेश्वर है और सत्य भी मेरा परमेश्वर है। जब मैं अहिंसापर निगाह उठाता हूँ, सत्य कहता है: "उसे मेरे जरिये प्राप्त करो।" जब मै सत्यकी खोज करता हूँ तो अहिंसा कहती है. "उसे मेरे जरिये प्राप्त करो।"

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१८२५

८०. भाषण: बोगूड़ाकी सार्वजनिक सभामें

२२ मई, १९२५

महात्माजीने अभिनन्दन-पत्रोंका[1] जवाब देते हुए उनके लिए धन्यवाद दिया और आश्वासन दिया कि वे खद्दर सस्ता करने और गरीबोंको मुफ्त चरखे बाँटनेके लिए प्राप्त थैली खादी प्रतिष्ठानको सौंप देंगे। इस सम्बन्धमें महात्माजीने डॉ० प्रफुल्लचन्द्र रायकी, जिनके साथ १९०१से उनके सम्बन्ध थे, प्रशंसा की। महात्माजीने कहा कि स्वर्गीय श्री गोखलेने मेरा परिचय उनसे कराया था और तबसे हमारे पारस्परिक सम्बन्ध दृढ़ होते गये। इसलिए यह मुनासिब ही है कि इस जिलेमें दौरा करना मै अपना सौभाग्य समझूँ, क्योंकि इससे मुझे गरीबोंके लिए डॉ० रायने जो शानदार काम किये और आज भी कर रहे वह याद आ जाते है।

१. यह अभिनन्दन-पत्र नगरपालिका, जिलाबोर्ड और जनताकी ओरसे भेंट किये गये थे।

महात्माजीने यह भी कहा कि दीनाजपुर और बोगूड़ामें पहली बार मैंने अमीर-गरीब, पिता और छोटे लड़के-लड़कियों, अछूतों और ब्राह्मणों आदि सबको साथ-साथ बैठकर देशकी खातिर सूत कातते देखा, जिससे चरखेमें मेरी आस्थाको और भी बल मिला है। उन्होंने कहा कि यह देशके लिए शुभ शकुन है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २४-५-१९२५

८१. भाषण : तलोडामें[1]

२२ मई, १९२५

मैंने बोगूड़ाकी सभामें कहा था कि मेरा वहाँ जाना मेरे लिए तीर्थयात्रा-जैसा था। इस बातको मैं यहाँ फिर दुहराता हूँ। श्री रायके स्वार्थ-त्यागको जितना मैं जानता हूँ उतना कदाचित् आप न जानते हों और जब मुझे यह पता लगा कि वे जिन अनेक कामोंको कर रहे हैं उनमें से एक काम यह भी है, तभी मैंने एक बार यहाँ आनेका निश्चय कर लिया था। इसके अलावा जब मैंने यहाँ आकर यह देखा कि उनके कार्यसे जिन लोगोंको सहायता मिली है, उनमें मुसलमान अधिक हैं तो मेरी प्रसन्नताका और उनके प्रति मेरी श्रद्धाका पार न रहा; क्योंकि यदि हिन्दू मुसलमानोंकी ऐसी सेवा करें और मुसलमान हिन्दुओंकी तो दोनोंमें अपने आप सौहार्द हो जायेगा। मुझे बहुत दुःख है कि इस दुर्लभ दृश्यको देखनेके लिए यहाँ मेरे भाई शौकत अली या मुहम्मद अली नहीं हैं। आज इस समय देशकी स्थिति ऐसी विषम है कि हम कार्यकर्त्ताओंको अपना-अपना काम छोड़कर बाहर निकलना कठिन हो गया है। किन्तु मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मैं जब उन दोनों बन्धुओंको यहाँका समाचार सुनाऊँगा तो उनको बहुत प्रसन्नता होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९२५

1. यहाँ डा० प्रफुल्लचन्द्र राय एक खादी केन्द्र चलाते थे।

८२. पत्र : कल्याणजी मेहताको

ज्येष्ठ सुदी १ [२३ मई, १९२५][1]

भाईश्री कल्याणजी,

आपका पत्र मिल गया। पार्वतीबहनको[2] कहे कि वह मुझे कभी-कभी पत्र लिखें। आशा है आप बारडोलीका कार्य बहुत ध्यानसे कर रहे होगे। मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इस पत्रके साथ चि० रुखीके लिए एक आशीर्वादका पत्र भेज रहा हूँ। आशा है कि विवाहकी रस्ममे सादगी बरती गई होगी और वह निर्विघ्न सम्पन्न हुई होगी। मेरे बंगालके दौरेकी अवधि थोडी बढ गई है।[3] मुझे असम भी जाना होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २६७६) की फोटो-नकलसे।

८३. बंगालका त्याग

बंगालमें शुद्ध त्यागके दृष्टान्त देखकर मैं तो हर्ष-विभोर हो रहा हूँ। एक जमीदारका सारा कुटुम्ब खादीमय है। उस परिवारकी सभी स्त्रियाँ सूत कातती हैं और सभी स्त्री और पुरुष खादी पहनते है। उन्होने अपनी जमीन और अपना घर खादी-प्रतिष्ठानको उपयोगके लिए दे दिये है। प्रतिष्ठानके प्राण सतीश बाबूका त्याग भी ऐसा-वैसा नही। उन्हे डॉ० रायके रसायनके कारखानेसे हर माह १,५०० रु० मिलते थे। उन्हें वहाँ रहनेके लिए बगला भी मिला हुआ था। अधिक माँगते तो अधिक भी मिल सकता था। वे वहाँ रहते हुए भी खादीका काम तो करते ही थे। परन्तु उन्हें इतनेसे सन्तोष नही हुआ। उनके कोमल हृदयने अनुभव किया कि इस तरह दो काम करनेसे दोनोके बिगडनेकी सम्भावना है। वे रसायनके कारखानेके तो प्राण ही थे। उसके लिए यदि वे पूरा समय न देते तो उसे जरूर धक्का लगता। इधर खादीके द्वारा गरीबोकी सेवा होती है। यह काम फुरसतके वक्तमे किया जा सकता था, किन्तु उन्हे उचित नही मालूम हुआ। एक पुरुषका दो पत्नी रखना जिस तरह पाप है उसी तरह एक मनुष्यका दो कामोको अपना प्रिय कार्य बनाना भी अनर्थकारी है। फिर खादीके लिए तो जितना त्याग किया जाये उतना ही कम है। उन्होंने अपने मनमें इस तरह तर्क करके जिस कारखानेको खुद जमाया था, उसीको एक क्षणमे छोड दिया और अब अपने पास जो-कुछ थोडी जमा पूंजी है उसकी आमदसे

१. गांधीजीने बंगालका दौरा १९२५ में किया था, उस वर्ष ज्येष्ठ सुदी १, २३ मईको पड़ी थी।

२. प्रागजी देसाईकी पत्नी।

३. यह ३१ अगस्त, १९२५ तक बढ़ा दिया गया था।

अपना घर-खर्च चलाते और अपना सारा समय खादीके कार्यमें ही लगाते हैं। वे अपने कामकी ग्यारह शाखाएँ खोल चुके हैं। इनमें से पाँच खादी उत्पादक-केन्द्र हैं। वे अभी ऐसी शाखाएँ और भी खोलनेका इरादा कर रहे हैं। इन शाखाओंके मार्फत ५,०६० चरखोंसे सूत काता जा रहा है और ५९७ हाथकरघोंपर खादी बुनी जा रही है।

उनके इस कार्यमें उनकी धर्मपत्नी भी उनके साथ हो गई है। जहाँ रुपयेकी बहुतायत थी वहाँ उन्हें आज तंगीसे काम चलाना पड़ता है, यह बात इस बहनको खलती तो होगी। जहाँ रहनेके लिए अलहदा बंगला था, वहाँ उन्हें आज एक छोटी-सी इमारतके एक छोटे-से हिस्सेसे सन्तोष माननेमें कठिनाई होती होगी, किन्तु ये बहन इन तमाम तकलीफोंको खुशी-खुशी सह रही हैं।

त्यागमें सतीशबाबूका उदाहरण अकेला ही नहीं है। दूसरे अनेक नवयुवक अद्भुत त्याग कर रहे हैं। सतीशबाबूके पास बहुत था और उन्होंने बहुत छोड़ा। फिर भी उन्हें खाने-पीनेकी साँसत नहीं उठानी होती। उन्हें सामान्यतः सोने-बैठनेकी तकलीफ नहीं है, परन्तु सौ नवयुवक ऐसे हैं जिन्हें अधिकसे-अधिक २०) मासिक गुजारेके लिए मिलते हैं। बंगालमें जीवन-यापन कितना कठिन है हमें इसका अन्दाज वहाँकी स्थितियाँ देखे बिना नहीं हो सकता। कहा जा सकता है कि बरसातके दिनोंमें तो उन्हें पानीमें ही रहना पड़ता है। उनके मकान किसी भी समय पानीमें बह जा सकते हैं। एक घरसे दूसरे घर नावमें बैठकर जाना पड़ता है। ऐसे समयमें गन्दगी की तो हद ही नहीं रहती। ये नवयुवक ऐसे कष्ट सहकर राष्ट्रकी सेवा कर रहे हैं। कुछ लोग खादीके काममें लगे हुए हैं और कुछ राष्ट्रीय शालाओंमें। तमाम राष्ट्रीय शालाओंमें चरखा तो जरूर ही चलाया जाता है।

ऐसी हालतमें जायकेदार खाना मिलना तो असम्भव ही होता है। दूध-दही भी हमेशा नहीं मिल सकता। वहाँ सामान्य भोजन दाल-भात होता है। बंगालमें बिलकुल निरामिष भोजन करनेवाले कम ही लोग होते हैं। जो मांसाहार नहीं करते वे भी मछली तो जरूर खाते हैं। इन निर्धन सेवकोंको भी जब और कुछ नहीं मिलता तब मछली तो मिल ही जाती है। मानना चाहिए कि जिसे दूध-दही न मिलता हो उसके लिए यह बहुत बड़ा सहारा है। इससे उनके त्यागकी कीमत कम नहीं होती। उनके मछली खानेकी बात मैंने इसीलिए लिखी है कि उनके कष्टोंका माप करनेमें मुझसे कहीं अत्युक्ति न हो।

ये सब नवयुवक शिक्षित हैं। उनमें से कुछ तो प्राध्यापक थे और बड़े-बड़े वेतन पाते थे। आज उन्हें अपने त्यागपर पश्चात्ताप नहीं होता। वे लोग त्यागमें सुख मानते हैं। इसके बिना ऐसा कठिन त्याग टिक भी नहीं सकता। जब मैं उनके इस त्यागका विचार करता हूँ तब मुझे गुजरातके लोगोंका त्याग नगण्य मालूम होता है। शिक्षित वर्गमें जो त्याग यहाँ देख रहा हूँ उसकी तुलना तो केवल महाराष्ट्रके लोगोंके त्यागके साथ ही की जा सकती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-५-१९२५

८४. टिप्पणियाँ

बहिष्कार हो तो?

एक भाई लिखते है:[1]

इसका जवाब मैं तो एक ही दे सकता हूँ। पच कितना ही जुल्म करे, फिर भी उन्हे अदालतमे न ले जाया जाये। वे जैसी सजा देना चाहे वैसी दे। उस सजाको भोग लेनेसे पचोका गुस्सा ठडा हो जाता है और वे स्वय पश्चात्ताप करते है। फिर, जहाँ पच अन्याय करते हैं, वहाँ तो बहिष्कार स्वागत-योग्य माना जाना चाहिए। जिस जातिमे कन्या-विक्रयका अत्याचार होता हो, जिस जातिमे ढोग हो, जिसके पच सदस्य मासाहार और मद्यपानको तरह देते हो, उस जातिमे रहनेसे फायदा हो ही नही सकता। जाति तो रूढि है, धर्म नही। जातिमे रहकर मनुष्य कुछ सहूलियत पाता है। लेकिन जहाँ जाति नीति-भ्रष्ट हो जाये, वहाँ इन सहूलियतोको मजूर न करना ही अच्छा है। हमने जिस नीतिका आश्रय लेकर सरकारसे असहयोग किया, उसी नीतिको जातिपर लागू करके उससे भी असहयोग किया जा सकता है।

लेकिन यहाँ तो असहकारका सवाल ही नही उठता। यहाँ तो स्वय जाति हमारा बहिष्कार करती है। हमें इसे एक अच्छा मौका मानकर इसका स्वागत करना चाहिए। लेकिन इसे अच्छा मौका वही मान सकता है, जिसने अपना धर्म पाला हो, जातिकी सेवा की हो और जातिकी नीति-वर्धक आज्ञाओको हमेशा खुशीसे माना हो। सयमी ही बहिष्कारका स्वागत कर सकता है। असयमीको तो बहिष्कार दुःखदायी लगेगा। लेकिन अस्पृश्यता-निवारण असंयमीका नही, सयमीका काम है। अस्पृश्यता-निवारण भोगोकी वृद्धिके लिए नही, बल्कि सेवाके अवसर अधिक प्राप्त करनेके लिए है, सेवासे किसीको बहिष्कृत न करनेके लिए है।

देशी राज्य

एक सज्जन यह सवाल[2] करते है। लेखककी बातमें बहुत-कुछ सत्याश है। पर इस सवालका एक दूसरा पहलू भी है। जिस प्रजामें सत्व होता है उसका राजा अन्यायी नही हो सकता। यदि प्रजामे सत्व नही है तो शासनतन्त्र चलानेवाला चाहे राजा हो और चाहे लोक प्रतिनिधिमण्डल हो, दोनों समान है। जो सत्ताका उपयोग करना नही जानता वह उस सत्ताको कायम कैसे रख सकता है? इसीलिए मैंने कहा

१. यहाँ नही दिया गया है। इसमें लेखकने लिखा था, "आजकल कोई-कोई जाति अस्पृश्यता न माननेवालोंको, भले वे कितने ही अच्छे गुणोंवाले हों, जातिसे निकाल देती है, पर शास्त्रोंने जिसे बड़ा भारी पाप माना है उसके बारेमें पच कुछ नहीं करते। ऐसे जालिम पचोंको अदालतमें ले जाया जाये या नही?"

२. यहाँ नही दिया गया है। लेखकने पूछा था कि राजा आज अच्छा और कल बुरा भी हो सकता है, तब क्या राज्य कायम रखने चाहिए?

है कि जैसी प्रजा होती है वैसा राजा होता है। जहाँ-जहाँ मैंने अन्याय होता देखा है, वहाँ-वहाँ प्रजाका दोष अर्थात् प्रजाकी कमजोरी भी देखी है। मैंने प्रजासत्तात्मक राज्यमें भी अन्याय होते देखा है, और उसमें प्रजाकी कमजोरी देखी है। पृथ्वीमें आज ऐसे प्रजासत्तात्मक राज्य मौजूद है, जहाँ मनमानी अन्धाधुन्धी चल रही है और जहाँ हर हाकिम राजा बन कर बैठ गया है।

मैंने यह नही चाहा है कि निरकुश राज्य कायम रहे। अकुश कैसा और कितना होना चाहिए, इसका विचार राजा और प्रजाको कर लेना चाहिए। जहाँ प्रजा जाग्रत है, वहाँ अन्याय असम्भव होता है। जहाँ प्रजा सुप्त है, वहाँ राज्यतन्त्र कैसा भी हो, अन्याय तो रहेगा ही। देशी राज्य निर्मल और पूरी तरह न्यायवान हो सकते हैं। उसके लिए हमारे पास रामराज्यका उदाहरण मौजूद है। आजकलके देशी राज्योमे जो अपूर्णता दिखाई देती है उसका कारण एक ओर प्रजाकी अपूर्णता है और दूसरी ओर अंग्रेजी राज्यतन्त्रकी अपूर्णता। इसलिए देशी राज्योकी अन्धाधुन्धीपर आश्चर्य नही हो सकता। परन्तु इस तरह दोनो अपूर्णताओंका असर होते हुए भी कितने ही देशी राज्योके शासनतत्रका चमक उठना क्या देशी राज्योकी नीतिमत्ताका सूचक नही है? मेरे लिखने और कहनेका आशय सिर्फ इतना ही है कि देशी राज्योमें कोई बात सग्रहणीय नही है और उनको मिटा देना ही उचित है, यह खयाल ठीक नही है। देशी राज्योमे सुधार करनेकी बहुत-कुछ गुजाइश है और वे सुधार करनेसे आदर्श राज्य बन सकते है। मेरे कहनेका यह आशय हरगिज नही है कि जिस हालतमे वे आज है, उसीमे वे बने रहे।

एक जमींदारकी सेवाएँ

चौधरी रघुवीरनारायण सिंह मेरठके जमीदार है। उन्होने असहयोगके दिनोमें जो त्याग किया था, वह अभीतक कायम है। उनका पूरा परिवार खादी-प्रेमी है। उन्होने बेलगाँवमे यह प्रतिज्ञा की थी कि वे अप्रैलसे पहले काग्रेसके ५०० सूत कातनेवाले सदस्य बनायेंगे। उन्होने इस प्रतिज्ञाके सम्बन्धमे लिखा है:[1]

यह सच है कि चौधरीजी सूत कातनेवाले ५०० सदस्य स्वय नही बना सके है। फिर भी उनका उत्साह अनुकरणीय है। यदि बहुत-से धनी लोग इस कार्यमे भाग ले तो सूत कातने और खादी तैयार करनेका काम बहुत तेजीसे चल सकता है।

जैन मुनि और चरखा

जैन मुनि चरखा चला सकते है या नही, इस बारेमे पालीताणामें हुई बातचीतका जो समाचार 'नवजीवन' में छपा था[2], उसके सम्बन्धमे मेरे पास कई पत्र

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने इस बातपर खेद प्रकट किया था कि वे अपने बडे भाईकी बीमारी और मृत्युके कारण अपनी प्रतिज्ञा पूरी नही कर सके है। उन्होंने गाधीजीको विश्वास दिलाया था कि उनका खादीके प्रति प्रेम बना रहेगा। उन्होंने साथ ही इस सम्बन्धमें किये गये अपने कार्यका विवरण भी दिया था।

२. देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ४५७-५९।

आये है। मै इस विषयके विवादमे नही पडूँगा। हाँ, कुछ बातोका स्पष्टीकरण करना उचित होगा। मैने अपनी समझके अनुसार जैन-धर्मग्रन्थोका अध्ययन किया है; किन्तु मै जानता हूँ कि मुझे उन ग्रन्थोकी व्याख्या करनेका कोई अधिकार नही है। मैने बात-चीतमे तो केवल अहिंसा और मुनिभावकी ही व्याख्या की थी। सम्भव है कि मेरी यह व्याख्या जैन-दर्शनके अनुकूल न हो। यदि ऐसा हो तो मुझे उससे खेद ही होगा और मै मान लूँगा कि मेरा मत जैन मतसे विरुद्ध है। किन्तु फिर भी मेरा हृदय और मस्तिष्क जिस बातको स्वीकार करते है उसे कहनेका मुझे अधिकार होना चाहिए। हो सकता है कि इस सम्बन्धमे मुझसे भूल हुई हो। उस हालतमे उसका फल भोगना होगा। किन्तु यदि मुझसे वह भूल अज्ञानमे हुई हो तो मै उसे अनुभव करते ही अवश्य सुधार लूँगा। मै अहिंसा और मुनिभावकी व्याख्या करता हूँ, इससे किसी जैनको या अन्य भाईको अपने मनमे दु ख नही मानना चाहिए। जहाँ किसीका मन दु खी करनेका तनिक भी आशय न हो वहाँ उसे दु ख क्यो मानना चाहिए? यदि कोई हमारी व्याख्यासे सहमत न हो और हमे अपनी व्याख्याकी यथार्थताका निश्चय हो तो हम उसे मूर्ख भले ही माने, किन्तु हमे उससे दु खी तो अवश्य ही नही होना चाहिए।

इतने स्पष्टीकरणके बाद मैं नम्रतापूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि इस समय तो मुनियोके लिए भी लोक-कल्याणार्थ चरखा चलाना धर्म है। उन्हे जैसे लोक-कल्याणार्थ खाने-पीनेका अधिकार है, वैसे ही चरखा चलाना उनका कर्त्तव्य है। मेरी अल्पमतिके अनुसार तो यदि कोई मुनि किसी ऐसी प्रवृत्तिसे, जिससे एक भी जीवकी रक्षा होती हो, जान-बूझकर दूर रहता है तो वह मुनि नही कहा जा सकता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-५-१९२५

८५. फिजूलखर्ची

मेरे सामने एक लम्बा पत्र पडा है। उसमे वर्तमान आन्दोलनकी और उसके कार्यकर्त्ताओकी सम्यक् और शिष्ट आलोचना की गई है। उसमे से जानने योग्य बाते नीचे देता हूँ।[1]

पच्चीस पृष्ठोके इस पत्रका यह सार मैने लगभग लेखकके शब्दोमे ही दे दिया है। लेखक विवेकशील है और उन्होने सद्भावसे पत्र लिखा है। उनके लगाये हुए कुछ आरोपोके बारेमे मुझे कुछ भी मालूम नही है। फिर भी मेरा यह अनुभव अवश्य है कि सार्वजनिक धनका बहुत अपव्यय किया जाता है। मैने प्रसग आनेपर

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रलेखकने इसमें कार्यकर्त्ताओंकी आरामतलबी और विदेशी वस्त्रके मोहकी शिकायत की थी और गांधीजीका ध्यान इस बातकी ओर खींचा था कि वे जब-कभी आते है तब उनपर फिजूल खर्च किया जाता है।

इसकी आलोचना भी की है। मुझे कई बार मालूम हुआ है कि कार्यकर्त्ताओंकी सुख-सुविधाके लिए आवश्यकतासे अधिक रुपया खर्च किया गया है। अब तो इसमे बहुत कमी हो गई है, परन्तु मुझे कबूल करना चाहिए कि अभी और सुधार करना आवश्यक है। मामूली जाने-आनेमें भी गाडी-भाडेपर रुपया खर्च किया जाता है, यह बात कुछ हदतक सच है। हम तो अब सिर्फ दरिद्रोकी सेवा करना चाहते है— उनके प्रतिनिधि बनना चाहते है। इसलिए, मेरे मनमे जरा भी शक नही कि हमें अपने जीवनमें और भी अधिक सादगी लानेकी जरूरत है। जहाँ पैदल जा सकते है वहाँ गाड़ीका उपयोग नही किया जाना चाहिए। कार्यकर्त्ताओको मेहमानदारीकी जरूरत नही होनी चाहिए। कार्यकर्त्ता दावते खानेके लिए नही, सेवा करनेके लिए इकट्ठे होते हैं।

मेरी समझमे यह नही आया कि स्त्रियोके ससर्गके उल्लेखसे उनका सकेत किस बातकी ओर है। सारे पत्रको पढनेपर भी यह बात स्पष्ट नही हुई। परन्तु लेखककी की हुई तुलनासे कुछ अनुमान होता है। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि ससर्गके उद्देश्यसे किया गया ससर्ग पाप है और त्याज्य है। ऐसे ससर्गकी खोजमें रहनेवाले कार्यकर्त्ताओसे राष्ट्रकी कुछ भी सेवा नही होगी। परन्तु सेवाके लिए किया गया स्त्री-ससर्ग अनिवार्य है, अत. स्वीकार्य है। हमने स्त्रियोको बहुत दबाकर रखा है। स्त्रियोका स्त्रीत्व समाप्त हो गया है। देश-सेवाके निमित्त स्त्रीको बाहर निकलनेका अधिकार है और यह उसका धर्म है। स्त्रियाँ हमारी हलचलोमे ज्यो-ज्यो ज्यादा हिस्सा लेती जायेगी हम त्यो-त्यो स्त्रियो और पुरुषोको एक ही सभा-समाजोमें अधिकाधिक देखेंगे। मुझे यह स्थिति उचित मालूम होती है।

वह ब्रह्मचर्य ब्रह्मचर्य नही और वह सयम सयम नही जिसका पालन वनमें रहकर ही किया जा सकता हो। कितने ही लोगोके लिए वन-सेवन अभीष्ट है। ऐसा एकान्तवास थोड़ा-बहुत सबके लिए लाभदायक है। पर वह है विचार-वृद्धिके लिए, आत्मज्ञान प्राप्त करनेके लिए, अपनेको सुरक्षित रखनेके लिए कदापि नही। ससारके सामान्य व्यवहारोमें रहते हुए भी जो अलिप्त रहता है, वही सयमी है, वही सुरक्षित है।

प्राचीन समयमे जो बन्धन लगाये गये थे वे उस समयके लिए भले ही अनुकूल रहे हो; परन्तु हम इस जमानेमे तो देखते हैं कि यूरोपके लोगोमें बहुतसे स्त्री-पुरुष आपसमे बहुत आजादीसे रहते हुए भी अपने सदाचारकी और अपनी पवित्रताकी रक्षा करते है। यदि कोई यह मानता हो कि यूरोपमे पवित्रताकी रक्षा करना असम्भव है तो वह उसका निरा अज्ञान है। हाँ, यह सच है कि यूरोपमें हमारे लिए पवित्रताकी रक्षा करना जरूर मुश्किल है। इसका कारण यूरोपकी स्त्रियोकी स्वतन्त्रता नही है, बल्कि यूरोपीय लोगोकी, भोगको भी एक प्रकारका धर्म मान लेनेकी प्रवृत्ति है। फिर यूरोपमें जिस तरहकी स्वतन्त्रता है हम उसके अभ्यस्त नही हैं।

यूरोपका उदाहरण हमारे लिए एक हदतक ही उपयोगी है। उसका पूरा अनुकरण भयावह है। इस दृष्टान्तके देनेका हेतु, यह बताना है कि यह विचार हर समय और हर जगहके लिए सत्य नही है कि स्त्रियोसे मिलना-जुलना सर्वथा त्याज्य है और सयमीके लिए पापरूप है।

हमारी सभ्यतामे जिस सुधारकी जरूरत होगी वह सुधार अपने वातावरणपर विचार करके करना पड़ेगा। एक ओर हमे स्त्री-समाजका सुधार करना है, और दूसरी ओर इस बातकी सावधानी रखनी है कि उससे सक्रान्ति कालमे अनर्थ न हो। कुछ हदतक हमें जोखिम भी उठानी पड़ेगी। मेरे पास ऐसी शिकायते आई हैं कि एक-दो जगह ऐसा अनर्थ हो रहा है। मै उसकी जॉच भरसक कर रहा हूँ।

मेरी मतिके अनुसार पवित्रताको सुरक्षित रखनेके लिए यह इप्ट है कि स्त्री-पुरुष किसी भी समय कही भी एकान्तमे न मिले। जहाँ सम्बन्ध पवित्र है वहाँ एकान्तमे मिलनेकी आवश्यकता नही है। हमे अपनी शिक्षा-दीक्षामें, अपनी बोल-चालमे, अपने खान-पानमे और अपनी आदतोमे सुधार करनेकी आवश्यकता है। शास्त्रोमें कितने ही निर्देश उस समयके लिए थे। इस समय उनका विचार-मात्र भयकर मालूम होता है। स्त्रियोकी ओर देखना पाप ठहराया गया है। इससे तो ऐसा लगने लगा है मानो हम स्त्रीको शुद्धभावसे देख ही नही सकते। पुत्र मांके दर्शनसे पवित्र होता है। भाई-बहनकी ओर निर्दोष भावसे देखें तो उसमें पाप हो ही नही सकता। पाप मनकी स्थितिपर निर्भर है। जो पुरुष विकार रहित होकर स्त्रीकी ओर नही देख सकता उसे तो अपनी आँखे ही फोड़ लेनी चाहिए अथवा उसे मनके विकार रहित न होने तक अवश्य ही जगलमे वास करना चाहिए। जो पुरुप अकारण ही स्त्रीकी ओर ताकता है वह विकार रहित होनेका दावा करे तो पाखण्डी है। इसके विपरीत प्रसग आने-पर जो स्त्रीकी ओर देखते हुए डरता है, उसे अपनी भीरुता दूर करनी चाहिए। अपरिचित स्त्रीकी ओर देखना पाप समझा जा सकता है; परन्तु इस सम्बन्धमे कोई एक नियम नही हो सकता। कितने ही बन्धन क्यो न लगाये, फिर भी विकारी मनुष्यका मन तो मलिनता खोजेगा ही और अवसर हाथ आते ही अन्तमे वह मान-सिक पाप भी करेगा। शुद्ध मन अपने सम्मुख आये अकल्पित प्रलोभनोको पार कर जायेगा और सर्वथा शुद्ध बना रहेगा।

अन्तमें सयमी लोगोको उचित है कि वे लेखकके सुझावोको सरल भावसे अपने हृदयमे स्थान दे, सावधान रहे और अपने सेवाधर्मका पालन करे।

परन्तु पूर्वोक्त लेखके सबसे महत्त्वपूर्ण भागका सम्बन्ध तो मुझसे है। मै समझता हूँ कि लेखककी सारी टीका सच्ची है। मेरे नामपर किये जानेवाले तमाम खर्चका जिम्मेदार मै ही हूँ; इसमे कोई शक नही। मै बहुत बार अनुभव करता हूँ कि मेरे लिए किया गया बहुत-सा खर्च नाहक होता है। मैने इस बारेमे अनेक सज्जनोसे मीठी तकरार की है। मै बहुत बार तो अपनी जरूरतोके विषयमे पहलेसे पत्र लिख देता हूँ। ऐसा होते हुए भी अतिशय प्रेम अपनी अतिशयताको नही छोड़ता। लोग उसके कारण कुछ-न-कुछ बहाना निकालकर खर्च करते है। यह सब रोकनेका प्रयत्न करनेपर भी सदा रोका नही जा सकता। हो सकता है कि इसमे मेरी कमजोरी भी हो। सम्भव है कि मेरे मनको ऐसे भोग दरकार हों, जिन्हे मै पहचान न सका होऊँ। महात्मा तो मै कहने-भरका हूँ—परन्तु वास्तवमे अल्पात्मा हूँ। ऐसा न होता तो मित्रवर्गके मनको दुखाकर उनसे इस अतिशयताका सर्वथा त्याग क्यों न

कराऊँ? आशा है वह दिन भी आयेगा ही। मैंने अपने जीवनमे ऐसा बहुत किया है। यहाँ तो मै अपना दोष स्वीकार करके उसे कुछ हलका कर रहा हूँ और लेखकको यकीन दिलाता हूँ कि उनके इस पत्रसे मै अधिक सावधान हुआ हूँ और आगे भी सावधान रहूँगा।

मुझे एक बातके सम्बन्धमे अपना बचाव अवश्य करना पडेगा। वह है शौचादिकी सुविधा। मैंने आजसे पैंतीस साल पहले यह बात सीख ली थी कि शौचका स्थान भी उतना ही साफ-सुथरा रहना चाहिए जितना सोने-बैठनेका स्थान। मैंने यह बात पश्चिमसे सीखी है। मै मानता हूँ कि शौचके बहुत-से नियमोका सूक्ष्म पालन जैसा पश्चिममे होता है, वैसा पूर्वमे नही। पश्चिमके शौचादिके नियमोमे कुछ अपूर्णता है जो आसानीसे दूर की जा सकती है। हमारे अनेक रोगोका कारण हमारे पाखानोकी दशा और हमारी जहाँ-तहाँ मल-मूत्र डाल देनेकी कुटेव है। अत मैंने शौचादिके लिए स्वच्छ स्थान और स्वच्छ बरतनोकी आवश्यकता मानकर उन्हीका व्यवहार करनेकी आदत डाल ली है और मैं चाहता हूँ कि सब लोग ऐसा ही करे। यह आदत अब इस हदतक पुख्ता हो गई है कि मै इसे बदलना भी चाहूँ तो भी यह बदल नही सकती और इसे बदलनेकी मेरी इच्छा भी नही होती। इसकी व्यवस्था करनेके लिए कुछ उद्योग करना होता है और उसका भार मेरे यजमानोपर पडता है। परन्तु उसके लिए बम्बईसे कमोड मँगवाना तो अनर्थ ही है। एकान्तमे जमीन कच्ची हो तो वहाँ एक गड्ढा खुदवा देना और उसके पास कुछ सीढियाँ बनवा देना मेरे लिए काफी होता है। यह स्थान मेरे सोनेकी जगहके नजदीक होना चाहिए। शहरोमे तो यह सुविधा कमोडसे ही हो सकती है, इसलिए बहुत-से मित्र कमोडकी व्यवस्था कर देते हैं। परन्तु वह कमोड बम्बईका ही बना हो यह जरूरी नही। उसे कोई भी बढई आसानीसे बना सकता है। आधा कनस्तर उसमे रखे जानेवाले बरतनका काम दे सकता है। सफाई रखनेके लिए दूसरी बहुत-सी बाते भी सुझाई जा सकती है।

इस व्यवस्थामे एक भी विदेशी वस्तुकी आवश्यकता नही है। खादीमे यह बात तो निहित है ही कि दूसरी वस्तुएँ भी जहाँतक सम्भव हो, स्वदेशी इस्तेमाल की जाये। यह न समझ लेना चाहिए कि खादी पहन ली तो हमे इससे दूसरी विदेशी चीजे इस्तेमाल करनेका परवाना मिल गया। पर खादीका यह अर्थ भी नही कि किसी चीजसे केवल विदेशी होनेके कारण ही उससे घृणा की जाये। खादीका अर्थ सग्राहक है, नाशक नही। सग्रह करते हुए जो नाश हो वह अनिवार्य है। इसलिए केवल आवश्यक वस्तुओका सग्रह ही क्षम्य है। कपडेके बिना काम नही चल सकता। हिन्दुस्तानमे कपडा सहज ही तैयार किया जा सकता है। कपडेका धन्धा हिन्दुस्तानके करोडो लोगोको रोजी देता है। सो खादी उनकी रोजीके खयालसे सग्रह-रूप अर्थात् अपनाने योग्य है। इसलिए खादी पहनना धर्म है और विदेशी वस्त्र तथा उस हद तक देशी मिलका कपड़ा पहनना भी अधर्म है। परन्तु पश्चिमसे आनेवाली 'आयोडीन' नामक दवा हिन्दुस्तानमें नही बनती तथापि वह आवश्यक है, इसलिए वह विदेशी होते हुए भी ग्राह्य है। परन्तु जो अपनी सुख-सुविधामे वृद्धिकी ही दृष्टिसे विदेशी

और स्वदेशी वस्तुओका भी उपयोग करते हैं वे सेवक अधर्माचरण करते है। देश-सेवक तो ऐसा कर ही नही सकते। इस कारण वम्बईसे मायावतीमे स्वादके लिए वम्बईके आम ले जाना सेवकके लिए तो अधर्म ही है। जहाँ एक रुपयेसे काम चल सकता है वहाँ दो खर्च करना स्पष्टतः चोरी है।

इस कारण मैंने जो वात कई वार अपने मित्रोको सूचित की है वही यहाँ भी लिख देता हूँ। मेरे लिए नीचे लिखी चीजोसे ज्यादा चीजोका इन्तजाम करनेवाले न मेरा हित देखते है, न लोगोका और न अपना।

मुझे शौचके लिए उतनी ही स्वच्छ जगह चाहिए जितनी स्वच्छ सोनेके लिए हो।

सोने-वैठनेका इन्तजाम साफ जगह और साफ हवामे हो तो काफी है। खाटकी जरूरत नही। मेरे सोने-विछोनेके कपडे मेरे साथ ही रहते हैं। इसलिए मुझे गद्दे या रजाईकी जरूरत नही पड़ती।

खानेके लिए रोज १॥ सेरके लगभग वकरीका दूध हो तो काफी है। दो नीवू भी चाहिए। अपने लिए आवश्यक फल आदि मैं अपने साथ रखता हूँ। मेरे लिए वकरीके घीकी जरूरत नही। मुझे यात्रामें जरूरत हो तो मैं वकरीके दूधकी चीजे वनवाकर अपने साथ रखता हूँ। मैं वहुत ज्यादा खर्च करके बकरीके दूधसे घी बनवाना महापाप मानता हूँ।

मेरी सुविधाके लिए मोटरकी जरूरत नही। हाँ, समयकी वचतकी दृष्टिसे उसका उपयोग अवश्य किया जा सकता है।

मेरे लिए पहले दरजेके डिब्वेकी बिलकुल ही जरूरत नही है। हाँ, फिलहाल, मुझे अकेलेके लिए, दूसरे दरजेकी जरूरत बेशक है। परन्तु मेरे साथियो और मित्रोको तीसरे दरजेका इन्तजाम ही काफी होता है। मेरे साथ अपने खर्चसे कभी-कभी कोई भाई-बहन यात्रा करते हैं। वे अपनी जगहका इन्तजाम खुद ही कर लेते हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २४-५-१९२५

८६. सन्देश : 'फॉरवर्ड' को

२५ मई, १९२५

चरखेके साथ आगे वढ़ो। क्योकि मैं जानता हूँ कि यह स्वराज्यवादियोको शक्ति प्रदान कर सकता है। 'फॉरवर्ड' के पाठकगण प्रत्येक घरमें चरखा . . . .[1] और फलस्वरूप सुभाषचन्द्र वोस शीघ्र ही हमारे बीच होगे।

मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ८०४९) की फोटो-नकलसे।

१. यहाँ साधन-सूत्रमें कुछ शब्द अस्पष्ट है।

८७. पत्र : न० चि० केलकरको

२५ मई, १९२५

प्रिय श्री केलकर,

आपका पत्र मिला। निश्चय ही जबतक हमारे पास विचारार्थ विषयोका स्पष्ट निर्देश करनेवाला माकूल दस्तावेज न हो, हमे मध्यस्थता नही शुरू करनी चाहिए। सम्बन्धित पक्ष इस बातको जानते हैं कि मैंने शुरूसे ही इस तरहका आग्रह रखा है। मैंने यह भी शर्त रखी है कि वे मुझपर समयकी पाबन्दी नही लगायेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ३११४) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : काशीनाथ न० केलकर

८८. टिप्पणियाँ

ताजा विवरण

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा कांग्रेस सदस्योके सम्बन्धमे दिये गये ताजे विवरण इस प्रकार हैं :

	प्रदेश	पिछला महीना		चालू महीना		कुल
		क	ख	क	ख	
१.	अजमेर	२	१५	—	—	१७
२.	आन्ध्र	—	—	—	—	१,९६५
३.	असम	११३	१	—	—	११४
४.	बिहार	७१८	२६१	—	—	९७९+
५.	बंगाल	३५४	१,९१९	—	—	२,२७३
६.	बरार	—	—	६	२०	२६*
७.	बर्मा	४२	२८	३३	२८	६१
८.	म०प्र० (हिन्दी)	—	—	—	—	५००
९.	म०प्र० (मराठी)	८०	५२	—	—	१३२
१०.	बम्बई	२३१	१३३	२४२	२०१	४४३
११.	दिल्ली	८३	६२	२४३	६४७	८९०
१२.	गुजरात	२,०९५	१०१	—	—	२,१९६

१३.	कर्नाटक	३७६	३४४	—	—	७२०
१४.	केरल	—	—	—	—	—φ
१५.	महाराष्ट्र	४०८	२९२	—	—	७००
१६.	पजाब	५०	५७४	५०	७५४	८०४‡
१७.	सिन्ध	७३	१९२	१०७	२३४	३४१
१८.	तमिलनाड	—	—	—	लगभग	१,४००
१९.	उत्तरप्रदेश	२३७	४६७	—	—	१,४८४†
२०.	उत्कल	—	—	—	—	३१०×
		४,८६२	४,४४१	६८१	१,८८४	१५,३५५

+ ख वर्गमे से १०३ ने परिवारके सदस्यो द्वारा कता हुआ सूत भेजा।
* ४ जिलोमे से ३ के आँकडे प्राप्त नही हुए।
φ मार्चकी भी कोई सूचना नही मिली।
‡ यह ज्ञात नही कि इनमे से कितनोने वास्तवमे चन्दा दिया।
† ७८० सदस्य अवर्गीकृत है।
× इनमे से केवल ११६ सदस्योने अप्रैलका चन्दा अप्रैलके मध्यतक दिया है।

ये अक उन लोगोके लिए, जो नये मताधिकारको मानते है या जो काग्रेसको एक कार्यक्षम और कारगर तौरपर काम करनेवाली सस्था बनाना चाहते है, दिलचस्प और मनन करने योग्य है। नागपुर अधिवेशनमे केरल नया प्रान्त बनाया गया था। उससे बहुत काम करने और भारी त्याग दिखानेकी उम्मीद थी, परन्तु आज तो उसने काग्रेसकी पुकार मानो सुनी ही नही है। उसने अ० भा० कांग्रेस कमेटीको कैफियततक देनेकी कृपा नही की। हाँ, वाइकोमके सत्याग्रहका श्रेय उसे अवश्य प्राप्त है, परन्तु कोई भी व्यक्ति या सस्था अपनी पिछली जमा पूँजीपर जीवित नही रह सकती। जो अपनी जमा पूँजीको बढाता नही, वह तो जो है, उसे भी खो बैठता है। मध्य प्रान्त (हिन्दी-भाषी) भी एक नया प्रान्त है। अबतक यह अपनी दिलेरीके लिए मशहूर रहा है। पर वह एक गोलमोल सख्या भेजकर सन्तोष मान रहा है। मुझे इस ५००की सख्यापर भी सन्देह होता है। संख्या ४९९ या ५०१ क्यो नही है? उसमे वर्गीकरण भी नही किया गया है। इसका मतलब समझानेके लिए कैफियत देनेकी जरूरत है। क्या सख्या ५००से अधिक बढी ही नही? क्या किसीने नागा किया ही नही? क्या ये सबके-सब खुद कातनेवाले है? उन्होने औरोका काता सूत तो नही दिया है? यदि उन्होने दूसरोका काता सूत नही भेजा है तो फिर उन्होने अपना चन्दा किस तरह भेजा है? क्या प्रान्तीय कमेटीने खुद ही सूत खरीदनेका भार अपने जिम्मे ले लिया है जिससे सदस्योको सूत खरीदने और उसकी जाँच करनेकी तकलीफ न उठानी पड़े? यदि काग्रेसने यह काम अपने जिम्मे ले लिया हो तो उसने ऐसा किन शर्तोपर किया है? ये सवाल है जिनका उत्तर पानेके लिए सब इच्छुक है। आन्ध्रकी संख्या उसकी पुरानी कीर्तिके बिलकुल योग्य नही है। मेरे खयालसे इसका

कारण यह है कि वह आन्तरिक झगडोसे छिन्नभिन्न हो रहा है और इससे उसकी प्रगतिकी शक्ति कुण्ठित हो गई है। तमिलनाडका भी यही हाल है। यदि वह अपने ब्राह्मण-अब्राह्मणके चिरन्तन विवादका निपटारा कर सके तो वह आसानीसे इससे भी अधिक अच्छा काम कर सकता है। परन्तु यह स्थिति मुझे विचलित नही कर सकती। मैं पुराना पापी हूँ, बहुत धीरे-धीरे सुधरता हूँ। मैंने जो यह निराशाजनक चित्र खीचा है उससे मुझे नये मताधिकारको बदलनेकी नही बल्कि उसपर दृढ़ रहनेकी, उसे कमजोर बनानेकी नही, बल्कि उसके मुख्य प्रयोजनको पुष्ट करनेकी जरूरत दिखाई देती है। मै काग्रेसको एक ऐसी सच्ची राष्ट्रीय सस्था, जो राष्ट्रकी आवश्यकताओकी पूर्ति करनेवाली हो, जनसाधारणकी प्रतिनिधि हो, और दिये समयपर निर्धारित काम करनेवाली, तबतक नही बना सकता जबतक उसके सदस्योमे तन्त्रनिष्ठा न हो, उसके हर विभागमे सहयोग न हो, और उसके हर सदस्यमें जिम्मेदारीका खयाल न हो। ये १५,००० सदस्य राष्ट्रकी उद्देश्य-सिद्धिके प्रयोजनके लिए जरूरतसे ज्यादा हैं बशर्ते कि वे अपने अकीदेके सच्चे हो और अपनी अगीकृत तमाम शर्तोका पालन करते हो। अपनी इस सतत यात्राके सिलसिलेमे जो मैंने अपने ऊपर ले ली है, मैंने जो-कुछ देखा है और देख रहा हूँ उससे मुझे इस बातका यकीन हो गया है कि काग्रेसको मुख्यत. स्वय सूत कातनेवालोका सघ बनानेकी आवश्यकता है। राष्ट्रके जीवनमे जो काहिली घुस गई है उसे उससे मुक्त करनेके लिए इससे बढकर सरल और सीधा और कोई तरीका नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

८९. किसानोंकी पुकार

जैसे-जैसे समय बीतता है, मेरा बगालका दौरा और उसमे मुझे जो मानपत्र भेट किये जा रहे हैं वे अधिकाधिक कामकाजी होते जा रहे हैं। उनमे अब मेरी तथा मेरे कामकी तारीफ नही रहती, बल्कि कुछ शिक्षाप्रद तथा मूल्यवान जानकारी दी जाती है। इस प्रकारका एक मानपत्र टिपराके किसान-सघकी ओरसे दिया गया था। उसके सारगर्भित वाक्य देखिए।[1]

मैं पाठकोको विश्वास दिला दूँ कि मैंने इसमे से केवल औपचारिक प्रारम्भिक अनुच्छेद तथा अन्तके एक वाक्यवाले सक्षिप्त परिच्छेद तथा बेकारकी उपाधियोंसे युक्त आधे वाक्याशको ही छोडा है। मै यह माननेको तैयार हूँ कि पूर्ववर्ती विवरणमे अति-शयोक्ति है। लेकिन मैं यह कहे बगैर नही रह सकता कि यह कुल मिलाकर किसा-

१. यहाँ नहीं दिया गया है। मानपत्रमें कम मजदूरी, कम काम, उपजके अनौचित्यपूर्ण नीचे भाव, पीनेके पानीकी कमी और मुकदमेबाजी वगैराकी वजहसे टिपराके अन्न और पटसन उत्पादक किसानोंकी दुर्दशाका वर्णन किया गया था और उन्हें राहत दिलानेका अनुरोध किया गया था।

नोके अपने दृष्टिकोणसे उनकी स्थितिका एक उचित विवरण है। उस विवरणमे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग वह है जिसमे छ: महीनेकी बेकारीका उल्लेख है। यह देशके अन्य भागोके समान ही है। बहुत-से लोग अपने बेहद छोटे खेतोमे छ. महीने काम करते हैं और छ: महीने अपने घरोसे दूर कारखानोमे मजदूरी करते है। ध्यानसे पढनेवाला पाठक यह अनुभव करेगा कि यह बेकारी स्वभावत उनके दु.खोकी कहानीमे प्रथम स्थानपर आती है। यह मुख्यत: उनकी ऊपर बताई गई अन्य कठिनाइयोका भी कारण है। यदि उनको घरमें ही पूरे सालके लिए लगातार काम होता तो फिर उन्हे साहूकारकी शरण न लेनी पड़ती। यदि वे सकटमे काम चलानेके लिए कुछ भी बचा सकते तो उन्हे अपना पटसन दूसरोकी मर्जीके मुताबिक नीचे मूल्योपर न बेचना पडता। छ. महीने उद्योगरत रहनेसे वे अपने जीवनमे क्रान्ति ला सकते हैं।

लेकिन उनका कहना है कि वे सूत कातना नही जानते। वे चाहते है कि मैं काग्रेस कार्यकर्त्ताओको इस बातकी ओर ध्यान देनेके लिए कह दूँ। काश! मैं काग्रेस कार्यकर्त्ताओमे चरखेके प्रति अपने-जैसा विश्वास तथा उत्साह भर सकता। निश्चय ही उन्हे जनताके प्रतिनिधि होनेके नाते देशमें घूम-फिरकर चरखेका सन्देश देना चाहिए। उन्हे देशवासियोको यह सन्देश देते हुए तथा कातनेके लिए प्रेरित करते हुए उनके विषयमे स्वत: ही बहुत-सी बाते मालूम हो जायेगी तथा वे उनके दु ख और सुख सभीमे शामिल हो सकेगे। काग्रेसी ग्रामोपर टिड्डी दलकी तरह धावा नही कर सकते; बल्कि उन्हे ग्रामवासियोके पास उनकी आवश्यकताओको समझाने तथा उन्हे अपनी हालतको सुधारनेमे मदद देनके लिए सहृदय सन्देशवाहकोकी तरह जाना चाहिए। यदि वे वहाँ सूत कातनेका प्रचार करनेके लिए जाये और तब उन्हे उसके बजाय अन्य किसी प्रकारकी सहायता देनेकी आवश्यकता जान पडे तो मुझे किंचित्-मात्र भी दु:ख अथवा क्षोभ नही होगा। वे ग्रामोमे सेवकोके रूपमे जायें तथा रहे। मैं जिससे भी मिलता हूँ वही स्वीकार करता है कि ग्रामोमे कार्य करना आवश्यक है; लेकिन वस्तुत: ऐसा करते बहुत कम लोग है। जो लोग ग्रामोमे गये है उनमे अधिकाश लोग चरखेको सेवाका साधन मानते हैं। लेकिन गाँव तो ७ लाख है तथा हमारे पास समस्त भारतमे सच्चे ग्रामसेवक ७०० भी नही है। किसानोका मानपत्र हमारे लिए एक फटकार तथा चेतावनी है। हम स्वराज्यकी बात तभी कर सकेगे जब हमारे पास गाँवोमे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता खासी बड़ी सख्यामे होगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

१०. कुछ त्रुटियाँ

मैं बगालके जीवनको जितना ही अधिक देखता हूँ उतना ही अधिक यह अनुभव करता हूँ कि वहाँ तमाम दिशाओमे भारी सम्भावनाएँ मौजूद है। उसने ससारका सबसे बडा आधुनिक कवि उत्पन्न किया है और उसने दो विज्ञानाचार्योको जन्म दिया है, जो ससारके सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिकोमे[१] माने जाते है। उसमे सगीतज्ञ भी ऐसे है जिनको मात करना मुश्किल है। उसने ऐसे-ऐसे चित्रकारोको उत्पन्न किया है जिनकी कला भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक व्याप्त हो गई है। आत्म-बलिदानका श्रेय भी उसे इतना प्राप्त है कि महाराष्ट्र भी उसका मुकाबला नही कर सकता। जब मैने उन क्रान्तिकारी[२] महाशयको जवाब दिये थे, तब मैने अपनी आँखोसे यह नही देखा था कि कार्यकर्त्ता लोग फसली बुखारके प्रदेशोमे सिर्फ खाना-कपडा लेकर लोगोके बीच किस लगनके साथ काम कर रहे है। मुझे इसका बिलकुल पता न था कि यहाँ ऐसे नवयुवक भी है जो दरिद्रता और अभावोके बीच इस तरहकी जिन्दगी बसर कर रहे है और बीमारियोने उनके शरीरमे इस कारण घर कर लिया है कि उन्हे अच्छे पौष्टिक भोजन या अच्छी आबहवामे रहनेकी सुविधा नही है। अब मैने ऐसे मुकाम और ऐसे लोग देख लिये है। बगालमे क्या स्त्री और क्या पुरुष, दोनोमें कातनेके लिए एक खास प्रतिभा है। मैने दोनोको चाँदपुर, चटगाँव, महाजनहाट, नवाखली, कोमिल्ला, ढाका और मैमनसिहमे काम करते हुए देखा है। मोटे तौरपर कहा जा सकता है कि हर जगह मैने उनके कामको, भारतके हर हिस्सेसे जहाँ-जहाँ मै हो आया हूँ, श्रेष्ठ पाया है। कातना उनका पेशा नही है और न वे कातनेके आदी ही है, क्योकि उनमे से बहुतेरे तो यदि मेरे विनोदके लिए नही तो मेरा मान बढानेके लिए अथवा मुझे खुश करनेके भावसे चरखा कातने आये थे। और फिर भी उनका काम बुरा नही था। उसके विधिवत् ज्ञानके बिना उनकी बुद्धि, शक्ति और त्यागका अपव्यय अवश्य हो रहा है। वहाँके अधिकाश चरखे भद्दे, कुरूप और ढीले-ढाले थे। या तो वे अच्छी तरह नही चलते थे या भारी चलते थे और उनसे तकुएको ज्यादासे-ज्यादा नही, बल्कि कमसे-कम चक्कर मिलते थे। फलस्वरूप बहुत ही कम सूत निकल पाता था। मैने ऐसे एक चरखेपर पूरे तीस मिनटतक सूत काता। मै आध घटेमे औसतन १३० गज कात लेता हूँ, पर बगालके उस चरखे पर सिर्फ ३० गज ही कात पाया। यदि चरखा अच्छा हो तो इससे तिगुना सूत आसानीसे निकल सकता है। किसी भी व्यक्ति या राष्ट्रके लिए उसकी आमदनीका किसी भी दिये हुए समयमे तिगुना हो जाना कम लाभ नही है। बगालमे बहुत अच्छे और सस्ते चरखे सुलभ है। खादी प्रतिष्ठानका तैयार किया चरखा बहुत बढिया

१. डॉ० जगदीशचन्द्र बोस तथा डॉ० प्रफुल्लचन्द्र राय।
२. देखिए "फिर वही", ७-५-१९२५।

है और काम भी अच्छा देता है। फिर है भी सस्ता — ढाई रुपयेमे मिलता है। मैंने इस तरहका और इससे सस्ता चरखा सारे हिन्दुस्तानमे नही देखा। मै चाहता हूँ कि बगालमे प्रतिष्ठानके नमूनेके चरखेका प्रचार हो। इस बातकी भी जरूरत है कि 'चरखा-शास्त्री' ऐसे तमाम मुकामोपर जाये जहाँ चरखे चलते हो, चरखोंकी मरम्मत करे और जहाँ मरम्मतसे काम न चलता हो वहाँ उन चरखोको नष्ट कर दे। वे अपने बताये हुए चरखेकी श्रेष्ठता भी समझाये। इस कामको वही आदमी कर सकता है जो अपना समय अन्य तमाम बातोको छोड़कर अकेले खादीके काममे लगाता हो। ऐसी संस्था है खादी-प्रतिष्ठान और ऐसे चरखा-शास्त्री है सतीश-बाबू, जिन्होने चरखेके लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया है। दूसरा विघ्न है शुद्ध खादीके साथ मिलावटकी खादीका अनुचित मुकाबला। यदि काग्रेसवालोके नजदीक काग्रेसके प्रस्तावोकी कुछ भी कद्र हो तो वे मिलावटवाली खादीसे अपना सम्बन्ध किसी तरह नही रख सकते। इसलिए मै आशा करता हूँ कि जिन काग्रेसकी सस्थाओमे मिले-जुले सूतकी खादी बन रही है या बरती जा रही है, वे ऐसा करनेसे बाज आयेगी। मिलावटकी या आधी खादी आम तौरपर वह होती है जिसका ताना मिलके सूतका होता है। और तानेके ही द्वारा तो सूतकी परख की जा सकती है। यदि हम तानेमे मिलका सूत लगाते रहे तो हम हाथके कते सूतकी किस्ममे कभी सुधार नही कर सकते और इसलिए हम एक घरेलू धन्धेके तौरपर हाथकताईकी जड़ हरगिज नही जमा सकते और न विदेशी कपड़ेका बहिष्कार ही सफल बना सकते हैं।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

९१. राष्ट्रीय सेवा और वेतन

एक पत्रलेखक लिखता है।[1] यह स्पष्ट है कि वह 'यग इडिया' लगातार नही पढ़ता; यदि पढ़ता तो उसने इस बारेमे मेरा विचार देख ही लिया होता। मैंने बार-बार दुहराया है कि मै वेतन लेकर राष्ट्रकी सेवा करनेमे सम्मान समझूँगा। मेरे सफर सम्बन्धी खर्च तथा इस प्रकारके अन्य खर्चकी बात दूसरी है। मजूरी कराये बिना मै उसे कांग्रेससे प्राप्त नही कर सकता। मै काग्रेसके प्रस्तावके अनुसार अथवा उसके निर्देशसे यात्रा नही करता। मै भिन्न-भिन्न प्रदेशोसे निमन्त्रण मिलनेपर दौरा करता हूँ। अगर मै उस खर्चको काग्रेससे वसूल करूँ अथवा उसपर कांग्रेसकी मंजूरी माँगूँ तो यह मेरे लिए बिलकुल अनुचित होगा। पत्रलेखकको यह मालूम नही है कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सदस्य भी, जब वे काग्रेसके बुलानेपर इकट्ठे होते है, उससे कोई खर्च नही लेते। यदि काग्रेससे ऐसा खर्च लिया जाये तो उसका कोष शीघ्र ही समाप्त हो जाये। किन्तु यदि जिस प्रकार उसकी परिभाषा की गई

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है।

है उस मानेमे मै पूरा समय काम करनेवाला काग्रेसका सेवक बन जाता तथा हमारी वैतनिक राष्ट्रीय सेवाकी कोई सुविधा होती तो मै दूसरोको प्रोत्साहन देनेके लिए सबसे पहले अपना नाम वैतनिक सेवकोकी सूचीमे लिखाता। हमने अभीतक इस प्रकारकी सेवा स्थापित नही की है तथा मुझे समस्त भारतके लिए अथवा गुजरात तकके लिए वैसी योजना बनानेमे बहुत-सी व्यावहारिक कठिनाइयोका सामना करना पडा है। मैने अनेक बार इसकी योजनापर विचार किया और मुझे वह विचार तुरन्त छोड़ भी देना पड़ा। इसलिए पत्रलेखकको खिलाफत दफ्तरसे अपने ईमानदारीसे किये हुए कामके बदलेमें वेतन लेनेपर आत्मग्लानि नही होनी चाहिए। यदि इससे उसको सान्त्वना मिले तो मै उसे बताता हूँ कि अलीभाई जब खिलाफत समितिके निर्देशसे यात्रा करते थे तो उससे यात्राका भत्ता अवश्य लेते थे। उसे यह जानकर भी सान्त्वना मिलनी चाहिए कि मैने जब खिलाफत समितिके कामके सिलसिलेमे अली भाइयोके साथ दो या तीन बार यात्रा की थी तो मेरी यात्राका खर्च खिलाफत समितिने ही उठाया था। मै उस समय भी अपने दोस्तोकी मदद ले सकता था, लेकिन मैने अपनेको खिलाफती टुकड़ीका सदस्य कहनेमे अपना सम्मान समझा था। यदि अली भाइयोने खिलाफत समितिसे अपने वैयक्तिक खर्च वसूल नही किये तो इसका कारण यह था कि वे खिलाफत समितिसे न्यायपूर्वक जितना ले सकते थे उससे उनका यह खर्च बहुत ज्यादा होता था। यदि वे समितिसे अपने ये खर्च वसूल करते तो यह एक बुरी नजीर होती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

९२. टिप्पणियाँ

हकीम साहब

हकीम अजमलखाँ साहबका मार्सेल्ससे उर्दूमे लिखा एक खत मुझे मिला है। मै सम्बद्ध अशका अनुवाद दे रहा हूँ :

> बम्बईसे १० अप्रैलको सवार होकर आज २२ अप्रैलको मार्सेल्स पहुँचा। रास्तेमे मेरी तन्दुरुस्ती अच्छी ही रही। चलते वक्त आपसे न मिलनेका अफसोस है। खुदाको मंजूर हुआ तो यह खुशी फिर वापसीपर हासिल होगी। उस वक्त मुझे बहुत शर्म आयेगी, जब मुझसे इस सफरमे कोई शख्स हिन्दुस्तानका हाल दरयाफ्त करेगा; इसलिए कि मेरा जवाब इसके सिवा और क्या हो सकता है कि आजकल हिन्दुस्तान बहुत पस्त हालतमे है और उसकी दो मशहूर मगर बदकिस्मत कौमे आपसमे खूब दिल खोलकर लड रही हैं। काश वे भाई, जो इस खाईको चौड़ा कर रहे हैं, हिन्दुस्तान और एशिया पर, बल्कि खुद अपनी-अपनी कौमोपर रहम करे और अपनी कोशिशोका रुख

नेकीकी तरफ फेरकर बेजान कांग्रेसमे जान डाले। डॉ० अन्सारी अच्छे है— और इस सफरसे खुश मालूम होते है।

जो लोग हकीम साहबकी नेकदिलीसे वाकिफ है वे जरूर हमारे आपसके झगड़ोपर इनकी तरह ही दुखी होगे।

'जुगल-जोड़ी'

इन दिनो अली भाइयोमे से कोई भी यात्रामे मेरे साथ नही है। इसपर कुछ लोग ऐसे भी है जो खयाल करते है कि मेरा इस जुगल जोडीसे, जैसा मौ० मुहम्मद अली स्वयको और अपने भाई शौकत अलीको कहकर खुश होते है, कुछ मतभेद हो गया है। इस बातसे जमानेकी हालत जाहिर होती है। नवाखलीमे तो कुछ भाइयोंने मुझसे कहा कि लोगोको शक है कि आपका अली भाइयोसे खुला मतभेद हो गया है। मैने उनसे कहा कि ऐसी कोई बात नही हुई है और न होनेकी कोई सम्भावना है। यदि कभी ऐसा हुआ भी तो मै उसको उसी तरह फौरन जाहिर कर दूँगा जिस तरह मैने उनसे अपनी दोस्ती जाहिर की है। पर मै पाठकोको सावधान कर देना चाहता हूँ कि यदि वे निराशासे बचना चाहते है तो ऐसी कोई आशा या आशका अपने मनमे न रखे। दोस्ती यो आसानीसे नही होती और टूटती तो और भी मुश्किलसे है। वह जबरदस्त तनाव बर्दाश्त कर सकती है। वह जिस चीजको बर्दाश्त नही कर सकती, वह है बेईमानी या बेवफाई। कोई यह खयाल न करे कि मेरे और मौ० शौकत अलीके बीच कोहाटके मामलेमे मतभेद होनेसे हमारे ताल्लुकात बिगड गये है। यदि हममे से किसीने एक-दूसरेको खुश करनेके लिए अपनी सच्ची राय प्रकट न की होती तो हमारी मित्रता झूठी मित्रता होती।

स्वभावत दूसरा प्रश्न यह किया गया, 'तब फिर उनमे से कोई आपके साथ क्यो नही है?' मैने प्रश्नकर्त्तासे कहा कि मौ० शौकत अली बम्बईसे तबतक नही निकल सकते जबतक वे खिलाफत समितिकी टूटी नावकी मरम्मत न कर ले और मौ० मुहम्मद अली अपने दोनो अखबारोके कामसे नही छूट सकते; उनपर इनका बोझ उनकी शक्तिसे ज्यादा पड रहा है। इसके अलावा असली बात यह है कि आज हमारे लिए हमेशा साथ रहनेकी जरूरत उतनी ज्यादा नही है जितनी १९२०–२१में थी। बल्कि उसके खिलाफ आज तो हरएक कार्यकर्त्ताको अपने-अपने सुपुर्द किये गये काममे ही लगे रहनेकी जरूरत है। कार्यक्रम देशके सामने मौजूद है। उसे पूरा करना है। मै एक इन्स्पेक्टर जनरलकी तरह घूम-फिरकर देखता हूँ कि नये मताधिकार-पर किस तरह अमल किया जा रहा है। मै इसलिए घूम रहा हूँ कि मै स्वय नये मताधिकारकी कीमतको जाँच व परख सकूँ। सभापति-पदका भार सिरपर उठानेके कारण तो मै ही इस वर्ष जहाँ-कही मेरी जरूरत हो वहाँ, सम्भव हो तो किसी मुसलमान मित्रके साथ अन्यथा उसके बिना ही, घूम-फिरकर इस कार्यको सबसे ज्यादा अच्छी तरह कर सकता हूँ। जहाँतक हिन्दू-मुसलमान सवालका ताल्लुक है, मुझे जो-कुछ कहना था वह मै कह चुका हूँ। मैने दवा बता दी है। अभी तो वह नाकाफी रही है। इसलिए अब मुझे इन्तजार करते हुए देखते रहना है और ईश्वरसे प्रार्थना

करते रहना है। मैं उसके सम्बन्धमें अपने कर्त्तव्यका पालन सिर्फ अपने सिद्धान्तको सामने रखकर या पुष्ट करके कर रहा हूँ। मैं अपनी सारी शक्ति सिर्फ चरखेके प्रचार और अछूतोद्धारमें खर्च कर रहा हूँ।

बैलगाड़ी और चरखा

बंगालके दौरेमें मेरे सम्मुख चतुर बंगालियोंकी ओरसे चरखेके विरुद्ध सभी प्रकारकी चतुराई-भरी युक्तियाँ पेश होती रही हैं। इन पृष्ठोंमें अधिकांश युक्तियों-पर विचार किया जा चुका है। लेकिन चूंकि पाठकोंको अखबारोंमें पढ़ी बात कभी-कभी याद नहीं रहती, अतः यदि पत्रकार उसी बातको समयका उचित व्यवधान देकर दोहराये तो वह सदा हितावह ही होता है। एक दोस्तने मुझसे पूछा था कि क्या आप रेलका स्थान बैलगाड़ियोंको देना चाहते हैं? यदि ऐसा नहीं है तो आप यह आशा कैसे कर सकते हैं कि कारखानोंका स्थान चरखा ले लेगा। मैंने उनसे कहा कि मैं रेलोंके स्थानपर बैलगाड़ियाँ नहीं चलाना चाहता, क्योंकि मैं चाहनेपर भी वैसा नहीं कर सकता। ३० करोड़ बैलगाड़ियोंसे लम्बी-लम्बी दूरियाँ जल्दी तय नहीं की जा सकतीं। लेकिन मैं कारखानोंका स्थान चरखेको दे सकता हूँ। इसका कारण यह है कि रेलोंका सम्बन्ध रफ्तारसे है। किन्तु मिलोंके मामलेमें प्रश्न उत्प-त्तिका है। जिस देशमें काम करनेवालोंकी संख्या काफी हो, जैसी कि भारतमें है, तो चरखा आसानीसे स्पर्धा कर सकता है। मैंने उनसे कहा, वस्तुस्थिति यह है कि एक ग्रामीण अपने लिए पर्याप्त कपड़ा कारखानोंसे भी सस्ता तैयार कर सकता है, बशर्ते कि वह अपने श्रमका मूल्य न लगाये। उसे ऐसा करनेकी आवश्यकता भी नहीं है, क्योंकि वह अपने फाजिल समयमें ही सूत कातेगा अथवा कपड़ा बुनेगा। यह ध्यान देने योग्य बात है कि झूठी तथा अपूर्ण तुलनाओंसे लोगोंको कैसे धोखा होता है। इस मामलेमें एक ओर मिलों और रेलोंका अन्तर तथा दूसरी ओर चरखे और बैल-गाड़ियोंका अन्तर इतना स्पष्ट है कि उनकी तुलना करना ही उचित नहीं है। लेकिन कदाचित् इस मित्रका विचार यह है कि मैं यथासम्भव हर स्थितिमें सभी तरहकी मशीनोंके उपयोगका विरोधी हूँ। कदाचित् उनके ध्यानमें रेलोंके विरुद्ध मेरी वे आप-त्तियाँ थीं, जिनका उल्लेख मैंने अपनी 'हिन्द स्वराज्य' पुस्तिकामें किया है। यों मैं बार-बार कह चुका हूँ कि मैं उस पुस्तिकामें चर्चित भिन्न-भिन्न बुनियादी समस्याओंका हल नहीं सोच रहा हूँ।

शक्तिका अपव्यय

एक अन्य तर्क यह दिया गया है कि चरखा चलाना शक्तिका अपव्यय है। यह एक आश्चर्यजनक तर्क है जो बिना विचारे दिया गया है। मैं बता चुका हूँ कि जो कार्य किसी उद्देश्यको सम्मुख रखकर किया जाता है उसे शक्तिका अपव्यय नहीं माना जा सकता। चरखा राष्ट्रके सम्मुख उन लाखों करोड़ोंको धन्धा देनेके लिए रखा गया है जिनके पास सालमें कमसे-कम चार महीने कोई काम नहीं रहता। मैंने आपत्तिकर्तासे यह भी कहा कि चरखेसे हर आधा घंटेमें कमसे-कम १०० गज सूत काता जा सकता है। यदि केवल इस बातको ही ध्यानमें रखकर सोचें तो भी

चरखा चलाना व्यर्थका काम नही माना जा सकता। वह व्यर्थका काम नही है इतना ही नही, बल्कि वह एक ठोस आर्थिक योजना भी है। इसका कारण यह है कि आज तो लाखो-करोड़ो लोगोके लिए जरूरत ही किसी ऐसे धन्धेकी है, जिसे सभी कर सके और जिसके लिए किसी विशेष कुशलता या लम्बे प्रशिक्षणकी आवश्यकता न हो। ऐसा धन्धा सूत कातना ही हो सकता है, उसके सिवा दूसरा नही।

विकास और ह्रास

नवाखली जिला खद्दरके कार्यका एक अच्छा विकास केन्द्र बन सकता है। स्पष्ट है कि वहाँ जब खद्दरका कार्य प्रारम्भ किया गया उससे पूर्व बहुत-कुछ कार्य हो चुका था। इस कार्यके विकास और ह्रासकी निम्न रिपोर्ट, जो मुझे नवाखलीमे दी गई थी, अवश्य ही सामान्यत: सभीके लिए दिलचस्प होगी[1]

इससे जो निष्कर्ष निकलता है, वह स्पष्ट है। कार्यकर्त्ताओको हिम्मत नही हारनी चाहिए। उन्हे तमाम कठिनाइयोके होते हुए भी अपना काम उसी प्रकार जारी रखना चाहिए, जैसे सूझ-बूझवाला कोई धनी व्यापारी रखता है। जबतक खादी रिवाजमे नही आ जाती, हमें स्वेच्छासे वैसा व्यापारी बन जाना चाहिए, व्यक्तिगत लाभके लिए नही बल्कि देशके लाभके लिए। खद्दरका कार्य कांग्रेसकी परिवर्तनशील दलीय राजनीतिसे अलग होना चाहिए। कांग्रेस अपना कार्यक्रम चाहे पचास बार बदले लेकिन चरखा और खद्दरका कार्यक्रम न बदले, क्योकि उसपर लाखो गरीब तथा मूक प्राणियोका भाग्य निर्भर है।

पतित बहनें और चरखा

नवाखलीमे मुझे बताया गया कि दो पतित बहने चरखा चला रही है, यही नही, बल्कि उसीसे अपना गुजारा कर रही है। वे नवयुवतियाँ नही है, उनकी उम्र ४० से ऊपरकी है। वे अब शरीर बेचकर अपना पेट नही भर सकती। अत: चरखा न चलाती तो उन्हे भीख माँगकर पेट पालना पडता। अत सच पूछे तो चरखेने उन्हे भीख माँगनेसे विरत किया है, उनके मूल धन्धेसे नही। फिर भी नवाखलीके लोगोके लिए यह एक भारी बात है कि वे इन बहनोसे वास्ता रखते है और उनके हितमे इतनी दिलचस्पी लेते है। मुझे यह भी बताया गया कि ऐसी कुछ और बहने भी चरखा चलाने लगी है, यद्यपि उन्होने अपना पेशा नही छोडा है। मेरी समझमे यदि वे बहने अपना धन्धा न छोड़े तो चरखा चलानेसे उनके लिए कोई लाभ नही हो सकता। वह उनके अनुचित धन्धेपर पर्दा डालनेका काम अवश्य कर सकता है। इसके अलावा, यह निर्विवाद बात है कि उनके लिए चरखेकी सिफारिश रोजी कमानेके जरियेके तौरपर नही की जा सकती। वे अधिक नही तो १ से

१. यह रिपोर्ट यहाँ नही दी गई है। इसमें कपास उत्पादन करनेवाले इस जिलेके सम्बन्धमें कहा गया था कि वहाँ ५५,००० बुनकर हैं। वहाँ खादीकी खपत कम हो जानेसे उत्पादन घट गया है। यदि जिलेमें इस कार्यको संगठित किया जाये और उसके लिए पर्याप्त धन और कार्यकर्त्ता हों तो वहाँ इसके विकासकी बहुत सम्भावना है।

२ रुपयातक रोज कमाती रही है। उन्हे बुनाई, कसीदा या कोई दूसरा दस्तकारीका काम सीखना चाहिए जिससे उन्हे मुनासिब आमदनी हो सके। फिर यह सवाल ऐसा भी नही है कि जिसे पुरुष अपने हाथमें ले सके। यह काम नारियोके लिए ही छोड़ना होगा। वे अपनेको इसके योग्य सिद्ध करे। जबतक असाधारण चरित्रबलकी कोई नारी आगे आकर इन पतित बहनोके उद्धारका कार्य अपने हाथमे न लेगी तबतक वेश्यावृत्तिकी समस्या हल नही हो सकती। हाँ, इसमे कोई सन्देह नही कि पुरुष उन पुरुषोको समझा सकते है जो अपनी वासनाकी तृप्तिके लिए इन युवतियोको अपने शरीर बेचनेके लिए ललचाकर स्वय पतित होते है। वेश्यावृत्ति सदासे चली आ रही है; पर वह आजकी तरह नगर-जीवनका एक नियमित अग शायद ही कभी रही हो। कुछ भी हो, वह समय आये बिना नही रह सकता जब मानवजाति इस पापके खिलाफ आवाज उठायेगी, और वेश्यावृत्तिको बिलकुल मिटा देगी, जिस तरह उसने अबतक कितनी ही पुरानी कुप्रथाओसे अपना पीछा छुड़ा लिया है।

मेरठमें कताई

चौधरी रघुवीर नारायणसिंह मेरठसे लिखते है कि उन्होने बेलगावमे नये मताधिकारके अन्तर्गत ५०० नये सदस्य बनानेका वादा किया था, परन्तु वे अपने भाईकी भारी बीमारी और बादमे मृत्युके कारण — मुझे इस समाचारसे खेद है — मीयादके अन्दर उसे पूरा न कर सके। अब स्वराज्यवादी वकील बा० ज्योतिप्रसाद तथा दूसरे मित्रोकी सहायतासे उन्होने ६४७ सदस्य बना लिये है, इनमें २०० खुद कातनेवाले है। जितना हुआ सो तो बेशक ठीक ही है; परन्तु मैं चौधरीजीको याद दिलाता हूँ कि उन्हे तो ५०० खुद कातनेवाले सदस्य बनाने है। आशा है कि वे तथा उनके साथी इस बातको ध्यानमे रखकर तबतक दम न लेंगे जबतक मेरठमें कातनेवाले सदस्योकी उतनी संख्या पूरी न हो जाये। चौधरीजी यह भी लिखते है कि हमने यहाँ मर्दों और औरतोकी कताई प्रतियोगिताका आयोजन कराया है और उनमे बहुतसे लोगोने हिस्सा लिया है। वे कहते है कि यद्यपि तरक्की धीरे-धीरे हो रही है पर कुल मिलाकर वह हो तो लगातार ही रही है। उन्होने कताई और बुनाई-धुनाई सिखानेका भी प्रबन्ध किया है।

ईश्वरके नामपर चरखा

बौरिंगपेटके कुछ नौजवानोने 'रामनवमी' सप्ताहमे कता अपना ३,२०० गज सूत मुझे भेजा है। उन्होने लिखा है, 'इन दिनोमे इस रामनाम जपके समारोहमें बालक और वृद्ध सभीने भाग लिया था, किन्तु हमने उसमें भाग लेनेके साथ-साथ सूत भी काता है।' उनका यह उदाहरण अनुकरणीय है। मैं ऐसे कितने ही नवयुवकोको जानता हूँ जो चरखा चलाते समय ईश्वरका ध्यान करते है। जो लोग यज्ञार्थ कातते है, वे तो उसके साथ तमाम ऊँचे और अच्छे विचारोको जोड़ सकते है। ढाकामे मेरे मौनके दिन कुछ सगीतज्ञ मुझे सितारवादन सुनाने आये। सोमवार खाली मौनवार ही नही, बल्कि वह मेरा सम्पादन कार्यका दिन भी होता है। सो उनका सितारवादन सुननेके लिए समय देना मेरे लिए मुश्किल ही था। परन्तु मैं उन्हे

निराश भी नही करना चाहता था। इसलिए मैंने उन्हे लिखकर कहा कि मैं उनका सितारवादन सूत कातते-कातते सुनूँगा। उन्होने यह बात तत्काल स्वीकार कर ली। नतीजा यह हुआ कि मैंने रोजसे ज्यादा अच्छा सूत काता। सितारवादनकी बदौलत हाथ ज्यादा जमा हुआ रहा। मै हमेशा ऐसे चरखेसे सूत कातता हूँ जो आवाज न करता हो। इसलिए उससे मुझे सितारवादनका आनन्द लेनेमे जरा भी बाधा नही पहुँची; उलटा उसके द्वारा सितारवादन सुननेका आनन्द बढा और उस आनन्दसे कातनेका आनन्द बढा। इन दोनोमें से किसीके कारण भी मेरे ईश्वर-ध्यानमे बाधा नही पड़ी। हाथ, कान और हृदय पूर्णतया एक ही लयमे डूबे हुए थे। शकाशील लोग जरा इसकी आजमाइश तो करे।

उदासीनता या नियमपालनका अभाव

भिन्न-भिन्न प्रान्तोसे मेरे पास शिकायते पहुँच रही है कि बार-बार चेतावनी देने और याद दिलानेपर भी जिलोकी तरफसे सदस्यताका ब्यौरा या उत्तर नही मिलता। वे पूछते है कि ऐसी हालतमे हमे क्या करना चाहिए? साधारण तौरपर तो जवाब यही होगा — उन्हे भग कर दो। जो मातहत दफ्तर अपने बड़े दफ्तरके हुक्मोकी तामील नही करता वह फिजूल नही तो क्या है? इस नये मताधिकारके द्वारा सदस्यो और उपसमितियोके आज्ञापालनके गुणकी परीक्षा होती है। सदस्योको हर महीने अपना चन्दा भेजना होता है — इससे हर महीने उनके नियम-पालनकी आजमाइश होती है। यदि किसी सस्थाके सदस्य नियमपूर्वक अपना चन्दा देनेकी तकलीफ न उठाये तो उसकी कोई ज्यादा वकत नही। मै जानता हूँ कि चन्दा न देने और कमेटियोकी बैठकोमें न आनेकी शिकायत उतनी ही पुरानी है जितनी पुरानी स्वय काग्रेस। यह समयपर चन्दा न देनेकी शिकायत इस नये मताधिकारके साथ ही पैदा नही हुई है। आप जरा सोचे तो कि यदि किसी पेढी या सरकारके नौकर-चाकर अपना काम नियमपूर्वक समयपर न करे या पेढीके अधिकाश ग्राहक या सरकारके अधिकाश करदाता समयपर बिना तकाजा किये भुगतान न करे या कर न दे तो उस पेढ़ी या सरकारकी क्या हालत हो? इस पेढी या सरकारका सब कारोबार बन्द हो जाये। काग्रेस एक सरकार या पेढ़ीसे बढकर है या होनी चाहिए। फिर भी उसको सदस्योसे चन्दा या कर देनेके लिए बार-बार मिन्नत करनी पडती है। ऐसी अवस्थामे काग्रेस अभीष्ट परिणाम कैसे ला सकती है? मुझे नही लगता कि अ० भा० काग्रेस कमेटीको उसके हिस्सेका सूत मिल गया है। मुझे इसमे कोई शक नही है कि प्रान्तीय कमेटियो या अ० भा० का० कमेटीको अपना अश प्राप्त करनेमे पूरी दृढता दिखानी चाहिए। काग्रेसकी शक्ति किस बातमे है? इसीमे कि उसके सदस्य और उसकी सस्थाएँ अपना अगीकृत कार्य नियमपूर्वक और समयपर करे।

भावुकताकी बकवास

एक भावुकता वह है जिसमे तथ्य होता है और जो उपयोगी होती है। उदाहरणार्थ जैसे अपने देशसे प्रेम करना तथा उसके फलस्वरूप श्रम करना। एक भावुकता

वह है जो अर्थहीन और अनुपयोगी होती है। दूसरी तरहकी भावुकताका उदाहरण इस पत्रमे मिलता है.[1]

मुझे इस नवयुवक स्नातकसे सहानुभूति है; लेकिन मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि आत्महत्या करना, जिसकी वह बात कहता है, पाप है। सभी अनशन सराहनीय नही होते। आत्मबलिदानका इच्छुक आत्महत्या द्वारा स्वराज्यकी प्राप्तिमे सहायता नही कर सकता, यही नही बल्कि उसके आत्महत्याके अपराधसे उसमें रुकावट ही पड़ेगी। इससे प्रकट होता है कि उसमे आत्मविश्वासकी कमी है। मैं उसकी सरकारी नौकरी न करनेकी प्रतिज्ञाका सम्मान करता हूँ। लेकिन निश्चय ही उसका विकल्प केवल आत्महत्या ही नही है। यदि उक्त राष्ट्रीय स्कूल उसका भरण-पोषण नही करता तो उसके लिए ईमानदारीसे रोजी कमाने तथा अपने माता-पिताका भरण-पोषण करनेके और अनेक तरीके है। क्या उसमे हाथसे मेहनत करनेका मनोबल है? मैं ऐसे किसी भी ईमानदार तथा काम करनेके इच्छुक कार्यकर्त्ताको नही जानता जिसे किसी राष्ट्रीय अथवा सार्वजनिक संस्था अथवा गैरसरकारी फर्ममें उचित कार्य न मिल सका हो। मैं जानता हूँ कि राष्ट्रीय कार्यको पूर्णरूपसे विकसित करनेके लिए ऐसे ईमानदार और मेहनती नवयुवक तथा नवयुवतियोकी आवश्यकता है, जो वेतन लेकर सेवा करनेके लिए तैयार हो। यह नवयुवक जुलाहे अथवा बढ़ईका काम कर सकता है और मजदूरीसे खासा पैसा कमा सकता है। उदाहरणार्थ वह खादी प्रतिष्ठानको अर्जी दे सकता है और यदि उसमे आवश्यक योग्यता है तो उसे उसमें काम मिल ही जायेगा। नवयुवकोको तो कभी निराशाका शिकार होना ही नही चाहिए। उनमे आत्मविश्वास होना चाहिए और उन्हे जानना चाहिए कि वास्तविक योग्यताका पुरस्कार अवश्य मिलता है।

१०० वर्ष पुराना चरखा

कोमिल्लामे मुझे एक चरखा दिखाया गया था जो १०० साल पुराना बताया गया, किन्तु जो अबतक चालू अवस्थामे है। चरखेकी वर्तमान मालकिन एक विधवा है जिसकी अवस्था ५८ वर्षसे भी अधिक है। वह चरखा उसकी दादीने उसकी माँ को दिया था। उसकी वर्तमान मालकिन १४ वर्षकी अवस्थामे विधवा हो गई थी। वह स्वयं सूत कातकर उससे अपने लिए और अपने परिवारके अन्य लोगोके लिए कपड़ा बुनवा लेती थी। कहा जाता है कि उसने अपने तथा अपने परिवारके अन्य लोगोंके लिए कभी विदेशी वस्त्र नही खरीदा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-५-१९२५

१. यह पत्र यहाँ नही दिया गया है। इसमें एक राष्ट्रीय स्कूलके निराश शिक्षकने लिखा था कि मैं बड़ी दुविधामें पड़ा हूँ कि असहयोगी बना रहूँ या अपने परिवारकी खातिर सरकारसे सहयोग करूँ। कृपया आप मुझे सलाह दें कि मातृभूमिकी मुक्ति और अपने परिवारके कल्याणार्थ मेरे लिए आमरण अनशन करना उचित होगा या नही।

९३. भाषण: कलकत्ताकी सार्वजनिक सभामें[1]

२८ मई, १९२५

महात्माजीने एकत्र जनसमुदायके समक्ष भाषण देते हुए कहा कि मैं आप लोगोंसे एक बात कह चुका हूँ, नहीं मालूम, आपने उसे सुना या नही। मै अब आपसे एक बात और कहना चाहूँगा, उसे आप कानोंसे सुनें; मैंने जो-कुछ आपको पहले बताया था वह आपने नेत्रोंसे सुना है। मैंने आपको अपना चरखेका एकमात्र सन्देश कातकर दिखा ही दिया है और उस सम्बन्धमें मुझे उससे अधिक और कुछ नहीं कहना है। एक कहावतका अर्थ और महत्त्वका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि यदि आप सिनेमा जायें और अभिनेताओं, अभिनेत्रिओंका अभिनय पर्देपर देखें, लेकिन उस चित्रकी भावना और उपदेशको हृदयंगम न करें, उसे अपने जीवनमें न उतारें, तो इस प्रकार सिनेमा देखनेसे क्या लाभ? किसीकी कथनीका, यदि वह उसे अपनी करनीमें नहीं उतारता, कुछ भी महत्त्व नहीं है। इसलिए मुझे जो-कुछ कहना था और जो-कुछ डॉ० नायडूने कहा था, उसे मैंने अपने हाथोंसे करके समझाया।

आगे बोलते हुए महात्माजीने कहा कि यदि मैंने जो-कुछ करके दिखलाया है, उससे ज्यादा कुछ कहना भी पड़े तो मुझे बड़ा दुःख होगा। बंगालके दौरेसे पहले मैंने जनताके सामने अपने सन्देशका प्रदर्शन कार्य द्वारा नहीं किया, लेकिन फरीदपुरसे मैंने वैसा करना शुरू कर दिया है। आप लोगोंने मुझे बारीक और मोटा सूत कातते हुए देखा। मेरा इरादा आपको केवल अपना सूत दिखाना नहीं है वरन् आपको अपने अभ्याससे प्रभावित करना है ताकि आप उस अभ्यासको अपने जीवनमें उतारें और उसीके अनुसार काम करें। मै कलकत्ताके नागरिकोंके बीच बैठा हूँ लेकिन मेरा मन सदा बंगालके दूर-दूर बसे हुए गाँवोंमें कष्ट भोग रही जनताके ही बीच पड़ा रहता है। मै आम जनतासे, गरीब किसानोंसे, पद-दलित अछूतोंसे घुल-मिलकर रहना चाहता हूँ। अपना चरखा कातते और भजन करते समय मेरा मन पूर्वी बंगालकी उन गरीब स्त्रियोंकी बात सोचता है जो भुखमरीसे पीड़ित हैं; वह उन पद-दलित ग्रामीणोंके पास होता है जिनके साथ अछूतों-जैसा बरताव होता है। मेरे कारण वे भूखों मर रहे हैं और आपके कारण उन्हें हररोज पेट-भर भोजन नहीं मिलता। हम लोग ही इसके कारण हैं। मैं उनके साथ मिल-जुलकर रहना चाहता हूँ और उनके दुःखोंका कारण जानना तथा दुःखोंसे उन्हें मुक्ति दिलानेमें मदद करना चाहता हूँ।

१. सभा शामको भवानीपुरमें हरीश पार्कमें हुई थी। गाधीजीने जवाहरलाल नेहरू और डा० वरदराजुलु नायडूके बोल चुकनेके बाद सभामें भाषण दिया था।

डा० वरदराजुलु नायडूकी अपीलका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि डा० नायडूने आपसे स्वराज्य दलमें शामिल होने और मदद करनेको कहा है। मेरे लिए इस अपीलका इतना ही अर्थ है कि आपको स्वराज्यके लिए कुछ करना चाहिए। मैं इस अपीलका केवल यही अर्थ निकाल सका हूँ। सभामें उपस्थित नवयुवक कौंसिलोंमें प्रवेश कैसे कर सकते हैं? दासगुप्त जैसे कुछेक लोगोंके साथ चित्तरंजन कौंसिलमें जा सकते हैं, और वे गये भी हैं। लेकिन सभामें उपस्थित सभी लोग तो कौंसिलोंमें जानेकी आशा नहीं कर सकते। एक बार चित्तरंजन बाबूने फरीदपुरमें आप लोगोंसे गाँवोंमें जाने और जनताके साथ मिलकर काम करनेको कहा था। मैं देशबन्धुके शब्दोंके रहस्यको इस तरह कह सकता हूँ कि स्वराज्य दलमें शामिल हो जाने-भरसे कोई वास्तविक काम नहीं हो सकता। यदि आप जनताकी हालत बेहतर बनाना चाहते हैं तो आपको जनताके पास जाना होगा, उसके साथ रहना होगा। लोगोंको दानके रूपमें एक मुट्ठी चावल देनेसे उनके दिलोंमें सच्चे जीवनका संचार नहीं होगा।

पूर्वी बंगालमें बहुतेरे ग्रामीणोंने मुझे बताया है कि सालमें छः महीने उन्हें बेकार बैठे रहना पड़ता है, क्योंकि उनके पास करनेके लिए कुछ काम ही नहीं होता। वे चाहते हैं कि उनके बीच चरखेका प्रचलन शुरू हो। वे यह नहीं जानते कि चरखा और कपास उन्हें कहाँसे मिल सकती है। इसलिए आपको उन ग्रामीणोंके पास चरखेका सन्देश लेकर जाना होगा और उन्हें चरखा चलानेका प्रशिक्षण देना होगा। अपने गरीब भाइयों और बहनोंके काते हुए सूतसे बना खद्दर आपको अवश्य खरीदना चाहिए।

महात्माजीने आगे कहा कि आप कहीं भी जायें, कलकत्ता या दिल्ली अथवा किसी भी अन्य शहरमें हों, आपको हमेशा गरीब किसानोंकी बात ध्यानमें रखनी चाहिए, आपका दिल हमेशा उनके साथ रहना चाहिए। उनके प्रति यह कृतज्ञता ज्ञापन करना नैतिक रूपसे वाजिब है, यह आपको करते रहना चाहिए। आप जो-कुछ भी खाते हैं, उसे ये गरीब किसान पैदा करते हैं; शहरोंमें जिन-जिन सुविधाकी चीजोंका आनन्द आप उठाते हैं, वे सब आपके इन भूखसे पीड़ित भाई-बहनोंके श्रमका फल है। आप लोग डेस्कपर बैठकर लेख और भाषण लिखनेवाले नेता हैं। लेकिन अगर आप जनताके लिए कुछ करना चाहते हैं तो आपको खद्दर अवश्य पहनना चाहिए और सूत कातना चाहिए। मुझे एक बहनने बताया कि जब वह पूर्वी बंगालमें घूमी तब उसने लोगोंको खद्दर पहने देखा, लेकिन जब वह शहरोंमें आई तो उसे अपनी बहनोंको विदेशी वस्त्र पहने देखकर निराशा हुई। इससे ज्यादा दर्दनाक तथ्य और क्या हो सकता है।

चम्पारनमें अपने कामके दौरान एक घटनाका जिक्र करते हुए महात्माजीने कहा कि ट्रेनमें मेरी पत्नीसे एक औरत मिली जिसके पास एक ही खद्दरका कपड़ा था।

उसने मेरी पत्नीको बताया कि वह हमेशा उसी कपड़ेको पहने रहती है। जब उसे गंगामें स्नान करना होता है; तो प्रायः नंगे शरीरसे ही नहाती है और उसके बाद वही कपड़ा पहन लेती है। यह बहुत ही दुःखद तथ्य है। मैं आशा करता हूँ कि आप लोग ऐसी घटनाओंकी पुनरावृत्ति नहीं होने देंगे।

महात्माजीने बहनोंसे बहुत ही प्रभावशाली स्वरमें अपील की कि यदि आप रामराज्यकी स्थापना करना चाहती हैं तो आपको सीताजीका सोत्साह अनुकरण करना चाहिए। सीता देवी कभी विदेशी वस्त्रका इस्तेमाल नहीं करती थीं, वह नित्य नियमसे सूत कातती थीं और आपको भी उनकी तरह सूत कातना चाहिए।

अस्पृश्यताके बारेमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि सनातन धर्ममें अस्पृश्यता-जैसी कोई चीज नहीं है। युगोंसे सम्मान पा रहे इस उदार सनातन धर्मकी तहोंमें अवमानना और विद्वेषकी भावनाका लेश भी नहीं है। यदि आप इस धर्मको नष्ट होनेसे बचाना चाहते हैं तो आपको धर्मके मूल तत्त्वोंमें पैठे हुए इस अस्पृश्यताके दोषको अलग करना होगा। गोखलेने कहा है कि सारा संसार भारतको 'परिया' की तरह मानेगा, क्योंकि आप लोग अपने भाइयों और बहनोंको उसी निगाहसे देखते हैं। मैं देखता हूँ कि गोखलेका यह कथन अक्षरशः सत्य है।

अपना भाषण समाप्त करते हुए महात्माजीने कहा कि यहाँपर जो कुछेक गज सूत मैंने काता है, उससे हम स्वराज्यके पथपर कितने ही गज आगे बढ़ गये हैं और मेरी तो एकमात्र प्रार्थना यही है कि आप हिन्दुस्तानके स्वराज्यके लिए, देशबन्धुके लिए, अछूतोंके लिए, मुसलमानोंके लिए और हिन्दुस्तानकी अन्य सभी जातियोंके लिए सूत कातें।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २९-५-१९२५

९४. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

शान्तिनिकेतन
ज्येष्ठ सुदी ७ [२९ मई, १९२५][1]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिल गया। मुझे खेद है कि आप गोरक्षा-मण्डलके कोषाध्यक्षका कार्य नही सम्भाल सकेंगे। आप अपनी कृपादृष्टि तो रखेंगे न?

मोहनदास गांधीके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१९६) से।
सौजन्य : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास

१. शान्तिनिकेतन डाकखानेकी मुहर ३० मई, १९२५ की है। जेठ सुदी सप्तमी २९ मईको पड़ी थी।

९५. पत्र : जमनालाल बजाजको

शान्तिनिकेतन
ज्येष्ठ सुदी ७ [२९ मई, १९२५][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम कार्यसमितिकी बैठकमे आओगे ही और तब हम सारी बाते कर लेंगे, इस खयालसे लिखना मुल्तवी कर दिया था। तुम नही आये इसमे भी चिन्ताकी कोई बात नही हुई। गिरधारीके पत्रसे यह धारणा बन गई थी कि तुम अवश्य आओगे।

मेरी निगाह कालेजके लिए किसी योग्य मनुष्यकी खोजमे लगातार रहती है, पर कोई आँखपर ही नही चढता। जुगलकिशोर[2] आ जाये तो एक तरहसे यह समस्या हल हो सकती है। वे चरित्रवान् तो हैं ही। उनके गिडवानीको[3] लिखे गये पत्रोसे मुझे पूरा सन्तोष नही हुआ है। अगर गिडवानी खद आनेकी बात सोचे और आ सके तब तो ठीक ही है। इस समय और कोई निगाहमे नही है। कोई दाक्षिणात्य मिल जाये तो अच्छा — यह खयाल बना ही रहता है।

क्या यह कालेजके उद्घाटनकी क्रिया जून महीनेमे ही सम्पन्न की जानी चाहिए? मेरे जूनके अन्तिम दिन तो असममे जाने है। उसके बाद मुझे फौरन बिहार जाना होगा। लेकिन अगर असमसे वर्धा फौरन आना जरूरी हो तो वहाँ आकर तब बिहार जाऊँगा। मुझे बिहारमे एक महीना लग जायेगा। जबसे लोगोको मेरे वर्धा आनेकी बात मालूम हुई है। वे मुझे तभीसे दूसरी जगहोमे आनेके लिए निमन्त्रित कर रहे है। नागपुर, अमरावती और अकोलासे पत्र आये हैं। मुझे ऐसा लगता है कि जहाँसे बुलावा आये वहाँ हो आना इष्ट है। मैं इस वर्ष अच्छी तरह भ्रमण करना अपना धर्म समझता हूँ। अगर ऐसा करूँ तो मध्य प्रदेशकी यात्राका कार्यक्रम तुम्ही तैयार कर लो और चल सको तो शायद तुम्हारा साथ चलना भी उचित हो।

(१) मुझे वर्धा कब आना है?

(२) मध्यप्रदेशकी यात्रा करनी है या नही?

(३) यदि करनी है तो क्या तुम इसका कार्यक्रम तैयार करोगे और साथ चलोगे? इन प्रश्नोका उत्तर देना।

अभी जल्दी आश्रममें आ सकूँगा, ऐसा नही दीखता। बगालके बाद तुरन्त बिहार, मध्य प्रदेश वगैरामे जाना है। मैं यह दौरा खत्म हो जानेपर ही अर्थात् शायद सितम्बरमे वहाँ आ सकता हूँ।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. आचार्य जुगलकिशोर, जो बादमें विद्यापीठमें चले गये थे, आप कांग्रेसके महामन्त्री और उत्तर प्रदेश सरकारके मन्त्री भी रहे।

३. डा० चौइथराम गिडवानी।

कार्यसमितिकी बैठक तो हुई ही नही, क्योंकि तीन ही सदस्य उपस्थित थे — जवाहरलाल, डॉ० नायडू और मैं। अणे साहब आनेवाले तो थे, लेकिन आये नही। इसलिए अजमेरके मामलेपर कोई विचार नही किया जा सका। फिर भी इसके बारेमे मुझसे मिलना जरूरी हो तो मिल जाना। हमे इस विषयमे घबरानेकी जरूरत नही। मैं अर्जुनलालजीको[1] खुद लिखनेवाला हूँ कि उन्हे जो-कुछ कहना हो वे मुझसे कहे।

आशा है, तुम सबकी तन्दुरुस्ती ठीक होगी। मैं ठीक हूँ। मैं आज शनिवारको बोलपुरमे हूँ और यहाँ सोमवारतक रहूँगा। मैं मगलवारको कलकत्ता जाऊँगा और वहाँसे तीन-दिनके लिए दार्जिलिंग। मैं बादका कार्यक्रम आजकलमें पक्का होनेपर भेजूँगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २८५२) की फोटो-नकलसे।

९६. रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे बातचीत[2]

३० मई, १९२५

श्री गांधीने बड़ी ही सावधानीसे अपना अभिप्राय स्पष्ट करते हुए कहा कि मैं आधुनिक कालकी जातियों और उपजातियोंके वर्गीकरणपर विश्वास नहीं करता, परन्तु मेरा विश्वास है कि समाजको प्रमुख [चार] व्यावसायिक वर्गोंमें बाँटना वैज्ञानिक दृष्टिसे उचित है। मैं मानव-समाजके उस व्यावसायिक विभाजनको ही मानता हूँ जिसमें ऊँच-नीचका कोई सवाल नहीं होता; केवल समाज-व्यवस्थामें जो विभिन्न कार्य किये जाते हैं, उन्हींका सवाल होता है।

कविने आशंका व्यक्त की कि यदि समाजमें ऐसे व्यावसायिक विभाजन भी चिरकालतक चलाये जायें तो कालान्तरमें निष्फलताके सिवाय उनमें से और कुछ निष्पन्न नहीं होगा। कविने अपना यह मत व्यक्त किया कि इस व्यावसायिक विभाजन-को जन्मपर आश्रित बना देना वैज्ञानिक और प्राकृतिक नहीं है; क्योंकि मानव-स्वभाव विविधता और व्यावसायिक चुनावमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रताकी अपेक्षा करता है।

१. अर्जुनलाल सेठी; अजमेरके प्रसिद्ध क्रान्तिकारी और राष्ट्रसेवी।

२. गांधीजी २९ मईकी रातको बोलपुर पहुँच गये थे। सी० एफ० एन्ड्रयूज और अन्य सज्जन उन्हें लेने आये थे। शान्तिनिकेतन पहुँच कर उन्हें कवि-निवासके एक फूलोंसे सजे हुए कमरेमें ले जाया गया। गांधीजीने कहा: "मैं सुहाग-रातके इस कमरेमें!" गुरुदेवने मुस्कराकर कहा: "हमारी हृदय-सम्राज्ञी शान्ति-निकेतन-बाला आपका स्वागत करती है।"

गांधीजी वहाँ तीन दिन रहे। इस बीच गुरुदेव और उनके बीच जो-जो बातें हुई उनका विवरण उपलब्ध नहीं है। सी० एफ० एन्ड्रयूजसे भी विभिन्न विषयोंके साथ-साथ चाय-बागानोंके मजदूरोंकी दशापर बातें हुई थी। उन सबका विवरण भी उपलब्ध नही है।

श्री गांधीने फिर बहुत ही प्रामाणिकताके साथ विस्तारपूर्वक अपना मन्तव्य समझाकर बताया। अन्तमें कविने उनसे अपने चरखे और खद्दरके कार्यक्रमको भी विस्तारसे समझानेके लिए कहा।

श्री गांधीने पूर्वी बंगालमें अपने अनुभवोंका वर्णन किया और बताया कि कताईके पुनरुत्थानसे वहाँके गाँवोंमें नये जीवनका संचार हुआ। है। स्पष्ट ही कवि इससे बहुत प्रभावित हुए क्योंकि उनका हृदय हमेशा ही ग्रामीणोंके कष्टोंसे द्रवित रहता आया है। श्री गांधीने साफ-साफ समझाया कि शिक्षितवर्गसे मैं केवल इतना ही चाहता हूँ कि वे प्रतिदिन निश्चित समयपर थोड़ी देर इसलिए सूत कातें कि अपने गरीब और दलित मानव भाइयोंके प्रति उनकी सहानुभूति सजीव रूपमें व्यक्त हो। उन्होंने जिस महान कार्यका बीड़ा उठाया है उसमें कविकी अमूल्य मदद माँगी। परस्पर अत्यन्त मैत्रीपूर्ण अभ्यर्थनाके बाद भेंट समाप्त हुई।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २-६-१९२५

९७. टिप्पणियाँ

काठियावाड़का चन्दा

काठियावाड़ियोंको खादी-प्रचारके निमित्त २०,००० रुपयें इकट्ठे करने थे। भाई मणिलाल कोठारीने मुझे तार द्वारा सूचित किया है कि यह रुपया इकट्ठा हो गया है। उनके सबसे बादमें आये हुए तारसे विदित हुआ है कि 'एक मित्रने कपास खरीदनेके लिए ५,००० रुपये दिये हैं तथा ऊपरसे गरीबोंको मुफ्त चरखे बाँटनेके लिए १,००० रुपये और दिये हैं। यह रकम आपके द्वारा प्राप्त चन्देको मिलाकर २०,००० रुपये हो जाती है।' निश्चित की गई यह राशि इतनी शीघ्रतासे इकट्ठी कर लेनेपर मैं काठियावाड़ियोंको और भाई मणिलालको धन्यवाद देता हूँ।

कैदी प्रागजी देसाई

भाई कल्याणजी, जो अभी कराची जेलमें भाई प्रागजी देसाईसे मिलकर वापस आये हैं, लिखते हैं.[1]

पत्रमें इशारा यह है कि दक्षिण आफ्रिकामें प्रागजी भाईका जेलका पहला अनुभव था, इसलिए वे वहाँ उत्तेजित हो जाते थे। अब तो वे पक्के हो गये हैं फिर उनका मन शान्त क्यों न रहे?

१. यहाँ नहीं दिया गया है। लेखकने इसमें लिखा था कि जेलमें प्रागजी भाई आरामसे हैं। उसके द्वारा उन्होंने गांधीजीको यह कहलाया था कि अब वे वैसे कैदी नहीं हैं, जैसे दक्षिण आफ्रिकामें थे।

कराचीमें अन्त्यज शाला

भाई कल्याणजीने मुझे इसी पत्रमे सूचित किया है कि भाई नारणदास कराची-मे अपनी जिम्मेदारीपर चार अन्त्यज शालाएँ चला रहे है। इन शालाओमें शिक्षक ब्राह्मण है। वे विद्यार्थियोसे शालाओमे ही दाँत साफ करवाते है, उनको वही स्नान करवाते है और भोजन कराते है। इसलिए वे भली-भाँति स्वच्छ रहते है। दाँत साफ करवानेका नियम रखना तो अन्त्यजेतर शालाओमे भी होना चाहिए। शारीरिक स्वस्थता दाँतोकी सफाईपर बहुत-कुछ निर्भर है, यह बात लोग आम तौरपर नही जानते, नही तो जिन शालाओके बालकोके दाँत साफ न हो उनके शिक्षक दण्डनीय माने जाये।

कर्मचारियोंको छुट्टी

स्वय गुणग्राही होनेके कारण मै जहाँ भी कोई अच्छी बात देखता हूँ वहाँसे उसे सीखनेमे कोई सकोच नही करता। 'बाइबिल'मे कहा गया है कि रविवारका दिन ईश्वरकी प्रार्थनाके लिए रखना चाहिए। जिस दृष्टिसे यह बात कही गई है उसका पालन तो बहुत ही कम ईसाई करते है, किन्तु इस दिन नौकरीसे विश्रान्ति और छुट्टी तो मश्चिममे लगभग सभी जगह रहती है। इस दिन छुट्टी रखनेसे काममे कोई कमी नही हुई है। उलटे देखनेमे यह आया है कि सर्वत्र काम और ज्यादा अच्छा होता है। सप्ताहमे ऐसा एक दिन हिन्दुस्तानकी खानगी पेढियोमे मनाया जाये तो अच्छा हो, ऐसा विचार करके एक भाईने बम्बई से लिखा है।[1]

मेरी बातको कोई महत्त्व देगा या नही यह तो मै नही जानता, किन्तु मै उक्त सुझावका पूरा समर्थन करता हूँ। यदि व्यापारी स्वय छुट्टी ले और अपने कर्मचारियो-को भी छुट्टी दे तो महीनेमे कम काम और कम कमाईकी जोखिम होनेपर भी उनको और उनके कर्मचारियोको बहुत-कुछ फायदा होगा, इस बारेमे मुझे कोई शका ही नही है। सरकारी विभागोमे तो रविवारकी छुट्टी रहती ही है, किन्तु यह नही कहा जा सकता कि इससे कामका कुछ हर्ज हुआ है। अग्रेजी पेढियोकी दुकानोंमे रविवारको कामकाज बन्द रहता है, किन्तु जहाँतक हम जानते है इससे उनको भी कोई नुकसान नही हुआ है। मै नही समझता कि सुबहसे लेकर सायकालतक काम करनेवाली पेढ़ियोमे बहुत ज्यादा मुनाफा होता होगा। इससे उनकी हानि तो स्पष्ट दिखाई देती है। उनमे न तो दुकानदारोको साँस लेनेका समय मिलता है और न उनके कर्मचारियोको। जिनका लगभग पूरा दिन दुकानमे ही जाता है और जो घरमे केवल खाना खाते और सोते ही है, वे गृहस्थ नही, दुकानस्थ ही कहे जाने चाहिए। वे अपने बाल-बच्चोकी देख-रेख नही कर सकते। उनके बाल-बच्चोको उनका साथ तो मिल ही कैसे सकता है? उनको अपनी तन्दुरुस्तीतक ठीक रखनेके लिए नित्य दवाएँ लेते रहनेकी जरूरत होती है। नौकरोकी हालत तो उनसे भी खराब होती

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। उसमें खानगी पेढ़ियोंमें काम करनेवालोंको सप्ताहमें एक दिन छुट्टी मिलनेके प्रश्नपर नवजीवनमें लिखनेकी प्रार्थना की गई थी।

है। मालिक अपनी मर्जीसे दुकानमे रहते हैं इसलिए उन्हे उसमें रस आता है। वे अपनी मर्जीके अनुसार दुकानसे गैरहाजिर भी रह सकते है। नौकर तो यह खयाल करते-करते ही अपना दिन गुजारता है कि यहाँसे कब छूटूँगा। इस हालतमे उसकी तन्दुरुस्ती अच्छी नही रहती तो इसमे आश्चर्य ही क्या है? इसके बजाय यदि उसको सप्ताहमे रविवार या दूसरा कोई दिन अवकाशके लिए मिल जाया करे और नित्य निश्चित घटोतक ही काम करना पडे तो उसको सन्तोष रहेगा और वह जल्दी ही मालिकके कामको अपना ही काम मानना सीख जायेगा।

ऐसे सुधार प्राय इसलिए नही हो पाते कि लोग सोचते है, पहल कौन करे? धन्धे अनेक हैं, उनमे से कोई एक धन्धेवाला भी पहल करे तो दूसरे उसका अनुकरण कर सकते हैं। नौकर भी कोई तरीका सोचे और मालिकोके सामने विनयपूर्वक सुझाव रखे तो सम्भवत. वह भी स्वीकार किया जा सकता है।

कताई-सदस्यताका मजाक

एक स्वयसेवकने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये है[1]

मैंने जानबूझकर गाँव या ताल्लुकेका नाम नही दिया है। वह है तो गुजरातका ही। मै यह बात इसलिए स्पष्ट कर रहा हूँ कि कोई यह न सोच ले कि मैंने हिन्दी या अग्रेजीके पत्रका अनुवाद किया है। मैं तो बाहर घूमता रहता हूँ, इसलिए दूरसे जो-कुछ उजला देखता हूँ, उसे दूध मान लेता हूँ। मै अपने मनमे यही सोचे बैठा था कि गुजरातके २,००० मताधिकारी तो शत-प्रतिशत खरे है। इसी बीच मुझे यह पत्र मिला।

उक्त समाचार सच ही होगा और जैसा एक जगह वैसा ही दूसरी जगह, इस नियमके अनुसार अगर सर्वत्र यही स्थिति हुई तो क्या होगा? यदि ऐसा हो तो हमे यह बात स्पष्ट रूपसे स्वीकार कर लेनी होगी। गुजरातमे २,०००की जगह दो मताधिकारी हो तो भी अच्छा है, किन्तु २०,०००की जगह २,००,००० कागजके सिपाही काम नही देंगे।

यदि सुविधाएँ देनेकी जरूरत हो ही तो वे दी जानी चाहिए। किन्तु यदि सारी सुविधाएँ देनेपर भी और विनय करनेपर भी लोग सूत कातनेके लिए तैयार न हो तो हम न तो उनसे जबरदस्ती सूत कतवा सकते है और न उनका नाम कांग्रेसके रजिस्टरमे ही रख सकते है।

तब कताई-सदस्यताका क्या हो? मैं जबतक सूत कातनेको महत्त्व देता हूँ और जबतक मुझे उसके बिना हिन्दुस्तानकी आर्थिक स्थितिमे सुधार होते नही दिखता, तबतक मैं कताई-सदस्यताका ही आग्रह करूँगा। मेरी स्थिति उस माँकी तरह ही सही है जो अपने बच्चेको उतना ही अधिक छातीसे लगाती है, जितना दूसरे लोग उसे दुतकारते और दुरदुराते हैं। जैसे माँके दिलमे दूसरोकी निन्दासे अपने बालककी

१. यह पत्र यहाँ नही दिया गया है। उसमें लेखकने अपने गाँवकी स्थिति बताई थी और कताई-सदस्यताके बाद कांग्रेस कार्यकर्ताओंने जो रवैया अख्तियार किया, उसका उल्लेख किया था।

योग्यता अथवा कल्याणके सम्बन्धमें शका नही होती वैसे ही मुझे 'कताई-सदस्यताकी योग्यता अथवा चरखेकी' लोक-कल्याणकी क्षमताके सम्बन्धमें कोई शका नही हो सकती। इसलिए मै तो चरखे से ही लगा रहना चाहता हूँ और अपने सब साथियो-को भी यही सलाह देता हूँ।

मेरा यह भी विचार है कि लोक-कल्याणकी दृष्टिसे जो सूत काता जाये वह महँगा न पड़े, सस्ता ही पड़े। किन्तु हमे लोगोकी हदसे ज्यादा खुशामद नही करनी चाहिए और उनको ऐसी सुविधाएँ नही देनी चाहिए जिनमे ज्यादा खर्च पड़ता हो। यदि लोगोको सूत कातनेके लिए तैयार करनेमे खर्च अधिक होता है तो सूत कातना निरर्थक समझना चाहिए, क्योकि इसका अर्थ तो यह हुआ कि हम सूत कातनेका आग्रह करने जाये तो कातनेवालेसे कुछ लानेके बजाय उलटे उसे कुछ दे आये। यह तो दिवालियेपनका व्यापार हुआ। इसमे सूत कातनेसे जो लाभ माना जाता है, वही समाप्त हो जाता है।

हमे सूत कातनेका प्रयोग वैज्ञानिक विधिसे करना है अर्थात् कातनेवाले सच्चे त्यागी स्त्री-पुरुष कितने मिलते है यह देखना चाहिए। सच्चे कातनेवाले वे लोग ही है जो अपने-आप २,००० गज सूत कातकर दे दे अथवा गरीब हो तो काग्रेसके दफ्तरसे रुई लेकर उसका सूत कातकर भेज दिया करे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३१-५-१९२५

९८. ग्राम-प्रवेश

जहाँ देखता हूँ वही सुखसे ज्यादा दु:ख दिखाई देता है और यह भी दिखाई देता है कि इस दु:खके कारण हम स्वय ही है।

बंगालके कितने ही अभिनन्दन-पत्रोमे मौसमी बुखार, काला आजार आदि बीमारियो-की बात सदा रहती है। बंगालके कार्यकर्त्ताओने मेरे निवेदनका उचित पालन किया है। मैंने चाहा था कि वे अभिनन्दन-पत्रोमें मेरी स्तुति न दे, अपनी स्थानीय स्थितियोका वर्णन दे। देखता हूँ कि प्राय. सभी अभिनन्दन-पत्रोमे मेरी इस प्रार्थनापर पूरे तौरसे ध्यान दिया गया है। इससे मुझे बहुत जानकारी मिली है। किसी-किसी जगह आबादी कम होती जा रही है, क्योकि वहाँ अनेक प्रकारकी बीमारियोसे अकाल मृत्यु बढती जाती है। शारीरिक व्याधियोके अतिरिक्त फसलको नुकसान पहुँचानेवाली एक नई मुसीबत और पैदा हो गई है। वह एक पौधा है जिसे 'वाटर हायसिंथ' कहते है। इसका देशी नाम तो मालूम नही हुआ है। कहते है कि कोई आदमी अनजाने इसे पश्चिमसे ले आया था। वह आया कहीसे हो, परन्तु वह अब पद्मा नदीमे मीलोतक फैला मिलता है। यह अनाजकी फसलको नष्ट कर देता है। यह जहरीला पौधा जिस-जिस हिस्सेमे देखा गया है, उसमे नदीके किनारेके खेतोमे धानकी फसल लग-भग चौपट हो गई है। सरकारने उसे निर्मूल करनेके उपाय तो किये है; परन्तु अभीतक तो उनमे से एक भी सफल हुआ नही दिखाई देता।

ऐसे विचित्र कष्टोंसे पीड़ित प्रदेशकी सहायता कौन कर सकता है? किस तरह कर सकता है? गाँवोके कष्टोका अनुभव किये विना उसके निवारणके उपाय किये नही जा सकते। आजके ग्राम्य-जीवनमे जो अज्ञान है, उसमे जव ज्ञानका प्रवेश होगा तभी हालत सुधर सकती है। लोगोको आरोग्यके नियमोका ज्ञान नही है। वे उसी तालावमे नहाते, मैल साफ करते और वर्तन धोते है। मवेशी उसी तालावमे पानी पीते है और मनुष्य भी उसीका पानी पीते है। जगह-जगह पानी भरा है उसे नालियाँ बनाकर निकालनेका उपाय किसीको नही सूझता और सूझता भी हो तो कोई भी उसे अपना काम नही मानता। तव करे कौन?

लोग इतने कंगाल है कि उन्हे खानेके लिए अच्छा और पौष्टिक भोजन चाहिए, सो भी नही मिलता, फिर दवाका खर्च कहाँसे लाये? आवहवा वदलना तो ग्रामीणोके लिए सम्भव ही नही।

कुछ रीति-रिवाज तो इतने खराव है कि उनसे शरीर और आत्मा दोनोका हनन होता है। वहुत छोटी आयुमे वालिकाओका विवाह कर दिया जाता है। तेरह वर्षकी वालिका बच्चेकी माँ वन जाती है! सात वर्षकी लड़की विधवा हो जाती है! कितनी ही तो पतिको पहचानती भी नही है। पति किसे कहते है, इसका ज्ञान सात सालकी वालिकाको हो भी कैसे सकता है?

क्या हम इसके इलाजके लिए सरकारसे मिन्नत करे? इन कुप्रथाओके निवारणका उपाय स्वराज्य मिलनेपर होगा या इनका उपाय किये विना स्वराज्य ही न मिलेगा?

इसका एक ही उपाय सुगम है। शिक्षित लोगोको सेवा-भावसे नम्रतापूर्वक देहातोमें जाकरके लोगोकी हालत जाननी चाहिए। इसमे वहुत-से वीमार पड़ेगे और वहुत-से मर भी जायेगे। हम जव यह सव सहन करना सीखेगे, इसका उपाय हमे तभी मिलेगा। तभी लोग उस उपायको पहचानेगे और अपनायेगे। मै यह जरूर मानता हूँ कि लोगोकी बुद्धिमे तर्कके प्रयोगसे वात विठा देना असम्भव नही तो कठिन अवश्य है। लोग तो हृदयके माध्यमसे ही समझेगे। हृदयके माध्यमसे तो केवल वे लोग ही वोल सकेंगे जिन्होंने सेवासे, प्रेमसे, त्यागसे लोगोका विश्वास प्राप्त कर लिया हो। सामान्यत. ससारके और विशेषत. भारतके इतिहासके पन्ने-पन्नेमें लिखा है कि जो लोग भावना-प्रधान होते है उन्हे कोई वात वुद्धिसे नही समझाई जा सकती। क्या यह सच नही है कि हृदय प्रधान है और वुद्धि गौण? और हृदय रूपी गगासे अछूती वुद्धि व्यर्थ है? हृदय शुद्ध न होनेके कारण और वहुत मायावी होनेपर भी रावणकी वुद्धि व्यर्थ रही और रामकी वुद्धि, हृदय शुद्ध होनेके कारण सहज ही अजेय रही।

देशवन्धु कहते है कि देहातको सुगठित किये विना स्वराज्य मिलना सम्भव नही है। अन्य लोग भी यही कहते हैं। वंगालके अनुभवसे मैने तो यही सीखा है कि हम जवतक देहातमे प्रवेश न करेगे, तवतक हिन्दुस्तानको नही पहचान सकेगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-५-१९२५

९९. बंगालमें कताई

बंगालकी यात्राका पहला भाग निर्विघ्न पूरा हो गया। निर्विघ्न इसलिए लिखना पड़ता है कि कितने ही मित्रोंको इसमे शक था कि मेरा स्वास्थ्य इस परिश्रमको सहन कर सकेगा या नही। मैंने बंगालमे जो हालत देखी है वह तो मेरी आशासे अधिक अच्छी प्रतीत हुई है। यहाँ बड़े-बड़े जमीदार सकुटुम्ब कातते है। यहाँ दीनाजपुरमे तथा अन्यत्र मैंने जमीदारो, वकीलो, बैरिस्टरो, अस्पृश्यो और हिन्दु-मुसलमानोको बड़ी-बड़ी सभाओमे एक साथ बैठकर कातते हुए देखा। यहाँ मैंने ऐसे सैकडो स्त्री-पुरुषोको, जो अच्छ खाते-पीते है, बढिया सूत कातते हुए देखा। ये सब लोग हमेशा नही कातते। मुझे तो इतनी ही बात सन्तोष दे रही है कि इतने स्त्री-पुरुष अच्छी तरहसे कातना जानते है और प्रसग आनेपर कातनेके लिए बैठते है। मैंने कताईका इतना अभ्यास भारतमें और कही नही देखा। दूसरी जगह जिस बातको स्त्री-पुरुष प्रयास करके पाते है, मैंने यहाँ यह बात स्वाभाविक पाई। जिस तरह विवाह इत्यादिके लिए अलहदा पोशाके होती है; जिस तरह घरकी पोशाक और दफ्तरकी पोशाक जुदी-जुदी होती है, उसी तरह बहुतोने खादीको भी अपनी पोशाकमे जगह दी है। यह बात ज्यादातर हिन्दुस्तानमे दूसरी जगह नही देखी जाती।

यहाँ मैंने खादी-विरोधी वातावरण देखा ही नही। अपरिवर्तनवादी और स्वराज्यवादी दोनो खादीका कम-ज्यादा उपयोग तो करते ही है। मैंने यहाँ चरखेकी निरुपयोगिता बतानेवाले सिर्फ तीन ही आदमी देखे; किन्तु वे भी प्रथम पक्तिके न थे। यहाँ नरम और गरम सभी दलोके लोग खादीका थोडा-बहुत उपयोग करते है।

यहाँकी पूनियोका मुकाबला कोई प्रान्त नही कर सकता। उनमे किरी बिलकुल नही होती। बहुत-सी जगह तो देव कपास जातिकी रुईका सूत काता जाता है। उसे न ओटनेकी जरूरत होती है और न धुननेकी। इस कपासकी रुई अँगुलियोसे निकाल ली जाती है, उसके रेशोको जमाकर उनकी पूनियाँ बना ली जाती है और इन पूनियोसे महीनसे-महीन सूत कात लिया जाता है। दूसरी कपास जो पहाडोमे होती है, बहुत घटिया किस्मकी है। उसका रेशा बहुत ही छोटा होता है। वह चिकनी भी नही होती। उसे धुनना पड़ता है; परन्तु उसमे भी किरी तो नही होती। उसकी पिंजाई अच्छी नही होती; परन्तु चूँकि सभीको रुई साफ धुननेकी आदत है, इसलिए कोई भी खराब नही धुनता। बाजारमे जो सूत दिखाई देता है उसमे भी किरी नही होती। दससे कम अकका सूत शायद ही कही दिखाई देता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ३१-५-१९२५

१००. पत्र : देवचन्द पारेखको

शान्तिनिकेतन
ज्येष्ठ सुदी ८ [३१ मई, १९२५][1]

भाईश्री ५ देवचन्दभाई,

आपका विस्तृत पत्र मिला। मेरे खयालसे तो मैं कुछ भी करनेका साहस नहीं कर सकता। इसलिए मैं आपका पत्र रामजीभाईको[2] भेज रहा हूँ। वे इसे पढ ले और इस सम्बन्धमें आपसे बात कर ले। उसके बाद आप सब जो उचित समझे, वह करे। हमें तो जैसे भी हो, काठियावाडको खादीमय बनाकर किसानोका जीवन सरल और सुखमय बनाना है। यदि इस सम्बन्धमें निर्णयके लिए मगनलाल और लक्ष्मीदासको बुलानेकी आवश्यकता हो तो उनको बुला ले।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[पुनश्च :]

मुझे अभी बंगालमें डेढ मास और लगेगा, फिर असम जाना होगा।

गुजराती पत्र (जी० एन० ५६९३)[1] की फोटो-नकलसे।

१०१. पत्र : मणिबहन पटेलको

ज्येष्ठ सुदी ८ [३१ मई, १९२५][3]

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। लम्बी चिट्ठी लिखनेका लोभ करूँ तो शायद लिख ही न सकूँ, इसलिए छोटा पत्र लिखकर ही सन्तोष करता हूँ। तुम्हें चूडियाँ[4] तो कभीकी मिल गई होंगी। ये मैंने कलकत्तासे लेकर भेजी हैं और दूसरी जो ढाकासे खरीदी हैं, अभी मेरे पास हैं। वे तुम्हें मेरे आनेपर ही मिलेंगी। तुम्हें चि० डाह्याभाईके बारेमें विस्तृत उत्तर महादेवने दिया होगा। उसे कमाना हो तो खुशीसे कमाये। उसकी तबीयत ठीक हो गई है, यह जानकर खुशी हुई। चि० यशोदासे[5] कहना कि

१. डाककी मुहरसे।

२. अमरेलीके रामजी हंसराज।

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

४. देखिए "पत्र : मणिबहन पटेलको", १४-५-१९२५।

५. डाह्याभाईकी पत्नी।

वह मुझे पत्र लिखे। बापूकी खूब सेवा करना और उनपर जो बोझ है उसमे तुम तीनो जितना हाथ बँटा सको, बँटाना। मुझे अभी बगालमे एक मास और बिताना होगा।

बापूका आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने

१०२. भाषण: शान्तिनिकेतनमें

३१ मई, १९२५

मै न तो आपसे यह कहता हूँ कि आप अपनी कविता छोड़ दीजिए, न यही कहता हूँ कि साहित्य या सगीत छोड दीजिए। मै सिर्फ इतना ही चाहता हूँ कि आप अपने इन तमाम कामोको करते हुए भी सिर्फ आघ घटा चरखेके लिए दे दीजिए। अबतक किसीने ऐसा नही कहा कि हम आधा घंटा भी नही निकाल सकते। चरखा हमारी प्रान्तीयताको मिटानेवाला है। आज उत्तरी हिन्दुस्तानका आदमी बगालमे जाकर अपना परिचय हिन्दुस्तानी कहकर देता है। बगाली दूसरे प्रान्तोमे अपनेको परदेशी मानते है। दक्षिणके लोग उत्तरमे जाकर विदेशी-जैसे बन जाते है। चरखा ही एकमात्र ऐसा साधन है कि जिससे यह भान होता है कि हम सब एक देशकी सन्तान है। हमने आजतक कुछ करके नही बताया, अत. कुछ करके तो बता दे। विदेशी कपड़ेका बहिष्कार एक ऐसी चीज है कि जिसके लिए सब मिलकर प्रयत्न कर सकते है, जिसमे सब एक-सा हिस्सा ले सकते है। अस्पृश्यता तो अकेले हिन्दुओको ही दु ख देती है, मुसलमानोके झगडे समय पाकर मिट जायेगे — पर खादीके बिना सारा देश दरिद्रतामे पडा-पडा सडता रहेगा। मध्य आफ्रिकामे निद्रा-का रोग पाया जाता है, — लोग महीनोतक बहोश पड़े रहते है और अन्तमे मर जाते है — हमारे देशके निद्रारोगकी सिवा चरखेके और दवा नही है।[1]

हिन्दी नवजीवन, १८-६-१९२५

१. इस भाषणका संक्षिप्त विवरण ३-६-१९२५ की अमृतबाजार पत्रिकामें भी उपलब्ध है।

१०३. भेंट : डॉ० एच० डब्ल्यू० बी० मोरेनोसे

शान्तिनिकेतन
३१ मई, १९२५

डॉ० एच० डब्ल्यू० बी० मोरेनोने जब दुबारा महात्मा गांधीसे भेंट की तो आंग्ल-भारतीय प्रश्नपर सविस्तार बात हुई। प्रारम्भमें ही डॉ० मोरेनोने उन कठिनाइयोंकी ओर इशारा किया जो सूत कातने और खद्दर पहननेकी श्री गांधीकी सलाहपर अमल करनेमें आती थीं; यदि यह मान भी लें कि खद्दरके पक्षमें दिये गये गांधीजीके तर्क सही है, तो भी आंग्ल-भारतीयोंको कामकी वह पद्धति-विशेष अपनानेमें ऐसी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा जिनपर वे पार नहीं पा सकते।

श्री गांधीने स्वीकार किया कि आंग्ल-भारतीयों-जैसे एक समूचे समुदायको कामके ऐसे तरीके अपनानेके लिए तैयार करना आसान नहीं है, लेकिन उन्होंने कहा कि मैं उनके मामलेमें धीरजसे काम लेनेको तैयार हूँ। फिलहाल मुझे इसी बातसे संतोष हो जायेगा कि आंग्ल-भारतीय लोग मेरे कताई-कार्यक्रमके प्रति अनुकूल मानसिक दृष्टिकोण अपना लें। कताईका मुख्य प्रयोजन पीड़ित जनताकी निर्धनताको कम करना ही है। कताई अमीरों और गरीबोंके बीच एकताका सूत्र है; और मैं तो भारतमें बसे, भारतका नमक खानेवाले अंग्रेजोंको भी यही सलाह दूँगा कि उन्होंने जिसे अपना देश बना लिया है, उसके प्रति वे सच्चे रहें और कताईको अपनायें।

डॉ० मोरेनोने गांधीजीका ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित किया कि फिलहाल कौंसिलोंमें, विधान-सभाओं और अन्य सार्वजनिक संस्थाओंमें आंग्ल-भारतीयोंको एक निश्चित अनुपातमें प्रतिनिधित्व मिला हुआ है। स्वराज्य हो जानेपर इस अल्पसंख्यक समुदायके साथ क्या व्यवहार किया जायेगा? भारतके अन्य बड़े-बड़े समुदायोंके बीच उसकी स्थिति क्या होगी?

श्री गांधीने जवाब दिया कि यदि आंग्ल-भारतीय अन्य जातियोंके साथ कदम मिलाकर चलें तो मैं नहीं समझता कि उनको कोई बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा। मेरा मत है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंको अपनी तरफसे कुछ रियायत करके भी आंग्ल-भारतीयोंको भारतकी प्रातिनिधिक संस्थाओंमें कुछ अधिक प्रतिनिधित्व सिर्फ इसलिए देना चाहिए कि वे अल्पसंख्यक हैं और उन्हें अधिक संरक्षणकी जरूरत है।

'खुद मुझे लग सकता है कि मैं इसे जरूरतसे ज्यादा अहमियत दे रहा हूँ लेकिन मैं अपने मनमें इतना जानता हूँ कि मैं बच्चेकी तरह इस छोटे समाजके प्रति इस कर्त्तव्यको पिताका कर्त्तव्य निभानेकी तरह मानता हूँ; फिर अन्य लोग चाहे जो भी कहें।'

डॉ० मोरेनोने कहा कि अभी आंग्ल-भारतीय लम्बे अर्सेके सम्पर्क और अपने रहन-सहनके एक खास तौर-तरीकेके कारण उन पदोंके लिए विशेष उपयुक्त हैं जिनपर वे अभी भारतमें रेल-विभाग, चुंगी-विभाग और अन्य विभागोंमें काम कर रहे हैं, क्या 'भारतीयकरण' का अर्थ इन पदोंको आंग्ल-भारतीयोंसे छीनकर भारतीयोंको दे देना है? इधर कुछ समयसे ऐसी आशंका आंग्ल-भारतीयोंके मनको बुरी तरह कुरेदती रहती है।

श्री गांधीने जवाब दिया कि सभी सेवाओंके लिए सबसे बड़ी कसौटी कार्य-क्षमता होनी चाहिए। यदि आंग्ल-भारतीय उन पदोंके लिए उपयुक्त हैं तो उन्हें कुछ समयतक अवश्य ही उनपर बने रहना चाहिए। कुछ समय बाद जब भारतीय भी कार्यक्षमताके आधारपर इन पदोंके योग्य हो जायेंगे तो उन्हें इन पदोंको प्राप्त करनेसे रोका नहीं जा सकता, लेकिन उस वक्ततक आंग्ल-भारतीयोंके लिए जीविका-के अन्य क्षेत्र भी खुल जायेंगे। भारतमें जो जातियाँ और समुदाय अभी ऊपर हैं, मैं यह नहीं चाहता कि उनको नीचे लाया जाये, बल्कि मैं तो यह चाहता हूँ कि स्वराज्य आनेपर जो नीचे हैं उनको भी ऊँचे स्तरपर ले जाया जाये। मैं एक उदासीन भारतीय ड्राइवर द्वारा चलाये जानेवाले इंजनकी अपेक्षा उस इंजनवाली रेलगाड़ीमें बैठना ज्यादा पसन्द करूँगा जिसे एक योग्य प्रशिक्षित यूरोपीय या आंग्ल-भारतीय ड्राइवर द्वारा चलाया जा रहा हो।

डॉ० मोरेनोने आंग्ल-भारतीयोंकी शिक्षाकी दयनीय दशाका उल्लेख करते हुए कहा कि धारा-सभाओंमें कभी-कभी यूरोपीयोंकी शिक्षाके लिए अनुदानोंमें कटौती करानेके प्रयत्न किये जाते हैं, और इसका आधार यह होता है कि अन्य शैक्षणिक अनुदानोंकी तुलनामें, उन्हें बहुत ही खुले हाथ राशियाँ दी जाती हैं। डॉ० मोरेनोने कहा कि उन अनुदानोंको बन्द करनेका अर्थ यही होगा कि निकट भविष्यमें यह समुदाय सामाजिक रूपसे बर्बाद हो जायेगा। इसपर श्री गांधीने कहा:

गलती यही है। मुझे कुछ रियायतें देकर भी आंग्ल-भारतीयोंको इसीलिए सन्तुष्ट रखना चाहिए कि वे अल्पसंख्यक हैं और उन्हें विशेष संरक्षणकी जरूरत है। जब बम्बईमें दंगे हुए थे और आंग्ल-भारतीयों और पारसियों दोनोंपर नृशंसतापूर्ण हमले किये गये थे, तब मैंने अपने भारतीय भाइयोंको बुरी तरह डाँटा-फटकारा था। भारतके सभी दलोंकी एकताकी बात कहते समय मैं उसमें आंग्ल-भारतीयों, पारसियों, यहूदियों, आदिका उल्लेख करता आया हूँ। इन सबको अलग रखकर एकता हो ही नहीं सकती। तब तो दुर्बलोंपर शक्तिशाली लोगोंकी निरंकुशता ही चलेगी। भारतके बड़े समुदायों, जैसे कि हिन्दुओं और मुसलमानोंका छोटे समुदायोंके प्रति यह एक पवित्र कर्त्तव्य है कि वे उन्हें संरक्षण दें।

आंग्ल-भारतीयोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें मैं कहूँगा कि वह शिक्षा उनकी नैतिकताको ऊँचा नहीं उठाती, क्योंकि अक्सर यात्रा करते समय मैंने देखा है कि आंग्ल-भारतीयोंमें यूरोपीयों और भारतीयोंके गुण होनेके बजाय दोनोंकी बुराइयाँ ही

है। भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी भाषाकी गन्दीसे-गन्दी गालियाँ रोज ही उनकी बोलचालमें शामिल होती रहती हैं। ऐसी दूषित रुचि तो आंग्ल-भारतीयोको स्वयं ही सुधारनी है। आंग्ल-भारतीयोंमें ऐसा हो क्यों रहा है; इसका कारण यही है कि वे अपने-आपको सामाजिक रूपसे अलग-थलग रखते हैं और अपने पड़ोसियोंके उत्तम गुणोंको ग्रहण करनेकी कोशिश नहीं करते। रेलवे प्लेटफॉर्मपर मैंने यह भी देखा है कि वे चटोरे भी होते जा रहे हैं। खाने-पीनेकी जो भी गन्दी और बीमारी पैदा करनेवाली चीजें उनको बिकती दिखाई पड़ती हैं, उनको वे चुपकेसे खरीद कर लोगोंकी आँखें बचाकर खा लेते हैं। जिह्वाका स्वाद मनकी रुचि बताता है।

डॉ० मोरेनोने इस बातकी ओर ध्यान दिलाया कि यह बिलकुल पक्की बात है कि अभीतक आंग्ल-भारतीयोंने कांग्रेसकी कार्रवाइयोंमें नहीके बराबर या बिलकुल दिलचस्पी नहीं दिखाई है। सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीके बंगालमें नेतृत्वके दौरान इस समुदायके तत्कालीन नेता डॉ० जे० आर० हेलैसको कांग्रेसमें शरीक होनेके लिए आमन्त्रित किया गया था। लेकिन जब यह बात समुदायके लोगोंमें फैली तो कुछ समयके लिए डॉ० हेलैसको समाजसे बहिष्कृत कर दिया गया था।

हम कांग्रेसमे आपका स्वागत करेंगे। आप क्यो नही आते? यदि आप बाहर बने रहे तो दोष किसका है? कमसे-कम मै तो उसी तरह बाहे फैला कर आपका स्वागत करूँगा, जैसे कि मै यहूदियो या पारसियोका करूँगा। यदि कांग्रेस सभीको अपने अन्दर शामिल नही करती, तो वह सच्ची राष्ट्रीय सस्था नही है।

सूतकी शर्तवाले मताधिकारके बारेमे महसूस होनेवाली कठिनाईको भी आप उसी तरह हल कर सकते है, जैसे कि अन्य लोगोने फिलहाल किया है। वे अपने ही स्थानसे सूत खरीदकर उसे भेज सकते है।

डॉ० मोरेनोने कहा कि इस समुदायमें दो तरहके लोग हैं, एक वे जिनका रुझान यूरोपकी तरफ है, दूसरे वे जिनका रुझान भारतकी तरफ है; लेकिन अब विचारोंमें शीघ्रतासे परिवर्तन हो रहा है।

श्री गांधीने कहा कि मैंने खुद गौर किया है कि आंग्ल-भारतीयोंके मतमें परिवर्तन हो रहा है। अब वे अपने-आपको भारतीय माननेकी तरफ झुक रहे हैं। यह मैंने अपने कई आंग्ल-भारतीय मित्रोकी बातचीतसे समझा है। कुछ आंग्ल-भारतीय चमड़ीके रंगको लेकर ही सिद्धान्त बघारने लगते हैं। थोथे बड़प्पनकी यह भावना बेकारकी चीज है।

असल कठिनाई तो तब आती है जब आप अपने समुदायके गरीब लोगोंकी स्थितिपर विचार करते हैं। वे पतनकी ओर जा रहे हैं और भारतीयोकी निम्नतम बुराइयोको अपनाते जा रहे है, क्योकि उनके और समुदायके समृद्धिशील भाइयोंके बीचकी खाई चौडी होती जा रही है। समृद्ध आंग्ल-भारतीयोंके लिए कोई साम्प्रदायिक समस्या नही है और वे अपनी योग्यतासे कही अधिक पा रहे हैं। आंग्ल-भारतीय विचारकोको अपने गरीब वर्गोंकी समस्या हल करनेके बारेमे अधिक सोचना है। हमारे यहाँ अस्पृश्योकी समस्या है। आपके सामने यही समस्या एक दूसरे रूपमे है।

दक्षिण भारतका एक आग्ल-भारतीय स्टेशन मास्टर मेरा मित्र है। उसने रहन-सहनका एक दिखावटी तरीका अपना लिया है। यह बडी गलत-सी बात है। मेरा यह मित्र २० सालकी सेवाके बाद भी ३०० रु० महीना पाता है, लेकिन चूँकि उसे यूरोपीय तौर-तरीकेसे रहना पडता है, इसलिए वह अपनी बीबी और चार बच्चोकी जरूरते पूरी करने और परिवारको उपयुक्त शिक्षाकी सुविधाएँ देनेके बाद एक पैसा तक नही बचा पाता। इस आग्ल-भारतीयने मुझे बताया है कि उसे लगता है कि इससे बर्बादी ही हाथ लगती है, फिर भी उसे रहन-सहनका ऐसा ढग कायम रखनेके लिए मजबूर होना पडता है, क्योकि वह यदि दूसरा कोई तरीका अपनाये तो रेलवेमे उसकी तरक्की बन्द ही हो जायेगी।

डॉ० मोरेनोने कहा कि आंग्ल-भारतीयोंको जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है उन्होंने उनमें से कुछ ही का बयान किया है। उन्होंने गांधीजीसे भारतके सच्चे मित्रके नाते उनके बारेमें सलाह माँगी और कहा कि आंग्ल-भारतीय देशकी मिट्टीसे ही जन्मे हैं और देशके साथ उनके हित स्थायी रूपसे जुड़े हुए हैं।

जवाबमें श्री गांधीने कहा कि मैं इन भावनाओंकी कद्र करता हूँ। आंग्ल-भारतीयोंके स्थायी हितोंकी तो सभी भारतीय चिन्ता करेंगे। आंग्ल-भारतीयोंको भारतीयोंसे अलग करनेवाली बातें तो बहुत कम हैं। मुझे खुशी है कि आपने इस मामलेमें मेरे साथ इतना दिल खोलकर बात की। उन्होंने कहा कि मैं अपने भारतके दौरोंमें कितने ही अन्य आंग्ल-भारतीयोंसे मिला हूँ। वे जब-तब मेरी सलाह लेने आते हैं, अनेकों ऐसे आंग्ल-भारतीय निजी तौरपर मुझसे मिलने आते हैं और सभी साम्प्रदायिक मामलोंमें मेरी सलाह लेते हैं। वे मेरे तर्कोंका औचित्य तो स्वीकार करते हैं, पर उन्हें अमलमें नहीं ला पाते। उनमें अमल करने लायक नैतिक बल नही है। गांधीजीने डॉ० मोरेनोको सलाह दी कि आपने जिस पवित्र कार्यको अपने जीवनका उद्देश्य बनाया है, उसे शिथिल न होने दें, क्योंकि आंग्ल-भारतीय समुदायकी मुक्ति सिर्फ इसी नीतिपर अमल करनेमें है। आपको आलोचनासे हतोत्साहित होकर विचारों और कार्योंमें संकीर्णता नहीं आने देनी चाहिए। इस सिलसिलेमें बंगालके बुद्धिजीवियों और देशके मेहनतकशोंका उदाहरण सामने है।

भेंटके अन्तमें डॉ० मोरेनोने श्री गांधीसे आंग्ल-भारतीयोंसे सम्बन्धित कई प्रश्न 'यंग इंडिया'के स्तम्भोंके जरिये पूछते रह सकनेकी इच्छा व्यक्त की ताकि सम्बद्ध प्रश्नोंपर सुविचारित उत्तर मिल जायें। श्री गांधीने कहा:

आपके समुदायके एक मित्रके नाते, मैं ऐसे प्रश्नोका उसी तरह स्वागत करूँगा जैसे कि उन सब लोगोके प्रश्नोका करता हूँ जो भारतमे जन्मे है या रहते है। इन मसलोके बारेमे यथाशक्ति सभी गलतफहमियाँ दूर करनेसे मुझे खुशी हासिल होगी ताकि हम भविष्यको और अच्छी तरह समझ सके। आखिर हम दोनो एक ही उद्देश्य अर्थात् आपके और मेरे अपने देश भारतकी उन्नतिके लिए काम कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २-६-१९२५

१०४. पत्र : जी० वी० सुब्बारावको[1]

१ जून, १९२५

प्रिय मित्र,

आपके पत्रमें उल्लिखित अनेक बातोंसे मैं सर्वथा अनभिज्ञ हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ३६२४) की फोटो-नकलसे।

१०५. पत्र : जितेन्द्रनाथ कुशारीको

१ जून, १९२५

प्रिय मित्र,

अल्पकालमें ही आपने जो प्रगति की है, उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। आशा करता हूँ कि यह प्रगति जारी रहेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत जितेन्द्रनाथ कुशारी
सत्याश्रम
डाकखाना बहरोक
जिला ढाका

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ७१८७) की फोटो-नकलसे।

१. जी० वी० सुब्बाराव पतुलु, १९१४ में कांग्रेसके महामन्त्री। १९१७ में वे पुनर्निर्वाचित हुए थे, किन्तु उन्होंने त्यागपत्र दे दिया था।

१०६. पत्र : एस० ए० वझेको[1]

शान्तिनिकेतन
१ जून, १९२५

मैंने आपका ज्ञापन गौरसे पढ लिया है। वह बहुत उपयोगी और तर्कपुष्ट है। लेकिन उसमे गलतफहमीकी गुंजाइश भी है। उसका यह अर्थ भी निकल सकता है कि यदि आपके सामने विकल्प रखा जाये तो आप भेदभावको वैधानिक रूप देनेके ही पक्षमे रहेगे। यो तो मै यही समझा हूँ कि आप ऐसा कोई विकल्प स्वीकार नही करेगे। किसी सामान्य नियम या प्रणालीको तो आसानीसे बदला जा सकता है, किन्तु विधान-सभा द्वारा लिखित कानून बन जानेपर उसे सशोधित करना बडा ही कठिन काम होता है। हममे से इने-गिने लोग ही न्यायाधीश बन सकते है, लेकिन यदि हमारे पूरे समुदायको वैधानिक व्यवस्थाके जरिये न्यायाधीश बननेके अधिकारसे वचित कर दिया जाये तो हम उसे कैसे पसन्द कर सकते है? प्रस्तावित कानूनी प्रतिबन्धका असर शायद एक भी एशियाईपर नही पडेगा। फिर भी उसका विरोध तो अवश्य करना चाहिए। यह नीति-सूत्र है कि कानूनी तौरपर कोई प्रतिबन्ध न लगाया जाये और प्रशासनके व्यवहारमे कोई सख्ती न की जाये, वल्कि इसके विपरीत असमानताकी नीतिपर अमल करनमे प्रशासन ढिलाई वरते। मै उस रगमचके सभी अभिनेताओको जानता हूँ। स्मट्सका 'फितरतीपन' दुनियामे मशहूर है, फिर भी हर्टजोग या बेयर या क्रेसवेलकी अपेक्षा उनकी दृष्टि अधिक न्यायपूर्ण है। मै तो यह सब केवल इसलिए कर रहा हूँ कि इससे आपको अपनी बात और अधिक स्पष्ट रखनेमे मदद मिल सकती है। फिर भी यदि आपका यही मत हो कि यदि भेदभाव किया ही जाना है तो उसे ठोस कानूनी शक्ल देना जरूरी है, तो फिर मुझे कुछ कहना नही है। उस परि-स्थितिमे हमारा परस्पर मतभेद रहा। भेदभावके मामलेमे आस्ट्रेलिया चरमसीमापर है, पर वहाँ भी राजनीतिज्ञ लोग वैधानिक सशोधनका सहारा लिये बिना ही जब चाहे विवेकशील ढगसे व्यवहार करना शुरू कर सकते है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. इम्पीरियल सिटिजनशिप एसोसिएशन (साम्राज्यीय नागरिक सघ) के मन्त्री, भारत सेवक समाज (सर्वेट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी) के सदस्य और प्रवासी भारतीयोंके हितमें काम करनेवाले एक प्रमुख कार्यकर्ता।

१०७. भाषण : भवानीपुर, कलकत्तामें[1]

२ जून, १९२५

श्री गांधीने कहा कि चरखा मुझे बहुत प्रिय है और यह जानकर कि राष्ट्रीय स्कूलके पाठ्यक्रममें उसे स्थान मिल गया है, मुझे खुशी हुई है। आशा है कि लड़के मन लगाकर कातेंगे और कुशल कतैये बनेंगे। ऐसे हर स्त्री-पुरुष और बच्चेसे, जिसके दिलमें आम जनतासे हमदर्दी है, मैं प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा चरखा चलानेकी आशा करता हूँ। श्री गांधीने कहा कि चरखा ही आम जनता और उच्च वर्गोंको जोड़नेवाली एकमात्र कड़ी है।

श्री गांधीने अस्पृश्यता और हिन्दू-मुस्लिम एकताकी भी चर्चा की।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-६-१९२५

१०८. वाइकोम

वाइकोम सत्याग्रहका[2] जनताके ध्यानमें बना रहना जरूरी है। उसे यह मालूम होना चाहिए कि सत्याग्रही इस समय पहलेसे भी ऊँचे प्रकारके अनुशासनका पालन कर रहे हैं। पहले उनको आगे बढ़नेसे रोकनेके लिए जो स्थूल बाधा खड़ी की गई थी उसके सामने बैठकर वे चरखे चलाते थे। यह बाधा थी पुलिस द्वारा रक्षित एक बाड़। पाठक जानते हैं कि अब वह बाड़ हटा दी गई है, पहरेदार हटा लिये गये हैं और वहाँ ज़ानेकी मनाहीका हुक्म भी वापस ले लिया गया है और अब सत्याग्रही अपने आप स्वीकार किये गये नैतिक प्रतिबन्धका पालन स्वेच्छासे कर रहे हैं। अवश्य ही वे यह आशा करते हैं और यह उन्होंने साफ-साफ जाहिर भी कर दिया है कि वे सवर्ण हिन्दू, जिनका इससे सीधा सम्बन्ध है, कठोरता त्याग देंगे तथा सरकार स्वयं शीघ्र सड़कोंको उन लोगोंके लिए, जो 'अनुपगम्य' कहे जाते हैं, उसी प्रकार खोल देनेकी घोषणा कर देगी जिस प्रकार वे अभी दूसरे सभी मनुष्यों — यहाँ तक कि बिल्लियों और कुत्तोंके लिए भी खुली हैं। त्रावणकोरकी हिन्दू सरकारको इस अमानुषिक अन्धविश्वासका, जो हिन्दू धर्ममें घुस आया है, समर्थन नहीं करना चाहिए। यह उसका दलित जातियोंके प्रति दोहरा कर्त्तव्य है — एक तो प्रत्येक दयालु

१. यह भाषण राष्ट्रीय शाला और 'सेवक समिति' की ओरसे भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२. जो वाइकोम (केरल) में एक मन्दिरको और उसके पासकी सड़कको एजवहा और अन्य पिछड़ी जातियोंके लिए खोलनेके लिए १९२४ में चलाया गया; देखिए खण्ड २३, पृष्ठ ५४७-५२।

सरकारका अपने अधीनस्थ दलित मानवोके प्रति जो दायित्व होता है, उसके कारण तथा दूसरे एक हिन्दू सरकारका हिन्दुत्वके प्रति जो दायित्व है, उसके कारण।

यह मैंने शासनके प्रति कहा।

त्रावणकोरके सवर्ण हिन्दुओने मुझसे वादा किया था कि वे सरकारको तबतक चैन न लेने देगे जबतक उक्त सडके अनुपगम्य पचमोके लिए खोल नही दी जाती। यो ऐसा वादा करना जरूरी नही था, क्योकि यह तो उनका कर्त्तव्य ही है। उन्होने मुझे विश्वास दिलाया था कि वे समस्त त्रावणकोरमे सभाएँ करेगे, जिससे सरकारको स्पष्ट रूपसे यह दीख जाये कि वे इन पचमोके लिए सडकोपर चलनेकी मनाहीको हिन्दुत्वके विरुद्ध मानते है और उसे असह्य समझते है। सार्वजनिक सभाएँ करनेके अतिरिक्त उन्हे सवर्ण हिन्दुओके दस्तखत करके अन्त्यजोकें लिए इन सड़कोको खोलनेका एक ऐसा बृहद आवेदन भी प्रस्तुत करना था। मालूम नही जिन सज्जनोने मुझे ऐसा आश्वासन दिया था, वे अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर रहे है अथवा नही।

अब कुछ उनके बारेमे जिन्हे गलतीसे 'अनुपगम्य' कहा जाता है। मुझे मालूम हुआ है कि वे धीरज खो रहे है। उन्हे धीरज खोनेका अधिकार है। मुझे यह भी बताया गया है कि सत्याग्रहसे उनका विश्वास उठ रहा है। यदि यह सच है तो विश्वासकी इस कमीसे यह जाहिर होता है कि वे नही जानते, सत्याग्रह कैसे अपना असर डालता है। यह एक ऐसी शक्ति है जो अपना काम चुपचाप तथा देखनेमें धीरे-धीरे करती है। सच कहे तो दुनियामे ऐसी कोई दूसरी शक्ति नही है जिसका प्रभाव इतना सीधा और त्वरित होता हो। लेकिन कभी-कभी पशुबलसे सफलता अधिक द्रुत गतिसे प्राप्त होती दिखाई पडती है। शारीरिक श्रम द्वारा रोजी कमाना सत्याग्रह द्वारा रोजी कमानेका एक प्रकार है। स्टाक ऐक्सचेजके जुएसे अथवा घरमे सेंध लगानेसे, जो कि सत्याग्रहके विपरीत क्रियाएँ है, प्रत्यक्षत धनकी उपलब्धि तत्काल हो सकती है। लेकिन मै ऐसा मानता हूँ कि दुनियाने अबतक यह समझ लिया है कि घरमे सेंध लगाना तथा जुआ खेलना, रोजी कमानेके कोई ढग ही नही है तथा उनसे जुआरी तथा चोरको बजाय लाभके नुकसान ही होता है। अनुपगम्य पचम अन्ध-विश्वासी सवर्णोसे खुली लडाई लडकर जबरदस्ती मन्दिरके पासकी सडकोपर जा सकते है, लेकिन वे इससे हिन्दुत्वमे सुधार तो नही कर सकेगे। उनका तरीका लोगोको जबरदस्ती बदलनेका तरीका होगा। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि उनमें से कुछ लोग, अपने कष्ट तत्काल कम न होनेकी परिस्थितिमे ईसाई धर्म, इस्लाम अथवा बौद्ध धर्म ग्रहण कर लेनेकी धमकी भी देते है। मेरे तुच्छ विचारमे जो लोग धमकीका प्रयोग करते है वे धर्मका अर्थ नही जानते। धर्म तो हमारे जीवन-मरणका प्रश्न है। आदमी अपना धर्म-परिवर्तन ऐसे नही कर लेता जैसे वह अपनी पोशाक बदल लेता है। धर्म तो उसके साथ उसकी मृत्युके बादतक लगा रहता है। यदि वह अपने धर्मको मानता है तो दूसरोंको अनुग्रहीत करनेके लिए नही बल्कि इसलिए कि वह इसके अलावा और कुछ कर ही नही सकता। एकपत्नी-व्रती अपनी पत्नीसे अनन्यभावसे प्रेम करता है। उसकी पत्नी बेवफा हो जाती है वह तब भी उसके प्रति निष्ठावान रहता है। उससे उसका

गठबन्धन खूनके रिश्तेसे भी अधिक दृढ होता है। धर्म-बन्धन भी, यदि उसका कुछ मूल्य हो तो, उसी प्रकारका होता है। धर्म तो हृदयका विषय होता है। एक अस्पृश्य जो जुल्म किये जानेके बावजूद हिन्दुत्वका पालन करता रहता है, अपने आपको ऊँचा बतानेवाले हिन्दूसे ज्यादा सच्चा हिन्दू है, क्योकि वह उच्चवर्णी हिन्दू तो अपनी उच्चताके अपने दावेसे ही हिन्दुत्वका निषेध करता है। इसलिए जो पचम लोग हिन्दू धर्मको छोडनेकी धमकी देते है, वे मेरी सम्मतिमे अपने धर्मसे विश्वासघात करते है।

लेकिन सत्याग्रहीका मार्ग स्पष्ट है। उसे इन सभी विपरीत धाराओके मध्यमे अविचल खडा रहना चाहिए। उसे न तो अधे रूढिवादियोके प्रति अधीर होना चाहिए और न दलित लोगोकी विश्वासहीनतासे खीझना ही चाहिए। उसको जानना चाहिए कि उसका कष्टसहन कठोरसे-कठोर धर्मान्ध मनुष्यके कठोरतम हृदयको भी पिघला देगा तथा युगोसे दबाकर रखे हुए डगमगाते पचम भाईकी रक्षाके लिए दीवारका काम देगा। उसे जानना चाहिए कि राहत तभी मिलेगी जब उसकी कमसे-कम आशा होगी; उस कठोर तथा दयालु प्रभुका ऐसा ही तरीका है। वह अपने भक्तोकी पूरी-पूरी अग्नि-परीक्षा लेता है और उन्हे एक रजकणसे भी अधिक तुच्छ बनाकर खुश होता है। अपने सकटके समय सत्याग्रहीको अपने मनमे पौराणिक कथामे वर्णित उस गजराजकी प्रार्थनाका स्मरण करना चाहिए, भगवानने जिसकी रक्षा उस समय की थी जब वह बिलकुल हताश हो चुका था।

आंग्ल-भारतीय

मैने श्री मोरेनोको यह सुझाव दिया था कि आग्ल-भारतीयोको अन्य भारतीयोके समान ही सूत कातना और खद्दर पहनना चाहिए। मै देखता हूँ कि कुछ सज्जनोने इस सुझावकी हँसी उडाई है। इस सुझावकी हँसी उडाना है तो बडा आसान, परन्तु मुझे अपनी दवापर कामिल यकीन है और मै जानता हूँ कि आज लोग जिस बातपर हँस रहे है, उसीको बहुत जल्दी बिलकुल ठीक समझने लगेगे। आग्ल-भारतीय भाइयोके प्रति मेरे मनमे कोई दुर्भाव नही है। मेरी स्वराज्यकी कल्पनामे उनके लिए भी उतना ही स्थान है जितना भारतमे पैदा हुए या भारतको अपना देश बना लेनेवाले किसी दूसरे मनुष्यके लिए है। इसलिए चाहे कुछ लोग इस समय मेरी बातका गलत अर्थ लगाये, परन्तु मै जानता हूँ कि अन्तमे उनकी गलतफहमी दूर हो जायेगी। मै एक हिन्दुस्तानी और दूसरे हिन्दुस्तानीमे कोई भेद नही करता। मैने आग्ल-भारतीयोमे भी गरीब वर्गके बहुत लोग देखे है और मै उनसे मिला हूँ। यदि उन्हे थोडे भी सुखसे रहना हो तो उन्हे दूसरे गरीब हिन्दुस्तानियोका साथ देना होगा। उन्हे उनके दु खमे शरीक होना और जहाँतक हो सके उनके जैसा जीवन व्यतीत करना होगा। खादी सब लोगोकी सामान्य पोषाक हो सकती है, तो फिर उन्हे औरोके साथ-साथ सूत क्यो नही कातना चाहिए? देशके गरीबो और अपने बीचकी सहानुभूति-सूचक इस प्रत्यक्ष और व्यापक कड़ीको अपनानेमे शर्मकी कोई बात नही है। अपनी जन्मभूमिके दीन-दरिद्र लोगोके साथ अपनेको तद्रूप करनेमे आग्ल-भारतीय भाई पीछे क्यो रहे? उन्हे मामूली हिन्दुस्तानीसे अपनेको बड़ा और ऊँचा समझनेकी झूठी शिक्षा दी गई है। इस

उच्चताकी झूठी भावनाके कारण वे दरअसल अपने ही घरमे विदेशी-जैसे बन गये है। और वे अग्रेजोमे तो मिल नही सकते। उनके लिए किसी दूसरे देशको अपना देश समझना नामुमकिन है। यदि वे किसी उपनिवेशमे जानेकी कोशिश करे तो वहाँ उनको उसी दुर्गति और उन्ही निर्योग्यताओका सामना करना होगा, जिनका सामना एक मामूली हिन्दुस्तानी प्रवासीको करना होता है। इसलिए मैंने बडे नम्रभावसे और ऐसी सचाईसे, जिसके मूलमे मेरा गहरा विश्वास है, यह कहा है कि उन्हे अपने जीवन सम्बन्धी विचार बदलने चाहिए। उन्हे वैसा ही होना चाहिए, जैसे वास्तवमे वे है अर्थात् भारतके लोगोकी तरह। तब उनमे उचित सन्तुलन आ जायेगा, वे अपने माता-पिता — दोनोके सद्‌गुणोको ग्रहण करेगे और खुद अपनी, अपने देशकी तथा अपने यूरोपीय माता या पिताकी भारी सेवा करेगे। उस अवस्थामे, अपनी एकदम उचित स्थितिको प्राप्त करनेके बाद, वे अग्रेजोसे जो-कुछ कहेगे उनपर उसका असर होगा और वे उनसे अपने जाती तजुर्बेकी ताकतके साथ बाते कर सकेगे। मैने डाक्टर मोरेनोसे न यह कहा था और न अब कहता हूँ कि आग्ल-भारतीय समाजके गरीबसे-गरीब लोग भी सूत कातकर उससे गुजर करे और उसीमे सन्तोष माने। फिर भी इस बातका कोई कारण दिखाई नही देता कि राष्ट्रीय दृष्टिसे उनमे से बडसे-बडे लोग भी सूत क्यो न काते? हाँ, मुझे यह कहते हुए जरा भी हिचकिचाहट नही होती कि उनमे जो लोग बेहद गरीब है, वे अच्छी तरहसे बुनाई सीख ले। यह एक सहायक धन्धा है। जो लोग सीख सकते हो, वे इसे ईमानदारीके साथ रोटी कमानेके लिए सीखे, क्योकि कुशलतासे और कलात्मक बुनाई करनेवाले लोग ४० रु० से ५० रु० मासिकतक पैदा कर सकते है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९२५

१०९. खादी प्रतिष्ठान

बाढ और अकालके सकटको दूर करनेमे चरखा कहाँतक सहायक हो सकता है, इसका जिक्र मैंने अन्यत्र किया है। यह अपने-आपमे एक स्वतन्त्र प्रयोग है। परन्तु इससे जो अनुभव आचार्य राय तथा जैसा कि वे उन्हे मानते है उनके दाहिने हाथ, सतीश बाबूने प्राप्त किया है, उसकी इतिश्री इस प्रयोगसे ही नही हो जाती। वे दोनो रसायनशास्त्री है। उनका वैज्ञानिक मस्तिष्क उन्हे इस बातकी छानबीन करनेको मजबूर करता है कि बगालके किसानोको सदाके लिए बतौर एक सहायक धन्धेके चरखा और खद्दर किस हदतक उपयोगी हो सकता है। एक छोटा-सा प्रयोग बढ़ते-बढ़ते एक बडी सस्था — खादी प्रतिष्ठान — के रूपमे परिणत हो गया है। बंगालके कितने ही हिस्सोमे उसकी शाखाये खुल गई है तथा और भी खोले जानेका विचार है। उसका उद्देश्य शुद्ध खादीका निर्माण और उसका विक्रय करना है। उसका उद्देश्य यह भी है कि पुस्तको आदिके प्रकाशन और मैजिक लैटर्नके प्रयोग सहित व्याख्यानोके द्वारा खादी और चरखेको लोकप्रिय बनाया जाये। अपेक्षाकृत अधिक स्थायी बनानेके

लिए, उसे एक सार्वजनिक ट्रस्टका रूप दे दिया गया है। मेरे सामने ट्रस्टका दस्तावेज और उसके आय-व्ययका लेखा मौजूद है। मै इन बातोका जिक्र यहाँ इसलिए करता हूँ कि मैने पबनाकी एक सभामे एक सज्जनसे वादा किया था कि मै 'यग इडिया' मे प्रतिष्ठानके कामका जिक्र करूँगा। खादी-प्रतिष्ठानके चरखेको मैने बगालमे प्राप्य चरखोमे सर्वोत्तम पाया है और इसलिए उसे समूचे बगालके लिए उपयुक्त बताया है। उसमे सुधार करनेकी कोशिश भी की जा रही है। एक महाशयने खादी-प्रतिष्ठान-की खादीके महँगे होनेकी शिकायत की थी। मैने उनसे वादा किया था कि मैं इस शिकायतकी निस्बत 'यग इडिया' मे लिखूँगा। एक अर्थमे यह इल्जाम सही कहा जा सकता है। खयाल यह है कि खादी बड़से-बड़े पैमानेपर तैयार हो और चरखा प्रत्येक घरमे चले, ट्रस्टके सस्थापकगण खद्दरको स्वावलम्बी और सूतको अच्छी किस्म-का बनाना चाहते हैं। इसलिए उन केन्द्रोमे भी जो खादी-उत्पादनके अनुकूल नही है, उसी व्यवस्थाके अन्तर्गत काम होना चाहिए। इस प्रकार व्यवस्थापकगण तमाम खादी इकट्ठी करके, औसत निकालकर खादीकी कीमत निश्चित कर सकते हैं। इससे हम इस नतीजेपर पहुँचते है कि केवल वे ही लोग खादी-प्रतिष्ठानसे सस्ती खादी बेच सकते है जो अनुकूल केन्द्रोमे काम करते हो। फिलहाल तो खादीकी बिक्रीकी चिन्ता नही है, क्योकि जो-कुछ थोड़े केन्द्र अभी शुद्ध खादी तैयार करते हैं उनके ग्राहक ऐसे बने-बनाये है कि जो कीमत आदिकी परवाह नही करते। प्रतिष्ठान अब भी घाटा उठाकर खादी बेच रहा है, पर वह घाटेको कमसे-कम करनेकी कोशिश कर रहा है। वह हमेशा ही दानके बलपर नही चलाया जा सकता। प्रतिष्ठान द्वारा बेची जानेवाली खादीकी कीमत कम करनेकी कोशिश हर तरहसे की जा रही है, इस बातके बारेमे मै आश्वस्त हूँ। और यह बात हर शख्स जानता है कि प्रतिष्ठानमे किसीका कोई निजी स्वार्थ नही है। उसके मुख्य कार्यकर्त्ता तो रोजी अलगसे कमाते है और गाँठका खाकर उसमे काम करते हैं। उन्होने प्रतिष्ठानको अपना जीवन ही अर्पित कर दिया है। अबतक मैने खादी-उत्पादनके ५ और सुसगठित केन्द्रोका निरीक्षण किया है। वे ये है — कोमिल्लामे अभय आश्रम, मलिकन्दामे डॉ० प्रफुल्लचन्द्र घोषका आश्रम, चटगाँवमे प्रवर्तक सघका, पवनामे सत्सग आश्रम और दुआडडू खादी केन्द्र। इस आखिरी आश्रमको मै खुद नही देख पाया, पर उसके मुख्य कार्यकर्त्ताओसे हुगलीमे मिला हूँ, उनकी खादी देखी है और उनके कामका हाल भी सुना है। प्रवर्तक सघ अबतक अर्ध-खादी अर्थात् मिलावटवाली खादी भी तैयार करता रहा है। पर अब जहाँतक चटगाँवका सम्बन्ध है, उसने केवल शुद्ध खादी ही रखनेका निश्चय कर लिया है। कुटियाण्डु नामक जगहमे तो वे प्रयोग शुरू कर ही चुके है, परन्तु व्यवस्थापकोने सारे चटगाँव जिलेके लिए आखिरी निर्णय, मेरी यात्राके समय किया है। उनके कल-कत्ता भण्डारमे तथा मुख्य कार्यालय चन्द्रनगर तथा कलकत्ता-स्थित भण्डारमे अभीतक अर्ध-खादी है। पर वे जितनी जल्दी हो सके इस अर्ध-खादीको समाप्त कर देना चाहते है। वे इस सिद्धान्तको कुबूल करते है कि अर्ध-खादीसे खादी आन्दोलनको लाभ नही होता। ये सब सस्थाएँ अच्छा काम कर रही है। कांग्रेसकी सस्थाओके द्वारा भी

कही-कही कुछ काम हो रहा है। मै तो इन तमाम सस्थाओके कामको, यद्यपि नामसे नही पर भावरूपमे, काग्रेसका ही काम मानता हूँ। जरूरत इस वातकी है कि तमाम विखरी हुई शक्तियाँ एक सूत्रमे बँध जाये जिससे समय, बुद्धि, शक्ति, और धन कम खर्च हो। इन सस्थाओके अध्यक्ष आपसमे मिले, अपने अनुभवोका आदान-प्रदान करे और एक सयुक्त कार्यक्रम वना ले। और यह काम समयपर ही होना चाहिए। सवाल यही है कि इसमे जल्दी की जा सकती है या नही। खादी-प्रतिष्ठानको एक लाभ यह है कि उसके पास ऐसे लोग है जिन्होने अपनेको चरखा-प्रचारके लिए ही अर्पित कर रखा है। उसके पास वडे व्यवस्था-पटु लोग है। एक विख्यात् व्यक्तिका नाम उसके साथ जुडा हुआ है। इसलिए उसके पास विस्तारके लिए असीम गुजाइश है। इसीलिए मै आमतौरपर सारे भारतका और खास तौरपर वगालका ध्यान उसकी ओर दिला रहा हूँ। मै समालोचकोको आमन्त्रित करता हूँ कि वे उसकी जाँच-पडताल करे और जो कमियाँ दिखाई दे उनको प्रकट करे। और सहानुभूति रखनेवालोसे मेरा कहना यह है कि वे उसके हिसाब-कितावको देखे — जो कि खुली पुस्तक है — और उसकी सहायता करे। जो लोग उदासीन है, उनसे मेरा निवेदन है कि वे अपनी उदासीनता छोडे, उसके कामकाजका अध्ययन करके या तो उसका विरोध करे या उसकी सहायता करे। एक विज्ञानवेत्ताकी हैसियतसे आचार्य रायकी कीर्ति सारे ससारमे व्याप्त है। परन्तु उनके लाखो देशवासी उन्हे न तो उनके बनाये उम्दा सावुनकी वदौलत और न उनके द्वारा कितने ही बगाली नवयुवकोके लिये जुटाये गये जीविकाके साधनोकी वदौलत जानेगे — वे उन्हे जानेगे उस प्रकाश और सुखकी बदौलत जो, उनका खादीका काम लाखो लोगोके टूटे-फूटे झोपडोमे पहुँचा सकता है। परमात्मा करे यह सस्था उस विशाल वटवृक्षकी तरह हो, और उन तमाम छोटी-छोटी सस्थाओकी आश्रयदाता वन जाये जो उससे सहायता और रहनुमाईकी अपेक्षा रखते हो। रासायनिक कारखाने निश्चय ही महान् है। पर खादी-प्रतिष्ठान उनसे भी वढकर है, क्योकि इसकी जड देशकी भूमिमे है। कही वाहरसे लाकर उसकी कलम नही लगाई गई है। उसे पनपानेके लिए और भी एहतियातकी जरूरत है। अगर उसे एक विशाल राष्ट्रीय सस्था वनना है तो उसके कार्यकर्त्ता अपने सर्वोत्तम गुणो और अपनी शक्तियोको जाग्रत करके उसमे लगा दे। परमात्मा करे वह तमाम आशाओको पूरा करे जिसके आसार मुझे अभीसे दिखाई दे रहे है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९२५

११०. टिप्पणियाँ

निराधार अभियोग

मैने शिकायत सुनी है कि बगालमे काग्रेसजनोने अर्थात् स्वराज्यवादियोने चरखे-की हत्या ही कर डाली है। किन्तु उनपर यह आरोप निराधार है। एक तो चरखा बगालमे मरा ही नही है, दूसरे चरखेकी प्रवृत्तिमे यदि कुछ रुकावट आई भी है तो स्वराज्यवादी उसके लिए उतने ही जिम्मेदार है, जितने किसी दूसरे दलके लोग। मै तो उलटा यह कुबूल करता हूँ कि कताई-प्रदर्शनोको सफल बनानेमे हर जगह स्वराज्य-वादियोने सहयोग दिया है। उन्होने उनकी व्यवस्था करनेमे तथा सूत कातनेमे योग दिया है। कुछ स्वराज्यवादी तो अपने सारे परिवार-सहित उनमे उत्साहसे भाग लेते है। मै अपने फरीदपुरके मेजवान विश्वास बाबूके सम्बन्धमे पहले ही लिख चुका हूँ। उनकी धर्मपत्नी और बच्चे सब चरखेके प्रेमी है। वे अपने परिवारके उपयोगके निमित्त आवश्यक खादी बनानेके लिए सूत कातते है। श्री वसन्तकुमार मजूमदारकी धर्मपत्नी भी सूत कातनेमे बहुत उत्साह दिखाती है। उन्होने कोमिल्लामे एक भारी प्रदर्शनकी व्यवस्था की थी। दीनाजपुरके जोगेनबाबू खुद नियमित रूपसे सूत कातते है। उनके परिवारको सफाईके साथ सूत कातते हुए देखकर एक विशेष प्रकारके आनन्दका अनुभव होता था। वास्तवमे दीनाजपुरका कताई-प्रदर्शन सर्वोत्तम था। मै और भी ऐसी मिसाले दे सकता हूँ। हाँ, यह बात सच है कि चरखेमे स्वराज्यवादियोकी श्रद्धा उतनी नही है जितनी, उदाहरणाथ, मेरी है। और यह वात उन्होने छिपाई भी नही है। यदि रचनात्मक कार्यक्रमपर उनका पूरा और पक्का विश्वास होता तो वे कौसिलोमे जाते ही नही। उनकी स्थिति बेहद सीधी-सादी है। उनका रचनात्मक कार्यक्रममे और चरखेमे विश्वास है। उनका विश्वास यह भी है कि उसके विना स्वराज्य नही मिल सकता। पर साथ ही वे यह भी मानते है कि कौसिलो तथा उन दूसरी तमाम प्राति-निधिक और अर्ध-प्रातिनिधिक सस्थाओपर भी कब्जा कर लेना चाहिए, जिनके द्वारा सरकारपर दवाव डाला जा सकता है। उन्होने यह रुख सचाईसे ग्रहण किया है। और इसके वारेमे कोई आपत्ति नही की जा सकती। कमसे-कम मेरी राय मै तो बगालके स्वराज्यवादी अपने विश्वासके अनुसार काम कर रहे है।

नीति-भ्रष्टता

स्वराज्यवादियोपर नीति-भ्रष्टताका आरोप भी लगाया जाता है। उनके कार्योकी चर्चा करते हुए यहाँ उसपर भी विचार कर लेना ठीक होगा। कुछ प्रसिद्ध समाज-सेवकोने आकर मुझसे कहा, सावधान रहे, आप कही स्वराज्यवादियोके हाथकी कठ-पुतली न वन जाये। उन्होने मुझसे आग्रह किया कि मै बगालके राजनैतिक जीवनको निर्मल बनानेमे अपने प्रभावका उपयोग करूँ। मैने उनसे कहा कि मुझे इन आरोपोपर विश्वास करनेका कोई कारण नही दिखाई देता। परन्तु यदि आप नाम-धाम और सबूत

दे तो मैं खुशीसे आरोपोकी जाँच करूँगा और यदि वे सच निकलेगे तो बिला झिझक दलकी निन्दा करूँगा। मैंने उनसे यह भी कहा कि मैंने पहले भी ये आरोप सुने हैं। मैंने उनकी ओर देशबन्धु दासका ध्यान खीचा भी था। उन्होने मुझे यकीन दिलाया कि उनमें सत्यांश नही है और कहा, यदि आपको खबर देनेवाले लोग बुराई और अपराधियोके नाम-धाम बतायेंगे तो मैं जरूर उनकी जाँच कराऊँगा। उन्होने मुझसे कहा कि आम तौरपर ऐसा कहा जाता है; लेकिन हर मामलेमे कानूनी सबूत देना सम्भव नही। मैंने उनसे कहा कि इस अवस्थामे तो हमे इसी सुवर्ण-सूत्रका पालन करना चाहिए कि जिस आरोपको सिद्ध नही किया जा सकता, हम उसमे विश्वास न करे; नही तो किसी भी सार्वजनिक कार्यकर्त्ताकी कीर्ति सुरक्षित न रहेगी।

इस बातचीतके बाद मैं इन अभियोगोकी सब बाते भूल गया था। पर चाँदपुरमे हरदयाल बाबूने इसी बातको पूरे जोरसे उठाया।[१] मैंने उनकी बातोपर गम्भीरतापूर्वक विचार नही किया, वे भी मुझसे यह उम्मीद नही रखते थे। यद्यपि मैं और हरदयाल बाबू एक ही विचारधाराके माननेवाले हैं तथापि देशसेवको और सार्वजनिक कार्योको देखनेके मेरे और उनके तरीके जुदा-जुदा हैं। मेरे असहयोगके मूलमे, थोडा भी निमित्त हो तो तीव्रसे-तीव्र विरोधीसे सहयोग करनेकी तैयारी रहती है। मैं एक अपूर्ण मर्त्य प्राणी हूँ, और ईश्वरके अनुग्रहपर अवलम्बित रहता हूँ; मेरे नजदीक कोई आदमी ऐसा नही जो दोषमुक्त न हो सके। हरदयाल बाबूके असहयोगके मूलमे भीषण अविश्वास और सहयोगकी ओरसे परावृत्त होनेकी वृत्ति है। उन्हे बडे-बडे प्रमाणोकी आवश्यकता है, जबकि मेरे लिये केवल एक सकेत ही काफी है।

पर फिर यह आरोप मेरे सामने एक ऐसे मनुष्यने उपस्थित किया, जिससे उसकी कोई उम्मीद न थी। मेरे कान खडे हो गये और मैंने सजीदगी अख्त्यार की। मैंने कुछ साधारण-सी पूछताछ शुरू की। पर मेरे कलकत्ता पहुँचनेपर स्वराज्य-दलके मुख्य 'सचेतक' बाबू नलिनी सरकार, बाबू निर्मलचन्द्र, बाबू किरणशकर राय और बाबू हीरेन्द्रनाथ दासगुप्ताने मेरी चिन्ता दूर कर दी। उन्होने मेरे पास आकर अपने आप कहा कि वे स्वराज्य-दलकी तमाम कार्रवाइयोके सम्बन्धमे मेरे सवालोके जवाब देनेके लिए तैयार है। तब मैंने उन तमाम आरोपोका जिक्र किया, जो मैंने सुने थे। उन्होने जो बाते मुझसे कही, उनसे मुझे पूरा सन्तोष हो गया। उन्होने तो यह भी कहा, आप और भी जाँच करे और हमारी बहियाँ भी देखे। पर मैंने कहा, जबतक इन आरोपोके सम्बन्धमे और ज्यादा पक्की जानकारी पेश न की जाये तबतक मैं बहियोकी जाँच नही कर सकता। फिलहाल तो आरोप ही आरोप हैं, उनका सबूत नही है। उन्होने मुझसे कहा कि घूस लेने और नीतिभ्रष्ट होनेके आरोपमे सत्यका अंश भी नही है।

मैं उन लोगोसे, जो जल्दीसे दोषारोपण कर बैठते है, प्रार्थना करता हूँ कि वे अपने प्रतिपक्षियोके सम्बन्धमे जो बाते सुने उनपर विश्वास न करे। क्या हम नही जानते कि खुद सरकारके खुफिया विभागकी कही हुई बाते किस हदतक गलत निकली है? क्या हम नही जानते कि खुफिया पुलिस बहुत दिनोतक रानडे और गोखलेतक

१. देखिए "भेंट: हरदयाल नागसे", १२-५-१९२५ से पूर्व।

के पीछे लगी रहती थी। क्या आप नही जानते कि स्व० सर फीरोजशाह मेहता और यहाँतक कि सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीतक पर लाछन लगाये गये है? भारतके पितामह —दादाभाई नौरोजी—तक अपवादसे नही बचे थे। लन्दनमे एक सज्जनने मुझसे उनके बारेमे ऐसी बाते कही और मुझसे अनुरोध किया कि मै कमसे-कम उनके बारेमे उन महान् देशभक्तके, जिन्हे मै पूजता था, पास जाऊँ और पूछूँ। मै बहुत डरते-डरते और काँपते-काँपते उनके पास गया। मै उनके चरणोके पास जाकर बैठ गया। मुझे याद है, मैने उनकी सौम्य मूर्तिकी ओर देखते हुए बडे सकोचसे पूछा कि जो बात कही गई है वह कहाँतक सही है। उनका दफ्तर ब्रिक्सटनमे एक मकानकी सबसे ऊपरी मजिलके एक मामूलीसे कमरेमे था। मै उस दृश्यको कभी नही भूलूँगा। मै जब लौटा तो इस भावको लेकर कि वह आरोप एक बिलकुल ही मिथ्या लाछन था। अली भाइयोपर भी तो लोगोने 'स्वार्थ-साधन और विश्वासघात'के आरोप लगाये थे। यदि मै उनपर विश्वास करता तो मेरा क्या हाल होता? पर मै तो जानता हूँ कि अलीभाई विश्वासघात और नीतिभ्रष्टतासे परे है। अभी जो मतभेद हममे है, वे हममे फूट डालनेके लिए काफी है। तब फिर हम अपने प्रतिपक्षियोपर लगाये गये नीचताके निराधार आरोपोको झट सत्य मानकर उन्हे तीव्रतर क्यो करे? मै समझता हूँ कि सच्चे मतभेद बिलकुल न्यायोचित ही होते है। तब हमे अपने प्रतिपक्षियोको भी अपने ही समान देशभक्त और सद्भावी मानकर उनका सम्मान करना चाहिए। एक सज्जनने तो, जिन्होने मुझसे स्वराज्यवादियोकी नीति-भ्रष्टताकी बात कही थी, मुझसे यह भी कहा कि यह सच होते हुए भी बगालमे चित्तरजन दासके सिवा कोई नेता नही है। देशमे सेवाके इतने क्षेत्र है कि हर शख्सके लिए सेवाकी काफी गुजाइश है। जहाँ सब लोग सेवा ही करना चाहते है तब वहाँ ईर्ष्या-द्वेपको स्थान कैसे हो सकता है? मै तो विश्वास रखनेका कायल हूँ। विश्वाससे विश्वास पैदा होता है। सन्देह एक सडी-गली चीज है और उससे केवल बदबू ही पैदा होती है। जिसने विश्वास किया है, वह दुनियामे कभी पथभ्रष्ट नही हुआ, जबकि सन्देह-ग्रस्त मनुष्य न अपने कामका रहता है और न दुनियाके कामका। अतएव जिन लोगोने अहिसाको अपना धर्म माना है वे चेत जाये और अपने प्रतिपक्षियोको शककी नजरसे न देखे। सन्देह हिंसा ही का सगोत्री है। अहिसामे तो विश्वास किये बिना काम ही नही चलता। सो जबतक पूरा-पूरा सबूत न मिले तबतक मुझे किसीके भी खिलाफ कही हुई बातोको सच माननेसे इनकार करना ही चाहिए और मेरे सम्मान्य साथियोके खिलाफ कही गई बातोको माननेसे तो और भी ज्यादा। पर हरदयाल बाबू कहेगे, 'तब क्या आप चाहते है कि हम अपने देखे-सुने सबूतको सच न माने?' मै कहता हूँ, हाँ और नही। मै ऐसे लोगोको भी जानता हूँ जिनकी आँखो और कानोने उन्हे धोखा दिया है। वे सिर्फ उन्ही बातोको देखते और सुनते है जिन्हे वे देखना और सुनना चाहते है। मै उनसे कहता हूँ, यदि आपको अपने मतके विपरीत निष्पक्ष प्रमाण मिले तो उस अवस्थामे आप अपनी आँखो और अपने कानोपर भी विश्वास न करे। फिर भी जिन लोगोने कोई बात देखी है, सुनी है और जानी है और जो उसकी

सचाई दूसरोके सम्मुख सिद्ध नही कर सकते, उन्हे अपने ही विश्वासपर दृढ रहना चाहिए, भले ही सारी दुनिया उनके खिलाफ हो। मैं उनसे सिर्फ इतना ही आग्रह करूँगा कि वे जरा उन लोगोके प्रति सहिष्णुता रखे जो मेरी तरह सच्ची वात जाननेके लिए उत्सुक होते हुए भी उसे उसी तरह नही देख पाते जिस तरह दूसरे लोग उसे देखते है। स्वराज्यवादियोपर नीति-भ्रष्टताका जो आरोप लगाया जाता है उसकी निस्वत अभीतक मुझे यकीन नही हो पाया है। और जो लोग इसके खिलाफ विश्वास रखते है उन्हे चाहिए कि वे जवतक मुझे कायल नही कर लेते, मेरे प्रति सहिष्णुता दिखाये।

चरखेसे फाँसी पसन्द

वगालमे एक जगह विद्यार्थियोसे वाते हो रही थी। एकने कहा — 'आप जानते है, हम सूत क्यो नही कातते? चरखेमे कोई आवेग देनेवाली वात नही है। हमारी शिक्षाने हमें सूत कातने-जैसे कामोके अयोग्य वना दिया है। हममे वहुत-से लोग सूत कातनेसे मर जाना वेहतर समझते है। फासीपर चढकर मरना तो हम खुशी-खुशी कबूल कर सकते है, पर हमारे लिए सूत कातना नामुमकिन है। हमें कोई ऐसी वस्तु दे जो भव्य हो। हम लोग विलक्षणताके प्रेमी है। चरखेमें यह विलकुल ही नही है।' मैंने उस विलक्षणताके प्रेमी मित्रसे कहा कि चरखेमे जितना आप समझते है, उससे कही ज्यादा विलक्षणता है। जिस बगालने वोस और राय उत्पन्न किये है आप उसपर अव्यावहारिक और स्वप्नदर्शीके अर्थमे विशुद्ध विलक्षणतावादी होनेका दोप क्यो लगाते है? मैंने उनसे कहा कि जो चरखा न कातनेके लिए कोई-न-कोई वहाना निकाल लेते है, वे सचमुच देशके प्रेमी नही है। यदि किसीके वच्चेकी मौतसे रक्षा की जा सकती हो तो क्या वह हास्यास्पद होनेपर भी वैद्योके निर्देशोका पालन न करेगा? मै और मेरे श्रोतागण इस वातको तो मानते है कि भारतके लाखो लोग मौतके मुँहमे जा रहे है और चरखा ही उनकी घोर कष्टमय दरिद्रताकी समस्याको हल कर सकता है। निश्चय ही मेरी वगाल-यात्रामे अत्यन्त आश्चर्यजनक और आनन्द-दायक अनुभव यह हुआ है कि वहाँ किसी भी दलकी तरफसे कताईका विरोध नही किया गया। मुझसे जो लोग मिलनेके लिए आये, मैंने उनसे कहा कि यदि उनका विश्वास चरखेमे न हो तो वे उसका विरोध करे। पर तीन आदमियोके अलावा, मैंने जिनके तर्कोका उत्तर कुछ दिन पूर्व दिया था, किसीने विरोध नही किया है। और मेरा विरोध करनेवाले वे तीन आदमी भी खादी पहने हुए थे। मै जहाँ भी गया वहाँ कार्यक्रममे कताई-प्रदर्शन खासतौरसे रखे जाते थे। इनमे वडे-वडे जमीदारो और वकील-वैरिस्टरोको छोटे-छोटे वच्चोके साथ वैठकर सूत कातते हुए देखकर मुझे वडी प्रसन्नता हुई। ऐसी अवस्थामे वह विलक्षणता-सम्बन्धी आक्षेप निराधार था। यह दुर्भाग्यकी वात है कि मामूली विद्यार्थियोमे परीक्षाको छोडकर अन्य बातोमे उद्योगकी कोई प्रवृत्ति ही नही होती। उन्हे परीक्षामे पास होनेके प्रमाणपत्रकी अपेक्षा देशके प्रति सच्चे प्रेमसे उद्योगकी अधिक प्रेरणा मिलनी चाहिए। ज्यामितिके कठिन-प्रश्नोको हल करनेमे या अंकगणितके लम्बे-लम्बे जोड और गुणावाले सवाल करनेमे जितनी विलक्षणता है, उतनी ही विलक्षणता सूत कातनेमे भी है। यदि वगाली विद्यार्थी अपनी परीक्षाओके विषयमे

विलक्षणताके अभावकी दलील पेश नही करते तो चरखेके लिए उसे पेश करनेका तो और भी कम कारण है, क्योकि सूत कातना राष्ट्रके भरण-पोषणके लिए उतना ही आवश्यक है जितनी आवश्यक किसी व्यक्तिके भरण-पोषणके लिए परीक्षा हो सकती है।

'चीनसे भूमध्य सागरतक'

एक बडे अच्छे पुराने मुसलमान मित्र मुझे मेमनसिहमे मिले और हमारी बातचीतमे कुदरती तौरपर खद्दरकी चर्चा चल पडी। मैने कहा कि आपने खादी नही पहनी है और फिर विनयके साथ पूछा कि आपका विश्वास खादीमे है या नही? उन्होने कहा, "हाँ, अवश्य है।" तब मैने उन्हे अपनी खादीकी व्याख्या समझाई। लेकिन उससे कुछ भी फायदा न हुआ। मित्रने पलटकर कहा, "आप समझ सकते है, मै स्वदेशीका सकुचित अर्थ नही करता। मेरे लिए चीनसे भूमध्यसागरतक फैले देशोमे बना कपड़ा खद्दर है।" मैने उन्हे यह समझानेकी बहुत कोशिश की कि उनका पहला फर्ज हिन्दुस्तानके करोडो लोगोके प्रति है, जिनसे उन्हे अपनी आजीविका प्राप्त होती है। हिन्दुस्तान अपने लिए तमाम कपडा तैयार करनेमे समर्थ है और करोडो लोग खेतीके साथ कोई सहायक उद्योग न होनेके कारण भूखो मर रहे है, किन्तु उनकी समझमे मेरी बात नही आई। वे [वर्डस्वर्थकी] लूसीकी तरह पूर्ण आत्म-सन्तोपके साथ अपनी ही बातपर जमे रहे। वे पहले ही से एक खयाल बनाये बैठे थे, इसलिए उनपर किसी भी दलीलका कोई असर न पड सका। यदि मैं उनसे यह कहता कि अग्रेजी उपनिवेशोके लोगोने दूसरे उपनिवेशोसे और इग्लैंडसे भी, यद्यपि उनमे उन्हीके सजातीय और सहधर्मी रहते थे, अपने व्यापारकी रक्षा बडे-बडे कर लगाकर की थी और प्रत्येक मनुष्यका स्वभावत. यह प्रथम कर्त्तव्य है कि वह दूर रहनेवाले मनुष्यकी अपेक्षा अपने पडोसी ही की सेवा प्रथम करे तो भी परिणाम वही होता। फिर मुझे अवकाश भी न था। हम फिर मिलनेका निश्चय करके जुदा हुए। उन्होने मानो अपनी बात-पर जोर देनेके लिए और फिर भी यह दिखानेके लिए कि मतभेद होनेपर भी हम लोग मित्र है, मुसकराते हुए मेरे कार्यको आगे बढानेके लिए मेरे हाथमे कुछ रुपये रखे, लेकिन वे इस बीच भी चीनसे भूमध्य सागरतक का सूत्र ही दुहराते रहे। यदि उन्हे यह पढनेका मौका मिले तो मै कहना चाहता हूँ कि यदि ज्यादा लोग उनके सिद्धान्तके अनुसार चले तो कई सहस्र मुसलमान बहने, जो आज बगालमे सूत कातकर अपने परिवारकी आमदनीमे कुछ वृद्धि कर लेती है, अपने अत्यल्प आय-साधनोमे यह आवश्यक वृद्धि नही कर सकेगी।

सिन्धकी उदासीनता

एक गुजराती महाशय लिखते है, मैने कराचीमे कुछ गुजराती लोगोको खादी पहने देखा। वहाँ श्री रणछोडदासकी देखभालमे स्त्रियोको कताई सिखानेका भी प्रबन्ध है; परन्तु खुद सिन्धियोमे खादी नहीके बराबर या बहुत कम खादी देखी। वे यह भी लिखते है कि हैदराबादमे इने-गिने काग्रेसजनोके सिवा किसी भी सिन्धीके बदन-पर खादी दिखाई नही देती। यह आश्चर्यकी बात है, क्योकि सिन्धमे बहुत अच्छे

और सच्चे खादीभक्त है। इसका कारण यही हो सकता है कि हिन्दू आमिल लोग इतने अधिक पढ-लिख गये है और उन्होने यूरोपीय तौर-तरीकोको इतना अपना लिया है कि चरखेके सीधे-सादे सन्देशपर उनका विश्वास नही जमता। दूसरे भाई तो अपन विदेशी रेशमके व्यापारमे इतने व्यस्त है कि उन्हे खादीकी बात सोचनेकी फुरसत ही नही है; तथा मुसलमानोपर राष्ट्रीय भावनाका अभी इतना प्रभाव हुआ नही है कि वे हिन्दुस्तानसे सम्बन्ध रखनेवाली किसी बातको समझे-सराहे। खादीके लिए सिन्ध-जैसे प्रतिकूल वायुमण्डलमे भी जो कुछ लोग खादी पहनने और सूत कातनेका आग्रह रख रहे है वे स्तुत्य है। मुझे इस बातमे जरा भी शक नही कि यदि उनकी श्रद्धा इस अग्नि-परीक्षाके बाद कायम रही तो उसका प्रभाव उच्च और 'सभ्य' आमिलोपर,अपने ही काममे मगन भाइयोपर और राष्ट्रीय भावनासे हीन मुसलमान बिरादरोपर अवश्य ही पडेगा।

कुर्गमें खद्दर

एक पत्र-लेखकने लिखा है.

> मौजूद खादी-भण्डार केवल दो महीने पहले खोला गया था, उसके लिए शुद्ध खादी हमें तमिलनाड कांग्रेस कमेटीके तिरुपुर वस्त्रालयसे मिलती रही है। अबतक भण्डारने लगभग ५०० रुपयेकी खादी खरीदी और बेची है। इस क्षेत्रमें खादी फैल गई है। कुछ महीने पहले आपको हजारोंमें,से भी काफी लोग खादी पहने हुए न मिलते। लेकिन अब कांग्रेस अधिवेशनके बाद आपको काफी प्रतिशत लोग खादी पहने मिलेगे।
>
> इस समय चरखे खासी बड़ी संख्यामें चल रहे है। इस प्रदेशमें हाथ-कताईकी प्रगतिके लिए एक मजबूत समिति बना दी गई है।

सभी नये केन्द्र खोलनेवालोका ऐसा ही सुखद अनुभव है। लेकिन कुछ समय बाद वे शिथिल-प्रयत्न हो जाते है। हमे आशा करनी चाहिए कि ज्यो-ज्यो समय बीतेगा, कुर्गसे अधिक अच्छे विवरण मिलते जायेगे। किन्तु इसके लिए कार्यका सगठन सचाईसे करनेकी जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९२५

१११. बाढ़-संकट-निवारण

यह मेरे लिए नामुमकिन था कि मैं बगाल तो जाता, पर वहाँके बाढ-पीडित प्रदेशको और उसमे आचार्य रायकी सकट-निवारण समितिके द्वारा किये जानेवाले कामको न देखता। मेरे लिए यह एक तीर्थ-यात्रा थी, क्योकि एक तो आचार्य रायसे मेरा परिचय १९०१से ही है और दूसरे, उन्होने बडी सफलताके साथ यह दिखा दिया है कि चरखा किस तरह सकट-निवारणके लिए एक उपयोगी वस्तु है और भावी सकटके समय किस तरह बतौर एक बीमाके है। यदि देहातके लोगोको यह बात भली प्रकार समझा दी जाये कि बाढ और अकालके मौकोपर किन तरीकोसे काम लिया जाना चाहिए और साथ ही वे खेतीके अलावा एक अन्य धन्धेकी भी आदत डाल ले—क्योकि खेती तो बाढ या अकालके समय असम्भव हो जाती है—तो बहुतेरा समय, धन और परिश्रम, जो कि आम तौरपर ऐसे वक्तपर दरकार होता है, बच सकता है। यदि ऐसे मौकोपर लोगोको दान या चन्दोपर जीवित रहना सिखाया जाता है तो एक तो वे अपना आत्मसम्मान खो बैठते है और दूसरे अपने अगोका उपयोग करना भूल जाते है। तब उनमे पस्तीकी भावना घर कर जाती है और अन्तमे उन लोगोकी हालत पशुओकी हालतसे भी बदतर हो जाती है। कुछ नही तो पशु जीते रहनेमे सुखका अनुभव तो करते है, परन्तु इन मनुष्योको तो जीते हुए मरेके समान समझिए। ऐसी अवस्थामे मै जितना हो सके खुद अपनी आँखोसे यह देखना चाहता था कि इस चरखा-दीवाने रसायनाचार्यने बाढ-पीड़ित प्रदेशोमे राहत पहुँचानेकी दिशामे क्या काम किया है।

मै पहले बोगूडा और वहाँसे तलोडा गया, जहाँ अपने उस प्रख्यात् देशवासीको मैंने उसके असली रूपमे देखा। उन्होने कहा, 'यह कुटिया मेरी नजरमे उस आलीशान 'साइन्स कालेज'की अपेक्षा ज्यादा कीमती है। यहाँ मै अन्य सब जगहोसे अधिक शान्त और उद्वेगहीन रहता हूँ। और चरखा तो मुझपर अपना रग दिनपर-दिन जमाता ही जा रहा है। पुस्तकोके अध्ययनसे थके हुए दिमागको यहाँ खूब आराम मिलता है।' तलोडा एक छोटा-सा गाँव है, जहाँ सकट-निवारण समितिका एक केन्द्र है। समितिने कोई २० बीघा जमीन खरीदी है और बाँसकी झोपडियाँ बनाकर उन-पर छप्पर डाल दिये है। आसपासका कुदरती दृश्य बडा रमणीय है। पूर्व बगालमे फसली बुखारका बोलबाला है। प्रकृति अपने नियमोके उल्लघनका यह दण्ड दे रही है। मानवने इस भूखण्डको बुखारवाली भूमि तो बना दिया है, पर वह उसके प्राकृतिक सौन्दर्यको नष्ट नही कर पाया है।

इस विश्रान्तिदायक स्थानमे मैंने सकट-निवारण सम्बन्धी कामोकी सारी गाथा सुनी। यहाँ जो अभिनन्दन-पत्र मुझे दिया गया उसमें एक भी स्तुतिवाचक विशेषण न था। उसके छः टाइप किये फूलस्केप पन्ने वस्तुस्थिति और आँकडोके विवरणसे भरे पडे थे। पाठकोंके लाभार्थ उनका सार यहाँ दिया जा रहा है:

सितम्बर १९२२ मे राजशाही और वोगूडा जिलेमे जवरदस्त बाढ आई। उसने उत्तरी वगालकी कोई ४,००० वर्गमील जमीनको भारी नुकसान पहुँचाया। नुकसान कोई १ करोडका आँका गया था। पहली कठिनाई तो यह सामने आई कि सकट-निवारण-समितिकी व्यवस्था कैसे हो और उसके निमित्त काम करनेवाले जगह-जगह निर्मित अनेक दलोको एक-सूत्रमे कैसे वाँधा जाये। जिन्हे सकट-निवारणके कामोका जरा भी ज्ञान है, वे जानते है कि खाली सेवा करनेकी इच्छा या केवल रुपयेसे ही काम नही चल सकता। उसके लिए ज्ञान और योग्यताकी भी जरूरत है और उसका प्राय. अभाव पाया जाता है। यथोचित कार्य-प्रणालीके द्वारा दो बुराइयाँ रोकी जा सकी —एक तो एक ही काम दुवारा करना और दूसरे अकुशल प्रवन्ध। सारा वाढ-पीडित प्रदेश ५० केन्द्रोमे वाँट दिया गया था। इस विशाल सगठनके अध्यक्ष और कोई नही श्रीयुत सुभाषचन्द्र वोस थे, जो आज माण्डलेके किलेमे सम्राट्के मेहमान है। डॉ० इन्द्रनारायण सेनगुप्त उनके सहायक थे। इस समितिने २५,६०६ रुपयेका अनाज और ५५,२०० रुपयेके कपडे वॉटे। इसके अलावा ८०,००० छोटे थान, ७५,००० पुराने कुरते और जाकिटें वॉटे सो अलग। उसने १,२७४ रुपयेका भूसा और ५२ वेगन चारा भी वाँटा, जो उसे दानमे मिला था। समितिकी देखभालमे १०,००० झोपड़ियाँ वनाई गईं। सामान गाँववालोको घर-घर पहुँचाया जाता था। मजदूरी-खर्च भी किस्तोमे दिया जाता था। जव एक बार दी रकम खर्च हो जाती थी और उसकी जाँच होकर सूचना आ जाती थी, तव दुवारा मजदूरी-खर्च दिया जाता था। निगरानी इतनी कडी थी कि इतने वडे काममे सिर्फ तीन वार क्रमश — १,५०० रुपये, ३५० रुपये और २०० रुपयोका गवन हुआ था किन्तु उसका भी पता फौरन लगा; लिया गया और रकम वसूल कर ली गई। झोपडियोकी वनवाईमे १,१२,७५५ रुपये खर्च हुए। कालिकापुरमे सूखी जमीन पुन. आवाद करनेके लिए वाँधकी वहुत वडी जरूरत थी। सच पूछिए तो यह काम था जिला-वोर्डका, पर वह उसका वोझ उठानेमे असमर्थ था। सो इस समितिने कोई एक मील लम्वा वॉध वॉधा, जिससे ६००० वीघा जमीनकी हिफाजत हो सकी। उसमे ५,७७५ रुपया खर्च हुआ। फिर धीरे-धीरे जव काम जम गया, समितिने गॉववालोको कुछ काम देनेकी तजवीज की। उसका मेहनताना उन्हे खाने और कपडेके रूपमे दिया गया। उन्हे धान कूटनेका काम दिया गया। कुछ धान प्रत्येक वाढ-पीडित कुटुम्वको दे दिया जाता था। वे लोग चावल कूटकर नियमित नियत-केन्द्रमे ले आते थे। हर कुटुम्वको यह अख्त्यार दे दिया गया था कि वह उसमे से नियत मात्रामे चावल अपने खानेके लिए रख ले। ऐसे १४ केन्द्र चल रहे थे। इन केन्द्रोसे ४ महीनोतक २०,००० प्राणियोको भोजन मिला। ५०,००० मन धानमे से २७,४०० मन चावल मिला। नागा किसीने नही किया। इस व्यवस्थामे ४३,००० रुपये खर्च हुए। खाने और कपडेके अलावा दवा-दारूकी भी खुलकर मदद की गई।

परन्तु समितिकी आकाक्षा इतनेसे ही पूरी न हुई। उसने कुछ स्थायी काम करके अपनेको जनता द्वारा दी गई रकमके योग्य वनाना चाहा। उसने लोगोको ऐसे

कष्टके अवसरोंपर स्वावलम्बी और स्वाश्रयी बनाना चाहा। यहाँ मैं अभिनन्दन-पत्रकी भाषामें ही इस बातकी तफसील देता हूँ कि किस तरह उन लोगोंमें चरखेको दाखिल किया गया।[1]

यद्यपि ये परिणाम बहुत बढ़िया हैं, फिर भी पूरा प्रयत्न करनेपर जैसे परिणाम निकलनेकी सम्भावना है, उनको देखते हुए कुछ भी नहीं है। एक ऐसी अवस्था आ जायेगी जब कि रुई लोगोंके दरवाजे ले जानेकी जरूरत न रहेगी, बल्कि वे खुद ही रुई लेकर सामान्यतया अपना सूत बेचा करेंगे, जैसा कि वे बंगालके फेनी जिलेमें तथा पंजाब, राजपूताना और दूसरी जगहोंके कितने ही गाँवोंमें कर रहे हैं। चरखेका संगठन मुझे इतना कामिल नजर आता है कि मुझे इस काममें पूर्वोक्त दिशामें तरक्की करनेके मार्गमें किसी बाधाका अन्देशा नहीं मालूम होता।

इस प्रयोग द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकताकी सच्ची प्रगति भी दिखाई देती है। एक मुख्यतः हिन्दू लोगोंका संगठन मुख्यतः मुस्लिम लोगोंकी बस्तीको इमदाद कर रहा है — महज उनकी माली हालत दुरुस्त करनेके लिए। उसमें मुसलमान कार्य-कर्त्ता भी हैं जिन्हें कभी यह खयाल भी होने नहीं दिया जाता कि वे हिन्दू कार्य-कर्त्ताओंसे किसी तरह कम उपयोगी हैं। और महज अपनी योग्यताकी बदौलत उनमें से दो कतैये सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त किये हुए हैं। मुझे ३२ स्वयंसेवकोंको सूत कातते हुए देखनेका अवसर मिला था। सभी फी घंटा ४०० गजसे ज्यादा गतिसे कात रहे थे, परन्तु एक मुसलमान कतैयेने ७२० गज फी घंटेकी गतिसे काता। मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि इन स्वयंसेवकोंको कताई बाजार भावसे दी जाती है। सतीश-बाबूने — जिनकी योजना-शक्तिकी बदौलत यह सारा संगठन हुआ है — मुझसे कहा है कि तजुरबेसे मालूम होता है कि पूरा समय काम करनेवाले स्वयंसेवकोंको, यदि हम उनसे पूरी नियम-निष्ठा चाहते हों तो पूरा मेहनताना देना बेहतर रहता है। ६२ स्वयंसेवकोंको औसतन २५ रुपये मासिक हिसाबसे मेहनताना मिल रहा है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ४-६-१९२५

१. यहाँ नहीं दिया गया है। उसमें इचमारगाँव, तलोडा, चम्पापुर, दुर्गापुर और तिलकपुर नामक अकालपीड़ित स्थानोंमें चरखेके द्वारा पहुँचाई गई राहतका जिक्र था।

११२. एनी बेसेंटको लिखे पत्रका मसविदा[1]

४ जून, १९२५

प्रिय डा० बेसेंट,

आपके कृपापत्र मिले। आपका ज्ञापन[2] मैंने श्री गाधीको दिखा दिया है। वे यहाँ कल शाम आये थे। हम दोनो ही इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि आपके घोषणा-पत्रका मसविदा कुछ आवश्यक सशोधनोके बाद हम दोनो ही व्यक्तिगत रूपसे स्वीकार कर सकते है, लेकिन श्री शास्त्री, श्री जिन्ना या पण्डित मालवीयजी इसे स्वीकार करेंगे, ऐसी कोई उम्मीद नही है और उन अन्य लोगोकी स्थिति तो स्पष्ट ही है, जिन्होने अपने-आपको सविनय अवज्ञाका कट्टर विरोधी घोषित कर दिया है। हम समझते है कि जबतक सभी दलोमे हमारी माँगोकी ठीक-ठीक शर्तो और माँगोके ठुकराये जानेपर काममे लाये जानेवाले उपायोके बारेमे स्पष्ट मतैक्य नही हो जाता, तबतक राष्ट्रीय माँगके रूपमे कुछ भी प्रस्तुत करना व्यर्थ होगा। हमारे रास्तेमे दूसरी कठिनाई यह है कि हिन्दुओ, मुसलमानो और ब्राह्मणो तथा अब्राह्मणोमे कोई स्पष्ट मतैक्य नही है। इसलिए हमारा खयाल है कि अभी फिलहाल हमे अपना ध्यान व्यक्तिगत तौरपर ऐसे लोगोको अपनी रायका बनानेमे लगाना चाहिए जिनकी बातको राष्ट्रीय मामलोंमे महत्त्व दिया जाता है। मैं अपनी योग्यताके अनुसार इसीका प्रयत्न कर रहा हूँ।

चूँकि मै इतना सब तार द्वारा नही बता सकता था, इसलिए मैंने आपको तार द्वारा कोई निश्चित जवाब नही भेजा। कोई आशाप्रद जवाब न भेज सकनेका मुझे खेद है।

आपका,

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० १०६७४) की फोटो-नकलसे।

१. गाधीजीने चित्तरजन दासकी तरफसे इसका मसविदा तैयार किया था और दासने हस्ताक्षर करके ५ जूनको इसे भेज दिया था। महादेव देसाईने लिखा है कि चित्तरजन दासने अपनी पत्नीसे कहा, "यह जवाब तैयार करनेमें मुझे तीन दिन लग जाते, पर गाधीजीने इसे १५ मिनटमें तैयार कर दिया।"

२. 'कामनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल' से सम्बन्धित ज्ञापन, जिसका मसविदा डा० बेसेंटने तैयार किया था।

११३. पत्र : निशीथनाथ कुंडूको

[दार्जिलिंग][1]
६ जून, १९२५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं अब उस विषयपर देशबन्धुसे बातचीत करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

निशीथनाथ कुडू
जिला कांग्रेस कमेटी
दीनाजपुर

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ८०२०) की फोटो-नकलसे।

११४. पत्र : नारणदास गांधीको

ज्येष्ठ सुदी ९ [६ जून, १९२५]

चि० नारणदास,

तुम्हारी ओरसे कोई खबर नही मिली। मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे अपना खादीके कार्यका विवरण हर मास भेजो। पाक्षिक भेजो तो और भी अच्छा।

ऐसा लगता है कि तुम भाई . के सम्बन्धमे कोई जाँच नही कर सके हो। अब तुरन्त करना। उसपर हिसाबमे गडबडी करनेका आरोप है और व्यभिचारका आरोप भी है। व्यभिचारके सम्बन्धमे तो तुम क्या जाँच करोगे? इस विषयमे इतना ही कहूँगा कि तुम जब . जाओ तो अपनी आँखे खुली रखकर जाओ। हिसाबकी जाँच सावधानीसे करना, जिससे यदि वह प्रामाणिक हो तो मैं निर्भय होकर वैसा कह सकूँ।

। तुम जानते ही हो कि मैं उनपर लगाये गये आरोपोकी चर्चा 'नवजीवन' मे कर चुका हूँ।

१. डाककी मुहरसे।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे।
खुशालभाई और देवभाभीको दडवत्।

वापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६२९२) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

११५. भाषण: ईसाई धर्मप्रचारिकाओंके समक्ष[1]

६ जून, १९२५

मैंने आपका निमन्त्रण केवल इसीलिए स्वीकार किया था कि मुझे इससे आपके साथ वाते करनेका और जो वाते आपकी समझमे न आती हो उनको समझानेका भी अवसर मिलेगा। देशवन्धु, मैं और दूसरे लोग आज जिस प्रवृत्तिमे तन्मय होकर सलग्न हैं, वह आत्मशुद्धिकी प्रवृत्ति है। इससे मेरा अभिप्राय यह नही है कि यह आन्दोलन राजनीतिक नही है। निस्सन्देह यह वहुत हदतक राजनीतिक है। किन्तु राजनीतिक क्या है और धार्मिक क्या है? क्या जीवनके ऐसे कोई एक-दूसरेसे विलकुल ही अलग-थलग विभाग किये जा सकते हैं? समस्त प्रवृत्ति एक ही व्यक्ति द्वारा और एक ही स्थानसे संचालित होती है। यदि वह व्यक्ति और वह स्थान स्वच्छ और शुद्ध होंगे तो समूची प्रवृत्ति शुद्ध होगी; किन्तु यदि ये दोनो मलिन हो तो समूची प्रवृत्ति मलिन होगी। प्रवृत्तियोमे इस प्रकारका भेद करना मुझे हास्यास्पद लगता है, क्योकि इस सम्वन्धमे मेरा अनुभव भिन्न है। मैंने तो कभी ऐसा भेद किया नही। भिन्न-भिन्न दीख पड़नेवाली सभी प्रवृत्तियाँ एक-दूसरेकी पोषक वनकर मधुर जीवन-संगीत उत्पन्न करती है। धर्मविहीन राजनीतिसे दुर्गन्ध आती है और राजनीतिसे विच्छिन्न धर्म निरर्थक है। राजनीतिका अर्थ है लोककल्याणसे सम्वन्वित प्रवृत्ति। जो ईश्वरका साक्षात्कार करना चाहता है वह इस प्रवृत्तिके प्रति उदासीन कैसे रह सकता है? और चूंकि मैं ईश्वर और सत्यको एक ही मानता हूँ, इसलिए राजनीतिमे भी सत्यका प्रभुत्व स्थापित करनेकी मेरी इच्छा तो सदा वनी ही रहेगी।

ईसाके अनुयायियोसे ईसाके ही आदेशको समझनेकी वात कहना तो काशीमे गगाजल लेकर जानेके समान है। किन्तु स्वय ईसाई न होनेपर भी, 'वाइविल' के एक विनीत श्रद्धालु और सद्भावी अभ्यासीके रूपमे, मैंने 'वाइविलके' "गिरिप्रवचन" मे से जो सार निकाला है, उसे मैं आपके सम्मुख नम्रतापूर्वक रखना चाहता हूँ। यदि मैं ऐसा करते हुए अपने हृदयके विचार सचाईके साथ आपके सम्मुख न रखूं तो मैं आपको भाई और वहिन कहकर सम्वोधित करनेके अयोग्य हूँ। मैंने १९१६ मे मद्रासमे पादरियोके एक सम्मेलनमे भाषण[2] दिया था। इस समय वह मुझे याद आ रहा

१. यह भाषण दार्जिलिंगमें ईसाई धर्मप्रचारकों द्वारा संचालित भारतीय भाषा-विद्यालयमें दिया गया था।
२. देखिए खण्ड १३, पृष्ठ २२१-२७।

है। उसमें मैंने कहा था कि पादरी सदा अपने धर्मके अनुयायियोंकी गिनती करते हैं, ऐसा करना बड़ी भूल है। आज धर्मपरिवर्तनकी प्रवृत्ति जिस प्रकार चलाई जा रही है, मुझे उसमें तनिक भी श्रद्धा नहीं है। इसका परिणाम कुछ लोगोंके लिए भले ही लाभदायक रहा हो; किन्तु उससे जो अनिष्ट हुआ है उसकी तुलनामें तो वह लाभ कुछ भी नहीं है। धर्म-सम्बन्धी तनातनीका कोई अर्थ नहीं होता। ईश्वर यह चाहता है कि जो बात हमारे हृदयमें हो वही होठोंपर रहे। आज हजारों ऐसे स्त्री-पुरुष हैं जो 'बाइबिल' या ईसाका नामतक नहीं जानते: किन्तु फिर भी वे 'बाइबिल' जाननेवाले तथा उसके दस आदेशोंका पालन करनेकी बातें करनेवाले ईसाइयोंकी अपेक्षा अधिक आस्तिक और धर्मभीरु हैं। धर्म कोई बातें बनानेकी चीज नहीं है। वह तो शूरवीरोंका मार्ग है। कोई मनुष्य किसी एक धर्मको छोड़कर दूसरा धर्म ग्रहण करते ही अच्छा बन जाता है, मेरी अल्प बुद्धि यह बात माननेको तैयार नहीं है। मैं ऐसे अनेक भारतीय और जुलू लोगोंके उदाहरण दे सकता हूँ जो ईसाई तो बन गये हैं, किन्तु जिनके हृदयमें प्रेमकी या ईसाके बलिदानकी अथवा ईसाके सन्देशकी गन्ध-तक नहीं है।

इस सम्बन्धमें मुझे जोहानिसबर्गके श्री मरे नामके पादरीसे हुई अपनी बातचीत याद आ जाती है। एक मित्रने उनसे मेरा परिचय कराया था। उसको आशा थी कि मैं ईसाई बन जाऊँगा। हम घूमने निकले, मार्गमें उन्होंने मुझसे कई प्रश्न पूछे और उलट-पलट कर जिरह की। काफी जिरह कर चुकनेके बाद उन्होंने मुझसे कहा. 'नहीं भाई, मुझे आपको ईसाई नहीं बनाना है, बल्कि मैं तो अब किसीको भी ईसाई नहीं बनाऊँगा।' उनकी यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी। उन्होंने यह भी माना कि ईसाके आदेशका जो अर्थ मैंने किया है, वह ठीक है। मैंने 'बाइबिलका'[1] उद्धरण देते हुए कहा, "जो मुँहसे प्रभु-प्रभु कहता है, उसे मुक्ति नहीं मिलती; मुक्ति उसे मिलती है जो प्रभुकी इच्छाके अधीन होकर प्रभु जैसा चाहता है, वैसा ही करता है। मुझे अपनी कमजोरियोंका ज्ञान है। मैं उनसे संघर्ष कर रहा हूँ, अपने बलसे नहीं, बल्कि ईश्वरने मुझे जो बल दिया है उससे। क्या आप यह चाहते हैं कि मैं ईश्वरप्रदत्त बलके आधार-पर इस प्रकारका संघर्ष न करूँ और उसके बजाय तोतेकी तरह यह कहता रहूँ कि ईसाने मेरे पाप धो दिये हैं और अब मैं शुद्ध हो गया हूँ?" वे चौंक उठे और मुझे रोक कर बोले, "आप जो-कुछ कहते हैं वह मेरी समझमें आ गया।"

मैं आज आपसे भी उतने ही भावावेशमें बात कर रहा हूँ जितने भावावेशमें मैंने उन मित्रसे बातचीत की थी, क्योंकि मैं जैसे उनके हृदयका स्पर्श करना चाहता था, वैसे ही आपके हृदयको भी स्पर्श करना चाहता हूँ। आप धर्मपरिवर्तन किये गये लोगोंकी गिनती क्यों बढ़ाते रहना चाहते हैं, आप उनकी मौन सेवा क्यों नहीं करते? क्या आप मुझे यह बतायेंगे कि आप लोगोंका धर्मपरिवर्तन क्यों करना चाहते हैं? यदि आपके संसर्गमें आनेसे उनका जीवन निर्मल और उदात्त हो जाये और वे असत्य और अन्धकारका मार्ग छोड़कर सत्य और प्रकाशके मार्गपर आ जायें तो क्या इतना

१. सेन्ट मैथ्यू. ७, २१; २१, २८-३१।

काफी नही है? यदि आप एक निराश्रित बालकको सँभाले और उसे स्वयं खाने-पीने और पहनने-ओढ़ने लायक बना दे तो इससे अधिक आपको क्या चाहिए? क्या आपके कामका इतना पुरस्कार पर्याप्त नही है? अथवा आप जिनकी सेवा करती है उनसे झूठ-मूठ ही यह कहलाना चाहते है कि "हम ईसाई बन गये है।" आज विभिन्न धर्मोमे अपने अनुयायियोकी गिनतीके सम्बन्धमे होड़ लगी हुई है और वे आपसमे लड़ रहे है। इससे मुझे बहुत लज्जा आती है और जब मैं किसी मनुष्यके मुखसे उसका यह पराक्रम सुनता हूँ कि उसने अमुक सख्यामे लोगोका धर्मपरिवर्तन किया है तब मुझे लगता है कि यह तो कोई पराक्रम ही न हुआ; प्रत्युत यह तो ईश्वर और आत्माका तिरस्कार हुआ।

आपका कार्य इतनेसे ही समाप्त नही होता। आपको तो लोगोके साथ घुल-मिल जाना चाहिए। जब आप गरीबसे-गरीब आदमीको गले लगायेगी तभी आपकी सेवा सच्ची होगी। लॉर्ड सेलिसबरीने पादरियोके एक शिष्टमडलसे जो शब्द कहे थे, यहाँ मुझे याद आ रहे है। ये पादरी चीनसे आये थे और बौक्सरोके विरुद्ध सरकारी सरक्षण प्राप्त करना चाहते थे। लॉर्ड सेलिसबरीने उनसे कहा था "मैं आपको सरक्षण देनके लिए तैयार हूँ, किन्तु क्या आपको यह शोभा देगा? प्राचीन कालमे पादरी वीर थे। वे सच्चा संरक्षण ईश्वरका ही मानते थे। वे जो भी कठिनाइयाँ सामने आती थी, उनसे जूझते थे और अपने प्राणतक होम देते थे। यदि आपको चीनमे भी धर्म-प्रचार करना आवश्यक प्रतीत होता है तो धर्मभीरु लोग जिस सरक्षणके इच्छुक रहते है आपको उस सरक्षणकी खोज करनी चाहिए। वह धर्मप्राण व्यक्ति जो जोखिम उठाते है वह जोखिम उठानी चाहिए। आपको यही शोभा देता है।" ये शब्द एक सच्चे और व्यवहारकुशल मनुष्यके है। यदि आप भी भारतके लोगोकी सेवा करना चाहती है तो आप भी अपने प्राण हथेलीपर रखकर जूझे। आपको चाहे कितनी ही विफलता क्यो न मिले और चाहे कितनी ही परेशानियाँ तथा असुविधाएँ क्यो न उठानी पड़े; फिर भी आप केवल सेवाकी भावनासे लोगोकी सेवा करती रहे।

यदि आप इन कगालोमे प्राण-संचार करना चाहती है तो मैं आज प्रत्येक भारतीयके सामने जो कार्यक्रम रख रहा हूँ, उसको आप भी अगीकार करे और उसके द्वारा जन-जीवनमे प्रवेश करे। ईसाके आदेशोका पालन जितनी अच्छी तरह इस कार्यसे होगा, उतनी अच्छी तरह किसी अन्य कार्यसे नही।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-६-१९२५

११६. धर्मके नाम अन्धेर

गुजरातमे लाड जातिमे जो झगडा चल रहा है, उसके सम्बन्धमें मुझे एक लम्बा पत्र मिला है। लेखकने शुद्ध भावसे प्रयत्न करके मुझे झगडेके सम्बन्धमें बहुत-सी जानकारी दी है और बताया है कि समझौतेके लिए जितने भी प्रयत्न किये जा सकते थे उतने किये गये है। मै उनकी बातपर विश्वास करनेके लिए तैयार हूँ। लेकिन मेरा विचार लाड जातिके विषयमे कुछ लिखने या सुझाव देनेका नही है, बल्कि उसपर से जो विचार मुझे सूझे है सिर्फ उनको हिन्दू-समाजके सामने प्रस्तुत करनेका है।

एक तरफ तो हिन्दूधर्मकी रक्षाके निमित्त सगठन किया जा रहा है और दूसरी तरफ हिन्दूधर्ममे जो दुर्बलताये है, वे उसे अन्दर-ही-अन्दर घुनकी तरह खा रही है। अत जिस प्रकार घुन लकडीके एक मोटे लट्ठेमे बैठा उसे भीतरसे खा रहा हो तो वह लट्ठा ऊपरसे ढक देनें या रोगन लगा देनेपर भी अन्तमे तो खोखला ही हो जायेगा, उसी प्रकार जो घुन हिन्दू जातिके हृदयमें बैठा उसे खा रहा है, वह नष्ट न किया जायेगा तो हम बाहरसे हिन्दूधर्मकी रक्षा चाहे कितनी ही क्यो न करे, उसका नाश हुए बिना न रहेगा।

वर्णबन्धनके नामपर वर्णोका सकर हो रहा है और हो चुका है। वर्णोकी मर्यादा नष्ट हो गई है और अब उनकी अतिशयता ही बाकी बची है। वर्णबन्धन धर्मकी रक्षाके लिए रखा गया था, किन्तु वह आज विकृत बनकर उसका नाश कर रहा है। वर्ण तो चार ही होने चाहिए; लेकिन इसके बजाय आज तो वे असख्य और अगणित हो गये है। वर्ण मिट गये है और वे जातियो उपजातियोमे बँट गये है। जिस प्रकार आवारा और लावारिस ढोर बाडे (मवेशीखाने)मे बन्द कर दिये जाते है उसी प्रकार हम लोग भी लावारिस बनकर इन जातियो—उपजातियोके बाडोमे बन्द होकर बन्दी बन गये है। वर्ण प्रजाके पोषक थे, किन्तु जातियाँ प्रजाकी विनाशक बन गई है। हम हिन्दू प्रजाकी या हिन्दुस्तानकी सेवा करनेके बजाय अपनी इन बन्धन रूप जातियोको कायम रखनेमे व्यस्त रहते है और उससे जो प्रश्न उत्पन्न होते है उनका निर्णय करनेमे अपने समय, बुद्धि और धनका व्यय करते है। व्याध उधर शहदके छत्तेको तोडनेके लिए तैयार खडा है, इधर मूर्ख मक्खियाँ एक दूसरीकी कोठरियोपर कब्जेके बारेमे पचायत कर रही है। जहाँ बीसा और दस्साका भेद ही मिटाया जाना चाहिए, वहाँ बीसा बडे या दस्सा बडे, यह प्रश्न ही कहाँ रहता है? जहाँ समस्त हिन्दुस्तानके वणिकोको एक कौम बन जाना चाहिए वहाँ दस्सा-बीसा, मोढ-लाड और हालारी-घोघारीके भेदो और उनके बीचके झगडोके लिए अवकाश ही कैसे हो सकता है?

वर्ण कर्मानुसारी थे। लेकिन आज जातिका आधार तो एक रोटी-बेटी व्यवहार ही है। जबतक मैं रोटी-बेटी व्यवहारकी मर्यादाकी रक्षा करता हूँ तबतक मैं कलालकी दुकान करूँ, या शमशेर बहादुर बनूँ या विदेशी गोमासके बन्द डिब्बे बेचूँ

तो भी कोई आपत्ति नही। यह सब करनेपर भी मै वणिक जातिमे आदरणीय माना जा सकता हूँ। मै एक पत्नीव्रतका पालन करता हूँ या अनेक सुन्दरियोसे रमण करता हूँ, जाति इस झगडेमे नही पडती, इतना ही नही, बल्कि मै जातिका चौधरी बनकर रह सकता हूँ, उसके लिए नयी स्मृतियाँ बना सकता हूँ और उससे पुरस्कृत हो सकता हूँ। मै कहाँ खाता-पीता हूँ या कहाँ अपने पुत्रो और पुत्रियोका विवाह करता हूँ, मेरी जाति इसकी चौकीदारी तो करती है, लेकिन उसे मेरे आचरणका निरीक्षण करनेकी जरूरत नही मालूम पडती। मै विलायत हो आया हूँ इसलिए कन्याकुमारीके गर्भागारमे नही जा सकता। लेकिन यदि मै खुल्लम-खुल्ला व्यभिचार करूँ तो मुझे उसके कारण उस गर्भागारमे जानेसे कोई नही रोकेगा।

इस चित्रणमे कही भी अतिशयोक्ति नही है। यह धर्म नही है, यह तो अधर्मकी परिसीमा है। इससे वर्णकी रक्षा न होगी, उसका नाश होगा। मै वर्णाश्रम धर्मकी रक्षाका उद्योग तो करता हूँ; लेकिन यदि यह अधर्म दूर न होगा तो मै उसकी रक्षा करनेमे असमर्थ ही सिद्ध हूँगा। यहाँ तो वर्णकी अतिशयताने ही वर्णका स्थान ले रखा है, इसलिए इस अतिशयताके नाशके बजाय वर्णोका ही नाश होनेका भय है।

अब यह देखे कि ऐसी असख्य जातियोकी रक्षा किस प्रकार सम्भव है। अहिसा प्रधान धर्म हिंसाका आचरण करके जातिको बनाये रखनेका प्रयत्न कर रहा है। जिसने जातिके कृत्रिम और अनुचित बन्धन तोड दिये है, उसे समझाने और उसकी 'भूल' बतानेका तो प्रयत्न किया नही जाता, बल्कि उसका फौरन ही बहिष्कार कर दिया जाता है। बहिष्कार करना अर्थात् उसको सब प्रकारसे सताना, उससे खान-पान, व्याह-सगाई और मौत-गमीमे आने-जानेका व्यवहार भी बन्द कर दिया जाता है और यह दण्ड बहिष्कृत व्यक्तिकी सन्ततिको भी भोगना पडता है। इसका नाम है चीटीपर सेना लेकर धावा; और यदि इस युगकी भाषामे कहे तो डायरशाही। ऐसे अत्याचारोसे तो हजार, दो हजार मनुष्यकी सख्यावाली जातियाँ टिकनेके बजाय नष्ट ही हो जायेगी। इनका नाश वाञ्छनीय अवश्य है, लेकिन जोर जबरदस्तीसे किया गया नाश हानिकर होगा। उनका नाश जब इच्छा-पूर्वक किया जायेगा तभी समाजके लिए पोषक होगा।

सबसे अच्छा उपाय तो यह है कि छोटी-छोटी जातियोकी पचायते मिलकर एक बडी जाति बना ले और यह बडी जाति दूसरे सघोके साथ मिलकर चारो वर्णोमे से एक स्थान प्राप्त कर ले। लेकिन आजकी शिथिलताकी हालतमे तो तत्काल ऐसा सुधार होना नामुमकिन-सा है।

अत. धर्मका पालन जितना कठिन है उतना ही आसान भी है। जिस प्रकार हरएक समाज धर्मकी वृद्धि कर सकता है उसी प्रकार हरएक व्यक्ति भी कर सकता है। व्यक्तियोको चाहिए कि वे निर्भय बनकर जिसे धर्म मानते हो उसपर अमल करे और यदि उन्हे बहिष्कृत किया जाये तो उसकी कुछ भी फिक्र न करे। उन्हे जातिके इन तीनों प्रकारके दण्डोका विनयपूर्वक स्वागत करना चाहिए और उन्हे यह नही मानना चाहिए कि उन्हे ये दण्ड विवश करनेके लिए दिये गये है। जातिभोज देनेसे

कोई लाभ नही है, किन्तु न देनसे अनक वार लाभ होता है। मैं तो मृत्यु-भोजको पाप ही मानता हूँ। लडकेके लिए लडकी और लडकीके लिए योग्य लडका जातिमे न मिले तो यह भी चिन्ताका विषय नही है। इसका कारण यह है कि जिसे दण्ड दिया गया है उसके लिए वह दण्ड नही है क्योकि वह तो उपजातियोके अस्तित्वको ही नही मानता। यदि लडकी या लडका लायक हो तो दूसरे समाजोके सुधारक वर्गमे से योग्य लडका या लड़की मिलनेमे कोई कठिनाई न होगी। लेकिन यदि कठिनाई हो तो भी उसका सामना करना ही धर्म है। चरित्रवान् और सयमीके लिए ऐसी कठिनाइयाँ, कठिनाइयाँ ही नही है। वह तो उनका सामना प्रसन्न चित्त होकर ही करता है। यदि उसे गमीके मौकेपर भी जातिकी मदद न मिले तो उसमे भी दुख माननेकी क्या बात है? दूसरे मददगार मिल जायेंगे। मैं मुर्दा गाडीके विषयमे तो लिख ही चुका हूँ। उसका उपयोग करनेसे कम मदद दरकार होगी। जिसे उतनी मदद भी न मिल सके वह मज़दूर बुला ले। जो इतना दीन हो कि उसके पास मजदूरी देनेके लिए भी पैसे न हो, किन्तु वह ईश्वरका भक्त हो, उसे तो यही विश्वास रखना चाहिए कि ईश्वर उसे कहीसे भी मदद भेज देगा। दण्डका भय छोड देना ही सत्याग्रह है। सत्याग्रहका शस्त्र जिस प्रकार सरकारसे लडनेमे उत्तम शस्त्र है उसी प्रकार जातिसे लडनेमे भी है। चूँकि दोनो रोग एक ही प्रकारके है, इसलिए दोनोकी चिकित्सा भी एक ही है। सत्याग्रह अत्याचारका इलाज है। हिन्दूधर्मकी — अन्य धर्मोकी भी — रक्षा केवल सत्याग्रहसे ही की जा सकती है।

मैं प्रत्येक धर्मप्रेमीको विनयपूर्वक यह सलाह देता हूँ कि वे नाना प्रकारके जाति विषयक झगडोमे न पडे और अपने कर्त्तव्यपर दृढ रहे। यह कर्त्तव्य है — अपने धर्मकी और देशकी रक्षा करना। धर्मकी रक्षा छोटी-छोटी जातियोकी अनुचित रक्षा करनेसे नही होगी, बल्कि धार्मिक आचरणसे ही होगी। धर्मकी रक्षाका अर्थ है — हिन्दू-मात्रकी रक्षा। स्वय चरित्रवान् बननेसे ही हिन्दू-मात्रकी रक्षा होगी। चरित्रवान् बननेका अर्थ है, सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिंसादि व्रतोंका पालन करना, निर्भय बनना अर्थात् मनुष्य-मात्रके भयका त्याग करना, ईश्वरपर श्रद्धा रखना और उससे डरना, वह हमारे सब कामोका और सब विचारोका साक्षी है, यह मानकर मलिन विचार मनमे लाते हुए काँपना, जीव-मात्रकी सहायता करना, दूसरे धर्मोके मनुष्योको भी मित्र मानना और परोपकारमे समय बिताना इत्यादि। फिलहाल उपजातियोका अस्तित्व तभी क्षन्तव्य माना जा सकता है जब उनके सब काम साधारण रूपसे धर्म और देशहितके पोषक हो। जो जाति सारे विश्वका उपयोग अपने ही लिए करती है उसका नाश ही इष्ट है। जो जाति ससारके कल्याणमे योग देती है, उसीका चिरजीवी होना योग्य है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९२५

११७. बंगालमें

मैं बंगाल नही छोड सकता और बगाल भी मुझे नही छोडता। एक महीना वीत गया है, अभी एक महीना और विताना होगा। इस दरम्यान असममे भी थोडे दिनोके लिए जाये विना काम न चलेगा। श्री फूकनने मुझे लिखा है, "असमने कुछ अधिक नही किया है, फिर भी वह खादीके सम्बन्धमे क्या कर सकता है, आपको उसे यह दिखानेका मौका तो देना ही होगा। आप उसे आखिर एक सप्ताहका समय तो दे ही।" यह सव न लिखा होता तो भी मैं साधारण-सा निमन्त्रण मिलनेपर ही चला जाता, क्योकि मुझे असमसे वहुत-कुछ आशा है। इसके अतिरिक्त असम इतना दूर है कि वहाँ वार-वार जाना सम्भव नही। लेकिन असम जानेके अनेक कारणोमे से सवसे अधिक महत्त्वपूर्ण कारण तो यह है कि असमने १९२१ मे जितना कष्ट सहन और त्याग किया है, उतना किसी दूसरे प्रान्तने शायद ही किया होगा। असमका अपराघ यह था कि उसने अफीमवन्दी की थी। इसके लिए सैकडो नवयुवकोको जेल जाना पडा और अनेक अन्य कष्ट सहने पडे। उसका परिणाम यह हुआ कि लोगोके मनमे वहुत भय उत्पन्न हो गया, यहाँतक कि वे सिर ऊँचा नही कर सकते थे। इस प्रान्तमे जानेके लिए तो मुझसे अधिक अनुरोध करनेकी जरूरत न थी। अत मैंने श्री फूकनके आमन्त्रणको तुरन्त स्वीकार कर लिया। अव मुझे १५ तारीखतक असम पहुँच जाना चाहिए। मुझे वहाँ करीव-करीव दो सप्ताह लगेगे। मै फिर वहाँसे वापस आकर वगालका वाकी दौरा पूरा करूँगा। फिर भी वगालका कुछ हिस्सा तो छूट ही जायेगा।

मुझसे वगाल नही छोडा जाता क्योकि मुझे वगालसे वहुत वडी आशा है। मैं जैसे-जैसे वगालियोके सम्पर्कमे आता जा रहा हूँ, वैसे-वैसे उनकी सरलतापर और उनके त्यागपर मुग्ध होता जा रहा हूँ। मै जहाँ जाता हूँ वही मुझे त्यागी युवक दिखाई पडते है। उनमे देश-सेवा करनेकी वडी उमग है। वे इसी खोजमे रहते है कि देशकी सेवा किस प्रकार की जाये। कुछ काम ऐसा किया जा रहा है, जिसका उल्लेख तक नही होता और कभी होगा भी नही; क्योकि उसका वर्णन सरस ढगसे नही किया जा सकता। सरल जीवन स्वत सरस होता है, लेकिन वह जितना सरस होता है, उसका वर्णन उतना ही नीरस होता है। शुद्ध शान्तिमें सवसे वडा सुख होता है। इस शान्तिका, इस सुखका नित्य नया वर्णन कैसे किया जा सकता है? जो मनुष्य एक गाँवमे वालकोको लेकर बैठ जाता है और उन्हे नित्य पिताकी तरह प्रेमसे पढाता है, उसके सुखका, उसकी शान्तिका वर्णन कौन कर सकता है? उसके सुखकी वरावरी कौन कर सकता है? और उससे उस सुखको कौन छीन सकता है। उसमे नित्य वृद्धि होती जाती है, क्योकि उसका फल शिक्षणमे ही निहित होता है। वह इस वातकी चिन्ता नही करता कि उसके पास एक वालक है या अनेक। उसकी

चिन्ता तो केवल शिक्षणतक ही सीमित रहती है। चूँकि यह कार्य उसीके हाथमे होता है, इसलिए वह अपने सुखका कर्त्ता या हर्त्ता स्वय ही वन जाता है।

मेरे ऊपर कुछ ऐसी छाप पडी है कि इस प्रकारके सेवक वगालमे अधिक दिखाई पडते हैं। ये युवक बहुतसे स्थानोमे फैल गये है। उनका-एक-दूसरेसे वहुत कम सम्वन्ध है। सभी अपने-अपने काममे तन्मय दिखाई पडते है। मुझे ऐसे कार्यकर्त्ताओको देखनेके अनेक प्रसग मिल रहे हैं और ये प्रसग ज्यों-ज्यो आते है त्यो-त्यो मेरी इच्छा यही होती है कि मै वगालसे अभी न जाऊँ। मै ऐसे ही सेवकोमे स्वराज्यका बीज देख रहा हूँ। उनमे भारतकी आशा छिपी है। वे नही वोलते, उनका काम वोलता है।

हाथकी भाषा

ऐसे कार्यकर्त्ताओको देखकर ही एक सभामे भापण देते हुए मेरे मुँहसे 'हाथकी भाषा' शब्द निकला। यह सभा कलकत्तेमे की गई थी। मै इसमे नियत समयपर पहुँच गया था। उसमे वहुत-से स्त्री-पुरुप तो उस समय भी आ ही रहे थे। सभाका कार्यक्रम सगीतसे शुरू किया जानेवाला था। सगीताचार्य अभी नही आये थे; इसलिए मेरा भापण आरम्भ होनेमे कुछ देर थी। मैंने अपनी तकली निकाली। मेरी तकली मेरे साथ ही रहती है और जब फुरसत मिलती है तब मै उससे थोडा सूत कात लेता हूँ। मै तकली चलानेमे सबसे अकुशल सिद्ध हुआ हूँ। अवतक मेरा हाथ जैसा चाहिए वैसा बैठा नही है। अभीतक कोई यह नही वता सका है कि 'दोप' कहाँ है। लेकिन मैं तकलीसे हारनेवाला थोड़े ही हूँ। हम दोनोमे युद्ध चलता ही रहता है। कुछ भी हो मै उससे सूत तो कात ही लेता हूँ; इसलिए मैंने उस समयका उपयोग तकली चलानेमे किया। मेरे पास जितनी भी पूनियाँ थी सव खत्म हो गईं, लेकिन मेरा भाषण आरम्भ होनेमे तो अब भी देर थी। इसलिए इस अवकाश कालमे मुझे क्या कहना चाहिए यह सोच लिया और श्रोताओसे कुछ इस प्रकार कहा

'अव मुझे भाषण देनेकी जरूरत ही कहाँ रही है? सामान्य भापण मुँहसे दिये जाते है और कानोसे सुने जाते है। लेकिन मैने अपना भापण हाथसे किया है और यदि आपने अपनी आँखोका उपयोग किया हो तो आपने वह आँखोसे सुना होगा। मुँहसे दिये गये भाषणमे अकसर हृदय और वाणीका मेल नही होता। हृदयमे होता कुछ है तो वाणीसे निकलता कुछ है। हाथके भापणमे ऐसे दोपको स्थान नही है, क्योकि उसका मनसे कोई भी सम्वन्ध नही होता। उसे देखकर तो आप जो चाहते है वह अर्थ निकाल सकते हैं। हाथसे जो सूत कत रहा है वह तो वेकार नही जा सकता। मैंने मुँहसे बहुत सुनाया है और आपने कानोसे वहुत सुना है। लेकिन वगालने मुझे हाथोसे भाषण करना सिखाया है। मुझे इसका प्रथम पाठ फरीदपुरके विद्यार्थियोने पढाया था। उसे मै भूला नही हूँ। उसके वादसे मै वहुत-सी सभाओमे चरखा चलाता हूँ और कही-कही तो फरीदपुरकी तरह चरखा चलाते हुए मुँहसे भापण भी देता जाता हूँ और इस प्रकार हाथ और मुँहका मेल व्यवहारत करके दिखाता हूँ। मै देख रहा हूँ कि अव केवल मौनका युग आ रहा है। हाथकी भापा ही सच्ची

भापा मानी जायेगी। इस भाषांको गूगे और निरक्षर भी वोल सकेगे और यदि देखते होगे तो वहरे भी सुन सकेगे।

मेरे सूतके तार निकालनेका अर्थ सिर्फ सूत कातना ही नही है। मैंने सूत कातकर यह दिखाया है कि यद्यपि मेरा शरीर आपके पास है किन्तु मेरा हृदय बगालके गाँवोकी झोपडियोमे है। मैंने सूत कातकर उनके साथ तादात्म्य स्थापित किया है, क्योकि मै यह जानता हूँ कि करोडो भूखो मरते कगाल हिन्दुस्तानियोके जीवनका अवलम्ब यह सूतका तार ही है। यदि हम लोग उनकी खातिर चरखा न चलायेंगे तो उनके अस्थिपजरोपर चर्वी नही चढेगी। वे वस्त्र पहने होनेपर भी नगे रहेगे और उद्यम करनेपर भी निरुद्यम रहेगे। चरखेको उन्हे अन्नपूर्णा समझकर चलाना चाहिए। और हमे उनको ठीक मार्ग दिखानेके लिए, शान्ति देनेके लिए और खादी सस्ती करनेके लिए यज्ञ समझकर इसे चलाना चाहिए। वे जितने भी घटे खाली रहे चरखा चलाये और हम उनके लिए अर्थात् यज्ञार्थ भले ही सिर्फ आधा घटा चरखा चलाये लेकिन यदि हम ही चरखा नही चलायेंगे तो वे भी चरखा नही चलायेंगे। हम चरखा नही चलायेगे तो चरखेके दोषोको कौन दूर करेगा, चरखा-शास्त्र कौन वनायेगा और चरखेकी शक्तिका माप कौन करेगा? उसका विनाश हमारे हाथोसे हुआ है, इसलिए उसका पुनःस्थापन भी हमारे ही हाथोसे होना चाहिए। यह सब अर्थ और वहुत-से दूसरे भी अर्थ, मैंने जो हाथसे भाषण किया है, उसमे मौजूद हैं। हमने गरीव किसानोसे वहुत-कुछ लिया है, इसलिए धर्म यही है कि हम चरखा चलाकर उन्हे उसमे से कुछ वापस करे।

शान्तिनिकेतन

लेकिन वगालमे मेरे लिए एक यही आकर्पण नही है। यहाँ तो मेरे लिए अनेक आकर्पण मौजूद हैं। मै शान्तिनिकेतनमे जाये बिना रह ही कैसे सकता था? मै ये टिप्पणियाँ शान्तिनिकेतनमे बैठा मौनवारको लिख रहा हूँ।[1] शान्तिनिकेतनवासी मुझे परम शान्ति दे रहे है। यहाँ वहने मुझे अपने मधुर गीत सुना रही है। मैंने महाकविसे घटो जी-भरकर वातचीत की। अव मै उन्हे कुछ अधिक समझ सका हूँ, कहना चाहिए कि वे मुझे कुछ अधिक समझने लगे है। उन्होने मुझपर अपना प्रेम व्यक्त करनेमे कोई कसर नही रखी है। उनके वड़े भाई द्विजेन्द्रनाथ ठाकुरका तो, जो 'वडो दादा' के नामसे प्रसिद्ध है, मुझपर वैसा ही प्रेम है जैसा पिताका पुत्रके प्रति होता है। वे मेरे दोप तो देखना ही नही चाहते। उनके खयालसे तो मैंने कोई गलती की ही नही और मेरा असहयोग, मेरा चरखा, मेरा सनातनीपन, मेरी हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी कल्पना और मेरा अस्पृश्यताका विरोध—सव वाते सर्वथा उचित है, और मेरी तरह उनका भी विश्वास है कि स्वराज्य इन्हीपर निर्भर है। जैसे पिता मोहवश पुत्रके दोप नही देखता उसी प्रकार 'वडो दादा' भी मेरे दोप विलकुल देखना नही चाहते। उनके मोह और प्रेमका तो मै यहाँ उल्लेख-भर कर सकता हूँ;

१. गांधीजी २९ मईसे १ जूनतक शान्तिनिकेतन रहे थे।

उसका वर्णन कदापि नही कर सकता। मैं उस प्रेमके योग्य बननेका प्रयत्न कर रहा हूँ। उनकी उम्र ८० सालसे भी ज्यादा है। लेकिन वे छोटी-छोटी बातोकी भी जानकारी रखते है। वे यह जानते है कि हिन्दुस्तानमे आज क्या चल रहा है। वे दूसरोसे पत्र पढवाकर सुनते है और सब जानकारी प्राप्त करते है। दोनो भाइयोने वेदादि ग्रन्थोका गहन अध्ययन किया है। दोनो सस्कृतके ज्ञाता है। दोनो बातचीतमें 'उपनिषदो' के मन्त्रो और 'गीता' के श्लोकोके उद्धरण बार-बार देते जाते है।

शान्तिनिकेतनमे चरखेके पुजारी भी मौजूद है। कुछ नियमित रूपसे चरखा चलाते है और कुछ अनियमित रूपसे। बहुत-से खादी पहनते है। मुझे आशा है कि इस विश्वविख्यात् सस्थामे चरखेको और भी अधिक स्थान प्राप्त होगा।

नन्दिनी बाला

इस बातको तो कुछ ही गुजराती जानते होगे कि यहाँ कुछ गुजराती बालक रहते है। उनमे से कुछ बालकोके तो कुटुम्ब भी यही रहते है। इनमे एक भाटिया कुटुम्ब था। उसमे एक कन्याका जन्म हुआ। उसकी माँ बहुत बीमार रही और पागल हो गई। इसलिए गुरुदेवकी पुत्रवधुने उसे गोद ले लिया और अब उसका पालन-पोषण उन्हीके द्वारा हो रहा है। यह कन्या कोई ढाई वर्षकी होगी। वह गुरुदेवकी बहुत लाडली है। सब लोग उसे उनकी पौत्री ही मानते है। गुरुदेव अभी आराम कर रहे है। उन्हे डाक्टरोने हृदय-रोग होनेके कारण चलने-फिरनेकी मनाही कर दी है। वे जिसमे कडा परिश्रम हो ऐसा मानसिक काम भी नही कर सकते, इसलिए दिनमे तीन-चार बार इस लडकी नन्दिनीसे विनोद करते और उसे अनेक प्रकारकी कहानियाँ सुनाते है। यदि वे उसे कहानियाँ नही सुनाते तो वह नाराज हो जाती है। वह इसी तरह इस समय मुझसे भी नाराज हो रही है। वह मुझसे फूलोका हार लेनेके लिए तो तैयार हो गई है, लेकिन मेरे पास आनेसे साफ इनकार कर रही है। हो सकता है कि चूँकि मैं उसके कहानियोके समयमे गुरुदेवसे बातचीत करता रहा था, इसलिए वह उसका बदला ले रही हो। बालक और राजाकी नाराजीको कौन सँभाल सकता है? यदि राजा नाराज हो तो मेरे-जैसा सत्याग्रही शायद उसे सँभाल भी ले लेकिन बालककी नाराजीके सामने तो मेरा तेजस्वी हथियार भी निस्तेज प्रतीत होता है। इस दरम्यान मौन-दिवस आ पहुँचा है। इसलिए मुझे शायद नन्दिनीको जीते बिना ही शान्तिनिकेतनसे जाना पड़े। मैं अपनी इस हारके दुःखकी कहानी किसे सुनाऊँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९२५

११८. काठियावाड़में खादी

काठियावाडसे आये हुए पत्रोको देखनेसे ऐसा जान पडता है कि जिन-जिन भाइयोने हाथसे सूत कातनेवाले किसानो और निर्धन वर्गके लोगोको सगठित करनेका बीडा उठाया था, वे अपने प्रयत्नमे सफल हो गये है। इस सम्बन्धमे देवचन्द भाई पूरी तरह आश्वस्त है। लगता है कि अधिक प्रयासके बिना ही ऐसे परिवार मिल गये है। वे मानते है कि यदि अधिक कार्यकर्त्ता हो और हम आधे मूल्यपर अधिक पूनियाँ दे सके तो सूत कातनेके लिए बहुत-से परिवार तैयार हो जायेगे। किन्तु जितने परिवार अनायास मिल चुके है उनकी सेवा करना ज्यादा अच्छा है या समझानेके बाद जो परिवार तैयार होगे उनके पास जाना? प्राप्त परिवारोकी सेवा करनेका अर्थ है हमारे और उनके बीच काम करनेवालोकी व्यवस्थाको दृढ करना, चरखेमे सुधार करना और अच्छा सूत कतवाना और कातनेवालोको धुनना सिखाना आदि।

मै इतनी दूर बैठा इस सम्बन्धमे सलाह देनेमे असमर्थ हूँ और स्वयको इसका अनधिकारी मानता हूँ। समय-समयपर उपस्थित होनेवाली परिस्थितिको जाने बिना कोई सलाह देना मै भयकर समझता हूँ। इसलिए बगालमे जो अनुभव हुए है उनको मै कार्यकर्त्ताओके सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता हूँ। मै बगालमे देखता हूँ कि कही भी पूरी-पूरी पूनियाँ शायद ही दी जा सकी है। कलकत्ताके सिवा किसी दूसरी जगह पूनियाँ दी भी नही जाती। केवल रुई ही दी जाती है। इसके अतिरिक्त हजारो सूत कातनेवाली बहने तो कपास ही माँगती है। वे उसे हाथसे ओट लेती है। जिन्हे कातने-का अनुभव है, वे समझ सकते है कि जो लोग ओटने और धुननेका काम स्वय कर लेते है उनकी कमाई बढ ही जाती है। इन कामोको अपने-अपने घरोमे करना कठिन नही है। जिन्होने ये काम किये है वे इस बातको जानते ही है। बगालमे अभीतक लोग पुराने जमानेको भूले नही है, इसलिए वे सहज ही इन बातोको पकड़ लेते है। बगाल-की जैसी पूनियाँ तो कोई बना ही नही सकता। उनकी पूनियोमे किरी बिलकुल नही होती। यदि हम ओटाईका काम प्रत्येक कातनेवालेके घरमे आरम्भ नही करा सकते तो भी धुनाईका काम क्यो नही आरम्भ करते? मैने यहाँकी धुनकियाँ बहुत सादी बनी हुई देखी है। उनका मूल्य चार या छ आनेसे ज्यादा शायद ही होता हो। लोग बाँसको भिगोकर झुका लेते है और कई बार केलेके रेशोकी डोरी बटकर उसकी ताँत बना लेते है। वे घोटा तो काममे ही नही लाते है। वे उसका काम उगलीसे ही ले लेते है। हम भले इतना न करे और शायद इसकी जरूरत भी न हो; किन्तु जो लोग नियमित रूपसे कातते है, उनको तुरन्त धुनाई सीख लेना तो जरूरी है ही। कातने-वालोको पूनियाँ हमेशा पर्याप्त मात्रामे मिल सके, यह मुझे मुश्किल दिखाई देता है।

दूसरी बात यह अनुभवमे आई है कि यहाँ दस अकसे कमका सूत शायद ही कोई कातता हो। बाजारमे जो सूत मिलता है वह प्राय दस अकसे ऊपरका होता

है। यहाँ देव कपासके अतिरिक्त जो कपास होती है वह हमारी मठिया कपाससे घटिया किस्मकी होती है। यहाँ जो औजार काममें लाये जाते है वे हमारे औजारोंसे सस्ते होते हैं। मैं कह नही सकता कि सस्ते औजार कही अन्तत मँहगे तो नही पडते।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ७-६-१९२५

११९. एक सलाह

७ जून, १९२५

प्रण उतावलीमें कभी न करो। एक वार करनेके वाद जानकी वाजी लगाकर उसे पूरा करो।

मोहनदास गांधी

अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ८७३५) की फोटो-नकलसे।

१२०. पत्र: 'वर्ल्ड' के सम्पादकको

सावरमती
८ जून, १९२५

प्रिय मित्र,

आपकी शुभकामनाएँ और पत्र मिला; तदर्थ धन्यवाद स्वीकार करें। आपने मुझसे कुछ अटकल लगानेको कहा है, मेरी रायमें वह वेमतलवकी अटकलवाजी होगी। वर्तमानको उसके समग्र रूपमें कौन जानता है? हम सव इतना जरूर जानते है कि, समग्र भविष्य वर्तमानका ही प्रत्यक्ष परिणाम होगा। आवश्यक परिवर्तन यही है कि हम अपने अन्दर विनम्रता पैदा करें और आत्मचिन्तन करें। अपने अहकारमें हम अपना सुधार किये विना ससारका सुधार करना चाहते है। 'आत्मान विद्धि' आज भी उतना ही सही है जितना अपने पहले-पहल कहे जानेके समय था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेवभाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१२१. भाषण : जलपाईगुड़ीकी सार्वजनिक सभामें

१० जून, १९२५

श्री गांधीने एक आम सभामें भाषण देते हुए व्यापारियों और व्यवसायियोंसे अनुरोध किया कि वे अपने धनको और व्यवसायकी अपनी सूझ-बूझको भारतके कल्याणके लिए इस्तेमाल करें। अभीतक अकेले शिक्षित वर्गने ही भारतकी सेवा की है। अब व्यापारी वर्ग और आम जनताकी बारी है। देशके सामने जो रचनात्मक कार्य है उसके लिए उनकी सम्पूर्ण व्यवसाय-कुशलता और दूरदर्शिता अपेक्षित है, और यदि वे देशके हितमें संलग्न होंगे तो इससे ६० करोड़ रुपया सालानाकी बचत होगी। खद्दरका उत्पादन इतना पर्याप्त होने लगेगा कि सारे देशको वस्त्र सुलभ होगा और विदेशी कपड़ेका पूरा-पूरा बहिष्कार सम्भव हो जायेगा। मेरी रायमें भारतके सात लाख गाँवोंमें से हर गाँव कताई-बुनाईकी ऐसा मिल-जैसा है जो मशीन, श्रम और पूँजीके मामलेमें बिलकुल आत्मनिर्भर है।

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, ११-६-१९२५

१२२. जलपाईगुड़ीमें स्वयंसेवकोंसे बातचीत[1]

१० जून, १९२५

आप कहते हैं कि सूत कातनेमें कुछ मजा नहीं है। लेकिन मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या गायत्री जाप करनेमें कोई मजा है? क्या कलमा पढनेमें कोई मजा है? आप उसे कर्त्तव्यकी तरह — एक पवित्र संस्कारकी तरह करते हैं। उसी तरह सूत कातना भी एक कर्त्तव्य और पवित्र संस्कार है। भारत मर रहा है। वह मृत्युशैयापर है। क्या आपने कभी किसी व्यक्तिको मरते हुए देखा है? क्या आपने उसके पैर छूकर देखे हैं? आप देखते हैं कि उसके पैर ठंडे हो जाते हैं, सुन्न पड़ जाते हैं। उसके सिरमें फिर भी आपको गरमाहट लगती है और आप अपना मन समझा लेते हैं कि अभी उसके शरीरमें जीवन है। लेकिन वह चुक रहा होता है, उसी तरह भारतकी आम जनता अर्थात् भारत माताके चरण ठंडे और सुन्न पड गये हैं। यदि आप भारतको बचाना चाहते हैं तो जो-कुछ थोड़ा-सा काम करनेको मैं कहता हूँ वह अवश्य कीजिए। मैं आपको चेतावनी देता हूँ। समय रहते चरखा शुरू कीजिए, अन्यथा आप विनाशको प्राप्त होंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।

१२३. टिप्पणियाँ

एक नई भरती

मेरी प्यारी बेटियोकी फौज दिन-ब-दिन बढ रही है। बेशक उन सबकी रानी तो गुलनार ही है। मै जब-जब निमन्त्रण मिलनेपर सरकारका मेहमान बनकर गया हूँ तब-तब वही मेरी गैरहाजिरीमे मेरी ओरसे मेरे निरकुश सिहासनपर आसीन हुई है। लेकिन छोटी-छोटी तारिकाएँ तो इतनी अधिक है कि उन्हे गिनाया भी नही जा सकता। अभी उनमे जो एक नई भरती हुई है वह है बर्दवानकी रानीबाला। वह प्यारी लडकी शायद दस वर्षकी होगी। मुझे उसकी उम्र पूछनेकी हिम्मत ही नही हुई। मै उसके साथ सदाकी तरह खेल रहा था और उसकी सोनेकी छ भारी चूडियोको दूसरोकी निगाह बचाकर देख रहा था। मैने उसे नरमीसे समझाया कि उसकी छोटी-छोटी कलाइयोपर ये चूडे बहुत भारी है और उसका हाथ तुरन्त उन चूडियोपर गया। उसके नाना, 'सर्वेन्ट' के श्याम बाबूने, जो सम्पादकके रूपमे ख्याति पा चुके है, कहा, "हाँ, ये चूडे महात्माजीको दे दो।" मुझे खयाल हुआ कि इस उदारताका अर्थ है दूसरेकी हानि। लेकिन श्याम बाबू बोले 'आप मेरी लडकी और दामादको नही जानते। मेरी लडकी यह सुनकर कि रानीबालाने अपने चूडे आपको दे दिये है, बहुत खुश होगी। मेरे दामाद तो इन्हे दे ही सकते है। वे बडे उदार हृदयके आदमी है और सदा गरीबोकी बडी मदद करते है।' वे बोलते जाते थे और रानीबालाको चूडे उतारनेमे मदद तथा उत्साह देते जाते थे। मुझे यह कबूल करना चाहिए कि मै इससे थोडा चकरा गया था। मैने तो सिर्फ विनोद ही किया था। मै छोटी लडकियोसे सदा ऐसा ही कुछ विनोद करता हूँ और विनोद-विनोदमे उनके दिलमे ज्यादा गहनोके प्रति अरुचि और गरीबोके लिए अपने गहने दे देनेकी इच्छा पैदा करता हूँ। मैने चूडे वापस करनेका प्रयत्न किया। लेकिन श्याम बाबूने मुझे ऐसा करनेसे यह कहकर रोक दिया कि उनकी लडकी चूडे वापस लेनेके कार्यको अपशकुन मानेगी। मैने उन्हे अपनी शर्त बताई कि लडकी इन चूडोके बदले जो उसने मुझे दे दिये है, दूसरे चूडे न माँगे तो मै इन्हे ले सकता हूँ। अलबत्ता उसे पसन्द हो तो वह शखके बने सुन्दर सफेद चूडे पहन सकती है। लडकी और उसके नाना दोनोने मेरी यह शर्त स्वीकार कर ली। अस्तु, यह दान उस कुटुम्बके लिए शुभ शकुन था या नही, यह मै नही जानता, लेकिन गरीबोके और मेरे लिए तो वह शुभ शकुन ही था, क्योकि इसका दूसरोपर भी भारी असर हुआ और बर्दवानमे स्त्रियोकी जिस सभामे मैने व्याख्यान दिया उसमे मुझे लगभग एक दर्जन चूडे और दो जोडी कानोके बाले बिना माँगे मिले। यह कहनेकी कोई आवश्यकता नही कि इनका उपयोग बगालमे चरखा और खादीके प्रचारके निमित्त किया जायगा। मै जितनी भी छोटी लडकियाँ है उनको और उनके माता-पिताओको और उनके बूढे दादा-दादियो या नाना-नानियोको यह बताता हूँ कि जो लड़कियाँ मुझसे

रानीवालाकी शर्तपर प्रेम करना चाहे मैं उन सबको, फिर वे चाहे जितनी हो अपनी प्रेमपात्री बना देनेके लिए तैयार हूँ। इस खयालसे कि उन्होने अपने कीमती गहने गरीबोकी सेवाके लिए दे दिये है, उनकी सुन्दरता और भी बढ जायेगी। हिन्दुस्तानकी छोटी-छोटी लडकियोको यह कहावत सदा याद रखनी चाहिए कि 'सुन्दर वह जो सुन्दर करे'।

ग्यारह दिनकी प्रगति

सत्याग्रहाश्रम स्कूल बहरोकके मन्त्री अपने पत्रमे लिखते है[1]

निश्चय ही यह प्रगति बहुत अच्छी है। लेकिन उस चमत्कारी कार्यका अन्त ११ दिनमे ही नही हो जाना चाहिए। हमपर बहुधा यह आरोप लगाया जाता है कि हम लगातार एक-जैसी शक्तिसे तथा तन्मयतासे कार्य नही कर सकते। मै आशा करता हूँ कि जिस सुधारका सूत्रपात इतनी अच्छी तरह हुआ है वह जारी रहेगा। मै जानता हूँ कि एक योग्य कातनेवालेके हाथोमे एक अच्छा तथा आवाज न करनेवाला चरखा 'एक सतत उल्लास देनेवाली' वस्तु बन जाता है।

प्रतियोगियोंका विश्लेषण

जिन लोगोने हाथ कताई सम्बन्धी निबन्ध-प्रतियोगितामे भाग लिया है और अपने निबन्ध भेजे है। प्रदेशानुसार उनका निम्न विश्लेषण पाठकोको दिलचस्प होगा। उनकी सूची यहाँ दी जाती है:

आन्ध्र	४	तमिलनाड	१९
गुजरात	९	बम्बई	४
सयुक्त प्रदेश	३	बिहार	२
बगाल	३	महाराष्ट्र	३
बर्मा	१	केरल	१
उड़ीसा	२	कर्नाटक	१
पजाब	५	मध्यप्रदेश (मराठी)	१
सिंघ	१	श्रीलका	१
एक गुजराती (लन्दन)	१	गुमनाम	१
			६२

इसकी यह प्रतिक्रिया प्रतियोगितामे ली जानेवाली दिलचस्पीका एक स्वस्थ चिह्न है। इन निबन्धोकी अच्छाई या स्तरके बारेमे की गई जाँचका फल भी शीघ्र ही मालूम हो सकेगा। परीक्षक महोदय उन्हे जाँच रहे है।

१. यह यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें मन्त्रीने गाधीजीके वहाँ जानेके बाद राष्ट्रीयशालाके छात्रोंकी सूत कताईकी प्रगतिके विषयमें लिखा था।

बहुत बड़ी फटकार

एक वकील मित्र अपने पत्रमे लिखते है[1]

यदि इस मित्रका यह मानना कि वे बुननेवाले और कताई-विशेषज्ञ न होनेके कारण सूतकी अच्छाई या बुराई नही जान पाते, सच होता तो मेरी उक्तिको 'बहुत बडी फटकार' कहा जा सकता था। लेकिन सच बात तो यह है कि सूतका बुनाईके योग्य है या नही, यह जानना बडा सीधा काम है। मोटे तौरपर देखकर यही बात मालूम हो जायेगी कि सूत एकसार, मोटा-पतला या रोएँदार, कैसा है, और हाथसे जरा खीचनेपर यह पता चल जायेगा कि वह अच्छा बटदार है या नही। इसलिए साधारणतया सूतकी अच्छाई या बुराई जाननेके लिए किसीको बुनकर होनेकी जरूरत नही है। इसके अलावा जो थोड़ा भी सावधान है, वह बुनकरसे अपना सूत दिखा ले सकता है। हजारो कातनेवाले जो आज अच्छा सूत कात रहे है, बुनकर नही है और बिना कुछ अधिक कठिनाईके अच्छे और बुरे सूतको पहचान लेते है। इस पत्रके लेखकने जो सूत भेजा है, वह सम्भवत आश्रम पहुँच चुका होगा, लेकिन मैं बराबर सफरमे रहा हूँ, इसलिए मुझे नही मिला है। लेकिन अब उन्हे मेरे उपरोक्त सुझावको मान लेना चाहिए। जेलमे हमे मिलके कते सूतका दो गजका एक नमूना दिया जाता था और उस नमूनेका सूत कातनेके लिए कहा जाता था। इस प्रकार जो लोग हिदायतोके बलपर निर्णय नही कर सकते वे मिल-कते सूतका, जिस अकका सूत कातना चाहे, उस अकका एक नमूना ले ले और उसी अक और किस्मका सूत कातनेका प्रयत्न करे। अब शायद यह बात साफ हो गई है कि मैंने उन सदस्योसे जिन्होने रस्सी-जैसा खराब सूत भेजा था, यह क्यो कहा था कि उनका सूत सूत ही नही है। मेरी इच्छा किसी भी कातनेवालेके प्रति अन्याय करनेकी न थी। यह दिखानेके लिए भी मुझे फौरन ही इस बातको स्वीकार कर लेना चाहिए कि खराब सूत भेजनेवालोमें इन वकील मित्रकी तरह कई लोग ऐसे भी होगे जिन्हे इसका अधिक ज्ञान नही था। लेकिन वे बहुत न होगे, क्योकि इन पृष्ठोमे बार-बार चेतावनियाँ और हिदायते प्रकाशित की गई है और अ० भा० खादी बोर्डने भी जब सूत उसके पास भेजा जाता था तब पृथक् रूपसे यह सब प्रकाशित किया था।

शालाओंमें कताई

इलाहाबाद नगरपालिकाके स्कूलोमे कताई शुरू करनेमे जो भारी सफलता मिली है, उसका जिक्र 'यग इडिया' मे किया जा चुका है। अब पण्डित जवाहरलाल नेहरूने यह रिपोर्ट दी है।

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें पत्रलेखकने 'बुनकरकी शिकायतें' शीर्षक लेखका हवाला देते हुए यह लिखा था: 'मैं आपके इस कथनसे सहमत नहीं हो सकता कि जिस कतैयेका सूत बढ़िया क़िस्मका नही होता, वह लापरवाहीसे या बिना पूरा मन लगाये सूत कातता है और इस प्रकार अपने-आपको और राष्ट्को धोखा देता है। किसी सदस्यकी सचाई, वह जो सूत कात सका है, उसकी अच्छाई या बुराईसे निश्चित करना, अनुचित होगा। सूतमें जो दोष आ जाते हैं उनका कारण यह हो सकता है कि उसे यह उचित जानकारी न हो कि अच्छे सूतमें कितना बट देना चाहिए।'

लखनऊ, फर्रुखाबाद, बनारस, कानपुर तथा मिर्जापुरके नगरपालिका बोर्ड तथा झांसी, बांदा, बस्ती और आजमबागके[1] जिला बोर्ड अपने स्कूलोंमें कताईकी व्यवस्था कर रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि संयुक्त प्रान्तमें कई स्थानीय निकाय इस बारेमें विचार कर रहे हैं तथा इस विषयमें संयुक्त-प्रान्तीय प्रादेशिक कांग्रेस कमेटीसे लिखा-पढ़ी कर रहे हैं।

मै इन नगरपालिकाओको उनके प्रशसनीय निश्चयपर बधाई देता हूँ। स्कूलोमे कताई शुरू करनेमे एक गम्भीर अडचन, जिसकी इलाहाबाद नगरपालिका शिक्षा-विभागने अपनी रिपोर्टमे शिकायत की थी, चरखोके जल्दी-जल्दी खराब हो जानेकी तथा उनको रखनेके लिए जगह की कमी की भी है। सावधानीसे चलाया जाये तो चरखा खराब नही हो सकता। लेकिन जगहकी कमीकी शिकायत सभी शहरोमे एक बडी बाधा है। इसलिए मै स्कूलोके अधिकारियोंका ध्यान सुन्दर तकलीकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। यह जेबमे रखकर ले जाई जा सकती है, इसे सभी बच्चे एक ही समयमे चला सकते है और यह सभी जगह इस्तेमाल की जा सकती है। उदाहरणके तौरपर इलाहाबादके नगरपालिकाके स्कूलोमे ३,४०० लड़को और लड़कियो-के चलानेके लिए ३३४ चरखे है, लेकिन इनमे से आधे मरम्मतकी आवश्यकताके कारण बेकार रहते है। मुझे निश्चय है कि चरखोसे प्रति लडका तथा लडकी ४५ मिनटमे १५० गजसे अधिक सूत नही काता गया। इसका मतलब है अधिकसे-अधिक ४७,२५० गज प्रतिदिन। इतने समयमे तकलीसे ३० गजसे अधिक सूत न कतेगा। लेकिन पूरे ३,४०० लडके उसे एक साथ चला सकते है। इसलिए तकलीके प्रयोगसे प्रतिदिन १,०२,००० गज अर्थात् चरखेसे तैयार सूतकी मात्राका दुगुना सूत कत जायगा। इसलिए अन्ततोगत्वा स्कूलो तथा ऐसे समूहोके लिए तकली सूत कातनेका सबसे अच्छा साधन है। तकलीसे सूत कातनेमे पारगत होनेमे चरखेकी अपेक्षा अधिक समय नही लगता। इसलिए मै सिफारिश करता हूँ कि इलाहाबाद नगरपालिकाके स्कूलोंमे तकली तुरन्त अपनाई जाये। अधिकारी उन विशेष छात्रोके लिए जो विशेष समय उसके लिए देना चाहते हो तथा बहुत मात्रामे सूत उत्पादन करनेके लिए उत्सुक हो, चरखे कायम रख सकते है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-६-१९२५

१. यहां आजमगढ़ होना चाहिए।

१२४. यह पुरुषोंका काम नहीं?

एक प्रोफेसर साहब इस प्रकार लिखते हैं:

स्वयं तो मुझे चरखे और खादीमें पूर्ण विश्वास है। यह बात मेरी समझमें खूब अच्छी तरह बैठ गई है कि सिवाय खद्दरके कोई भी ऐसा सूत्र नही है जो उच्च वर्गके लोगोंको आम लोगोंसे जोड़ सकता हो। और ऐसे किसी सूत्रके बिना और एकत्वका अनुभव किये बिना, कोई भी देश किसी भी कार्यको सिद्ध नहीं कर सकता; हिन्दुस्तान तो और भी नहीं। इसके अलावा मैं यह भी अच्छी तरह समझता हूँ कि काफी तादादमें खादीका उत्पादन शुरू हो जानेपर विदेशी कपड़ा आना बन्द हो जायेगा। यदि हिन्दुस्तानको स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है तो उसे खादीके कार्यक्रमपर पूरे तौरपर अमल करना होगा।

लेकिन मेरा खयाल है कि आपने गलत सिरेसे काम करना शुरू किया है। स्वस्थ और सशक्त मनुष्योंको स्त्रियोंकी तरह कातनेके लिए बैठनेको कहना बहुतेरे मनुष्योको अजीब-सा मालूम होता है। मैं इस व्यंगपूर्ण उक्तिको ठीक मानता हूँ कि आजकल हम लोग औरतोंसे किसी प्रकार भी बढ़कर नहीं हैं। फिर भी हकीकत यह है कि हम लोग उस कार्यको करना स्वीकार नहीं कर सकते जिसे कि सैकड़ों वर्षोसे स्त्रियोंसे ही सम्बन्धित माना जाता रहा है। और यदि मुझको इसका भी विश्वास दिलाया जा सके कि कमसे-कम भारतवर्षकी सभी स्त्रियोने कताईको अपना लिया है और फिर भी इस काममें पुरुषोंके हाथ बँटानेकी जरूरत है तो मैं अपने आजके इस खयालको छोड़ देनेके लिए तैयार हो जाऊँगा। बारीक विदेशी साड़ियाँ पहनकर औरतें तो इठलाती फिरें और पुरुषोंसे कातनेके लिए कहा जाये, यह तो उलटी गंगा बहानेके समान ही होगा। इसके अतिरिक्त, विदेशी कपड़ोंके आयातकी जिम्मेवारी पुरुषोंपर उतनी नहीं है जितनी कि स्त्रियोंपर, और इसलिए मेरा यह खयाल है कि खद्दर और चरखेका उपयोग करनेके लिए स्त्रियोंके बजाय पुरुषोंपर दबाव डालना गलत सिरेसे काम शुरू करना होगा।

मेरी विनम्र राय है कि आपको पुरुषोंको तो उन विभिन्न प्रकारके राजनीतिक प्रचारके कार्यमें ही लगे रहने देना चाहिए था, और अपना सन्देशा सीधे-सीधे स्त्रियोंको ही सुनाना चाहिए था। फिलहाल अपने चरखे और खादीके महान् कार्यक्रमको आप स्त्रियोंके क्षेत्रतक ही सीमित करें और पुरुषोको पुरुषोचित हथियारोंसे ही स्वतन्त्रताकी लड़ाई लड़ने दें।

यह पत्र काफी बड़ा था, लेकिन मैंने उसके तर्कका सार प्रस्तुत कर दिया है, पर उसकी भाषा नही बदली है। यह तो स्पष्ट है कि ये विद्वान् प्रोफेसर हिन्दुस्तानकी स्त्रियोकी हालतसे परिचित नही हैं। अगर वे परिचित होते तो उन्हे यह भी खबर होती कि साधारण तौरपर पुरुषोको स्त्रियोसे अपनी बात कहनेका सौभाग्य या मौका ही नही मिलता। अलबत्ता मेरे सद्‌भाग्यसे कुछ अंशतक मैं उन्हे अपनी बात सुनानेमे समर्थ हो सका हूँ; लेकिन अनेक सुविधाएँ सुलभ होनेपर भी मेरा सन्देश जितना पुरुषोतक पहुँच सका है उतना स्त्रियोतक नही पहुँच पाया है। प्रोफेसर साहबको यह भी मालूम होना चाहिए कि स्त्रियाँ पुरुषोकी इजाजत लिये बिना कुछ भी नही कर सकती। मैं ऐसे बहुत-से उदाहरण पेश कर सकता हूँ कि जिनमे पुरुषोने स्त्रियोको चरखा और खादी ग्रहण करनेसे रोका है। तीसरी बात यह कि जो ईजाद और तबदीली पुरुष कर सकते है वह स्त्रियाँ नही कर सकती। यदि कताई-आन्दोलन सिर्फ स्त्रियोतक ही सीमित रहा होता तो गत चार वर्षोमे चरखेमे जो सुधार हुए है और जिस प्रकारका सगठित रूप आज उसे मिल सका है, वैसा न मिल पाता। चौथे, किसी भी कामके बारेमे यह कहना कि वह स्त्रियोका ही है या पुरुषोका ही है, अनुभवके विरुद्ध पडता है। खाना-पकाना मुख्यत. स्त्रियोका ही काम है। लेकिन जो सिपाही खाना नही पका सकता वह किसी भी कामका नही है। लड़ाईकी छावनियोमे खाना पकानेका सभी काम पुरुष ही करते है। घरमे तो स्वभावत· स्त्रियाँ ही खाना पकाती हैं; लेकिन बहुत बड़े पैमानेपर व्यवस्थित तौरसे खाना पकानेका काम तो सारे ससारमे पुरुष लोग ही करते है। लडाईमे लडना मुख्यतया पुरुषोका ही काम है लेकिन इस्लामके प्रारम्भिक युद्धोमे अरब स्त्रियाँ अपने पतियोके साथ खडी होकर बहादुरोकी तरह लडी थी। गदरके दिनोमे झाँसीकी रानीने अपनी बहादुरीके लिए जो नाम पाया वह बहुत ही थोड़े-से पुरुषोको नसीब हो सका। और आज यूरोपमे हम स्त्रियोको वकालत, डाक्टरी और प्रशासन-कार्य खूबीसे करते देख-सुन रहे हैं। बाबूगिरीका धन्धा तो आशुलिपि और टाइपिंग जाननेवाली स्त्रियोने करीब-करीब अपने ही कब्जेमे कर लिया है। कातना पुरुषोचित काम क्यों नही है? जो काम हिन्दुस्तानकी आर्थिक और आध्यात्मिक उन्नति कर सकता है (और प्रोफेसरके मतानुसार चरखा ऐसा कर सकता है।) वह पुरुषोके लिए काफी पुरुषोचित क्यो नही है? क्या प्रोफेसर महोदय यह नही जानते कि पहले-पहल जिसने कताईकी मशीनका आविष्कार किया वह पुरुष ही था। यदि उसने उसकी ईजाद न की होती तो आज मनुष्यका इतिहास कुछ और ही प्रकारसे लिखा गया होता। सिलाई और सूईका काम तो मुख्यतया स्त्रियोका ही है, लेकिन संसारके प्रख्यात् और अच्छेसे-अच्छे दर्जी सब पुरुष ही है। और सिलाईकी मशीनका आविष्कारक भी पुरुष ही था। यदि सिंगरने सूईका तिरस्कार किया होता तो आज वह मानव-समाजके लिए यह विरासत न छोड़ गया होता। यदि गत वर्षोमे औरतोके साथ-साथ पुरुषोने भी कताईपर ध्यान दिया होता तो कम्पनी सरकारके दबानेपर हमने आज जो कताईका काम छोड़ दिया है वैसा कभी न छोड़ा होता। राजनीतिज्ञ लोग, जितना चाहे, शुद्ध राजनीतिका काम

करनेमे अपनेको लगा सकते है। लेकिन यदि करोडोके सम्मिलित प्रयत्नसे हमे अपने तन ढकने लायक कपडा आप तैयार करना है तो राजनीतिज्ञको, कवि-पण्डित-सभीको, फिर वह स्त्री हो या पुरुष, हिन्दू हो या मुसलमान या ईसाई या पारसी या यहूदी हो, उसे देशके लिए धर्मभावनाके साथ आधा घटा अवश्य ही कातना चाहिए। मानवताका धर्म किसी एक वर्गका यानी केवल स्त्रियोका या केवल पुरुषोका ही अधिकार नही है, वह तो सभीका अधिकार है, फर्ज है। हिन्दुस्तानका मानवधर्म उन सब लोगोसे जो अपनेको हिन्दुस्तानी कहते है इस बातकी अपेक्षा रखता है कि वे कमसे-कम आध घटा नित्य अवश्य काते।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ११-६-१९२५

१२५. आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली

कविराज गणनाथ सेन लिखते है

> **मै इस बातकी ओर आपका ध्यान दिलाता हूँ कि अष्टाँग आयुर्वेद विद्यालयकी[१] नींव रखते समय आपने जो भाषण दिया था उसका कलकत्ताके वैद्योंने, और जन-समाजने भी बड़ा ही गलत अर्थ लगाया है। क्या आपसे यह निवेदन कर सकता हूँ कि आप बराय मेहरबानी इस बातको स्पष्ट करें कि आपका मतलब आयुर्वेद और सच्चे दिलसे उसको माननेवालोकी निन्दा करनेका नहीं था। आपने तो उस वर्गकी निन्दा की है जो लोगोको धोखा देकर इससे आजीविका प्राप्त कर रहा है। मुझे तो यह अत्यन्त आवश्यक मालूम होता है, क्योकि करीब-करीब तमाम बंगाली अखबारोने उस भाषणका दूसरा ही अर्थ किया है और उनका प्रतिवाद न करनेके कारण वे हम लोगोको दोष दे रहे है।**

मै सेन महोदयके सुझावको बडी खुशीके साथ स्वीकार करता हूँ। ऐसा करनेका एक बडा कारण यह है कि मुझे इससे आयुर्वेद-सम्बन्धी अपने विचारोको प्रकट करनेका मौका मिलता है।

मुझे शुरूआतमे ही यह कह देना चाहिए कि जिस कारणमे तिब्बिया कालेजका उद्घाटन करनेके सम्बन्धमे मैने अनिच्छा प्रकट की थी वही कारण इस सस्थाकी नीव रखनेके वारेमे भी था। वह कारण है चिकित्सा-पद्धति सम्बन्धी मेरे सामान्य विचार, जो मैने 'हिन्द-स्वराज्य' मे प्रकट किये है। १७ वर्षके अनुभवके वाद भी, आज उनमें कोई बडा अन्तर नही आया है। यदि आज मै उस पुस्तकको फिर लिखूँ तो मुमकिन है कि मैं उन्ही विचारोको कुछ दूसरी ही भाषामे लिखूंगा। लेकिन जिस तरह मै अपने दिली दोस्त हकीम साहबको इनकार न कर सका, उसी तरह मै इस दौरेके प्रबन्धकोकी बात भी टाल न सका। परन्तु मैंने उनसे यह कह दिया था कि मेरा भाषण उन्हे प्रतिकूल-सा मालूम होगा। यदि मै इस प्रकारके अनुष्ठानके सर्वथा

१. देखिए "भाषण: अष्टांग आयुर्वेद विद्यालयके शिलान्यास-समारोहमें", ६-५-१९२५।

विरुद्ध होता तो मै किसी भी हालतमे इस सम्मानको स्वीकार करनेसे साफ इनकार ही कर देता। जो शर्तें मैंने उस समय सभामे जाहिर की थी उन्ही शर्तोपर यह विधि सम्पन्न करनेको राजी होना सम्भव था। मुझे आशा है कि जिस सस्थाकी मैंने नीव रखी थी और जिसके सस्थापकने, जो स्वय एक कविराज है उसके लिए एक वडी भारी रकम दी है, वह सचमुच ही मानवीय कष्टोको मिटानेमे सहायक होगी, वह आयुर्वेदका प्रत्यक्ष अभ्यास, सगोधन और नया शोध-कार्य भी करेगी और इस प्रकार इस मुल्कमे जो सबसे ज्यादा गरीब है, उन्हे मामूली देशी दवाओका ज्ञान प्राप्त करने तथा उन्हे उपयोगमे लानेका सुभीता कर देगी और लोगोको रोग दूर करनेके उपाय सिखानेके बजाय रोगोको न होने देनेके उपाय बतायेगी।

समूचे चिकित्सा-व्यवसायसे जो मेरा विरोध है उसका कारण यह है कि उसमे आत्माकी ओर जरा भी ध्यान नही दिया जाता और इस शरीर-जैसे नाशवान, क्षणभगुर साधनकी मरम्मत करनेके प्रयत्नमे जो श्रम किया जाता है वह एक नगण्य वस्तुके लिए ही किया गया प्रयत्न है। इस प्रकार यह पेशा आत्माकी उपेक्षा करके मनुष्योको अपना मोहताज बना देता है और मनुष्यके गौरव तथा आत्मसयमको घटानेमे मदद करता है। मै इस बातका उल्लेख कृतज्ञतापूर्वक करता हूँ कि पाश्चात्य देशोमे धीरे-धीरे, पर निश्चित रूपसे ऐसे विचारोके लोग पैदा हो रहे है जो रोगग्रस्त शरीरको अच्छा करनेके अपने प्रयत्नमे आत्माका भी ध्यान रखते है और इसलिए वे उपचारके प्रबल साधनके रूपमे दवाओपर उतना भरोसा नही रखते जितना कि कुदरतपर। आयुर्वेदके विद्वानोसे मेरा विरोध इसलिए है कि उनमे से अधिकाश नही तो बहुतेरे तो नीम हकीम ही होते है। वे जितना जानते है उससे कही अधिक जाननेका दावा करते है। वे इस बातका दावा करते है कि वे सब किस्मके रोगोको निश्चय ही दूर कर सकते है। इन लोगोमे नम्रता नही होती। वे आयुर्वेद-प्रणालीका अभ्यास नही करते और उसके उन रहस्योका उद्घाटन करनेका प्रयास नही करते, जो आज ससारकी नजरोसे बिलकुल ही ओझल प्रतीत होते है। वे कहते है कि आयुर्वेद सर्वशक्ति सम्पन्न है, लेकिन बात ऐसी नही है। और ऐसा करके उन्होने उसे दिन-प्रतिदिन प्रगति करनेवाली यशस्वी पद्धति बनानेके बजाय केवल एक जड पद्धति बना दिया है। मुझे एक भी ऐसी महत्त्वपूर्ण शोध या ईजादका पता नही जो आयुर्वेद-विशारदोने की हो, जबकि पाश्चात्य डाक्टर और सर्जन लोग अनेक उत्तम शोध और ईजादे कर चुकनेका दम भरते है। आयुर्वेद जाननेवाले साधारणतया नाडी देख कर रोग पहचानते है। मै बहुत-से ऐसे वैद्योको जानता हूँ जो इस बातका दावा करते है कि वे रोगीकी नाडी देखकर ही यहाँतक जान लेते है कि उसे 'अपेडिसाइटिस' है या नही। यह तो कोई नही कह सकता कि पुराने जमानेमे भी कभी नाडी-विज्ञान इतना बढा-चढा था या नही कि उस जमानेके वैद्य नाड़ी देखकर ही मुख्य-मुख्य रोगोका निदान कर लेते। परन्तु यह निश्चित है कि आज यह दावा प्रमाणित नही किया जा सकता। आज तो आयुर्वेद जाननेवाले सिर्फ इतना ही दावा कर सकते है कि उन्हे वनस्पति और धातुसे बनी कुछ ऐसी दवाओका ज्ञान है जो बड़ी कारगर

होती हैं और यदि उनमे से कुछ रोगीको दी जायें तो बड़ा फायदा पहुंचाती हैं। वे इन रोगोकी सिर्फ अटकल ही लगाते हैं और इससे वे गरीब रोगियोंके लिए बहुत हानिकर सिद्ध होती हैं। दवाओंके वे विज्ञापन जो कामवासनाको भड़काते है, असमर्थतामे अनीतिका समावेश करते हैं और जो लोग ऐसे उपायोका अवलम्ब लेते है वे समाजके लिए वास्तविक खतरा बन जाते हैं।

जहाँतक मुझे मालूम है आयुर्वेदाचार्योका ऐसा कोई संघ नही है जो इस अनीतिके अनवरत प्रवाहको जिससे कि हिन्दुस्तानियोका पुंसत्व नष्ट हो रहा है और जिसके द्वारा बहुतसे बूढ़े लोग सिर्फ अपनी काम-पिपासा तृप्त करनेके लिए राक्षस बनकर जी रहे हैं, रोकनेका प्रयत्न कर रहा हो या विरोधमे स्वर उठा रहा हो। सच तो यह है कि ऐसे वैद्योको मैंने चिकित्सक-समाजमे काफी मान-प्रतिष्ठाका उपभोग करते देखा है। इसलिए जब कभी मुझे मौका मिलता है मैं यही सत्य वैद्यो या हकीमोको समझानेका प्रयत्न करता हूँ और उनसे निवेदन करता हूँ कि आप लोग सत्य और नम्रता अपनायें और बड़े धैर्यके साथ अनुसन्धान करे। सभी प्राचीन और उदात्त बाते मुझे प्रिय है। मैं यह मानता हूँ कि एक समय था जब कि आयुर्वेद चिकित्सा-प्रणाली या यूनानी दवाओंका ध्येय बड़ा अच्छा था और वे प्रगति कर रही थी। एक ऐसा भी समय था कि जब मैं वैद्योमे बड़ा विश्वास रखता था और उनकी सक्रिय रूपसे मदद करता था। लेकिन अनुभवने मेरा भ्रम दूर कर दिया है। बहुतेरे वैद्योके अज्ञान और अहंकारको देखकर मुझे दुःख हुआ है। ऐसा गौरवपूर्ण व्यवसाय बिगड़कर मात्र रुपये कमानेका धन्धा बनकर रह गया है, यह देखकर मुझे बड़ा ही कष्ट होता है। मैं यह व्यक्तियोको दोष देनेके लिए नही लिख रहा हूँ। आयुर्वेदाचार्योकी चिकित्सा-प्रणालीका दीर्घकालतक अवलोकन करनेके पश्चात् उसकी जो छाप मुझपर पडी है, मैंने उसीको लिखा है। यह कहना कि जिन बुराइयोका उल्लेख मैंने यहाँ किया है वे उन्होंने पाश्चात्य डाक्टरोसे सीखी है, कोई ठीक उत्तर नही हो सकता। बुद्धिमान मनुष्य जो वस्तु बुरी है उसका अनुकरण नही करता, जो चीज अच्छी है उसीका अनुकरण करता है। हमारे कविराज, वैद्य और हकीम उस वैज्ञानिक भावनाका अनुकरण करे जो आज पश्चिमके डाक्टरोमे दिखाई दे रही है। वे उनकी नम्रताको भी ग्रहण करे। वे देशी दवाओंको ढूंढ निकालनेके प्रयत्नमे अपनेको गरीब बना डाले। पाश्चात्य चिकित्सा-शास्त्रका जो भाग हमारे शास्त्रोमे नही है, उसको वे स्पष्टतया स्वीकार कर ले और उसे अपना ले। लेकिन् पाश्चात्य वैज्ञानिकोकी धर्महीनतासे उन्हे बचना चाहिए। वे शरीरके रोगका निवारण करनेके लिए विज्ञानके नामपर छोटे प्राणियोको बडी पीडा पहुँचाते है और उसे 'पशुओपर शोध-मूलक प्रयोग' के नामसे पुकारते है। कुछ लोग शायद यह कहेगे कि आयुर्वेदमे भी ऐसे प्रयोगोका विधान है। यदि यह सच है तो मुझे बड़ा ही अफसोस होगा। भ्रष्ट वस्तु पवित्र नही हो सकती है, उसकी अनुमति भले ही चारो वेदोमे क्यो न हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ११-६-१९२५

१२६. पत्र : जमनालाल बजाजको

नवाबगंज जाते हुए
ज्येष्ठ बदी ५ [११ जून, १९२५][1]

चि० जमनालाल,

चि० मनहरसे जो पत्र लिखाया था वह तुम्हारे पास है, यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई। कार्यसमितिकी बैठकमें इच्छा होनेपर आनेकी बात बिलकुल ठीक है। मुझे खास जरूरत होगी तो बुला लूँगा। अभी आचार्यकी[2] खोजमें हूँ ही। मैं १६ जुलाईके बाद मध्य प्रदेशको एक महीना दूँगा। मुझे अमरावती और अकोलाकी नगरपालिकाओंके पत्र मिले हैं, प्रेषकोंके नाम तो याद नहीं हैं। जहाँ जाना जरूरी हो वहाँ जानेका कार्यक्रम रखना। पहले तो एक सप्ताह वर्धामें शान्तिसे बितानेकी इच्छा है। वह तो दार्जिलिंगमें जैसा बीता उससे भी अधिक शान्तिका समय माना जाना चाहिए। उसके बाद दौरा शुरू किया जाये। यहाँ १६ जुलाईतक का कार्यक्रम तो है ही। इस १८को कलकत्तेसे असम जाऊँगा और वहाँसे २ जुलाईको कलकत्ता लौटूँगा। तुमने तो बहुत सूत काता है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० २८५३) की फोटो-नकलसे।

१२७. पत्र : वसुमती पण्डितको

ज्येष्ठ सुदी ५ [११ जून, १९२५][3]

चि० वसुमती,

तुम्हारे पत्र बराबर मिलते रहे हैं। मैं तुम्हें प्रति सप्ताह एक पत्र तो लिखता ही हूँ। और तुम्हारा पत्र आता है तो उत्तर भी देता हूँ। तुम जब दुकानके कामसे मुक्त हो जाओ तब मैं चाहता हूँ कि कुछ दिनों विश्राम करो। यदि तुम्हें आश्रमका वातावरण अच्छा लगे तो वहीं शान्तिसे रहो। जानकी बहन और जमनालाल दोनों बहुत पवित्र व्यक्ति हैं। जमनालालजी तो बहुत-सी विधवा बहनोंको आश्रय देना चाहते हैं। यदि तुम्हारा शरीर कुछ सबल हो जाये तो मैं तुमसे बहुत काम लेना चाहता हूँ। उसके लिए तुम्हें स्थिर होकर रहनेकी आवश्यकता होगी। मुझे तो

१. डाककी मुहरसे।

२. देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", ३०-५-१९२५।

३. डाककी मुहर ११ जून, १९२५ की है; तदनुसार तिथि ज्येष्ठ बदी ५ होनी चाहिए, ज्येष्ठ सुदी ५ नहीं।

आश्रममें पहुँचनेमें अभी तीन मास लगेंगे। वक्त इससे ज्यादा तो लग सकता है, कम नही। मैं यह पत्र स्टीमरपर से लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४६३) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

१२८. भाषण : नवाबगंजके विद्यार्थियोंके समक्ष[1]

११ जून, १९२५

आप सब सूत कातते और खद्दर पहनते है, लेकिन मुझे यह बताइयें कि आपमे से कितने हमेशा सच बोलते है और कभी झूठ नही बोलते?

कुछ लड़कोंने अपने हाथ उठा लिये।

अच्छा तो अब यह बताइये कि आपमे से कितने कभी-कभी झूठ बोलते हैं?

दो लड़कोंने तुरन्त अपने हाथ उठा दिये, फिर तीन, फिर चार और अन्तमें लगभग सभीने हाथ उठा दिये।

धन्यवाद, आपमें से जो जानते हैं और स्वीकार करते है कि वे कभी-कभी झूठ बोलते है, उनके लिए हमेशा आशा रहेगी। जो यह समझते हैं कि वे कभी झूठ नही बोलते, उनका मार्ग कठिन है। मै दोनोकी ही सफलताकी कामना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१२९. सम्मति : दर्शक-पुस्तिकामें[2]

१२ जून, १९२५

मुझे यह देखकर बहुत खुशी हुई कि पिछले चार सालोंसे यहाँ सूत कातना अनिवार्य विषय रहा है। कताईकी असफलतापर इन्स्पेक्टरकी टिप्पणियाँ मैंने पढी है। मेरे विचार सर्वथा विपरीत हैं, लेकिन मै जानता हूँ कि कताईको यदि मुनाफेका नही तो सर्वथा स्वावलम्बी काम तो बनाया ही जा सकता है। इसके लिए मै निम्न-लिखित सुझाव रख रहा हूँ:

(१) मौजूदा शिक्षकोंको कोई इनाम रखकर या तनख्वाहमे भी थोडी बढो-तरीका वचन देकर कताईकी कला और शास्त्र सीखनेके लिए प्रेरित करना चाहिए।

(२) लडकोके काते हुए सूतकी हमेशा जाँच की जानी चाहिए और सूतके कस तथा उसके नम्बरकी पर्ची साथमें लगा दी जानी चाहिए।

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत।
२. बिहारी स्कूल, उपाशी, नवाबगंजकी दर्शक-पुस्तिकामें। इस स्कूलमें अनिवार्य विषयोंके रूपमें कताई और बुनाईकी शिक्षा देनेका प्रयोग किया जा रहा था।

(३) लड़कोको अपने काते हुए सूतकी किस्म उत्तरोत्तर अच्छी बनानेके लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(४) सूत मौजूदा कताई-सस्थाओ, जैसे खादी-प्रतिष्ठान, को तयशुदा दामपर, जो हमेशा कपासके दामसे ज्यादा हो, बेचना चाहिए। उस कामके लिए कपास हमेशा उसी सस्थासे लेनी चाहिए।

(५) मेरा पक्का खयाल है कि बुनाई-विभाग रखना बिलकुल ही जरूरी नही है और उसे तभी रखना चाहिए जब उससे बुनाई मास्टरकी तनख्वाह निकाली जा सके। मुझे इस सम्बन्धमे यह वचन पाकर खुशी हुई है कि विदेशी अथवा मिलका सूत अब आगेसे बिलकुल भी काममे नही लाया जायेगा।

(६) धुनाईपर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और बालकोको यह काम स्वय करना आना चाहिए।

(७) चरखे बडी कर्कश आवाज करते है, यह विचित्र बात है। ऐसी आवाज अच्छी तरह कातनेमे अवश्य ही बाधक होती है, यह दूर की जा सकती है। यह तो होनी ही नही चाहिए। किन्तु यह केवल तभी हो सकता है जब कताई मास्टर कताईका शास्त्र जानता हो। इसमे चरखेकी मरम्मतका काम तो आता ही है। जब चरखे ठीक तरहसे काम करते है तो वे एक सगीत पैदा करते है जो कानोके लिए सुखकर होता है। चरखे त्यागका पाठ पढानेके अतिरिक्त बालकोके लिए आनन्ददायक भी बन सकते है।

मैं समिति और शिक्षकोको उनके इस प्रयोगके लिए बधाई देता हूँ और उनकी पूरी-पूरी सफलता चाहता हूँ।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१३०. पत्र : मणिबहन पटेलको

शुक्रवार, ज्येष्ठ वदी ६ [१२ जून, १९२५][1]

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मै आज तो जहाजमे हूँ। चूडियाँ कलकत्तेमे है। मुझे वहाँ १८ तारीखको पहुँचना है। वहाँ पहुँचनेपर उन्हे पार्सलसे भेज दूँगा। परन्तु देवदास आश्रममे न आया हो तो भी पूछताछ कर लेना। उसके नाम आया पार्सल अवश्य रखा होगा, तुम उसे ले लेना।

डाह्याभाईने खेतीका काम पसन्द किया था। मैने उसे यह सलाह उसीके हितको ध्यानमे रख कर दी थी। परन्तु उसका मन विदेश जानेका ही हो तो मै उसे रोकना नही चाहता। विदेश जानेमे मेरे लिए एक बडी कठिनाई यह है कि मुझे किसीसे रुपया माँगना पडेगा। कोई उत्साहसे रुपया दे तो भी जहाँतक हो सके हम न लें,

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

यह आदर्श है। इस आदर्शपर टिके रहनेकी हमारी शक्ति न हो तो किसीसे मदद लेकर जानेमे भी कोई आपत्ति नही। मुझे वहाँ आनेमे अभी कुछ समय लगेगा। मै अभी १६ जुलाईतक बगालमे हूँ। डाह्याभाई यहाँ आना चाहे तो आ जाये और बात कर जाये अथवा आश्रममें आनेपर करना चाहे तो तब कर ले। हमे उसे किसी भी तरह दुखी नही करना चाहिए। मै उसकी जैसी इच्छा हो वैसा ही करना और मृदुल भावसे उसका मार्गदर्शन करना चाहता हूँ। तीन रास्ते है :

१. खानगी नौकरी करना,

२ खेती करना और

३. अमरीका जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त करना।

वह इनमे से जो करना चाहे सो करे। उसमे मुझे कोई आपत्ति नही। चौथा रास्ता राष्ट्रकी सेवाका है। किन्तु वेतन लेकर राष्ट्रकी सेवा करना उसे पसन्द नही, इसलिए मैंने वह रास्ता नही गिना। क्या उसकी रुचि चिकित्साके अध्ययनमे है? यदि हो तो यहाँ राष्ट्रीय चिकित्सा कालेज है और दिल्लीमे भी एक वैसा ही कालेज है। डाह्याभाई न जानता हो तो उसे बताना। यहाँ (कलकत्ते) का कालेज अच्छा माना जाता है। उसे उसमे अध्ययन करना हो तो वह कर सकता है।

मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। कोई दूसरी खराबी तो नही हुई, बीचमे कुछ सर्दी लग गई थी। लोग हर जगह पूरा-पूरा आराम देते है।

. . . को[1] नियमपूर्वक पत्र लिखती रहना। इससे उसे सन्तोष मिलता है। . . .[2] प्रेमका भूखा है।

बापूकी सेवा भली-भाँति करना। जब माँ मर चुकी हो, बाप बहुत-सी बाहरी झझटोमे फसा हो, यदि बच्चे सेवाभावी हो तो वे अपनी सेवासे पिताके सब दु खोको भुला देते है। यह मै एक आज्ञाकारी पुत्रके रूपमे प्राप्त अपना अनुभव तुम भाई-बहनोको बता रहा हूँ। इससे बच्चोका कितना कल्याण होता है, मै इसका साक्षी भी हूँ। मै माँ-बापको परमेश्वरकी तरह पूजनेका फल प्रतिक्षण भोग रहा हूँ। मै तुम दोनोको यह सब इसलिए लिख रहा हूँ, क्योकि मै जानता हूँ कि बापूपर बहुत बडी जिम्मेदारी है। मै तो उसे बँटा नही सकता। मै तो पत्र लिखनेका समय भी नही निकाल पाता; इसलिए अपनी जिम्मेदारी भी तुमपर डाल रहा हूँ।

अपने स्वास्थ्यकी खूब सँभाल रखना। पढनेमे अधिक समय जाये तो चिन्ता न करना। महादेव कहते थे कि तुम दोनो भाई-बहनोके अग्रेजी शब्दोके हिज्जे बहुत कच्चे है। अपनी यह कमी दूर कर लेना। हम जो भी सीखे अच्छी तरह ही सीखें। जहाँ भी शका हो, वहाँ शब्दकोष देखना। ज्यादा-कुछ करनेकी जरूरत नही रहती।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

१ व २. साधन-सूत्रमें ये स्थान खाली हैं।

१३१. भाषण: भोजेश्वरकी सार्वजनिक सभामें

१२ जून, १९२५

महात्माजी हिन्दीमें[1] बोले और बादशाह मियाँने उसका बंगलामें अनुवाद किया। भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके[2] लिए धन्यवाद देनेके बाद महात्माजीने कहा कि आपने मुझसे कांग्रेसके सम्बन्धमें बोलनेको कहा है। मैं तदनुसार आपसे यह कहता हूँ कि यदि आप हिन्दुस्तानमें स्वराज्य चाहते हैं तो आपको तीन बातें करनी होंगी। प्रत्येक व्यक्तिको, चाहे वह राजा हो या किसान, अमीर या गरीब, हिन्दू या मुसलमान, आदमी या औरत, प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा सूत कातना होगा। सभीको हिन्दू-मुस्लिम एकता कायम करने और अस्पृश्यता-निवारणके लिए प्रयत्न करना होगा।

आप लोग इस बातपर जोर देते हैं कि भारतके अन्य हिस्सोंकी जैसी अस्पृश्यता बंगालमें नहीं है; मगर मुझे इसपर विश्वास नहीं होता। उन्होंने कहा कि हिन्दू धर्म यह कभी नहीं सिखाता कि आपको नामशूद्रों, नाइयों और धोबियोंका छुआ पानी नहीं पीना चाहिए।

इसके बाद महात्माजीने उन्हें सभी बुरी आदतें छोड़नेकी सलाह दी। उन्होंने शराब न पीने और वेश्याओंके यहाँ न जानेको कहा।

कांग्रेसके कार्यका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि जो लोग कांग्रेसको मरी हुई समझते हैं, उनका खयाल गलत है। कांग्रेस मरी नहीं है। उसके कार्यकर्त्ता मृतप्राय हो गये हैं। अबतक लोग समझते थे कि कांग्रेसके कामका मतलब है— भाषण देना और जोश-खरोश पैदा करना। लेकिन यह तो इस महान् राष्ट्रीय संगठनका सच्चा काम नहीं है। कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंका कर्त्तव्य जनताकी सेवा करना है। इसी मूक और आडम्बरहीन सेवा-भावनाकी कमीके कारण कांग्रेस पिछड़ गई है। उन्होंने कहा कि जबतक कांग्रेसमें पाँच सच्चे कार्यकर्त्ता भी मौजूद रहेंगे तबतक वह मर नहीं सकती। जबतक भारतका एक भी व्यक्ति विदेशी वस्त्र पहनता है तबतक कांग्रेसके पास करनेके लिए कामकी कोई कमी नहीं है।

कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंके कर्त्तव्योंका उल्लेख करते हुए महात्माजीने कहा कि हजारों भारतीय भूखों रह रहे हैं। आप उन्हें चरखा दीजिए। ऐसा करके आप अपने भाइयोंको बचानेमें समर्थ हो सकेंगे[3]।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १६-६-१९२५

१. मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

२. यह अभिनन्दन-पत्र दक्षिणपाड़ाके लोगोंकी ओरसे भेंट किया गया था।

३. गांधीजीको यहाँ एक हजार रुपयेकी थैली भेंट की गई थी।

१३२. पत्र : चित्तरंजन दासको

[१३ जून, १९२५ से पूर्व]

मेरे प्यारे दोस्त,

आपके साथ मेरे दिन बहुत ही अच्छी तरह बीते। मैं महसूस करता हूँ कि दार्जिलिंगमें साथ रहनेसे हम एक-दूसरेके ज्यादा नजदीक आ गये हैं।[1]

जलपाईगुडीमें केवल ७,००० रुपयेकी थैली मिली। इसे मैंने सतीश बाबूको इस हिदायतके साथ सौंप दिया है कि इसको जो चरखा-समिति आप नियुक्त कर रहे हैं, उसे दे दिया जाये। जलपाईगुडीमें भी मुझे वैसा ही तजुर्बा हुआ जैसा अन्यत्र होता है। कातनेवाले वहाँ हैं, लेकिन उनको सगठित करनेवाला कोई नहीं है। वहाँ लड़कियोंका एक अच्छा स्कूल है। उनके पास करीब बीस चरखे हैं, पर एक भी कामका नहीं है। बेचारी स्कूलकी मुख्य शिक्षिका हालाँकि खुद अच्छा सूत कातती है, पर अच्छे-बुरे चरखेका फर्क नहीं जान पाती। चरखोंकी हालतसे समितिको कोई वास्ता नहीं। अगर विशेषज्ञों द्वारा मार्गदर्शन किया जाये तो आसानीसे इसका इलाज हो सकता है। प्रस्तावित समिति ऐसा मार्ग-दर्शन कर सकती है।

मेरा आग्रह है कि आप चरखा और तकली दोनोंपर सूत कातना सीखें। यदि आप चाहें तो इसे कर सकते हैं, लेकिन आपको इसपर ध्यान देना होगा। यदि गवर्नर कह दे कि 'कातो और जो चाहो ले लो' तो आप चरखेपर २४ घंटे काम करें और सिद्धहस्त बन जायें। यहाँ यही बात गवर्नर नहीं बल्कि एक ऐसा व्यक्ति जो आपको प्यार करता है और भारतको प्यार करता है, कह रहा है 'कातो और स्वराज्य प्राप्त करो'। यही तो एक स्थायी महत्त्वका काम हम कर सकते हैं। चरखेके जरिये अपने लिए कपडे मुहैया करना कोई असम्भव कार्यक्रम नहीं है। सतीश बाबूने जिस कातनेवालेका वादा किया था, वह हमारे कलकत्ता पहुँचते ही आपके पास आ जायगा। सूत कातना अवश्य सीखिये और धर्मकी भावनाके साथ, ईश्वरके नामपर हजारों लोगोंकी खातिर आधा घंटा अवश्य कातिये।[2] इससे आपको शान्ति और प्रसन्नता मिलेगी। और फिर जब आप कातेंगे तो जिन नवयुवकोंपर आपका इतना अद्भुत प्रभाव है, वे भी कातने लगेंगे। आशा है कि ज्वर आपको फिर नहीं सतायेगा।

जिस डाकसे आपको यह पत्र जा रहा है उसीसे एक पत्र मोतीलालको जा रहा है। हम १८को कलकत्ता पहुँच रहे हैं। १४ से १६ तक हम बारीसालमें रहेंगे।

१. गांधीजी दार्जिलिंगमें देशबन्धुके साथ ३-६-१९२५ से ६-६-१९२५ तक रहे थे, जहाँ देशबन्धु स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। देखिए "दार्जिलिंगके संस्मरण", १०-७-१९२५।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", १६-६-१९२५ का उपशीर्षक "दार्जिलिंगमें चरखा।"

कृपया वासन्ती देवीसे अपने हिस्सेके सूतकी पहली किस्त भेजनेको कहिए। मैं चाहता हूँ कि ३० दिनका जमा सूत १०० गजकी लच्छियोमे सफाईसे अच्छी तरह लिपटा हो। कलकत्ताके मेयरकी पत्नीकी ओरसे प्रथम श्रेणीके सूतसे जरा भी कम दर्जेका सूत स्वीकार नही किया जायेगा।

आप सबको सस्नेह।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अग्रेजीमे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१३३. भाषण : मदारीपुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ जून, १९२५

पतित बहनोके साथ यह सम्पर्क विशेषकर नौजवानोके लिए खतरनाक है। आपको केवल इतना ही करनेकी जरूरत है कि स्त्रियोको यह काम सौप दीजिये और दूरसे उनका मार्गदर्शन करते रहिए। स्वयसेवकोने अपने अभिनन्दन-पत्रमे मुझसे पूछा है कि हम अपना काम आगे कैसे बढा सकते है। आप सभीने अहिंसाका व्रत धारण किया है और चूँकि अहिंसा प्रेम है, मै बता सकता हूँ कि प्रेमके अस्त्रको धारण करके आप अपनी सारी शक्ति कहाँ लगायें। आप उन आदमियोको जो अपने-आपको और उन औरतोको बिगाडते हैं, समझाइए और उनकी आँखे खोलिए। उन्हे यह बताकर कि उनका अपराध कितना पाशविक और कुत्सित है, उनको बुराईके रास्तेसे हटाइए। पतित बहनोके पुनरुद्धारके लिए एक महिला स्वयसेविका सघ बनाया जाना चाहिए, और इस सघके जरिये ही पतित बहनोके बीच काम करना चाहिए। आपने अपने अभिनन्दन-पत्रमे कहा है कि सरकारने मदारीपुरको सभी क्रान्तिकारी केन्द्रोमे एक मुख्य केन्द्र करार दिया है। इस बुराईको दूर करनेके लिए भारतकी महिलाओमे सचमुच एक क्रान्ति लानेकी ही जरूरत है। ईश्वर करे इस क्रान्तिकी आधारशिला रखनेका श्रेय मदारीपुरको ही मिले।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१. महादेव देसाईके यात्रा-विवरणसे उद्धृत। गाधीजीने पतित बहनोंका उल्लेख किया, जिनमें से कुछ सभामें एक कोनेमें सूत कात रही थीं।

१३४. भाषण : मदारीपुरके सार्वजनिक पुस्तकालयमें

१३ जून, १९२५

अभिनन्दन-पत्रके जवाबमें महात्माजीने कहा कि अभी भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रसे मुझे बड़ी खुशी हुई है। मैं इसके लिए अवैतनिक सचिवको धन्यवाद देता हूँ। उन्होंने उस लड़कीकी बहुत तारीफ की जिसने उस बाँसकी मंजूषाको रंगीन खद्दर और स्थानीय हाथकते सूतसे सजाने-संवारनेमें इतना श्रम किया। उन्होंने कहा कि सचिवने मुझे जो संक्षिप्त विवरण दिया उससे यह जानकर खुशी हुई कि पुस्तकालयमें काफी संख्यामें पुस्तकें हैं और काफी संख्यामें लोग प्रतिदिन वहाँ सुलभ पुस्तके, पत्रिकाएं और समाचारपत्र पढ़ने आते हैं। लेकिन मैं यह जानना चाहता हूँ कि इन पुस्तकों आदिके पढ़नेसे उनको वास्तवमें किस तरहका लाभ होता है। महात्माजीने आगे कहा कि जो भी हो इतना तो स्पष्ट है कि अब पुस्तकालय हमारे नित्यके जीवनके लिए अपरिहार्य हो गये हैं। उन्होंने कहा कि ये पुस्तकालय हमारे जीवनका अभिन्न अंग बन गये हैं और इस बातसे मुझे सन्तोष हुआ कि इस पुस्तकालयमें तरह-तरहके समाचार-पत्र और पत्रिकाएँ हैं। इसके बाद महात्मा गांधीने सार्वजनिक पुस्तकालयोंका महत्त्व बतलाया और पुस्तकोंके चयनपर खास जोर दिया।[1] महात्माजीने अभिनन्दन-पत्र तथा भेंट की गई सुन्दर मंजूषाके लिए अवैतनिक सचिवको फिर एक बार धन्यवाद देकर लोगोंसे विदा ली।[2]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-६-१९२५

१. अमृतबाजार पत्रिका, १९-६-१९२५ की एक रिपोर्टके अनुसार गांधीजीने कहा कि "पुस्तकालयमें ऐसी पुस्तकें होनी चाहिए जो पाठकोंको आदमी बननेमें मदद दे सकें।"

२. अवैतनिक सचिवने गांधीजीसे प्रार्थना की कि वे दर्शक-पुस्तिकापर स्वाक्षरोंमें कुछ लिखें। गांधीजीने लिखा: "मैं संस्थाकी पूरी-पूरी सफलता चाहता हूँ।"

१३५. अन्त्यजोंके सम्बन्धमें

एक स्वयसेवकने मुझसे कुछ सूक्ष्म प्रश्न पूछे है। वे उपयोगी है इसलिए यहाँ दिये जा रहे है.[1]

पहला प्रश्न है.[2]

जहाँ परिषद्के अन्य सदस्य ठहरे हो, वहाँ अन्त्यज सदस्य न ठहर सके तो यही माना जायेगा कि अस्पृश्यताका निवारण नही हुआ है। जिस वातकी स्वतन्त्रता चारो वर्णोको हो उसकी छूट अन्त्यज भाइयोको भी अवश्य होनी चाहिए। जहाँ अन्त्यज सदस्य न ठहर सके, दूसरे सदस्योका कर्त्तव्य है कि वे वहाँ न ठहरे।

दूसरा प्रश्न है[3]:

जिस प्रकार दूसरे वर्णोके लोग मर्यादासे एक पक्तिमे बैठते है उसी प्रकार अन्त्यज भाइयोको भी वैठनेका अधिकार है। किन्तु वैष्णवभाईकी आलोचनाके वाद यह स्वयसेवक विनयपूर्वक दूसरी जगह जाकर बैठ गया, यह बहुत ठीक किया। शिष्टताका तकाजा है कि सभा-सम्मेलनोमे वहुमतके सामने अल्पमतको अपना आग्रह छोड देना चाहिए। किन्तु इस उदाहरणमे उक्त भाईने केवल एक ही वैष्णवकी आपत्तिको मानकर तदनुसार आचरण किया, यह विशेष-रूपसे स्तुत्य है। किसीको जवर्दस्ती अपने मतके अनुसार चलाना हमारा धर्म नही है। हमारा धर्म अन्त्यज भाइयोकी सेवा और रक्षा करना है। इसलिए हम जिन कठिनाइयोको दूर न कर सके हमे उनको स्वय ही वर्दाश्त कर लेना चाहिए।

तीसरा प्रश्न है[4]

जहाँ पग-पगपर अन्याय होता हो वहाँ हम जितने अन्यायका निवारण कर सके उतनेका निवारण करे। हम कोई भी कदम उठाये उसमे कुछ-न-कुछ कमी तो रह ही जायेगी। इसलिए जरूरी हो जानेपर ऐसा कदम ही उठाना चाहिए, जिसमे कमसे-कम अन्याय होता हो।

१. यहाँ नहीं दिये गये है।

२. प्रश्न यह था कि क्या परिषद्के अवसरपर अन्त्यज सदस्योंको अपने साथ ठहरानेका ध्यान रखना प्रतिनिधियोंका कर्त्तव्य नहीं था।

३. यह प्रश्न भोजनके समय सवर्णोंके साथ उन प्रतिनिधियोंके वैठनेसे सम्बन्धित था, जो अस्पृश्यतामें नही मानते थे।

४. इसमें कहा गया था कि आप सौराष्ट्रके अपने दौरेमें कई वार ऐसे स्थानोंमें ठहर जाते है जहाँ अन्त्यजोंको प्रवेश नही मिल सकता, और इस खामीकी पूर्तिके विचारसे आप अन्त्यजोंके मुहल्लोंमें जाकर सभा करते है, पर जो अन्त्यज उस समय वहाँ आपसे नही मिल पाते, वे मिलनेसे ही रह जाते हैं। क्या यह उनके प्रति अन्याय नही हुआ?

चौथा प्रश्न है :[1]

जिसे अनुचित कार्य करना है, उसे कोई-न-कोई बहाना तो मिल ही जायेगा। यदि मैं अन्त्यजोंकी वस्तीमें जानेका कार्यक्रम न रखूँ तो मैं उन सबसे मिल नहीं सकूँगा और वे मुझसे जो-कुछ कहना चाहते हैं, सार्वजनिक सभामें उसे दिल खोलकर कहनेका पूरा अवसर उन्हें नहीं मिल सकेगा। अन्त्यजोंकी वस्तीमें जानेका एक उद्देश्य इस बातपर जोर देना भी है कि इससे उनको स्वयं अपने रहन-सहनको सुधारनेकी प्रेरणा मिलती है। अन्त्यजोंको सार्वजनिक सभामें सम्मिलित करनेका उद्देश्य यह है कि जनसमूह उनकी उपस्थितिको सहन करने लग जाये। इन दोनोंमें से किसी भी उद्देश्यका त्याग नहीं किया जा सकता। इसलिए जिस सार्वजनिक सभामें अन्त्यजोंका वहिष्कार किया जाये उसमें उनका सम्मिलित न होना ही सामान्य रीति मानी जानी चाहिए। यदि अमरेलीमें उक्त स्वयंसेवक द्वारा सूचित की गई घटना घटी हो तो यह दुःखजनक है। गायकवाड़के राज्यमें और वह भी अमरेलीमें अन्त्यजोंको सभामें बैठनेसे रोका जाये, यह असह्य है। 'समुद्रमें लगी आग कौन बुझा सकेगा?' किन्तु इस उदाहरणसे यह बात मेरी समझमें आ गई है कि मुझे कितनी सावधानी वरतनेकी जरूरत है। ईश्वर मेरी सहायता करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-६-१९२५

१३६. स्वयंसेवकके गुण

एक स्वयंसेवक लिखते हैं :[2]

यह ठीक है कि एक वार मैंने स्वयंसेवकोंके लिए एक दर निश्चित करनेका विचार किया था। मैंने भाई वल्लभभाई और अन्य लोगोंसे इस सम्वन्धमें सलाह भी की थी। किन्तु हम उस वारेमें कोई अन्तिम निर्णय नहीं कर सके। हमें तब ऐसा लगा था और अव भी लगता है कि गुजरातके लिए वंगाल और महाराष्ट्रका आदर्श वहुत ऊँचा है। उस समय काममें लगे हुए स्वयंसेवकोंसे दस रुपयेमें काम कराना लगभग असम्भव था। उस समय ऐसा लगा कि उक्त वेतनपर देशको ज्यादातर स्वयंसेवकोंकी सेवासे वंचित रह जाना पड़ेगा।

१. लेखकने कहा था, आप अन्त्यजोंके मुहल्लोंमें जाया करते हैं। इससे स्थानीय संकीर्ण तत्वोंको यह कहनेका अवसर मिल जाता है कि अब अन्त्यजोंको सामान्य सभामें जानेकी जरूरत नहीं रही है। अमरेलीमें ऐसा ही हुआ था।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें लेखकने शिकायत की थी कि वंगाल और गुजरातमें स्वयंसेवकोंको अलग-अलग दरोंसे भत्ते दिये जाते हैं। उसने गांधीजीसे प्रार्थना की थी कि वे उनके लिए ऐच्छिक गरीबी-पर जोर दें और निर्वाहके लिए दिये जानेवाले भत्तेकी समान दर निश्चित करें।

कोई आदर्श जब सबके लिए सामान्य आदर्श स्थापित हो जाता है तभी उसके सम्बन्धमे नियम बनाये जा सकते है। जबतक आदर्श भिन्न-भिन्न रहता है तबतक उनके सम्बन्धमे नियम नही बनाये जा सकते। गुजरातने गरीबीका आदर्श कुछ ही वर्ष हुए स्वीकार किया है। महाराष्ट्र और बगालने ३० वर्ष या उससे भी पहले गरीबीके आदर्श-को अगीकार कर लिया था और वहाँ उसके अनुसार जीवनयापन करनेके लिए बहुत-से युवक तैयार हो चुके थे। बहुत ही ज्यादा गरीबीसे निर्वाह करनेके इस आदर्शको मानकर चलनेवाली सस्थाएँ बहुत कम ही रहेगी। गुजरातमे तो फिलहाल इस आदर्शके पालनकी आशा व्यक्तियोसे ही रखी जा सकती है। दूसरे लोग त्याग करे चाहे न करे, सच्चा सयमी तो इससे अपने सयम या त्यागसे मुँह न मोडेगा। जब कुछ गुजराती मरणपर्यन्त अत्यन्त निर्धनतामे जीवन बिताने लगेगे तभी दूसरे गुजराती बडी सख्यामे गरीबीसे जीवनयापन करना स्वीकार करेगे।

इस समय तो निर्धनताको आदर्श मानकर जिस हदतक उसका पालन कर सके, करना ही एकमात्र मार्ग है।

हमारे मार्गमे बडा विघ्न तो यह आ पडा है कि मै बीमार पड़ गया और अपने ही जीवनमे निर्धनताका प्रयोग पूर्णरूपेण लागू न कर सका। इस समय जो प्रयोग मै कर रहा हूँ, उसे तो मै निर्धनताका प्रयोग ही नही मानता। मनुष्य अपनी दुर्बलताओका आरोप दूसरोपर करता है। जो मनुष्य अत्यधिक ठण्ड महसूस करता है और बहुत-से कपडे पहनता है, वह यही मानता है कि सभीको इतने अधिक कपड़ोकी जरूरत है। गर्म पानीसे नहानेवाले मनुष्यको ठण्डे पानीसे नहानेवाले व्यक्तिपर दया आती है; जो किसी सवारीके बिना इधर-उधर नही जा सकता, वह दूसरोसे भी यही अपेक्षा रखता है। मेरी स्थिति भी ऐसी ही दयनीय है।

मुझे ऐसा लगता रहता है कि जो-कुछ मै खाता हूँ, वह दूसरे लोगोको भी मिले। मै दूसरे दर्जेमे यात्रा करता हूँ; इसलिए मै दूसरोसे तीसरे दर्जेमे यात्रा करनेके लिए कहनेमें सकोच करता हूँ। मुझे अन्य कई सुविधाओकी जरूरत जान पडती है जो दूसरोको सुलभ नही होती। मै इस बातको सहन करता हूँ, किन्तु इससे मुझे मनमे सकोच होता है। मै जानता हूँ कि यह मेरा मोह है, फिर भी वस्तुस्थिति तो यही है। जिम कामको मनुष्य स्वयं नही करता या कर नही सकता उसकी वकालत वह कितने भी जोरसे क्यो न करे, फिर भी लोगोपर उसका असर नही पड़ता।

इसका अर्थ यह नही है कि निर्धनताका जीवन बितानेके सम्बन्धमे गुजरातकी प्रगति मेरे ऊपर निर्भर है। मैने ऊपर जो-कुछ कहा है वह अपने साथियोको लक्ष्य करके कहा है। यह इस बातकी स्वीकृति भी है कि मै स्वय गुजरातको इस मार्गपर और आगे ले जानेमे असमर्थ हूँ।

जो बात मेरे सम्बन्धमे सत्य है वही मेरे द्वारा स्थापित आश्रमके सम्बन्धमे भी सत्य है। आश्रममे अपरिग्रह इत्यादि व्रतोके पालनका प्रयत्न पर्याप्त रूपसे किया जाता है। परखे हुए और निर्धनताको प्रतिष्ठित माननेवाले स्त्री और पुरुष आश्रममे रहते है। मेरा विश्वास यह है कि ये लोग दभी नही है। इसके बावजूद हम सभी जितनी सादगी और गरीबीसे रहना चाहते है उसतक नही पहुँच पाये है। इसलिए सबको

यथाशक्ति प्रयोग करनेकी छूट दी गई है जिससे किसीकी प्रगति न रुके। इसी कारण आश्रममे कुछ लोग स्वयपाकी है। वहाँ प्रति व्यक्तिपर कमसे-कम मासिक खर्च सात रुपया आता है। मै मानता हूँ कि जो दो-तीन ब्रह्मचारी ऐसा प्रयोग कर रहे है, वे बहुत कष्ट उठाते है। जो इस हदतक नही पहुँच सके है वे धीरजसे अपने विशेष व्ययको अनिवार्य समझकर सहन करते है और उसमे जितनी कमी हो सकती है उतनी कमी करनेका प्रयत्न करते है। किन्तु यह तो मानना ही चाहिए कि यह आदर्शसे बहुत कम है। आश्रममे त्यागवृत्ति बढ़ानेके सम्बन्धमे अनेक प्रयत्न किये गये है, किन्तु उनमे बहुत सफलता नही मिली है। अपने इस अनुभवके कारण दूसरोसे अधिक गम्भीर प्रयोग करवानेकी मेरी हिम्मत नही पडती।

कहा जा सकता है कि जो लोग [इस आदर्शपर चलनेके लिए] तैयार नही है, उनसे मै यह क्यो न कहूँ कि वे तैयारी करनेके बाद सेवामे लगे। सार्वजनिक सेवाके सम्बन्धमे ऐसा नही किया जा सकता। जहाँ उद्देश्य सेवकोको ही तैयार करना हो, वहाँ यह नियम लागू किया जा सकता है। किन्तु जहाँ उद्देश्य किसी विशिष्ट कार्यको करना हो वहाँ नीति-नियमोको भग किये बिना जो भी स्वयसेवक मिल सके और जुटाये जा सके उनसे ही काम लेना उचित है। हमारा एक उद्देश्य है, अन्त्यज बालकोको पढाना। इसके लिए केवल त्यागी शिक्षक मिले तो अच्छा। यदि न मिले और अपने पास धन हो तो अच्छा वेतन देकर भी चरित्रवान शिक्षक रखने चाहिए। चरखे और खादीका प्रचार करना भी हमारा उद्देश्य है। उसे पूरा करनेके लिए हमे जितनी सुविधा हो, उसके अनुसार जो गरीबीमे नही रह सकते ऐसे चरित्रवान सेवक रखने ही चाहिए। सब कामोको एक साथ करनेका प्रयत्न करनेमे सब-कुछ खो बैठनेकी स्थिति आ जाती है।

इस प्रकार अपने उद्देश्योकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न करते हुए यदि हम गरीबीको भी अपना आदर्श मानकर चले तो अन्तमे हम उसको भी पा लेगे — यही मेरा अभिप्राय है और अनुभव भी है।

यह तर्क चाय आदि अन्य वस्तुओके सम्बन्धमे भी लागू होता है। हम आज लोगोकी खाने-पीनेकी आदतोको सुधारने नही बैठे है। इसलिए हमे चाय पीनेवाले सेवककी सेवाओको भी अवश्य स्वीकार करना चाहिए।

ऐसे सब मामलोमे हमे विवेकसे काम लेनेकी जरूरत है। यह ससार विचित्र है। हममे से कुछ लोग इन अनेक जजालोसे अलिप्त रहकर जीवन व्यतीत करनेका प्रयत्न कर रहे है। कुछ लोग स्वराज्यका अर्थ धर्मराज्य या रामराज्य समझते है। वे अनीतिको कभी सहन नही कर सकते। उनकी दृष्टिमे स्वराज्यका मार्ग मोक्षका मार्ग है। स्वराज्य उस मार्गमे एक महत्त्वपूर्ण मजिल है। उनकी मान्यता है कि वे इस मजिलको छोडकर मोक्ष प्राप्त नही कर सकते। किन्तु स्वराज्यके इस अर्थसे सभी लोग सहमत नही है। फिर भी वे जिस स्वराज्यको चाहते है, उसका समावेश ऊपर दी हुई कल्पनामे हो जाता है, इसलिए उक्त मुमुक्षु उनका साथ नही छोड सकते। कितने ही ऐसे लोग है जो सुराज-उराज कुछ नही जानते, पर उनके लिए चरखा सर्वस्व है। वे करोड़पति होनेपर भी चरखा-धर्म स्वीकार करते है, वे हिन्दुस्तानकी

गरीवी दूर करना चाहते है। इन्हे भी उक्त मुमुक्षु अपने साथ रखना चाहते हैं, क्योकि चरखा उनके स्वराज्यका एक आवश्यक अग है। इसलिए वह मुमुक्षु जिससे जितना त्याग मिल सकता है उससे उतना लेकर अपना रास्ता तय करता है और शुरूकी मजिलोका बोझ हल्का करता है।

मै चाहता हूँ कि कोई मेरे इस उत्तरका विपरीत अर्थ न निकाले। यदि आज गरीब सेवकोका दल मिल सके तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। मै जानता हूँ कि यदि ऐसा दल मिल जाये तो स्वराज्य बहुत निकट आ जायेगा। लोगोको यह बात पूर्ण-रूपसे ध्यानमे रखनी चाहिए। किन्तु साथ ही उन्हे अपनी दुर्बलताओ और त्रुटियोको भी याद रखना चाहिए। यही प्रेमपन्थ है। हमे अपने सम्बन्धमे जितना कठोर होना चाहिए दूसरोके सम्बन्धमे उतना ही उदार रहना चाहिए। यह अहिंसाका मार्ग है। हमे अपने त्यागपर कभी अभिमान नही करना चाहिए और दूसरोके कम त्यागका कभी अनादर नही करना चाहिए। ऐसा भी होता है कि जो मनुष्य पाँच मन बोझा उठा सकता है उसे अमुक बोझ उठानेमे अपनी पूरी शक्ति नही लगानी पडती और जो एक मन बोझ उठा सकता है, उसे अपनी पूरी शक्ति लगा देनी होती है। इस मामलेमे एक मन बोझ उठा सकनेवाला मनुष्य ही सच्चा सेवक है। इसलिए हमें दूसरोका काजी बननेके बजाय अपना ही काजी बनना चाहिए और अपने भीतर त्याग करनेकी जितनी क्षमता हो उसका उपयोग करना चाहिए और दूसरे लोग जितना त्याग करे उसको द्वेषरहित होकर प्रेमपूर्वक स्वीकार करना चाहिए।

ऊपरके पत्रमे एक प्रश्न है जिसका उत्तर तो दिया जा चुका है। स्वयसेवकोका धर्म है कि वे धनी हो या निर्धन, गाँवोमे जाकर गाँवोके लोगोपर भाररूप हरगिज न बने। हमे उनको कमसे-कम तकलीफ देकर निर्वाह करना चाहिए और यदि हम उनको थोडा-सा कष्ट दें भी तो उसका बदला अपनी सेवासे दे देना चाहिए। हमे उनको कातने और धुनने आदिकी क्रियाएँ स्वय प्रयोग करके सिखानी चाहिए और इस प्रकार उनके सूत और पूनियोका सग्रह बढाना चाहिए। किन्तु इस प्रसगमे भी हर स्थानमे, हर समय और प्रत्येक व्यक्तिके सम्बन्धमे एक ही नियम लागू नही किया जा सकता। गाँवोके लोगोके मनपर ऐसी छाप नही पडनी चाहिए कि स्वयसेवक गाँवमे मौज करने या सैर-सपाटेके लिए आते है। ऐसी बातोके सम्बन्धमे कोई एकान्तिक सिद्धान्त स्थिर नही किया जा सकता। मै देखता हूँ कि यह नियम कि हमे अपने सत्कारके सम्बन्धमे किसी भी गाँवके लोगोको एक सामान्य मर्यादासे आगे न बढने देना चाहिए, अनुभवसे दृढ होता जा रहा है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-६-१९२५

१३७. मेरा कर्त्तव्य

एक सज्जन लिखते है [1]

हम देखते है कि लेखकने इस पत्रमे एक सामान्य भूल की है, अधिकाश लोग प्राय यह भूल करते है। यह मानना कि उपदेश देनेका वडा प्रभाव है, हमारा मिथ्या मोह है। यह मोह इस पत्रमें भी है। हम अनन्त कालसे यही अनुभव करते आ रहे है कि उपदेशका प्रभाव वहुत ही कम होता है। आज सैकडो साधु उपदेश दे रहे है। सैकडो ब्राह्मण नित्य, 'गीता', 'भागवत' आदिका पाठ कर रहे है। लेकिन कहा यही जा सकता है कि उसका कुछ भी असर नही होता। यह सच है कि उपदेशकका कुछ असर होता हुआ हम देखते है, लेकिन वह असर उसके उपदेशका नही, वल्कि उसके चारित्र्यका होता है। यदि वह जितना आचरण कर सकता है उससे अधिकका उपदेश देता है तो उसका कुछ भी असर नही होता। सत्यकी ऐसी ही महिमा है। उसे हम भाषाके आवरणमे कितना ही ढाँके, वह ढँक नही सकता। यदि मुझमे हिमालयपर चढनेकी शक्ति न हो और मै फिर भी दूसरोको उसपर चढनेका उपदेश दूँ तो उसका कुछ भी असर न होगा। लेकिन यदि मै उसपर केवल चढकर दिखाऊँ तो सैकडो लोग मेरा अनुगमन करेगे। मनुष्यकी करनी ही सच्चा उपदेश है।

दूसरे, मनुष्यमे कोई विशेष उपदेश देनेकी योग्यता भी होनी चाहिए। मै पशु-हिंसा नही करता। फिर भी मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मुझमे पशु-हिंसाको बन्द करानेकी योग्यता नही है। मै यह जानता हूँ कि पशुओके प्रति हमारा कुछ कर्त्तव्य है। लेकिन मै दूसरोको उसे समझानेमे असमर्थ हूँ। उसके लिए तो मुझमे वहुत अधिक पवित्रता, वहुत अधिक दयाभाव और वहुत अधिक सयम होना चाहिए। उसके बगैर मुझे सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त नही हो सकता और उस ज्ञानके विना मुझे उपयुक्त भाषा प्राप्त नही हो सकती।

विना ऐसा ज्ञान प्राप्त किये आत्मविश्वास उत्पन्न नही होता। मै पशु-हिंसाका त्याग करानेकी शक्ति रखता हूँ, यह आत्मविश्वास मुझमे नही है।

लेकिन मै तो ईश्वरको माननेवाला हूँ। मुझमे पशु-सेवाकी वृत्ति वहुत तीव्र है। मनुष्य तो अपना दुःख व्यक्त कर सकता है और उससे मुक्त होनेका कुछ प्रयत्न भी कर सकता है। पशुओमे यह शक्ति नही होती, इसलिए उनके प्रति हमारा कर्तव्य दुहरा है। लेकिन यह जानते हुए भी और उसके लिए शक्ति प्राप्त करनेकी इच्छा रखते हुए भी, मुझे उनकी सेवा करनेकी शक्ति न होनेके कारण वडी लज्जा मालूम होती है। लेकिन उसके लिए मै ईश्वरको दोष देता हूँ। उसने मुझमे ऐसी शक्ति क्यो नही दी? इसके लिए मै उससे हमेशा झगड़ता हूँ और विनय करता हूँ। लेकिन

१. पत्र यहाँ नही दिया गया है। इसमें लेखकने गाधीजीसे निवेदन किया था कि चूँकि बगालमें पशु-हिंसा बहुत होती है; अतः वे बगालके लोगोको जीव-हिंसा बन्द करनेका उपदेश दें।

ईश्वर तो अपनी मर्जी चलाता है। जब वह किसीकी नही सुनता, तब मेरी क्यों सुनेगा? ऐसा हो सकता है कि वह मेरी बात औरोसे जल्दी सुन ले। लेकिन जब वह मुझमे ऐसी शक्ति देगा तब मै इन सज्जनको विश्वास दिलाता हूँ कि उनके कहनेकी राह न देखूंगा। तबतक मेरी तपश्चर्या जारी रहेगी। मै जिस कार्यमे आज सलग्न हूँ, क्या उसे करते-करते ही मुझमे यह सेवा करनेकी शक्ति नही आयेगी? मेरा विश्वास है कि मै कृपण नही हूँ। मै अपनी सब शक्तियोको कृष्णार्पण कर चुका हूँ। इसलिए यदि मुझमे पशु-हिंसाको बन्द करानेकी शक्ति आ जायेगी तो मै उसका उपयोग करनेमे विलम्ब न करूँगा।

लेकिन इस बीच जो अपरिहार्य है, उसे तो सहन ही करना चाहिए। इस ससारमे अनेक स्थानोपर निर्दोप मनुष्योपर अत्याचार किये जा रहे है, हम उन्हे बन्द करानेका दावा कहाँ करते है? हम यह समझकर कि यह हमारी शक्तिके बाहर है, जगतका कल्याण चाहते हुए भी चुप रहते हैं। हम अशक्तिके कारण ही देशभक्तिको एक अलग गुण मानकर विकसित कर रहे हैं। लेकिन देशभक्ति धर्मसम्मत है। उससे जगतका अकल्याण नही होता। ससारका अकल्याण करके अपने देशका हित साधन करना मिथ्या देशभक्ति है। लेकिन स्वदेशकी धर्मसम्मत सेवामे जिस प्रकार ससार-भरकी सेवाका समावेश हो जाता है उसी प्रकार मेरी मनुष्य-सेवामे पशु-सेवाका भी समावेश हो जाता है। यह मेरी मान्यता है, क्योकि मनुष्य-सेवा और पशु-सेवामे कोई विरोध नही है।

आज हमारे देशमे एक प्रकारका धर्माडम्बर फैला हुआ है। हम दयाके उन कार्योको तो करनेका विचार करते है जिन्हे हम कर नही सकते और जिनके करनेका कुछ अर्थ नही है; लेकिन दयाके उन कार्योको नही करते जिन्हे हम कर सकते है। धीरा भगतकी[1] भाषामे कहे तो हम निहाईकी चोरी करते है और सूईका दान करनेका ढोग करते है। 'गीताकी' भाषामे कहे तो स्वधर्मका, जो हमारे लिए सुलभ है, थोड़ा-सा भी पालन करना छोडकर हम परधर्म पालनके बडे-बडे विचार करते है और 'इतोभ्रष्टस्ततोभ्रष्ट.' हो जाते है। ऐसी भूलोसे हमे बचना चाहिए, यह बात समझानेके लिए ही मैने पूर्वोक्त सुझावका उत्तर देना और यह दिखानेका प्रयत्न करना उचित समझा कि मै पशु-हिंसा बन्द करानेके श्रेष्ठ धर्मका पालन क्यो नही आरम्भ करता।

हम जगतके कर्त्ता नही है। हम सर्वशक्तिमान भी नही है। हम लोगोमे जो शक्ति है यदि हम उसका सदुपयोग करे तो वह शक्ति आप ही बढेगी और हम ईमानदार होगे तो इस शक्तिके बढनेपर उसका उपयोग अवश्य करेगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १४-६-१९२५

१. गुजराती कवि।

१३८. भाषण : बारीसालकी सार्वजनिक सभामें[1]

१४ जून, १९२५

संयुक्त रूपसे उत्तर देते हुए, श्री गांधीने कहा कि जब मैं पिछली बार यहाँ आया था तो अश्विनीकुमार दत्त जीवित थे, यद्यपि वे पूर्णतया स्वस्थ नहीं थे। वे एक असाधारण पुरुष थे। उनमें अनेक गुण थे। उन्होंने अनेकों संस्थाओंकी संस्थापना की थी। उन्होंने देशकी खातिर कष्ट सहे और अनुपम त्याग किया था।

श्री गांधीने कहा कि मेरा खयाल है कि ऐसे चरित्रवाले व्यक्तिकी स्मृतिको स्थायी बनाना हमारा परम कर्त्तव्य है; लेकिन यह जानकर मुझे खेद हुआ कि उनका स्मारक बनानेके लिए धन-संग्रहके जो प्रयत्न किये गये, वे सफल नहीं हो पाये। मैंने खेद सहित सुना है कि पर्याप्त धन नहीं मिल पाया है। पिछली बार बारीसालमें मैंने जो-कुछ देखा था, वह मुझे अच्छी तरह याद है। खेद है कि इस बार अलीबन्धु मेरे साथ नहीं हैं। मुझे इन चरखोंसे सन्तोष नहीं है, यद्यपि यह जानकर खुशी हुई है कि इस जिलेमें तैयार सूत अन्य जिलोंके सूतसे कहीं अच्छा है।

श्री गांधीने अनुरोध किया कि आपको बेलगाँव कांग्रेसके प्रस्तावका पालन करना चाहिए और शीघ्र ही ज्यादा अच्छा काम करके दिखाना चाहिए। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि बारीसालमें अस्पृश्यताकी समस्या मद्रास-जैसी टेढी नहीं है और हिन्दुओं तथा मुसलमानोंके पारस्परिक सम्बन्ध उतने खराब नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-६-१९२५

१३९. सम्मति : फादर स्ट्राँगको

[१४ जून, १९२५]

ऑक्सफोर्ड मिशनके फादर स्ट्राँगने गांधीजीको बुनाईका काम देखनेके लिए अपने यहाँ आमन्त्रित किया था। गांधीजी थोड़ी देरके लिए वहाँ गये थे। फादर स्ट्राँगने उनको बुनाई विभाग दिखाया। *गांधीजीने उनसे कहा :*

लेकिन यह सब मिलका सूत है और अगर आप मिलका सूत इस्तेमाल करते हैं तो इससे लाखों लोगोंको नहीं करोड़पतियोंको ही लाभ पहुँचता है। इस तरह बुनाईको लाखों लोगोंका एक कुटीर-उद्योग नहीं बनाया जा सकता। उनके लिए तो कताई ही एकमात्र अनुपूरक धन्धा बन सकता है। लॉर्ड कर्जनके अनुसार एक भार-

1. यह भाषण नगरपालिका, स्वागत-समिति और समाज सेवक संघकी ओरसे दिये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें दिया गया था। लगभग ५,००० लोग सभामें मौजूद थे।

तीयकी सालाना औसत आय ३० रु० है, पर हमारे हिसाबसे २६ रु० ही है। और यदि आम जनताकी औसत आय यही है तो इसमें से उच्च वर्गोकी आय निकाल देनेपर आम जनताकी वास्तविक आय और भी कम बैठेगी। फिर यदि सूत कातकर आप इस आयमें १० रु० और जोड सके तो क्या यह उन लोगोंके लिए एक बडी बात नही होगी? आपको तो ५ रुपयेसे शायद कोई अन्तर न पडे, पर जो बिलकुल खाली हाथ है, उनके लिए तो पाँच रुपये एक बडी रकम है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१४०. पत्र: राजा महेन्द्र प्रतापको

[१५ जून, १९२५ या उससे पूर्व][1]

आप मुझे जब-तब लिखते रहे है। मै जानता हूँ कि जीवनके बारेमें हमारे दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न है। मै जानता हूँ कि जितने लोग है उतने ही सोचनेके तरीके है। लेकिन जैसे एक ही समयमे, एक ही परिस्थितिमें और एक ही जगहपर सर्दी और गर्मीका साथ-साथ रहना सम्भव नही, इसी तरह एक ही समय, स्थान और एक ही परिस्थितिमे हिंसा और अहिंसाका एक साथ रहना असम्भव है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१४१. पत्र: मोतीलाल नेहरूको

बारीसाल
१५ जून, १९२५

प्रिय पण्डितजी,

आपके पत्रमे जवाहरको फिरसे बुखार आनेकी बात पढकर मुझे बडा सताप हुआ। आशा है कि पत्र लिखनेके बाद आप दोनो शीघ्र ही स्वस्थ हो गये होगे और अब स्फूर्तिदायक जलवायुका आनन्द ले रहे होगे।

ख्वाजाके[2] सम्बन्धमे मैने आपको तार[3] दे दिया है। वे मुझे जिम्मेदारी सौंपनेकी गलती कर रहे है। लेकिन अगर उन्हे यह करना ही हो तो मै क्या कह

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. जामिया मिलिया इस्लामिया, अलीगढ़के ए० एम० ख्वाजा।
३. यह तार उपलब्ध नही है।

सकता हूँ? परन्तु उनके स्थानपर बैठकर मैं करूँ क्या? यदि जामिया असहिष्णुताकी भावना पैदा करती है, तो यह ख्वाजाका ही तो दोष है। वह उसके प्रधान हैं। उसकी शुरुआत भलेसे-भले मुसलमानोंने की थी। अगर उसमें बुराई आ गई हो तो सुधार किया जा सकता है, लेकिन मेरी रायमें उसकी तरफसे ऐसी लापरवाही नहीं की जानी चाहिए कि वह खत्म ही हो जाये। इसलिए उसे ख्वाजाका पूरा समय और ध्यान माँगनेका हक है और तभी वह फलफूल सकती है। ख्वाजा केवल नामके प्रधान तो नहीं हैं। वे तो इस आन्दोलनके प्राण हैं। वे प्रशासक भी हैं। इसलिए मैं सिद्धान्तके आधारपर नहीं, नीतिके आधारपर ही आपत्ति उठा रहा हूँ और इस मामलेमें अभी नीति तो सिद्धान्तसे भी अधिक महत्त्व रखती है। ख्वाजाके सामने अब चुनाव करानेका बस यही मार्ग रह गया है कि वह कालेजके लिए अपने समान ही योग्य अन्य व्यक्ति ढूँढ लें।

और फिर मैं अकेला ही तो सलाह देनेवाला नहीं हूँ। ख्वाजा यदि अली बन्धुओंसे मशविरा न करें तो भी हकीम साहब और डा० अन्सारीसे तो करना पड़ेगा। वे उनके सह-न्यासी हैं। आशा है कि अब आप मेरी कठिनाई समझ गये होंगे। मुझे लगता है कि मैं पूरे दिलसे इस पक्षकी मदद कर रहा हूँ। मैं अपने मित्रोंके सन्तोषको बड़ा महत्त्व देता हूँ, पर मैं इस संस्थाकी सहायता अपने मित्रोंके संतोषकी अपेक्षा अपने स्वयंके संतोषके लिए ही अधिक करना चाहता हूँ।

अगर इससे उन्हें स्वतन्त्र निर्णय करनेमें मदद मिल सके तो आप इस पत्रको ख्वाजाको दिखा सकते हैं।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

आशा है कि आपके पहले पत्रके उत्तरमें लिखा मेरा पत्र आपको मिल गया होगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. गांधीजीने २३ मईको ख्वाजाको एक पोस्टकार्ड लिखा था लेकिन वह उपलब्ध नहीं है। २५ को इसकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए, ख्वाजाने लिखा था, "पण्डित मोतीलाल नेहरू मुझे राज्य परिषद्के लिए खड़ा करनेपर जोर दे रहे हैं। मैंने आपके आदेशकी माँग की थी, क्योंकि मैंने उन्हें लिखा था कि मैंने एक वर्षतक के लिए अपनी सेवाएँ आपकी मरजीपर छोड़ दी हैं। आपकी अनुमतिके बिना मैं कुछ भी नहीं करूँगा। पहाड़ जाते समय रास्तेमें पण्डितजीसे मेरी मुलाकात हो गई और उन्होंने आपकी इजाजत लेनेकी जिम्मेदारी अपनेपर ले ली है, किन्तु मैंने आपसे कोई आदेश मिले बिना इसकी घोषणा नहीं की है।

१४२. पत्र : मदाम ऑत्वानेत मिरबेलको

[स्थायी पता साबरमती]
१५ जून, १९२५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई।[1] लेकिन केवल मुझसे मिलनेके उद्देश्यसे एक इतनी लम्बी और खर्चीली यात्रा करनेके लिए मैं आपको उत्साहित नहीं करूँगा। और न ही आपकी आत्मिक उन्नतिके लिए आपका मुझसे मिलना आवश्यक है। वह तो ईश्वरके नामपर की गई सेवाका फल है।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मदाम ऑत्वानेत मिरबेल
१००, र्‌यू ब्रूल मेजाँ
लाइल — नॉर्ड, फ्रांस

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१४३ : पत्र : शरतचन्द्र बोसको

१५, जून, १९२५

प्रिय शरत् बाबू,

मुझे खुशी है कि आप तुरन्त ही यह समझ गये कि दूसरी सभा करना एक जवाबी प्रदर्शन ही माना जायेगा। अहिंसा तो प्रेम है। वह मौन और करीब-करीब गुप्त रूपसे अपना असर पैदा करती है। कहावत भी है कि दाहिना हाथ नहीं जानता कि बाँया क्या दे रहा है। मित्रों और सगे-सम्बन्धियोंके बीच प्रेमका कोई करिश्मा नहीं

१. २६ जनवरी, १९२५ के इस पत्रमें मिरबेलने अपना तथा एक ३६ वर्षीय विवाहिता महिलाका परिचय दिया था जो अपने धर्मकी धर्मान्धता और अनुदारतासे हताश और थियोसोफीके साहित्यसे बहुत प्रभावित थीं। अपने 'करुणामूर्ति गुरु' की खोजमें ११ साल इन्तजार करनेके बाद वह गांधीजीकी शिष्या बनना चाहती थी और चाहती थी कि गांधीजी उनके आश्रम पहुँचनेकी कोई तारीख तय कर दें।

२. इसका जवाब मिरबेलने ६ जुलाईको दिया। देखिए खण्ड २८, "पत्र : मदाम ऑत्वानेत मिरबेलको", १३ अगस्त, १९२५।

होता। वे एक-दूसरेको स्वार्थवश प्यार करते हैं, प्रबुद्धताके आधारपर नहीं। वह तो तथाकथित विरोधियोंके बीच ही अपना करिश्मा दिखाता है। इसलिए जरूरत इस बातकी है कि आदमी जितनी भी दयालुता और दानवीरता दिखा सकता है वह सारीकी-सारी अपने विरोधी या आततायीके प्रति दिखाई जाये।

उपर्युक्त बातोंको ध्यानमें रखते हुए कृपया विचार कीजिए और निम्नलिखित उन आरोपोंका उत्तर दीजिए जो कल आपके चले जानेके बाद उन्होंने आपपर लगाये थे।'[1]

इन आरोपोंमें से एकपर भी विश्वास करना मेरे लिए असम्भव है। आपको अभी इनका उत्तर देनेकी जरूरत नहीं। जब मैं आपके पास आऊँ तब आप जवाब दे सकते हैं। लेकिन यदि आप कोई दो टूक जवाब लिखित रूपमें देना ही चाहें तो दे सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य: नारायण देसाई

१४४. एक पत्रके बारेमें[2]

[१६ जून, १९२५से पूर्व]

सरदार जोगेन्द्रसिंहका यह पत्र[3], जिसे उन्होंने अपने अन्तस्तलसे लिखा है, मैं बड़ी खुशीके साथ छाप रहा हूँ। मैं उनकी सलाहकी कद्र करता हूँ। सरदारजीने जिस बातचीतका जिक्र किया है वह मुझे अच्छी तरह याद है। वे स्वराज्यवादियोंके साथ समझौतेके[4] औचित्यपर आपत्ति करते हैं। इस समझौतेको हुए अब नौ महीने हो चुके हैं, परन्तु मुझे उसपर अफसोस होनेका कोई कारण नहीं दिखाई दिया। मैंने किसी उसूलको कुरबान नहीं किया है। कांग्रेसपर किसी एक आदमीका इजारा नहीं है। वह लोकतन्त्रात्मक संस्था है और मेरी रायमें उसका मताधिकार इतना व्यापक

१. साधन-सूत्रमें यहाँ एक वाक्य और है, जो स्पष्टतः ही महादेव देसाईका लिखा है। वाक्य इस प्रकार है, ये आरोप हैं, रचनात्मक कार्यक्रममें बाधा डालना, कांग्रेस-सदस्योंको धोखा देना, बिना अधिकार सूत जमा करना, कांग्रेसका फर्नीचर लौटानेसे इनकार करना आदि।

२. जिस पत्रपर गांधीजीने यह टिप्पणी लिखी है, वह चि० र० दासकी मृत्यु अर्थात् १६ जून, १९२५ से पूर्व लिखा गया था।

३. पत्रके पाठके लिए देखिए परिशिष्ट १।

४. देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ३०७-८।

और इतना बुद्धि-सम्मत है, जितना दुनियामे अबतक कही देखनेमे नही आया; क्योकि यह मताधिकार शारीरिक श्रमके गौरवको वैधानिक स्वीकृति देता है। मै तो यह चाहता था कि यही एक-मात्र कसौटी होती। असत्य और हिंसाका आधार लेकर चलनेवालोको छोडकर उसमे सब प्रकारके मतावलम्बियोका समावेश होता है। स्वराज्य-पार्टीवालोको मतदानके आधारपर अपनी बात मनवानेका पूरा अधिकार था। मै उसके लिए तैयार न था, क्योकि मैंने देखा है कि इस तरह राय लेनेसे लोगोमे नीति-भ्रष्टता फैलती है — उस अवस्थामे तो और भी, जबकि मतदाता स्वतन्त्र रूपसे निर्णय करनेके आदी न हो। एक विचारवान् आदमीकी तरह मै स्वराज्यवादी लोगोकी बढती हुई शक्तिको माने विना नही रह सकता था। वे रचनात्मक कार्य-क्रमको प्रधान स्थान देनेके लिए रजामन्द थे। उनसे इससे अधिक उम्मीद नही की जा सकती थी। यदि मैंने उन्हे मतदानके जरिये फैसला करनेपर मजबूर किया होता तो उन्होने कौसिल-प्रवेशको राष्ट्रीय कार्यक्रम बना लिया होता — इतना ही नही, लडाईके आवेशमे उन्होने रचनात्मक कार्यक्रमको ही किनारे उठाकर रख दिया होता या उसे एक नगण्य स्थान दे दिया होता। यह तो हुई सिद्धान्तकी बात।

व्यवहारमे इसी समझौतेके द्वारा अधिकाशत परिवर्तनवादी और अपरिवर्तन-वादी लोगोका मनमुटाव दूर हो गया है। इसके द्वारा दोनो दलोके लोग परस्पर मेल रखते हुए सयुक्त कार्यक्रमपर अमल करने लगे है। इस समझौतेके लाभ दक्षिण भारतमे साफ नजर आ रहे है। बगालमे भी देख रहा हूँ। मै इस रायसे सहमत नही हूँ कि स्वराज्यवादी असफल हुए है। चुनावकी धूमके समय दिये वादोको मै बहुत महत्त्व नही देता। यह एक मानी हुई प्रथा है कि शादीके समय की गई प्रतिज्ञाओ-की तरह चुनावके समय दिये गये वचनोको अत्यधिक महत्त्व नही देना चाहिए। यदि हम एक बार इस बातको कबूल कर ले कि कौसिल-प्रवेश हर दृष्टिसे बुरा नही है तो फिर स्वराज्यवादियोको कौसिलोमे किये गये अपने कामपर शर्मिन्दा होनेकी कोई वजह नही। उन्होने कौसिलोमे अपने विचार निर्भीकताके साथ प्रकट किये है। उन्होने सरकारको मतदानमे बार-बार हराया है। उन्होने यह दिखला दिया है कि सरकारपर स्वय उसके बनाये मतदाताओका भी विश्वास नही है। उन्होने अनुशासन और सुदृढ ऐक्यका जैसा परिचय दिया है वैसा आजकल कौसिलके सदस्य कही नही दे पाये है और सबसे बढकर (कमसे-कम मेरे लिए) उन्होने उन शानदार वर्जित स्थानोमे खादीका प्रवेश करा दिया है और वहाँ जाते हुए वे अपना रोजमर्राका राष्ट्रीय लिबास पहनते हुए नही सकुचाये है, हालाँकि एक जमाना था जब उस लिबासमे वहाँ जाते हुए लोग डरते या शरमाते थे। उस लिबासको हम लोग सिर्फ घरपर ही पहनते थे। क्या स्वराज्यवादियोकी कार्रवाइयोने सरकारको सोचनेपर मजबूर नही कर दिया है? हाँ, यह सच है कि सरकारने लोकमतकी परवाह नही की है। यह भी सच है कि खिलाफ राय होते हुए भी उसने अपनी ही मनमानी की है। पर स्वराज्यवादी क्या कर सकते थे? यदि उनके पास शक्ति होती तो वे सरकार-का तख्ता उलट देते और उसके मतका अनादर कर देते। वह शक्ति आना अभी

बाकी है। वह धीरे-धीरे, परन्तु निश्चित रूपसे आ रही है। सरकार जानती है कि वह सदा-सर्वदा लोकमतके खिलाफ जानेकी जुर्रत नही कर सकती। स्वराज्यवादियोने उसे उसकी स्थितिकी कमजोरीका भान पहलेसे अधिक करा दिया है। मेरा उनके साथ राजनैतिक मतभेद है। परन्तु उनकी दिलेरी, अनुशासन-प्रियता और देशभक्तिका मै आदर करता हूँ। और अपने सिद्धान्तकी रक्षा करता हुआ मै उस दलको सशक्त बनाने और उसे सहायता पहुँचानेकी भरसक कोशिश करनेको तैयार हूँ। मैं कांग्रेस-का प्रधान तभीतक हूँ जबतक वे मुझे वहाँ रखना चाहे। जहाँ मै उनकी सहायता नही कर सकता वहाँ मुझे उनके काममे बाधा हरगिज नही डालनी चाहिए।

मेरे नजदीक तो अहिंसात्मक असहयोग एक धर्म है। मै सरदारजीके इस कथन-का हृदयसे समर्थन करता हूँ कि "असहयोग सार-रूपमे सहयोग ही है और सैन्य-बलसे अधिक सशक्त है।" यदि मै भारतके अधिकाश शिक्षित समुदायको अपने मतका बना सकूँ तो स्वराज्य और अधिक प्रयत्नके बिना हासिल हो सकता है। मेरा यह विश्वास दिनपर-दिन दृढ होता जा रहा है कि अहिंसाके बिना भारतको ही क्या, सारी दुनियाको, शान्ति और सुख नही मिल सकता। इसलिए मेरे नजदीक चरखा केवल सादगी और आर्थिक स्वाधीनताका ही प्रतीक नही है, बल्कि शान्तिका भी प्रतीक है। क्योकि यदि हम हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी और यहूदी — सब मिलकर भारतके घर-घरसे चरखा फैला दे तो हम न केवल सच्ची एकताको मूर्तिमन्त कर सकेगे और विदेशी कपडेको देशसे हटा सकेगे, बल्कि हम आत्मविश्वास और सगठन-क्षमता भी प्राप्त कर लेगे, जिसकी बदौलत हिंसाका जरा भी सहारा लिए बिना स्वाधीनता प्राप्त की जा सकती है। इसलिए मेरी दृष्टिमे चरखेकी सफलताका अर्थ है अहिंसाकी विजय — ऐसी विजय जो कि सारी दुनियाके लिए एक पदार्थ-पाठ होगा।

सरदारजी सलाह देते है कि चरखेके साथ ही गाँवोमे बिजली भी दाखिल की जाये। मेरा खयाल है कि वे पजाबके थोडेसे गाँवोको ही जानते है। यदि वे मेरी तरह भारतके जीवनसे परिचित होते तो वे बिजलीकी बात इतनी निश्चयात्मकताके साथ न लिखते। भारतकी मौजूदा स्थितिमे हमारे देहातोमे घर-घर बिजली पहुँचाना व्यवहारत नितान्त असम्भव है। हो सकता है कि वह समय भी आए। पर वह तब-तक नही आ सकता जबतक चरखा घर-घरमे प्रविष्ट न हो जाए। इसलिए मै महत्त्व-हीन, छोटे-छोटे या बेमतलबके मसलोको उठाकर और झूठी उम्मीदे दिलाकर लोकमत-को भ्रमित नही करना चाहता। यदि चरखेका प्रयोजन जैसा सरदारजी कहते है या वे मानते है उतना ही हो तो भी हमे उसीके, केवल उसीके, प्रचारमे अपनी सारी शक्ति तबतक लगाते रहना चाहिए, जबतक हमे सफलता प्राप्त न हो जाए। और जिस समय हम उसके द्वारा देहातियोका जीवन जीने योग्य बना देगे और बेकारीके दिनोके लिए उनके वास्ते एक प्रतिष्ठित और लाभप्रद धन्धा तजवीज कर देगे, उस समय उनके जीवनको खुशहाल बना सकनेवाली अन्य तमाम चीजे अपने-आप चली आयेगी। मै सर-दारजीको यकीन दिलाता हूँ कि मै यन्त्र-मात्रका विरोधी नही हूँ। यो तो खुद चरखा भी एक यन्त्र ही है। पर मै उन तमाम यन्त्रोका कट्टर दुश्मन हूँ, जो गरीबोका शोषण करनेके लिए तजवीज किये गये हो।

सरदारजी इस बातका जरा भी अन्देशा न करे कि एकताके दायरेसे अंग्रेज लोग अलग रखे जायेंगे। क्योंकि उसमे वे सब लोग आ जाते हैं जो अपनेको भारतवासी कहलाना पसन्द करते हैं — फिर वे चाहे यही जन्मे हो, चाहे उन्होने भारतको अपने देशके रूपमे अपना लिया हो। उसमे तमाम जातियो और पथोका समावेश है। और इस एकताका उद्देश्य किसी राष्ट्र या व्यक्तिका — यहाँतक कि किसी डायरका भी अहित करना नही है। इसका लक्ष्य तो लोगोके विचारोमें परिवर्तन करना है, उन्हे मिटा देना नही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१४५. टिप्पणियाँ

[१६ जून, १९२५ या उससे पूर्व]

दार्जिलिगमें चरखा

यदि देशबन्धु दास दार्जिलिगमे न होते तो मै शायद ही वहाँ जानेका इरादा करता — हालाँकि वहाँके बरफीले पहाडोकी श्रृंखला बडी सुहावनी और लुभावनी है। मैंने तो खयाल किया था कि दार्जिलिगके उच्चवर्गीय लोगोको चरखेका सन्देश सुनाना निरी मूर्खता होगी। पर मेरा यह डर बिलकुल गलत निकला। वहाँ मुझे एक स्त्रियो-की सभामे व्याख्यान देनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन्होने चरखेका सन्देश हमदर्दीके साथ सुना। स्वर्गीय व्योमेशचन्द्र बनर्जीकी पुत्री, श्रीमती ब्लेयर, वहाँकी उच्चवर्गीय स्त्रियोको कताई सिखानेके लिए एक वर्ग खोलनेवाली थी। मुझे पादरियोकी एक छोटी सभामे भी अपना सन्देश[1] देनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। हो सका तो इसका हाल आगे लिखूँगा। मैंने यह खयाल भी नही किया था कि मुझे कितने ही नेपाली, भूटिया तथा अन्य लोगोसे मिलनेका सुअवसर मिलेगा। उन्होने उस सन्देशमे सबसे ज्यादा अनुराग दिखाया। परन्तु मुझे सबसे ज्यादा खुशी तो हुई श्रीमती वासन्ती देवीको सूत कातना सीखते हुए और बीमारीके दिनोको अपवाद मानकर नित्य नियमसे आध घटा सूत कातनेका व्रत लेते हुए देखकर। उनकी लडकी तो सूत कातना जानती ही थी। पर वासन्ती देवीने इस ओर ध्यान नही दिया था। अब उन्होने फिर चरखा चलाना आरम्भ किया है और साथ ही तकली भी चलाने लगी हैं। तकली उन्होने १० ही मिनटमे सीख ली। श्रीमती उर्मिला देवी तथा उनके बच्चे तो कुछ दिनोसे नियमित रूपसे सूत कातते हैं। और खुद देशबन्धु दास भी तकली चलाना सीखते थे। परन्तु उन्हे सरकारको बार-बार पराजित करने और अपने मुवक्किलोको जितानेसे सूत कातना अधिक मुश्किल लगता है। अपने पतिकी वकालत करते हुए श्रीमती वासन्ती देवीने

१. देखिए "भाषण: ईसाई धर्म प्रचारिकाओंके समक्ष", ६-६-१९२५।

कहा, 'ये अपने सन्दूककी ताली भी मुश्किलसे घुमा पाते है — उसमे मुझे सदा उनकी मदद करनी पडती है। अब आप समझ सकते है कि सूत कातना इनके लिए क्यो इतना कठिन है।' परन्तु देशबन्धुने मुझे यकीन दिलाया है कि वे अब अध्यवसायपूर्वक चरखा चलाना जरूर सीखेगे। उन्होने पटनामे थोडा चरखा चलाना सीखा भी था। परन्तु बीमारीसे उसमे बाधा आ गई। उन्होने मुझसे कहा कि मै चरखेका पूरी तरह कायल हूँ और मै हर तरहसे उसके प्रचारमें सहायता करना चाहता हूँ। फैशन-परस्त लोगोसे भरे दार्जिलिगमे कलकत्तेके मेयरके घरके सारे लोगोको चरखा चलाते हुए तथा चरखेका वातावरण बनाते हुए देखकर मुझे बहुत हर्ष हुआ। यह कहनेकी आवश्यकता ही नही है कि वे सब लोग खादी पहने हुए थे। देशबन्धुके लिए खादी कोई सभा-समारोहोके समय ही पहननेकी चीज नही है। वे तो सदा खादी ही पहनते है। वे मुझसे कहते है कि यदि अब वे चाहे भी तो उनके लिए मिलका या विदेशी कपडा पहनना कठिन होगा।'

मन्त्री चाहिए

आशा है, जो गोरक्षामे रुचि रखते है, वे ऐसा विचार न करेगे कि मुझपर जो जिम्मेदारी डाली गई है, मै उसकी अवहेलना कर रहा हूँ। इसे स्वीकार करते समय मैने समितिके सदस्योको चेतावनी दे दी थी कि मुझे कोई अच्छा मन्त्री न मिला तो मै समितिके किसी भी कार्यके लिए बिलकुल बेकार साबित हो जाऊँगा। मै उन्हे तथा इसमे रुचि रखनेवाले अन्य लोगोको दु खके साथ सूचित करता हूँ कि मुझे अभीतक कोई ऐसा मन्त्री नही मिल सका है जिससे मुझे सन्तोष हो। उसे अग्रेजीका समुचित तथा हिन्दुस्तानीका कामचलाऊ ज्ञान अवश्य होना चाहिए। वह ऐसा होना चाहिए जो अपना पूरा समय इसी काममे दे, किसी दूसरे काममें नही। उसे गायसे प्रेम होना चाहिए तथा अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सबने जो कार्यक्रम बनाया है, उसमे उसका विश्वास होना चाहिए। उसका आचरण शुद्ध होना चाहिए तथा शरीर स्वस्थ। वेतन उसकी जरूरतोके मुताबिक दिया जायेगा, बशर्ते कि वह असाधारण न हो। अन्तमे, उसे एक अध्ययनशील विद्यार्थी होना चाहिए, क्योकि गोरक्षासे सम्बन्धित साहित्यके अध्ययनकी आशा उसीसे की जायेगी। जो समझते है कि उनमे उपरोक्त योग्यताएँ मौजूद है, वे मुझे पूर्ण विवरण और आवश्यक वेतन सूचित करते हुए लिखनेकी कृपा करे।

तिलक स्वराज्य-कोष

इस कोषका क्या उपयोग किया गया है, लोग अभीतक इस प्रश्नको लेकर परेशान है। एक पजाबी पत्रलेखकका कहना है कि उन्हे अपने खादीके दौरेके सिलसिलेमे ऐसे लोग मिलते है जो इस कोषके व्ययका विवरण पूछते है। मैने इन स्तम्भोमे बार-बार कहा है कि इस कोषके पूर्णतया प्रमाणित आय-व्यय पत्रक समय-समयपर

१. इसके पश्चात् यंग इंडियाके सह-सम्पादककी यह टिप्पणी थी: उक्त टिप्पणीके कम्पोज होनेके बाद हमें यह दु खद समाचार मिला है कि देशबन्धुका मगलवारको साय ५-३० बजे दार्जिलिंगमें हृदयकी गति रुक जानेसे निधन हो गया।

प्रकाशित किये गये हैं। जनताको यह भी जानना चाहिए कि कोष इक्कीस प्रदेशोमे विभक्त कर दिया गया था तथा उसमे से कई लाख रुपयेकी रकम विशेष कार्योंके लिए निर्धारित कर दी गई थी। केवल अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीने ही समस्त देशका आय-व्यय पत्रक प्रकाशित नही किया है, बल्कि प्रदेशोकी कमेटियोने भी ऐसे पत्रक प्रकाशित किये हैं। यद्यपि कही-कही कोषका दुरुपयोग किया गया है तथा कुछ गबन भी हुआ है, किन्तु कुल मिलाकर मुझे सन्तोष है कि धनका विनियोग अभीष्ट कार्यमें ही किया गया है। काग्रेसके मामलोका कोई भी गम्भीर विद्यार्थी जब चाहे तब इन छपे हुए आँकडोका अध्ययन कर सकता है तथा स्वय यह जान सकता है कि उक्त राशिका विनियोग कैसे किया गया।

थैलियोके विषयमें

उसी पजाबी पत्रलेखकने पूछा है कि भिन्न-भिन्न स्थानोपर मुझे जो थैलियाँ भेंट की जाती है उनका क्या उपयोग किया जाता है? यह धन प्राय जहाँ एकत्र किया जाता है उन्ही स्थानोपर छोड दिया जाता है और निर्देश दिया जाता है कि उसका उपयोग खादी-प्रचारमे किया जाये। केवल, जहाँपर मुझे ऐसा दिखता है कि ऐसा कोई मनुष्य नही है जिसे मैं उसे उपयोगके लिए सौप सकूँ तो उसका उपयोग खादी-प्रचारके ही निमित्त आश्रमके जरिये किया जाता है। जहाँ धन किसी विशेष कार्यके लिए निर्धारित किया जाता है वहाँ स्वाभाविक तौरसे मुझे कुछ नही करना पडता, केवल सम्बन्धित व्यक्तियोको निर्धारित कार्योंके निमित्त दी गई रकम सौप देनी पडती है।

अब कोई उपयोग नहीं

पत्रलेखक लिखता है :

> मेरी फेरीके दौरेमें मुझे ऐसे लोग मिलते हैं जो यह कहते हैं, "चूंकि कांग्रेसकी शक्ति क्षीण होती जा रही है, अतः आप खादीकी फेरी लगानेके लिए बेकारका कष्ट क्यों उठा रहे हैं? जब कांग्रेस फिर मजबूत हो जायेगी, हम तब खादी खरीद लेंगे; अभी तो हम विदेशी वस्त्र पहनते हैं। इस समय तो हमें इसीके उपयोगका सुख लेने दें।" मुझसे कई वकीलोंने ऐसा कहा। किन्तु यह एक ही पहलू है। मैं एक वकीलसे मिला। उसने स्वयं कुछ खादी खरीदी; फिर वह हमें लोगोंके पास ले गया तथा हमारे साथ सप्ताहमें दो बार हर प्रकारके लोगोंमें खादीकी फेरी लगानेका वचन दिया।

लगातार कार्य करते रहनेके तो और भी उदाहरण दिये जा सकते हैं; लेकिन मुझे अभीतक किसीने ऐसी बात नही बताई थी जैसी पजाबके इन वकील दोस्तोंके बारेमे कही गई है। निश्चय ही, यह कहना आवश्यक नही है कि खादी अस्थायी उपयोगकी वस्तु नही है। यह पहननेकी वैसी ही स्थायी वस्तु है, जैसे गेहूँ तथा चावल स्थायी खाद्यपदार्थ हैं। और विदेशी वस्त्र पहननेका सुख लेनेकी बात तो उन्होने

केवल हँसीमे कही होगी। क्या विदेशी कपड़ा पहननेमे सुख मिलता है? क्या यह 'गुलामीमे सुख मिलता है' कहने जैसी बात नही है? अमेरिकामें कई जगह यह देखा गया था कि जब दक्षिण प्रदेशोमे गुलामीका अन्त किया गया तो गुलाम आजादी लेनेसे इनकार करते थे, गुलामी उनकी प्रकृति बन चुकी थी।

लाखोको खिलाओ

४९ बगाली रेजीमेटके एक सदस्य लिखते हैं:

> यह बात तो सभी स्वीकार करते हैं कि आप दुनियाके सबसे बड़े नेता हैं। सबसे बड़े नेताका उद्देश्य क्या है? सबसे बड़े नेताका उद्देश्य है भारतके लाखों भूखोंको अन्न देना। यह बात ठीक है न? जबतक आप ३२ करोड़ भारतीयोंको अन्न और वस्त्र प्रदान नहीं कर सकते, आप स्वराज्य मिलनेकी आशा नहीं कर सकते। यदि आप मुझे एक अरब रुपया दे दें तो मैं आपको स्वराज्य तुरन्त दे सकता हूँ। आप स्वराज्यकी बातें करते हैं, आप चरखे इत्यादि की बातें करते हैं; लेकिन आप लाखों-करोड़ों भूखोंको भोजन देनेकी बात नहीं करते। जिस मनुष्यको उचित भोजन नहीं मिलता, वह चरखा नहीं चला सकता। सर्व-प्रथम पेट फिर वस्त्र। मैं एक दिन नंगा रह सकता हूँ; लेकिन मैं भूखा दो घंटे भी नहीं रह सकता। यदि आप भारतीयोंको भोजन तथा धन दे सके तो भारतीय जनता आपकी बातपर तुरन्त अमल करेगी, अन्यथा नहीं करेगी।

पहले तो मैं यह कह दूँ कि मैं "सबसे बडा नेता" नही हूँ। वैसे मुझे ऐसा कहनेकी आवश्यकता नही है, क्योकि मैंने "सबसे बडा नेता" होनेका न तो कभी दावा किया है और न कभी यह उपाधि ही स्वीकार की है। मैं तो नित्य ही अपनी लघुता तथा असहाय अवस्थाका अनुभव करता हूँ। मैंने अभीतक यह अनुभव नही किया है कि मैं बडा हूँ, लेकिन यदि मैं लाखो-करोड़ो भूखोका भरण-पोषण करनेसे बडा बन सकता हूँ तो मैं उस दिशामे जा रहा हूँ, क्योकि मैं चरखेके नुस्खेके पक्षमें इससे कमका दावा नही करता। इसकी योजना लाखो-करोडो भूखोको अन्न तथा वस्त्र देनेके उद्देश्यसे ही की गई है। मै स्वीकार करता हूँ कि वस्त्रका स्थान दूसरा है। लेकिन चरखेका हेतु पहले भोजन देना तथा फिर वस्त्र देना है। मैंने केवल एक अरब रुपया एक बार ही देनेकी योजना नही की है। मेरी योजना तो हर साल कमसे-कम साठ करोड रुपया देनेकी है। इस फार्मूलेको मैं प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करता हूँ कि फाके करनेवाली जनता केवल उन्हीकी पुकारपर चेतेगी जो उसके लिए भोजन तथा पैसेकी व्यवस्था करे। मैं जो-कुछ देता हूँ उसमे दोनो ही शामिल हैं। लेकिन म्याऊँका ठौर पकडे कौन? डाक्टर अमोघ औषध बता सकता है; लेकिन वह मरीज-को उसे खानेके लिए बाध्य तो नही कर सकता। जनताका मुख्य मर्ज धनकी कमी नही है, कामकी कमी है। श्रम ही धन है। जो लाखो करोडो लोगोंको उनकी झोपडियोमे सम्मानित श्रम मुहैया करता है, वह उन्हे भोजन तथा वस्त्र देता है अथवा धन देता है, क्योकि भोजन और वस्त्र धन ही है। चरखा इस प्रकारका श्रम मुहैया

करना है। इसलिए जबतक चरखेसे अच्छी कोई दूसरी चीज हाथ नही आती तबतक हमारे पास यही एक साधन रहेगा।

राष्ट्रीयता बनाम अन्तर्राष्ट्रीयता

मुझे दार्जिलिंगमे एक महाशय मिले और उन्होने मुझे एक परिचारिकाकी बात बताते हुए कहा कि वह परिचारिका औरोको हानि पहुँचाकर अपने राष्ट्रकी सेवा न करना अच्छा समझती है। मै समझ गया कि यह बात मुझे उपदेश देनेके लिए कही जा रही है। मैंने सोम्य भावसे उन्हे बताया कि यद्यपि वे मेरे लेखो और कार्योको समझनेका दावा करते है फिर भी वे उनको समझ नही पाये है। मैंने उनसे यह भी कहा कि मेरी देशभक्ति सकुचित नही है और उसमे केवल भारतका ही नही, सारी दुनियाका कल्याण समाविष्ट है। फिर मैंने उनसे कहा कि मै एक विनीत मनुष्य हूँ। मै अपनी मर्यादाओको जानता हूँ, इसीलिए मै केवल अपने देशकी सेवा करके ही सन्तुष्ट हूँ — हाँ, मै इस बातकी चिन्ता जरूर रखता हूँ कि मेरे हाथसे कोई ऐसा काम न हो जिससे किसी भी दूसरे देशको कुछ हानि पहुँचे। मेरी समझमे किसी व्यक्तिके लिए राष्ट्रवादी बने बिना अन्तर्राष्ट्रवादी बनना असम्भव है। अन्तर्राष्ट्रवाद उसी अवस्थामे सफल होगा जब राष्ट्रवाद मजबूत होगा अर्थात् जब भिन्न-भिन्न देशोंके लोग सुसगठित होकर एक आदमीकी तरह मिल-जुलकर सारे काम कर सकेगे।

राष्ट्रवाद बुरी बात नही है; बुरी बात तो है सकीर्णता, स्वार्थपरता और अलगावका भाव, जो वर्तमान राष्ट्रोके कष्टोका मूल है। हर राष्ट्र दूसरेको हानि पहुँचाकर अपना फायदा करना चाहता है, दूसरेको तबाह करके अपनेको आबाद करना चाहता है। मेरा खयाल है कि भारतके राष्ट्रधर्मने एक जुदा ही रास्ता दिखाया है। वह सारी मनुष्य-जातिकी हित-साधना और सेवाके लिए अपनेको सुसगठित या पूर्ण विकसित करना चाहता है। मुझे अपनी देशभक्ति या अपने राष्ट्रवादके विषयमे कोई सन्देह नही है। ईश्वरने मुझे भारतवर्षके लोगोमे जन्म दिया है, इसलिए यदि मै उनकी सेवामे गफलत करूँ तो मै अपने सिरजनहारका अपराधी बनूँगा। यदि मै उनकी सेवा करना नही जानता तो मुझे मानव-जातिकी सेवा करना कभी नही आयेगा। और जबतक मै अपने देशकी सेवा करता हुआ किसी दूसरे राष्ट्रको नुकसान नही पहुँचाता तबतक मै पथभ्रष्ट नही हो सकता।

बंगालमें हिन्दी

हिन्दीके कुछ प्रेमी इस बातसे सन्तुष्ट नही है कि मै बगालमे केवल लोगोके सम्मुख हिन्दीमे बोलनेका आग्रह करूँ और सभाओमे समय या असमय उसकी हिमायत करूँ। बगाल साहित्य परिषद्की सभामे कुछ चुने हुए लोग थे और वे भी अग्रेजीके विद्वान् थे। मैंने उनकी अनुमति लेकर वहाँ भी हिन्दीमे ही भाषण किया था। ये हिन्दीप्रेमी मुझसे यह भी चाहते है कि मै बगालमे भी मद्रासकी भाति ही हिन्दीके वर्ग चलाऊँ तथा हिन्दीका प्रचार करूँ। परन्तु मुझे दुःख है कि मै उनकी इच्छाको पूर्ण नही कर सकता। मेरी साधन-सामग्री अब खतम होनेपर आ गई है। फिर अट्टा-

लिकाओकी नगरी कलकत्तेमे हिन्दी जाननेवालोकी एक भारी तादाद है और वहाँसे हिन्दीके अखबार भी निकलते हैं। इसलिए कलकत्तेके हिन्दी-प्रेमियोको चाहिए कि वे स्वयं उसका भार उठा ले। उनके पास धन और विद्वज्जन दोनो हैं। वे बगालके तमाम मुख्य-मुख्य केन्द्रोमे हिन्दीके वर्ग खोल सकते हैं। अवश्य ही ऐसी हलचलसे मेरी सहानुभूति होगी। परन्तु इसका सगठन स्थानीय उत्साही लोगोके द्वारा ही किया जाना चाहिए। यदि दक्षिण और बगाल हिन्दीको अपनानेके लिए तैयार किये जा सके तो सारे भारतके लिए एक भाषाका प्रश्न आसानीसे हल हो जायेगा। मैंने किसी भी जगह अपनी टूटी-फूटी हिन्दी या हिन्दुस्तानीकी मार्फत लोगोको अपनी बात समझानेमे कभी कोई कठिनाई अनुभव नही की है।

तमिलनाड

पाठकोको स्मरण होगा कि नई कताई-सदस्यताके अन्तर्गत तमिलनाडमे काग्रेस सदस्योकी सख्या इकट्ठी १,४०० दी गई थी। मुझे मन्त्रीका तार मिला है कि वहाँ मईके अन्ततक 'क' वर्गके ९८९ और 'ख' वर्गके ८०२ सदस्य बनाये गये। ये अक उत्साहवर्धक हैं। इससे लगता है कि तमिलनाडमे आसानीसे इससे भी अच्छा काम किया जा सकता है।

वी० वी० एस० अय्यर

'यग इडिया' के पाठकोको श्री वी० वी० एस० अय्यरकी[1] पानीमे डूब जानेसे मृत्यु होनेपर मेरी ही तरह दुःख होगा। मुझे उनसे सालो पहले लन्दनमे मिलनेका अवसर मिला था। वे तब उग्र अराजकतावादी थे। किन्तु वे धीरे-धीरे नरम हो गये थे। उनका देशप्रेम बडा ही ज्वलन्त था। वे पक्के असहयोगी थे और उन्होने अभी हालमे ही अपनी पूरी शक्ति शेरमादेवी गुरुकुलको चलानेमे लगानेका विचार किया था। मैं उन्हे सदा बहुत अच्छा, सच्चा और स्थायी राष्ट्रसेवक मानता था। परमात्मा उनकी आत्माको शान्ति दे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-६-१९२५

१. तमिल विद्वान् कम्बा रामायणके भाष्यकार।

१४६. तार: मुहम्मद अलीको

खुलना
[१७ जून, १९२५]

दिल्लीके उपद्रवोके[1] सिलसिलेमे दोषी या अपराधी कौन इसपर कुछ कहना नही चाहता। आपकी सत्यनिष्ठा और धर्मपरायणतापर पूरा-पूरा विश्वास है। ईश्वर हम सबका पथप्रदर्शन करे।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१४७. तार: बासन्तीदेवी दासको[2]

[खुलना
१७ जून, १९२५]

बासन्तीदेवी दास
स्टेपअसाइड
दार्जिलिंग

हृदयकी सारी समवेदना आपके साथ। ईश्वर आपको शक्ति दे। आशा है आप बहादुरीसे काम लेगी। बेबीको[3] बहुत ज्यादा दु:खी नही होने देना चाहिए। शामको कलकत्ता पहुँच रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१. संदर्भ स्पष्ट नहीं है।

२. यह तार और इसके बादके तार १६ जूनको दार्जिलिंगमें चित्तरंजन दासके स्वर्गवासपर दिये गये थे।

३. मोना दास।

१४८. तार: सतकौड़ीपति रायको

[खुलना
१७ जून, १९२५]

अकल्पित किन्तु ईश्वरेच्छा बलीयसी। अत्यावश्यक पूर्वनिर्धारित काम निबटानेके लिए पहली ट्रेन छोड रहा हूँ। दोपहरको चल रहा हूँ। दाह-सस्कारके प्रबन्धको अन्तिम रूप देनेके लिए कृपया मेरे पहुँचनेतक रुकिए। यदि मित्रोको समुचित कारणोके आधारपर आपत्ति न हो तो मेरे खयालसे शवको रसा रोड ले जाना चाहिए। राष्ट्रका काम कतई नही रुकना चाहिए, बल्कि उनकी महान् आत्मा और उच्चादर्शपूर्ण उदाहरणका अनुसरण करते हुए काम दुगुनी गतिसे आगे बढना चाहिए। आशा है कि दलगत कलह शान्त हो जायेगा और सभी लोग बगालके इस प्रिय नायक और भारतके एक महानतम सेवककी स्मृतिका सम्मान करनेमे हृदयसे शरीक होगे। असमका दौरा रद कर रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१४९. तार: उर्मिला देवीको

[खुलना
१७ जून, १९२५]

उर्मिला देवी

प्रियजनोंकी मृत्युसे दु:ख होना स्वाभाविक। बहादुर विचलित नही होते। मैं चाहता हूँ कि तुम बहादुरीसे काम लो और हर आदमीको अपना सगा भाई बना लो। शामको पहुँच रहा हूँ।

गाधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१५०. तार: मोना दासको

[खुलना
१७ जून, १९२५]

मोना

पिताकी सच्ची बेटी बनो और इस क्षतिको बहादुरीसे झेलो। ईश्वर तुमको सान्त्वना दे। आशा है कि तुम भोम्बल और सुजाताको धीरज बँधाओगी। शामको पहुँच रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४)की फोटो-नकलसे।

१५१. तार: वल्लभभाई पटेलको

[खुलना
१७ जून, १९२५]

वल्लभभाई पटेल

दार्जिलिंगमें दिलके दौरेमें देशबन्धुका स्वर्गवास। फूल कल कलकत्ता पहुँच रहे हैं। मैं आज वहाँके लिए रवाना हो रहा हूँ। अवसरके उपयुक्त शोक-सभा बुलाइए, सभी दलोंको आमन्त्रित कीजिए।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१५२. तार: सरोजिनी नायडूको

[खुलना
१७ जून, १९२५]

सरोजिनी नायडू[1]
हैदराबाद

कल दार्जिलिंगमें देशबन्धु नहीं रहे। ईश्वरका विधान कौन जान या मेट सकता है। यदि इस क्षतिकी पूर्ति करनेमें तुम अपनी समूची शक्ति लगाना चाहती हो तो तुमको स्वास्थ्य-लाभके अपने कार्यक्रममें व्यवधान नहीं पड़ने देना चाहिए।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४)की फोटो-नकलसे।

१५३. तार: शौकत अलीको[1]

[खुलना
१७ जून, १९२५]

शौकत अली

देशबन्धु गये। ईश्वरकी इच्छा। वही सर्वशक्तिमान है।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१. साधन-सूत्रमें गांधीजीके अक्षरोंमें सूचना है: मुहम्मद अलीको ऐसा ही तार दें और उसमें "मौलाना अबुल कलामको सूचित करें" इतना जोड़ दें।

१५४. तार: वाइकोम सत्याग्रह आश्रमको[1]

१७ जून, १९२५

सत्याग्रह आश्रम
वाइकोम

सुनता हूँ प्रतिबन्धक आदेश वापस ले लिये गये। बधाई। आशा है कि कटुता पैदा करनेवाला कोई प्रदर्शन नहीं किया जायेगा और न रूढ़िवादियो-को भड़कानेवाली कोई अनावश्यक कार्रवाई।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१५५. महान् शोक

कलकत्ता
१७ जून, १९२५

जब हृदयको गहरी चोट लगती है तब कलम नहीं चलती। मैं यहाँ चारो ओर उमड़ते शोकमे इतना डूब गया हूँ कि 'यंग इंडिया' के पाठकोके लिए तार द्वारा अधिक कुछ सामग्री भेजनेमे असमर्थ हूँ। अभी दार्जिलिंगमे उस महान् देशभक्तके साथ ५ रोजतक मेरा साथ रहा। उसके फलस्वरूप हम दोनों पहलेसे कही अधिक एक-दूसरेके नजदीक आ गये थे। इस बार मैंने केवल यही अनुभव नही किया कि देश-बन्धु कितने महान् थे, बल्कि यह भी अनुभव किया कि वे कितने नेक थे। भारतका एक अनमोल रत्न खो गया है। हमे चाहिए कि हम स्वराज्य लेकर उसे पुनः प्राप्त कर ले।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १८-६-१९२५

१. मार्च, १९२५ में गांधीजी केरलके दौरेपर गये थे और वहाँ उन्होंने के० केलप्पन नायर-जैसे स्थानीय नेताओं और त्रिवेन्द्रमके पुलिस कमिश्नर डब्ल्यू० एच० पिटसे बातचीतकी। बादमें वे इस समस्याके सम्बन्धमें इन लोगोंसे पत्र-व्यवहार करते रहे; देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ३१६-१७। इस पत्र-व्यवहारको उन्होंने २४ मार्चको अखबारोमें प्रकाशनार्थ जारी करते हुए बताया कि इस पत्र-व्यवहारमें जो "मतैक्य" हो पाया है, वह इस सुधारके लिए किये जा रहे आन्दोलनमें किसी हदतक प्रगतिका सूचक है।

१५६. एक अपील[1]

[१७ जून, १९२५]

प्यारे देशभाइयो,

राष्ट्र देशबन्धु चित्तरंजन दासके लिए शोक मना रहा है। पर हम शोक क्यो मनाये? हालाँकि देशबन्धु हमारे बीचसे चले गये है, फिर भी वे हमारे मनमे बने रहेगे। उन्होने काम जहाँ छोडा है, वहीसे हमे उसे उठा लेना चाहिए। हमारा पहला काम मृतात्माके प्रति यथोचित सम्मानसे शुरू हो। हमारा स्नेह अन्धा नही, प्रज्ञापूर्ण होना चाहिए।

अस्थिअवशेष जब स्यालदा स्टेशनपर पहुँचेगा, तब भीड बहुत ज्यादा हो जाने की सम्भावना है। यदि हम चाहते है कि हर व्यक्ति अस्थिअवशेषके प्रति सम्मान प्रकट करनेकी अपनी इच्छा पूरी कर सके तो हमे इन नियमोका पालन करना चाहिए:

१. शोर-शराबा नही होना चाहिए।

२. भीडको गाडीकी तरफ नही बढना चाहिए। लोग जहाँ-कही हो, उनको वही खडे रहना चाहिए और धक्कामुक्की करके आगे नही बढना चाहिए।

३ अर्थी निकलनेके लिए साफ रास्ता छोड रखना चाहिए।

४ कीर्तन करनेवालोकी टोली और तैनात किये गये अन्य लोगोके अतिरिक्त बिलकुल सामनेकी ओर और किसीको नही रहना चाहिए। जुलूसके साथ चलनेके इच्छुक लोग कृपया पीछे-पीछे चले। उनको पक्ति नही तोडनी चाहिए।

५ श्मशान घाटपर लोगोको अर्थीकी ओर नही बढना चाहिए। उन्हे देह छोडे तीन दिन हो चुके है, इसलिए उसमे विकृति होने लगी होगी। अतएव उसे अन्तिम दर्शनोके लिए खोलकर नही रखा जा सकेगा।

६ कृपया याद रखिए कि दिवगत देशभक्तकी स्मृतिके प्रति हमारे सम्मानका तकाजा इतना ही नही है कि हम उसके प्रति अपने स्नेहका बाह्य और क्षणिक प्रदर्शन करके रह जाये, बल्कि हमे अपने दिलोमे देशबन्धुकी छोडी हुई विरासतके योग्य बननेका सकल्प करना है।

आपका सेवक,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १९-६-१९२५

१. यह अपील पर्चोके रूपमें बाँटी गई थी।

१५७. भाषण : खुलनाकी सार्वजनिक सभामें[1]

१७ जून, १९२५

आचार्य रायने आप लोगोको बताया है कि हमपर कैसा वज्रपात हुआ है। परन्तु मै जानता हूँ कि अगर हम सच्चे देश-सेवक है तो कितना ही बडा वज्रपात क्यो न हो, वह हमारा साहस नही तोड सकता। आज सवेरे यह शोक-समाचार सुनते ही मुझे यह न सूझ पडा कि मेरे सामने जो दो परस्पर विरोधी कर्त्तव्य उपस्थित है, उनमे से कौन-सा करूँ। मेरा कर्तव्य था कि मै पहली गाडीसे कलकत्ता चला जाता। पर मेरा कर्त्तव्य यह भी था कि आपके निर्धारित किये गये कार्यक्रमको पूरा करूँ। मेरी सेवावृत्तिने यही प्रेरणा दी कि यहाँका कार्य पूरा किया जाए। यद्यपि मैने यहाँ दूर-दूरसे आये हुए लोगोमे मिलनेके लिए रुक जाना ज्यादा ठीक माना है तथापि उनके सामने कांग्रेसके कार्यकी विवेचना न करके आज स्वर्गीय देशबन्धुका ही जिक्र करूँगा। मुझे विश्वास है कि मेरे कलकत्ता दौड जानेकी अपेक्षा यदि मै यहाँका काम पूरा कर लूँ तो उनकी आत्माको अधिक प्रसन्नता होगी।

देशबन्धु दास महानतम व्यक्तियोमे से थे।[2] मै लगभग छ वर्षोंसे उन्हे जानता हूँ। कुछ ही दिन पहले जब मै दार्जिलिंगमे उनसे विदा हुआ था, तब मैने एक मित्रसे कहा था कि उनसे मेरा सामीप्य जितना बढता जाता है उतना ही उनके प्रति मेरा प्रेम भी बढता जाता है। मैने दार्जिलिंगमे देखा कि उनके मनमे भारतकी भलाईके सिवा और कोई खयाल ही न था। वे भारतकी स्वाधीनताका ही सपना देखते थे, उसीका विचार करते और उसीके बारेमें बातचीत करते थे, अन्य बातोके बारेमें नही। दार्जिलिंगमे मेरे विदा होते समय भी, उन्होने मुझसे कहा था कि आप विभिन्न दलोके बीच एकता स्थापित करनेके लिए बगालमे कुछ दिन और ठहरिए ताकि बगालके दौरेकी अवधिमे सब लोगोकी शक्ति एक ही कार्यके लिए सयुक्त हो जाए।

उनसे मतभेद रखनेवालोने और उनपर बेतरह नुक्ताचीनी करनेवालोने भी बिना हिचकिचाहटके इस बातको स्वीकार किया है कि बगालमे ऐसा कोई मनुष्य नही जो उनका स्थान ले सके। वे निर्भीक थे, वीर थे। बगालके नवयुवकोके प्रति उनका स्नेह निस्सीम था। किसी नवयुवकने मुझसे ऐसा नही कहा कि देशबन्धुसे सहायता माँगने-पर कभी किसीकी प्रार्थना खाली गई। उन्होने लाखो रुपया पैदा किया और लाखो रुपया बगालके नवयुवकोमे बाँट दिया। उनका त्याग अनुपम था, उनकी महान् बुद्धि-मत्ता और राजनीतिज्ञताके बारेमे मुझ-जैसा व्यक्ति क्या कह सकता है?

१. खुलनामें महात्मा गांधीको सात अभिनन्दन-पत्र दिये गये, वे नगरपालिका, जिला बोर्ड और लोक संघ, इत्यादि स्थानीय सस्थाओकी ओरसे थे। प्रफुल्लचन्द्र रायने देशबन्धु चित्तरंजन दासके निधनका समाचार बताया था।

२. समाचार पत्रोके विवरणोके अनुसार इतना कहनेके अनन्तर गांधीजी रो पडे और एक या दो मिनटतक उनका कण्ठ अवरुद्ध रहा — वे बोल न सके।

उन्होंने दार्जिलिंगमें मुझसे अनेक वार कहा था कि भारतकी स्वाधीनताका दारोमदार अहिंसा और सत्यपर है। भारतके हिन्दुओ और मुसलमानोको जानना चाहिए कि उनका हृदय हिन्दू-मुसलमानका भेद जानता ही न था। मैं भारतके सब अंग्रेजोंसे कहता हूँ कि उनके प्रति भी उनके मनमे कोई बुरा भाव न था। उनकी अपनी मातृभूमिके प्रति यही प्रतिज्ञा थी — 'मैं जीऊँगा तो स्वराज्यके लिए और मरूँगा भी तो स्वराज्यके लिए।'

हम उनकी स्मृतिको चिरस्थायी वनानेके लिए क्या करे? आँसू वहाना सहज है; परन्तु ऐसा करनेसे हमारी या उनके स्वजन-परिजनोकी सहायता नही हो सकती। अगर हममे से प्रत्येक व्यक्ति — हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई उस कामको करनेकी प्रतिज्ञा करे जो उनके हृदयमें वसा हुआ था, जिसके लिए वे परिश्रम करते थे और जिसमे वे स्वय लगे रहते थे तो समझा जायेगा कि हमने सचमुच कुछ किया। हम सव ईश्वरको मानते है। हमे जानना चाहिए कि शरीर अनित्य है और आत्मा नित्य है। देशवन्धुका शरीर नष्ट हो गया, परन्तु उनकी आत्मा कभी नष्ट न होगी। न केवल उनकी आत्मा, वल्कि उनका नाम भी — जिन्होने इतनी वडी सेवा और त्याग किया है — अमर रहेगा। जो भी व्यक्ति, जवान या बूढा उनके आदर्शपर थोड़ा-वहुत भी चलेगा, वह उनकी यादगार वनाये रखनेमे मदद देगा। हमारे पास उनकी-सी बुद्धिमत्ता नही; पर हम उस भावनाको अपना सकते है जिससे वे देशकी सेवा करते थे।

देशवन्धुने पटना और दार्जिलिंगमे सूत कातना सीखनेकी कोशिश की थी। मैंने उनको चरखा चलाना सिखाया और उन्होंने मुझसे वादा किया था कि मैं कातना सीखनेकी कोशिश करूँगा और जवतक स्वास्थ्य साथ देगा तवतक कातना न छोड़ूँगा। उन्होंने अपने दार्जिलिंगके निवासस्थानको 'चरखा क्लव' वना दिया था। उनकी साध्वी पत्नीने वचन दिया था कि वीमारीकी हालत छोडकर, मैं रोज आव घटेतक स्वय चरखा चलाऊँगी। उनकी लड़की, वहन और भानजी तो वरावर ही चरखा कातती थी। देशवन्धु मुझसे प्राय. कहा करते: 'मैं समझता था कि कौंसिलमे जाना जरूरी है, मगर चरखा कातना भी उतना ही जरूरी — न सिर्फ जरूरी है, वल्कि विना चरखेके कौंसिलके कामको कारगर वनाना असम्भव है।' उन्होंने जवसे खादीकी पोशाक पहननी शुरू की तवसे अन्तिम दिवसतक पहनते रहे।

उन्होंने हिन्दू और मुसलमानोमे मेल पैदा करनेके लिए कितना वडा काम किया था, यह कहना मेरा काम नहीं है; यह तो सर्वविदित है। अस्पृश्योंके प्रति वे कितना प्रेम रखते थे, इसके विषयमे सिर्फ एक वात कहूँगा जो मैंने वारीसालमें कल रातको, एक नामशूद्र नेतासे सुनी थी। उस नेताने कहा कि उन्हे पहली आर्थिक सहायता देशवन्धुने दी, वादमें डाक्टर रायने। आप सव लोग कौंसिलोमे नही जा सकते। परन्तु वे तीनो काम जो उनको प्रिय थे, आप कर सकते हैं।

मैं अपनेको भारतका एक निष्ठावान् और देशवन्धुका वफादार भाई और सहयोगी मानता हूँ। इस कारण मैं आम तौरपर घोषित किया करता हूँ कि मैं अपने सिद्धान्तोंकी रक्षा करता हुआ, भविष्यमें देशवन्धु दासके अनुयायियोंको, यदि सम्भव हुआ

तो उनके कौसिलके कार्यक्रममे पहलेसे अधिक सहायता दूंगा। ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि वह मेरे द्वारा कोई ऐसा काम न कराये और मुखसे कोई ऐसी बात न कहलाये जिससे देशबन्धुके कार्यमे क्षति पहुँच सकती हो। हम दोनोके बीच कौसिल-प्रवेशके सम्बन्धमे मतभेद था ही। फिर भी हमारा हृदय एक था। राजनैतिक तरीकोमें तो सदा मतभेद बना रहेगा। परन्तु उसके कारण लोगोको एक-दूसरेसे अलग नही हो जाना चाहिए और न परस्पर शत्रुता पैदा होने देनी चाहिए। जो स्वदेश-प्रेम मुझे एक कामके लिए प्रेरित करता था वही उनको कुछ दूसरा काम करनेको प्रेरित करता था। ऐसा पवित्र मतभेद देशके काममे बाधक नही हो सकता। साधन-सम्बन्धी मतभेद नही बल्कि हृदयकी मलिनता ही अनर्थकारी होती है।

दार्जिलिगमे रहते समय मै देखता था कि देशबन्धुके दिलमे उनके राजनीतिक विरोधियोके प्रति नम्रता प्रतिदिन बढती जाती थी। मै उन पवित्र संस्मरणोका उल्लेख यहाँ न करूँगा। देशबन्धु देश-सेवकोमे एक रत्न थे। उनकी सेवा और त्याग बेजोड़ थे। ईश्वर करे, उनकी याद हमारे दिलोमे सदा बनी रहे और उनका आदर्श हमारे सत्प्रयत्नोमे सहायक हो। हमारा मार्ग लम्बा और दुर्गम है। उसमे हमे आत्म-निर्भरताके सिवा कोई सहारा नही देगा। स्वावलम्बन ही देशबन्धुका आदर्श था। वह हमे सदा अनुप्राणित करता रहे। ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति दे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-६-१९२५

१५८. क्या हम तैयार है?

श्री भरूचाने[1] मुझसे सार्वजनिक रूपसे प्रार्थना की है कि मै फिरसे एक सर्वदलीय सम्मेलन बुलाऊँ, क्योकि उनकी रायमे यह समय उसके मुआफिक है। देशबन्धु दासने 'मराठा' की एक प्रति मुझे दी है। उसमे भी, मैने एक ऐसी ही प्रार्थना देखी। मुझे मालूम है कि सरोजिनी देवीका भी विचार यही है। परन्तु इस सम्बन्धमे मेरी स्थिति बहुत-कुछ वैसी ही है, जैसी कि कांग्रेसकी बैठक बुलानेके सम्बन्धमे। यदि मुझे श्री जिन्ना, सर मुहम्मद शफी, पण्डित मदनमोहन मालवीयजी, लाला लाजपतराय, श्री श्रीनिवास शास्त्री, सर सुरेन्द्रनाथ, कट्टरपंथी अ-ब्राह्मण नेताओ, श्री सी० वाई० चिन्तामणि, डा० सप्रू तथा अन्य लोगोकी ओरसे कहा जाये तो मै खुशीके साथ सम्मेलन बुलाऊँगा। मेरा निजी खयाल तो यह है कि एकताके लिए आज हम उससे ज्यादा तैयार नही है जितने कि दिल्लीमे थे। यदि यह सम्मेलन हम स्वराज्यके सम्बन्धमे बुलाना चाहते है तो हम हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नपर लड पडेगे। यदि सम्मेलन बुलानेका हमारा मशा यह है कि कांग्रेसके मचपर तमाम दल आ जाये तो नई तजवीजे करने या उनपर पहले विचार करनेका काम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका है। क्योकि

१. बी० एफ० भरूचा।

जबतक कांग्रेसके मौजूदा सदस्य एकताकी इच्छा व्यक्त करने और कामकी योजना बनानेके बारेमे सन्तोषजनक रूपमे सहमत नही हो जाते तबतक सब दलोका सामान्य सम्मेलन बुलानेसे कुछ भी हासिल न होगा। यदि इसके रास्तेमे अकेली कताई-सदस्यता ही बाधक हो तो उससे निपटनेका तरीका और भी आसान है। जिन लोगोने इस मताधिकारको शुरूमे तय किया था, वे ही पहले इसके परिवर्तनके सुझावपर विचार करे। वे लोग कौन है? स्वराज्य दल — उसके इक्के-दुक्के सदस्य नही — और मै। मताधिकार सम्बन्धी समझौता, स्वराज्य दल तथा मेरे बीच हुआ था। यो तो मै किसी दलका प्रतिनिधि नही था, पर फिर भी मै अपने जैसे विचार रखनेवाले लोगोका, जिनकी सख्या अनिश्चित है, प्रतिनिधि तो था ही। मै स्वराज्य दलकी रजामन्दीके बिना काग्रेसमे कोई काम करना नही चाहता। अतएव यदि वह दल मताधिकारमे परिवर्तन करना चाहता है तो वह जहाँतक मुझसे ताल्लुक है, आज भी ऐसा कर सकता है — सिर्फ उसके कहने-भरकी देर है। और जब वह दल अपना मत निश्चित कर लेगा तब उसे कार्यरूपमे परिणत करनेके लिए अखिल भारतीय काग्रेसकी बैठक बुलाई जा सकती है। मै काग्रेसके अन्दर अपनेको कुछ नही मानता। मै मानता हूँ कि आज देशका शिक्षित समुदाय चरखा तथा अन्य कई प्रश्नोपर मेरे साथ नही है। भारतवासियोके शिक्षित-समाजने ही काग्रेसको जन्म दिया था और इसमे उन्हीकी प्रधानता रहनी चाहिए, उसकी नीतिकी बागडोर भी उन्हीके हाथोमे होनी चाहिए। मेरा दिल कहता है कि मै जन-साधारणके विचारोका प्रतिनिधित्व करता हूँ, फिर वह कितने ही अपूर्ण रूपमे क्यो न हो। मै काग्रेसपर अपने विचारोका असर अप्रत्यक्ष रूपमे डालना चाहता हूँ, अर्थात् मतोकी गिनती करके नही, बल्कि दलीलो और वस्तुस्थितिको सदस्योके सामने रखकर और उन्हे अपनी बातोका कायल करके, क्योकि मत तो सम्भव है ऐसे कारणोसे भी मिल जाये, जिनका सम्बन्धित विषयके गुण-दोषसे कोई सम्बन्ध न हो। जबतक जनता खुद सोचने लायक नही बन जाती तबतक वह उन लोगोके कहनेपर ही चलेगी जिनका उसपर उस समय प्रभाव होगा। ऐसी अवस्थामे उनके मतोका सहारा लेना अनुचित होगा। इसलिए यदि स्वराज्य दल जो निश्चित रूपसे शिक्षित समाजके साथ आधेसे ज्यादा हिस्सेका प्रतिनिधित्व करता है, कताई-सदस्यताको उडा देना चाहता हो तो वह ऐसा आज भी कर सकता है। मेरी ओरसे उसका कोई विरोध कदापि न होगा। हाँ, यह जरूर है कि उस अवस्थामे मुझसे काग्रेसका नेतृत्व करते रहनेकी उम्मीद रखना बेजा होगा। फिलहाल मै त्रिसूत्री रचनात्मक कार्यक्रमके अलावा किसी भी दूसरे कामके अयोग्य हूँ। मेरे नजदीक उसकी सफलता ही स्वराज्य है और उसके बिना स्वराज्य एक असम्भव चीज है। ऐसी अवस्थामे मुझे अवश्य ही उन लोगोके लिए जगह कर देनी चाहिए, जिनके बारेमे यह कहा जाता है कि उनका दृष्टिकोण अपेक्षाकृत व्यापक है।

सुना है कि श्री देशमुखने कहा है कि यदि मै अपने विचारोको बदल न सकूँ तो मुझे सार्वजनिक जीवनसे हट जाना चाहिए। मैने उनका सताराका भाषण पढा नही है, पर यदि उन्होने ऐसा कहा है तो उन्हे इसका पूरा हक था। मै भी किसी

व्यक्तिके लिए ऐसा ही कहूँगा, यदि मेरी यह धारणा हो कि उसके कार्योसे देशकी हानि हो रही है। क्या तमाम असहयोगियोने कौसिलोके सदस्योमे इस्तीफा देनेका आग्रह नही किया था ? हो सकता है कि श्री देशमुखका विचार भ्रमपूर्ण हो, पर एक सार्वजनिक कार्यकर्ताके नाते अपनी बात कहनेके उनके अधिकारपर कोई आपत्ति नही की जा सकती, उन्होने कोई नई या अजीब बात भी नही कही है। दर हकीकत ऐसा एक समय था जब मै सजीदगीके साथ काग्रेससे हट जानेका विचार कर रहा था, पर अन्तमे मैने सोचा कि उससे कोई लाभ नही होगा। मै मौलाना मुहम्मद अलीकी इस बातसे सहमत हूँ कि कोई भी सार्वजनिक कार्यकर्त्ता, जबतक स्वय उसे अपनी बातमे विश्वास है, अपने उत्तरदायित्वको नही छोड सकता। लोग चाहे तो उसे भले हटा दे। उन्होने कहा कि यदि आप जल्दी करके समयसे पहले काग्रेससे हट जायेगे तो आप अपने राजनीतिक प्रतिपक्षियोपर तथा देशपर बेजा बोझ डाल देगे। अपने पैगामपर विश्वास होते हुए भी आप काग्रेस तभी छोडे जब आपकी लोकप्रियता नष्ट हो जाये। और ऐसी अवस्था आ जानेपर भी यह निर्णय करना कि अमुक रवैयेपर डटा रहूँ या पीछे हट जाऊँ, बडा ही नाजुक विषय होता है। बात यह है कि किसीके कहनेसे स्वेच्छापूर्वक स्वीकार किये गये सेवा-कार्यसे अलहदा हो जाना जितनी दिखाई देती है, उतनी आसान बात नही है। परन्तु श्री देशमुखने हिम्मत करके लोगोके लिए इस सवालपर विचार करनेका रास्ता साफ कर दिया है। जो लोग चाहते है कि मै यह क्षेत्र छोड दूँ, उन्हे कमसे-कम मेरे उन साधनो और विचारोके खिलाफ, जिन्हे वे अनुपयुक्त समझते हो, लोकमत तो तैयार करना ही चाहिए। मेरा महात्मापन किसी खोटे सिक्केको चलानेका परवाना न माना जाये।

पर मेरे लिए चरखा खोटा सिक्का नही है। उसपर मेरी इतनी श्रद्धा है कि सारी दुनियाके विरुद्ध हो जानेपर भी मै उसकी हिमायत करूँगा। मै आजादी सब लोगोके लिए चाहता हूँ। मै उसका विचार अहिसाकी ही भाषामे कर सकता हूँ। यदि हमे आजादी बिलकुल अहिंसात्मक साधनोसे ही प्राप्त करनी है तो हम उसे केवल चरखेके ही द्वारा प्राप्त कर सकते है। चरखेके अन्दर हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता-निवारण और दूसरी कितनी ही चीजे शामिल है, जिनके उल्लेखकी यहाँ आवश्यकता नही है। मेरी रायमें यदि काग्रेस इस मताधिकारको हटा देगी तो वह भयकर भूल करेगी। परन्तु लोकतन्त्रमे मेरा जो विश्वास है उसमे यदि भयकर भूलेतक कर बैठनेका अधिकार शामिल न हो तो वह विश्वास कोडी मोलका भी नही रहेगा। इसीलिए मै समझता हूँ कि यदि दूसरे लोग उससे अनुप्राणित नही होते तो मेरा विश्वास मेरी अपनी दृष्टिसे सही होते हुए भी तिरस्कृत कर दिया जाना चाहिए। मै तो चाहता हूँ कि चरखेपर लोगोकी जीवन्त श्रद्धा हो, उसके फलस्वरूप वे सक्रिय सहयोग करे। कोरी "हाँ, हाँ," करने और तदनुसार काम न करनेसे किसीको लाभ नही हो सकता। इस विषयमे किसी निष्कर्षपर पहुँचनेका प्रयास करते समय मेरा व्यक्तिगत खयाल बिलकुल ही नही किया जाना चाहिए। हमारी इस महान् प्राचीन धर्मभूमि भारतके विकासके लिए कोई भी व्यक्ति अपरिहार्य नही है। सैकडो

गांधियोंका नामोनिशाँ मिट जाये तो हर्ज नही, भारतवर्ष जीता-जागता और फलता-फूलता रहे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-६-१९२५

१५९. एक घरेलू प्रकरण

लायलपुरके एक वकीलने 'यंग इंडिया' के सम्पादकके नाम यह पत्र भेजा है

> कोई तीन या चार साल पहले कलकत्तेमें 'ऑल इंडिया स्टोर्स लिमिटेड' नामकी एक कम्पनी खोली गई थी। उसके डायरेक्टर थे — श्री हरिलाल मो० गांधी। रावलपिण्डीमें उस कम्पनीके एक प्रतिनिधिने यह प्रचारित किया था कि वे महात्मा गांधीके लड़के हैं। उस प्रतिनिधिने मेरे एक मुवक्किलको उस कम्पनीका हिस्सेदार बननेके लिए राजी कर लिया; मुवक्किलने उसे तथा उस कम्पनीको कुछ रुपये दिये और वे उस कम्पनीके शेयरहोल्डर बन गये। मैंने तथा मेरे उन मुवक्किलने कम्पनी द्वारा सूचित पतेपर — २२ अमरतल्ला स्ट्रीट, कलकत्ताको — पत्र लिखे। मेरे मुवक्किलको अन्देशा है कि शायद यह कम्पनी नकली थी और उनका रुपया डूब गया। अब आपकी (महात्माजीकी) कीर्ति तथा इस दरिद्र देशके आर्थिक कल्याणके नामपर मैं अपने मनको दिलासा देनेकी कोशिश कर रहा हूँ और चाहता हूँ तथा परमात्मासे प्रार्थना भी करता हूँ कि मेरे मुवक्किलकी यह आशंका निराधार साबित हो। डाकघरने हमारे तमाम पत्र "डेड लेटर आफिस" के द्वारा वापस कर दिये हैं। इसलिए मेरे मुवक्किलके इस शकके लिए कि वह कम्पनी डूब गई है, कुछ वजह जरूर मालूम होती है। क्या यह सच है कि महात्माजीके लड़के उस कम्पनीके डायरेक्टर थे? ऐसी कोई कम्पनी खड़ी भी की गई थी या नहीं और आज वह मौजूद है या नहीं; यदि है तो कहाँ?
>
> कृपया यह सब लिखनेके लिए मुझे क्षमा कीजिए। मेरे मुवक्किल एक मुसलमान सज्जन हैं और महात्माजीके प्रति अपने आदर-भावके कारण ही वे उस कम्पनीके शेयरहोल्डर हुए थे। वे इन बातोंकी तसदीक कर लेना चाहते हैं। इसीलिए आपको यह तकलीफ दी गई है।

यदि इस पत्रमें कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तोकी बात शामिल न होती तो मैं इसका जवाब खानगी तौरपर देकर खामोश हो रहता — हालाँकि यह पत्र छापनेके उद्देश्यसे ही भेजा गया है। इसे प्रकाशित करना इस खयालसे भी आवश्यक है कि बहुत सम्भव है कि अन्य अनेक हिस्सेदार इन वकील साहबके मुवक्किलकी तरह सोच रहे हों। उन्हे भी उतनी तसल्ली हो जानी चाहिए, जितनी मैं दे सकता हूँ। हाँ, मैं अवश्य

ही हरिलाल मो० गाधीका पिता हूँ। वह मेरा सबसे बडा लडका है। उसकी उम्र ३६ से ऊपर है। वह ४ बच्चोका पिता है। उसकी सबसे बडी सन्तान १९ सालकी है। कोई १५ साल पहलेसे उसके और मेरे विचार भिन्न-भिन्न रहे हैं। इसलिए वह मुझसे अलहदा रहता है और १९१५ से उसका भरण-पोपण मैं नही कर रहा हूँ और न मैंने उसकी कोई व्यवस्था की है। मैंने हमेशा अपने बच्चोको १६ साल-की अवस्थाके बाद अपना मित्र और बराबरीका माना है। मेरे बाह्य जीवनमे जो जबर्दस्त परिवर्तन समय-समयपर हुए उनका असर मेरे नजदीक रहनेवालोपर, खास कर मेरी सन्तानपर हुए बिना नही रह सकता था। हरिलाल इन तमाम परिवर्तनो को देखता था, उसकी उम्र भी उन्हे समझने योग्य थी। इससे वह कुदरती तौरपर पश्चिमी रग-ढगसे प्रभावित हुआ, जो एक जमानेमे मेरे जीवनका भी रंग-ढग था। उसके व्यापार सम्बन्धी कार्योका मुझसे कोई सम्बन्ध न था। यदि मै उसपर अपना प्रभाव डाल पाता तो आज वह मेरे अनेक सार्वजनिक कार्योमे मेरे सहयोगीके रूपमे होता और साथ ही अच्छी-खासी रोजी भी कमा रहा होता। पर उसने बिलकुल जुदा और आजाद रास्ता अख्तियार किया। ऐसा करनेका उसे हक भी था। वह महत्वाकाक्षी था और आज भी है। वह धनी बन जाना चाहता है, सो भी आसानीसे। और बहुत करके उसके मनमे मेरे प्रति यह शिकायत भी है कि मैंने उसे तथा अपने अन्य पुत्रोको उन दिनो, जब मै उनके लिए कुछ कर सकता था, उन बातोसे वचित रखा जिनके द्वारा मनुष्य धनी बनता है और धनसे सुलभ होनेवाली ख्याति भी प्राप्त कर सकता है। इस पत्रमे उल्लिखित स्टोर उसने खोला था। उसमे मेरा किसी किस्मका भी सहयोग न था। मैंने अपने नामका उपयोग भी करनेकी अनुमति स्टोर-वालोको नही दी थी। मैंने न तो खानगी तौरपर, न जाहिरा तौरपर किसीसे उसके व्यवसायमे शरीक होनेकी सिफारिश की। जिन लोगोने उसे सहायता दी, उन्होने उस उद्योगके गुण-दोषका विचार करके ही दी थी। हाँ, यह जरूर है कि मेरा पुत्र होना उसके मार्गमे सहायक होगा। जबतक यह दुनिया कायम है, तबतक वह वर्णाश्रमके अपने विरोधके बावजूद आनुवशिकताका लिहाज करती रहेगी। बहुतोने अपने मनमे यह समझा होगा कि यह गाधीका लड़का है इसलिए भला, व्यवहारमे खरा, रुपये-पैसेके मामलेमे सावधानी बरतनेवाला तथा अपने पिताकी तरह ही विश्वसनीय होगा। मेरी उनके साथ सहानुभूति है, परन्तु इससे अधिक कुछ नही। उन कामोके सिवा जो मेरे साथ किये जाते है या जिन्हे मै अपने नामपर करनेकी इजाजत देता हूँ या जिनके लिए अपनी तरफसे प्रमाणपत्र देता हूँ, किसी शख्सके कामोकी नैतिक या दूसरे प्रकारकी जिम्मेवारियोको मै अपने सिरपर नही ले सकता;. फिर वह मेरे कितने ही आप्त और इष्ट क्यो न हो। मेरे सिरपर यो ही अनेक जिम्मेवारियाँ है। मेरे हृदयके अन्दर जो शाश्वत द्वन्द्वयुद्ध होता रहता है, और जो कभी अस्थायी सुलहका कायल नही हुआ है उसके दौरान जिन कष्टो और सन्तापोको मै झेला करता हूँ उन्हे तो अकेला मै ही जानता हूँ। पाठक विश्वास करे कि इस उक्त प्रयासमें मेरी तमाम शक्ति खर्च हो जाती है। यदि मै इस युद्धमे जूझनेका पर्याप्त बल पाता हूँ तो इसका

कारण यही है कि मैं बहुत जागरूक रहता हूँ। मैं पाठकोंको यह भी बता देना चाहता हूँ कि मेरी स्वराज्य सम्बन्धी हलचलका भी सम्बन्ध उसी अन्तर्द्वन्द्वसे है। मैं इस स्वराज्य कार्यमें इसलिए लगा हुआ हूँ कि मेरी आत्माको इससे अत्यन्त सन्तोष मिलता है। इसपर एक मित्रने मुझसे कहा कि यह तो आपकी एक अत्यन्त ही परोक्ष किस्मकी, स्वार्थसिद्धिकी दोहरी चेष्टा है। मैंने इसे तुरन्त स्वीकार किया।

मैं हरिलालके मामलोंसे अवगत नहीं हूँ। वह कभी-कभी मुझसे मिल जाता है, पर मैं उसके कारोबारकी भीतरी बातें जाननेकी कभी कोशिश नहीं करता। मुझे यह भी मालूम नहीं कि वह अपनी कम्पनीमें एक डायरेक्टरकी हैसियतसे काम कर रहा है। मुझे यह भी पता नहीं कि इस समय उसके कारोबारका क्या हाल है — हाँ, इतना मालूम है कि हालत अच्छी नहीं है। यदि वह नेकनीयत है तो तमाम लेनदारों-का रुपया पूरा चुकता किये बिना दम न लेगा — फिर उसका स्टोर चाहे लिमिटेड हो या न हो। प्रामाणिक व्यवसायके बारेमें मेरी यही मान्यता है। पर हो सकता है कि उसके विचार जुदे हों और वह दिवाला निकालनेसे सम्बन्धित कानूनका सहारा ले। मेरी तरफसे सर्वसाधारणको इतना ही यकीन दिला देना काफी है कि किसी भी छल-छद्मकी बातका समर्थन मेरी ओरसे कभी नहीं होगा। मेरे नजदीक सत्याग्रह-धर्म, प्रेमधर्म एक शाश्वत सिद्धान्त है। मैं तमाम अच्छी बातोंके साथ सहयोग करता हूँ। मैं तमाम बुरी बातोंके साथ असहयोग करनेका इच्छुक रहता हूँ, फिर उनका सम्बन्ध मेरी पत्नीके साथ हो, लड़केके साथ हो, या खुद मेरे ही साथ। मैं दोनोंमें से किसीकी भी ढाल बनना नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ कि दुनिया हमारे तमाम दोषों और बुराइयोंको जान ले। जहाँतक हो सकता है शिष्टताके साथ मैं दुनियाको कौटु-म्बिक रहस्य मानी जानेवाली अपनी तमाम बातें बता देता हूँ। मैं उन्हें छिपानेकी जरा भी कोशिश नहीं करता, क्योंकि मैं जानता हूँ कि उनको छिपानेसे हमारी हानि ही होगी।

हरिलालके जीवनमें बहुतेरी ऐसी बातें हैं, जिन्हें मैं नापसन्द करता हूँ। वह यह बात जानता भी है। पर उसके इन दोषोंके रहते हुए भी मैं उसे प्यार करता हूँ। आखिर पिताका हृदय ही ठहरा। ज्यों ही वह उसमें प्रवेश पाना चाहेगा, उसे स्थान मिल जायेगा। फिलहाल तो उसने अपने लिए उसका द्वार बन्द कर रखा है। अभी उसे और दर-दरकी खाक छाननी है। मानवी पिताके संरक्षणकी तो निश्चित सीमाएँ होती हैं, पर दैवी पिताका द्वार उसके लिए सदा खुला हुआ है। वह उसे खोजेगा तो वहाँ जरूर स्थान पायेगा।

ये वकील साहब तथा उनके मुवक्किल इस बातको जान लें कि यदि एक वयस्क पुत्रकी गलतियोंसे, जिनके लिए मैंने कभी उसको उत्साहित नहीं किया, मेरी कीर्तिमें कलंक लग सकता हो तो फिर वह कीर्ति किस कामकी? यदि कांग्रेसके सभापति और उसकी भिन्न-भिन्न कमेटियोंके सदस्य अपने न्यास अथवा उत्तरदायित्वके प्रति सच्चे बने रहें और एक पैसेका भी दुरुपयोग न करें तो इस दरिद्र देशका आर्थिक कल्याण ऐसी निजी कम्पनियोंके डूब जानेपर भी भलीभाँति सुरक्षित रहेगा। मुझे उन

मुवक्किल महोदयपर तरस आता है जो मेरे सम्मानकी खातिर एक ऐसी कम्पनीके हिस्सेदार बन गये, जिसके नियमोको पढनेकी उन्होने कभी परवाह ही नही की। इन मुवक्किलके इस उदाहरणको देखकर वे लोग होशियार हो जाये जो बडे-बडे नामोको देखकर किसी कारोबारमें शामिल हो जाते है। कोई व्यक्ति अच्छा हो सकता है—पर यह जरूरी नही है कि उसकी सन्तान भी अच्छी ही हो। उसका कुछ बातोमे अच्छा होना सम्भव है, पर सभी बातोमे उसका अच्छा होना जरूरी नही है। वही मनुष्य जो एक बातके बारेमे प्रमाण माना जा सकता है, हर बातके बारेमे नही माना जा सकता। हरएकको अपना सौदा ठोक-बजाकर करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १८-६-१९२५

१६०. तार: मोतीलाल नेहरूको

कलकत्ता

[१८ जून, १९२५][1]

पण्डित मोतीलालजी नेहरू
हर्स्ट लॉज
डलहौजी

मैं यहाँ आपके प्रतिनिधिके रूपमे हूँ। जानते-बूझते कोई ऐसा काम नही करूँगा जो आपको नापसन्द हो। बासन्ती देवीके पाससे हिलता नही हूँ। कृपया विश्राम कीजिये, कोई जोखिम मत उठाइये। आपको पूरी ताकत आ जानेपर ही पहाडोसे लौटना चाहिए। श्रद्धांजलि-सभातक तो कलकत्तामे रुकूँगा ही। तार द्वारा सूचित कीजिए कि स्वास्थ्यमे कितना सुधार हो पाया है। क्या जवाहरलाल वही है?

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६४४) की फोटो-नकलसे।

१. चित्तरंजन दासके अस्थि-अवशेष इसी दिन कलकत्ता पहुँचे थे।

१६१. तार: के० केलप्पन नायरको[1]

[रसा रोड
कलकत्ता
१८ जून, १९२५ या उसके पश्चात्]

हम किसी आधे समझौतेके लिए तैयार न हो; पर सत्याग्रहियोको ऐसे स्थानोपर तैनात किया जाना चाहिए जिनपर कमिश्नरको आपत्ति न हो। आपके तारका आशय स्पष्ट नही। जो भी हो, सडके विलकुल खुली रहनी चाहिए।

गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६९१) की फोटो-नकलसे।

१६२. देशबन्धु जिन्दाबाद![2]

[१९ जून, १९२५]

कलकत्ताने कल दिखला दिया है कि देशवन्धु दासका वगाल ही नही, सारे भारतवर्षके हृदयपर कितना अधिकार था। वम्बईकी तरह कलकत्ता भी सार्वभौमिक नगर है। इसमे हर प्रान्तके लोग वसते है और इन तमाम प्रान्तोके लोग, वगालियो-की तरह ही, उस जुलूसमे हार्दिक योग दे रहे थे। देशके कोने-कोनेसे तारोकी जो झड़ी लग रही है उससे भी यही वात और जोरके साथ प्रकट होती है कि सारे देश-भरमे वे कितने लोकप्रिय थे।

अपनी कृतज्ञताके लिए प्रसिद्ध इस जन-समाजसे इससे भिन्न व्यवहारकी अपेक्षा भी नही की जा सकती थी। फिर देशवन्धु इसके पात्र भी थे। उनका त्याग महान् था। उनकी उदारताकी सीमा न थी। उनकी मुट्ठी सदा और सवके लिए खुली रहती थी। दान देनेमे वे कभी आगा-पीछा न करते थे। उस दिन जव मैंने वडे मीठे भावसे कहा कि अच्छा होता आप दान देनेमे अधिक विचारसे काम लेते तो उन्होने

१. गाधीजीके १७ जूनके तारके बाद उन्हें श्री केलप्पनका इस प्रकारका तार मिला था: "आधी सड़कोंके इस्तेमालकी इजाजतके लिए सरकार एक तरहसे राजी। कोई ऐलान नहीं। बाकी सड़कोंको बन्द करनेका मतलब है सदाके लिए अनुपगम्यताको बरकरार रखना। हल स्वीकार्य नहीं। सत्याग्रह त्यागनेका अर्थ है अनुपगम्यताकी प्रथाके सामने घुटने टेकना, उत्तर तार द्वारा दें।" केलप्पन नायरने इसी दिन ब्यौरेवार पत्र भी लिखा था; देखिए "पत्र. के० केलप्पन नायरको", २८-७-१९२५।

२. यह लेख २० जून, १९२५ के अमृतबाजार पत्रिकामें भी प्रकाशित हुआ था।

तुरन्त उत्तर दिया, "पर मैं नही समझता कि अपने अविचारके कारण मेरी कुछ हानि हुई है।" उनका रसोईघर अमीर और गरीब सबके लिए खुला रहता था। उनका हृदय हरएककी मुसीबतके समय सहानुभूतिसे भर जाता था। बगाल-भरमे ऐसा कौन नवयुवक है जो किसी-न-किसी रूपमें देशबन्धुके उपकारसे बँधा नही है? उनकी बेजोड कानूनी प्रतिभाका लाभ भी गरीबोको सदा सुलभ रहता था। मुझे मालूम हुआ है कि उन्होने यदि सबकी नही तो बहुतेरे राजनीतिक कैदियोकी पैरवी बिना एक पैसा लिए की है। पजाब-काण्डकी[1] जाँचके समय जब वे पजाब गये थे तो अपना सारा खर्च अपनी जेबसे ही किया था। उन दिनो अपने साथ वे एक राजाकी तरह लवाजिमा ले गये थे। उन्होने मुझसे कहा था कि पजाबकी उस यात्रामे उनके ५०,०००) खर्च हुए थे। जो उनके दरवाजे आता उसीके लिए उनका उदार हाथ आगे बढ जाता था। उनके इसी गुणने उन्हे हजारो नवयुवकोका हृदय-सम्राट् बना दिया था।

वे जैसे उदार थे वैसे ही निर्भीक भी थे। अमृतसरमे उनके धुआँधार भाषणोने मुझे चकित कर दिया था। वे अपने देशकी मुक्ति तुरन्त चाहते थे। वे एक भी विशेषणको हटाने या बदलनेके लिए तैयार न थे, इसलिए नही कि वे जिद्दी थे, बल्कि इसीलिए कि उन्हे अपना देश बहुत प्यारा था। उन्होने विशाल शक्तियोको अपने नियन्त्रणमे रखा। अपने अदम्य उत्साह और अध्यवसायके द्वारा उन्होंने अपने दलको शक्ति-सम्पन्न बनाया। परन्तु यह भीषण शक्तिप्रवाह उनकी जान ले बठा। उनका यह बलिदान स्वैच्छिक था। वह उच्च था — उदात्त था।

उनकी सबसे बड़ी जीत फरीदपुरके काग्रेस अधिवेशनके अवसरपर हुई। उनके वहाँके उद्गार उनकी अनुपम विवेकशक्ति और राजनीतिज्ञताके नमूने थे। उनका वह भाषण विचारपूर्ण और स्पष्ट था और (जैसा कि मुझसे उन्होने कहा) उसमे उन्होने अपने लिए अहिसाको एकमात्र नीति और इसलिए भारतवर्षके राजनीतिक धर्मके रूपमे स्वीकार किया था।

पण्डित मोतीलाल नेहरू तथा महाराष्ट्रके अनुशासनबद्ध, दिग्गज नेताओके साथ मिलकर उन्होने शून्यवत् स्वराज्यदलको एक महान् और वर्धमान दल बना लिया और ऐसा करके उन्होन अपनी सकल्पशक्ति, मौलिकता, साधनबाहुल्य और किसी वस्तुको अच्छा मान लेनेके बाद फिर परिणामकी चिन्ता न करने आदि गुणोका परिचय दिया। फलस्वरूप आज हम स्वराज्यदलको एक ठोस और सुचारु रूपसे अनुशासनबद्ध सगठनके रूपमे देखते हैं। कौसिल-प्रवेशके सम्बन्धमे मेरा उनसे मतभेद था और है। पर मैंने सरकारका काम कठिन बनाने और पग-पगपर उसके कामका अनौचित्य दिखानेके एक साधनके रूपमे कौसिल-प्रवेशकी उपयोगितासे कभी इनकार नही किया। कौसिलोमे इस दलने जो काम किया उसके महत्त्वसे कोई इनकार नही कर सकता और उसका श्रेय मुख्यत. देशबन्धुको ही है। मैंने हर चीजपर खूब सोच-विचार करके ही उनके साथ समझौता किया था। तबसे मैंने उस दलकी यथाशक्ति सहायता की है। अब

१. १९१९ में।

उसके नेताके स्वर्गवासके बाद, मेरा यह दोहरा कर्त्तव्य हो गया है कि मैं उस दलका साथ दूं। यदि मैं उसकी सहायता न कर पाया तो भी उसकी प्रगतिमे तो मैं किसी तरह बाधक नही बनूँगा।

मैं फिर उनके फरीदपुरवाले भाषणपर आता हूँ। स्थानापन्न वाइसरायने श्रीमती वासन्ती देवी दासके नाम शोकसन्देश भेजा है। राष्ट्र वाइसराय महोदयकी शिष्टताकी कद्र करेगा। आग्ल-भारतीय पत्रोने स्वर्गीय देशबन्धुकी स्मृतिमे जो उनका यशोगान किया है उसका उल्लेख मैं कृतज्ञतापूर्वक करता हूँ। मालूम होता है कि फरीदपुरवाले भाषणकी खरी सत्यनिष्ठाकी भावनाने अंग्रेजोके दिलपर अच्छा असर डाला है। मुझे इस बातकी चिन्ता है कि कही उनका स्वर्गवास केवल इस शिष्टाचार प्रदर्शनका अवसर बनकर ही न रह जाये। फरीदपुरवाले भाषणके मूलमे एक महान् उद्देश्य था। आग्ल-भारतीय मित्रोने चाहा था कि देशबन्धु अपनी स्थितिको स्पष्ट कर दें और अपनी तरफसे पहल करे। इसीके उत्तरमे उस महान् देशभक्तने वह भाषण किया था और अपनी स्थिति स्पष्ट की थी। पर क्रूर कालने उस उदार सकेतके प्रेरकको हमसे छीन लिया। परन्तु उन अंग्रेजोको, जो अब भी देशबन्धुकी नीयतपर शक रखते हो, मैं यकीन दिलाना चाहता हूँ कि जबतक मैं दार्जिलिंगमे रहा, मेरे दिलपर जो बात सबसे ज्यादा जोरके साथ अकित हुई, वह थी देशबन्धुके उन वचनोमें निहित निर्मल भावना। क्या इस गौरवमय अन्तका सदुपयोग हमारे घावोको भरने और अविश्वासको मिटानेमे नही किया जा सकता? मैं एक सीधी-सी बात सुझाता हूँ। सरकार देशबन्धु चित्तरजन दासकी स्मृतिमे, जो अब अपने पक्षकी पैरवी करनेके लिए हमारे साथ दुनियामे नही है, उन तमाम राजनीतिक कैदियोको छोड़ दे जिनके सम्बन्धमे उनका कहना था कि वे निर्दोष है। मै निरपराधताकी विनापर उन्हे छोडनेके लिए नही कहता। हो सकता है कि सरकारके पास उनके अपराधके लिए पक्के सबूत हो। मैं तो सिर्फ उस मृत आत्माके गुणोकी स्मृतिमे, बिना पहलेसे कोई दुराग्रह रखे उन्हे छोड देनेके लिए कहता हूँ। यदि सरकार भारतीय लोकमतके अनुरजनके लिए कुछ भी करना चाहती है तो इससे बढकर अनुकूल अवसर न मिलेगा और राजनीतिक कैदियोकी रिहाईसे बढकर अनुकूल वायुमण्डल बनानेका अच्छा श्रीगणेश दूसरा न होगा। मैं प्रायः सारे बगालका दौरा कर चुका हूँ। मैंने देखा है कि इस बातसे लोगोके मनमे बड़ा रोष है — इनमे सभी लोग आवश्यक रूपसे स्वराज्यवादी नही है। परमात्मा करे कि वह अग्नि, जिसने कल देशबन्धुके नश्वर शरीरको भस्म कर डाला, हमारे नश्वर अविश्वास, सन्देह और डरको भी भस्मसात् कर दे। फिर यदि सरकार चाहे तो वह भारतवासियोकी माँग — वह जो-कुछ भी हो — की पूर्तिके सर्वोत्तम उपायोपर विचार करनेके लिए एक सम्मेलन बुला सकती है।

पर यदि सरकार अपने जिम्मेका काम कर लेगी तो हमें भी अपने हिस्सेका काम पूरा करना होगा। हममे यह दिखा देनेकी शक्ति होनी ही चाहिए कि हमारी नौका एक आदमीके भरोसे नही चल रही है। श्री विन्स्टन चर्चिलके शब्दोमे, जो कि उन्होने युद्धके समय कहे थे, हमे कह सकना चाहिए, 'सब काम ज्योका-त्यो चलता रहेगा।'

स्वराज्यदलकी पुनर्रचना तुरन्त होनी चाहिए। पजावके हिन्दू और मुसलमान भी इस दैवी-प्रकोपको देखकर अपने लडाई-झगडे भूल गये हैं, ऐसा प्रतीत होता है। क्या दोनो पक्षके लोग इतनी दृढता और समझदारीका परिचय देंगे कि अपने लडाई-झगडोका अन्त कर दे? देशवन्धु हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रेमी थे। उसपर उनका विश्वास भी था। उन्होंने अत्यन्त विकट परिस्थितिमे भी हिन्दुओ और मुसलमानोको एक वनाये रखा। क्या उनकी चिताग्नि हमारे अनैक्यको भी न जला डालेगी? तमाम दलोका एक सस्थाके अन्तर्गत आ मिलना शायद इसकी ठीक शुरुआत होगा। देशवन्धु इसके लिए वडे उत्सुक थे। सम्भव है, उन्होंने अपने प्रतिपक्षियोके सम्वन्धमे कटु वाक्य प्रयुक्त किये हो। परन्तु दार्जिलिंगमे मैं वहाँ जितने दिन ठहरा, देशवन्धुके मुँहसे उनके किसी भी राजनीतिक प्रतिपक्षीके प्रति एक भी कठोर शब्द निकलते न सुना। उन्होंने मुझसे कहा कि आप सव दलोको एक करनेमें भरसक सहायता दीजिए। सो अव हम शिक्षित भारतवासियोका कर्त्तव्य है कि देशवन्धुके इस दूरदर्शितापूर्ण विचारको कार्यरूपमें परिणत करे और उनके जीवनकी इस एक महत्त्वाकांक्षाको पूर्ण करे — यदि हम फिलहाल स्वराज्यकी सीढीपर ठेठ ऊपरतक न पहुँच सके तो उसकी कुछ सीढियाँ तो तुरन्त ही चढ जाये। तभी हम अपने हृदयस्तलसे पुकार सकते हैं — 'देशवन्धु स्वर्गवासी हुए, देशवन्धु जिन्दावाद!'

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१६३. श्रद्धांजलि-सभाके सम्बन्धमें निर्देश

कलकत्ता
१९ जून, १९२५

भारतने देशके कोने-कोनेमे शोक-सभाएँ करके अपनेको गौरवान्वित किया है। लेकिन जनताको देशवन्धुके प्रति अपना स्नेह पर्याप्त रूपमे व्यक्त करनेका समय नही मिल पाया। इसीलिए मेरा सुझाव है कि देश-भरमे जहाँ-जहाँ कांग्रेसका प्रभाव हो, हर कस्बे और हर गाँवमे एक श्रद्धाजलि सभाका आयोजन किया जाये और उसमें उपयुक्त प्रस्ताव पास किये जाये। मुझे आशा है कि सभी दलोके लोग, यूरोपीय लोग भी, श्रद्धाजलि सभामे भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किये जायेंगे।

मैं अन्यत्र कही लिख भी चुका हूँ कि देशवन्धुकी अन्तिम अभिलाषा यही थी कि सभी दल एक सर्वमान्य उद्देश्यको पूरा करनेके लिए एक हो जाये। ईश्वर करे यह अखिल भारतीय श्रद्धाजलि सभा सभी दलो और जातियोके बीच वास्तविक एकताका मार्ग प्रशस्त कर दे।

मैंने कलकत्तामे मौजूद नेताओ और देशवन्धु परिवारके सदस्योसे इस सभाकी तिथिके वारेमे मशविरा कर लिया है। उन्होंने इसके लिए पहली जुलाईका दिन निश्चित

करनेका सुझाव दिया है, क्योंकि उनकी मृत्युके बादका सोलहवाँ दिन होनेके कारण यही श्राद्धका दिन पडता है। यदि समूचे देशकी सभाओके लिए एक ही समय निर्धारित कर दिया जाये तो इन सभाओका महत्त्व और भी बढ जायेगा। इसलिए मेरा सुझाव है कि आगामी पहली जुलाईके दिन पाँच बजे (स्टैंडर्ड टाइम) शामका समय इसके लिए ठीक किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २४-६-१९२५

१६४. स्मरणांजलिके लिए निवेदन[1]

१९ जून, १९२५

जनताको यह बतला देना मेरा कर्त्तव्य है कि श्रीमती वासन्ती देवीको स्वनामधन्य अपने पतिके देहावसानके दिनसे ही दु सह मानसिक तनावमे से गुजरना पड रहा है। मैंने खुद दो दिन देखा है कि उनके पास सवेदना प्रकट करनेवालोका ताता लगा रहा है। अपनी स्वाभाविक विनम्रताके कारण वे किसीसे भी मिलनेसे इनकार नही कर पाती। इसका नतीजा यह हुआ है कि आज उनके शरीरने लगभग जवाब ही दे दिया है। शायद लोग नही जानते कि उनका शरीर बहुत ही कमजोर है और उनको दिलकी बीमारी भी है। उनके और राष्ट्रके ऊपर पडे इस विपद्-कालमे यह तो उनका अपार साहस ही है, जो उनका साथ दे रहा है। सामान्य परिस्थितिमे भी और वह भी किसी स्वस्थ व्यक्तिके लिए सुबहसे लेकर काफी रात गयेतक मुलाकातियोसे एकके बाद एक लगातार मिलते रहना सचमुच असहनीय मानसिक क्लान्ति हो जाती। मेरे काफी समझाने-बुझानेपर उन्होने मुझे मुलाकातियोके लिए एक समय निर्धारित करनेकी अनुमति दी है। मैंने मित्रो तथा वासन्ती देवीके चिकित्सक-सलाहकारोंसे मशविरा करके उनकी सहमतिसे मुलाकातियोके लिए शामको ५ से ७ तकका समय निश्चित किया है। इस शोकसन्तप्त महिलासे मिलने आनेके इच्छुक सभी लोगोसे मेरा विनम्र निवेदन है कि वे निर्धारित समयमें ही आये। यदि इस अनुरोधको मान लिया गया तो सम्भव है कि बिलकुल ही खाट पकडनेकी नौबत न आय।

क्या स्थानीय भाषाओके समाचारपत्र इसका अनुवाद छापनेकी कृपा करेंगे?

मो० क० गांधी

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०५९२) की फोटो-नकलसे।

१. यह सन्देश चित्तरंजन दासके निधनके बाद कलकत्तासे समाचारपत्रोंके लिए भेजा गया था। इसका मसविदा गांधीजीके स्वाक्षरोंमें है।

१६५. चित्तरंजन दास

२० जून, १९२५

एक दिग्गज पुरुष उठ गया! बगाल आज एक विधवाकी तरह हो गया है। कुछ सप्ताह पहले देशवन्धुकी आलोचना करनेवाले एक सज्जनने मुझसे कहा था, "यद्यपि यह सच है कि मैं उनके दोष वताता हूँ, फिर भी मैं आपके सामने स्पष्ट रूपसे कह रहा हूँ कि उनकी जगहपर वैठने लायक दूसरा कोई शख्स है ही नही।" जब खुलनाकी सभामे, जहाँ यह अत्यन्त क्षोभकारी समाचार मैंने पहले-पहल सुनाया, इस प्रसंगका मैंने जिक्र किया, तव आचार्य रायने छूटते ही कहा: "यह विलकुल यथार्थ है। यदि मैं यह वता सकूँ कि रवीन्द्रनाथके वाद कविका स्थान कौन लेगा, तभी मैं यह भी कह सकूँगा कि देशवन्धुके वाद नेताका स्थान कौन ले सकता है। वगालमे कोई आदमी ऐसा नही है जो देशवन्धुकी ऊँचाईके नजदीक भी पहुँच पाता हो।" वे सैकडो सघर्षोके विजेता वीर थे। उनकी उदारता दोषकी हदतक वढी हुई थी। वकालतमें उन्होने लाखो रुपये पैदा किये, पर उन्होने कभी उस धनका सचय करके धनी बनना न चाहा; यहाँतक कि अपना भव्य भवन भी दानमे दे डाला।

१९१९ मे, पजाव कांग्रेस जाँच-समितिके सिलसिलेमें उनसे मेरी पहले-पहल भेंट हुई थी। जब उनसे मिलनेका अवसर आया तब मेरे मनमे भय और शंकाके भाव थे। मैं दूर-दूरसे ही उनकी धुआँधार वकालत और उससे भी अधिक उनकी ओजस्विनी वक्तृत्वशक्तिके वारेमे सुनता रहा था। वे अपनी मोटरमे वैठकर सपत्नीक—सपरिवार—आये थे। वे राजाओकी-सी शान-शौकतसे रहते थे। मेरा पहला अनुभव तो कुछ अच्छा न रहा। हम लोग हटर-समितिकी तहकीकातमे गवाहियाँ दिलानेके प्रश्नपर विचार करनेके लिए वैठे थे। मैंने देखा कि वे तमाम कानूनी वारीकियोसे परिचित थे और उनमें गवाहको जिरहमे परास्त कर देनेके साथ ही फौजी-कानूनसे सचालित शासन-व्यवस्थाकी अनेक शरारतों या कुचेष्टाओकी कलई खोल देनेकी वकीलोचित तीव्र लालसा भी थी। मेरा प्रयोजन भिन्न था। मैंने उन्हे अपना मन्तव्य वताया। दूसरी मुलाकातके वाद मेरे दिलको तसल्ली हुई और मेरा तमाम डर दूर हो गया। मैंने जो-कुछ उन्होने कहा उसे गौरके साथ सुना। भारतवर्षके वहुतेरे देशसेवकोके घनिष्ठ सम्पर्कमे आनेका मेरा यह पहला अवसर था। तवतक कांग्रेसके किसी काममे मैंने व्यवहारत. कोई हिस्सा नही लिया था। वे मुझे दक्षिण आफ्रिकाके एक योद्धाके रूपमें ही जानते थे। पर इस समितिके मेरे तमाम साथियोने मेरा संशय और संकोच दूर करके मुझे अपना दोस्त-जैसा वना लिया। और देशके इस विख्यात सेवकका नम्वर इसमे सवसे आगे था। मैं उस समितिका अध्यक्ष माना जाता था। 'जिन वातोमे हमारा मतभेद होगा, उनमे मैं अपना मत आपके सामने उपस्थित कर दूँगा, फिर जो फैसला आप करेंगे उसे मान लूँगा, इसका यकीन मैं आपको दिलाता हूँ।' उनके

इस स्वयस्फूर्त आश्वासनके पहले ही हममे इतनी घनिष्ठता स्थापित हो गई थी कि मुझे अपने मनका सशय उनपर प्रकट कर देनेका साहस हो गया। उनकी ओरसे उपर्युक्त आश्वासन मिल जानेके पश्चात् मुझे इस वफादार सहयोगीपर अभिमान तो हुआ, किन्तु साथ ही मुझे कुछ शर्म-सी आई, क्योकि मै जानता था कि मैं तो भारतकी राजनीतिमे एक नौसिखिया हूँ और कदाचित् ही ऐसे पूर्ण विश्वासका अधिकारी हूँ। परन्तु अनुशासन छोटे-बडेका भेद नही जानता। वह राजा जो अनुशासनके मूल्यको जानता है, अपने खिदमतगारकी भी बात, उस मामलेमे जिसका पूरा भार वह उसीपर छोड़ देता है, मान लेता है। इस जगह मेरा स्थान एक खिदमतगार-जैसा था। और मै इस बातका उल्लेख कृतज्ञता और अभिमानके साथ करता हूँ कि मुझे जितने वफादार सहयोगी वहाँ मिले थे, उनमे कोई इतना वफादार न था जितने चित्तरजन दास थे।

अमृतसरमें कांग्रेस अधिवेशनके अवसरपर अनुशासन चलानेका अधिकार मुझे नही मिल सकता था। वहाँ हम सभी योद्धा थे, हममे से हरएकको अपनी-अपनी योग्यताके अनुसार राष्ट्रहित-रूपी अपनी थातीकी रक्षा करनी थी। वहाँ शुद्ध तर्क अथवा पक्षके हितके अलावा अन्य किसीके सुझावके सामने सिर झुकानेका सवाल ही न था। कांग्रेसके मचपर पहली लडाई लडना मेरे लिए बहुत आनन्दका विषय था। परम विनयी, परन्तु वैसे ही दृढ, महान् मालवीयजी दोनो पक्षोमें सन्तुलन रखनेकी कोशिश कर रहे थे। राजी करनेके खयालसे वे कभी एकके पास जाते थे, कभी दूसरेके पास। कांग्रेसके अध्यक्ष पण्डित मोतीलालजीने सोचा कि खेल खत्म हो चुका है। लोकमान्य और देशबन्धुके साथ इस बार मेरा समय जैसा बीता, वह मेरी स्मृतिमे एक विरल अनुभवके रूपमें कायम रहने वाला है। उन दोनोने सुधार सम्बन्धी प्रस्तावका एक ही सूत्र बना रखा था। हम एक दूसरेके गले अपनी-अपनी बात उतार देना चाहते थे। पर कोई किसीका कायल न होता था। बहुतोने तो सोचा था कि अब कोई चारा नही है और बात बिगड ही चुकी है। अलीभाई, जिन्हे मैं जानता जरूर था, और जिनके प्रति मेरा प्रेमभाव था, परन्तु जिनके साथ आजकी तरह घनिष्ठ परिचय नही था, मुझे देशबन्धुके प्रस्तावके पक्षमें लानेकी कोशिश करने लगे। मुहम्मद अलीने अपनी आग्रहपूर्ण विनम्रताके साथ कहा, 'जाँच-समितिमे आपने जो महान् कार्य किया है, कृपया उसे नष्ट न कीजिए।' पर उनकी बात मुझे न जँची। तब जयरामदास, उस ठडे दिमागवाले सिन्धीने, पतवार थामी, उन्होने समझौतेसे सम्बन्धित अपने सुझाव, मय अपने तर्कके, एक कागजपर लिखकर मेरे पास भेजे। मैं उन्हे बहुत कम जानता था। पर उनके नेत्रो और चेहरेमे कोई ऐसी बात थी, जिसने मुझे लुभा लिया। मैंने उस पुर्जीको पढ़ा, सुझाव अच्छा था। मैंने उसे देशबन्धुको दिया। उन्होने जवाब दिया — "ठीक है, बशर्ते हमारे पक्षके लोग इसे मान ले।" यहाँ अपने दलके प्रति उनकी निष्ठापर गौर कीजिए। अपने पक्षके लोगोका समाधान किये बिना वे रह नही सकते थे। यही एक रहस्य है, लोगोके हृदयोपर उनके आश्चर्यजनक अधिकारका। वह योजना सब लोगोको पसन्द आई। लोक-

मान्य अपनी गरुडके सदृश् तेज नजरसे वहाँ जो-कुछ हो रहा था, सब देख रहे थे। व्याख्यान-मचसे पण्डित मालवीयजीकी गगाके सदृश वाग्धारा बह रही थी — उनकी एक आँख सभामचपर लगी थी, जहाँ हम साधारण लोग बैठे हुए राष्ट्रके भाग्यका निर्णय कर रहे थे। लोकमान्यने कहा — "मेरे देखनेकी जरूरत नही। यदि दासने उसे पसन्द कर लिया है तो मेरे लिए वह काफी होगा।" मालवीयजीने उसे वहाँसे सुना, कागज मेरे हाथसे छीन लिया और तीव्र करतलध्वनिके बीच घोषित कर दिया कि समझौता हो गया है। मैंने इस घटनाका सविस्तार वर्णन इसलिए किया है कि इसमे देशबन्धुकी महत्ता, उनके निर्विवाद नेतृत्व, उनकी कार्यविषयक दृढता, निर्णय सम्बन्धी समझदारी, दलके प्रति वफादारी इत्यादिके कारणोका निचोड आ जाता है।

अब और आगे बढिए। अब हम जुहू, अहमदाबाद, दिल्ली और दार्जिलिंगकी बात उठाते हैं। जुहूमें वे और पण्डित मोतीलालजी मुझे अपने पक्षमे मिलानेके लिए आये। वे दोनो जुडवाँ भाई-जैसे हो गये थे। हमारे दृष्टिकोण जुदा-जुदा तो थे ही। पर उन्हे यह गवारा न था कि मेरे साथ मतभेद रहे। यदि उनके बसकी बात होती तो जहाँ मैं २५ मील चाहता वे ५० मील चले जाते। परन्तु जहाँ देशहितका प्रश्न था, वे एक अत्यन्त प्रिय मित्रके सामने भी एक इचतक झुकना नही चाहते थे, हमने एक किस्मका समझौता कर लिया। हमारा मन तो न भरा, पर हम निराश भी न हुए। बात यह थी कि हम एक-दूसरेपर विजय प्राप्त करनेपर तुले हुए थे। बादको हम अहमदाबादमे मिले। देशबन्धु अपने पूरे रगमे थे और परिस्थितियोका अवलोकन एक चतुर खिलाडीकी तरह कर रहे थे। उन्होने मुझे शानदार शिकस्त दी।[1] उनके जैसे मित्रके हाथो ऐसी कितनी शिकस्ते मै न खाऊँगा? — पर अफसोस! वह शरीर अब दुनियामे नही है। कोई यह खयाल न करे कि साहावाले प्रस्तावके[2] कारण हम एक-दूसरेके शत्रु बन गये थे। हम एक-दूसरेको गलतीपर जरूर समझते थे, पर वह मतभेद स्नेहियोके बीचका मतभेद था। वफादार पति और पत्नी अपने पवित्र मतभेदोके दृश्योकी याद करे — किस तरह वे अपने मतभेदोके कारण कष्ट सहते है, ताकि उनके पुनर्मिलनका सुख द्विगुणित हो जाये। हमारी हालत यही थी। सोचता था, हमे फिर दिल्लीमे उस शिष्ट किन्तु दुर्दान्त पण्डितसे और विनम्र स्वभाववाले दाससे, जिसका बाहरी रूप सरसरी तौरपर देखनेवालेको रूक्ष मालूम हो सकता है, मिलना होगा। समझौतेका खाका वहाँ तैयार हुआ और पसन्द भी किया गया। वह एक अटूट प्रेमबन्धन था, जिसपर कि अब एक पक्षने अपनी मृत्युके रूपमे अन्तिम मुहर लगा दी है।

अब मैं फिलहाल दार्जिलिंगका जिक्र छोड़ता हूँ। वे आध्यात्मिक होनेका दावा भी करते थे और कहते थे कि धर्मके विषयमे मुझसे उनका कोई मतभेद नही है। पर यद्यपि उन्होने कहा नही, तथापि उनका भाव यह रहा होगा कि मै इतना रसहीन हूँ कि मुझे हमारे विश्वासोकी एकरूपता नही दिखाई देती। मै मानता हूँ कि उनका

१. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ ३४२-४९।
२. देखिए खण्ड २४, पृष्ठ २७२-७६।

खयाल ठीक था। उन बहुमूल्य पाँच दिनोंमें मैंने उनके प्रत्येक कार्यमें गहरी धर्म-भावना देखी। वे न केवल महान् थे, बल्कि नेक भी थे, उनकी नेकी उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। पर इन पाँच दिनोंके अनमोल अनुभवोंको मुझे किसी अगले दिनके लिए रख छोड़ना चाहिए। क्रूर दैवने जब लोकमान्यको हमसे छीना था, तब मैं अकेला और असहाय रह गया था। मेरी वह चोट अभीतक नहीं भर पाई है—क्योंकि मैं आज भी उनके प्रिय शिष्योंकी कृपाका आकांक्षी हूँ। पर देशबन्धुके वियोगने तो मुझे और भी शोचनीय अवस्थामें छोड़ दिया है। जब लोकमान्य हमसे जुदा हुए थे तब देश आशा [और उमंग]से भरा हुआ था, हिन्दू और मुसलमान हमेशाके लिए एक होते हुए दिखाई दे रहे थे, हम युद्धका शंख फूँकनेकी तैयारीमें थे। पर अब?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१६६. संरक्षणकी आवश्यकता

देखा तो यही गया है कि आजतक कोई भी बड़ा धन्धा संरक्षण या सहायताके बिना नहीं चल सका है। सहायता तीन प्रकारसे मिल सकती है। राज्यसे, समाजसे अथवा किसी व्यक्तिसे। धनी लोग जब स्वयं रुपया कमानेकी इच्छासे किसी भी नये धन्धेमें अपनी पूँजी लगाते हैं तो वे प्रारम्भमें ही मुनाफा मिलनेकी आशा नहीं रखते। इसी तरह समाजके लाभके लिए आरम्भ किए जानेवाले धन्धेमें समाजको पहले आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। जहाँ राज्यतन्त्र सुव्यवस्थित और लोकोपयोगी होता है वहाँ राज्य धन्धोंकी सँभाल आर्थिक सहायता देकर करता है।

खादीका कार्य किसी एक व्यक्तिके लाभका कार्य नहीं है, इसलिए उसको कोई एक व्यक्ति संरक्षण नहीं दे सकता। यदि उसे एक व्यक्ति संरक्षण दे भी तो वह एक निश्चित सीमासे आगे व्यर्थ सिद्ध होगा, क्योंकि खादी-प्रचार केवल धनसे ही नहीं किया जा सकता। यदि हमें ऐसे व्यापक हितके कार्यमें राज्यकी उत्साहपूर्ण और पर्याप्त सहायता मिल सके तो फिर कमी ही क्या रहे? वह तो राज्यका हृदय-परिवर्तन माना जाएगा और हम उससे प्रेमपूर्वक सहयोग करेंगे।

बाकी रही सामाजिक सहायता। इस सहायताके अभावमें जल्दी ही खादीका व्यापक प्रचार नहीं हो सकता। हम अभी तीन प्रकारसे सहायता ले रहे हैं और उसमें हमारा उद्देश्य खादीको सस्ता और अच्छा बनाना है।

सबसे पहले तो हम धनिक वर्गसे धनकी सहायताके बलपर खादीके दाम कुछ कम करते हैं। दूसरे हम कताई-सदस्यताकी मारफत सहायता लेते हैं। मताधिकारमें कताई-को सम्मिलित करनेके उद्देश्योंमें से एक मुख्य उद्देश्य यह है कि लोग सूत कातनेमें अपना आधा घंटेका श्रम मुफ्त देकर खादीके दाम सस्ता करने और खादीको अच्छा बनाने-में सहायता दें। तीसरी सहायता खादी-शास्त्रके ज्ञाताओंकी संख्या बढ़ानेके रूपमें है।

तीनों प्रकारकी सहायताको प्राप्त करनेका काम साथ-साथ चलता है। मैंने अपनी यात्रामे यह देखा है कि लोगोमे खादीप्रेम तो बहुत है अथवा यह कहना चाहिए कि लोग खादी पहननेके लिए तो तैयार है; किन्तु वे खादी तलाश करनेका कष्ट उठानेके लिए अथवा विदेशी कपड़ेसे खादीका ज्यादा दाम देनेके लिए तैयार नही है। इस प्रकार अब हम इस स्थितितक पहुँच चुके है कि यदि हम सस्ती खादी तैयार कर सकें अथवा उसे सस्ती बेच सके तो लोग उसका उपयोग करेगे।

हमें धनी लोगोंकी सहायता पर्याप्त नहीं मिली है। मताधिकारमे सूत कातना शामिल तो कर लिया गया है; किन्तु अभी लोगोंने उसे इतना नही अपनाया है कि उस मताधिकारके अनुसार तैयार सूतका असर खादीके भावपर पड़ सके। इस प्रकार यदि समाज भारत-माताके लिए इतना भी करनेके लिए तैयार नही होता तो हम खादीका प्रचार जितना करना चाहते है उतना कैसे कर सकते है? इसके अतिरिक्त जबतक चरखा-शास्त्रमें प्रवीण कार्यकर्त्ता बहुत बडी सख्यामे नही मिलते तबतक सूत और खादीकी किस्म नही सुधारी जा सकती। ऊपर जो तीन काम बताए गए है वे ऐसे है कि उनको मध्यमवर्गके लोग अर्थात् थोडेसे लोग ही पूरा कर डाल सकते है। यदि ये काम हो जाएँ तो लोग तुरन्त खादी पहनने लग जाएँ। इसलिए इस दोष या त्रुटिके लिए मध्यमवर्ग जिम्मेदार है। यदि मध्यमवर्ग — शिक्षितवर्ग — खादीकी उपयोगिता समझ ले तो फिर खादीको व्यापक बनानेमे कोई अड़चन नही आ सकती; तब हम खादीके दाम जितने चाहे उतने कम कर सकेगे।

यदि हमारे पास पर्याप्त सख्यामे चरखा-शास्त्रके जानकार हो तो हम जितना और जैसा सूत अब प्राप्त कर पाते है उतने ही समयमे उसकी अपेक्षा परिमाणमे कमसे-कम दुगुना या ड्योढा और अधिक अच्छे किस्मका सूत प्राप्त कर लेगे। हम चरखा-शास्त्रियोके अभावमे जैसे-तैसे चरखे चलाते रहते है और चाहे जैसा सूत स्वीकार कर लेते है। चरखा-शास्त्री चरखोके दोष दूर कर सकेगे और फलस्वरूप अधिक सूत काता जा सकेगा तथा सूतके दोष भी दूर होगे। ऐसा करनेपर खादीकी बुनाई भी अपेक्षाकृत सस्ती पडेगी। हाथ-कता सूत कच्चा-पक्का हो तो उसे बुननेमें देर लगती है; इसलिए मिलके सूतकी अपेक्षा उसकी बुनाई महँगी पडती है। दुर्भाग्यसे हमारे पास देश-भरमें गिने-चुने चरखा-शास्त्री है। हमने जितनी कम तैयारीसे चरखेके प्रचारका काम शुरू किया है उतनी कम तैयारीसे किसी दूसरी प्रवृत्तिमे काम चल ही नही सकता था। कम तैयारी होनेपर भी हमने चरखा प्रचारमे जो प्रगति की है उससे यह मालूम पडता है कि चरखा और खद्दरकी महिमा कितनी है और वे देशके लिए कितने आवश्यक है। मेरा दृढ मत है कि भारतमे जो अनेक प्रवृत्तियाँ चल रही है, उनमे खादीकी प्रवृत्ति सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। देशमे खादीके सिवा कोई दूसरी ऐसी व्यापक लोकोपकारी प्रवृत्ति नही है, जिसमे पिछले चार वर्षोंमे लोगोके हाथोमे इतना पैसा गया हो अथवा जिसमे इतने लोग दिन-रात व्यस्त रहे हो अथवा जिसमें आज इतने लोग ईमानदारीसे अपनी आजीविका कमा रहे हो या बिना कुछ लिए काम कर रहे हो। इस सबमे दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जाती है। इस प्रकारकी

शुभ और अल्प प्रयाससे फल देनेवाली प्रवृत्तिको यदि समुचित रूपसे उक्त तीनो प्रकारका संरक्षण मिले तो मेरा निश्चित मत है कि भारत कुछ समयमे ही खादीमय हो जाएगा। मेरी प्रार्थना है कि धनी इसमे धन दे, हिन्दू, मुसलमान, पारसी और ईसाई, स्त्री-पुरुष सब इसमे कमसे-कम आधे घटेका श्रम दे और खादीप्रेमी इसके विशेषज्ञ बनकर इसे अपने ज्ञानका लाभ दे। इसके फलस्वरूप हिन्दुस्तान खादीमय बनेगा, हिन्दुस्तानका साठ करोड रुपया बाहर जानेसे रुकेगा, वह गरीबोमे बँटेगा और उससे हिन्दुस्तानके लोगोमे अपनी शक्तिके सम्बन्धमे आत्मविश्वास उत्पन्न होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-६-१९२५

१६७. पावककी ज्वाला

प्रीतमके गीतकी पक्ति है कि "प्रेमपथ पावककी ज्वाला है, लोग इसे देखकर पीछे भागते है"।[1] अस्पृश्यका स्पर्श करना, तिरस्कृतका सत्कार करना प्रेमपथ है। उसमे बहुतसे सकट आते है। बाप त्याग दे, माँ घरसे निकाल दे, समाज बहिष्कृत कर दे और पुजारी देखते ही मन्दिरके द्वार बन्द कर दे, किन्तु जो प्रेम फिर भी बना रहे वही सच्चा प्रेम है।

काठियावाड-जैसे छोटेसे प्रदेशमे अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनसे वैष्णव जगतमे खलबली मच गई है। जिन्होने अस्पृश्यताको भ्रष्ट प्रथा मानकर त्याग दिया है, उनके लिए वैष्णव मन्दिरोके द्वार बन्द किए जाने लगे है। ऐसे लोग मन्दिरोके बिना कैसे काम चला सकेगे? उन्हे क्या करना चाहिए? उत्तर एक ही हो सकता है: उन लोगोको मन्दिरमे जाए बिना ही काम चलाना चाहिए। मूर्तिकी प्रतिष्ठा करनेवाले तो आखिर हम ही है। जिस मूर्तिके आसपास अधर्म फैलता है उससे तो हमें लाभके बजाय हानि ही होगी। अन्तिम मन्दिर तो हृदय ही है। मन्दिरकी भित्तियाँ तो लगडेकी लकडी-जैसी है। वे तो सहारा-मात्र है। जब यह लकडी सहारा न रहकर बोझ बन जाए तब उसे फेक देना चाहिए। इस वैष्णव मन्दिरके द्वार बन्द हो सकते है, किन्तु हृदयरूपी मन्दिरके द्वार तो चौबीसो घटे खुले रहते है। उसमे बैठा हुआ अन्तर्यामी भगवान हमारी रक्षा निरन्तर करता ही रहता है। जो प्रेमपथपर चलते है उन्हे इस मदिरमे विराजमान भगवानके दर्शन करके कृतार्थ होना चाहिए।

किन्तु वैष्णव मन्दिर तो सार्वजनिक सस्था है। यदि हम उसमे प्रवेश-निषेधकी आज्ञाको न माने तो? अनुचित प्रतिबन्धको माननेकी क्या जरूरत है? इस प्रकारके तर्क उठाना कि क्या इस प्रतिबन्धको मानना पाप न होगा, अनुचित है। ऐसे अवसरकी कल्पना की जा सकती है जब किसी प्रतिबन्धको माननेमें पाप हो, किन्तु मुझे मन्दिरमे प्रवेश सम्बन्धी प्रतिबन्ध ऐसा नही लगता। जिसे यह प्रतिबन्ध ऐसा लगे वह तो चाहे कितना ही कष्ट क्यो न उठाना पडे, वहाँ प्रवेश करेगा ही। ऐसे मामलोमे

१. "प्रेम पन्थ पावकनी ज्वाळा, भाळी पाछा भागे जो ने।"

सबके लिए कोई एक नियम नही होता। सामान्य नियम तो यह होना चाहिए कि यदि दो-चार मनुष्य अस्पृश्यताको पाप मानते हो, किन्तु दूसरे सैकडो लोग उसे धर्म मानते हो तो वहाँ उन दो-चार लोगोको धीरज रखना चाहिए और प्रतिबन्धका पालन करना चाहिए। उन्हे लोकमत प्रशिक्षित करना चाहिए। उन्हे पुजारीसे विनयपूर्वक मिलना चाहिए, जातिके पचोको समझाना चाहिए और जबतक उनमे से अधिकतर लोग समझ न जाएँ तबतक स्वय उस प्रतिबन्धको मानना चाहिए, यही अभीष्ट है। यदि लोकमत प्रतिबन्धके विरुद्ध हो तो प्रतिबन्ध लगानेवाले लोगोको विनयपूर्वक सूचना देकर प्रतिबन्ध तोडा जा सकता है।

मै पुजारियोको विनयपूर्वक समझाना चाहता हूँ कि यदि वे धर्मके रक्षक बनना और बने रहना चाहते हो तो उनको सावधान हो जाना चाहिए। यदि वे ईश्वरीय नियमोके विरुद्ध अन्धविश्वास और अधर्मकी दीवारे खडी करनेका आग्रह करेगे तो वे टिक नही सकेगे। मै मानता हूँ कि वल्लभ सम्प्रदायका, कितना ही तुच्छ सही, अनुयायी होनेके नाते मुझे इतना कहनेका तो अधिकार है ही। उनकी वश-परम्परासे चली आती हुई गद्दी अब खतरेमे है। मै चाहता हूँ कि वे अस्पृश्यताको अपनाकर स्वय अस्पृश्य न बने। समाजमे आज जिस अस्पृश्यताका पालन किया जा रहा है वह न तो 'भागवत' मे मिलती है और न 'गीता' मे। वह 'वेदो' और 'उपनिपदो' मे भी नही है। और तो और, उसका पालन तो व्यवहारमे भी नही किया जाता। वैष्णव अपने कामसे जब जरूरत होती है तब अस्पृश्य माने जानेवाले लोगोका जान-बूझकर स्पर्श करते है। कानूनमे भी अस्पृश्यताको कोई स्थान नही है। जब वैष्णव अदालतोमे जाते है या कारखानोमे जाते है तब वे अस्पृश्योको छू लेते है, उसके बाद बिना स्नान किए भोजन कर लेते है और मन्दिरमे चले जाते है। इस प्रकारकी जो अस्पृश्यता व्यवहारमे शून्यवत् ही है, उसे केवल अस्पृश्य माने जानेवाले भाइयो और बहनोको सतानेकी खातिर, उनका तिरस्कार करनेके लिए माननेमे विवेक, दीर्घदृष्टि, ज्ञान और मर्यादा कुछ भी नही है। मै अपने-आपको वैष्णव कहता हूँ, क्योकि मै यह मानता हूँ कि वैष्णव धर्ममे इन सब गुणोके लिए स्थान है। वैष्णव धर्मकी उत्पत्ति ही दया, ज्ञान और पतितोको भी पुनीत करनेकी भावनासे हुई है, ऐसी मेरी मान्यता है। मै बगालमे यही देख रहा हूँ। जो कार्य वल्लभाचार्यने पश्चिममे किया है, वही चैतन्यने पूर्वमे किया है। बगालमे चैतन्यने अस्पृश्य माने जानेवाले लाखो लोगोका उद्धार किया। उन्होने अस्पृश्यताकी जड ही हिला दी थी, इसलिए आज बगालमे अस्पृश्यता बहुत कम है। स्पर्श करनेसे अपवित्र हो जाते है, ऐसा तो कोई वहाँ मानता ही नही। बगालमे अस्पृश्यता केवल इतनी ही है कि "अस्पृश्य" के हाथसे जल ग्रहण न किया जाए और नाई और धोबी उसकी सेवा न करे। अब यह मिथ्या धारणा भी वहाँ बहुत क्षीण हो गई है। आज वहाँ कितने ही अस्पृश्य वकील और डाक्टर है। उनमे ज्ञानवृद्धि होती जा रही है। बगालमे ढेढ़वाड़ा-जैसी जगह तो शायद ही कही हो।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २१-६-१९२५

१६८. अपील : देशबन्धु स्मारकके लिए

कलकत्ता
२२ जून, १९२५

जनताको शायद मालूम होगा कि स्वर्गीय देशबन्धु चित्तरंजन दासने रसा रोडपर चार बीघेसे कुछ अधिक भूमिपर स्थित अपना विशाल बंगला अपने जीवनकालमें ही विभिन्न सार्वजनिक कार्योंके लिए दान कर दिया था और उसका एक ट्रस्ट बना दिया था। ट्रस्टियोंने हमको सूचित किया है कि उस सम्पत्तिका वर्तमान मूल्य ३,२५,००० रू० आँका गया है और उसपर २,२०,००० रुपयेका कर्ज है। इसलिए वास्तवमें दान लगभग १,०५,००० रुपयेका हुआ।

हम लोगोंको, जिनके हस्ताक्षर नीचे दिये गये हैं, पूर्ण विश्वास है कि बंगालके लोग इस दिवंगत देशभक्तके योग्य एक स्मारक अवश्य बनाना चाहेंगे। १८ तारीखको कलकत्तामें जो अभूतपूर्व शोकप्रदर्शन हुआ और दिवंगत आत्माको श्रद्धांजलि देनेके लिए देश-भरमें जो सभाएँ हुईं उनसे भी इस बातका स्पष्ट प्रमाण मिला है। हमारा खयाल है कि उल्लिखित ट्रस्ट बनानेमें देशबन्धुका मुख्य हेतु बंगालकी महिलाओंका उत्थान था और उसमें हम लोगोंका सहायक होना ही उनके उद्देश्यको फलीभूत करनेका सर्वोत्तम मार्ग है। हमारी समझमें देशबन्धुकी अभिलाषा पूरी करनेका अच्छेसे-अच्छा तरीका यही होगा कि महिलाओंके लिए एक ऐसा अस्पताल बनाया जाये जिसमें जातिगत या धर्मगत कोई भेदभाव न किया जाये और साथ ही नर्सोंके प्रशिक्षणके लिए भी एक संस्था खोली जाये।

अनुमान है कि इसके लिए दस लाख रुपयेसे कमकी राशिसे काम नहीं चलेगा। हम समझते हैं कि दिवंगत देशबन्धुके स्मारकके लिए दस लाख रुपयेकी राशि किसी भी अर्थमें कोई बहुत बड़ी राशि नहीं है। इसीलिए हम बंगालकी जनतासे इतनी राशिके लिए अपील करते हैं। हमारी इच्छा है कि इस स्मारकको दलगत विचारोंसे अलग रखा जाये, जिससे कि देशबन्धुकी महत्ता समझनेवाले सभी लोग इसमें योगदान कर सकें, फिर चाहे देशबन्धुके राजनीतिक विचारोंसे वे सहमत न भी रहे हों। वर्तमान ट्रस्टियोंके नाम ये हैं :

डा० विधानचन्द्र राय
श्रीयुत निर्मलचन्द्र चन्द्र
श्रीयुत तुलसीचन्द्र गोस्वामी
कुमार सत्यमोहन घोषाल
श्री नलिनीरंजन सरकार

इन व्यक्तियोंने इस ट्रस्टको निर्दलीय रूप देनेके लिए इसमें शामिल होनेकी सहमति दे दी है और विशेषाधिकारके बलपर उन्होंने ट्रस्टियोंके रूपमें दो और सज्जनों

—डा० सर नीलरतन सरकार और श्रीयुत सतीशरजन दास—को शामिल करनेका फैसला किया है।

७, हैरिंगटन स्ट्रीटके सर राजेन्द्र मुखर्जीने कोषाध्यक्षके रूपमे काम करनेके लिए स्वीकृति देनेकी कृपा की है।

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, २३-६-१९२५

१६९. अपील : अखिल बंग देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए

कलकत्ता
२२ जून, १९२५

मुझे विश्वास है कि जो अपील लॉर्ड सिन्हा तथा अन्य व्यक्तियोके हस्ताक्षरोके साथ अखिल बग स्मारक कोषके सम्बन्धमे प्रकाशित की गई है उसकी ओर बगालकी जनता शीघ्र ध्यान देगी और उसमे उत्साहपूर्वक अपना योगदान करेगी। आशा है कि दस लाख रुपयोकी राशि तो सभी बगाली लोगोसे तथा उन लोगोसे जो बगालमे बस गये है और जो बगालमे अपनी जीविका उपार्जित कर रहे है या धन कमा रहे है, प्राप्त हो जायेगी। मेरी अपील खासकर बगालके नवयुवकोसे है, क्योकि सम्भवत. अन्य वर्गोकी अपेक्षा बगालका नवयुवक वर्ग देशबन्धुका अधिक ऋणी है। यो तो दस लाख रुपये दस करोड़पतियोसे ही प्राप्त हो सकते है, परन्तु वाछित यही है कि यह रकम विशेषत. गरीब तबकेके लोगोसे, जो दो-चार पैसे देनेमे भी समर्थ हो, एकत्र की जाये। गत १८ तारीखको देशबन्धुकी शवयात्रामे जो लाखो व्यक्ति शरीक हुए थे, वे इस कोषकी पूर्तिके लिए अपना समुचित योगदान दे सकते है और उन्हे देना भी चाहिए।

याद रहे कि जो दस लाख रुपये मॉगे गये है, आवश्यकताको देखते हुए वे कमसे-कम ही है, अधिकसे-अधिक कदापि नही। श्री देशबन्धुकी मिल्कियतपर जो दो लाख बीस हजारका कर्ज है उसे अदा करनेके उपरान्त सात लाख अस्सी हजार रुपये ही बच रहेगे—यह रकम एक अस्पतालके खोलने और नर्सोंकी प्रशिक्षण सस्थाके लिए कोई बडी रकम नही है।

क्या यह लक्ष्य सामने रखना उचित न होगा कि इस पूरे कोषका एकत्रीकरण पहली जुलाईसे पूर्व समाप्त हो जाये। समय कम है—यह मै मानता हूँ, परन्तु यदि सभी केन्द्र तत्काल ही सगठित हो जाये और ठीक ढगसे चन्दा इकट्ठा करना शुरू कर दे तो इस रकमको एकत्र कर लेना बगालके सामर्थ्यके बाहरकी बात नही है। मुझे कोष इकट्ठा करनेका थोड़ा-बहुत अभ्यास है। इसी नाते मै जनतासे यह कहना चाहता हूँ कि लोग चन्दा उन्हीको दे जिनसे वे परिचित हो या जिनपर उनका

भरोसा हो — अन्योको नही। यदि इन्ही आठ दिनोमें कोष एकत्र कर लेना है तो एक क्षण भी जाया नही होने देना चाहिए और यह तभी सम्भव है जब —

१ वे सबके-सब जो चन्दा देनेकी स्थितिमे हो, स्वय दे और दूसरोको ऐसा करनेके लिए प्रोत्साहित करे;

२ यदि चन्दा देनेकी तिथि टालनेके बजाय सभी लोग अभी दे डाले,

३ यदि सब लोग अपने सामर्थ्यके अनुसार अधिकसे-अधिक दे,

४. यदि मुफस्सिल केन्द्र इस कार्यको तत्काल ही हाथमे ले ले।

जनताको याद रखना चाहिए कि

१ यह स्मारक अखिल बगाल स्मारक है — किसी विशेष जाति, धर्म, वर्ण, या दलसे सम्बन्धित नही,

२ इसका आयोजन भारतके एक सर्वश्रेष्ठ व्यक्तिकी यादगारको हमेशाके लिए बनाये रखनेके उद्देश्यसे किया गया है;

३. इसका उद्देश्य मानवीय सेवाओके अतिरिक्त और कुछ नही है;

मुझे यह भी मालूम है कि कलकत्तेमे एक ऐसे गैरसरकारी अस्पतालकी जरूरत है जिसमे केवल स्त्रियोका इलाज हुआ करे और जिसमे नर्सोको प्रशिक्षण मिला करे।

मुझे अब यह कहनेकी जरूरत नही रह गई है कि दानदाताओके द्वारा प्रदत्त रकमोका उचित उपयोग होगा, इसकी गारटी न्यासियोके नामोपर से ही हो जाती है।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २४-६-१९२५

१७०. पत्र : देवचन्द पारेखको

आषाढ सुदी १ [२२ जून, १९२५][1]

भाईश्री ५ देवचन्दभाई,

राजाओसे पैसेकी सहायता लेनेकी बात मै समझता हूँ। किन्तु सारा काम उनके अमलदारोके मार्फत करवानेमे सकोच होता है। फिर भी जब आप सब इकट्ठे होकर विचार करेगे तब मै अधिक ठीक निश्चय कर सकूँगा। हमे यह सोचना है कि हर साल खर्चमे कमी कैसे करते जा सकते है और कैसे लोगोको स्वावलम्बी बनाया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६२०५) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य नारणदास गाधी

१. डाककी मुहरमें कलकत्ता, २३ जून, १९२५ है। आषाढ सुदी पड़वा २२ जून की थी।

१७१. पत्र : वसुमती पण्डितको

आषाढ सुदी १ [२२ जून, १९२५][1]

चि० वसुमती,

मुझे 'तुम्हारे दोनो पत्र लगभग साथ-साथ मिले। अभी तो मुझे एक मास कलकत्तामे ही रहना होगा। तब फिर भ्रमण आरम्भ करूँगा। मैं चाहता हूँ कि तुम अपना मन पक्का कर लो और रहनेकी जगह भी स्थिर कर लो। तुममे कार्य करनेकी योग्यता है या नही, यह देखना तो मेरा काम है न? किन्तु यह तो पीछे सोचेगे। मै यद्यपि इस समय एक जगह टिका हुआ हूँ, किन्तु फिर भी काममे बहुत अधिक व्यस्त हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ४६४) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

१७२. पत्र : नारणदास गांधीको

आषाढ सुदी १ [२२ जून, १९२५][2]

चि० नारणदास,

सब शाखाओके कार्य-विवरण सम्बन्धी पत्र मिल गया है। जान पडता है देवचन्द भाईने दूसरोपर अधिक भरोसा किया है। जहाँ हिसाब बहुत ठीक-ठीक न रखा जायेगा, वहाँ हमे पछताना होगा। मैंने . . . को[3] लिखा है कि वे जिन बहियोको खानगी मानते है वह भी उन्हे दिखा देनी चाहिए। तुमने सभी शाखाओके विवरण भेजे है। उनमे से ऐसा सक्षिप्त विवरण तैयार करके प्रकाशित करनेके लिए भेजना जिसे पढ़नेमे लोगोको रस आये और जानकारी भी मिले।

इस प्रवृत्तिमे लगे हुए कितने लोग अपना खर्च स्वय उठाते है, कितने कम वेतन लेकर काम करते हैं, कितने बाजार दरसे पारिश्रमिक लेकर काम करते है और सबको कुल मिलाकर कितना रुपया दिया जाता है, यह भी उस सक्षिप्त विवरणमे लिखना। यह बात भी उसमे अवश्य हो कि कुल कितने चरखे चलते है। जमनादासको क्या हो गया था? खुशालभाई और देवभाभीको मेरा दण्डवत्।

बापूके आशीर्वाद

१ व २. डाककी मुहरमें कलकत्ता २३ जून, १९२५ है। १९२५ में आषाढ़ सुदी पड़वा २२ जून को थी।
३. यहाँ साधनसूत्रमें ही स्थान खाली है।

[पुनश्च :]

अभी मैं यहाँ कलकत्तामें ही रहूँगा।

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१९३) से।

सौजन्य : नारणदास गांधी

१७३. प्राप्त चन्देकी स्वीकृति

कलकत्ता
२३ जून, १९२५

मुझे जनताकी जानकारीके लिए यह घोषित करते प्रसन्नता हो रही है कि चन्देकी ये राशियाँ सर राजेन्द्र मुखर्जीके[1] हवालेकी जा चुकी हैं

	रुपये
एन० एन० सरकार	१०,०००
एस० आर० दास	५,०००
राय ए० एन० बोस	१,०००
सी० सी० ला	१,०००
एस०	१,०००
के०	१,०००
ए०	१,०००
सुप्रभा देवी	१००
गुप्त दान	१०
मौलवी अब्दुल हकीम	१००
	कुल २०,२१०

मेरे पास एक हजार रुपयेका एक चेक और सोनेकी एक अँगूठी भी सर मुखर्जीको देनेके लिए रखी हुई है। मैं जानता हूँ कि सर मुखर्जीके पास कुछ छोटी-मोटी रकमें भी भेजी गई हैं।

इस प्रकार आरम्भ काफी अच्छा हुआ है।

पहली जुलाईसे पहले दस लाख रुपये इकट्ठे करनेका मतलब हुआ रोजाना सवा लाख रुपये इकट्ठा करना। यह औसत तभी कायम रह सकेगा जब प्रत्येक कार्यकर्त्ता मुस्तैदीके साथ जुट जाये। इसलिए मुझे उम्मीद है कि कोई भी कार्यकर्त्ता

१. अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक कोषके कोषाध्यक्ष।

इसका इन्तजार नही करेगा कि उससे कहा जाये, बल्कि वह स्वय ही अपने मित्रोसे चन्दा माँगना शुरू कर देगा।

लोग जिस उत्साहसे १८ तारीखकी सभामे शामिल हुए थे, चन्दा देनेके मामलेमे भी उन्हे स्वेच्छापूर्वक उसी उत्साहसे आगे आना चाहिए। मुझे आज रात म्युनिसिपल मार्केटकी सभामे शरीक होनेके लिए बुलाया गया था। काफी बडी सभा थी। मै तो स्मारकके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके ही उद्देश्यसे वहाँ गया था। लेकिन वह सभा इतनी विशाल थी और उसे नियन्त्रित रखना इतना कठिन था कि वहाँ चन्दा इकट्ठा करना मुश्किल था। यदि कोष एकत्रित करनेकी अवधिमे सभाओका आयोजन करनेवाले लोग मुझे ऐसी एक भी सभामे न बुलाये जहाँ चन्दा इकट्ठा न किया जा सकता हो तो वह मेरे ऊपर अनुग्रह ही होगा।

कलकत्ताके आसपासके गाँवोसे हम काफी उम्मीद रख सकते है। विभिन्न जिलोके प्रमुख व्यक्तियोके पास तार भेजे जा चुके है। मुझे भरोसा है कि वे सब पहली जुलाईसे पहले ही चन्दा इकट्ठा करके कोषाध्यक्षके पास भेज देगे।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २४-६-१९२५

१७४. भेंट : 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिसे

[२४ जून, १९२५ से पूर्व]

कलकत्तेमें गांधीजीने 'स्टेट्समैन' के एक प्रतिनिधिसे की गई भेंटके दौरान कहा :

मै यहाँ तबतक ही रहूँगा जबतक मुझे ऐसा लगेगा कि यहाँ मेरी उपस्थिति अपेक्षित है या फिर जबतक श्री दासके विश्वस्त साथी-सहयोगी मुझे यहाँ रखना चाहेगे। मैने बिना किसी शर्तके अपनी सेवाएँ उनको अर्पित कर दी है।

मै पहले ही इस आशयका सुझाव दे चुका हूँ कि पहली जुलाईको सारे भारतमे श्रद्धाजलि-सभाएँ की जानी चाहिए। मै आशा करता हूँ कि भारतके प्रत्येक बड़े केन्द्रमे सभी मतोका प्रतिनिधित्व करनेवाले लोग इनमे शामिल होगे। मै कमसे-कम उक्त तारीखतक तो शायद यही रहूँगा।

भविष्यके सम्बन्धमें राय पूछी जानेपर श्री गांधीने कहा :

एक सासारिक व्यक्तिकी हैसियतसे मेरे लिए यह कह सकना बहुत कठिन है कि भविष्य क्या होगा, लेकिन एक आस्थावान व्यक्तिके नाते मै कह सकता हूँ कि श्री दासमे जिन सद्‌गुणोको देखनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, वे लाभप्रद सिद्ध होगे और उनका परिणाम अच्छा ही निकलेगा। यह लाभ किस रूपमे प्रतिफलित होगा सो मै नही जानता।

उन्होंने पहले जो यह सुझाव दिया था कि श्री दासको अर्पित की जानेवाली श्रद्धांजलियोंका परिणाम सभी दलोंकी एकता-स्थापनाके रूपमें प्रतिफलित होना चाहिए; उसका उल्लेख करते हुए श्री गांधीने कहा :

यदि एकता स्थापित की जा सकती है, औपचारिक नही वास्तविक एकता, तो फिर कोई मॉग उस सयुक्त दल द्वारा ही एक निश्चित रूपमे सामने रखी जानी चाहिए। व्यक्तिगत रूपसे मेरा यह बताना कि वह मॉग क्या होनी चाहिए, निरर्थक होगा; लेकिन मै यह जरूर कहता हूँ कि मेरी दिली ख्वाहिश चाहे कुछ भी हो, बहुमत जो चाहेगा उसके रास्तेमे मै रुकावट नही डालूँगा।

श्री गांधीसे पूछा गया, 'आपकी स्वराज्यकी क्या परिभाषा है?'

स्वराज्यकी मेरी अपनी परिभाषा है — तत्कालीन जनताके प्रतिनिधियो द्वारा व्यक्त भारतीय जनताकी इच्छा। स्वराज्यकी कोई बिलकुल ऐसी नपी-तुली परिभाषा हो ही नही सकती, जैसी कि ज्यामितिमे सीधी रेखाकी होती है। विभिन्न परिस्थिति-योके फलस्वरूप जनताकी मनोवृत्तिमे होनेवाले परिवर्तनोके साथ-साथ जनताकी इच्छा-का आग्रह भी बदलता रहता है। इसलिए स्वराज्यकी तात्कालिक परिभाषा है 'औप-निवेशिक स्वराज्य।'

श्री गांधीसे पूछा गया कि क्या आप अडंगा-नीतिका परित्याग करनेकी सलाह देंगे, विशेष रूपसे बंगालके सन्दर्भमें।

यदि बंगाल कौंसिलकी आगामी बैठकमें मन्त्रिमण्डल बनानेकी इच्छा स्पष्ट रूपसे प्रकट की गई तो क्या आप कौंसिलको एक स्वरसे उसका विरोध करनेकी सलाह देंगे? गांधीजीने मुस्कराकर उत्तर दिया :

मै इस प्रश्नका उत्तर न देना ज्यादा पसन्द करूँगा। मै चाहूँगा कि बंगाल निराश न हो, विश्वास न खो बैठे, क्योकि ऐसा करना उस महान् दिवगत नेताके प्रति विश्वासघात करना होगा। मै जानता हूँ कि बहुधा जब विश्वासका कोई समु-चित कारण भी नही होता तब भी मै विश्वास बनाये रखता हूँ और फिर मेरा विश्वास बादमे घटनाओसे सही भी सिद्ध हो जाता है।

बगालके पास कल्पनाशक्ति प्रचुर मात्रामे है और उसकी सहनशक्ति भी अपार है। यह बात मै अपने दौरेके समय देख चुका हूँ। मै बगालियोसे कहूँगा कि यदि वे अपनेमे इन गुणोके साथ अक्षुण्ण विश्वास भी रखे तो सब ठीक हो जायेगा।

श्री गांधीने कहा कि इस कठिन घड़ीमें श्रीमती दासके पास हूँ। इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ। वे अपना दुःख बड़े धैर्यके साथ सहन कर रही हैं।

उन्होंने उन नवयुवकोंकी प्रशंसा की जिन्होने श्री दासकी अन्त्येष्टिके समय भीड़में उनकी रक्षा की थी।

यदि उनकी मजबूत बाहे मुझे साधे न होती तो मै शायद पिसकर चूर हो गया होता। श्मशान घाटपर खासकर ऐसी ही हालत थी।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २४-६-१९२५

१७५. भेंट : 'सर्चलाइट' के प्रतिनिधिसे

[२४ जून, १९२५ से पूर्व]

लॉर्ड रीडिंग और लॉर्ड बर्कनहेडके बीच इंग्लैंडमें हुई बातचीतके परिणामसे जब श्री गांधीको अवगत कराया गया, तो उन्होंने कहा :

मुझे तो लगता है कि यह विवरण ठीक ही होगा। क्यो कि मैंने इससे बेहतर किसी चीजकी आशा ही नही की थी। फिर भी, इससे भारतमे खलबली मचेगी और न केवल स्वराज्य दल, वरन् सभी दलोकी भावनाओको गहरी चोट पहुँचेगी। व्यक्तिगत रूपसे मेरी समझमे नही आता कि भारतीयकरण काफी आगे बढ गया है, इसका अर्थ क्या है।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २४-६-१९२५

१७६. तार : सुशीलकुमार रुद्रको

२४ जून, १९२५

सुशीलकुमार रुद्र,
सोलन

आपकी पूर्ण मानसिक शान्तिके लिए मेरी दुआएँ और मेरा हार्दिक स्नेह आपके साथ हैं। कितनी खुशीकी बात है कि चार्ली आपके साथ हैं।[1]

गांधी

मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ६०४८) से।
सौजन्य : श्रीमती सुशीलकुमार रुद्र

१. प्रिंसिपल रुद्रका ३० जूनको देहावसान हो गया था। देखिए "एक खामोश समाज सेवी", ९-७-१९२५।

१७७. भेंट: 'इंग्लिशमैन' के प्रतिनिधिसे

कलकत्ता
२४ जून, १९२५

महात्मा गांधीने 'इंग्लिशमैन' के प्रतिनिधिके पूछनेपर कहा:

स्वराज्य दलमें कोई फूट न तो है और न होगी ही।

उन्होंने आगे कहा कि स्वराज्य दलके भविष्यके सम्बन्धमें बहुत-सी अटकलें लगाई जा रही हैं और अफवाहें उड़ रही हैं, परन्तु वह सब लोगोंका अनुमान-ही-अनुमान है और उनका कोई आधार नहीं है।

पत्र-प्रतिनिधिने पूछा कि यदि आपको स्वराज्य दलका नेतृत्व दिया जाये तो आप उसे स्वीकार करनेके लिए तैयार होंगे? महात्मा गांधीने उत्तर दिया: नहीं। यह सर्वथा आवश्यक है कि बंगालमें स्वराज्य दलका नेता बंगाली ही हो। इस उच्च सम्मानके लिए एकसे अधिक बंगाली उपयुक्त हैं, परन्तु जहाँतक योग्यता, अनुभव और स्वराज्य दलकी कार्यप्रणालीके ज्ञानका सम्बन्ध है, मेरे मतसे स्वर्गीय देशबन्धु चित्तरंजन दासके सहायक श्री जे० एम० सेनगुप्त सबसे अधिक उपयुक्त हैं।

राष्ट्रवादियों और स्वराज्यवादियोंके एकीकरणकी जो बात कही जाती है उसके सम्बन्धमें पूछे जानेपर महात्मा गांधीने कहा कि अगर ये दोनों दल सम्मानयुक्त शर्तों-पर संयुक्त हो जायें तो यह देशके लिए सबसे अधिक हितकर बात होगी।

महात्माजीने कहा कि मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। मैं कलकत्तेमें अभी एक महीना और ठहरूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २६-६-१९२५

१७८. टिप्पणियाँ

अन्याय इष्ट न था

आप कहते हैं कि शिक्षित भारतीय आपके सन्देशकी ओर आकर्षित नहीं हुए हैं। क्या आप इससे उनके प्रति अन्याय नहीं करते? आप अपने दायें हाथ राजगोपालाचारीजीको ही ले। फिर निःस्वार्थ शिक्षित कार्यकर्त्ताओंका एक समुदाय समस्त देशमें फैला हुआ है। आप इनकी चर्चा 'यंग इंडिया' में बहुत कम ही करते हैं। यदि ये न होते तो आज आपकी हालत क्या होती? आप गाँवोंके कामकी बात करते हैं। यह सब तो बहुत अच्छा है; लेकिन आप उसे भी तो इन्हींकी सहायतासे कर रहे हैं।

इससे एक मिथ्या प्रश्न उपस्थित होता है। अकेला चना भाड नही फोड सकता। जो मुट्ठी-भर शिक्षित लोग चुपचाप सेवा कर रहे हैं और चरखेका पैगाम पहुँचा रहे हैं उनसे वास्तवमे उनका और देशका गौरव बढ रहा है। उनके बिना मैं बिलकुल मजबूर हो जाऊँगा। परन्तु मेरी ही तरह वे भी भारतके शिक्षित जनोके प्रतिनिधि नही हैं। एक वर्गके रूपमे शिक्षित भारतवासियोका चरखेसे कोई सम्बन्ध नही है; इसलिए नही कि वे उसे चाहते नही हैं, बल्कि इसलिए कि वे अभी उसके कायल नही हुए हैं। जब मैंने यह बात लिखी थी[1] तब मेरे ध्यानमे सर्वश्री शास्त्री, जिन्ना, चिन्तामणि, सप्रू और देशके शिक्षित समुदायके समस्त प्रसिद्ध लोग थे। सामान्य लोग व्यक्तिगत रूपसे मुझे भले ही चाहते हो, परन्तु वे मेरे विचारो और मेरी कार्यप्रणालियोसे भयभीत हैं। कुछ लोग तो कभी-कभी मुझे सचाईके साथ यह भी समझाते हैं कि मैं अपना ढग सुधारूँ जिससे वे मेरे साथ होकर काम कर सके। यह अश मैंने बतौर शिकायतके भी नही लिखा था। मैंने तो सिर्फ वस्तुस्थितिका वर्णन किया है — इस उद्देश्यसे कि मैं अपनी मर्यादायें बता दूँ और यह भी दिखा दूँ कि राष्ट्रीय उत्थानमे उनकी भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि चरखेके सभी फलितार्थोंको समझनेवाले और उनका प्रतिनिधित्व करनेवाले बडेसे-बडे नेताओंकी है। मैं यह भी मानता हूँ कि काग्रेसका उन्हींके द्वारा नेतृत्व होना ठीक है, और मुझे महज मतोके बलपर इस प्रश्नको तय करानेकी उतावली न करनी चाहिए; बल्कि उलटा मुझे तबतक धीरज रखना चाहिए, जबतक मैं उन्हे यह विश्वास नही करा देता कि भारतके राजनैतिक उद्धारके लिए भी चरखा और खादी अत्यन्त आवश्यक है।

माता-पितासे पहले संस्था

अपने बगालके दौरेमे मैंने यह भी विस्मयकारी बात सुनी कि एक सार्वजनिक संस्थाके सदस्य अपने माता-पिताके भरण-पोषणकी अपेक्षा अपनी सस्थाका निर्वाह करना

१. सम्भवतः यहाँ उल्लेख "क्या हम तैयार हैं?", १८-६-१९२५ शीर्षक लेखका है।

अधिक ठीक मानते हैं। यह भी कहा गया कि इस सम्बन्धमे उन्हे मेरा समर्थन प्राप्त है। यदि इस अखबारमे मैने कोई ऐसी बात लिखी हो जिससे इस प्रकारका खयाल पैदा हुआ हो, तो मैं पाठकोसे क्षमा माँगता हूँ। मुझे जान-बूझकर कोई ऐसा अपराध करनेकी याद नही है। मैं जो-कुछ हूँ उस सबका श्रेय मेरे माता-पिताको है। उनके प्रति मेरी भावना वैसी ही थी, जैसी श्रवणकी अपने माता-पिताके प्रति बताई जाती है। इसलिए यह बात सुनकर मेरे मनमे जो क्रोध उमड़ा, उसे मैं बहुत ही कठिनाईसे रोक सका। जिस युवकने यह बात कही थी, वह इस विषयमे गम्भीर नही था। परन्तु आजकल कुछ नौजवानोका यह रवैया ही हो गया है कि वे अपनेको सर्वश्रेष्ठ समझते हैं और पूर्णताकी प्रतिमूर्ति होनेका ढोग करते है। मेरी रायमे बालिग पुत्रोका प्रथम कर्त्तव्य बूढे और दुर्बल माता-पिताओंका भरण-पोषण करना है। यदि वे अपने माता-पिताओंका भरण-पोषण करनेकी स्थितिमे न हों तो विवाह न करे। तबतक यह पहली शर्त पूरी न हो, वे सार्वजनिक काम हाथमे न लें। उन्हे स्वयं भूखो मर कर भी अपने माता-पिताके लिए अन्न-वस्त्र जुटाना चाहिए। परन्तु नौजवानोंसे यह आशा नही रखी जाती कि वे माता-पिताओकी विचारहीन या अज्ञानपूर्ण माँगें पूरी करें। ऐसे माता-पिता होते हैं जो गुजारेके लिए नही बल्कि झूठे दिखावे या लड़कियोंके विवाहके अनावश्यक खर्चके लिए रुपया माँगते हैं। मेरी रायमे सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओंका कर्तव्य है कि वे विनयपूर्वक ऐसी माँगोंको माननेसे इनकार कर दे। असलमें मुझे जहाँतक स्मरण है, कोई ऐसा योग्य सार्वजनिक कार्यकर्त्ता नही मिला है जो भूखों मरता हो। मुझे कुछ लोग तंगदस्त जरूर मिले हैं। मुझे कुछ लोग ऐसे भी मिले है, जिन्हे जितना मिल रहा है उससे अधिक मिलना चाहिए। किन्तु जब उनका काम बढ़ जायेगा और उनकी योग्यता प्रकट हो जायेगी, तब उन्हें तंगी नही उठानी पड़ेगी। मनुष्य कठिनाइयों और कष्टोसे ही बनता है। ये तो स्वस्थ विकासके चिह्न हैं। यदि सभी नवयुवक सम्पन्नताका उपभोग करें और आवश्यक वस्तुओका अभाव किस चिड़ियाका नाम है यह भी न जानें तो वे कष्टोंके आनेपर उनके सामने कभी नही टिक सकेगे। आह्लाद त्यागसे ही मिलता है।

इसलिए सरेआम अपने त्यागका ढिंढोरा पीटना ठीक नही है। कई कार्यकर्त्ताओने मुझे बताया कि वे किसी भी प्रकारका त्याग करनेके लिए तैयार हैं। पूछनेपर मालूम हुआ कि त्यागसे उनका अर्थ माँगकर या दान प्राप्त करके निर्वाह करना है। मैंने उन्हे बताया कि दानसे जीवन-निर्वाह करनेमे त्यागकी कोई बात नही है। कई सार्वजनिक कार्यकर्त्ता ऐसा करते हैं, पर इस कारण वे त्यागका दम नही भर सकते। कई युवकोंने अच्छी-खासी आमदनी देनेवाली अपनी आजीविकाएँ छोड़ दी हैं। बेशक यह उनके लिए श्रेयकी बात है, पर यहाँ मैं नम्रतापूर्वक इतना जरूर कह देना चाहता हूँ कि त्यागकी प्रशंसामे अति कर देनेकी आशंका भी बराबर रहती है, जो प्रसन्नतापूर्वक न किया जाये, वह त्याग त्याग नही है। त्याग करके मुँह उतार लेनेमें कोई बड़प्पन नही है। त्याग 'पवित्र बननेकी प्रक्रिया' है। जो व्यक्ति किये गये त्यागके लिए दूसरोंकी सहानुभूति चाहता है, वह बहुत ही घटिया वृत्तिका

कहलायेगा। बुद्धने अपना सर्वस्व त्याग दिया क्योंकि ऐसा किये विना वह रह ही नही सकते थे। किसी भी चीजका सग्रह उनके लिए पीडाकारक था। लोकमान्य निर्धन वने रहे क्योकि धनका भार उन्हे असह्य था। एन्ड्रयूज चन्द रुपयोको भी बोझ मानते हैं। यदि कहीसे कुछ धन उनके पास आ जाता है तो उन्हे उसे खत्म कर देनकी चिन्ता पकड लेती है। मैं अकसर उनसे कहता हूँ कि तुमपर एक निगाह रखनेवाला आदमी चाहिए। सुनकर वह हँस देते हैं और विना किसी खिन्नताके उसी तरह धन लुटाते चले जाते हैं। मादरे-हिन्द ऐसी-वैसी देवी नही है। वह शायद इच्छुक और अनिच्छुक अनेक युवको और युवतियोसे बलिदान करवानेके वाद ही कहेगी "शावाश मेरे बच्चो! तुम अब स्वतन्त्र हो।" अभी तो हम त्यागका नाटक कर रहे हैं। सच्चे त्यागका समय अभी आया नही है।

सम्बद्ध स्कूलोंमें कताई

मुझे अपने बगालके इस दौरेके दरम्यान कई नई बातोका पता लग रहा है। इनमें बहुत-सी सुखद तथा कुछ दु खद भी हैं। मदारीपुरसे कुछ ही दूरीपर एक ग्राम है, जिसका नाम उपसी है। इस ग्राममे एक हाईस्कूल चलाया जा रहा है। यह शिक्षा-विभागसे सम्बद्ध है, लेकिन कोई सहायता सरकारसे नही लेता। कताईके पुनरुज्जीवित होनेके बाद इसमे सभी छात्रोके लिए एक घटा कताई करना अनिवार्य कर दिया गया था। सन् १९२१मे मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीपर बुनाई भी ऐच्छिक विषयके रूपमे आरम्भ की गई थी। यहाँ अभी हालतक बुना जानेवाला कपडा अर्ध-खद्दर होता था। कुछ माह पहले ही पूर्ण खादीकी बुनाई शुरू की गई है और प्रबन्धकोंने निश्चय किया है कि अब अर्ध-खद्दरके बजाय केवल शुद्ध खादीपर ध्यान केन्द्रित किया जाये। लगभग सौ लड़कोको एक साथ सूत कातते देखकर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। पूछनेपर यह भी मालूम हुआ कि कताई अनिवार्य होनेपर लडकोकी सख्यामे कोई कमी नही हुई है। मुख्याध्यापकने कहा कि यदि माता-पिता सूत कातना अस्वीकार करते अथवा लडके आपत्ति उठाते तो इसे जारी नही रखा जा सकता था।

मुख्याध्यापकने मेरे सम्मुख दर्शक-पुस्तिका रखी ताकि मैं उसमें अपनी सम्मति लिख दूँ।[1] इसमे सफे पलटनेपर मैंने स्कूलोके इन्स्पेक्टरकी एक लम्बी रिपोर्ट पढी। उसने लिखा था, 'मुझे कताईसे कोई द्वेष नही किन्तु इस प्रयोगके सम्बन्धमे मेरा अनुभव यह है कि वह प्रयोग जहाँ-कही किया गया है वही वह इसी स्कूलकी तरह असफल रहा है। मेरे खयालसे यह प्रयोग तभी सफल हो सकता है जब वह स्वावलम्बी हो।' मैं समझ नही पाता कि जब ज्यामितिकी कक्षा स्वावलम्बी नही होती तब कताईकी कक्षा ही स्वावलम्बी क्यो होनी चाहिए। ज्यामितिकी कक्षाकी सफलता लड़कोकी ज्यामितिकी प्रगतिसे नापी जाती है। कताई कक्षाकी सफलता लडको द्वारा कताईमे प्राप्त की गई दक्षतासे नापी जानी चाहिए। और हाईस्कूलके लड़के दक्ष होकर तो दिखा ही सकते हैं। लेकिन मैं इन्स्पेक्टरकी चुनौती स्वीकार करने तथा यह दिखानेके लिए भी बिलकुल तैयार हूँ कि कुछ अपवादोको छोड़कर साहित्यिक

१. देखिए "सम्मति: दर्शक-पुस्तिकामें", १२-६-१९२५।

कक्षाएँ स्वावलम्बी नही बनाई जा सकती, किन्तु कताईकी कक्षा सदैव स्वावलम्बी बनाई जा सकती है। पहले तो उसके लिए अलग कताई-अध्यापककी आवश्यकता नही है। थोड़ी-बहुत प्रेरणाके द्वारा विद्यमान अध्यापक वर्गको कताईमे यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करनेके लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है और वे अपनी-अपनी कक्षाओको कताई सिखा सकते हैं। वैसे, स्कूलके जो छात्र इस कलाको सीखनके लिए तैयार हो, यदि उन्हीको दूसरोको कातना सिखा सकनेके लिए प्रशिक्षण दिया जाये तो इतना भी काफी है। शिक्षकोको इसके लिए जो अतिरिक्त वेतन दिया जायेगा वह पहले महीनेकी कताईकी फीससे आसानीसे निकाला जा सकता है। लडके प्रति घटा कमसे-कम औसतन एक धेला कमायेगे। वास्तवमे तो प्रत्येकको एक पैसेके हिसावसे कमाना चाहिए। बत्तीस छात्रोकी कक्षा चार आने प्रतिदिन कमा सकेगी। इसका मतलब है ७½ रुपये प्रतिमास। अध्यापककी वेतन वृद्धि २½ रुपये प्रतिमाससे अधिक न होगी। इस प्रकार शेष ५ रुपया प्रतिमासकी बचत होगी। मै यह अवश्य मान रहा हूँ कि लडकोंका काता हुआ सूत बिक जायेगा। अच्छे कते सूतको बेचनेमें कोई कठिनाई नही है। तथा किसीकी देखरेखमे कातनेवाले लड़के अवश्य ही अच्छा सूत कातेगे। निश्चय ही, जहाँतक इस सस्था-विशेषका प्रश्न है, खादी प्रतिष्ठानने वचन दिया है कि वह जरूरतकी रुई उधार दे देगा तथा निर्धारित मूल्यपर कता सूत खरीद लेगा। सच तो यह है कि अध्यापक इस राष्ट्रीय कलामे पर्याप्त रुचि ही नही लेते। इन्स्पेक्टरके मापदण्डके अनुसार जो असफलता दिखाई देती है, उसका कारण यही है।

एक गाँवका प्रयोग

सेलम जिलेके पुदुपालयम गाँवमे जो काम किया जा रहा है उसके सम्बन्धमे श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी लिखते हैं [१]

पाठक देखेंगे कि वहाँ वास्तविक कार्य पिछले अगस्तमे आरम्भ किया गया था। नौ मास एक अल्प अवधि ही है, किन्तु उसमे जो उन्नति की गई है वह अति उत्साहवर्धक है। पाठक यह भी देखेंगे कि यद्यपि केन्द्र एक गाँवमे रखा गया है, किन्तु सेवाका विस्तार वस्तुत बीस गाँवोमे है। इस आश्रममे अवतक दस पचम बालकोको शिक्षा मिल चुकी है, यह कोई छोटी-मोटी बात नही है। यह स्मरण रहे कि भारतमे इस प्रकारकी यही एक प्रवृत्ति नही है। मैंने देखा है कि बगालमे ऐसे प्रयास कई जगह किये गये हैं। मैंने पत्रमे से रुपये-पैसेका हिसाब और जाँच किया हुआ आय-व्यय पत्रक निकाल दिया है। इनको दो अधिकृत हिसाब-परीक्षकोने प्रमाणित किया है। आँकड़ोसे जाहिर होता है कि खद्दर विभागको चलानेमे कोई नुकसान नही हुआ है।

'कूदनेको तत्पर'[२]

मैंने आपके घने लिखे पन्द्रह सफे पढ लिये हैं। मै उत्तरके रूपमे आपको यही सलाह दे सकता हूँ कि आप इस सम्बन्धमे दिये गये मेरे उत्तरोको बार-बार पढें।

१. यहाँ नही दिया गया है।
२. देखिए "कूदनेको तत्पर", २१-५-१९२५।

तब आप देखेंगे कि आपने जो भी मुद्दे उठाये हैं उनके उत्तर मेरे पहले दिये गये उत्तरोमे आ जाते हैं। यदि उनसे आपका समाधान न हो तो मुझे प्रतीक्षा और प्रार्थना ही करनी होगी। मैं अब कुछ भी क्यो न लिखूं, उससे सम्भवत· आपका समाधान नही होगा। मैंने देखा है कि हमारे जीवनमे एक समय ऐसा आता है जब तर्क हमे नही छूतें; जब हर तर्कपर हमारा एक प्रति-तर्क तैयार रहता है। मेरे जो मित्र बहुत-सी बातोमे मुझसे सहमत हैं, मैंने उनके विषयमे भी यही बात देखी है। किन्तु कुछ बातोके बारेमे हमे अपने मतभेदको स्वीकार करके चलना होता है। मुझे आपके सम्बन्धमे भी ऐसा ही करना होगा। लेकिन मैं आपकी लगनकी सराहना करता हूँ। आप मेरे प्रवासमें कही मुझसे मिल ले। मैं तब आपसे आपकी इस समस्त विचार-धाराके सम्बन्धमे प्रसन्नतापूर्वक चर्चा करूँगा। कभी-कभी जहाँ छपे शब्दसे काम नही चलता, बातचीत वहाँ काम दे जाती है। किन्तु मैं यहाँ एक बात कह दूं। आप यह क्यो सोचते हैं कि हमे जबतक स्वराज्य नही मिलता, हम तबतक सूत नही कात सकते और खद्दर नही पहन सकते या अस्पृश्यता-निवारण नहीं कर सकते या मुसलमानोसे हमारी एकता नही हो सकती? अंग्रेजोके चले जानेसे हिन्दुओको मुसलमानोका या मुसलमानोको हिन्दुओका विश्वास करनेमे या धर्मान्ध रूढिवादियोकी आँखे खोलने और दलित वर्गोकी दशा सुधारनेमे या काहिल लोगोको चरखा चलानेके लिए और बिगडी हुई रुचिके लोगोकी रुचि सुधारने और उन्हे खद्दर पुन पहिननेके लिए तैयार करनेमे किस तरह मदद मिल जायेगी? निश्चय ही यदि हम इस समय मुसीबतोके दबावसे इन कामोको नही कर सकते तो हम नाममात्रके स्वराज्यकी झूठी स्वतन्त्रताकी भावनासे आश्वस्त होनेपर तो उन्हे शायद करेंगे ही नही। यदि हम इन कार्योंको या इनमे से किसी कार्यको इस समय पूरा नही करते या पूरा करनेका प्रयत्न नही करते तो इसका कारण हमारी अनिच्छा, काहिली या इससे भी निकृष्ट किसी अन्य अवगुणके अतिरिक्त और कुछ नही है। मै आपको और आपके मित्रोको आमन्त्रित करता हूँ कि आप अपनी योग्यता और शक्तिको, जो आप मे अवश्य ही है, इस रचनात्मक कार्यमे लगाये और तब आप देखेंगे कि स्वराज्य निकट आता जा रहा है। आपको यह दिखाई देता हो या न दिखाई देता हो; किन्तु आप इन तीनो उद्देश्योको जिस हदतक पूरा कर रहे है, वह उसी अनुपातसे हमारे समीप आता जा रहा है। अछूतपनके दुर्गकी नीव दिन-प्रतिदिन खोखली हो रही है। चरखेकी आनन्द ध्वनि अधिकाधिक सुनाई देती चली जा रही है और यद्यपि प्रत्यक्षत हिन्दू और मुसलमान जमकर लडनेकी तैयारियाँ करते दिखते है, किन्तु वस्तुत वे यह अनुभव कर रहे है कि ऐसा करनेसे कोई लाभ नही होगा। फिर भी सम्भव है यह लड़ाई न रुक सके। लड़ाई हो ही गई तो उसके बाद शान्तिका सूर्योदय होगा।

विजित अभिमान

कांग्रेस-महामन्त्री लिखते हैं·

मुझे खेद है कि मैंने आपको १६ तारीखको सदस्यताकी जो सूची भेजी थी उसमें एक गलती रह गई है। बर्माका पिछले मासका कुल जोड़ ७०के

बजाय ७५ होना चाहिए। लेकिन बर्मा प्रदेश कांग्रेस कमेटीने बादकी संख्या ७५ देते समय 'क' और 'ख' श्रेणीके अन्तर्गत कोई विवरण नहीं दिया है।

इस तालिकासे स्पष्ट देखा जा सकता है कि २० प्रान्तोंमें से केवल ६ ने चालू माहमें जानकारी भेजी है। केरलने कोई भी जानकारी नहीं भेजी। शेष १३ प्रदेशोंकी केवल पिछले मासकी संख्याएँ उपलब्ध हैं। इन १३ प्रदेशोंकी पिछले मासकी तथा ६ प्रान्तोंकी चालू मासकी कुल सदस्य संख्या १५,३५५ है।

मैं इस पत्रको केवल भूल-सुधारके लिए नही छाप रहा हूँ, बल्कि यह स्वीकार करनेके लिए छाप रहा हूँ कि मैं मासिक तालिकाएँ मँगाने-जैसे सीधे-सादे मामलेमें भी अनुशासनका पालन नही करा सका हूँ। मै बेलगाँवमे[1] कहा करता था कि मैं अनुशासनका पालन करानेमे बहुत सख्त हूँ। मै देखता हूँ कि मै प्रादेशिक कमेटियोका सहयोग प्राप्त करनेमे असफल रहा हूँ। कांग्रेसके सविधानमे अनुशासनहीन कमेटियोके लिए कोई सजा नही रखी गई है। यदि रखी भी गई हो तो मै उसे लागू करना नही चाहता। यद्यपि मेरा घमण्ड चूर-चूर हो गया है, फिर भी मुझे प्रभुसे प्रार्थना करनी चाहिए और आशा रखनी चाहिए। क्या कमेटियाँ अपने कर्त्तव्यके प्रति सजग होकर महामन्त्रीकी तालिकाएँ भेजनेकी प्रार्थनाका उचित उत्तर देंगी?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१७९. नम्रताकी आवश्यकता

बंगालमे कार्यकर्त्ताओसे बातचीतके दौरान मेरा एक नवयुवकसे साबका पड़ा। उसने अपनेको ब्रह्मचारी कहा और कहा कि लोग मुझे मेरे अन्य गुणोके अतिरिक्त इसलिए भी माने कि मैं ब्रह्मचारी हूँ और मेरे साथी ब्रह्मचारी हैं। उसने यह बात इस तरह कही और ऐसे यकीनके साथ कही कि मेरे मनमे उसके प्रति अरुचि होने लगी। मैंने अपने मनमे कहा कि यह व्यक्ति ऐसे विषयोके बारेमें बोल रहा है जिनका जरा भी ज्ञान इसे नही है। उसके साथियोंने उसके दावोका खण्डन किया। और जब मैंने उससे जिरह की तब तो खुद उसने भी मान लिया कि उसका दावा निराधार है। जो व्यक्ति शारीरिक पाप न करते हुए भी मानसिक पाप करता है तो वह ब्रह्मचारी नही है। जो व्यक्ति किसी रमणीको देखकर, फिर वह कितनी ही सुन्दर क्यो न हो — डिग जाता हो, वह ब्रह्मचारी नही है। जो केवल विवशतासे अपने शरीरको अपने वशमें रख रहा है, वह काम तो अच्छा कर रहा है, पर वह ब्रह्मचारी नही है। हमे अनुचित अप्रासंगिक प्रयोग करके पवित्र शब्दोका मान न घटाना

१. दिसम्बर १९२४ के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनमें; देखिए खण्ड २५ पृष्ठ ४८६-८७।

चाहिए। वास्तविक ब्रह्मचर्यका फल अद्भुत होता है और वह पहचाना भी जा सकता है। इस सद्गुणका पालन करना कठिन है। प्रयत्न तो बहुतेरे करते हैं, पर सफल विरले ही हो पाते हैं। जो लोग देशमे गेरुआ वस्त्र पहनकर सन्यासियोके वेषमे घूमते-फिरते हैं, वे प्राय. किसी सामान्य व्यक्तिसे अधिक ब्रह्मचारी नही होते। अन्तर इतना ही है कि मामूली आदमी उसकी डीग नही हाँकता। इसलिए अकसर उस सन्यासीसे बेहतर होता है। वह इसी विचारसे सन्तोष मान बैठता है कि परमात्मा उसके सकटकी घडियोको, उसके मार्गके प्रलोभनोको जानता है; वह प्रलोभनोपर उसके विजयके अवसरो तथा उसके भगीरथ प्रयत्नोके बावजूद उसके कुछ स्खलनोको जानता है। यदि दुनिया उसके पतनको देखे और उससे उसे तोले तो वह असन्तुष्ट नही होता और अपनी सफलताओको वह कजूसके धनकी तरह छिपाकर रखता है। वह इतना विनयी होता है कि उन्हे प्रकट नही करता। ऐसा मनुष्य उद्धारकी आशा रख सकता है। परन्तु वह कदापि नही, जो सयमका ककहरातक नही जानता, परन्तु अपनेको सन्यासी माननेका ढोग रखता है। ऐसे सार्वजनिक कार्यकर्त्ता जो सन्यासीका वेष नही बनाते, पर अपने त्याग और ब्रह्मचर्यका ढिढोरा पीटते फिरते हैं, दोनो गुणोका मान घटाते हैं और अपनेको तथा अपने सेवाकार्यको बदनाम करते हैं। उनसे सावधान रहना ही उचित है। उनसे समाजको हानि हो सकती है।

जब मैने अपने साबरमती आश्रमके लिए नियमावली तैयार की, तब वह मित्रोके पास सलाह और समालोचनाके लिए भेजी। उस नियमावलीकी एक प्रति स्वर्गीय सर गुरुदास बनर्जीको भी भेजी। उस प्रतिकी पहुँचकी सूचनाके साथ उन्होने सलाह दी कि नियमोमे उल्लिखित व्रतोमे नम्रता भी एक होनी चाहिए। उन्होने अपने पत्रमे लिखा था आजकलके नवयुवकोमे नम्रताका अभाव पाया जाता है। मैने उनसे कहा कि मै आपकी सलाहके मूल्यको तो स्वीकार करता हूँ, नम्रताकी आवश्यकताको भी पूरा-पूरा समझता हूँ, पर एक व्रतके रूपमे उसको स्थान देना उसके गौरवको घटाना है। यह बात तो हमे गृहीत ही करके चलना चाहिए कि जो लोग सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्यका पालन करेगे, वे नम्र अवश्य रहेगे। नम्रताविहीन सत्य एक उद्धत व्यगचित्र होगा। जो व्यक्ति सत्यका पालन करना चाहता है, वह जानता है कि यह कितना कठिन है। दुनिया उसकी कथित सफलताओपर भले ही हर्ष प्रकट करे, पर उसे उसकी गिरावटका पता बहुत ही कम लग पाता है। सत्यपरायण व्यक्ति बडा ही नियन्त्रित व्यक्ति होता है। उसे नम्र बननेकी आवश्यकता है ही। जो शख्स सारे ससारके साथ, यहाँतक कि उसके भी साथ, जो उसे अपना शत्रु कहता हो, प्रेम करना चाहता है, वह जानता है कि केवल अपने बलपर ऐसा कर पाना कितना कठिन है। जबतक वह अपनेको एक रजकणके समान तुच्छ न समझने लगेगा तबतक वह अहिंसाके तत्त्वको ग्रहण नही कर सकता। जिस प्रकार उसके प्रेमकी मात्रा बढ़ती जाती है, उसी प्रकार यदि उसकी नम्रताकी मात्रा न बढी तो वह किसी कामका नही। जो मनुष्य अपनी आँखोमे तेज लाना चाहता है, जो स्त्री-मात्रको अपनी सगी माता या बहन मानता है, उसे तो रजकणसे भी तुच्छ बनना पड़ेगा। उसे एक ऊँचे कगारके किनारेपर खडा

समझिए। पाँव जरा इधर-उधर हुआ कि वह नीचे आया। वह अपने मनमे भी अपने गुणोके सराहनासूचक शब्द कहनेका साहस नही करता, क्योकि वह नही जानता कि अगले क्षणमे क्या होनेवाला है। उसके मनमे पहले अहकार उत्पन्न होता है और उसके फलस्वरूप उसका विनाश होता है, उसके हृदयमे दर्प आता है फलत उसका पतन होता है।

'गीता'मे सच कहा है—

> विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिन ।
> रसवर्जं रसोऽप्यस्य पर दृष्ट्वा निवर्तते ॥[1]

अर्थात् जबतक मनुष्यके मनमे अहभाव मौजूद है तबतक उसे ईश्वरका साक्षात्कार नही हो सकता। यदि वह ईश्वरमे मिलना चाहता हो तो उसे शून्यवत् हो जाना चाहिए। इस प्रतिक्षण परिवर्तनशील जगतमे ऐसा कहनेका साहस कौन कर सकता है कि "मैने विजय प्राप्त की"? हम विजय प्राप्त नही करते; ईश्वर प्राप्त कराता है।

हमे इन गुणोका महत्त्व कम नही कर देना चाहिए, नही तो हम सब यह कहने लगेगे कि ये गुण हममे मौजूद हैं। जो बात भौतिक बातोके बारेमें सच है वही आध्यात्मिक बातोके बारेमे भी सच है। यदि एक सासारिक सग्रामस्थलमे विजय पानेके लिए यूरोपने गत महायुद्धमें—जो स्वय ही नाशवान् है—कितने करोड लोगोका बलिदान कर दिया, तब यदि आध्यात्मिक युद्धमें करोड़ो लोगोको इसके प्रयत्नमे मिट जाना पडे, जिससे कि ससारके सामने एक पूर्ण उदाहरण रह जाये, तो यह कौन-सी बडी बात है? हमारे हाथमे तो इतना ही है कि हम अत्यधिक नम्रताके साथ उद्योग करते जाये।

इन उच्च गुणोको अपनेमे विकसित करना ही उनके लिए किये परिश्रमका पुरस्कार है। जो इनमे से किसी एकको प्राप्त कर लेनेपर उसके बदलेमे भौतिक सुख चाहता है वह अपनी आत्माका नाश करता है। सद्‌गुण कोई व्यापारकी चीज नही है। मेरा सत्य, मेरी अहिंसा, मेरा ब्रह्मचर्य ये मेरे और मेरे कर्त्तासे सम्बन्ध रखनेवाले विषय हैं। ये तिजारतकी चीजे नही हैं। जो भी युवक उनकी तिजारत करनेकी कोशिश करेगा, वह अपना ही नुकसान करेगा। जगत्‌के पास कोई ऐसा मापदण्ड नही है, कोई ऐसा साधन नही है जिससे इन बातोकी नापतौल की जा सके। वे छानबीन और विश्लेषणसे परे हैं। इसलिए हम कार्यकर्त्ताओको चाहिए कि हम उन्हे केवल अपने खुदके शुद्धीकरणके लिए प्राप्त करे। हम दुनियासे कह दे कि वह हमारे कार्योसे हमारा मूल्याकन करे। जो सस्था या आश्रम अपनेको लोगोसे सहायता पानेका अधिकारी मानता हो उसका लक्ष्य भौतिक—सासारिक होना चाहिए—जैसे अस्पताल, पाठशाला, कताई और खादीप्रचार। सर्वसाधारणको इन गतिविधियोकी उपयोगिता-अनुपयोगिता परखनेका अधिकार है और यदि जनता उन्हे पसन्द करती है तो सहायता कर सकती है। शर्तें स्पष्ट हैं। व्यवस्थापकोमे नेकनीयती और योग्यता होनी चाहिए।

१. अध्याय २, श्लोक ५९।

वह प्रामाणिक मनुष्य जो शिक्षाशास्त्रसे अपरिचित हो, शिक्षक कहलाकर लोगोसे सहायता पानेका हक नही रखता। इन सार्वजनिक सस्थाओमे हिसाव-किताव ठीक-ठीक रखा जाना चाहिए जिससे लोग जब चाहे तब निरीक्षण कर सके। इन शर्तोंकी पूर्ति सस्थाके संचालकोको करनी चाहिए। लोगोसे आदर और आश्रय पानेकी दृष्टिसे उन्हे सच्चरित्रताका दिखावा नही करना चाहिए।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१८०. पतित बहनें

मदारीपुरमे स्वागत समितिने पतित बहनोके द्वारा एक कताई प्रदर्शनका आयोजन किया था। उस दृश्यको देखकर तो मुझे आनन्द हुआ, परन्तु मैंने इस बातकी ओर व्यवस्थापकोका ध्यान खीचा कि इस प्रश्नको हाथमे लेनेमे क्या-क्या खतरे खड़े हो सकते हैं। बारीसालमे उनके उद्धारकार्यको पहले-पहल एक निश्चित रूप मिला था। परन्तु उसने जो पद्धति पकडी है, वह शोभनीय नही, निश्चित ही भद्दी है। वहाँ इन अभागिनी बहनोकी एक सस्था कायम की गई है। उस सस्थाको एक भ्रमोत्पादक नाम दिया गया है। उसके 'वर्तमान ध्येय और उद्देश्य' इस प्रकार बताये गये हैं

१. गरीबोंकी मदद करना और बीमार भाई-बहनोंकी सेवा-शुश्रूषा करना।

२. अपने बीच शिक्षाका प्रसार करना।

(ब) एक नारी शिल्पाश्रमकी स्थापना करके कताई, बुनाई, सिलाई, दस्तकारी, तथा अन्य हस्तकौशलकी उन्नति करना।

(क) उच्च संगीत की शिक्षा देना।

३. उन तमाम संस्थाओंमें शरीक होना, जिनका धर्म सत्याग्रह और अहिंसा है।

यदि और कुछ भी नही तो यह घोड़ेके आगे गाड़ी रखने जैसा है। इन बहनोको खुद अपना सुधार करनेके पहले ही जनसेवा करनेकी सलाह दी गई है। उच्च सगीतकी शिक्षा देनेके विचारका परिणाम यदि दुखद न हो तो वह कमसे-कम एक बडे मजाक-जैसा तो लगेगा ही। क्योकि यह मानना होगा कि ये स्त्रियाँ नाचना और गाना तो जानती ही हैं। और फिर वे अपने व्यवसाय द्वारा सारे समय सत्य और अहिंसाको भग करते हुए भी सत्य और अहिंसाको अपना धर्म माननेवाली सस्थाओमे शरीक हो सकती हैं!

मेरे सामने जो कागज पडा हुआ है वह तो यह भी कहता है कि वे काग्रेसकी सदस्या भी बनाई गई हैं और "उनकी तुच्छ स्थितिके योग्य राष्ट्रीय काम करनेकी" छूट भी उन्हे दी गई है। वे काग्रेसकी प्रतिनिधि भी चुनी गई हैं। मैंने उनके नामसे लिखा गया एक घोषणापत्र भी देखा है, जिसे कि मैं भद्दा और गन्दा समझता हूँ।

इसमें हेतु कुछ भी हो, मैं इस पूरे प्रकरणको लज्जाजनक माने विना नहीं रह सकता। हाँ, कताईको मैं जरूर चाहता हूँ, परन्तु उसे पापका परवाना नही वनने देना चाहता। मैं जरूर चाहता हूँ कि हर शख्स सत्याग्रह धर्मको स्वीकार करे। परन्तु एक ऐसे शख्सको, जिसका कि धधा ही खून करनेका रहा हो और जिसपर उसे पश्चात्तापतक न हो, प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करनेसे रोकनेमे अपनी सारी शक्ति लगा दूंगा। मेरी पूरी सहानुभूति इन वहनोके साथ है। लेकिन वारीसालवालोने जो तरीके अख्तियार किये हैं उन्हे मैं कदापि स्वीकार नही कर सकता। इन वहनोको वहाँ ऐसा सामाजिक दर्जा मिल गया है जो कि समाजके नैतिक कल्याणकी दृष्टिसे उन्हे हरगिज न मिलना चाहिए। जिस प्रयोजनको लेकर इन वहनोंने अपनी सस्था वनाई है, क्या उसे लेकर हम जाने-माने चोरोका एक सघ वनायेंगे? और ये वहने तो चोरोसे भी ज्यादा खतरनाक हैं। इसलिए उनकी ऐसी सस्थाकी स्थापनाका आधार और भी अधिक कमजोर है। चोर तो रुपया पैसा ही चुराते हैं, पर ये तो मनुष्यके सद्गुणोंको चुराती हैं। हाँ, यह वात सच है कि समाजमे इन अभागिनी स्त्रियोंके अस्तित्वके लिए पुरुष ही वुनियादी तौरपर जिम्मेदार हैं। परन्तु हमें यह वात हरगिज न भुला देनी चाहिए कि इन्होने समाजमें वुराई फैलानेकी महाभयकर शक्ति प्राप्त कर ली है। वारीसालमे मुझे मालूम हुआ कि वहाँ इन स्त्रियोके सामाजिक कार्यके फलस्वरूप ये इतनी आगे वढ गई हैं कि जिसका असर वहुत वुरा पड रहा है। और फलत वारीसालके युवकोका सदाचार भी उनके प्रभावसे नही वचा है। अच्छा होता यदि यह सस्था तोड दी जाती। मेरा दृढ मत है कि जवतक वे इस शर्मनाक जिन्दगीको अख्तियार किये हुए हैं, तवतक उनसे किसी किस्मका चदा या सेवा लेना या उन्हे काग्रेसका प्रतिनिधि चुनना और सभासद वननेके लिए प्रोत्साहित करना वेजा है। काग्रेसका कोई नियम ऐसा नही है जिसके अनुसार वे काग्रेसमे आनेसे रोकी जाये, परन्तु मुझे यह आशा थी कि लोकमत ही उन्हे काग्रेससे दूर रखेगा और खुद उनमे भी इतना सकोच तो जरूर होगा कि वे अपनेको स्वयं ही दूर रखेंगी।

मैं चाहता हूँ कि मेरे ये शब्द उनतक पहुँचे। मैं उनसे आग्रह करूँगा कि वे काग्रेसके रजिस्टरसे अपने नाम कटवा ले। भूल जाये कि उनकी कोई सस्था है। और शीघ्र ही, निश्चयपूर्वक अपने इस अनीतिपूर्ण व्यापारको त्याग दे। वे चरखेको वतौर साधनाके और वुनाई या दूसरे किसी अच्छे रोजगारको अपनी रोजीके तौरपर उसी हालतमे अख्तियार करे, इससे पहले नही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१८१. तीन सवाल

एक सज्जनने वारीसालमे मुझसे तीन सवाल पूछे थे। उनको उत्तर सहित नीचे दे रहा हूँ:

१. क्या हमारी 'पतित बहनें' जिला या प्रान्तीय सम्मेलनों तथा अन्य प्रातिनिधिक मण्डलोंके लिए प्रतिनिधि चुनी जा सकती है? यदि नहीं तो फिर ये प्रतिनिधिके रूपमें वारीसालसे पिरोजपुर और जैसोरके सम्मेलनोंमें कैसे भेजी गईं?

काग्रेसके मौजूदा विवानके अनुसार एक चरित्रहीन व्यक्ति भी, यदि उसे चुनकर भेजनेवाले मतदाता मिल जाये, काग्रेसका प्रतिनिधि वननेका अधिकारी है। परन्तु वे सदस्य जो पतित वहनोको, उन्हे उस रूपमे जानते हुए और उनके द्वारा उस पापमय धन्वेका त्याग न होनेपर भी चुनते है, मेरे नजदीक वहुत अच्छे आदमी नही है। जिन सम्मेलनोका जिक्र किया गया है, उनकी मुझे कोई जानकारी नही।

२. यदि कोई एक व्यक्ति या सुसंगठित मण्डल कांग्रेसका रुपया खा जाये या रसीद बुकें, बही-खाते आदि और जिला कांग्रेस कमेटीके रुपये तथा अन्य सम्पत्ति, नयी चुनी कार्य-समितिको, जिसे कि बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी विधिवत् मान्यता दे चुकी है, न दे तो रुपये-पैसे वसूल करने तथा किताबें और कांग्रेसकी अन्य सम्पत्ति प्राप्त करनेके लिए क्या कार्रवाई करनी चाहिए?

यद्यपि मै अव भी एक दृढ असहयोगी हूँ तो भी यदि मेरी मिन्नत-खुशामदसे काम न निकला तो मै उसपर दीवानी या फौजदारी दावा करनेमें न हिचकूँगा — फिर वह चाहे मेरा पिता या पुत्र ही क्यो न हो। काग्रेसका विवान और प्रस्ताव उसके उद्देश्यको विफल करनेके लिए नही है।

३. जो हिन्दुस्तानी और यूरोपीय लोग, जिनमें सरकारी उच्च अधिकारी भी शामिल है, अवतक आपके लोकोपकारी कार्यके विरोधी रहे है, अब भी है और जो आपकी पिछली बंगाल-यात्राके समय जिन समारोहोमें आप जाते थे, शरीक नहीं होते थे और होते भी थे तो बाधा डालनेके लिए ही, वे ही अब आपके स्वागतमें इतना उत्साह क्यों दिखा रहे है? आपकी समझमें इसका कारण क्या है? क्या ऐसा माननेका कोई कारण है कि उन लोगोंमें अब अहिंसात्मक असहयोगकी उच्च भावना पैदा हो गई है या इससे यह साबित होता है कि देशके सबसे बड़े राजनीतिक नेताके रूपमें आपकी शक्ति यदि बिल्कुल नष्ट नहीं हो गई तो क्षीण अवश्य होती जा रही है?

मुझे पता नही कि सरकारने मेरे पिछले वगालके दौरेके समय क्या-क्या वाधाये डाली थी। परन्तु यदि सरकारी कर्मचारी आज मेरे स्वागतमे उत्साह दिखा रहे है —तो पत्रलेखक उक्त अनुमान निकालनेके लिए स्वतन्त्र है। मै आशा करता हूँ कि पत्रलेखक महोदय स्वयं उस गलतीके शिकार न वनेंगे, जिसके शिकार उनके खयालके

मुताविक, सरकारी अधिकारीगण बने हुए प्रतीत होते हैं। क्योकि सत्याग्रहीकी शक्ति आख्यानोंमे वर्णित उस पक्षीकी[1] शक्तिकी तरह है जो कि अपनी राखमे से पुन उत्पन्न हो जानेकी क्षमता रखता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

१८२. सत्याग्रहियोंका कर्त्तव्य

कलकत्ता

२५ जून, १९२५

हुगलीकी जिला अदालतने हालमे एक फैसला सुनाया है। उसके अनुसार तारकेश्वरके मन्दिर और साथ-साथ महन्तकी मानी जानेवाली सारी सम्पत्तिके लिए एक 'रिसीवर' तैनात किया जानेवाला है। इसे देखते हुए सत्याग्रहियोका क्या कर्त्तव्य है — यह बात हमसे पूछी गई है।

हमारी राय तो यह है कि जब 'रिसीवर' उस सम्पत्तिको अपने अधिकारमे करने आये तब सत्याग्रही अधिग्रहणका विरोध नही कर सकते और न 'रिसीवर' द्वारा उस जायदादका कब्जा लेनेका विरोध कोई अर्थ ही रखता है। सत्याग्रह तो महन्तके खिलाफ, बल्कि उसके तौर-तरीकोके खिलाफ, किया गया था। अब वह महन्त काबिज नही है और न्यायालयके निर्णयने महन्तको कब्जा नही दिया है। इसके विपरीत, उस निर्णयसे यह भी साफ हो जाता है कि यद्यपि महन्तने सारी मिल्कियतका पूरा या आशिक कब्जा प्राप्त करनेकी कोशिश की थी लेकिन उसे सफलता नही मिली।

सत्याग्रहका उद्देश्य था मन्दिरसे सम्बन्धित समस्त अनुचित व्यापारको समाप्त करवाना और लक्ष्मीनारायण मन्दिरको आम जनताके प्रवेशके लिए खुलवाना। अब अदालतके फैसलेके अधीन पहलेके दोषोका फिरसे प्रारम्भ या मन्दिर-प्रवेश-निषेधका पुन. रूढ होना सम्भव नही रह गया है। जबतक मन्दिरका प्रबन्ध निर्दोष रहता है और महन्तके हाथमे प्रबन्ध नही होता, तबतक सत्याग्रहियोको इस बातसे कोई प्रयोजन नही कि कब्जा किसके पास है।

इसलिए सत्याग्रहियोका यह कर्त्तव्य होगा कि माँगनेपर 'रिसीवर'को कब्जा दे दिया जाये। यदि फिर कभी प्रबन्धमे बुराइयाँ पैदा होने लगे तो उस समय स्थिति पर फिरसे विचार किया जा सकता है। जबतक न्यासकी व्यवस्था सही ढगसे चलती रहे तबतक न्यासी कौन-कौन व्यक्ति बनते हैं, यह सोचनेकी जरूरत नही है। यदि आगे चलकर वादी महन्तसे साठ-गाँठ कर लेते है तो भी यह एक विचारणीय विषय होगा कि सत्याग्रहियोको क्या करना चाहिए।

१. फीनिक्स।

गत ८ जूनको दार्जिलिंगमे देशबन्धुने उक्त बातोंपर अपनी अन्तिम सहमति दे दी थी और जरूरी माने जानेपर यह सब हमारे संयुक्त हस्ताक्षरों-सहित प्रकाशित किया जाना था। मुझे बताया गया है कि इस वक्तव्यका प्रकाशन जरूरी है। इसलिए हमारे संयुक्त वक्तव्यके रूपमे इसे प्रकाशित करनेमे मुझे कोई संकोच नही हो रहा है। इसके बाद मैंने ऐसा कुछ नही पाया कि मुझे अपनी राय बदलनी पड़ती।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ९-७-१९२५

१८३. पत्र : महाराजा बर्दवानको

२६ जून, १९२५

मैं यदि आपको यह न बतलाता कि आपके उस पत्रसे मेरा हृदय क्षुब्ध हुआ है जिसमें आपने स्मारक कोषके लिए अपने दान सम्बन्धी निर्णयकी बात लिखी थी तो मैं राजाओं और महाराजाओंका सच्चा मित्र — जैसा कि मेरा खयाल है कि मैं हूँ — नही कहला सकता था। मैं कहूँगा कि इससे आपका अपने देश भाइयोंमे क्षीण विश्वास और उनके प्रति एक गलत मनोवृत्ति व्यक्त होती है। आप उस अपीलके हस्ताक्षरकर्त्ताओंमे अपना नाम प्रकाशित करानेकी अनुमति उदारतापूर्वक दे चुके हैं। यदि उसका कुछ भी अर्थ होता है तो वह यही होना चाहिए कि आप धन-संग्रहको सफल बनानेका दृढ़ संकल्प कर चुके हैं। लेकिन आप जो शर्तें लगा रहे हैं, उनके परिणामस्वरूप धन-संग्रहमे बाधाएँ उत्पन्न होंगी। यदि आपको — एक महाराजा हस्ताक्षरकर्त्ताको — यह अधिकार हो कि आप दानकी अदायगी इस शर्तपर करेंगे कि कोषकी राशि एक निश्चित रकमतक पहुँच जाये तो फिर अदना हस्ताक्षरकर्त्ताओंके हकके बारेमे क्या होगा? और यदि वे सभी ऐसी शर्तें लगाएँ तो भला संग्रह किस तरह एक कदम भी आगे बढ सकता है? जिन अनेक चंदोंकी उगाहीका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, उन सबमे मैंने कोषोंके प्रारम्भकर्त्ताओंके रूपमें हस्ताक्षर करनेवाले लोगोंको ही सम्बन्धित कोषोंकी सफलताके जमानतदारोंके रूपमे पाया है। मेरा खयाल है कि आपने यह सर्वथा अनुचित रुख किसी गलतफहमीके कारण अपनाया होगा, क्या आप उसको बदलनेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१८४. पत्र : शुएब कुरैशीको

२६ जून, १९२५

तुम हिन्दू-मुस्लिम झगड़ोंके बारेमें जो भी कुछ कहते हो वह बिलकुल सही है। मैं वही रास्ता अपना रहा हूँ जो उस्मानके जमानेमें पैगम्बरके साथियोंने अपनाया था। इस्लाम विरोधी गुटोंमें बँटकर टूट-बिखर गया तो वे गुफाओंमें चले गये थे। तो हम यों कह सकते हैं कि जबतक हिन्दू-मुसलमान कुत्ते-बिल्लीकी तरह झगड़ते हैं तबतकके लिए हम अपने ही अन्दर सिमटकर आत्मचिंतनमें लग जायें।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१८५. भाषण : कलकत्ताकी शोकसभामें[1]

२६ जून, १९२५

इसके बाद गांधीजीने कहा कि प्रस्ताव तैयार करके गुजराती समाजने अपना कर्त्तव्य-मात्र निभाया है, अधिक कुछ नहीं। १८ जूनका दिन देशबन्धुकी मृत्युपर शोक व्यक्त करनेका दिन था और मैं समझता हूँ कि इस सभामें उपस्थित लोगोंमें से अधिकांश देशबन्धुकी शवयात्रामें शरीक हुए थे। मैं पहले भी अपील कर चुका हूँ कि देशबन्धुका स्थायी स्मारक बनानेके लिए कमसे-कम दस लाख रुपयोंका कोष जमा किया जाये और स्मारक उसी तरहका हो जैसा कि उस कागजमें उन्होंने लिखा है, जिसे हम देशबन्धुकी वसीयत कह सकते हैं। मैं इस समय उसी काममें संलग्न था और जब सेठ आनन्दजी हरिदास तथा अन्य मित्र मेरे पास यह कहनेके लिए पहुँचे कि इस उत्सवकी अध्यक्षता आप कीजिए तब मैंने उनसे साफ कहा कि गुजराती समाजकी ओरसे मैं अपनी अपीलके उत्तरमें समुचित योगदानकी आशा रखता हूँ। मैंने उनसे यह भी पूछा कि क्या अपने हिस्सेकी रकम कोषमें देनेके लिए आपने कोई राशि इकट्ठी की है, लेकिन मुझे यह देखकर निराशा हुई कि ऐसा कोई प्रबन्ध पहलेसे नहीं किया गया था। मैं कामकाजी व्यक्ति हूँ और मेरे पास कोषके लिए संग्रह करनेको जितना भी समय है उसमें से एक भी मिनट नष्ट करना मैं पसन्द नहीं

१. चित्तरंजन दासकी मृत्युपर शोक मनानेके लिए शामको अल्फ्रेड थियेटरमें एक सभा की गई। गांधीजीने अध्यक्षता की और शोक प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास हो जानेके पश्चात् उन्होंने यह भाषण दिया।

करता। मैंने तो समझा था कि देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए गुजराती समाजके हिस्से-का चन्दा लेनेके लिए ही मैं इस सभामें आया हूँ। और अपने गुजराती भाइयोसे तो साफ और यहाँतक कि कड़ी बात बोलनेकी मेरी हमेशासे आदत रही है। मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि मेरे निवेदनोंका उत्तर गुजरातियोंने हमेशा ही उदारतापूर्वक दिया है। बुरे कामोंके लिए नहीं, बल्कि अच्छे कामोंके लिए विभिन्न प्रान्तोंमें प्रति-द्वन्द्विता पैदा करना मेरी आदत रही है। मैं पक्की तौरसे नहीं कह सकता कि जब स्वराज्य कायम होगा तब स्वराज्यका झण्डा फहरानेमें कौन-सा प्रान्त प्रथम रहेगा। लेकिन मुझे विश्वास है कि जो भी प्रान्त सच्चे अर्थोमें समूचे देशके प्रति अपना कर्त्तव्य निभाता रहेगा, उसीको यह श्रेय प्राप्त होगा। जब मैंने तिलक स्वराज्य कोषके लिए एक करोड़ रुपयेकी अपील की थी तो गुजरातियोंने बहुत ही सराहनीय उदारता प्रदर्शित की थी। और मुझे यह सोचकर खुशी हो रही है कि आज शाम कलकत्तेके गुजरातियोंसे की गई मेरी अपील व्यर्थ नहीं जायेगी। आज व्यापारमें बहुत अधिक मन्दी है, सो मैं जानता हूँ, तथापि मुझे गुजराती समाजसे कमसे-कम दस लाख रुपये माँगने हैं; और मुझे आशा है कि जो कमी अभी रह गई है वह कोष संग्रहके लिए बचे आगामी तीन चार दिनोंमें पूरी कर दी जायेगी।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २७-६-१९२५

१८६. अपील: देशबन्धु श्रद्धांजलि-सभाके सम्बन्धमें

मुझे आशा है कि जनता पहली जुलाईकी तिथि याद रखेगी। जो लोग कलकत्ता-मे देशबन्धु श्रद्धाजलि-सभाओका आयोजन कर रहे हैं, वे इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि तीन सभाएँ करना आवश्यक है — एक तो विक्टोरिया मेमोरियलके उत्तरवाले मैदानमे सार्वजनिक सभा, दूसरी मिर्जापुर पार्कमे केवल महिलाओके लिए और तीसरी टाउन हॉलमे, जहाँ टिकटो द्वारा प्रवेश हो। चूँकि पहली जुलाईको सारे भारतमे होनेवाली सभाएँ, किसी एक दलसे सम्बन्धित न होकर निर्दलीय किस्मकी रखी जा रही हैं, और चूँकि बहुतेरे लोगोने जो देशबन्धुके राजनीतिक विचारोसे सहमत नही थे, श्रद्धा-जलि-सभाओमे उपस्थित होकर उनकी यादगारके प्रति आदरभाव व्यक्त करनेका अपना निश्चय प्रकट किया है, उचित यही समझा गया कि सार्वजनिक सभाके अलावा टाउन हॉलमे भी एक सभा ऐसी की जाये, जिसमे विभिन्न दलोके लोग शरीक हो और जहाँ उपयुक्त भाषण दिये जाये। सयोजकोके सामने कठिनाई यह है कि टाउन हॉलमें प्रवेशके लिए टिकट किसे-किसे भेजे जाये। मुझे मालूम हुआ है कि टाउन हॉलमे केवल

१. भाषणके बाद देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए चन्दा किया गया। नकद राशि और दानके वादोंके रूपमें कुल मिलाकर करीब ७,००० रु० आये।

१२०० लोगोंके बैठनेके लिए स्थान है। कुछ स्थान अवश्य ही सुरक्षित रखने होंगे, बाकीके लिए श्रीयुत एन० सी० सेनके पास ९८, वेलतला रोड, भवानीपुरके पतेसे अर्जी भेजी जानी चाहिए। वे आगामी इतवारतक ली जा सकेंगी। और यदि अर्जियों-की संख्या उपलब्ध स्थानोंसे अधिक हुई तो लाटरी द्वारा उन लोगोंके नाम निश्चित किये जायेंगे, जिन्हें प्रवेशपत्र दिया जाना चाहिए। ऐसी सार्वजनिक सभाओंमें उपस्थिति नियंत्रित रखनेके सम्बन्धमें जो आशंकाएँ हैं, उनको मैं जानता हूँ। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि जनता बेचारे संयोजकोंकी कठिनाईको महसूस करेगी। वे चाहते हैं कि टाउन हॉलमें सभी विचारोंके लोगोंका प्रतिनिधित्व हो। सार्वजनिक सभामें शायद अधिक भाषण न हो सकें या सम्भव है, वहाँ एक भी भाषण न हो। फिर भी उन लोगोंको जो अपनी भावनाएँ व्यक्त करना चाहते हैं, इसका कोई अवसर न मिल पाना खेदजनक होगा। ऐसा अवसर टाउन हालमें मिल सकता है।

इसलिए मैं आशा करता हूँ कि टाउन हॉलकी सभाको सफल बनानेमें जनता प्रबन्धकोंके साथ हार्दिक सहयोग करेगी। टाउन हॉलकी सभाकी अध्यक्षता करनेके लिए महाराजाधिराज बर्दवानने स्वीकृति देनेकी कृपा की है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २७-६-१९२५

१८७. पहली जुलाई

मैंने यह सलाह दी है कि देशबन्धुकी स्मृतिमें उनके श्राद्धके दिन हिन्दुस्तानके प्रत्येक गाँव और शहरमें सार्वजनिक सभा की जाए। उस दिन धार्मिक भावनावाले लोग उपवास या एकाहार भी करें। देशबन्धुके घरमें तो ये सब हो ही रहा है। उन्हें कीर्तन प्रिय था, इसलिए नित्य रातको कीर्तन भी किया जाता है। जो स्नानादि [धार्मिक विधियाँ] करना चाहें, वे उन्हें भी कर सकते हैं। मुख्य बात तो ठीक पाँच बजे सभा करना और उसमें प्रस्ताव स्वीकृत करना है। गुजरातमें जहाँ-जहाँ कांग्रेसका सन्देश पहुँच सकता है वहाँ-वहाँ सभाएँ करना वांछनीय है। इन सभाओंमें स्वीकृत प्रस्तावकी नकल गंगास्वरूप बासन्ती देवीको डाकसे भेज देना पर्याप्त होगा। प्रान्तीय कमेटी भी अपनी ओरसे एक तार द्वारा गाँवोंकी सूची भेजे, जिससे यह पता चल जाएगा कि किन-किन जगहोंमें सभाएँ हुई हैं। सभाओंमें शोक-प्रस्ताव और देशबन्धुके गुणोंका कीर्तन तो हो ही, किन्तु प्रत्येक सभामें उसके अलावा दूसरे कार्य भी किए जा सकते हैं। हम देशबन्धुकी पूजा उनके स्वराज्य प्राप्तिके लिए किए गए कार्योंके कारण करते हैं। यदि इस स्वराज्यकी स्थापना आज ही हो सके तो देशबन्धुकी आत्माको पूर्ण शान्ति मिलेगी। यह कार्य इस समय हमारी शक्तिसे बाहर है। किन्तु स्वराज्यको समीप लाना हमारी शक्तिसे बाहर नहीं है।

राजा और रंक, मजदूर और मालिक, बूढ़े और बालक, स्त्री और पुरुष, हिन्दू और मुसलमान सब स्वराज्यको समीप लानेके लिए क्या कर सकते हैं? ऐसा कौन-सा

कार्य है, जिसे सब लोग कर सकते हैं। ऐसा कार्य एक है, और वह है खादीका प्रचार। सब लोग शुद्ध खादी पहननेका निश्चय कर सकते हैं और यज्ञार्थ अर्थात् देशके निमित्त आधा घंटा नित्य चरखा चलानेकी प्रतिज्ञा कर सकते हैं। इसमें किसीको कोई कठिनाई नहीं हो सकती। इस प्रकार लोग नित्य देशबन्धुका स्मरण कर सकते हैं। यदि इस प्रकारकी प्रतिज्ञा लाखों लोग लें तो क्या नहीं हो सकता। हम विदेशी कपड़ेका सर्वथा त्याग कर सकते हैं। इससे हममें आत्मविश्वास पैदा होगा। देशबन्धु चाहते थे कि लोगोंमें आत्मविश्वास आए। वे चाहते थे कि हम लोग स्वावलम्बी बनें; इसलिए हमें स्वावलम्बी बनना चाहिए। वे चाहते थे कि हम हिन्दू, मुसलमान और पारसी आदि सब लोग संगठित हों। हम चरखेके द्वारा ऐसा संगठन साध सकते हैं। इसी कारण मैं तो चाहता हूँ कि सभी लोग खादी पहनने और चरखा चलानेकी प्रतिज्ञा अवश्य करें।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-६-१९२५

१८८. कुछ संस्मरण

इस अंकमें लिखनेके लिए और क्या बात सूझ सकती है?

पहाड़-जैसे देशबन्धु उठ गये, अखबार उन्हींकी चर्चासे भरे हुए हैं। देशबन्धुकी छोटी-छोटी बातें भी उनमें बहुत चावसे छापी जा रही हैं। 'सर्वेंट' ने विशेषांक ही निकाला है। 'वसुमती' बंगालका सबसे बड़ा समाचारपत्र है। वह विशेषांक निकालनेकी तैयारियाँ कर रहा है। श्रीमती वासन्ती देवीके पास हजारसे ज्यादा शोक-सूचक तार आ चुके हैं; और अभी सुदूर देशोंसे आते जा रहे हैं। जगह-जगह शोक-सभाएँ हो रही हैं। शायद ही ऐसा कोई शहर, जहाँ कांग्रेसका झण्डा फहराता है, बचा होगा जहाँ सभा न की गई हो।

कलकत्ता गत १८ तारीखको पागल ही हो गया था। अंक-शास्त्री कहते हैं कि वहाँ दो लाखसे कम आदमी इकट्ठे न हुए होंगे। इसके अलावा स्त्री-पुरुष रास्तोंपर या ट्रामोंकी छतोंपर खड़े थे, तारके खम्बोंपर चढ़े हुए थे और झरोखोंमें प्रतीक्षामें बैठे थे।

साथ भजन-कीर्तन तो था ही। पुष्पोंकी वृष्टि हो रही थी। शव खुला हुआ था, परन्तु उसपर फूलोंके हारोंका ढेर लगा था।

शवयात्राके आगे स्वयंसेवक फुलवारी लेकर चल रहे थे, जिसमें फूलोंसे सज्जित चरखा रखा था। शवयात्रा स्टेशनसे साढ़े सात बजे चलकर तीन बजे श्मशानमें पहुँची और साढ़े तीन बजे शवका अग्नि-संस्कार आरम्भ किया गया।

श्मशान घाटपर भीड़ उमड़ पड़ रही थी। भीड़के रेलेको रोकना बहुत ही कठिन हो रहा था। मैं समझता हूँ कि यदि मुझे हट्टे-कट्टे लोगोंने अपने कन्धोंपर बिठाकर इस उमड़ती हुई भीड़के आगे ऊँचा न कर दिया होता तो भयंकर दुर्घटना हो जाती।

मुझे दो-तीन सशक्त मनुष्योने बारी-बारीसे अपने कन्धोपर उठाया। मै कन्धोपर बैठे-बैठे ही लोगोको आगे बढनेसे रोकता और अपनी-अपनी जगह बैठनेके लिए समझाता। लोग जबतक मुझे देख सकते थे तबतक तो बैठे रहते, किन्तु अन्यत्र अशान्तिकी आशका होनेपर, मेरे उस ओर ले जाये जानेपर, मेरी पीठ फिरते ही फिर खडे हो जाते। वे सभी आपेसे बाहर हो रहे थे। हजारो आँखे अर्थीपर लगी हुई थी। जब अग्निदाह शुरू हुआ तब वे अधीर हो उठे। सब बरबस खडे हो गये और चिताकी ओर अग्रसर हुए। यदि एक भी क्षणका विलम्ब होता तो सबके चितापर आ गिरनेका अन्देशा था। अब क्या करे? मैने लोगोसे कहा—'अब काम पूरा हुआ, अतः आप सब अपने-अपने घर चले जाये', और जो भाई मुझे उठाये हुए थे उनसे कहा 'अब आप मुझे इस भीडमे से निकाल ले चले।' मै लोगोसे पुकार-पुकारकर और इशारेसे कहता गया कि वे मेरे पीछे-पीछे चले आये। इसका असर बहुत अच्छा हुआ, हजारोकी वह भीड वापस चल पडी और इस तरह दुर्घटनासे बच गई। चिता चन्दनकी लकडीसे रची गई थी।

ऐसा मालूम होता था मानो लोग वन-भोजके लिए आये हो।' गम्भीरता तो सबके चेहरेपर थी, परन्तु ऐसा नही मालूम होता था कि वे शोकमग्न है। कुटुम्बियोका और मेरा शोक स्वार्थमय लगता था। हमारा तत्त्वज्ञान खत्म हो गया था, लोगोका कायम रहा, क्योकि वे तटस्थ थे। उनमे देशबन्धुके प्रति सम्मानका भाव तो पूरा था, किन्तु उनकी पूजा नि स्वार्थ थी। वे तो इस भारतपुत्रको, अपने इस बन्धुको, प्रमाण-पत्र भेट करनेके लिए आये थे। वे अपनी आँखोसे और चेष्टासे ऐसा कहते हुए दिखाई देते थे—'दास, तुमने बहुत अच्छा काम किया, तुम्हारे जैसे हजारो हो।'

देशबन्धु-जैसे भव्य थे, वैसे ही भले भी थे। मुझे दार्जिलिगमे इसका पूरा अनुभव हुआ। वहाँ उन्होने धर्म-सम्बन्धी बाते की। जिन बातोकी छाप उनके ऊपर गहरी पडी थी, उनकी चर्चा की। वे धर्मका अनुभवजन्य ज्ञान प्राप्त करनेके लिए उत्सुक थे। 'दूसरे देशोमे कुछ भी हो, परन्तु इस देशका उद्धार तो अहिंसाके मार्गसे ही सम्भव है। मै यहाँके नवयुवकोको दिखा दूँगा कि हम अहिंसाके मार्गपर चलकर स्वराज्य प्राप्त कर सकते है।' 'यदि हम नेक बन जायेगे तो अग्रेजोको नेक बना लेगे।' इस अन्धकार और दम्भमे मुझे सत्यके सिवा दूसरा कोई रास्ता नही दिखाई देता। दूसरेकी हमे आवश्यकता भी नही है।' 'मै तमाम दलोमे मेल कराना चाहता हूँ। बाधा सिर्फ इतनी ही है कि हमारे लोग भीरु है। उनमे एकता करानेके प्रयत्नमे होता यह है कि स्वय हमारे भीरु बन जानेका भय रहता है। आप जरूर सबको मिलानेकी कोशिश करे और——से[1] मिले,——पत्रके[2] सम्पादकको समझाये कि मेरी और स्वराज्यदलकी निन्दा करनेसे क्या लाभ? मैने भूल की हो या अनुचित कार्य किया हो तो वे मुझे बताये। मै उनका समाधान न कर सकूँ तो वे मेरी जी-भर कर निन्दा कर सकते है।' 'आपके चरखेका रहस्य मै दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक समझता जाता हूँ। मेरा कन्धा दर्द न करे और कताईके सम्बन्धमें बिलकुल जड़ न होऊँ तो मै सूत

१ व २. मूलमें यहाँ दो नाम छोड दिये गये है।

कातना तुरन्त सीख लूँ। एक वार सीखनेपर फिर नियमपूर्वक काननेमे मेरा जी न ऊवेगा। परन्तु सीखनेमें तो जी ऊव जाता है। देखो न, तार वार-वार टूट जाता है।' 'परन्तु आप ऐसा किस तरह कह सकते हैं कि स्वराज्यके लिए क्या नही किया जा सकता?' 'हाँ, हाँ, यह तो ठीक ही है। मै सीखनेसे इनकार कव करता हूँ? मै तो अपनी कठिनाई वताता हूँ। पूछे न वासन्ती देवीसे कि मै ऐसे कामोमे कैसा जड हूँ?' वासन्ती देवीने उनकी हाँ-मे हाँ मिलाई और कहा, "यह वात सच है। उन्हे अपना सन्दूक खोलना हो तो ताली लगाने मुझे आना पडता है।" मैने कहा, 'यह तो आपकी चालाकी है। इस तरह आपने देशवन्धुको अपग बना रखा है, जिससे उन्हे सदा आपकी खुशामद करनी पडे और आपका मुँह ताकना पडे।' हँसीसे कमरा गूँज उठा। देशवन्धु बीचमें ही बोले, 'आप एक महीने वाद मेरी परीक्षा ले। उस समय मै मोटा सूत कातता न मिलूँगा।' मैने कहा—'ठीक है। आपके लिए सतीश वावू शिक्षक भी भेज देगे। आप पास हो जायेंगे तो समझ ले कि स्वराज्य नजदीक आ गया।' ऐसे सब विनोदोका वर्णन करने लगूँ तो अन्त नही आ सकता।

कुछ सस्मरण तो ऐसे हैं जिनका वर्णन हो ही नही सकता।

फिर भी मै जिस प्रेमका अनुभव वहाँ कर रहा था उसकी कुछ झलक यहाँ न दूँ तो मै कृतघ्न माना जाऊँगा। वे मेरी छोटी-छोटी-सी वातकी सँभाल रखते थे। मेवे कलकत्तेसे खुद मँगवाते। दार्जिलिगमे बकरी या बकरीका दूध मिलना मुश्किल होता है, इसलिए उन्होने ठेठ तलहटीसे पाँच बकरियाँ मँगवाकर अपने घर वाँध रखी थी। वे मेरी जरूरतकी एक-एक चीजका इन्तजाम किये बगैर न रहते थे। हमारे कमरोके बीच तो सिर्फ एक दीवार ही थी। वे सुबह होते ही नित्यकर्मसे निवृत्त हो मेरी राह देखने लगते। वे स्वय चारपाईपर ही बैठते थे, क्योकि उनकी चारपाई अभी छूटी नही थी। वे मेरी पालथी भरकर बैठनेकी आदतसे वाकिफ थे। इसलिए वे मुझे कुर्सीपर नही बैठने देते थे और अपने सामने अपनी चारपाईपर ही बैठाते थे। वे गद्देपर भी खास तौरपर कुछ विछवाते और तकिया भी लगवाते। मै उनसे विनोद किये विना न रह सका। मैने कहा, 'यह दृश्य तो मुझे चालीस वरस पहलेकी याद दिलाता है। जब मेरी शादी हुई थी तव हम दोनो वर और वधू इस तरह बैठे थे। अब यहाँ पाणिग्रहणकी कसर रहती है।' मेरे इतना कहते ही देशवन्धुकी मुक्त हँसीसे सारा घर गूँज उठा। देशवन्धु जब हँसते तो उनकी आवाज दूरतक गूँज जाती थी।

देशवन्धुका हृदय दिनपर-दिन कोमल होता जाता था। उनके लिए मास-मछली खाना रिवाजके खिलाफ न था। फिर भी जव असहयोग शुरू हुआ तव उन्होने मासाहार, मद्यपान और धूम्रपान तीनो चीजे छोड़ दी थी। कुछ दिन वाद वे फिर आरम्भ हो गई थी। परन्तु उनकी वृत्ति इनको छोडनेकी ही रहती थी। अभी कुछ दिनसे उनका सम्पर्क राधास्वामी सम्प्रदायके एक साधुसे हुआ था। तवसे उनकी निरामिष भोजनकी उत्सुकता बढ गई थी। अत. जव मै दार्जिलिंग गया तव उन्होने निरामिष भोजनका प्रयोग पुन. प्रारम्भ कर दिया था और जवतक मै वहाँ रहा, तवतक घरमे मांस-मछली नही आने दिया। उन्होने मुझसे अनेक वार कहा था—'यदि मुझसे हो

सका तो अब मैं मास-मछली छुऊँगा भी नही। वे मुझे पसन्द भी नही और मैं समझता हूँ कि उनसे हमारी आध्यात्मिक उन्नतिमे बाधा आती है। मेरे गुरुने मुझसे खास तौरपर कहा है कि मुझे साधना करनी हो तो मासाहार छोड ही देना चाहिए।'

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-६-१९२५

१८९. काठियावाड़का प्रयोग

इस समय काठियावाडमे जो प्रयोग चल रहा है, उसके सम्बन्धमे सम्मेलनके मन्त्रीने लिखा है [1]

मैं बगालमे हुए अनुभवसे देखता हूँ कि यदि काठियावाड-जैसा प्रयोग बगालमे करनेके साधन उपलब्ध हो तो वहाँ काठियावाडकी शर्तोपर पूनियाँ लेनेवाले लोगोकी भीड़ लग जाए। किन्तु मैं तो भूल गया कि बगालमे तो पूनियाँ देनेकी जरूरत ही नही होगी, क्योकि वहाँ तो कातनेवाले अपने हाथसे रुई पीज लेते हैं और पूनियाँ बना लेते है। वहाँ तो केवल सस्ती रुई मिलनी चाहिए और बुनाईकी दर आधी कर दी जानी चाहिए। वहाँ तो बहुत-से लोग रुई तो रुई कपास लेकर भी सूत कात देनेके लिए तैयार हो जाते हैं, क्योकि वे स्वय कपासको ओटना जानते हैं और ओटते भी है। काठियावाडमे पूनियाँ तो खप गई हैं, किन्तु इसका परिणाम क्या निकलता है, अभी यह देखना बाकी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-६-१९२५

१९०. देशबन्धु चिरंजीव हों!

जब लोकमान्यका देहावसान हुआ तब मैं सौभाग्यसे बम्बईमे मौजूद था। जब देशबन्धुके देहका अग्नि-सस्कार हुआ तब भी दैवने मुझपर ऐसी ही कृपा की, अथवा यह कहूँ कि विधाता तबतक रुका रहा जबतक मेरी यात्राका प्रथम चरण पूरा न हो गया, क्योकि यदि अग्नि-सस्कार एक दिन पहले हो जाता तो मैंने जो दृश्य कलकत्तेमे देखा, मैं उसे न देख पाता।

जिस तरह लोकमान्यके अवसानके समय बम्बई शोकसे पागल हो गई थी, उसी तरह देशबन्धुके समय कलकत्ता शोकसे पागल हो गया था। जैसे वहाँ अगणित स्त्री-पुरुष दर्शन करने, आँसू बहाने और प्रेम प्रदर्शित करने उमड पडे थे वैसे ही वे यहाँ

१. यहाँ नहीं दिया गया है। उसमें काठियावाड़ राजनैतिक परिषद्की खादी उत्पादनकी योजनाकी प्रगतिका विवरण दिया गया था।

भी उमड पड़े। उस समयकी तरह इस समय भी एक भी जाति या प्रजाति ऐसी न थी जिसके लोग उनके प्रति आदरभाव दिखानेके लिए जमा न हुए हो। जब गाडी स्टेशनपर आई तब वहाँ एक अगुल-भर भी जगह खाली नही थी। जैसे लोकमान्यके मृतदेहको कन्धा देनेके लिए लोग एक-दूसरेकी स्पर्धा करते थे वैसे ही वे इस समय भी इसके लिए अधीर थे।

दोनों समय जनताका अपना राज्य हो गया था। लोग पुलिसके नियन्त्रणमें नही रहे थे, बल्कि कहना चाहिए पुलिस स्वेच्छासे लोगोके नियन्त्रणमें आ गई थी। सरकारी अमल जान-बूझकर मुल्तवी कर दिया गया था, और लोगोका अमल चल रहा था। उस दिन लोगोने जो चाहा वह किया। जिस बातको देशबन्धु अपनी जीवितावस्थामे करना और देखना चाहते थे, उसे लोगोने उनके परलोक गमनके समय कर दिखाया था।

यह घटना क्या कोई छोटा-मोटा पदार्थ-पाठ हमें सिखाती है? प्रेमपाश क्या नही कर सकता? लोगोने उस दिन भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी — सबको भुला दिया था, और उस कष्टको सहनेके लिए उनसे किसीको प्रार्थना नही करनी पडी थी।

किसी छत्रपतिके देहान्तके समय भी इस तरह जन-समुद्र नही उमड़ता। जिन्हे समाज संन्यासी मानता है, उनके देहान्तपर भी लोग ध्यान नही देते, अखबारोमे लेख नही लिखते और उनके बारेमें तार नही भेजते, परन्तु किस धर्मके अनुसार यहाँ छोटे-बडे, स्त्री-पुरुष, राजा-रक और हिन्दू-मुसलमान बिना बुलाये पलक मारते ही एकत्र हो गये? वह धर्म है राष्ट्रधर्म। जो मनुष्य इस धर्मका अवलम्बन करता है, आज लोग उसीको धर्मवान माननेके लिए तैयार है और जो मनुष्य इसी एक धर्मका पालन करता है वे उसके दोष भी भूल जानेके लिए तैयार है। इसमें एक रहस्य है। लोग ऐसा मूर्खतावश नही करते। निर्विकार तो एक ईश्वर है। मनुष्य-मात्रमे दोष होना सम्भव है। पर मनुष्य भी यदि पूरी तरह स्व-धर्मका पालन करे तो उसके दोष छिप जाते है और अन्तमें उनका क्षय हो जाता है।

इस समय राष्ट्रधर्म ही धर्म हो गया है, क्योकि उसके बिना अन्य धर्मोका पालन ही असम्भव है। आज राजसत्ताने सर्वत्र लोकजीवनके प्रत्येक अंगको आच्छादित कर लिया है। जहाँ राजसत्ता लोकसत्ता है, वहाँ लोग कुल मिलाकर सुखी है। जहाँ राजसत्ता प्रजाके प्रतिकूल है, वहाँ लोग दुखी है, नि सत्व है और धर्मके नामपर अधर्मका आचरण करते है, क्योकि भयके वश रहनेवाला मनुष्य धर्माचरण कर ही नही सकता। इस महाभयसे मुक्त होना अर्थात् आत्मदर्शन करनेका पहला पाठ सीखना यही राष्ट्रधर्म है। राष्ट्रप्रेमी हमें क्या शिक्षा दे रहे है? आप लोग चक्रवर्तीसे भी न डरे। आप मनुष्य है। मनुष्यका धर्म है कि वह ईश्वरके सिवा किसीसे न डरे। उसे न तो पचम जॉर्ज डरा सकते है और न उनके प्रतिनिधि। लोकमान्यने राजदण्डका भय सर्वथा त्याग दिया था। इस कारण क्या सामान्य जन और क्या पण्डित, सभी उन्हें पूजते थे, क्योकि उनसे उन्हे बल मिलता था। देशबन्धुने भी राजसत्ताका डर बिलकुल छोड दिया था। उनके नजदीक वाइसराय और दरबान दोनो एक-जैसे थे। उन्होने अन्त चक्षुओसे देख लिया था कि अन्तत दोनोमे कोई अन्तर नही है। जिस प्रकार

वाइसरायसे डरना कायरता है, उसी तरह दरवानको डराना भी कायरता है। इसमे सूक्ष्म आत्मदर्शन आ जाता है। यही राष्ट्रधर्म है। इस कारण लोग जाने या अनजाने, अनिच्छासे भी, राष्ट्रधर्मके पालनकर्ताओको पूजते हैं। लोकमान्य ब्राह्मण थे। उनका धर्म-ग्रन्थोका ज्ञान पण्डितोके लिए भी गर्वनाशक था। परन्तु उनकी पूजा की जाती थी, इसका कारण उनका वह ज्ञान न था। देशबन्धु ब्राह्मण नही थे। वे वैद्य समाजमे जन्मे थे। परन्तु लोगोको उनके वर्णसे कोई सरोकार न था। देशबन्धुको संस्कृतका ज्ञान नही था। उन्होने धर्मग्रन्थोंका अध्ययन भी नही किया था। उन्होने सिर्फ राष्ट्रधर्मका पालन किया था। उन्होने निर्भयता साधी थी। इस कारण उनके आगे शास्त्रज्ञ भी झुकते थे। इसीलिए इस अविस्मरणीय दिन लोगोके साथ उन्होने भी अपने आँसू बहाये। राष्ट्रधर्मका अर्थ है — व्यापक प्रेम। वह विश्व-प्रेम नही है, परन्तु उसका एक बडा भाग है। वह प्रेमका धवलगिरि नही, परन्तु प्रेमका दार्जिलिंग है। वहाँसे धवलगिरिकी सुवर्णकान्ति दिखाई देती है, और देखनेवाला मनमे सोचता है — यदि प्रेमका दार्जिलिंग सुहावना है तो यह प्रेमका धवलगिरि जो यहाँ मेरे सामने जगमगा रहा है, कितना सुहावना होगा? राष्ट्रप्रेम विश्वप्रेमका विरोधी नही, बल्कि उसका नमूना है। राष्ट्रप्रेम अन्तमे मनुष्यको अवश्य ही विश्वप्रेमके शिखरपर ले जाता है। इसीलिए लोग राष्ट्रप्रेमीकी बलिहारी जाते हैं। लोगोने कुटुम्ब प्रेमका स्वाद तो चख लिया है! इसलिए उनके हृदयमे उसके लिए मोह नही है। वे ग्राम-प्रेमको कुछ-कुछ समझते हैं। परन्तु राष्ट्रप्रेमको तो लोकमान्य या देशबन्धु-जैसे ही समझ सकते हैं। चूँकि लोग खुद भी ऐसा बनना चाहते है, वे इसीलिए उन्हे पूजते है।

देशबन्धुकी उदारता असीम थी। उन्होने लाखो कमाये और लाखो खरचे। उन्होने किसीको भी रुपयेकी सहायता देनेसे इनकार नही किया; यहाँतक कि कर्ज करके भी सहायता की। उन्होने गरीबोके मुकदमे बिना फीस लिए लडे। कहते हैं कि उन्होने श्रीयुत अरविन्द घोषके मुकदमेमे नौ महीनेतक परेशानी उठाई। अपनी गाँठसे रुपये खरचे और एक पाई भी फीस नही ली। इस उदारतामे उनके राष्ट्र-प्रेमकी अभिव्यक्ति है।

वे मुझसे भी लडे; परन्तु क्या मुझे परेशान करने या गिरानेके लिए? नही, वे लडे तो देशसेवाके लिए और उसीके सिलसिलेमें। जो वाइसरायसे नही डरता था वह मुझसे क्या डरता? उनकी विचारसरणी थी 'यदि सगे भाईका भी काम मुझे राष्ट्र-प्रगतिके खिलाफ दिखाई देगा तो मैं उसका भी विरोध करूँगा।' सबकी विचार-सरणी ऐसी ही होनी चाहिए। हमारा आपसी विरोध सगे भाइयोके विरोधकी तरह था। हम दोनो ही एक-दूसरेसे अलग होना नही चाहते थे। चाहते तो वह राष्ट्र-प्रेमकी न्यूनता होती। इस कारण यद्यपि ऐसा दिखता था कि हम एक-दूसरेसे अलग हो रहे हैं फिर भी हम एक-दूसरेके नजदीक आते जा रहे थे। यह हमारे हृदयकी परीक्षा थी। देशबन्धु इस परीक्षामे उत्तीर्ण हो गये किन्तु मुझे अभी उत्तीर्ण होना है। अभी मुझे देशबन्धु और उनके अन्य साथियोसे वह प्रेम निभाना है। यदि मैं उसमे विफल हो जाऊँ तो आप मुझे परीक्षामे अनुत्तीर्ण समझें।

देशवन्धुकी पिछले तीन-चार मासकी प्रगति अद्भुत थी। उनकी उग्रताका अनुभव तो वहुतोने किया होगा, किन्तु उनकी नम्रताका अनुभव मुझे फरीदपुरसे[1] जो होने लगा सो वढ़ता ही गया। उनका फरीदपुरका भाषण विना विचारे नही लिखा गया था। वह विचारोकी परिपक्वताका सुन्दर पुष्प है। मैने उसमे भी इस परिपक्वताकी प्रगति होती हुई देखी है और यह प्रगति दार्जिलिगमे चरम अवस्थाको पहुँच गई थी। मै इन पाँच दिनोके सस्मरणोका वर्णन करते हुए थकता ही नही हूँ। उस समय उनके हर कार्यसे, हर वातसे, प्रेम ही प्रेम टपकता था। उनका आशावाद वढता जाता था। वे अपने प्रतिपक्षियोपर कटाक्ष कर सकते थे, परन्तु उन पाँच दिनोमे मुझे उसका तनिक भी अनुभव न हुआ। उलटा उन्होने वहुतोके सम्वन्धमे जो वातें कही मैने उनमे से एकमें भी तनिक भी कटुता नही देखी। सर सुरेन्द्रनाथ उनका विरोध वरावर कर रहे थे। फिर भी श्री दासको उनके प्रति अपने व्यवहारमे मिठास ही वरतनी थी। उन्हे उनके हृदयपर विजय प्राप्त करनी थी। वे मुझसे यही काम लेना चाहते थे। उनकी सलाह थी कि मै जितनोको मिला सकूँ उतनोको मिलानेकी कोशिश करूँ।

अव आगे लडाई किस प्रकार लडे, स्वराज्य-दलको क्या करना चाहिए और उसमे चरखेका क्या स्थान है, इत्यादि वाते भी विस्तारसे हुईं। हमने वगालके लिए एक योजना भी तैयार की। शायद वह कभी कार्यान्वित की जाये; किन्तु कार्यकर्त्ता कहाँ है?

मै दार्जिलिगसे हलका मन लेकर चला था। मेरा भय दूर हो गया था। मुझे अपना मार्ग—स्वराज्यका मार्ग स्पष्ट दिखाई दे रहा था। किन्तु अव क्षितिजपर वादल घिर आये है। लोकमान्यके देहावसानके समय मै चिन्तित हो गया था। तव एकसे प्रार्थना करनेके वजाय अनेकोसे प्रार्थना करनेकी स्थिति आ गई थी। मै लोकमान्यको अपना दु ख सुनाकर उनसे उसकी निवृत्ति करा सकता था। उसके वजाय अव मुझे अनेकोके सामने दु ख रोना था, किन्तु फिर भी मै जानता था कि वे उसे दूर न कर सकेगे और अव ऐसा समय आ गया है जव उलटे मुझे उनके आँसू पोछने होगे।

मै देशवन्धुके अवसानसे अधिक विपत्तिमें पड गया हूँ। देशवन्धुका अर्थ था सारा वगाल। मेरे लिए उनकी सही मिलनेका अर्थ था मेरे हाथ दर्शनी हुण्डीका आना। यहाँतक तो दोनोके वियोगका दु ख वरावर है। परन्तु लोकमान्यके अवसानके समय रास्ता सीधा था। लोगोके मनमे नई आशाएँ थी। उन्हे अपनी शक्ति आजमानी थी और नये प्रयोग करने थे। तव हिन्दू और मुसलमान भी एक हो गये मालूम होते थे।

परन्तु अव? अव तो सिरपर आकाश है और पाँव तले धरती। नये प्रयोग मेरे पास है नही। हिन्दू और मुसलमान तो लड़नेकी तैयारियाँ कर रहे है। ऐसा लगता है मानो लोग धर्मोके लिए राष्ट्रधर्मको छोड वैठे हो। ब्राह्मण और अब्राह्मण भी लड़ रहे है। सरकारने मान लिया है कि वह अव हिन्दुस्तानमे मनमानी कर सकती है। लगता है मानो सविनय-अवज्ञा दूर चली गई है। ऐसे समयमे जव एक

१. यहाँ १९२५ में २ से ४ मईतक चित्तरजन दासकी अध्यक्षतामें वगाल प्रान्तीय कृषि परिषद् हुई थी।

मामूली योद्धाका भी उठ जाना खलता है; दस हाथवाले दासका उठ जाना तो असह्य ही हो गया है।

फिर भी मै ठहरा आस्तिक, इससे मेरी हिम्मत नही टूटी है। ईश्वर जैसा चाहे वैसा खेल खेल सकता है। उसका क्या दु:ख और क्या सुख? जिन घटनाओपर अपना नियन्त्रण नही है वे अनुकूल या प्रतिकूल कोई भी रूप ले, इससे कोई अन्तर नही पडता। मुझे अपने कर्त्तव्यका ज्ञान है; भले ही वह गलत हो। जबतक वह मुझे उचित मालूम होता है तबतक यदि मै उसका पालन करता हूँ तो मै अपनी जिम्मेवारीसे मुक्त हो जाता हूँ। मै ऐसे तत्त्वज्ञानका सहारा लेकर अपने मनको आश्वासन दे रहा हूँ। मेरा स्वार्थ मुझे देशबन्धुके वियोगको भूलने ही नही देता।

परन्तु देशबन्धुके लिए मृत्यु ही कहाँ है? देशबन्धु दासका देहावसान ही तो हुआ है। इससे क्या उनके गुणोका अन्त हो सकता है? उनके गुण तो मौजूद ही है। हम उन गुणोंको अपना ले तो देशबन्धु हम सबके भीतर जीवित ही है। जिस मनुष्यने इस ससारकी सेवा की हो वह नही मरता। राम और कृष्ण चले गये, यह कहना ही मिथ्या है। राम और कृष्ण तो इस समय भी अपने असख्य पुजारियोके हृदयोमे जीवित है। इसी तरह हरिश्चन्द्र भी। हरिश्चन्द्रका अर्थ उनका शरीर नही, उनका सत्य है। वे सत्यके अनेक पुजारियोके भीतर जीवित है। यही बात देशबन्धुके सम्बन्धमें भी सत्य है। देशबन्धुका क्षणिक देह गया, क्या इससे उनके सेवाभाव, उदारता, देशप्रेम और निडरता आदि गुण भी चले गये? थोड़े या बहुत अशमे ये गुण समाजमे बढते ही जायेंगे।

इसलिए देशबन्धु मर जानेपर भी जीवित है। जबतक हिन्दुस्तान है तबतक देशबन्धु भी है ही। इसीलिए आइए, हम कहे: "देशबन्धु चिरजीव हो!"

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-६-१९२५

१९१. गंगा-स्वरूप बासन्ती देवी

मैने कुछ वर्ष पूर्व स्वर्गीया रमाबाई रानडेसे अपनी भेटका वर्णन[1] किया था। जहाँतक मुझे उनका परिचय मिला है, वे एक आदर्श विधवा थी।

इस बार मेरे नसीबमे एक महान् वीरकी पत्नीके वैधव्यकी आरम्भिक दशाका चित्र देना बदा है।

बासन्ती देवीसे मेरा सामान्य परिचय १९१९ से था, किन्तु उनसे मेरा प्रगाढ परिचय १९२१ मे हुआ था। मैने उनकी सरलता, चतुराई और उनकी अतिथि-सेवाकी बाते बहुत सुनी थी और मुझे उनका कुछ अनुभव भी हुआ था। दार्जिलिगमें मेरा सम्बन्ध जैसे देशबन्धुसे बढ़ा था वैसे ही बासन्ती देवीसे भी बढा था, किन्तु उनके विधवा हो जानेके बाद तो उनसे मेरा यह परिचय बहुत ही बढ गया है। कहा जा

१. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ ४६३-६४।

सकता है कि वे जव दार्जिलिगसे श्री दासका शव लेकर कलकत्ता आई तभीसे मै उनके पास रहा हूँ। उनके विधवा होनेके वाद उनसे मेरी पहली मुलाकात उनके दामाद-के घर हुई थी। वे वहुत-सी स्त्रियोसे घिरी बैठी थी। वे सधवा थी तव मेरे कमरे-में पहुँचनेपर वे स्वय सामने आती और मुझसे वात करती थी। किन्तु अव विधवा होनेपर वे मुझसे क्या वात करती? वे काठकी पुतलीकी तरह वहुत-सी वहनोमे स्तब्ध बैठी थी। मेरी आँखे एक मिनटतक तो उन्हे ढूँढती ही रही। माँगमे सिंदूर, ललाटपर कुकुमका टीका, मुँहमे पान, हाथमें चूडियाँ और साडीपर लेस और हँस-मुख चेहरा — जव मुझे इनमे से एक भी चिह्न न दिखा तव मै वासन्ती देवीको कैसे पहचानता? अतः जहाँ उनके होनेका अनुमान लगाया था, मै वहाँ जाकर बैठ गया। और उनका मुँह ताकने लगा। उन्हे देखना असह्य हो गया। पहचानमे तो वे आ गयी, किन्तु मुझे अपना रोना रोकना मुश्किल हो गया। ऐसी अवस्थामे छातीको पत्थर वनाकर मै आश्वासन कैसे देता?

उनके मुखपर सदाकी भाँति सहज हास्य आज कहाँ था? मैने उन्हे सान्त्वना देने, प्रसन्न करने और उनसे कुछ शब्द पानेके वहुत प्रयत्न किये। तव कही वहुत समय बाद मै कुछ सफल हुआ।

वासन्ती देवी कुछ मुस्कराई।

मुझे कुछ हिम्मत हुई और मैने कहा,

'आपको रोना नही चाहिए। आप रोयेगी तो सव रोयेगे। मोना (वडी लडकी) वडी मुश्किलसे चुप की जा सकी है। वेबी (छोटी लडकी) की हालत तो आप जानती ही है। सुजाता (पुत्रवधू) फूट-फूटकर रो रही थी, वह शायद अव चुप हो गई है। आप दया करे। हमे आपसे तो अभी वहुत काम लेना है।'

उस वीरागनाने दृढतापूर्वक उत्तर दिया. 'मै नही रोऊँगी। क्या करूँ, मुझे रोना आता ही नही।' मै इसका मर्म समझ गया और उससे मुझे सतोष हो गया। रोनेसे शोकका भार हलका होता है। इस विधवा वहनको भार तो हलका नही करना था, वल्कि वहन करना था, फिर वे रोती क्यो? अव मै कैसे कह सकता था — "लो चलो, हम भाई और वहन जी-भर कर रो ले और अपना शोक कम कर ले?"

हिन्दू विधवा दुःखकी प्रतिमा है। उसने ससारके समस्त दुःखका भार अपने ऊपर ले लिया है। उसने दुःखको सुख मान लिया है और उसे अपना धर्म वना लिया है।

वासन्ती देवी सव तरहके भोजन करती थी। १९२० तक तो उनके यहाँ छप्पन भोग तैयार होते थे और सैकडों लोग भोजन करते थे। वे पानके विना एक मिनट नही रह सकती थी और अपनी पानकी डिबिया सदा पास रखती थी।

किन्तु अव उनकी दशा यह थी, शृगार-मात्रका त्याग, पानका त्याग, मिष्टान्नोका त्याग और मास-मछलीका भी त्याग। शेष था केवल पतिका ध्यान और परमात्माका ध्यान।

मै कितनी ही वहनोसे प्रार्थना करता हूँ कि वे अपना शृगार कम करे। वहुत-सी वहनोसे कहता हूँ कि वे व्यसनोको छोड़ दे। किन्तु कोई विरली ही छोड़ती है।

परन्तु विधवा होनेपर? हिन्दू स्त्री विधवा होते ही अपने व्यसनो और शृंगारको ऐसे ही छोड देती है, जैसे साँप केंचुलीको छोड देता है। इसके लिए उसे न तो किसीके कहने-सुननेकी आवश्यकता है और न किसीकी सहायताकी। रिवाज! तुम क्या नही करा सकते?

इस दु खको सहन करना धर्म है या अधर्म? हमने यह बात अन्य धर्मोमे तो देखी नही। इस बारेमे हिन्दू-धर्मशास्त्रियोने कही-कुछ भूल तो नही की? मुझे तो बासन्ती देवीको देखकर इसमे भूल दिखाई नही देती, बल्कि धर्मकी शुद्ध भावना दिखाई देती है। वैधव्य हिन्दू-धर्मका शृगार है। धर्मका भूषण वैराग्य है, भोग-विलास नही, फिर दुनिया और कुछ कहे तो कहती रहे।

परन्तु हिन्दू-शास्त्र किस वैधव्यका गुण-कीर्तन और स्वागत करते है? उस पन्द्रह वर्षकी मुग्धाके वैधव्यका नही, जो विवाहका अर्थ भी नही जानती। वैधव्य बाल-विधवाओके लिए धर्म नही है, बल्कि अधर्म है। कामदेव बासन्ती देवीको स्वय आकर ललचाये तो वह भस्म हो जाये। बासन्ती देवीके शिवकी तरह तीसरी आँख है। परन्तु पन्द्रह वर्षकी बालिका वैधव्यकी महिमाको क्या समझ सकती है? उसके लिए तो वह अत्याचार ही है। मुझे बाल-विधवाओकी वृद्धिमे हिन्दू-धर्मकी अवनति दिखाई देती है। मै बासन्ती देवी-जैसी नारीके वैधव्यमे शुद्ध धर्मका पोषण देखता हूँ। वैधव्य सब तरह, सब जगह और सब समय अनिवार्य सिद्धान्त नही है। वह उसी स्त्रीके लिए धर्म है जो उसका पालन कर सके।

रिवाजोके कुएँमे तैरना तो अच्छा है, किन्तु उसमे डूब मरना आत्महत्या है।

जो नियम स्त्रियोके लिए हो वही पुरुषोके लिए भी होना चाहिए। रामने यह व्यवहारमे कर दिखाया। वे सती सीताका त्याग न सह सके और वे अपने किये त्यागसे स्वय ही जले। जबसे सीता गई तबसे उनका तेज घट गया। उन्होने सीताकी स्थूल देहका तो त्याग किया, किन्तु उसे अपने हृदयकी स्वामिनी बनाकर रखा। उस दिनसे उन्हे न तो शृगार भाया और न दूसरा वैभव-विलास ही; और वे कर्त्तव्य समझकर तटस्थ वृत्तिसे राज्यकार्य करते हुए शान्त रहे।

जबतक पुरुषवर्ग बासन्ती देवीकी तरह कष्ट नही सहता और विविध भोग-विलासोको नही छोडता तबतक हिन्दू-धर्म अधूरा है। "एकको मधु और दूसरेको माहुर", ईश्वरके दरबारमे ऐसा उलटा न्याय नही हो सकता और नही होता। परन्तु आज तो हिन्दुओमे पुरुषोने इस ईश्वरीय कानूनको उलट दिया है। उन्होने स्त्रीके लिए वैधव्यका विधान करके अपने लिए श्मशान-भूमिमे ही दूसरे विवाहकी योजनाका अधिकार रखा है।

बासन्ती देवीने अबतक किसीके सामने आँसूकी एक बूँदतक नही गिराई है। फिर भी उनके चेहरेपर खुशीकी चमकका कही पता नही है। उनकी मुखाकृति देखकर लगता है मानो वे लम्बी बीमारीसे उठी हो। मैने यह हालत देखकर उनसे निवेदन किया कि वे मेरे साथ कुछ समयके लिए बाहर घूमने चले। वे मेरे साथ मोटरमे तो बैठ गईं, परन्तु बोलती क्या? मैने बहुत-सी बाते चलाईं। वे उन्हे सुनती रही, परन्तु उन्होने उनमे भाग नही लिया। वे घूमने तो गईं, परन्तु पछताईं। उन्हे सारी रात

नींद नहीं आई। 'जो भोग मेरे पतिको अतिप्रिय था वह आज मुझ अभागिनीने भोगा। क्या यह कोई शोक मनाना है?' उनकी सारी रात ऐसे ही विचारोमे गई। भोवल (उनका लड़का) मुझे यह वात वता गया। आज मेरा मौन-दिवस है। मैंने कागजपर लिखा है—'हमे माताजीके दिमागमे से यह पागलपन निकालना ही होगा। अपने प्रियतमको प्रिय लगनेवाली बहुत-सी वाते हमे उसके वियोगके वाद करनी ही पडती है। माताजी विलासके लिए मोटरमे नही बैठी थी, केवल आरोग्यके लिए बैठी थी। उन्हे स्वच्छ हवाकी बहुत जरूरत थी। हमे उनका वल देना है और इस तरह उनके शरीरकी रक्षा करनी है। पिताजीके कामको चमकाने और बढानेके लिए हमे उनके शरीरकी आवश्यकता है। तुम यह वात माताजीसे कह देना।'

भोवलने कहा, 'माताजीने तो मुझसे कहा था कि आपसे यह वात ही न कही जाये। परन्तु मुझसे रहा नही गया, मैं इसलिए यहाँ आया हूँ। अभी तो यही उचित मालूम होता है कि आप उन्हे मोटरमे बैठनेके लिए न कहे।'

बेचारा भोवल! जो किसीकी मानता ही न था आज वकरी-जैसा वन गया है! प्रभु, उसका कल्याण करे।

पर इस साध्वी विधवाका क्या? उन्हे वैधव्य प्यारा लगता है, फिर भी मुझे असह्य मालूम होता है। सुधन्वा खौलते तेलके कडाहेमे पड़ा नाचता था और मुझ-जैसे दूरसे देखनेवाले उसके दु.खकी कल्पना करके काँपते रहे। सतियो! तुम अपने इस दु.ख-सहनमे दृढ़ रहना! वह दुख नही, सुख है। तुम्हारा पुण्य स्मरणकर बहुत-से पार उतर चुके है और बहुत-से पार उतरेगे।

वासन्ती देवीकी जय!

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-६-१९२५

१९२. दोष किसका ?

एक स्वयंसेवक लिखता है:[1]

मुझे इन शब्दोकी सचाईका अनुभव यहाँ वगालमें सव जगह होता है। हमने गाँवोमे जानेका विचार अभी-अभी किया है। पहले तो लोग गाँवोके लोगोंसे चीजें लेनेकी नीयतसे वहाँ जाते थे। उनको कुछ देनेके विचारसे उनके पास जाना तो अभी शुरू हुआ है। इतने कम समयमे हम उनका विश्वास कैसे प्राप्त कर सकते है? कई वार तो वेटेको वापका विश्वास प्राप्त करनेमे वर्षों लग जाते है। हमे अपनी खोई हुई साख फिर जमानी है। इसलिए अधीर होनेसे कुछ हासिल न होगा। कुछ लोग सेवाके नामसे अपना उदर-निर्वाह करते हैं। गाँवोके लोगोके पास अनुभवके सिवा

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। इसमें लेखकने अपने अनुभवके आधारपर कहा है कि यदि ग्रामीण-जन कार्यकर्ताओंका विश्वास नही करते तो इसमें दोष कार्यकर्ताओंका ही है।

ऐसा दूसरा कौन-सा साधन है, जिससे वे ऐसे लोगों और सच्चे कार्यकर्त्ताओंमें अन्तर कर सके? इसीलिए स्वयसेवकोको अपने भीतर धीरज, शान्ति, स्वार्थहीनता आदि गुणोका विकास करना पड़ता है। जनताके पास तो अनुभवके सिवा कोई दूसरा ज्ञान नही होता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २८-६-१९२५

१९३. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

२९ जून, १९२५

प्रिय चार्ली,

तुम्हारा पत्र और 'फादर फरगिव देम' अनुच्छेदपर तुम्हारा लेख मिला। तुम्हारे लेखका मै इस्तेमाल कर सकूँ उससे पहले मेरे पास मूल पत्रका आ जाना जरूरी है। कृपया उसे खोजकर भेजो। मुझे जुलाईके अन्ततक बंगालमे ही रहना होगा। आशा है कि बड़े साहबका[1] कष्ट कुछ हलका हुआ होगा। उन्हे मेरा स्नेह-सन्देश दें और कहे कि मै उनकी बराबर याद करता रहता हूँ।

तुम्हारा,
मोहन

श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज
द्वारा प्रिंसिपल
सु० रुद्र
सोलन
शिमला हिल्स

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०४९) से।

१ सम्भवतः सुशीलकुमार रुद्र, जो बीमार थे।

१९४. पत्र : देवदास गांधीको

सोमवार [२९ जून, १९२५][1]

चि० देवदास,

यदि मैं यह कार्ड न लिखूं तो फिर शायद पत्र ही न लिख सकूं। तुम्हारा सुन्दर पत्र मुझे मिल गया है। उसकी शैली और गुजराती दोनो वहुत अच्छी है। अब तुम 'यग इडिया' और 'नवजीवन' मे कुछ लिखना आरम्भ कर दो तो अच्छा हो। मै तो धनसग्रहमे व्यस्त हूँ। कृष्णदासको पत्र नही मिला। बा कातती है, यह वहुत अच्छी वात है। ओता गाधीकी सारी सन्तानके नाम-धाम तो मैं भी नही वता सकता। तुमने इस सम्वन्धित सामग्रीका सग्रह आरम्भ किया है, सो ठीक ही है। उत्तमचन्द वापाके पुत्र तो छ. थे, यह सुना है। खुशालभाई अधिक वता सकेगे। वालगगाधर आ गया, इससे मुझे प्रसन्नता हुई है। उससे यह कह देना। उसके सम्वन्धमे मुझे भय तनिक भी नही है। कल्याणकृतकी दुर्गति होती ही नही।[2] वालकृष्णकी भूले भी आखिरकार उसके विकासमें ही सहायक है।

मै देशवन्धुका श्राद्ध यथोचित रूपमे कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २०४५) की फोटो-नकलसे।

१९५. पत्र : जमनालाल बजाजको

सोमवार [२९ जून, १९२५][3]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने इस वार अलवरके सम्वन्धमे कुछ अलग ढगसे लिखा तो है। मुझे आशका है कि वहाँ जानेके सम्वन्धमे कोई निश्चय करनेमे कुछ समय लगेगा। ऐसा लगता है कि मैं तो अगस्त शुरू होनके पहले तो नही ही जा सकूँगा। मैं जुलाईका आखिरी हफ्ता आश्रममें ही विताना चाहता हूँ। और उसके वाद भ्रमण करूँगा। तुम १६ तारीखको तो आ ही रहे हो। मैंने वहाँसे सावरमती तार दिया था, वह तुम्हे मिल गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २८५४) की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरमें कलकत्ता, ३० जून, १९२५ है। सोमवार २९ जूनको था।

२. गीता, अध्याय ६-४०।

३. डाककी मुहरमें कलकत्ता, ३० जून, १९२५ है।

१९६. पत्र : मणिबहन पटेलको

[कालीघाट
कलकत्ता]
सोमवार [२९ जून, १९२५][1]

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। पिताकी सेवा करनेके प्रसग ढूंढती रहना। वस्तुत वे ढूंढने नही पडते। फिर भी तुमने जो लिखा है सो मेरी समझमे आ गया है। डाह्याभाई 'नवजीवन' मे जाता ही है तो उसे वहाँ चित्त लगाकर काम करना चाहिए। स्वामीका[2] अनुशासन माननेमे बहुत लाभ है। वह सुन्दर तालीम है। वे मजदूरीका ही काम क्यो न सौपे, वह उसे भी दिल लगाकर करे। मै कभी थोडे वक्तके लिए आ जाऊँगा, परन्तु कब आ सकूंगा यह तो ईश्वर ही जाने। बापूके स्वास्थ्य-समाचार मुझे देती रहना। बापूके अग्रेजी हिज्जे कच्चे है, अत. तुम्हारे भी वैसे ही रहे, यह क्या जरूरी बात है? बापके गुणोका अनुसरण किया जाता है, दोषोका कदापि नही।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

१९७. तार : सुधीर रुद्रको[3]

कलकत्ता
३० जून, १९२५

आपके दु खमे मेरा हृदय और मेरी दुआएँ आपके साथ है। ईश्वर आपको क्षति सहनेकी भरपूर शक्ति देगा। स्नेह।

गांधी

अग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ६०५०) से।
सौजन्य : श्रीमती रुद्र, इलाहाबाद

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. स्वामी आनन्दानन्द।
३. यह तार गाधीजीने प्रोफेसर सुशील कुमार रुद्रके देहान्तपर कलकत्तासे ३० जूनको भेजा था।

१९८. भाषण : यूनिवर्सिटी इन्स्टीटयूट, कलकत्तामें[1]

३० जून, १९२५

महात्माजीने . . . देशबन्धुकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि देशबन्धु जीवन-भर एक सरापा योद्धा ही रहे। उन्होने अनेक संघर्षोंमें भाग लिया और प्रतिद्वन्द्वियोंको कभी नहीं बख्शा। किन्तु जहाँतक मुझे याद है, उन्होंने कभी किसीकी परेशानीका अनुचित लाभ नहीं उठाया। दार्जिलिंगमें उनके सहवासमें बीते मेरे अन्तिम पाँच दिन कभी भुलाये नहीं जा सकते, क्योकि उन दिनोंमें मैं उनके जीवनके श्रेष्ठ गुणोंको जान सका था। उन्हें अपने किसी विरोधीके प्रति कोई द्वेष नहीं था। वे अपने देशके हितके काममें लगे हुए हर व्यक्तिसे सहयोग करनेको सदैव तत्पर रहते थे। चित्तरंजन दासने समूचे देशको अपने सच्चे प्रेमसे जीत लिया था; इसीलिए उन्हें देशबन्धुकी उपाधिसे विभूषित किया गया था। उन्हें यह उपाधि देशवासियोंने देशके हितमें किये गये उनके महान् त्यागके प्रति आदरभाव व्यक्त करनेके उद्देश्यसे दी थी। पूर्वी बंगालके अपने दौरेमें मैं हजारों युवा और वृद्ध लोगोंके सम्पर्कमें आया। उनकी भावनाओंसे मैंने समझ लिया है कि उनके दिलोमें देशबन्धु दासके प्रति कितना स्नेह, प्यार और आदर है। मेरे पास अब भी रोजाना विद्यार्थियोके ऐसे सैकड़ों पत्र आ रहे हैं जिनमें उनकी पवित्र और प्रेमपूर्ण स्मृतिके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित हुआ करती है। देशबन्धु बंगालके नवयुवकोके लिए पिता-तुल्य थे। उनकी छत्रछाया प्रत्येक नवयुवकको संरक्षण प्रदान करती थी। मेरा तो खयाल है कि उनकी मृत्युसे सम्पूर्ण विद्यार्थी समाजने अपना सच्चा नेता खो दिया है। यदि ईश्वर उन्हें कुछ दिन और जीवित रखता तो वे नवयुवकोंको उनके लक्ष्यतक पहुँचानेमें उनके मार्गदर्शक बन सकते थे। उनकी उदारता और विद्यार्थियोंके प्रति उनका प्रेम भी असीम था। मैं यहाँ भारतमाताके उस महान् सपूतका गुणगान करने नहीं आया हूँ बल्कि मैं चाहता हूँ कि बंगालके नवयुवक यह समझकर कि देशबन्धुने उनके लिए कितना-कुछ किया है, उस सबके लिए उनके कृतज्ञ हों। मुझे विश्वास है कि बंगालके नवयुवक देशबन्धु दासके लिए समुचित स्मारक खड़ा करनेमें मेरी मदद करेंगे। मै यह नहीं चाहता कि आप लोग अपना पैसा ही मुझे दें, मैं तो यह भी चाहता हूँ कि आप लोग अपने अभिभावकों, मित्रों और सम्बन्धियोके पास जायें और इस कामके लिए उनसे धन मांगें। महात्माजीने अपने भाषणके अन्तमें कहा कि बंगालके नवयुवकों-

१. गांधीजीकी अध्यक्षतामें हुई इस सभामें विद्यार्थी और कलकत्ताके प्रमुख नागरिक बहुत बड़ी संख्यामें शामिल हुए थे।

को चाहिए कि वे स्वराज्य-प्राप्तिकी खातिर देशबन्धुके अधूरे कामको पूरा करनेका प्रयत्न करें।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १-७-१९२५

१९९. अपील : देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए[2]

१ जुलाई, १९२५

किसी एक ही विषयपर मौलिक लेख लिखते चले जानेकी मेरी क्षमता बहुत ही सीमित है। किन्तु सम्पादक महोदयने देशबन्धुके बारेमें मुझसे कुछ लिखनेको कहा है। मैं उनकी बात मानकर कुछ लिखनेका यह सुअवसर हाथसे न जाने दूंगा। देशबन्धुके व्यक्तित्व और कृतित्वके जो उत्तम मूल्यांकन पहले ही प्रकाशित हो चुके हैं, उनमें अपनी ओरसे कुछ नया जोड़नेकी अपेक्षा मेरे मनमें उन्हींका सर्वोत्तम प्रयोग करनेकी बात अधिक उठ रही है। देशबन्धु जो महान् विरासत हमारे लिए छोड़ गये हैं, हमें चाहिए कि हम अपने कामों द्वारा अपनेको उसके योग्य सिद्ध करें। स्मारक कोषके लिए सैकड़ों स्त्री-पुरुषोंने जो चन्दा दिया है उसके लिए मैं दाताओंके प्रति आभार प्रकट करता हूँ। लेकिन यदि हमें थोड़े ही समयके अन्दर दस लाख जमा कर लेना है, जैसा कि हमें करना ही चाहिए तो हजारों नहीं लाखों लोगोंको दान देना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि जो लोग इन पंक्तियोंको पढ़ें वे फिरसे किसी अपीलकी प्रतीक्षा न करके शीघ्र अपना चन्दा भेजनेकी कृपा करेंगे। उन्हें चाहिए कि यथासम्भव अधिकसे-अधिक धन भेजें, न कि थोड़ा-सा भेजकर यह सोचें कि इतना ही हो सका। वे अपने मित्रोंसे चन्दा माँगें, इसके लिए उन्हें किसी प्रमाणपत्रकी आवश्यकता न होगी। वे स्वयं अपने-आप स्वयंसेवक बन सकते हैं। इसमें समयकी बचत है और अधिकसे-अधिक अच्छे परिणामों और कमसे-कम धोखाधड़ीकी सम्भावना है।

मैं जानता हूँ कि लोग स्वराज्य हासिल करनेको अधीर हो रहे हैं। कुछका विचार है कि देशबन्धुके स्मारकके रूपमें केवल एक अस्पताल बनवा देना उस व्यक्तिकी स्मृतिका यथोचित सम्मान करना नहीं होगा। जिसने अपना जीवन स्वराज्यके लिए अर्पित कर दिया। ऐसा सोचनेवाले व्यक्ति देशबन्धुको नहीं जानते। उनकी नजरोंमें किसी भी भारतीय द्वारा किया गया कोई भी श्रेष्ठ कार्य स्वराज्यकी दिशामें एक कदम था। प्रत्येक सफल सामूहिक प्रयत्न स्वराज्यकी दिशामें एक बहुत बड़ा कदम है। हमें राजनैतिक सत्ता तो मिलेगी ही। हम उससे बहुत दिनोंतक वंचित नहीं रखे जा सकते। वह सत्ता चाहे जब प्राप्त होगी, होगी — अनेकों द्वारा समान

१. लगभग २५०० रु० तत्काल इकट्ठे हो गये और ये रुपये इंस्टीट्यूटके सदस्योंकी तरफसे पहली किस्तके रूपमें गांधीजीको दिये गये।

२. यह अपील मूलतः १-७-१९२५ के फॉरवर्डके देशबन्धु-विशेषांकमें प्रकाशित हुई थी।

उद्देश्यके लिए किये गये परिश्रमके परिपक्व फलके रूपमे ही। कोषका चन्दा — विशेष करके यदि वह लाखो लोगोसे मिलता है, फिर उस कोषमे एक-एक धेला करके ही धन क्यो न आया हो — इस वातका ही नही कि हममें सच्चा प्रेम है वल्कि इसका भी द्योतक होगा कि हममे संगठन करनेकी क्षमता भी है। इसलिए कोषके लिए दान देना ही फिलहाल देशवन्धुकी सेवाओकी कद्र करनेका सबसे अच्छा तरीका है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-७-१९२५

२००. भाषण : देशबन्धुके श्राद्ध-दिवसपर

कलकत्ता

१ जुलाई, १९२५

मै आश्रममे अनेकवार प्रवचन देता हूँ, किन्तु देता हूँ अपने ही लोगोके सम्मुख। वे मेरी वात समझते है और मुझे निभाते है। इसके अतिरिक्त, प्रसग आनेपर मै 'गीता'मे से कुछ अश उद्धृत करता हूँ, फिर भी मेरा भाषण धार्मिक प्रवचन नही कहा जा सकता। मेरे विचारसे धर्मका अर्थ है धर्मका आचरण। प्रवचनकी आवश्यकता हो सकती है, किन्तु प्रत्येक धार्मिक मनुष्य प्रवचन दे सके, ऐसा नही है। यद्यपि यह सच है कि प्रवचनकर्त्ताका जीवन धर्मनिष्ठ होना चाहिए।

मेरे लिए 'गीता' शाश्वत मार्गदर्शिका है। मै अपने हर कार्यके लिए 'गीता'में से आधार खोजता हूँ और यदि वह आधार नही मिलता है तो मै उस कार्यको नही करता हूँ या अनिश्चित रहता हूँ। इसलिए जव मैने घवराहटके वावजूद वोलना स्वीकार किया है तव सोचता हूँ कि मुझे मृत्यु और जन्मके रहस्यपर कुछ कहना चाहिए। जव-जव मेरे कुटुम्वियोंकी या स्नेहियोंकी मृत्युका अवसर आया है, तव-तव मैने 'गीता'का ही आश्रय ढूँढा है। 'गीता' यही वताती है कि मृत्यु शोक करनेकी वस्तु हो ही नही सकती। यदि कभी मेरी आँखोसे किसी समय आँसू निकले है तो वे अनिच्छासे ही; और उसका कारण है मेरी निर्वलता। जव मैने देशवन्धुकी मृत्युका समाचार सुना तव मै स्तव्ध हो गया और मेरी आँखोमे आँसू आ गये। मै इस वातपर विचार करता हूँ तो वह मुझे निर्वलताका ही परिणाम मालूम होता है। आइए, आज हम 'गीता'से कुछ आश्वासन प्राप्त करे।

मैने बहुत बार कहा है कि 'गीता' एक महारूपक है। मै नही समझता कि इसमे दो पक्षोके युद्धका वर्णन है। जव मैने जेलमें[1] 'महाभारत' पढा तव मेरी यह धारणा और भी पुष्ट हो गई। मुझे तो 'महाभारत' स्वत एक महाधर्मग्रन्थ मालूम

१. यरवदा जेलमें।

होता है। उसमे ऐतिहासिक घटनाएँ तो हैं, परन्तु वह इतिहास नही। हम सर्प-सत्र-जैसी कथाका शब्दार्थ करे तो हमें उससे सन्तोष कैसे हो सकता है? तब तो अन्ध-विश्वासोसे हमारा दम ही घुटने लग जायेगा। कवि स्वय डकेकी चोट कहता है, मै इतिहासकार नही हूँ। 'गीता'मे हमारे हृदयके अन्दर चल रहे युद्धका वर्णन है और उस युद्धका वर्णन करनेके लिए लेखनी कितनी ही स्थूल ऐतिहासिक घटनाओका उपयोग करती है; परन्तु उसका उद्देश्य तो है हमारे हृदयमे प्रकाश डालकर हमसे उस प्रकाशमे उनकी ऊहापोह करवाना। हम जब दूसरे अध्यायके अन्तमे आते है तब ऐसी शका नही की जा सकती कि किसी ऐतिहासिक युद्धकी बात चल रही है। अर्जुनका स्थितप्रज्ञके लक्षण जाननेकी इच्छा प्रकट करना और भगवान्‌का युद्धमे प्रवृत्त अर्जुनको उन लक्षणोको बताने लगना विचित्र मालूम होता है।

परन्तु मेरा विषय तो है आपको मृत्युका रहस्य बताना। यदि आप मेरी तरह ही यह मानते हों कि 'गीता' एक रूपक है तो आप 'गीता'के अनुसार मृत्युका रहस्य भी समझ सकेगे।

नासतो विद्यतेभावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्वदर्शिभिः॥ २-१६

सारा रहस्य इस श्लोकमे भरा हुआ है। अनेक श्लोकोमे बार-बार कहा गया है कि शरीर 'असत्' है। 'असत्'का अर्थ 'माया' नही, ऐसी वस्तु नही जो कभी, किसी रूपमे उत्पन्न न हुई हो, बल्कि उसका अर्थ है क्षणिक, नाशवान और परिवर्तन-शील। फिर भी हम अपने जीवनका सारा व्यवहार ऐसा मानकर ही करते हैं मानो हमारा शरीर शाश्वत हो। हम शरीरको पूजते है और उससे चिपटे रहते हैं। यह सब हिन्दू धर्मके विरुद्ध है। यदि हिन्दू धर्ममे कोई बात सूर्यके प्रकाशकी तरह स्पष्ट रूपसे कही गई है तो वह है शरीरका और दृश्य पदार्थोका असत् भाव। फिर भी हम जितना मृत्युसे डरते है और मरे हुओके लिए जितना रोते-पीटते हैं, उतना शायद ही कोई अन्य धर्मावलम्बी डरते या रोते-पीटते हो। 'महाभारत'मे तो उलटा यह कहा गया है कि रुदनसे मृत आत्माको सन्ताप होता है और 'गीता' इसलिए लिखी गई है कि लोग मृत्युको भीषण वस्तु न मानें। मनुष्यका शरीर प्रवृत्ति करते-करते थक जाता है और मृत्यु शरीरको दुःखसे मुक्त करती है। मै ज्यो-ज्यो देशबन्धुके सतत प्रवृत्तिमय जीवनपर विचार करता हूँ त्यो-त्यों मुझे लगता है कि वे आज जीवित हैं। जब उनका शरीर था तब वे पूर्ण जीवित न थे, किन्तु वे आज सोलहो आने जीवित हैं। हमने अपने स्वार्थके कारण मान लिया है कि उनका शरीर ही महत्त्वकी वस्तु थी, जबकि हमे 'गीता' यह सिखाती है—और मैं प्रतिदिन यह अधिकाधिक अनु-भव करता जाता हूँ कि अशाश्वत वस्तुके लिए की गई यह सब चिन्ता निरर्थक और व्यर्थका कालक्षेप है।

'असत्'का भावार्थ है कि असत्‌का अस्तित्व नही होता और जो सत् है उसका नाश कभी नही हो सकता। शेक्सपियरका यह कहना भारी भूल है कि मनुष्यका किया शुभ कर्म उसके साथ मिट्टीमें दब जाता है, और अशुभ ही ससारमें जीवित

रहता है। शुभ और सत् ही नित्य होता है। ससार भलाई कर जानेवाली आत्माओ-का ही नित्य स्मरण करता है। दुनिया असत् और अशुभको आसानीसे भूल जाती है और शुभका ही स्मरण रखती है। हम रामचन्द्रजीका उदाहरण ही ले। मै तो रामको अवतार मानता हूँ। परन्तु मै यह नही मानता कि जब वे सशरीर होगे तब उन्होने कोई भी दोष नही किया होगा। परन्तु आज हम उन्हे 'पूर्ण पुरुष' मानते है। हम कृष्णको भी पूर्णावतार मानते है। आज लाखो-करोडों हिन्दुओमें एक भी मनुष्य ऐसा नही जो राम या कृष्णके दोष निकाले। इससे भी 'नासतो विद्यते भावो'—इस श्लोकका रहस्य प्रकट होता है—दुनियाने उनके शाश्वत शरीरका अर्थात् गुणोका ही सग्रह किया। उनके अशाश्वत शरीर—दोप इत्यादि—का ज्ञान किसीको नही है। हम देशबन्धुका अनुकरण करना चाहते है। तब क्या हम उनके शरीरका अनुकरण करेंगे? क्या हम उनके शरीरको पूजते थे? यदि ऐसा होता तो क्या उनका प्यारा बेटा उनके शरीरका अग्निदाह कर देता?

अत. 'गीता' इस श्लोकमे पुकार-पुकारकर कहती है कि हम अपने जीवनमे सत्य-को धारण करके जिये और माया, असत्य और पाखण्डका त्याग करे। वाणी प्राय· असत्य हो जाती है; वह पाखण्ड बन जाती है। क्रोध असत्य है, काम, मोह, मद आदि असत्य है। हमे इन तमाम सर्पोके विनाशके यज्ञका अनुष्ठान करना है। स्थूल सर्प तो बेचारा शरीर-को ही कष्ट देता है, परन्तु ये सर्प तो हमारी रग-रगमे प्रविष्ट हो जाते है और उनसे हमारे आत्माको भी हानि पहुँचनेका भय उत्पन्न हो जाता है। परन्तु आत्माको हानि पहुँच ही नही सकती। वह तो अविनाशी है। यदि हम इस बातको समझ ले कि सत् क्या है तो हम जन्म-मृत्युका रहस्य भी समझ जाये। जिस प्रकार रसायन-शास्त्री कहते हैं कि मोमबत्तीके जलनेसे उसके किसी मूल तत्त्वका नाश नही होता है उसी प्रकार जब शरीर निष्प्राण होनेपर जला दिया जाता है तब उसका कोई तत्त्व नष्ट नही होता। जन्म और मृत्यु एक ही वस्तुकी दो दशायें है। हम अपने स्वजनोकी मृत्युपर रोते-धोते है इसका कारण हमारा स्वार्थ ही है। मुझे उस दिन श्मशान-घाट-पर उस भारी भीडके चेहरेपर शोककी छाया न देखकर पहले तो चिढ मालूम हुई; मैने मनमे कहा—इन लोगोको कुछ भी होश नही है, इन्हें प्रसगकी गम्भीरताका भी खयाल नही है—परन्तु पीछे मेरी समझमे आ गया कि वे ही सचाईपर थे। इस देहके छूटनेसे उनका स्वार्थ हत नही हुआ था, वे तो एक भव्य जीवनका सन्मान करनेके लिए ही आये थे—वे तो उनकी की हुई सेवाओके साक्षी होनेके लिए और "धन्य है ऐसा जीवन! धन्य है ऐसा जीवन!" कहनेके लिए ही आये थे। हमारे शोककी अपेक्षा उनका आनन्द अधिक सच्चा और सार्थक था। गगा-स्वरूप वासन्ती देवी, जिन्हे मै श्री दासकी मृत्युके बाद देखनेपर पहले दिन पहचानतक नही सका था, धन्य है। उन्होने तो मेरे सामने एक आँसूतक नही गिराया। हमें तो अपने मुखपर भी उदासी नही लानी चाहिए और विषाद भी नही करना चाहिए। हम तभी कह सकते है कि हमने शरीरकी क्षणभगुरता समझ ली है। विवाह दो शरीरोका नही होता। दो आत्माएँ शारीरिक भोग-विलासके लिए नही, बल्कि अपने भव्य विकासके

लिए एकत्र हुई थी। अब उनमें से एकका शरीर छूटनेपर उनका वह सम्बन्ध उलटा अधिक दृढ हो गया। इसलिए आज हम यहाँ आँसू बहानेके लिए एकत्र नही हुए हैं। हमें चाहिए कि हम उनके गुणो अर्थात् उनके अमर शरीरका स्मरण करे और उनके गुणोका ताना-बाना अपने जीवनमें बुन ले।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-७-१९२५

२०१. प्रश्न-माला

१४ मई, १९२५ के 'यंग इंडिया' में फरीदपुरके अछूत जातिके किन्हीं सज्जनोंके साथ आपकी भेंटका जो विवरण[1] छपा है उसमें आपने उनसे आत्मशुद्धिके विचारसे कुछ काम करनेका अनुरोध किया है। किन्तु आत्मशुद्धिसे आपका मतलब क्या है? आत्मशुद्धिके बाहरी लक्षण क्या हैं? आत्मशुद्धिमें कायिक, मानसिक और वाचनिक, तीनों शुद्धियाँ आती हैं, अथवा इनमें से कोई एक ही?

आत्मशुद्धिका मतलब है मन, वाणी या शरीरकी समस्त अशुद्धियाँ दूर करना। इन 'अछूत' मित्रोसे अनुरोध किया गया था कि वे बुरी बात न सोचे, झूठ न बोले अथवा किसीसे गाली-गलौज न करे तथा शरीरको भली-भाँति स्नान-मज्जन, शुद्ध भोजन द्वारा — मुरदार मांस अथवा अन्य अशुद्ध भोजन, मद्य या अन्य मादक पदार्थोंको त्याग कर — पवित्र रखे।

२. यदि कोई जाति अथवा व्यक्ति उस स्तरतक पहुँच जाता है तो क्या उसके साथ अछूत-जैसा व्यवहार किया जा सकता है?

यदि कोई व्यक्ति उस स्तरतक नही पहुँचता — हममें से अनेक उस आदर्श स्थितितक नही पहुँच सकते, तो भी वह अछूत नही माना जा सकता। यदि यह मानदण्ड हमपर लागू किया जाये तो हमे भी उसे प्राप्त करनेमे कठिनाई होगी।

३. हिन्दू जातिके समस्त वर्गोंमें खान-पान अथवा पूजाके विषयमें कोई एकता नहीं है। आपके खयालसे उनमें इस तरहकी एकता उत्पन्न करनेके लिए पहला कदम क्या है?

मैं इस प्रकारकी एकता उत्पन्न करनेका कोई प्रयत्न नही कर रहा हूँ। मैं जिस ऐक्यके लिए लालायित हूँ, वह हृदयोका ऐक्य है। यह सभी बन्धन-बाधाओसे परे है तथा उनके होते हुए भी कायम रह सकता है। हम उसी एक परमात्माकी विभिन्न सूत्रोमे और विभिन्न नामोसे आराधना करते हैं।

४. यह सुझाव दिया गया है कि यदि पूजाके सार्वजनिक स्थानोंमें तथा जलपान आदिकी दुकानोंमें साफ-सुथरे हिन्दुओको प्रवेशकी अनुमति दे दी जाये तो वह एकता उत्पन्न करनेकी दिशामें पहला कदम होगा। इस विषयमें आपकी सम्मति क्या है?

१. देखिए "अस्पृश्योंके साथ बातचीत", ३-५-१९२५ या इससे पूर्व।

पूजाके सार्वजनिक स्थान उन सभीके लिए खुले होने चाहिए जो सामान्य शिष्टाचारके नियमोका पालन करे। पोशाकमे सफाईके स्तरका निश्चय कौन करेगा? ये बाते तो कानून द्वारा नही, बल्कि लोकमत द्वारा नियन्त्रित की जाती है। यदि कोई जलपान आदिकी दुकान स्वय स्वच्छ है तो वह निस्सन्देह उन लोगोको सौदा बेचनेसे इनकार कर देगी जो गन्दे है। यदि वह ऐसा न करे तो उसकी ग्राहकी टूटने लगेगी। लेकिन यदि कोई मिष्टान्नविक्रेता किसी 'अछूत' को अपना सौदा बेचनेसे उसके अछूत कहे जानेके कारण इनकार करता है तो उसे अपना धन्धा चलानेका कोई अधिकार नही है।

५. आपका अस्पृश्यताका अर्थ कठिन है। उच्च वर्गोके हिन्दू भी अपने उन बच्चोंका, जिनका उपनयन संस्कार नहीं हुआ है, छुआ पानी नहीं पीते और पकाया हुआ खाना नहीं खाते। क्या आप इसे अस्पृश्यता कहते हैं?

मै इसे अस्पृश्यता नही कहता। मैंने बीसियो बार साफ-साफ कहा है कि हिन्दूधर्ममे पचम वर्ण जैसी कोई चीज नही है। इसलिए अछूतोको वे सभी अधिकार मिलने चाहिए जो चारो वर्णोको सामान्यत प्राप्त है।

६. कुछ लोगोंका सुझाव है कि पानी पीनेपर बहुत ज्यादा जोर देनेके बजाय उच्च जातिके सवर्ण हिन्दुओंके मनसे ऊँच-नीचकी भावना दूर करने तथा उनमें आपसी प्रेम और सहायताका भाव बढ़ानेके लिए प्रयत्न करना बेहतर होगा। क्या आप इस सुझावसे सहमत है?

मै इस सुझावसे वही सहमत हूँ जहाँ उससे पाखण्डपर पर्दा नही पडता। आप किसी पेडकी परीक्षा उसके फलसे ही करेगे। मै खाने और पीनेपर कभी जोर नही देता। मै ऐसा तभी करता हूँ और करना चाहता हूँ जब कोई आदमी किसी अस्पृश्यका छुआ पानी पीनेसे इसलिए इनकार करता है कि वह अछूत कहलाता है। क्योकि उसका यह इनकार उसके ऊँचेपनके घमण्डका सूचक होता है।

७. इस ध्येयकी प्राप्तिका आसान और सीधा तरीका सामूहिक धार्मिक कथा-कीर्तनों तथा धार्मिक मेलों द्वारा, जिनमें लोग चाहे वे किसी भी मत और जातिके हों, वैष्णव धर्मकी शिक्षाओंका प्रचार करना है। यह तरीका चार सदियोंसे भी अधिक कालसे प्रचलित है। इस सुझावके विषयमें आपकी क्या सम्मति है?

मैंने कीर्तनोके असरके बारेमें पूरी तरह विचार नही किया है। लेकिन मै किसी भी अच्छे तरीकेका जिससे दम्भपूर्ण उच्चताकी भावनाकी यह दीवार ढहे, स्वागत करनेके लिए तैयार हूँ।

८. यह बात लगभग मानी हुई ही है कि बंगालमें हिन्दू जाति नष्ट हो रही है। आपके खयालसे उसके इस क्रमिक ह्रासका मुख्य कारण क्या है? उसका यह ह्रास किन उपायोंसे रोका जा सकता है? यह भी सभी मानते हैं कि हिन्दुओंका ऊँचाई, शक्ति तथा जीवटकी दृष्टिसे शारीरिक ह्रास हुआ है। उनमें इन गुणोंका उत्कर्ष फिर कैसे किया जा सकता है?

मैंने भी ऐसे विवरण देखे तो है; लेकिन हिन्दुओके ह्रासका मुझे कोई सबूत नही मिला है। फिर भी मुझे इस कथनपर विश्वास करना चाहिए कि हम शारीरिक रूपमे दुर्बल होते जा रहे है। इसके कारण स्पष्ट है। हमारी बढती हुई गरीबी तथा बाल-विवाह इस ह्रासके दो बड़े कारण है। एकका निराकरण चरखेसे किया जा सकता है, तथा दूसरेका व्यक्तियों द्वारा अपने लडको और लडकियोके विवाह तबतक न करनेके दृढ निश्चयसे जबतक उनकी उम्र १६ वर्षसे अधिक तथा २० वर्षके लगभग न हो जाये। विवाह जितनी देरीसे किया जाये, उतना ही अच्छा है। मै तो इस विचारका हूँ कि चाहे कितना ही बडा खतरा क्यो न उठाना पडे, लडको या लड़कियोका विवाह तबतक न किया जाना चाहिए जबतक वे खासी बडी आयुके और गृहस्थीका बोझा उठाने योग्य तथा पूर्ण स्वस्थ न हो। इसका उपाय यह है कि जो लोग सुधारकी आवश्यकता समझते है, वे स्वय इस विचारपर अमल शुरू करे तथा अपने पडोसियोको वैसा करनेके लिए समझायें-बुझाये। जो लोग सुधार करना चाहते है तथा खतरेकी सम्भावना कमसे-कम करना चाहते है उन्हे अपने बच्चोको, वे आज जैसे वातावरणमें रहते है उससे अधिक स्वस्थ तथा शुद्ध वातावरणमे रखना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-७-१९२५

२०२. मेरी अक्षमता

यदि मै सहायताके अभिलाषी हर व्यक्तिको उसकी इच्छानुसार सन्तुष्ट कर पाता तो मेरे गर्वका ठिकाना न रहता। पर मेरी नितान्त अक्षमताका यह नमूना लीजिए .

> यदि आप मुसलमानोंसे गोवध बन्द कराके गोरक्षा नहीं कर सकते तो फिर आपका नेतापन और महात्मापन किस मर्जकी दवा है? जरा विचारिये तो, अलवरके अत्याचारोंके सम्बन्धमें आप किस तरह जान-बूझकर चुप्पी साधे हुए है; और पण्डित मालवीयजीको निजाम सरकारने अपनी रियासतमें आनेसे रोक कर उनका जो अपमान किया है उसके सम्बन्धमें आपकी चुप्पी तो अक्षम्य ही है। पण्डित मालवीयजीको आप अपना आदरणीय बड़ा भाई कहनेमें गौरव अनुभव करते है, उन्हें पहले दरजेका लोकसेवक मानते है और खुद आप ही ने उन्हें मुसलमानोंके प्रति किसी प्रकारका वैरभाव रखनेके दोषसे मुक्त बताया है।

एकने नही अनकोने यही बाते कही है। पत्रकी यह पहली फटकार प्राप्त फटकारोमें आखिरी है और यह मेरे लिए कहावतका 'अन्तिम तिनका' साबित हुई है। मेरे सामने एक तार रखा हुआ है, जिसमे कहा गया है कि मै मुसलमानोसे अनुरोध करूँ कि वे आगामी बकरीदपर गायकी कुर्बानी न करे। मैने सोचा कि यही समय है कि मै लोगोको कमसे-कम अपनी खामोशीका कारण तो बतला दूँ। पण्डितजी

सम्बन्धी आरोपको तो मै हजम कर जानेको तैयार था, हालांकि वह मेरे एक प्रिय मित्रने ही लगाया है। उन्हे मेरी कीर्तिको धक्का पहुँचनेका बडा डर था। उन्होने सोचा, इससे मुझे लोग मुसलमानोसे डर जानेका दोषी ठहरायेगे और क्या-क्या न कहेगे। परन्तु मैं अपने इस विचारपर दृढ रहा कि पण्डितजीके प्रवेश-निषेधके सम्बन्धमे समाचारपत्रोमे कुछ न लिखूं। मुझे इस वातका जरा भी डर न था कि इससे पण्डितजीके मनमे मेरे वारेमे गलतफहमी होगी। और मै जानता था कि पण्डितजीको मेरी छत्रछायाकी कोई आवश्यकता नही। दुनियावी सत्ता द्वारा जारी की गई सभी निषेध-आज्ञाएँ उनके लिए कोई चीज नही हैं। उनका तत्त्वज्ञान उनका सम्वल है। मैंने कितने ही कठिन अवसरोपर उन्हे वहुत नजदीकसे देखा है। वे उन सभी अवसरोपर अडिग रहे। वे अपने कामको समझते है और उसे करते हुए न अनुकूल समयमे फूल उठते हैं, न प्रतिकूल समयमे विचलित होते है। इसलिए जव मैंने उस निषेध आज्ञाके वारेमे सुना तो खूव हँसा। राजाओके ढग अनोखे ही हुआ करते है। मै जानता था कि मै 'यग इडिया' मे चाहे जितना लिखूं, श्रीमान् निजाम अपने फरमानको वापस लेनेको राजी न होगे। यदि उनसे मेरी जान-पहचान होती तो मै हैदराबादके नवाव साहवको सीधा पत्र लिखता और उनसे विनयपूर्वक कहता कि पण्डितजीपर रोक लगानेसे आपकी रियासतका कोई फायदा नही हो सकता; इस्लामका तो बिलकुल ही नही। मै तो उन्हे यह भी सलाह देता कि यदि पण्डितजी हैदरावादमे आये तो उनको अपना मेहमान बनाइएगा। मै हजरत पैगम्वर तथा उनके साथियोके जीवनसे ऐसी मिसाले भी पेश करता। परन्तु मुझे उनसे परिचयका सौभाग्य प्राप्त नही है। मै जानता था कि पत्रोमे लिखी बात शायद उनके कानतक पहुँचे भी नही। ऐसी अवस्थामे सिवा मौजूदा मनमुटावको वढानेके उससे और कुछ हासिल न होता। और यदि मै उस मनमुटावको घटा नही सकता तो बढ़ाना भी नही चाहता था; अत. मैंने चुप रहना ही उचित समझा। इस समय जो मैं लिख रहा हूँ इसका उद्देश्य उन हिन्दुओको, जो मेरी बात सुनना चाहते हो, यह सलाह देना है कि वे इस घटनासे चिढ़ न उठे और इसे इस्लामके या मुसलमानोके खिलाफ शिकायत करनेका आधार न बनाये। इस निषेधाज्ञाका मूल कारण निजाम साहवकी मुसलमानियत नही है। मनमानी कार्रवाई निरकुश शासनपद्धतिका एक लक्षण ही है—फिर शासक हिन्दू हो या मुसलमान। देशी राज्योको नष्ट करनेका प्रयत्न न करके हमे उनकी तानाशाहीको रोकनेका ही उपाय अवश्य सोचना चाहिए। वह उपाय है, प्रवुद्ध और प्रबल लोकमत तैयार करना। जिस तरह ब्रिटिश भारतमे यह कार्य आरम्भ हुआ है, उसी तरह वहाँ भी होना चाहिए। यहाँ देशी राज्योसे स्वभावत ज्यादा आजादी है, क्योकि यहाँका शासनकार्य सीधा सम्राट् द्वारा होता है, और देशी राज्योकी तरह सम्राट्के तावेदारो द्वारा नही। इस कारण वे ब्रिटिश प्रणालीके दोषोको तो अपने यहाँ ले लेते हैं, पर ब्रिटिश शासन अपने लिए हानिसे बचनेकी जो तदवीरे कर लेता है, उन्हे वे नही अपना पाते। इसलिए भारतके देशी राज्योमे सुव्यवस्थाका आधार ज्यादातर राजाके चरित्र और अवसर-विशेषपर उसके मनकी मौज ही रहती है, वहाँ कोई विधान नही,

या यों कहे कि देशी राज्योकी सरकारको विनियमित करनेवाले विधान नहीं है। इससे हम इसी नतीजेपर पहुँचते है कि देशी राज्योमे सच्चा सुधार तभी सम्भव है जब ब्रिटिश शासनप्रणालीका लौह नियन्त्रण ब्रिटिश भारतमें सुलभ अपेक्षाकृत अधिक स्वतत्रताके वातावरणसे कुछ प्रभावित तो हो, और इस तरह उसमे कुछ ढिलाई तो आये। इस वातावरणको स्थापित करनेका श्रेय जनताकी अनुशासनबद्ध शक्तिको ही है। पर इसका अर्थ यह नही कि सब पत्रकारोको अपनी जबान बन्द कर लेनी चाहिए। राज्योके दोषोका उल्लेख करना पत्रकारिताका एक आवश्यक अग है। वह लोकमत उत्पन्न करनेका एक साधन भी है। हाँ, मै यह जरूर कहूँगा कि मेरा क्षेत्र बहुत मर्यादित है। मैंने पत्रकारिताको पत्रकारिताकी खातिर नही अपनाया है, बल्कि जिसे मैंने अपना जीवनका ध्येय समझा है उसके सहायकके रूपमे अपनाया है। मेरे जीवनका ध्येय है — अत्यन्त सयमपूर्ण जीवन और सयत उपदेशके द्वारा सत्याग्रहके अद्भुत अस्त्रका प्रयोग सिखाना — सत्याग्रह, सत्य और अहिंसासे सीधा फलित होनेवाला व्यवहार है। मै यह प्रत्यक्ष दिखलानेके लिए उत्सुक ही नही, अधीर हूँ कि जीवनकी अनेकानेक बुराइयोको दूर करनेका अहिंसाके सिवा कोई उपाय नही है। यह एक ऐसा प्रबल द्रावक रस है जिसके द्वारा वज्र हृदय भी पिघले बिना नही रह सकता। इसलिए मेरी श्रद्धाका तकाजा है कि मुझे क्रोध या द्वेपसे प्रेरित होकर कुछ नही लिखना चाहिए। मुझे ऐसी कोई बात नही लिखनी चाहिए जो निरर्थक हो। मुझे लोगोमे रोष उत्पन्न कराने-भरके लिए कोई बात नही कहनी चाहिए। पाठकोको इस बातकी कल्पनातक नही हो सकती कि प्रति सप्ताह विषयो और शब्दोके चुनावमे मुझे कितने सयमसे काम लेना पडता है। मेरे लिए यह एक अच्छी खासी तालीम है। इसके द्वारा मुझे अपने अन्त करणमे झाँकने और अपनी कमजोरियोको जाननेका अवसर मिलता है। अकसर मेरा मिथ्याभिमान मुझे कोई तेज बात लिखने और कोई कडा विशेषण लगानेको प्रेरित करता है। यह एक बडी कठिन अग्निपरीक्षा है, पर साथ ही इन गन्दगियोको दूर करनेकी बढिया मश्क भी है। पाठक 'यग इडिया'के पृष्ठोको सवारे हुए रूपमे देखते है, और रोमाँ रोलाँकी तरह शायद यह भी सोचते हो कि 'यह बुड्ढा कितना नेक आदमी होगा!' तो फिर दुनिया इस बातको जान ले कि अपने भीतर मै यह नेकी बड़ी सावधानी और प्रार्थनाके बाद ला पाता हूँ। और यदि इसे कुछ लोगोने, जिनकी रायोको मै अपने हृदयमे मान देता हूँ, स्वीकार किया है तो पाठक इस बातको समझ ले कि जब यह नेकी मेरे लिए एक बिलकुल स्वाभाविक वस्तु बन जायेगी अर्थात् जब कोई भी बुरा काम करना मेरे लिए असभव हो जायेगा और जब किसी तरहका कठोर या दर्पपूर्ण भाव, फिर वह क्षण-भरके लिए क्यों न हो, मेरे विचार-जगतमे नही आने पायेगा, तभी — केवल तभी मेरी अहिंसा दुनियाके लोगोके हृदयोको द्रवित कर पायेगी। मैंने अपने या पाठकोके सामने कोई असम्भव आदर्श या अग्नि-परीक्षा नही रखी है। यह तो मनुष्यका परमाधिकार और एक जन्मसिद्ध अधिकार है। हमने यह स्वर्ग खो दिया है तो हमे उसे फिर प्राप्त करना ही है। यदि इसमे बहुत समय लगे तो वह सारे

मन्वन्तरका एक अणु-मात्र है। 'गीता' मे भगवान कृष्णने यह कहकर कि हमारे करोडो दिन ब्रह्माके सिर्फ एक दिनके बराबर है, इसी भावको प्रकट किया है।[1] इसलिए हमे चाहिए कि हम अधीर न हो और अपनी कमजोरीके कारण यह न मान बैठे कि अहिंसा दिमागकी कमजोरीका लक्षण है। ऐसा नही है।

पर अब मेरा अधिक लिखना जरूरी नही है। अब पाठक समझ गये होगे कि मै अलवरके विषयमे क्यो चुप था। मेरे पास ऐसे तथ्य भी नही थे कि मै कुछ लिखता। मेरी किसी बात या लेखपर निजाम साहबकी तरह अलवरके महाराजा भी तिरस्कारपूर्ण भावसे हँस सकते है। अबतक जो बाते प्रकाशित हुई है वे यदि सच है तो उन्हे घोरतम डायरशाही ही समझना चाहिए। पर मै जानता हूँ कि फिलहाल मेरे पास इसका कोई इलाज नही है। इन बड़े-बड़े आरोपोके सम्बन्धमे पर्याप्त रूपसे सन्तोषदायक सार्वजनिक जाँच करानेके निमित्त पत्रकार लोग जो उद्योग कर रहे है उसे मै आदरकी दृष्टिसे देखता हूँ। मै देख रहा हूँ कि पण्डितजीकी राजनीतिक पटुता धीरे-धीरे, चुपचाप अपना रास्ता बना ही रही है। तब फिर मुझे चिंतित होनेकी क्या आवश्यकता है? जो सज्जन मेरे पास नुस्खोके लिए आते है, वे इस बातको जान लें कि मै कोई अमोघ औषधि बाँटनेवाला कविराज नही हूँ और न मेरे पास कोई बड़ा औषध-भण्डार ही है। मै तो टटोल-टटोलकर चलनेवाला एक विशेषज्ञ हूँ और मेरी छोटी-सी जेबमे मुश्किलसे दो रसायन है जो एक-दूसरेसे भिन्न भी नही है। और वह विशेषज्ञ फिलहाल इन दोषोको दूर करनेकी अपनी सामर्थ्यहीनता स्वीकार करता है।

गो-प्रेमियोसे तो मैने पहलेसे ही कह रखा है कि अब मै हिन्दुओ और मुसलमानोपर अपना प्रभाव माननेका दावा नही करता जैसा कि कुछ समय पहले करता था। जबतक मै उस शक्तिको पुन प्राप्त न कर लूँ, गोमाता अपने इस बच्चेको माफ कर देगी। मै अपनेको उसका विनम्र बच्चा ही मानता हूँ। उसके प्राणके साथ मेरा प्राण सम्बद्ध है। वह जानती है कि मै उसके साथ विश्वासघात नही कर सकता। यदि उसके दूसरे भक्त नही समझते तो कमसे-कम वह मेरी अक्षमताको अवश्य ही समझती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-७-१९२५

१. सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः॥ ८।१७

२०३. टिप्पणियाँ

अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक

मुझसे कहा गया है कि जिस तरह मैंने बंगालके मित्रोकी सलाहसे अखिल बंगाल देशबन्धु स्मारकका श्रीगणेश किया है उसी तरह मैं उनके अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारकका भी सूत्रपात करूँ। मैं पाठकोको यकीन दिलाता हूँ कि यह बात मेरे ध्यानके बाहर बिलकुल नही रही है। मैं अपने उन मित्रोसे, जो यहाँ मेरे पास हैं, सलाह मशविरा कर रहा हूँ। पर अभीतक हम उसका कोई सूत्र नही बना पाये हैं। अखिल बगाल स्मारकके सम्बन्धमे निर्णय करनेमें कोई कठिनाई नही हुई थी। देशबन्धु न्यास-पत्रने हमारे लिए ध्रुवतारेका काम दिया था। परन्तु अखिल भारतीय स्मारक बनाना इतना आसान नही है। उसमे देरी होना अनिवार्य है, किन्तु सम्भवत इस अकके प्रकाशित होनेतक कोई निर्णय हो चुकेगा। फिलहाल मैं हरएक मनुष्यको यह विश्वास दिलाता हूँ कि इस सम्बन्धमे घोषणा करनेमे अनावश्यक विलम्ब न किया जायेगा। मुझे इसमे रत्ती-भर शक नही कि देशबन्धुका अखिल भारतीय स्मारक अवश्य बनाया जाना चाहिए। देशके कोने-कोनेसे जो शोकसन्देश आये हैं वे देशबन्धुकी सार्वत्रिक लोकप्रियताके अत्यन्त स्पष्ट प्रमाण हैं।

एक 'क्रान्तिकारी' का पत्र

श्रीमती बासन्ती देवीने मुझे किसी क्रान्तिकारीका भेजा हुआ एक गुमनाम पत्र लाकर दिया है। उससे मैं यह अश देता हूँ:

> इस समय जब मैं आपको यह पत्र लिखनेका प्रयत्न कर रहा हूँ मेरी आँखोंसे आँसू गिर रहे हैं और उनसे मेरी दृष्टि धुँधली हो रही है। आपसे मिलनेके लिए मैंने १४८ नम्बर कोठीमें जानेका प्रयत्न किया था, किन्तु मैं आपके सामने खड़ा होनेका साहस ही संचय नहीं कर सका। वहाँका दृश्य तो हृदयविदारक है।
>
> देशबन्धुकी मृत्युसे एक महान् पुरुष, शायद देशका महानतम पुरुष, उठ गया है। अब उनकी जगह लेनेवाला कोई नहीं रहा। उन्होंने जब अपनी फलती-फूलती वकालत और शानदार आमदनी छोड़ी तब तो उनको बहुत लोग जान गये थे; लेकिन मैं तो उन्हें उससे भी बहुत पहलेसे जानता था — तबसे जब वे अलीपुर काण्ड सम्बन्धी मुकदमेमें श्री अरविंद घोषकी पैरवी करनेके लिए मानो किसी एकान्त स्थानमें से निकल आये थे। मैं उनसे तभीसे प्रेम करने लगा था। मैं उनका अत्यन्त आदर करता था और उनका प्रशंसक तथा भक्त था। वे भी, यद्यपि हम क्रान्तिकारियोंसे राजनीतिक बातोंमें सहमत नहीं थे तथापि हमें सदा

अपने हृदयमें स्थान देते थे। मेरे यह कहनेका आधार यह है कि मैं उन लोगों-में से हूँ जो बंग-भंगके दिनोंमें 'अराजकतावादी' कहे जाते थे और जो अब भी 'क्रान्तिकारी' कहे जाते हैं; यद्यपि उनके लिए इन दोनों ही विशेषणोंका प्रयोग करना अयथार्थ है। वे जानते थे कि हमारे सम्बन्धमें बहुत भ्रान्ति है, हमें गलत रूपमें पेश किया जाता है और हम बहुत बदनाम किये जाते हैं, इसलिए कि हम अपने देशको, जो हम सभीकी मातृभूमि है, स्वतन्त्रतासे प्रेम करते हैं। वे हम सभीसे भाईकी तरह प्यार करते थे और हमें सदा ठीक रास्तेपर चलानेका प्रयत्न करते थे। आज हमें उनका वियोग बहुत दुःखद हो रहा है। हम उनकी मृत्युसे शोक विह्वल हो रहे हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि आज देशमें कोई ऐसा मनुष्य नहीं रहा जिससे हम संकटके समयमें सहायता माँग सकें।

नेता आयेंगे और चले जायेंगे; किन्तु देशबन्धु दास अब कभी पैदा न होंगे। वे लोगोंमें आशा और स्फूर्ति भरते थे। वे राष्ट्रके पूज्य थे। वस्तुतः हम उनसे सदा ही सहायता और मार्गदर्शन ले सकते थे और वे जानते थे कि वे हमसे चाहे जो सेवा ले सकते हैं; इतना ही नहीं, बल्कि हम उनके निर्देशपर अपने प्राण भी दे सकते हैं। मेरी प्यारी बहन, मैं अब आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि हम आपकी हर तरह की सेवाके लिए, बल्कि आपकी खातिर प्राणतक देनेके लिए तत्पर हैं और सदा रहेंगे।

जिस अंशको मैंने छोड दिया है उसमे लेखकने फिर सहानुभूतिका आश्वासन दिया है। यह पत्र देशबन्धुके क्रान्तिकारी — हलचल सम्बन्धी विचारोका स्वयस्फूर्त प्रमाण है। बगालके युवकोके हृदयपर उनके अधिकारका कारण यह है कि उनके दोषोके रहते हुए भी वे एक पिताकी तरह उनकी चिन्ता रखते थे। वे उन्हे इसलिए प्रेम नही करते थे कि वे उनके तरीकोंको पसन्द करते थे, बल्कि इसलिए कि वे उन तरीकोको उनसे छुडवाना चाहते थे। क्या वे लोग जो कि उनके जीते-जी उनकी बात नही मानते थे, उनकी आत्माकी इस आवाजको सुनेंगे — 'भारतकी मुक्तिका मार्ग हिंसा नही है?' क्या वे अपने विचारोंकी अपेक्षा उनके परिपक्व निर्णयपर विश्वास करेंगे?

एक गलती?

हमे मन्त्री जिला काग्रेस कमेटी, पवनाका यह पत्र मिला है।[1]

मै पत्रको पसन्द करता हूँ क्योकि उसमे मुझसे यह अपेक्षा की गई है कि मैं जो-कुछ कहूँ या लिखूँ वह अधिकसे-अधिक शुद्ध तथा पूर्णतः निष्पक्ष हो। जहाँतक

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें गाधीजीका ध्यान "खादी प्रतिष्ठान", ४-६-१९२५ के शीर्षकसे छपे लेखकी एक भूलकी ओर खींचा गया था। लेखमें गाधीजीने पवनाके सत्संग आश्रमके सम्बन्धमें लिखा था कि वह कोमिल्लाके अभय आश्रमके ढंगका खादी उत्पादन केन्द्र है। पत्रलेखकने लिखा था कि आश्रममें खादीका काम बिलकुल नहीं किया जाता और वह वस्तुतः विदेशी वस्तुकी बिक्रीमें सहायता देता है।

भी इन्सानके लिए सम्भव हो सकता है मै इस अपेक्षाके अनुरूप कार्य करनेके लिए उत्सुक रहता हूँ। लेकिन पूरी सावधानी रखनेके बावजूद मै कुछ लोगोके प्रति अन्याय तथा कुछ लोगोके प्रति अनुचित रूपसे पक्षपात कर सकता हूँ। अन्तत तो दोनो ही अवस्थाओमे अन्याय होता है। यह भी सम्भव है कि उस व्यक्ति अथवा सस्थाकी, जिसकी अनुचित रूपसे प्रशसा की जाती है उस व्यक्ति अथवा सस्थासे अधिक हानि हो जिसकी अनुचित रूपसे निन्दा की जाती है। लेकिन इस मामलेमें मै अत्यन्त सचेत रहा हूँ तथा मन्त्रीकी कही लगभग प्रत्येक बात कभी सत्य रही हो, पर वह उस समय सत्य नही थी जब मैंने यह लेख लिखा था। मै उक्त सस्थाओके गुणोकी तुलनात्मक जाँच नही कर रहा था और न उनके हिसाब-किताबकी ही तुलना कर रहा था। मैंने तो केवल यही कहा था कि यह लेख लिखते समय खादी-उत्पादक सस्थाओकी संख्या उतनी थी और मैंने उनका निरीक्षण किया था। मैंने इनमे 'सत्सग आश्रम' को भी सम्मिलित कर लिया, यद्यपि वह इस प्रवृत्तिमे अभी हालमे ही सम्मिलित हुआ है। मै जब आश्रममे गया तब मैंने वहाँ ४०से अधिक चरखे चलते देखे थे। सूत कातनेवालोमें सस्थापककी पत्नी और उनके रिश्तेदार भी थे। मुझे वहाँपर बुनी हुई खादी भी दिखाई गई थी; लेकिन इस सबके अलावा देशबन्धुने, जिनके कहनेपर मै आश्रम देखने गया था, मुझे कहा था कि आश्रमके सस्थापकने निश्चय किया है कि सूत कातना तथा खादी बुनना इसका एक मुख्य कार्य रहेगा। आश्रमके प्रबन्धकने, जिसने मुझे आश्रम दिखाया था, उनके उस कथनकी पुष्टि की थी। यदि मै इस सारे सबूतके बाद भी आश्रमको खादीके उत्पादन केन्द्रोमे शामिल न करता तो मै अन्याय करता। मै यह मानता हूँ कि इस समय सत्सग आश्रम और अभय आश्रमका कोई मुकाबला नही किया जा सकता। अभय आश्रम अधिक नही तो उतना ही पुराना है जितना पुराना खादी प्रतिष्ठान और उसकी स्थापना मुख्य रूपसे खादी तथा चरखेके प्रचारके लिए ही की गई थी। इसका उत्पादन खादी प्रतिष्ठानसे कुछ ही कम है तथा उसकी शाखाएँ कई जगह है। लेकिन इस लेखको लिखनेमे मेरा हेतु उनके सापेक्ष गुणोको जाँचना न था, बल्कि जनताके ध्यानमे यह बात लाना था कि बगालमे खादीके प्रचारकी सम्भावना कितनी है तथा इसके लिए मुख्य नमूनेकी खादी सस्था कौन-सी है। यदि यह सत्य है कि पबनामे सत्सग आश्रमके तत्त्वावधानमे विदेशी वस्त्रोकी बिक्रीके लिए एक गोदाम चलाया जाता है तो मुझे उससे निश्चय ही दु ख होगा।

क्रान्तिकारी बननेके लिए प्रयत्नशील

आपने जो-कुछ लिखा है वह इतना तात्त्विक और जटिल है कि वह मेरी समझमे नही आ सकता। अत हमे फिलहाल मान लेना चाहिए कि हममे मतभेद है और जबतक आप मुझे मेरी यात्रामे कही मिल नही जाते तबतक हमे एक-दूसरेके लिए परमात्मासे सुबुद्धि देनेकी प्रार्थना करनी चाहिए। आपने सूत कातनेके साथ-साथ रुई धुननेका जो विचार किया है वह मुझे ठीक जँचता है। मै आशा करता हूँ कि आप चरखे और धुनकीकी गुप्त शक्तियोकी खोज कर सकेगे। आपमें सूत कातनेकी जैसी धुन है वैसी धुन आप अपने आसपासके लोगोमे पैदा करनेका प्रयत्न कर सकते

हैं। यदि वह प्रयत्न सफल हो जाये और वह सफल हो सकता है और जो क्रान्तिकारी बन चुके हैं या बननेवाले हैं या उसके लिए प्रयत्नशील हैं, वे अपनी सर्वमान्य प्रतिभा और शक्तिको इस महान् कार्यमें लगा दें तो उन्हें पता चलेगा कि इस देशकी मुक्तिके लिए रक्तमय क्रान्तिकी आवश्यकता नहीं है। मेरे ये मित्र मुझे चरखेको गुंजित करनेमें सहायता दें, वे ग्रामीणोंको कार्यरत और सुखी बनानेमें मेरा हाथ बँटाये और. यदि हम तब भी अंग्रेजोंको न्यायके कठघरेमें खड़ा न कर सकें तो वे मेरी आतिशयिक दुर्बलताके उन क्षणोंमें मुझे धर दबा सकते हैं और सम्भवतः अपने मतमें दीक्षित भी कर सकते हैं। उस अवस्थामें वे मुझसे अन्य मत-परिवर्तितोंकी तरह हिंसात्मक प्रवृत्तियोंमें उनसे भी आगे निकलनेकी अपेक्षा कर सकते हैं।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें एक प्राचीन मत

जब मैं शान्तिनिकेतनमें था, श्री एन्ड्रयूजने मुझे तमिलके यशस्वी कवि वेमनाका अस्पृश्यतापर निम्नलिखित उद्धरण दिया था:

किताब – २

१३५. उसको परिया (पंचम) न मानो जो जन्मतः परिया है; जो अपनी प्रतिज्ञा भंग करता है वह उससे भी पतित है। जो परियाको धिक्कारता है, वह उससे भी बुरा है।

१५६. तुम शूद्रको देखते हो तो उसे गालियाँ क्यों देते हो? यह केवल असभ्य भाषा है। यह आत्मा जो परियामें बोलता है, किस जातिका है?

किताब – ३

१११. "वे चिल्लाते हैं: तू अपवित्र तथा अस्वच्छ है, मुझे मत छू!" अपवित्रताकी क्या सीमाएँ हैं? इसका स्रोत क्या है? सभी मानव-शरीर समान रूपसे अस्वच्छ हैं, अपवित्रता तो शरीरमें हमारे जन्मके साथ ही पैदा होती है।

१६२. जो जन्मतः शूद्र हैं तथा फिर भी शूद्रोंको गालियाँ देते हैं; जो अपनेको द्विज मानते हैं तथा अपनी पदवीमें विश्वास करते हैं; यदि वे फिर भी अपने मनको वशमें नहीं रख सकते तो वे शूद्रोंसे भी नीच हैं।

१६४. यदि किसी मनुष्यके हृदयमें अभीतक परियाके संस्कार भरे हैं और वह फिर भी परिया लोगोंसे घृणा करता है तो वह समस्त शुभ संस्कारोंसे हीन होनेपर भी द्विज कैसे हो सकता है?

२१७. यदि हम इस सृष्टिको ध्यानपूर्वक देखें और जाँचें तो हम देखेंगे कि उसमें सभी वर्ण समान उत्पन्न हुए हैं। तभी सब बराबर हैं; निश्चय ही सभी मनुष्य भाई-भाई हैं।

२२३. पृथ्वीपर उस आदमीसे अधिक अधम दूसरा कोई आदमी नहीं है जो दूसरोंको शूद्र कहकर उनसे घृणा करता है। वह बादमें नरक जायेगा।

२२७. हम परियाको निरन्तर गालियाँ क्यों देते हैं? क्या उसमें वैसा ही माँस और रुधिर नहीं है जैसा हममें है? तब वह परमात्मा किस वर्णका है जो उस परियामें (तथा अन्य मनुष्योंमें भी) व्याप्त है?

२३१. कोई मनुष्य भले ही जन्मसे पंचम हो, यदि वह अपने हृदयको शुद्ध रखता है तो वह पंचम नहीं है। जो अपनी वासनाओंपर काबू नहीं रख सकता वह पतितोंसे भी पतित है।

२३४. वशिष्ठकी माँ वेश्या थी तथा पत्नी शूद्रा; फिर भी वशिष्ठ भगवान रामके गुरु बने। वे कठोर तपस्यासे ब्राह्मण बन गये थे। लेकिन यदि तुम उनके वर्णकी ओर देखो तो उनका वर्ण क्या था?

उद्धरणोंसे मालूम होता है कि हिन्दुओंके हृदय तथाकथित अछूतोंके प्रति अमानुषिक व्यवहारसे अति दु:खित थे। वेमनाने अपने ही भाई-बन्दोंको गिराने तथा दबानेकी जोरदार और असन्दिग्ध भाषामें भर्त्सना की है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-७-१९२५

२०४. देशबन्धु-स्मारक कोष

मित्रोंने मुझे जोर देकर कहा है कि जो स्मारक-कोष जुटाया जा रहा है, उसके हितमें पूर्वनिर्धारित दौरेके लिए मेरा फिलहाल कलकत्ता न छोड़ना आवश्यक है। मैं यहाँ अपनी उपस्थितिकी उपयोगिता जरूर समझता हूँ, लेकिन सतकौड़ी बाबूसे बातचीतके बाद मैं इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि दौरेका पूर्व प्रकाशित कार्यक्रम छोड़ना नहीं चाहिए। आखिरकार जो चन्दा लगातार चला आ रहा है, वह उन हजारों लोगोंकी ओरसे ही तो आ रहा है जो अपने हृदयोंमें कृतज्ञता महसूस करते हैं। व्यक्तिगत रूपसे मेरे मनमें यह आशंका कभी नहीं उठी कि बंगाल उदारतापूर्वक चन्दा न देगा। हमारा राष्ट्र कृतघ्न नहीं है और कृतज्ञतामें कोई दूसरा प्रान्त बंगालसे बढ़कर हो ही नहीं सकता। समुचित उद्देश्य सामने आनेपर बंगाल ऊँचेसे-ऊँचे स्तरतक उठनेकी क्षमता रखता है। और देशबन्धुके सम्मानमें स्मारक खड़ा करनेसे अधिक उचित पवित्र-तथा आवश्यक उद्देश्य और कौन-सा हो सकता है? इसलिए मैं चन्दोंके लगातार आते रहनेको निरापद करनेके लिए कलकत्तेमें अपनी उपस्थिति परमावश्यक नहीं मानता और इस पूरे विश्वासके साथ दौरा सम्पन्न करूँगा कि दान अटूट क्रमसे तब-तक आता रहेगा जबतक दस लाखकी पूरी रकम इकट्ठी नहीं हो जाती। यह लेख लिखते समय मुझे ज्ञात हुआ है कि अभीतक आई हुई रकम २,४०,००० रु० से ऊपर है; जिसमें से ६१,००० रु० से अधिक तो आजका ही चन्दा है, जो अभी कोषाध्यक्षके पास पहुँचना है। यदि चन्दा इसी प्रकार आता रहा, और न आते रहनेका कोई कारण नहीं है तो इस महीनेके मध्यतक हम दस लाख जमा कर लेंगे। यह बात कि हम

जूनके अन्ततक पूरी रकम जमा नही कर पाये, बगालको दोषी नही ठहराती। सम्भावना थी, लेकिन सम्भावना-भर ही थी कि हमारे पासके बचे हुए आठ दिनोमे चन्दा पूरा इकट्ठा कर लिया जाता। इसकी सफलताके लिए सर्वांगपूर्ण सगठन अथवा योग्यता और थोडे-से लोगोमे पूरी रकम उगाहनेकी प्रबल इच्छा, यही बाते जरूरी थी। मै नि सकोच कह सकता हूँ कि मै जहाँ-कही भी गया हूँ, मैंने देनेकी इच्छा पाई है, लेकिन व्यापारमे बहुत मन्दी आ जानेके कारण बडी रकमें देनेकी क्षमताका अभाव है। और यह भी स्पष्ट रूपसे स्वीकार कर लेना चाहिए कि भारतमें कही भी हम इतने सगठित नही हो पाये है कि थोडे-से समयमे ही छोटी-छोटी रकमे देनेवालो तक पहुँच सके। यह देशबन्धुकी स्मृतिके प्रति श्रद्धाका द्योतक है कि जैसा-तैसा सगठन जिसे कि समिति खडाकर पाई है, उसके जरिये भी छोटी रकमे इस तरह आ रही है। कमसे-कम ६ कार्यकर्त्ता तो रुपये प्राप्त करनेमे सुबहसे रातके दस बजेतक और इससे भी देरतक जुटे रहते है। उन क्लर्कोंकी सूचीका इसमे उल्लेख नही किया गया है जिन्हे सर राजेन्द्रनाथने चन्दे प्राप्त करने और आने, पैसे और धेले देनेवालोंके नामोकी बहुत लम्बी सूचियोकी नकल करनेके काममे लगा रखा है। इसलिए मै अपने मनमे चन्दोकी वसूलीके बारेमे किसी प्रकारसे शकित हुए बिना अपना बगालका शेष दौरा खतम करनेका काम शुरू करूँगा। परन्तु मै इस दौरेके कार्यक्रममे उल्लिखित स्थानोमे निमन्त्रित करनेवाले सज्जनोको इस बातसे भी अवगत कराना चाहूँगा कि दौरेमे मेरा मुख्य कार्य देशबन्धुका जीवन्त सन्देश सुनाना और स्मारकके लिए चन्दा इकट्ठा करना होगा। मै आशा करता हूँ कि वे विभिन्न स्थानोमे मेरे जानेका कार्यक्रम इस बातको नजरमे रखते हुए बनायेगे कि अधिकसे-अधिक रकम जमा की जा सके। मेरा विश्वास है कि वे स्वागत-प्रबन्धोपर अधिक धन खर्च नही करेगे। निवेदन है कि किसी प्रकारकी सजावट न की जाये और स्वागतके लिए जमा रकमोको यथासम्भव अधिकसे-अधिक बचाया जाये और वह धन स्मारक कोषमें दे दिया जाये, जैसा कि उत्तरी कलकत्तामें पहलेसे ही किया जा रहा है। मै यहाँपर इस बातका कृतज्ञतापूर्वक उल्लेख करना चाहता हूँ कि बगालके सभी हिस्सोसे, और भारतके अन्य उन सभी भागोसे जहाँ बगाली जा बसे है, मनीऑर्डर धड़ाधड आ रहे है और अनेक रकमे तार द्वारा प्राप्त हो रही है।

मै यह भी बता दूँ कि जो लोग १४८, रसा रोडपर फिलहाल चन्देकी रकमें प्राप्त कर रहे है, मेरी कुछ दिनोकी अनुपस्थितिमे, जो आगामी शनिवारके तीसरे पहरसे शुरू होकर आनेवाले बुधवारतक जारी रहेगी, अपना काम जारी रखेगे। मै इसी माह ही ९ तारीखको बृहस्पतिवारको — कलकत्ता लौटनेकी आशा करता हूँ और उसी दिन सिराजगज तथा अन्य स्थानोके लिए चल दूंगा। वहाँसे फिर रविवार बारह तारीखको सुबह लौटूंगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २-७-१९२५

२०५. चूड़ियोंकी वर्षा

मैदानमे आमसभाका दृश्य अनोखा था।[1] स्वयसेवको द्वारा की गई व्यवस्था बहुत ही अच्छी थी। पूर्ण शान्तिके साथ प्रस्ताव पारित हो जानेतक एक भी व्यक्ति अपने स्थानसे नही हिला। इतना विशाल श्रोता-समुदाय साराका-सारा पूरे एक मिनट तक मौन खडा रहा। मैंने बगालमे पहले कभी इतनी उच्च कोटिकी, इतनी मर्यादा-पूर्ण, इतने गाम्भीर्यपूर्ण वातावरणमे और इतनी श्रद्धापूर्ण कोई सभा नही देखी। मै उन लोगोको जो मैदानमे एकत्र हुए और उन स्वयसेवकोको जिन्होने सभाका प्रबन्ध किया, बधाई देता हूँ। मुझे खेद है कि यद्यपि मेरी इच्छा बहुत थी, मै टाउन हॉलकी सभामे शरीक न हो सका। स्त्रियोकी सभामे मुझे एक घटेसे ऊपर रुकना पडा यानी वहाँ मै पौने आठ बजेतक रहा। इस सभाका दृश्य अनोखा ही था। भारतकी इन श्रद्धालु बेटियोने अपीलके उत्तरमे सोनेकी चूडियाँ, अँगूठियाँ और कठहारोकी वर्षा कर दी। ५०० रु० के अलावा, सोनेकी ६० चूडियाँ, ६ जजीरे, १६ अँगूठियाँ, जिनमे कुछ जडाऊ थी, और २० से ऊपर बुन्दे प्रदान किये। मुझे आशा है कि कलकत्तेकी महिलाएँ सभामे शुरू किये गये कामको जारी रखेंगी और जिन्हे उस सभामे शरीक होनेका मौका नही मिल पाया, वे अपना हिस्सा भेज देगी। महिलाओसे चन्दा वसूल करनेकी इच्छा रखनेवालोके लिए सबसे सरल तरीका यह है कि वे अपने मित्रवर्गमे ही चन्दा वसूल करने जायें। मुझे पता चला है कि इससे पहले अवसरोपर अनधिकृत लोगोने चन्दा इकट्ठा करनेमे धोखेबाजी की है, और चूँकि चन्दा इकट्ठा करनेके प्रमाणपत्र भी जाली बना लिये गये थे, इसलिए समितिने महिलाओको अधिकार-पत्र देनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर नही ली है। इसी कारणसे मै इस बातपर जोर दे रहा हूँ कि जो लोग चन्दा इकट्ठा करे वे केवल अपने मित्रोसे ही चन्दा ले, ताकि धोखाधडीकी सम्भावना [न] रहे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २-७-१९२५

1. देखिए "अपील: देशबन्धु श्रद्धांजलि-सभाके सम्बन्धमें", २७-६-१९२५ से पूर्व।

२०६. हिन्दुओंको सलाह[1]

कलकत्ता
२ जुलाई, १९२५

उन हिन्दू बस्तियोंमें जहाँ गांधीजीने हिन्दुओंको सम्बोधित किया मौलाना आजाद भी मौजूद थे। श्री गांधीने कहा कि आप लोग लाठियाँ फेंक दें, हृदयसे वैरभाव निकालकर उसे स्वच्छ बनायें। आप लोगोंने मुसलमान भाइयोंको मारा-पीटा सो बुरा किया है। मुझे खबर मिली है कि हिन्दुओंकी आँखोंके सामने कोई कुर्बानी नहीं की गई थी और यदि कुर्बानी की भी गई थी तो हिन्दुओंको मनुष्योंकी हत्या करनेका कोई अधिकार नहीं था। जिस प्रकार हिन्दू-शास्त्रोंका आदेश है कि गोरक्षा की जाये, उसी प्रकार यह भी आदेश है कि गोरक्षाकी खातिर मानवोंकी रक्षा की जाये। उन्हें मनुष्योंके प्राण लेनेका कोई हक नहीं है। गोहत्याकी अपेक्षा मानवोंकी हत्या करना अधिक बड़ा अपराध है। यदि हिन्दू धर्मका यह अर्थ है कि किसी गलत कामको उससे भी बड़ा अपराध करके सही बनाया जाये तो मैं ऐसे हिन्दू-धर्मका अनुयायी नहीं हूँ। श्री गांधीने आगे कहा:

यदि आपने अपराध किया है तो मैं आपकी मदद करने नहीं आया हूँ। मैं अपराधीसे कहूँगा कि वह आगे आये और कहे. 'मैंने मनुष्योंको जानसे मार दिया है या उन्हें जख्मी किया है।' वह पुलिसके समक्ष अपना अपराध स्वीकार करे और जेल जाये या सूलीपर चढ़े।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-७-१९२५

२०७. वक्तव्य: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

कलकत्ता
२ जुलाई, १९२५

शामके करीब चार बजे जब मैं स्मारकके हस्ताक्षरकर्त्ताओंकी सभामें था, श्री जे० एम० सेनगुप्तने सभाको सूचित किया कि एक आदमी यह सूचना लाया है कि खिदरपुर गोदीकी कुली बस्तीमें भीषण दंगे शुरू हो गये हैं। खबर लानेवाला आदमी बाहर खड़ा हुआ है। हमने तत्काल उस आदमीको अन्दर आनेको कहा और उसकी बात सुनकर मैंने श्री सेनगुप्तको सुझाव दिया कि वे टेलीफोन करके पता लगायें कि वास्तवमें मामला क्या है। अस्तु उन्होंने मोटरसे स्वयं वहाँ जाकर स्थितिका पता

१. बकरीदके मौकेपर कलकत्तेमें हुए दंगोंके अवसरपर। देखिए अगला शीर्षक भी।

लगाना पसन्द किया। उपद्रवस्थलपर पहुँचकर उन्होने टेलीफोनसे मौलाना अबुल कलाम आजादसे कहा कि वे भी वहाँ पहुँचे और मुझे भी साथ लेते आये। मौलाना साहब आये और हम तत्काल मोटरसे खिदरपुर गये। करीब साढे पाँच बज चुके थे। रास्तेमे हमने बहुत-से उत्तेजित मुसलमानोको यह कहते सुना कि अनेक मुसलमान मार डाले गये है। उनके पास लाठियाँ थी। मौलाना साहबने उन्हे शान्त किया और उनसे कहा कि वे और मै मामलेकी जाँच करने जा रहे है और हुआ चाहे जो हो उसका बदला लेनेकी बात उन्हे नही सोचनी चाहिए, जिसे वे हिन्दुओकी ज्यादती मानते है। उन्होने मौलाना साहबकी बात सुनी और तितर-बितर हो जानेको राजी हो गये। जब हम उसी बस्तीके फाटकपर पहुँचे तब हमे श्री सेनगुप्त मिले। उन्होने हमे बताया कि जब वे वहाँ पहुँचे तब लोग खुलकर लड रहे थे। लडाई बन्द हुई परन्तु कठिनाईके साथ। वहाँ पहुँचनेके सभी रास्तोपर तैनात पुलिस किसीको अन्दर नही जाने देती थी और ऐसा लगा कि अहातेसे सब बाहरी लोग हटा दिये गये थे। फिर हम कुलियोकी बैरकोकी तरफ गये और रास्तेमे लाठियोसे लैस हिन्दुओकी एक बडी भीड देखी। यह पूछनेपर कि आप लोग यहाँ क्यो जमा है, उन्होने कहा कि वे वहाँ आत्मरक्षाके लिए जमा हुए है, क्योकि उन्हे मुसलमानोके हमलेका अन्देशा है। मैने उनसे कुछ देर बात की और उन्हे बताया कि हमे जो सूचना मिली है, उससे जाहिर होता है कि हिन्दुओने ही मुसलमानोको निर्दयतापूर्वक मारा है, जिनकी तादाद हिन्दुओकी अपेक्षा बहुत कम थी। और मैने उनसे यह भी कहा कि यदि उन्होने गलत काम किया है तो उन्हे क्षमा माँगनी चाहिए। उनमे से एकने कहा कि प्रथाके विपरीत लाइनोमे एक गाय मारी गई है, इसीसे कुली उत्तेजित हो उठे थे। फिर हम उस जगह गये जहाँ गायके मारे जानेकी बात बताई गई थी। वहाँ पहुँचनेपर हमने पाया कि जहाँ गाय मारे जानेका स्थान दिखाया गया था वहाँ किसी भी गायके मारे जानेका कोई चिह्न नही था। कुछ हड्डियाँ वगैरह अवश्य पडी थी। वहाँ मौजूद मुसलमानोने हमे बताया कि गाय एक मसजिदमे मारी गई थी और खाल उतारनेके पश्चात् माँस उनके घरोमे गाडी द्वारा लाया गया था। वहाँ कोई खून या गोवध सूचक कोई चिह्न नही था। जब हम लोग पूछताछ कर रहे थे उस समय पुलिस कमिश्नर श्री टेगर्ट मौजूद थे। मेरे निष्कर्षके अनुसार दोष सरासर हिन्दुओका ही लगता है। मैने वही कहा भी और इसका तीव्र प्रतिवाद नही किया गया। हिन्दुओने मुसलमानोसे क्षमा-याचना भी की थी और उनसे कहा कि हम अब ऐसी गलती कभी नही करेगे। उस समयतक पुलिस कमिश्नरके पास जो खबर पहुँची थी, उसके अनुसार कोई मौत नही हुई थी, हालाँकि अनेकों आहत मुसलमानोमे से दोकी हालत गम्भीर थी। मौलाना साहबने मुसलमानोको शान्त किया और उनको बताया कि उन्हे बढा-चढाकर दी गई खबरोको कोई महत्त्व नही देना चाहिए और अभीतक कोई मौत नही हुई है। उन्होने उनसे कहा कि आप सब लोग चुपचाप तितर-बितर हो जायें। मुसलमान राजी हो गये। हमने जो सुना है और देखा उसे सच माना जाये तो इस बातमे कोई सन्देह नही रहता कि हिन्दू कुली सरासर गलतीपर थे और उन्होने बेकसूर

मुसलमानोको चोट पहुँचाई थी और वे कमसे-कम एक मौतके लिए, जिसका अब मुझे निश्चित पता चल गया है, जिम्मेदार थे। 'एसोसिएटेड प्रेस' के प्रतिनिधिने मुझे जो खबर भेजी है उसके अनुसार अस्पताल भेजे गये हिन्दुओंमें से एक भी जख्मी नही था। बिना जख्मी हुए लोगोको अस्पताल भेजना बहुत ही भद्दी और बेजा बात है। मैं तो आशा करता हूँ कि अनाचार करनेवाले हिन्दू अपनेको अधिकारियोंके हवाले कर देंगे।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-७-१९२५

२०८. भाषण: खड़गपुरकी सार्वजनिक सभामें

४ जुलाई १९२५

महात्माजी इंडियन इंस्टीट्यूटसे इंडियन रिक्रिएशन ग्राउंडमें गये। वहाँ करीब २०,००० लोग एकत्र थे। वे सभी जमीनपर बैठे थे। बंगाल नागपुर रेलवेके बहुत-से यूरोपीय अधिकारी भी सभामें उपस्थित थे और वे उत्सुकतासे महात्माजीको देख रहे थे। महात्माजीने हिन्दीमें भाषण दिया।[1] उन्होंने बकरीदके दिन खिदरपुरमें हुए खेद-जनक हिन्दू-मुस्लिम दंगेका उल्लेख करते हुए कहा कि इसमें पूरी तरहसे हिन्दुओंका कसूर है। उन्होंने जोरदार शब्दोंमें हिन्दू-मुस्लिम एकताकी वकालतकी और आशा व्यक्त की कि हिन्दू मुसलमानोंकी धार्मिक रस्मोंमें हस्तक्षेप नहीं करेंगे। उन्होंने मुसल-मानोंसे भी प्रार्थना की कि वे अपने हिन्दू भाइयोंकी भावनाओंको अपने कार्योंसे ठेस न पहुँचायें।

अन्तमें उन्होंने देशबन्धु स्मारक कोषमें चन्दा देनेकी अपील की और वहींकी-वहीं एक बड़ी रकम इकट्ठी हो गई।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ७-७-१९२५

१. मूल भाषण उपलब्ध नहीं है।

२०९. समस्याएँ

एक मित्र लिखते हैं :[1]

इस भाषामे सुधार करनेकी आवश्यकता है। मुझे याद नही पडता कि मैंने ऐसा कहा हो कि गलत तौरपर सत्याग्रह किये जानेमे भी चिन्ताकी बात नही है। गलत तौरपर की गई प्रत्येक बात अवश्य ही खतरनाक है। मैंने यह जरूर कहा है कि सत्याग्रहीके आग्रहमे गलती हो तो उसका दु ख खुद उसीको भोगना पडेगा और यह ठीक है। जिसके प्रति सत्याग्रह किया गया हो उसे दु ख हो तो उसका जिम्मेवार सत्याग्रही नही हो सकता। सत्याग्रहीका उद्देश्य प्रतिपक्षीको दु ख पहुँचाना होता ही नही है। प्रतिपक्षी अपने आप दु ख माने या दुखी हो तो सत्याग्रहीको उसकी चिन्ता नही करनी चाहिए। मैं शुद्ध भावसे उपवास करूँ और उससे मेरे साथियोको दु ख हो तो उसे सहन कर लेना ही मेरे लिए ठीक होगा।

इस उदाहरणमे कहा गया है कि 'बापको गुस्सा आ गया था।' सत्याग्रही तो क्रोधित होता ही नही, अनिच्छासे हो जाये तो जबतक रोष उतर न जाये तबतक सत्याग्रही रोषका अवसर देनेवालेके विरुद्ध कोई भी कार्रवाई न करेगा। फिर बहुत विचार करनेके बाद भी उसे ऐसा लगे कि माँ-बापने जो व्यवहार किया है वह दोष-युक्त जरूर है तो उसे सुधारनेकी कोशिश करे और उसके ऐसा करते हुए, सोलहो आना विनयका पालन करते हुए भी, यदि उसके माँ-बाप आत्मघात कर ले तो सत्याग्रही इस सम्बन्धमे नि शक रहे। माँ-बाप यदि अज्ञानवश होकर खुदकुशी करे तो उसके जिम्मेवार वे खुद हैं। माँ-बाप जब खुद ही दु:ख मोल ले तो उसके लिए बेटा कैसे जिम्मेवार हो सकता है? माँ-बाप जब बेटेको पापाचरणके लिए कहे और लडका उसके अनुसार आचरण न करे और इसके फलस्वरूप माँ-बाप आत्महत्या कर ले तो इसमे लडकेका क्या दोष? प्रह्लादने रामनाम लेनेका आग्रह किया। इससे हिरण्यकशिपु क्रुद्ध हुआ और अन्तमे उसका नाश हुआ। इसकी जिम्मेवारी प्रह्लादपर बिलकुल नही आती। रामने पिताके वचनका पालन किया। उसके कारण दशरथकी मृत्यु हुई। उसके दोषी राम नही कहे जा सकते। प्रजा दु ख-सागरमे डूब रही थी, फिर भी रामने अपना हृदय कठिन करके अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया। सत्यवतीको असीम दु ख होनेपर भी भीष्म अपनी प्रतिज्ञापर दृढ रहे। इसमे याद रखने लायक बात यह है कि सत्याग्रही अपना धर्म किसीके सिखानेसे नही सीख सकता। वह तो स्वय स्फुरित होना चाहिए। रामने वन जानेसे पूर्व गुरुजनोसे परामर्श नही किया था। यह कहनेवाले धर्माचार्य मौजूद थे कि वन जाना पाप है और न जाना पाप नही है फिर भी उन्होने वन जाकर अपने धर्मका पालन किया और अपना नाम अमर किया। हमारे इस दुखी देशमें कायरता इस हदतक बढ़ गई है कि लोग बात-बात

१. यहाँ नही दिया जा रहा है।

पर आत्मघात करने, अनशन करने आदिकी धमकियाँ देते हैं। ऐसी धमकियोंकी परवाह नही की जा सकती, चाहे हम यह भी क्यो न जानते हो कि धमकीका सच हो जाना सम्भव है। मैं सत्याग्रही-अनशन और दुराग्रही-अनशनका भेद 'नवजीवन' में कई बार स्पष्ट कर चुका हूँ।

वही मित्र एक दूसरा उदाहरण पेश करते हैं, जो यहाँ दे रहा हूँ.[1]

पतिका धर्म है कि वह मर्यादाके अनुसार और यथाशक्ति पत्नीके रहने, खाने और पहननेका प्रबन्ध करे। धनी अवस्थामें पति जैसा सुखोपभोग करा सका है, वैसा गरीब होनेपर नही करा सकता। यदि पति अज्ञानवश आमोद-प्रमोद करे, शराब पीए और विदेशी वस्त्र पहने एव अपनी पत्नीको भी ऐसा ही करने दे तो उचित यह है कि ज्ञान हो जानेपर वह इन बातोको स्वय छोड दे और अपनी पत्नीसे भी छुडवा दे। यहाँ विवेकके लिए स्थान है। दुनियामे सामान्य व्यवहार यह देखा जाता है कि पत्नीको पतिके विचारके अनुकूल रहना चाहिए। परन्तु पति पत्नीसे अथवा पिता अपने पुत्र-पुत्रियोसे कोई काम बलात् नहीं करा सकता। यदि कोई स्वय खादी पहनना आरम्भ करनेपर अपनी पत्नीको अथवा वयस्क पुत्रो और पुत्रियोको खादी पहननेके लिए विवश करे तो यह पाप है; परन्तु वह उनके लिए विदेशी वस्त्र खरीदनेके लिए बाध्य नही है। यदि यह उसके वयस्क बेटोको उचित न लगे तो वे अलग हो सकते हैं। परन्तु पत्नीका मामला नाजुक है। पत्नी सहसा अलग नही हो सकती। उसमे सामान्यत अपनी जीविकार्जन करनेकी शक्ति नही होती, अत मैं ऐसे प्रसगोकी कल्पना कर सकता हूँ जब पत्नी समझानेसे न माने तो उसको विदेशी वस्त्र खरीद कर देना कर्त्तव्य हो जाता है। विदेशी वस्त्रका त्याग एक धर्म छोडकर दूसरा धर्म ग्रहण करनेके समान है। पति जितनी बार अपना धर्म बदले पत्नीको भी उतनी ही बार धर्म बदलना चाहिए, यह नियम नही है और होना भी नही चाहिए। पतिको पत्नीका और पत्नीको पतिका विधर्म सहन करना चाहिए। इसलिए यदि इस स्थितिमे पति पत्नीके लिए विदेशी वस्त्र खरीदे तो उसकी धमकीसे डरकर नही बल्कि यह समझकर खरीदे कि पत्नीसे जबर्दस्ती नही करनी चाहिए। फर्ज करे कि पत्नी स्वय विदेशी कपडा पहनना चाहती है, इतना ही नही बल्कि वह यह भी चाहती है कि उन्हे उसका पति भी पहने और यदि पति उसकी बात नही मानता तो वह आत्महत्याकी धमकी देती है, तब पतिको चाहिए कि वह उसकी धमकीकी परवाह हरगिज न करे।

तीसरा उदाहरण इस तरह है[2]

मेरे मनमें इस बातमे तनिक भी सन्देह नही है कि पिताको अपार दु ख होता हो तो भी पुत्रको उचित है कि वह अस्पृश्यता त्याग दे। यहाँ भी वैसी ही सावधानी बरतनेकी जरूरत है जैसी मैंने पहले उदाहरणमे सुझाई है। यह निष्ठुरताकी बात

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें कहा गया था कि एक स्त्रीने अपने पतिको धमकी दी है कि ५०० रुपयेका विदेशी कपड़ा खरीदकर न दोगे तो मैं आत्मघात कर लूँगी।

२. यहां नहीं दिया गया है। इसमें कहा गया था कि एक पिताने अपने पुत्रको यह धमकी दी है कि यदि तुम अस्पृश्योंको स्पर्श करोगे या उनके मुहल्लेमें जाओगे तो मैं प्राण दे दूँगा।

ऐसे लोगोके लिए नही लिखी गई है जिन्होने मेरे लेखोको पढकर अस्पृश्यताको महा-पाप मान लिया है। यह तो केवल उनके लिए ही लिखी गई है जिन्हे यह हार्दिक विश्वास हो गया है कि अस्पृश्यता महापाप है। इसका अर्थ यह हुआ कि जबतक हम केवल बुद्धिसे इस बातके कायल हो पाये हैं तबतक पिताकी आज्ञाकी अवहेलना नही की जा सकती, क्योकि उसका पालन करना हृदयका गुण है। यदि किसीके कहनेसे प्रह्लादने रामका नाम लेनेका आग्रह किया होता तो उसका धर्म था कि वह पिताके मना करनेपर रामका नाम लेना छोड़ देता।

चौथा और आखिरी दृष्टान्त यह है:[1]

मै पति-पत्नीका धर्म यह नही मानता कि यदि उनमे से एक विकार-वश हो तो दूसरा उसकी वासनाको तृप्त करनेके लिए बाध्य है। एक विकार-वश होनेपर दूसरेको भी उस विकारमे सम्मिलित करे तो वह बलात्कार है। पति या पत्नीको बलात्कारका अधिकार नही है। विकार आगकी तरह है। वह मनुष्यको सूखी घासकी तरह जलाता है। सूखी घासके ढेरमे एक तिनकेको सुलगा दे, बस सारा ढेर भस्म-सात् हो जायेगा। हमे हरएक तिनकेको अलहदा-अलहदा जलानेका कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। एकके मनमे विकार उत्पन्न होता है तो उसका प्रभाव दूसरेपर होता है। दम्पतीमे से एकके मनमे विकार उत्पन्न होनेपर दूसरा निर्विकार रह सके तो मैं उसकी हजार बार वन्दना करता हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-७-१९२५

२१०. मनोरंजक शिक्षा

हमें अंग्रेजी स्कूलोमे खगोलकी कुछ जानकारी दी जाती है, अथवा यो कहे कि मेरे वक्तमे दी जाती थी। गुजराती स्कूलोमें तो वह दी ही कैसे जा सकती थी? अंग्रेजी स्कूलोमे भी उसके बारेमे जो-कुछ बताया जाता था वह भी इस प्रकारसे बताया जाता था कि शिक्षकको एक बार भी आकाशमे छात्रोको तारे दिखानेकी बात कभी सूझती ही न थी। फिर यदि सूझती भी तो वह बेचारा बताता क्या? मुझे इसमें शंका है कि यदि उसे कोई मगल ग्रह दिखानेके लिए कहता तो वह दिखा सकता था या नही। फिर भी यह विषय आकाशके ग्रह और तारोके पहचाननेके सम्बन्धमें है, इस कारण यह आकाशमे उन्हे दिखाकर ही पढाया जाना चाहिए।

उस समय ऐसा कुछ भी नही किया जाता था। मै यह तो जानता था कि यदि यह विषय आकाश दिखाकर पढ़ाया जाए तो इसमे बहुत रस आ सकता है, किन्तु इसका विशेष ज्ञान तो मुझे यरवदा तीर्थमे ही हुआ। वहाँ हमे बाहर खुलेमें

१. यहाँ नही दिया गया है। इसमें कहा गया था कि पतिने ब्रह्मचर्यका व्रत ले लिया है। उसके चारों बच्चे जो उत्पन्न हुए थे मर गये हैं। पत्नी चाहती है कि उसके और सन्तान हो।

सोनेकी अनुमति प्राप्त थी, इससे मेरी तारोसे वार्ता करनेकी इच्छा बहुत तीव्र हो गई थी। किन्तु मुझे तारोकी भाषा तो आती नही थी, अत मैं उनसे क्या बात कर सकता था? मुझे तारोकी वह भाषा पुस्तकसे सीखनी चाहिए थी किन्तु वह सम्भव नही हो सका, क्योकि मैं तो वहाँ दूसरा काम आरम्भ कर बैठा था। मुझे वहाँ छः वर्ष बिताने थे, इसलिए मुझे यह आशा थी कि मैंने 'उपनिषद्' आदि पढनेक जो निश्चय किया है वह पूरा हो जानेपर मैं इन नभवासियोसे बात करना सीख लूँगा।

किन्तु मेरे भाग्यमे तो चित्तरजनका निधन देखना बदा था, अत मैं यरवदा जेलमे जी-भर कर नही रह सका। बीमारीके बहाने विधाताने मुझे वहाँसे बाहर ढकेल दिया और मैं ग्रह-मण्डलके ज्ञानसे वचित रह गया। मुझे भाई शकरलालसे ईर्ष्या होती है। वे हर रातको हाथमे पुस्तक लेकर नभचारी नक्षत्रोकी पहचान करनेमे लग गए थे। इस विषयका अध्ययन मनोरजक ढगसे कैसे किया जा सकता है, इसका नमूना एक हस्तलिखित समाचारपत्रमे मेरे सम्मुख प्रस्तुत है। मै इसे नीचे उद्धृत करता हूँ[1]

यदि पाठकोको इस उद्धरणमें वर्णित आनन्दका अनुभव करना हो तो जिस रातको आकाशमे बादल न हों उस रातमे वे आकाशपर दृष्टि डाले। यदि उनको ग्रहोका ज्ञान बिलकुल न हो तो उनकी स्थिति मेरी-जैसी ही दयनीय होगी। किन्तु वे इसमे से तुरन्त निकल आएँ। वे कोई ऐसी गुजराती पुस्तक मँगाकर उसे पढ जाएँ, जिससे वे मनोरजक ढगसे खगोल विद्या सीख सके। यदि उनको यह पूछना हो कि यह पुस्तक कहाँसे मँगाई जाए तो वे गुजरात विद्यापीठसे पूछ ले। यदि वहाँसे यह जानकारी न मिले अथवा पुस्तक उपलब्ध नही है, ऐसी सूचना मिले तो वे गुजरात विद्यापीठको जो चन्दा देते है वह उसे देना बन्द कर सकते है; किन्तु यदि पुस्तक मिल जाए और उन्होने विद्यापीठको कभी चन्दा न दिया हो तो शुरू कर दे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-७-१९२५

२११. टिप्पणियाँ

देशबन्धुकी महायात्रा

शास्त्रोंमें कहा है कि जिस प्रकार कोई गृहस्थ अपने घरके जीर्ण हो जानेपर नये गृहमे प्रवेश करता है, उसी प्रकार देहस्थ आत्मा एक देहके जीर्ण होनेपर उसका त्याग करती है, दूसरा नया तैयार करती है और उसमे रहती है। जिस तरह गृहस्थको पुराना टूटा-फूटा मकान भी सहवासके कारण छोड़ना अच्छा नही लगता, उसी तरह जीवको भी दीर्घ सहवासके कारण इस देहको छोडना अच्छा नही लगता, भले ही पैर फूलकर खम्भे बन गये हो, या शरीर छीज-छीजकर हड्डियोका ढाँचा-भर रह गया हो या साँस लेना दूभर हो चुका हो। फिर भी नया घर बन जानेपर हम

१. यहाँ उद्धृत नही किया गया है।

पुरानेको भूल जाते है। उसी प्रकार जीवको नया घर मिल जानेपर पुराने घरकी यादतक नही रहती। ऐसा है मृत्यु और जन्मका खेल। इस स्थितिमें भय और शोकका कारण ही क्या है? मौतको मौत न समझते हुए महायात्रा समझना ही ज्यादा ठीक है।

इस महायात्रामे यदि हमे देशवन्धुकी आत्माको शान्ति देनी हो तो हमारे पास एक ही इलाज है। हम उनके जितने सद्गुणोको अपने भीतर उतार सके, उन सबको उतारे। उनके बहुत-से सद्गुण तो अवश्य ही उतारे जा सकते है। उनकी-जैसी अंग्रेजी चाहे हमे न आ सके, उन-जैसे वकील चाहे हम सब न बन सके और कौंसिलमे काम करनेकी उनकी-जैसी शक्ति चाहे हममे न हो, परन्तु हमारे मनमें उनकी तरह देश-प्रेम तो हो ही सकता है। हम उनकी-जैसी उदारता सीख सकते है। उनके बराबर धनका दान हम चाहे न कर सके, परन्तु यथाशक्ति देना ही बहुत देना है। विधवाके दिये एक ताँबेके छल्लेकी कीमत महाराजाके अपनी करोडोकी सम्पत्तिसे दिये गये हजार रुपयोकी कीमतसे ज्यादा है। देशबन्धुने खादी पहननेके बाद फिर खानगीमे या बाहर उसका त्याग नही किया। क्या हम खादी पहनेंगे? देशबन्धुने महीन खादी कभी नही माँगी। उन्हे तो मोटी खादी ही पसन्द थी। देशबन्धुने कातनेका प्रयत्न किया था; जिन्होने ऐसा नही किया है, क्या वे अब करेगे?

अखिल भारतीय स्मारक

इस समय उनका स्मारक बनानेके लिए बगालमे रुपया इकट्ठा किया जा रहा है। किन्तु क्या उनका कोई अखिल भारतीय स्मारक बनाये बिना काम चल सकता है? मै यहाँ बगालके स्मारकके लिए धनसग्रह करनेमे व्यस्त हूँ, इसलिए मित्रोसे परामर्श नही कर सका हूँ। किन्तु मै स्वय तो विचार कर ही रहा हूँ। यह काम किस प्रकार किया जाना चाहिए, इस सम्बन्धमे देशबन्धुका वसीयतनामा मेरे पास है। यह बगालके वसीयतनामेकी तरह लिखित तो नही है, किन्तु है लिखित-जैसा ही। मै इस सम्बन्धमे इस अकमे विशेष नही लिखूँगा, किन्तु अगला अक निकलनेसे पहले तो मेरी अपील[1] प्रकाशित हो चुकेगी।

पाठकोको अपनी थैली खोलनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए। चूँकि रुपया यथाशक्ति देना है, इसलिए घबरानेकी कोई जरूरत नही है। देशबन्धुने जो रुपया दिया वह किसी भयसे नही दिया था, बल्कि स्वेच्छासे दिया था। रुपया देनेमें उन्हे हर्ष होता था। उन्होने अपनी लाखोकी वकालत एक क्षणमे छोड दी थी। ऐसा उन्होने दुःखी मनसे नही, बल्कि इसलिए किया कि [देशकी उपेक्षा करके] वकालत करना उन्हे बर्दाश्त नही हुआ। इसलिए मेरे सुझावसे किसीको घबराना नही चाहिए। देशमे ज्यो-ज्यो जागृति होती जाती है और जब-जब आकस्मिक संकट आते है त्यो-त्यो और तब-तब लोगोको अपनी कमाईमें से थोड़ा-बहुत हिस्सा अवश्य देना चाहिए और उसके लिए तैयार रहना चाहिए। प्रेमका अर्थ केवल आँसू बहाकर बैठ रहना नही

१. देखिए "अपील: अखिल भारतीय देशबन्धु-स्मारकके लिए", २२-७-१९२५।

है। जवानी जमा-खर्च करना भी प्रेम नहीं, झूठी बकवास है। प्रेम तो मौन रहकर कुछ देने और कुछ करनेमें है। पितृभक्त पुत्र भाटकी तरह पिताके गुणोंका गान नहीं करता रहता, बल्कि पिताकी सम्पत्तिको सँभालता, सुधारता और बढ़ाता है। पिताकी सच्ची सम्पत्ति तो उसके सद्गुण हैं। वह उनको अपने जीवनमें उतारकर अपने पिताकी और अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाता है। उसी प्रकार यदि हम देशबन्धुके सच्चे उत्तराधिकारी हैं तो हमें उनकी विरासतको सुरक्षित रखनेके लिए यथाशक्ति धन देना चाहिए।

कलकत्तेके गुजराती

गुजरातसे तो मेरे घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। मुझे कड़वी बातें कहनेकी टेव तो है ही, और उस टेवको हिन्दुस्तानने सह लिया है। किन्तु ज्यादासे-ज्यादा कड़वी बातें तो मैं गुजरातियोंसे ही कहता हूँ। वे उनका अर्थ उलटा नहीं समझते और मेरी कड़वी बातोंको वैद्यकी दवाओंकी तरह आरोग्यवर्धक मानकर मुझसे और भी अधिक प्रेम करते हैं। ऐसा अनुभव मुझे गत सप्ताह कलकत्ताके गुजरातियोंका हुआ। उन्होंने देशबन्धुके निधनपर शोक प्रकट करनेके लिए एक सभा की थी।[1] उन्होंने उसमें मुझे बुलाया और सभापति बनाया था। कार्यकर्ताओंने मुझे यह वचन दिया था कि वे धन-संग्रह भी करेंगे। मैंने देखा कि उन्होंने धनसंग्रह नहीं किया था। इस कारण मुझे दो कड़वी बातें कहनी पड़ीं। शोकसभा तो एक ही अच्छी लगती है, अनेक नहीं। शोक सभा मृत्युके दिन की गई थी। अब पहली जुलाईको देश-भरमें होगी। तब बीचमें दूसरी और जातीय सभा करनेका हेतु तो एक ही हो सकता है कि उसमें कोई रचनात्मक कार्य किया जाये या धनसंग्रह किया जाये। इस समय बंगालके गुजराती और मारवाड़ी आदि कुछ ऐसा ही कार्य करनेमें जुट सकते हैं। मैंने उनसे यह बात कही। इससे गुजरातियोंको रोष नहीं आया, किन्तु उन्होंने मेरी बातका मर्म समझ लिया और जिस नाट्यशालामें सभा हो रही थी उसीमें ऊपरकी गैलरियोंसे रुपयोंकी वर्षा होने लगी और तत्काल ६,००० से ज्यादा रुपया इकट्ठा हो गया। यदि उसमें कोई कम रुपया देता था तो उसे टोकनेवाले लोग भी तैयार थे। मुझे कहा गया है कि बहुत-से लोगोंने जितना दे सकते थे, उतना रुपया नहीं दिया है। मैं चाहता हूँ कि यदि ऐसी बात हुई हो तो वे लोग भूल सुधार लें। इस टिप्पणीका उद्देश्य तो कलकत्ताके गुजराती भाइयोंका आभार मानना ही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-७-१९२५

१. देखिए "भाषण: कलकत्ताकी शोकसभामें", २६-६-१९२५।

२१२. पत्र: महादेव देसाईको

[६ जुलाई, १९२५][1]

चि० महादेव,

तुम्हें [जुदा होनेपर] जो दुःख हुआ, मैंने उसे तो समझ ही लिया है। क्या यही दु:ख किसी दिन स्थायी नहीं हो जायेगा? अतः इस समय इतना अनिवार्य दुःख सह लो।

मुझे मोतीलालजीका तार मिला था। तुम वासन्तीदेवीसे मिल लेना। उनसे पूछकर वहीसे तार दे देना। यदि १४८ [रसा रोड]मे उनकी सार-सम्भाल ठीक तरह हो सके तो वे अवश्य हमारे साथ रहें। फिर भी इस सम्बन्धमें वासन्तीदेवी जो चाहे वही करना ठीक है।

मुझे यहाँ भी तुम्हारा पत्र मिल गया है। वह चीज अवतक तो 'फॉरवर्ड' को भेज दी होगी। कभी-न-कभी तो वह छपेगी ही। उसकी नकल श्यामबाबूको भेज देना।

खड़गपुरमे ५०० रु० और . . . में[2] ५०० रुपये चन्देके मिले हैं। दूसरोंने भी रुपया देनेकी आशा तो बँधा ही दी है। यहाँ मिदनापुरमें जितना मिल जाये उतना ही ठीक। राजेन्द्र बाबू यहाँसे जुदा हो गये। वे यहाँसे पुरुलिया गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

वासन्ती देवीसे रोज मिलना। 'यंग इडिया' के लिए दो कालम लायक सामग्री गाड़ीमे लिखी थी। यह हुआ तुम्हारे . . . के[3] पत्रका उत्तर।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४३२) की फोटो-नकलसे।

१. डाककी मुहरसे।

२. यहाँ अक्षर अस्पष्ट हैं।

३. यहाँ अक्षर अस्पष्ट हैं।

२१३. पत्र : महादेव देसाईको

आषाढ वदी १ [७ जुलाई, १९२५][1]

चि० महादेव,

तुम्हे कुछ-न-कुछ तो लिखूँ ही। तुम्हारी भेजी हुई डाक मिल गई है। खादी प्रतिष्ठानके पतेपर भेजी हुई डाक अभी यहाँ नही पहुँची है। वहाँ जानेपर धन-सग्रहके सम्बन्धमें पत्रोमे कुछ लिखूँगा। पत्रोमे मेरे भाषणोका सार तो छपता ही होगा। वह लेख ठीक है। मैंने यहाँ [मिदनापुरमे] रानीको चरखेका पाठ दिया है। उन्होने कातनेकी प्रतिज्ञा भी की है। मैं चीनीसे पूछताछ तो अवश्य करूँगा। यदि वह रखा जा सके तो मैं उसे जरूर रखना चाहता हूँ। तुम उसे अपने पास रख लेना। वह हिन्दुस्तानी सीख ले तो अच्छा है। मैं कल दिनमे चार वार सोया। अभी मेरी सोनेकी भूख मिटी नही है। मुझे चाँदीके वर्तनोमे खाना तो वहुतोने सिखाया है, अव यहाँ शुद्ध सोनेके बर्तनोमें खाना सीख रहा हूँ। लकडीकी मेरी रकावी और उसमे सोनेका कटोरा! ऐसी पूजा कैसे स्वीकार की जा सकती है? मैं तो देखता ही रह गया। रानीसे मैंने एक शब्द भी नही कहा। क्या ईश्वर मेरी परीक्षा ले रहा है? वह कव-तक मेरी ऐसी परीक्षा लेता रहेगा? इस देशमे कैसी श्रद्धा है? रक्षा करो, प्रभु, रक्षा करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४३०) की फोटो-नकलसे।

२१४. भाषण : मिदनापुरके छात्रोंके समक्ष[2]

७ जुलाई, १९२५

गांधीजीने कहा कि समारोहके प्रारम्भमें छात्रों द्वारा मेरा स्वागत करनेसे मुझे प्रसन्नता हुई है। आगे बोलते हुए उन्होंने बताया कि मेरे वर्तमान दौरेका उद्देश्य देशबन्धु दासके उपदेशोंको कार्यरूप देना और उनके स्मारकके लिए चन्दा इकट्ठा करना है। देशबन्धुने अपना समस्त जीवन और सम्पत्ति युवकोंके कल्याणमें लगा दी थी। उनको युवकोंसे, विशेषकर छात्रोंसे, बहुत आशा थी और वे उनपर बहुत भरोसा रखते थे। महात्माजीने कहा कि इस यशस्वी देशभक्तके जीवनको बाह्य और आन्तरिक

१. डाककी मुहरसे।

२. यह भाषण छात्रों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रके उत्तरमें दिया गया था। गांधीजीने भाषण हिन्दीमें दिया था। मूल भाषण उपलब्ध नहीं है।

दो रूपोंमें देखा जा सकता है; किन्तु उनका बाह्य जीवन उनके आन्तरिक जीवनको पूर्ण बनानेमें सहायक-भर होनेका प्रयत्न था। देशबन्धु राष्ट्रको शक्तिशाली बनाकर उसे स्वतन्त्र देखना चाहते थे। जहाँतक उनके बाह्य जीवनका सम्बन्ध है वह केवल धनी और शिक्षित लोगोंके लिए था जबकि उनके आन्तरिक जीवनका अनुकरण गरीब-अमीर, शिक्षित-अशिक्षित, बालक-बालिका, युवा और वृद्ध सभी समान रूपसे कर सकते थे। अपने जीवनके अन्तिम छः या नौ महीनोंमें उन्होंने गाँवोंके पुनर्गठन तथा पुनर्निर्माणके आदर्शको — जिसमें प्रत्येक आयु और सामाजिक स्तरके पुरुष और स्त्री भाग ले सकते थे — लोगोंके सम्मुख रखनेका प्रयत्न किया।

छात्रोंका ध्यान इस ओर खींचते हुए गांधीजीने कहा कि गाँवोंमें कार्य आरम्भ करनेका सबसे उत्तम और आसान तरीका प्रत्येक घरमें चरखेको दाखिल करना है। इस सम्बन्धमें दार्जिलिंगमें मैंने उनसे लम्बी बातचीत की और हम दोनों ही इस बात-पर सहमत थे। देशबन्धुने अपनी मृत्युके कुछ दिन पहले बाबू सतकौड़ीपति रायको भी यह सब सूचित किया था। यह एक बड़े दुःखकी बात है कि अपने देशवासियोंके लिए तैयार की गई अपनी उस योजनाको पूरा करनेके लिए वे आज हमारे बीच नहीं हैं। यदि आपके मनमें अपने देशबन्धुके प्रति कुछ भी प्रेम व श्रद्धा है तो आपको प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा कातने, कभी विदेशी कपड़ा न पहनने और तत्परता तथा लगनसे गाँवोंके पुनर्निर्माणका कार्य शुरू करनेकी शपथ लेनी होगी। अन्तमें उन्होंने छात्रोंसे अपील की कि अपने माता-पितासे आज्ञा लेकर वे यथाशक्ति देशबन्धु-स्मारक कोषमें चन्दा दें। उन्होंने उनसे सोनेके बटन तथा अन्य विलासिताकी वस्तुएँ, अपने नित्यके खर्चसे, यहाँतक कि दो-तीन दिन उपवास रखकर भी, पैसा बचाकर उसे कोषमें देनेको कहा। इस प्रकारका त्याग छात्रोंके लिए कोई नया नहीं है। अपने पिछले ३०–४० सालके राजनीतिक जीवनमें मुझे ऐसी सहायता बहुत बार मिली है। विशेष-कर पिछले मलाबार बाढ़ सहायता-कोषमें। पर मैं आपको इस बातके लिए आगाह किये देता हूँ कि यदि आप यह त्याग स्वेच्छासे नहीं करते तो मैं एक भी पाई नहीं लूँगा। आप अपनेमें से या अपने बुजुर्गोंमें से किसीको अपना नेता चुन लें और उसकी मार्फत चन्दा इकट्ठा करें तथा नित्य कातने और कभी विदेशी कपड़ा इस्तेमाल न करनेकी शपथ लें।'

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ८-७-१९२५

१. उस दिन बादमें गांधीजीने महिलाओंकी सभामें तथा शामको सार्वजनिक सभामें गाँवोंके पुनर्निर्माणकी आवश्यकता, कताई, हिन्दू-मुस्लिम एकता आदि विषयोंका उल्लेख करते हुए भाषण दिये। सभाओंमें उन्हें विभिन्न संस्थाओंने मानपत्र भी भेंट किये थे।

२१५. भाषण: बांकुड़ाकी सार्वजनिक सभामें[1]

८ जुलाई, १९२५

महात्माजीने कहा कि इस जिलेमें आकर मैंने अनिल बाबूकी विभिन्न गति-विधियो तथा लोगोंके मनपर उनके प्रभावके बारेमें सुना। अनिल बाबूके कार्यको चलाते रहनेकी दिशामें जनताको उत्साहित करते हुए गांधीजीने बताया कि वे जल्दी ही जेलसे रिहा हो जायेंगे। इसके बाद उन्होंने कहा कि मैं देशबन्धुके सन्देशका प्रचार करनेके लिए, उस दिवंगत महापुरुषने हमें त्याग, अनथक कर्मशीलता, मातृभूमिके प्रति अनन्त श्रद्धा और दीन-दुखी जनोंके प्रति प्रेमकी जो शिक्षा दी, उसीको आप लोगोंके हृदयमें उतारनेके लिए जगह-जगह घूम रहा हूँ।

गांधीजीने कहा कि आप केवल चन्दा देकर अथवा अपना नाम [स्वयंसेवकोंमें] लिखाकर ही नहीं वरन् गांवोंके पुनर्निर्माणके द्वारा स्वराज्य दलके कार्यको उत्तेजन दें। सबका कौंसिलोंमें प्रवेश पाना सम्भव नहीं है; पर पुनर्निर्माणका कार्य सब कर सकते हैं। जहाँतक चरखा और गांवोंके पुनर्निर्माणका प्रश्न है, जब दार्जिलिंगमें हमारी चर्चा हुई उस समय मैं और देशबन्धु एक मत थे। जबतक गांवोंका उत्थान नहीं किया जाता हमें स्वराज्य कैसे मिल सकता है? गांवों और शहरोंको जोड़नेवाला एकमात्र साधन चरखा है। तमाम अकालों, बीमारियों तथा अन्य विपत्तियोंका कारण भारतकी गरीबी है। यह बात मैंने कांग्रेसके प्रारम्भिक कालमें भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीके लेखोंसे समझ ली थी। हम उस गरीबीसे छुटकारा कैसे पा सकते हैं? चरखेको अपनानेसे आप चरखेकी सम्भावनाओंपर विचार करें। अन्तमें गांधीजीने देशबन्धु स्मारक कोषमें चन्दा देनेकी अपील की। इसपर बहुत-से रुपये-पैसे और आभूषण आने शुरू हो गये और सभा समाप्त हुई।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ११-७-१९२५

१. सभामें गांधीजीको जनता, जिला बोर्ड, नगरपालिका तथा बाँकुडा सम्मेलनोंकी ओरसे मानपत्र भेंट किये गये थे, जिनका उत्तर उन्होंने हिन्दीमें दिया। मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

२१६. टिप्पणियाँ

दो कठिनाइयाँ

एक प्रसिद्ध व्यक्तिने एक मित्रकी मार्फत नीचे लिखे सवाल 'यंग इंडिया' में उनका जवाब देनेके लिए मेरे पास भेजे हैं:

> १. आप मानते हैं कि अस्पृश्यता अकेले हिन्दू धर्मपर ही नहीं, सारी मनुष्य जातिपर एक धब्बा है। तब फिर आप उसके सुधारकोंका दायरा सिर्फ हिन्दुओंतक ही सीमित क्यों रखते हैं? हिन्दुओंकी तरह मुसलमान भी उसे सुधारनेमें हाथ क्यों न बँटायें?
>
> २. आप मुतवातिर हिन्दू-मुस्लिम एकतापर जोर देते हैं। पर क्या आप मेहरबानी करके यह बतायेंगे कि आपने इस्लाम या मुसलमानोंके लिए प्रत्यक्ष काम क्या किया है?

पहले सवालके बारेमें तो मैं यह कहूँगा कि यद्यपि अस्पृश्यताका पाप अकेले हिन्दू समाजपर ही नहीं, सारी मनुष्य जातिपर कलंक है तो भी यह एक ऐसा सवाल है जिसे हिन्दू धर्मसे सम्बन्ध रखनेवाले अन्य सवालोंकी तरह खुद हिन्दुओंको ही हल करना चाहिए। मिसालके तौरपर देवदासियोंके सवालको ही लीजिए। यह प्रथा कोई ऐसी-वैसी बुराई नहीं है। यह भी मनुष्य जातिपर एक लांछन है। फिर भी कोई अहिन्दू इस बुराईको उस रूपमें दूर करनेका इरादा नहीं करता जिस रूपमें कि हिन्दू कर रहे हैं। कारण स्पष्ट है। इन बुराइयोंको भीतरी सुधारके द्वारा दूर किया जाना चाहिए — बाहरसे जबरदस्ती लाद कर नहीं। ऐसा केवल हिन्दू ही कर सकते हैं। हाँ, मुसलमान, ईसाई तथा अन्य अहिन्दू सज्जन हिन्दू धर्मकी अन्य बुराइयोंकी तरह उसपर भी टीका-टिप्पणी करना चाहे तो शौकसे करें। वे सुधारकोंको अपना नैतिक सहयोग भी दे सकते हैं। परन्तु यदि वे इससे आगे जाकर कुछ करना चाहेंगे तो उनके ऊपर हिन्दू धर्मके खिलाफ बुरे इरादे रखनेका इल्जाम लगाये जानेकी सम्भावना पैदा हो जायेगी।

जहाँतक इल्जामका सम्बन्ध है, मुझे सिर्फ उसका उल्लेख करके ही सब्र रखना होगा। अगर मैं इस दिशामें अपने किये गये कामोंको गिनाने लगूँ तो वह एक नामुनासिब बात होगी। यदि मुझे मुसलमानोंके सामने यह साबित करना पड़े कि मैंने एकताके लिए प्रत्यक्ष क्या-कुछ किया है तब तो यही प्रकट होगा कि मैंने कुछ नहीं किया है और इसलिए मुझे इस प्रश्नमें निहित निन्दाको तबतक शिरोधार्य ही करना होगा, जबतक मेरी नेकनीयती अपने आप साबित नहीं हो जाती। पर आम मुसलमानोंके साथ इन्साफ करते हुए मुझे इतना तो जरूर कह देना चाहिए कि यह पहला मौका है जब मुझसे अपनी सेवाका प्रमाणपत्र तलब किया गया है। फिर भी

मैं कहता हूँ कि सब्र रखकर इन्तजार करना भी सेवा करना ही है। यदि इन प्रसिद्ध सज्जनकी तरह बहुतसे मुसलमान मेरे सेवाकार्यकी जाँच करना चाहते हैं तो मैं उनसे कहूँगा कि वे इसमें अपना सिर न खपायें, इस आश्वासनपर कि मैं उनकी सक्रिय रूपसे न सही प्रार्थनापूर्वक तटस्थ रहकर अप्रत्यक्ष रूपसे सेवा ही कर रहा हूँ।

वैद्योंकी शिकायत

मेरे वैद्यों और हकीमोंकी आलोचना करनेपर वैद्योंके दिलपर बहुत चोट पहुँची है। वे मुझपर मस्तिष्ककी दुर्बलताका दोष लगाते हैं और अपने प्रति मुझे अहिंसक नहीं मानते। मुझे खेद है कि मेरे कारण उनके दिलको चोट पहुँची। परन्तु मैं अपनेको अपराधी नहीं मान सकता। मैंने आयुर्वेदकी आलोचना नहीं की है। आलोचना उनकी की है जो वैद्य बननेका पाखण्ड रचते हैं। इनमें से भी मैंने सबकी नहीं बल्कि उन अधिकांशकी ही आलोचना की है जो झूठे दावे करते हैं और जिसके लिए मैंने उनको दोष दिया है। देशी दवाओं और वनस्पतियोंकी जाँच-पड़तालके प्रस्तावका समर्थन करने और कुछ वैद्योंके अख्तियार किये हुए ढंगकी निन्दा करनेमें कोई पारस्परिक विरोध नहीं है। यहाँतक कि मेरे कलकत्तेमें आयुर्वेदिक कालेजकी नींव डालने और कविराजोंको चेतावनी देनेमें भी कोई विरोध नहीं है। पूनाके वैद्य मेरी मित्रभावसे की हुई आलोचनाको अस्वीकार कर सकते हैं। इससे मुझे खेद तो होगा, परन्तु इस अस्वीकृतिसे मेरा अनुभवजन्य निश्चय बदलेगा नहीं। मैंने जो-कुछ कहा है उसके लिए मेरे पास बहुत-से प्रमाण हैं। मैं ऐसी हर वस्तुको जो प्राचीन और महान् है पसन्द जरूर करता हूँ, परन्तु उसकी नकल मुझे कतई पसन्द नहीं। मैं नम्रतापूर्वक इस बातको माननेसे इनकार करता हूँ कि प्राचीन पुस्तकोंमें जिस विषयपर जो-कुछ लिखा है वही उसका अन्त है, उसके अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता। प्राचीन वस्तुओंके समझदार उत्तराधिकारीकी हैसियतसे मैं यह चाहता हूँ कि अपनी विरासतको बढ़ाऊँ। प्रतिवादियोंको जानना चाहिए कि कुछ कविराजोंने मेरी आलोचनाको पसन्द किया है और वे उसपर विचार भी कर रहे हैं। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि वह आक्षेप उनके लिए नहीं था जो लोग नम्रतापूर्वक अपनी आर्थिक हानिका विचार किये बिना वैज्ञानिक रीतिसे खोज कर रहे हैं। उनकी संख्या उँगलियोंपर गिनने लायक है। मैं उनकी वृद्धि देखना चाहता हूँ।

कताई-प्रस्ताव

अहमदाबादमें अ० भा० का० क० द्वारा पारित कताई-प्रस्तावको पाठक भूले न होंगे। उसके अनुसार जो सूत अ० भा० खादी बोर्डको प्राप्त हुआ है, उसके उपयोगका नीचे लिखा ब्यौरा मुझे उक्त बोर्डकी ओरसे मिला है।[1]

इस छोटे-से ब्यौरेसे हम कुछ सीख सकते हैं। जितना माल तैयार होना चाहिए था या हो सकता था उसके मुकाबलेमें यह माल कुछ नहीं है। परन्तु इस प्रयत्नसे तो यह प्रकट हो ही जाता है कि तफसीलकी बातोंमें थोड़ी-सी भी असावधानीसे हर

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें सूतके हल्के दरजेके होनेका उल्लेख था।

तरहकी तरक्कीमे कितनी रुकावट आ जाती है। संगठन एक यन्त्रकी तरह है। यन्त्रमें छोटी-सी भी कील ढीली पड जाये तो सारा यन्त्र ढीला पड़ जाता है, वह बेकार भी हो सकता है, उसी तरह सगठनमे जरा भी अव्यवस्था होनेसे उसके कार्यमे और अपेक्षित परिणामोमे दोष पैदा हो जाता है। जो लोग कताई-सदस्यताका काम कर रहे है, उनको इस तीन महीनेके प्रयोगसे शिक्षा लेनी चाहिए।

यह खादी सस्ती नही की गई सो केवल इसलिए मालकी तादाद बहुत कम थी, और यह निर्णय करना कठिन था कि सस्तेपनका लाभ किसको मिलना चाहिए। कातनेवाले सावधान हो जाये! इसपर से यह स्पष्ट हो जाता है कि विदेशी कपड़ेका बहिष्कार और सारे देशकी जरूरत-भरके लिए खादी तैयार करनेका दारोमदार आपके ही ऊपर है।

कताई एक नई आदत

एक प्रतिष्ठित अमरीकी सज्जन कताईका अभ्यास करते है। वे लिखते है:[1]

अपने अनुभवोका वर्णन लिख भेजनेमे माफी माँगनेकी कोई बात नही है; क्योंकि अमरीका हो या भारत मानव-प्रकृति सब जगह एक-सी है। केवल वर्णनकी शैली भिन्न है और शायद वह 'यग इडिया'के पाठकोको नई जान पडेगी। स्वेच्छया कताई करनेवाले उन लोगोको भी जिन्हे अब उसका अभ्यास हो गया है, प्रारम्भमे इन्ही कठिनाइयोका सामना करना पडा था, जिनकी इन अमरीकी सज्जनने बात की है। मनमें दृढ सकल्प हो तो काफी है। उससे आनेवाली कठिनाइयोका अनुमान हो जाता है और सफलतापूर्वक उनका सामना करनेकी शक्ति भी मिल जाती है। अपनी कठिनाइयोका उपरोक्त विश्लेषण मूल्यवान है क्योकि जिन बातोको हम विना जाने अनुभव करते रहे है, उन्हे उन्होने स्पष्ट कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

२१७. दुःखद जानकारी

यह पत्र[2] मुझे चटगाँवमें दिया गया था और तबसे यह मेरी बडीकी जेबमें ही रखा है ताकि मै अवसर मिलते ही जल्दीसे-जल्दी इसका उत्तर दे सकूँ। पाठकोको मालूम है कि पतित बहनोको बुराईके मार्गसे हटानेका प्रयत्न किया गया था। किन्तु उसका प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ है कि इस बुराईको खुली छूट मिल गई है। मै जानता हूँ कि वेश्यावृत्ति एक भयकर बुराई है और वह बढ रही है। अवगुणमे गुण देखने और कलाके पवित्र नामपर या किसी दूसरी झूठी भावनाकी आड लेकर बुराईको नजर-

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है। उसमें लेखकने नियमित कताई करनेको एक आदत बना लेनेके लिए बौद्धिक और मानसिक प्रयत्नोंकी आवश्यकतापर जोर दिया था और कहा था कि प्रारम्भमें भावनाको बुद्धिकी सहायतासे बल देते रहना जरूरी हो सकता है।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें वेश्यालयों, सिनेमाघरों, शराबखोरी और धूम्रपानकी बुराइयोंके बारेमें लिखा गया था।

अदाज करनेकी प्रवृत्तिके कारण इस पतनकारी व्यसनपर एक तरहके मिथ्या सम्मानका पर्दा पड़ गया है। यह मिथ्या सम्मान ही इस नैतिक कोढके लिए उत्तरदायी है और यह बात तो प्रत्येक व्यक्तिको आसानीसे समझमें आ सकती है। लेकिन मेरा पत्रलेखक जैसी भयकर स्थिति बताता है, मैंने उसकी कल्पना नही की थी। मुझे लगता है कि उसने इस बुराईको बढा-चढाकर नही बताया है, क्योकि मुझे अपने दौरेमे विभिन्न सूत्रोसे इसके समर्थनमे प्रमाण मिले हैं। नास्तिकताके इस युगमे जहाँ लोगोका ईश्वरमें विश्वास नही रह गया है या केवल कहने-मात्रका विश्वास रह गया है, और जिसमे सुखों और भोगोंकी बहुलता है, यह भयकर बुराई हमे पतनकी याद दिलाती है जबकि वह लगभग चरम उत्कर्षपर था। अत इसके निराकरणका उपाय बताना सुगम नही है। इसका निराकरण कानूनसे नही किया जा सकता। लन्दनमे यह बुराई बडे जोरोपर है। पैरिस इसके लिए बदनाम है और वहाँ तो उसने एक चलनका रूप ले लिया है। यदि कानूनसे इसका निराकरण किया जा सकता तो ये अत्यन्त सगठित राष्ट्र अपनी राजधानियोको इस बुराईसे मुक्त कर लेते। मेरे जैसे सुधारक कितना ही क्यो न लिखे, इस खराबीमे कोई खास कमी नही हो सकती। हमारे ऊपर इग्लैड-का राजनैतिक प्रभुत्व तो बुरा है ही। उसका सास्कृतिक प्रभुत्व उससे भी बुरा है। क्योकि एक ओर हम उसके राजनैतिक प्रभुत्वको नापसन्द करते हैं और इसलिए उसका विरोध करनेका प्रयत्न करते है, किन्तु दूसरी ओर हम उसके सास्कृतिक प्रभुत्वसे चिपटे रहते हैं और मोहवश यह अनुभव नही करते कि जैसे ही हमपर उसका सास्कृतिक प्रभुत्व पूरा-पूरा जमा, हमारे लिए उसके राजनैतिक प्रभुत्वका विरोध करना सम्भव ही नही होगा। मेरे इस कथनसे कोई इस गलतफहमीमे न पडे कि अग्रेजी राज्यसे पहले भारतमे वेश्यावृत्ति नही थी। फिर भी मै इतना अवश्य कहता हूँ कि वह तब इतनी व्यापक नही थी, जितनी आज है। वह ज्यादासे-ज्यादा थोडे-से राजा-रईसोतक ही सीमित थी। अब तो इसके कारण देशके युवकोका तेजीसे नाश हो रहा है। मै इन्ही युवकोसे देशके लिए कुछ किये जानेकी आशा बाँधे हूँ। जो नवयुवक इस बुराईमे फँसे हैं, वे स्वभावत· बुरे नही है। वे मजबूर होकर और बिना विचारे उसमे जा फँसे हैं। इस दुष्कर्मसे इन युवकोकी और समाजकी जो हानि हुई है, उन्हे इसका अनुभव करना चाहिए। उन्हे यह भी समझ लेना चाहिए कि इस भयकर विनाशसे उनकी और देशकी रक्षा केवल कठोर सयम पालन द्वारा ही हो सकती है। वे जबतक ईश्वरका ध्यान नही करते और प्रलोभनसे बचनेमे उसकी सहायता नही माँगते, तबतक कोरा सयम, फिर चाहे उसका पालन कितनी ही कठोरतासे क्यो न किया जाये उनके लिए अधिक लाभप्रद नही होगा। 'गीता' मे महर्षिने ठीक ही कहा है कि 'मनुष्य निराहार रहकर शरीरको सयममें रख सकता है, किन्तु फिर भी वासना बनी रहती है। वासनाका क्षय तो तभी होता है जब मनुष्य ईश्वरके प्रत्यक्ष दर्शन कर लेता है।''[1] प्रत्यक्ष दर्शन करनेका अर्थ है यह स्पष्ट अनुभूति कि वह हमारे

१. विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं, रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥ भगवद्गीता २-५९।

हृदयोमें आसीन है—वैसे ही जैसे बच्चेके हृदयमे मातृस्नेहकी अनुभूति होती है। इसके लिए बच्चोको किसी प्रमाणकी जरूरत नही होती। मांके मनमें प्रेम है, क्या वह इसके सम्बन्धमें तर्क करता है? क्या वह उसे दूसरोंके सम्मुख सिद्ध कर सकता है? वह तो गर्वपूर्वक कहता है: 'मांके मनमे प्रेम है।' ऐसा ही ईश्वरके अस्तित्वके सम्बन्धमे होना चाहिए। वह तर्कसे सिद्ध नही होता, बल्कि वह अनुभव किया जाता है। हमें तुलसीदास, चैतन्य, रामदास और अध्यात्मवादके अन्य असंख्य गुरुओके अनुभवकी उपेक्षा नही करनी चाहिए, जैसे कि हम अपने सासारिक गुरुओके अनुभवकी उपेक्षा नही करते।

पत्रलेखकने पूछा है कि काग्रेसजन उसके द्वारा गिनाये हुए काम, जैसे नाट्यगृहमें जाना आदि कर सकते हैं या नही। मैं कह चुका हूँ कि मनुष्यको कानूनसे अच्छा नही बनाया जा सकता। यदि मुझमे लोगोंको समझाने-बुझानेकी शक्ति होती तो मैं कुख्यात स्त्रियोको अभिनेत्रियोंका काम करनेसे अवश्य रोकता। मैं लोगोको शराब पीने और तम्बाकू पीनेसे भी रोकता। जिन पतनकारी विज्ञापनोसे प्रसिद्ध मासिक और दैनिक पत्रोके भी पृष्ठ गन्दे बने रहते हैं मैं उन विज्ञापनोको निश्चय ही रोकता और हमारे कुछ मासिक पत्रोके पृष्ठ जिस अश्लील साहित्य और जिन अश्लील चित्रोसे दूषित किये जाते है, मैं निश्चित रूपसे उन्हे भी रोकता। लेकिन अफसोस है कि मुझमें समझाने-बुझानेकी शक्ति नही है। यदि मुझमे वह शक्ति होती तो मुझे बहुत प्रसनता होती। लेकिन इन बातोको राज्य या काग्रेसके कानूनो द्वारा नियन्त्रित करना ऐसा उपाय होगा जो शायद स्वय इस दोषसे भी अधिक सदोष होगा। आवश्यकता सज्ञान, विवेकयुक्त, स्वस्थ और शुद्ध लोकमत बनानेकी है। ऐसा कोई कानून नही है जो चौकोको पाखानेके रूपमे और बैठकोको अस्तबलोके रूपमे प्रयुक्त करनेसे रोकता हो। परन्तु लोकमत या लोकरुचि ऐसी व्यवस्थाको सहन नही करेगी। कभी-कभी लोकमतके विकासकी गति बडी मन्द होती है, लेकिन केवल वही एक-मात्र प्रभावकारी उपाय है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

२१८. त्यागका शास्त्र

कलकत्तेकी एक सभामे मैने कहा था कि 'देशबन्धुने मुसलमानोके सम्बन्धमे त्यागके शास्त्रको पराकाष्ठापर पहुँचा दिया है।' मेरे इस कथनपर आपत्ति उठाई गई है। इस आपत्तिका कारण यह है कि त्याग शब्दका आशय यह समझा गया कि देशबन्धुने मुसलमानोंपर ऐसा कोई अनुग्रह किया है, जिसके वे लोग अधिकारी नही थे। आक्षेपकर्त्ताओने अपनी यह राय बना ली है कि हिन्दू लोग मुसलमानोके साथ बहुत-कुछ वैसा ही बर्ताव करते है, जैसा कि अग्रेज लोग हम सबके साथ करते है — अर्थात् पहले तो हमसे सब-कुछ छीन लिया और अब उसे अनुग्रहके नामसे दानके रूपमे मुट्ठी दो मुट्ठी दे देते हैं।

मैने उस दिन सभामे जो कहा था वह मुझे मालूम है। मैने अपने उस भाषणकी रिपोर्ट नही पढी है, तो भी उस सभामे मैने जो-कुछ कहा, उसपर मै कायम हूँ। मै बिना किसी झिझकके कहता हूँ कि सिवा पारस्परिक त्यागके इस दुखी देशके उद्धारकी कोई आशा नही। हमे तुनकमिजाज नही बनना चाहिए और सूझ-बूझको एकदम तिलाजलि नही दे देनी चाहिए। किसीके लिए त्याग करनेका अर्थ उसपर अनुग्रह करना नही है। प्रेम-प्रदत्त न्यायका नाम त्याग और नियम-प्रदत्त न्यायका नाम दण्ड है। प्रेमीकी दी हुई वस्तु न्यायकी मर्यादासे बहुत आगे जाकर भी हमेशा जितना वह देना चाहता है, उससे कम होती है, क्योकि वह और अधिक देनेके लिए उत्सुक रहता है। और उसे इस बातका अफसोस होता रहता है कि उसके पास देनेको और कुछ नही बचा। यह कहना कि हिन्दू लोग अग्रेजोकी तरह पेश आते है, उनको बदनाम करना है। हिन्दू यदि चाहे भी तो ऐसा नही कर सकते और मै कहता हूँ, खिदरपुरके मजदूरोकी पशुताके बावजूद, हिन्दू और मुसलमान, दोनो, एक ही नावमे बैठे हुए है। दोनोकी अधोगति हो रही है। असलमे उनकी हालत प्रेमियो-जैसी है — उन्हे उस हालतमे आना होगा — वे चाहे या न चाहे। इसलिए मुसलमानोके प्रति हरएक हिन्दूका और हिन्दुओके प्रति मुसलमानका व्यवहार सिर्फ न्यायकी भावनासे ही नही बल्कि समर्पण और त्यागकी भावनासे प्रेरित होना चाहिए। वे दोनो एक-दूसरेके प्रति किये गये अपने-अपने कार्योका बावनतोला पाव रत्ती हिसाब रखकर दूसरेसे उदारताकी अपेक्षा नही रख सकते। उन्हे हमेशा परस्पर सदा एक दूसरेका ऋणी समझकर चलना होगा। कानूनी इन्साफके नाते कोई भी मुसलमान मेरी आँखोके सामने रोजाना गोवध कर सकता है। किन्तु मेरे साथ उसका जो प्रेम है वह उसे ऐसा नही करने देता — यहाँतक कि वह अपने हकका खयाल छोड़कर मेरी मुहब्बतकी खातिर कभी-कभी गोमास खानेसे बाज आता है और फिर भी समझता है कि उसने सिर्फ वही किया है जो कि उसे करना चाहिए था। कानूनी इन्साफ तो मुझे इस बातकी इजाजत देता है कि मै जाकर मुहम्मद अलीके कानोके पास, जब वे नमाज पढ़ रहे हो, बाजे बजाऊँ या राग अलापूँ; पर मै अपने हकका खयाल

छोड़कर उनके जजबातका खयाल करता हूँ, वहाँ किसीके साथ जोरसे बातचीत करनेके बजाय बहुत ही धीमे स्वरमे बोलता हूँ और फिर भी समझता हूँ कि यह मैंने मौलाना साहबपर कोई मेहरबानी नही की। बल्कि इसके विपरीत यदि मै ठीक उसी वक्त जब वे नमाज पढ रहे हो अपने घटा-घडियाल बजानेके कानूनी हकका प्रयोग करूँ, तो मै एक नागवार शख्स माना जाऊँगा। यदि देशबन्धुने कुछ ही पद मुसलमानोसे न भरे होते तो भी कानूनी इन्साफकी अपेक्षा पूरी हो जाती; पर उन्होने अपने हकोकी सीमासे आगे बढकर मुसलमानोकी इच्छाका विचार किया और उनकी भावनाको तुष्ट किया। मुसलमानोको प्रसन्न करनेका जो कोमलभाव देशबन्धुके दिलमे था, वही उनकी मृत्युको जल्दी ले आनेका कारण बना। मै जानता हूँ कि जब उन्होने देखा कि कानूनी न्याय उन्हे अनधिकृत जमीनपर गाडे गये मुर्दोको कब्रोंसे बाहर निकालनेके लिए मजबूर कर रहा है, तब उनके दिलको कितना भारी धक्का लगा था। वे मुसलमानोके भावोको जरा भी धक्का नही लगने देना चाहते थे — फिर उनकी भावना अनुचित ही क्यो न हो। ऐसा करना पद्धति छोडकर चलना था — अपनी पद्धति नही, दुनियाकी पद्धति। फिर उन्होने कभी खयाल न किया कि मुसलमानोंके भावोका इतनी सूक्ष्मताके साथ विचार करके वे उनके साथ कोई मेहरबानी या उनपर कोई एहसान कर रहे है। प्रेम कभी कुछ माँगता नही है, वह तो हमेशा देता ही है। वह सदा सहता है — क्रोध नही करता, बदला नही लेता।

इसलिए न्याय, निरे न्यायकी यह दुहाई विचारहीन क्रोध और अज्ञानसे भरा मानसिक विस्फोट ही है — फिर वह दुहाई चाहे हिन्दुओंकी तरफसे दी जा रही हो, चाहे मुसलमानोकी तरफसे। जबतक हिन्दू और मुसलमान कोरे इन्साफके राग अलापते रहेगे तबतक वे एक-दूसरेके नजदीक नही आ सकते। न्यायकी — कोरे न्यायकी सर्वोपरि उक्ति तो है 'जिसकी लाठी उसकी भैस'। जो चीज अग्रेज हासिल कर चुके है, उसका वे तिल-भर भी क्यो छोडने चले? और हिन्दुस्तानी लोग राज्यकी बागडोर अपने हाथमे आ जानेपर अग्रेजोसे वे तमाम चीजे क्यो न छीनें, जिनसे उनके बाप-दादोने इन्हे वंचित किया था? फिर भी जब हम आपसमे निपटारा करने बैठेंगे, — और किसी दिन हमें बैठना ही होगा, — तो हम इस तथाकथित न्यायकी तुलापर नाप-जोख न करेगे। बल्कि हमें उस समय 'त्याग' के उस विचलित कर देनेवाले रूपसे, जिसे दूसरे शब्दोमे प्रेम, सौहार्द या भ्रातृभाव कहते है, काम लेना होगा। और यही बात हम हिन्दुओ और मुसलमानोको, एक-दूसरेके सिर काफी फोड चुकने, निर्दोषोका मनो खून बहा चुकने और अपनी बेवकूफीको समझ चुकनेके बाद करनी पड़ेगी। तब हमारी आँखे खुल जायेंगी और हम समझेंगे कि मित्रता न बदला लेती है और न न्याय-न्यायकी पुकार करती है, उसकी विधि तो त्याग केवल त्याग ही है। तब हिन्दू गोवधको अपनी आँखोके सामने देखकर कुछ न कहेंगे; और मुसलमान भी मानेंगे कि हिन्दुओका दिल दुखानेके लिए गोरक्षा करना इस्लामकी धर्माज्ञाओके खिलाफ है। जब वह सुदिन आयेगा तब दोनो एक-दूसरेके गुण ही देखेंगे। एक-दूसरेके दोष हमारी दृष्टिमे बाधक न होगे। वह दिन बहुत दूर भी हो सकता है और बहुत नज-

दीक भी। पर मेरा दिल तो कहता है कि वह जल्दी ही आ रहा है। मैं तो सिर्फ उसी उद्देश्यपूर्तिके लिए काम करूँगा, दूसरेके लिए नही।

हाँ सावधानीके तौरपर, यह कह देना अनुचित न होगा कि मेरे त्यागका अर्थ सिद्धान्तका त्याग नही है। मैंने इस बातको उसी सभामे साफ कर दिया था और फिर यहाँ उसी बातको जोर देकर कह रहा हूँ। पर हम आज जिस बातके लिए लड़ रहे है वह सिद्धान्त किसी हालतमे नही है, वह मिथ्याभिमान और पूर्वसंचित द्वेषभाव है। हम गुड तो खाते है पर गुलगुलोसे परहेज करते है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

२१९. एक खामोश समाजसेवी

गत ३० जूनको आचार्य सुशील [कुमार] रुद्रका देहान्त हो गया। वे मेरे एक आदरणीय मित्र और खामोश समाजसेवी थे। उनकी मृत्युसे मुझे दुःख हुआ है। मैं चाहता हूँ कि पाठक भी इसमे मेरा साथ दे। भारतकी मुख्य बीमारी है उसकी राजनीतिक गुलामी। इसलिए वह उन्हीको जानता है जो इस गुलामीको दूर करनेके लिए उस नौकरशाहीसे खुलेआम संघर्ष करनेको आगे आते है, जिसने उसके विरुद्ध अपनी जल और थलकी सेना तथा धन-बल और कूटनीतिकी अपनी तिहरी मोर्चाबन्दी कर रखी है। इससे स्वभावतः उसे उन कार्यकर्त्ताओका पता नही रहता, जो जीवनके अन्य कार्यक्षेत्रोमे निःस्वार्थ भावसे काम करते हुए अपनेको गला देते है और जो केवल राजनीतिक क्षेत्रमे काम करनेवालोसे कम उपयोगी नही होते। सेंट स्टीफेन्स कालेज, दिल्लीके भूतपूर्व प्रधानाचार्य सुशील कुमार रुद्र ऐसे ही विनम्र कार्यकर्त्ता थे। वे उच्चकोटिके शिक्षाशास्त्री थे। प्रधानाचार्यकी हैसियतसे सर्वत्र लोकप्रिय हो गये थे। उनके और उनके विद्यार्थियोके बीच एक प्रकारका आध्यात्मिक सम्बन्ध था। यद्यपि वे ईसाई थे, तथापि उनके हृदयमे हिन्दू धर्म और इस्लामके लिए भी जगह थी। इन धर्मोंको वे बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते थे। उनका ईसाई धर्म उन्हे यह नही सिखाता था कि वही एक धर्म है और अकेले ईसा मसीह ही जगतके तारनहार है तथा जो व्यक्ति इसे न मानता हो वह नरकगामी होगा। अपने धर्मके गौरवपर दृढ रहते हुए भी, वे अन्य मजहबोको सहन करते थे। वे राजनीतिका अध्ययन बडे चाव और ध्यानसे करते थे। गरमदलीय कहे जानेवाले लोगोके प्रति जहाँ वे अपनी सहानुभूतिका प्रदर्शन नही करते थे वहाँ वे उसे छिपाते भी न थे। जबसे — १९१५ से — मैं आफ्रिकासे भारत लौटा, मैं जब कभी दिल्ली जाता, उन्हीका अतिथि बनता था। रौलट कानूनके सिलसिलेमे जबतक मैंने सत्याग्रह नही छेडा था, तबतक सब बदस्तूर चलता रहा। ऊँचे हलकोमे उनके कितने ही अंग्रेज मित्र थे। उनका सम्बन्ध एक खालिश अंग्रेज मिशनसे था। अपने कालेजके वे पहले ही हिन्दुस्तानी प्रधानाचार्य थे। इसलिए मैंने अपने मनमे सोचा कि उनके साथ

मेरे घनिष्ठ सम्बन्ध जारी रखने और उनके घरमे मेरे ठहरनेसे कही उनका सर नीचा हो जाये और उनके कालेजको अनावश्यक सकटका सामना न करना पड़े। इसलिए मैंने दूसरी जगह ठहरनेकी इच्छा प्रकट की। उनका जवाब अपने ढगका निराला ही था — 'लोग जितना सोचते है, मेरा मजहब उससे कही गहरा है। मेरे कुछ मत तो मेरे जीवनके घनिष्ठ अंग हैं। वे गहरे और दीर्घकालके मनन और प्रार्थनाके बाद स्थिर किये गये है। मेरे अंग्रेज मित्र उन्हें जानते है। यदि अपने सम्माननीय मित्र और अतिथिके रूपमे मैं आपको अपने घरमे ठहराऊँ तो वे इसका गलत अर्थ कदापि नही लगा सकते। और यदि कभी मुझे इन दो बातोमे से कि अंग्रेजोके अन्दर जो-कुछ भी मेरा प्रभाव है वह चला जाये या आप मेरे न रहे किसी एक को चुनना पड़े तो मैं जानता हूँ कि मैं किसे पसन्द करूँगा। आप मुझे नही छोड सकते।' तब मैंने पूछा, 'लेकिन मुझसे तो हर किस्मके लोग मिलनेके लिए आते है, यह भी तो सोचिए। जब मैं दिल्लीमे आया हुआ होऊँ तब आप अपने मकानको सराय कदापि नही बना सकते।' उन्होने उत्तर दिया, 'सच पूछे तो मुझे यह सब पसन्द है। आपके पास जो मित्र आते है, मैं उन्हे पसन्द करता हूँ। यह देखकर मुझे आनन्द होता है कि आपको अपने मकानमें ठहरानेके बहाने मेरे हाथों कुछ देशसेवा हो रही है।' पाठक शायद न जानते होगे कि खिलाफतके दावेको साकार रूप देनेके लिए जो पत्र[1] मैंने वाइसरायको लिखा था उसका विचार और मसविदा प्रधानाचार्य रुद्रके मकानमे ही तैयार हुआ था। वे तथा चार्ली एन्ड्रयूज उस मसविदेमे सुधार सुझानेवाले व्यक्ति थे। उन्हीके घर आतिथ्यमय वातावरणमें बैठकर असहयोग आन्दोलनकी कल्पना की गई थी, उसे रूपबद्ध किया गया था। मौलानाओ, दूसरे मुसलमानो और अन्य मित्रों तथा मेरे बीच जो खानगी सलाह-मशविरा हुआ करता था, उसकी कार्रवाईको वे बडी दिलचस्पी परन्तु खामोशीके साथ देखते रहते थे। उनके तमाम कार्य धर्म भावसे ही प्रेरित होते थे। ऐसी हालतमे उन्हे ऐहिक सत्तासे भयभीत होनेका कोई कारण न था — धर्मभाव तो सासारिक सत्ताके अस्तित्व और उपयोग तथा मित्रता की कद्र करनेमे उनका मददगार होता था। उन्होंने अपने जीवनमे यह बात चरितार्थ कर दिखायी थी कि धर्म-ज्ञानसे संतुलित और सही विवेक उत्पन्न होता है, जिसके फलस्वरूप मनुष्यके विश्वास और धर्मके बीच सुन्दर सामञ्जस्य स्थापित होता है। आचार्य रुद्रने अपनी ओर अत्यन्त उच्च चरित्रवाले लोगोको आकर्षित कर रखा था। बहुतोंको इस बातका पता भी नही होगा कि श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज हमे आचार्य रुद्रकी बदौलत ही प्राप्त हुए है। वे जुडवाँ भाई जैसे थे। उनका पारस्परिक स्नेह यह बताता था कि आदर्श मैत्री क्या वस्तु है। आचार्य रुद्र अपने पीछे दो लडके और एक लडकी छोड़ गये है। वे वयस्क है और अपना काम-काज सम्हाले हुए हैं। वे जानते है कि उनके शोकमे उनके उच्च हृदय पिताके कितने ही मित्र और प्रशसक उनके साथ है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

१. देखिए खण्ड १७, पृष्ठ ५४६-४९।

२२०. सुलहका अवसर[1]

फरीदपुरके सन्देशका जैसा आशय श्री चटर्जीने समझा है, वैसा मै नही समझता। देशबन्धुने अपनी स्थितिको यहाँतक साफ कर दिया था कि वे पूर्ण उत्तरदायी स्वराज्यके लिए १९२९ तक रुकनेको तैयार हैं; पर शर्त यह है कि सरकार एक सम्मानपूर्ण समझौता करनेका प्रस्ताव करे, जिससे कि जनताके प्रतिनिधि सरकार द्वारा प्रस्तुत योजना कार्यान्वित कर सके। वे शर्तें क्या हो, इसका निर्णय किसी गोलमेज सम्मेलनमे सब लोग बैठकर सुहृद्-भावसे चर्चा करके तय करे। देशबन्धुके लिए यह असम्भव था कि वे पहले ही से, बिना ठीक-ठीक जाने कि मुडीमैन समितिके अल्पमतवालोकी सिफारिशे क्या हैं, उन्हे मजूर कर लेते। मेरी खुदकी स्थिति तो बिलकुल सीधी-सादी है। सुधारोमे मेरी दिलचस्पी मेरे अधिकृत प्रतिनिधियो अर्थात् स्वराज्यवादियो — के द्वारा ही है। उन्होने इस विषयमे विशेषज्ञता प्राप्त की है और वे इसमे जो भी करेंगे वह मुझे मजूर होगा। फिलहाल तो मै ब्रिटिश सरकारके सामने सिवा अपनी कमजोरीके और कुछ पेश नही कर सकता। अपनी इस कमजोरीकी हालतमे तो मैं इस बातका इन्तजार-भर कर सकता हूँ कि इंग्लैड सच्चे दिलसे मैत्रीका हाथ बढाये। जब वह ऐसा करेगा तब मैं अपनी तरफसे बिना शर्त लडाई खत्म कर दूँगा। पर इस कमजोरीकी हालतमे भी मैं अपने अन्दर यह समझनेकी शक्ति अवश्य पाता हूँ कि हमारे लिए क्या जीवनदायी है और क्या नही, और मुझमें इतनी शक्ति भी है कि यदि जीवनदायक प्रस्तावके स्थानपर उससे विपरीत कोई चीज सामने रखी जाये तो मै उसे अस्वीकृत कर दूँ। मैं अपनेको धोखा नही दे सकता। मैं तबतक किसी ठोस वस्तुकी उम्मीद नही कर सकता जबतक मेरा निर्धन देश शक्तिशाली नही बन जाता। इसलिए मुझे तो शक्तिसचय करना होगा। और चूँकि मैंने अपने साधनोमे हिंसाको स्थान नही दिया है, मेरा दारोमदार चरखेपर या उसी-जैसी अन्य वस्तुपर अथवा देशबन्धुके अधिक व्यापक शब्दोमे कहे तो देहातके पुनरुत्थानपर है तथा यदि आवश्यक हो तो सविनय अवज्ञापर है।

जहाँतक देशके विभिन्न दलोकी एकताका सवाल है, मुझे डर है कि स्वराज्यवादियों और नरमदलवालोके मतभेद कुछ बातोमें बुनियादी हैं। कुछ बेहतर स्थितियोमे सुधारोको स्वीकृत कर लेने-मात्रसे मतभेद मिट जाना लाजिमी नही है। यदि मैं इस भेदको अपनी धारणाके अनुसार एक वाक्यमें कहूँ तो वह यह है — यदि सरकार लोगोकी न्यायोचित माँगको स्वीकार न करे तो स्वराज्यवादी एक नियत समयके बाद उसपर प्रहार करनेकी बात सोचते हैं और नरमदलीय लोग सरकारको अपने तर्को द्वारा राजी करके जो-कुछ मिल सके वही हथियानेकी। इसलिए नरमदलके लोग

१. श्री बी० सी० चटर्जीने गांधीजीको ३ जुलाई, १९२५ को एक पत्र लिखा था। यह उसीके उत्तरमें है। पत्रके लिये देखिए परिशिष्ट २।

स्वराज्यवादियोंके साथ एक हदतक ही चल सकते हैं। पर हो सकता है कि मैं गलतीपर होऊँ — शायद हूँ भी। [प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक डिकिन्सके पात्र] बारकिसकी तरह मैं तो हमेशा ही राजी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

२२१. दो प्रजातियाँ नहीं

आशा है पाठक निम्न पत्रको दिलचस्पीसे पढ़ेंगे :

यह बात मेरे ध्यानमें कई बार आई है कि आपने हिन्दुओं और मुसलमानोंका उल्लेख भारतकी दो 'प्रजातियों' के रूपमें किया है। मेरी नम्र सम्मतिमें इन दो धार्मिक समुदायोंको 'प्रजातियाँ' कहना हानिकर तो है; किन्तु उनको दो 'राष्ट्र' कहनेकी अपेक्षा कम हानिकर है। आपके एक मुसलमान संवाददाताने एक बार ऐसा प्रयोग किया था। (देखिए यंग इंडिया, २४-७-१९२४ पृष्ठ २४४)। सच्चाई यह है कि मुसलमान भारतीयोंमें से (मैं उन्हें इसी नामसे पुकारूँगा और जैसा वे अपने आपको पुकारनेके अभ्यस्त हैं, उस तरह उन्हें भारतीय मुसलमान नहीं कहूँगा) लगभग ९० प्रतिशत उसी 'प्रजाति' या 'प्रजातियों' के हैं जिनके हिन्दू हैं, क्योंकि उनके पुरखे भारतीय थे और भारतमें ही मुसलमान बने थे। शेष १० प्रतिशत मुसलमान भारतीयोंके रक्तमें तुर्कों, तातारों, अरबों, पठानों, ईरानियों या अबीसिनियाके लोगोंके रक्तका थोड़ा मिश्रण हो सकता है। फिर भी पीढ़ियोंतक आपसी विवाह सम्बन्धोंसे उसमें इतना भारतीय रक्त मिल गया है कि इन १० प्रतिशत लोगोंको भी प्रजातिकी दृष्टिसे बिना किसी जोखिमके ९९ प्रतिशत इसी देशकी जाति कहा जा सकता है। असलमें भारतके हिन्दू और मुसलमान दो प्रजातियोंके लोग नहीं हैं, ठीक ऐसे ही जैसे इंग्लैंडके प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक दो प्रजातियोंके लोग नहीं हैं। यह प्रश्न ऐसा है जिसके सम्बन्धमें इतिहास, मानव-शरीर रचना शास्त्र और नृवंश विज्ञानसे काफी सही सबूत प्राप्त किये जा सकते हैं। इसके अलावा उनके रक्तकी प्रजातीय रचना चाहे कुछ भी हो, इस तथ्यसे इनकार नहीं किया जा सकता कि वे सभी शत-प्रतिशत अपने बापदादोंकी तरह भारतमें पैदा हुए थे, भारतमें रह रहे हैं, भारतमें मरेंगे और भारतमें ही दफनाये जायेंगे। और भारत एक देश है और इसलिए वे उसी एक राष्ट्रके लोग हैं जिसके हिन्दू। आवश्यकता केवल यह है कि वे अपने आपको भारतीय राजनीतिमें भारतीय मुसलमान नहीं, बल्कि मुसलमान भारतीय मानें।

उक्त बातें थोड़े हेरफेरसे ईसाई भारतीयोंपर भी लागू होती हैं; जिनका भारतके जातीय समुदायमें तीसरा महत्त्वपूर्ण स्थान है। कदाचित् भारतमें या अन्यत्र किसी भी धार्मिक समुदायमें एक ही प्रजाति नहीं है। निश्चय ही हिन्दू भी एक प्रजातिके लोग नहीं हैं। तब किसी एक समुदायको एक प्रजाति क्यो कहना चाहिए? हमारे ईसाई भाइयोंको भी अपने देशकी राजनीतिमें अपने-आपको ईसाई भारतीय मानकर चलना चाहिए, जैसा कि मिस्र, फिलिस्तीन, चीन, जापान और फिलिपाइनमें उनके धर्मबन्धु कर रहे हैं।

पत्रलेखकका पक्ष इतिहासकी दृष्टिसे ठीक है। जो शब्द किसी विशेष अर्थमे चल पडे है, उनके प्रयोगकी आदत छोडना कठिन है। "दो समुदाय" शब्दोपर भी यही आपत्ति की जा सकती है। मै केवल यही वचन दे सकता हूँ कि भविष्यमे सावधानी बरतूँगा। सावधान पत्रलेखक 'यग इडिया' की भाषाको तथ्योके अनुकूल रूप देनेके प्रयत्नमे इसी प्रकार सदैव सतर्क रहे।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ९-७-१९२५

२२२. पत्र : वसुमती पण्डितको

[कलकत्ता]
[९ जुलाई, १९२५]

चि० वसुमती,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया। क्या लिखूँ, कुछ सूझता नही; तुम्हारे इन शब्दोका अर्थ यह तो नही है कि तुम चिन्तामे डूबी हो, यदि ऐसा हो तो तुम चिन्ता करना छोड दो। चिन्ताका तो कोई कारण है ही नही। वन जानेसे तो क्षोभ होना ही नही चाहिए। यदि कोई दूसरा कारण हो तो मुझे लिखना। आश्रममें जाते हुए तुम्हे क्षोभ तो कदापि नही होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :] मेरा कार्यक्रम तो अनिश्चित है। यह पूरा मास तो यही जायेगा।

गुजराती पत्र (एस० एन० ९२१६)की फोटो-नकलसे।

२२३. भाषण : स्वराज्यवादी पार्षदोंके समक्ष[1]

९ जुलाई, १९२५

महात्माजीने कहा कि सेनगुप्त कलकत्ता निवासी हैं या नहीं, आप लोगोंको इस प्रकारकी छोटी-छोटी बातोंके फेरमें नहीं पड़ना चाहिए। बड़ी बात तो यह है कि वे स्वराज्यदलके नेता हैं और बंगाल कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष हैं। आपको उसी आदमीको मेयर चुनना चाहिए जिसे आप पहले ही नेता चुन चुके हैं। आप इस तरहके उग्र वादविवादमें न पड़ें। यदि काम करनेकी उन्हें पूरी छूट दी गई तो श्री सेन-गुप्त निगमके लिए बहुत उपयोगी साबित होंगे। आपको उनपर कोई बन्धन नहीं लगाना चाहिए, फिर राजनीतिक अथवा नगरके मामलोंमें उनका अनुकरण करना-न-करना लोगोंपर निर्भर करता है। देशबन्धुके प्रत्येक कार्यमें उनका साथी होनेके कारण श्री सेनगुप्तको विरासतमें बहुत-कुछ मिला है जिससे वे कभी विमुख नहीं होंगे। यदि उन्हें अपने साथियोंका सहयोग और शुभ कामनायें मिल गईं तो उनका शासन बड़ा सुखद होगा और वह समृद्धि लायेगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १०-७-१९२५

१. यह सभा कलकत्तामें शरतचन्द्र बसु और जे० एम० सेनगुप्तमें से किसी एकको कलकत्ता नगर-निगमका मेयर चुननेके लिए हुई थी। बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने पार्षदोंको सेनगुप्तको चुननेके लिए प्रेरित करनेके उद्देश्यसे गांधीजी तथा मौलाना अबुल कलाम आजादको नियुक्त किया था। सेनगुप्तके सम्बन्धमें मुख्य एतराज उनका कलकत्ताका निवासी न होना था; वे मूलतः चटगांवके थे। अपने एक घंटेके भाषणसे जिसका पूरा विवरण उपलब्ध नहीं है, गांधीजीने पासा ही पलट दिया और सेनगुप्त ६ के मुकाबले ३१ मतसे चुन लिये गये।

२. सेनगुप्तको मेयर बनानेसे सम्बन्धित गांधीजीके विचारोंके लिए देखिए "कलकत्ताके मेयर", १६-७-१९२५।

२२४. दार्जिलिंगके संस्मरण

[१० जुलाई, १९२५]

मैंने पाठकोंसे एक तरहसे वादा ही किया था कि जो पाँच दिन मैंने देशबन्धुके साथ दार्जिलिंगमें बिताये हैं उनका पवित्र संस्मरण उपस्थित करूँगा। मैं कह चुका हूँ कि वे मेरे जीवनके अत्यन्त मूल्यवान् संस्मरणोंमें से हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतता है त्यों-त्यों उनका मूल्य और भी बढ़ता जाता है। इसका कारण भी मुझे पाठकोंको बता देना चाहिए। यद्यपि मैं देशबन्धुके घर इससे पहले भी रह चुका था, तथापि हमारी वह भेंट बिलकुल राजनैतिक थी। हम दोनों अपने-अपने अंगीकृत कार्योंमें बहुत व्यस्त थे। परन्तु दार्जिलिंगमें बात दूसरी थी। वहाँ देशबन्धु पूरी तरह मेरे थे। वे वहाँ आरामके लिए गये थे, परन्तु मैं तो उनके साथ केवल हृदय खोलकर बातें करनेके लिए ही गया था। आरामके लिए मेरा दार्जिलिंग जाना तो इसका एक बहाना-भर था। यदि देशबन्धु वहाँ न होते तो मैं हिमाच्छादित धवलगिरिका आकर्षण होते हुए भी वहाँ न जाता। उन दिनों मुझे वे पेंसिलसे पर्चियाँ लिखकर भेज देते थे। एक बार एक पर्चीमें उन्होंने यह लिखा, 'याद रखिए, आप मेरे अधिकार-क्षेत्रमें हैं। मैं स्वागत-समितिका अध्यक्ष हूँ। आपको अपने दौरेमें दार्जिलिंग भी रखना है। यह आदेश है।' अच्छा होता, मैं उनकी इन प्यारी चिटोंको सँभाल कर रख लेता, परन्तु अफसोस! उनकी हालत भी मेरे अन्य ऐसे सैकड़ों कागजों-जैसी ही हुई। मैंने कठिनाई बताई कि मुझे कार्यसमितिके सब सदस्योंको लाना पड़ेगा। उन्होंने तारसे उत्तर दिया 'तब समितिके सब सदस्योंको ही ले आयें। मैं उनके रहनेका प्रबन्ध कर दूँगा। बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी सदस्योंके आने-जानेका खर्च देगी। मैं सतकौड़ीको तारसे यह निर्देश दे रहा हूँ।' मैं कार्यसमितिके सदस्योंको दार्जिलिंग नहीं ले जा सकता था, परन्तु मैंने यह वादा कर दिया कि समितिकी बैठकके बाद जितना जल्दी हो सकेगा, आऊँगा। तदनुसार मैं वहाँ गया। मैं उनके पास सिर्फ दो दिनके लिए गया था। किन्तु उन्होंने मुझे पाँच दिन वहाँ रोका। उन्होंने वासन्ती देवीसे श्री फूकनको कहला दिया कि वे असमका दौरा तीन दिनके लिए और मुल्तवी रखें तथा मेरा बंगालका दौरा तीन दिनके लिए खुद मुल्तवी कर दिया। मैं इन सब बातोंका जिक्र यह दिखलानेके लिए कर रहा हूँ कि हम दोनों एक-दूसरेके साथ रहनेके लिए कितने उत्सुक थे। और अब जो घटना हुई है, उससे जान पड़ता है कि देशबन्धुकी दिन-दिन समीप आती हुई दीर्घ निद्रा मानो हमारे इस घनिष्ठ मिलनकी भूमिका ही थी।

वे रोगशय्यापर न थे बल्कि स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। उनकी सार-सँभाल रखनेकी बहुत आवश्यकता थी। परन्तु वे मेरे तथा मेरे साथियोंके आरामकी छोटीसे-छोटी बातपर स्वयं ही ध्यान देते थे। उन्होंने व्यवस्था अवश्य ही बहुत बड़े पैमानेपर की थी। उन्होंने नीचे मैदानसे पाँच बकरियाँ मँगवाई थीं। उन्होंने कभी एक भी जून

मेरे दूधका नागा नही होने दिया। मुझे बासन्ती देवीके बहन-जैसे स्नेहपूर्ण सत्कारका अनुभव तो पहले भी बहुत बार हुआ था, परन्तु दार्जिलिंगमे मेरी देखभाल खुद देशबन्धुने अपने जिम्मे ली थी। और उसमें मुझे किसी किस्मकी कृत्रिमता मालूम नही होती थी। अतिथिसत्कार तो उनके कुलका विशिष्ट गुण है। उन्होंने अपने मुक्तहस्त अतिथि-सत्कारकी कई कथाएँ सुनाई थी। अपरिचित जनो अथवा राजनैतिक प्रतिपक्षियोके प्रति उनके भारी आदरभावका परिचय दार्जिलिंगमे ही मुझे मिला। हमने बगालमे हाथकताई और खादी कार्य करनेके लिए एक योजना निश्चित की थी। श्री दासके कहनेसे सतीश बाबू, जो खादी प्रतिष्ठान चलाते है, इस योजनाके सम्बन्धमे सलाह करनेके लिए यहाँ बुलाये गये थे। मैंने उनसे पूछा कि आप, सतीश बाबूको कहाँ ठहराना चाहते है? उन्होने कहा, 'क्यो इसी घरमे।' 'मैंने कहा, किन्तु यहाँ तो पहले ही से काफी आदमी है।' उन्होने तुरन्त कहा, 'नही, नही, वे तो मेरे कमरेमे भी ठहराये जा सकते है।' मै उनकी और श्रमसे क्लात उनकी पत्नीकी बात सोच रहा था; किन्तु वे सतीश बाबूके आरामके बारेमे सोच रहे थे। उन्होने कहा, 'इसके अलावा सतीश बाबू समझते है कि उनके बारेमे मेरे खयाल अच्छे नही है। उनसे मेरा परिचय बहुत ही कम है। आप जानते ही है, मै अपने मित्रोकी चिन्ता नही करता, क्योकि उन्हे मेरे बारेमे गलतफहमी नही हो सकती। परन्तु हमें सतीश बाबूको तो जरूर यही ठहराना होगा।'

उन्होने बगालके भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलोके सम्बन्धमें भी बाते की। मैंने एक मौकेपर स्वराज्य दलपर लगाये गये घूसखोरी तथा भ्रष्टाचारके आरोपोका जिक्र किया। मैंने उनसे यह भी कहा कि सर सुरेन्द्रनाथने मुझे बगालसे जानेसे पहले एक बार फिर अपने घर बुलाया है। उन्होने कहा, 'आप जरूर जाये और उन्हे ये सब बातें बताये जो आपके और मेरे बीच हुई है। आप उनसे कहे कि मै घूस और भ्रष्टाचारके तमाम आरोपोका तीव्र खण्डन करता हूँ। अगर स्वराज्यदलपर लगाया गया एक भी आरोप सत्य सिद्ध किया जा सके तो मै सार्वजनिक जीवनसे हट जानेके लिए तैयार हूँ। सच्ची बात तो यह है कि बगालके राजनैतिक जीवनमे पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष और पीठ पीछे निन्दाकी प्रवृत्ति व्याप्त हो गई है। स्वराज्यदलकी यह आकस्मिक उन्नति और सफलता कुछ लोगोके लिए असह्य हो गई है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप दलपर लगाये गये तमाम आरोपोकी जाँच करे और अपना निश्चित निर्णय दे। मै आपको यकीन दिलाता हूँ कि मै अप्रामाणिकताको आपकी तरह ही अनुचित मानता हूँ। मै जानता हूँ कि हमारा देश अप्रामाणिक साधनोसे स्वतन्त्र नही हो सकता। यदि आप तमाम दलोको एकत्र कर दे या कमसे-कम उनकी एक-दूसरेपर आरोप-प्रत्यारोपकी प्रवृत्ति मिटा दे तो आप देशकी भारी सेवा करेंगे। आप श्याम बाबू और सुरेश बाबूसे खास तौरपर बात करे। यदि उन्हे मुझपर अविश्वास है या किसी तरहका सन्देह है तो वे मुझसे आकर क्यो नही कहते? हमारे विचार चाहे जुदे-जुदे हों, परन्तु इस कारण हमें एक-दूसरेको गालियाँ देनेकी आवश्यकता नही है।' मैंने बीच ही मे कहा, 'ऐसा ही आरोप 'फॉरवर्ड' पर भी है। उसके बारेमें आप क्या कहते

है? मैं तो अखबार पढता नही हूँ; परन्तु मैंने 'फॉरवर्ड'के बारेमे भी ऐसी शिकायतें सुनी है।' वे बोले, 'हाँ, 'फॉरवर्ड'के बारेमे भी ऐसी शिकायते सुननेमे आई है। 'फॉरवर्ड' दोषी हो सकता है। आप जानते ही है कि जैसे आप 'यग इंडिया' में लिखते है और उसकी व्यवस्था करते हैं, मैं 'फॉरवर्ड' मे न वैसे लिखता हूँ और न उसकी व्यवस्था देखता हूँ। फिर भी अगर लोग ऐसी बाते मेरे ध्यानमें लायेंगे तो मैं उनकी जाँच जरूर करूँगा और दोषोंको दूर कर दूंगा। मैं समझता हूँ कि आपने 'फॉरवर्ड'को हमेशा अपने बचावमे लिखते हुए देखा होगा, परन्तु बचाव करनेमे भी मर्यादाका उल्लघन किया जा सकता है। आप जानते ही है कि मैं इन दिनो 'फॉरवर्ड'के अतिशयोक्तिके एक मामलेकी जाँच कर रहा हूँ। जो बाते मेरे सामने रखी गई है यदि वे सच है तो यह अतिशयोक्ति अक्षम्य है। आप यकीन माने, मैंने इस सम्बन्धमे बहुत कड़ी चिट्ठी लिखी है। यहाँतक कि मैंने इस अतिशयोक्ति करने-वाले लेखकको भी बुलाया है।' इस तरह बाते चलती रही। इनमे मुझे प्रतिपक्षीके प्रति न्याय करने तथा तमाम दलोमे एकता करानेके लिए देशबन्धुकी सच्ची उत्सुकता दिखाई दी।

मैंने पूछा, 'सर्वदलीय सम्मेलन या जैसा श्री केलकरका सुझाव है, अ० भा० काग्रेस कमेटीकी बैठक बुलानेके सम्बन्धमे आपकी क्या राय है?' उन्होने जवाब दिया, 'मैं फिलहाल ऐसा नही चाहता। अ० भा० काग्रेस कमेटीकी बैठक बुलानी फजूल है, क्योकि हम स्वराज्यवादियोंको अपना व्यवहार सच्चा रखना ही होगा। हमे नये मताधिकारको पूरा-पूरा मौका अवश्य देना चाहिए। मैं आपसे कहता हूँ, कि चरखेके सम्बन्धमे मेरी स्थिति आपकी-जैसी ही होती जा रही है। मुझे डर है कि हम स्वराज्यवादियोने सब जगह सचाईसे काम नही किया है। आप ठीक ही कहते है कि बगालमे तो आपका विरोध किसी भी दलने नही किया है। परन्तु अगर मैं बिछौनेपर न पडा होता तो मैं चरखेको जबरदस्त रूपसे सफल करके दिखा देता। मै कहता हूँ कि मै चरखेका प्रचार पूरे मनसे करना चाहता हूँ और मैं उसके सगठनमे आपकी मदद भी लेना चाहता था; परन्तु आप देखते ही है कि मै किस तरह लाचार हो गया हूँ। इस साल तो मताधिकारमे परिवर्तन किया ही नही जा सकता; उलटा हम सब लोगोंको उसे पूरा मौका देना चाहिए। मै इसके सम्बन्धमे महाराष्ट्रीय मित्रोको लिखने वाला हूँ।'

उन्होने प्रस्तावित सर्वदलीय सम्मेलनके सम्बन्धमे कहा, 'हम यह सम्मेलन इसी समय न करे। मैं लॉर्ड बर्कनहेडसे बड़ी-बड़ी चीजोकी आशा रखता हूँ। वे एक मजबूत विचारके आदमी है और मैं ऐसे आदमीको पसन्द करता हूँ। वे भाषणोसे जैसे मालूम होते है वैसे खराब नही है। यदि हम बैठक करेगे तो हमे मौजूदा हालतपर कुछ-न-कुछ जरूर कहना होगा। मै नही चाहता कि जितना वे अभी देनेके लिए तैयार हो, हम उससे ज्यादाकी माँग करे और उन्हे उलझनमे डाले। मै यह भी नही चाहता कि हम अपनी माँग सामान्यत. वे जितनी समझते है उससे कम बताकर उन्हे स्तब्ध कर दे। अभी हमे ठहरकर देखना चाहिए। इससे हमारा कुछ नुकसान

न होगा। यदि उनका वक्तव्य सन्तोषजनक न हुआ तो उस समय सब दलोंका सम्मेलन करना और सबकी एक ही कार्य-योजना निश्चित करना ठीक होगा। मुझे प्रस्तावित सम्मेलन न करनेका यह एक नवीन कारण मालूम हुआ। इसलिए मैंने उनसे कहा, 'जबतक आप या मोतीलालजी न चाहेंगे और सब दलोके प्रतिनिधियोकी ओरसे उसकी माँग न की जायेगी तबतक मै सम्मेलन नही बुलाऊँगा। परन्तु मुझे यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि मुझे वैसा विश्वास नही, जैसा आपको है। आप हिन्दू-मुसलमानोंके मतभदोको देखे; वे बढ़ते ही जा रहे है। आप ब्राह्मणो और अब्राह्मणोके झगड़ोका खयाल करे। बगालमें राजनैतिक दलोको देखे। यह साफ जाहिर हो रहा है कि हम आज जितने कमजोर है उतने कमजोर कभी न थे। और क्या आप मेरी इस बातसे सहमत नही है कि अग्रेजोने कमजोरोको कभी कुछ नही दिया है? मै समझता हूँ कि हम इग्लैंडसे किसी बडी चीजकी उम्मीद तभी कर सकते है जब हम इतनी शक्ति प्राप्त कर ले कि किसीके रोके रुक न सके। देशबन्धु आतुरतासे बोले, 'आप तो तार्किककी तरह बात कर रहे है। मै आपसे वह कह रहा हूँ जो मेरा दिल कहता है। मेरे दिलमे यह प्रेरणा हो रही है कि हमें कोई बडी चीज मिलनेवाली है।' इसपर मैंने आगे बहस नही चलाई। मैंने ऐसी बलवती श्रद्धाके सामने सिर झुका दिया। मैंने उनसे कहा कि अग्रेजोंके चरित्रके प्रति मेरे मनमे बहुत आदरभाव है और उनमे मेरे कुछ ऐसे मित्र है जिनका मूल्य और महत्त्व आँकना असम्भव है। परन्तु मैंने देखा कि अग्रेजोपर उनकी श्रद्धा मुझसे भी अधिक थी। अग्रेजोको जानना चाहिए कि उन्होने देशबन्धुके निधनसे अपना कितना महान् मित्र खो दिया है।

कलकत्ताके पीरके मामलेसे उन्हे बहुत ज्यादा परेशानी थी। उनकी तीव्र इच्छा थी कि मै उसके निबटारेके लिए जो-कुछ कर सकूँ, अवश्य करूँ। उन्होने कहा, 'मै चाहता हूँ कि मुसलमानोकी भावनाका ध्यान रखकर उन्हे खुश रखा जाये। आशा थी कि कब्र-के गिर्द दीवार बना देनेसे इसे लेकर चलनेवाली बाते खत्म हो जायेंगी। किन्तु चूँकि कब्रको खोदनेके बारेमे तीव्र आन्दोलन किया जा रहा है, मै आडे नही आ सकता। स्पष्ट ही कानून अनधिकृत भूमिमे मुर्दे गाड़नेके खिलाफ जान पडता है। इसके लिए अनुमति देनेका अधिकार न सुभाषको था और न सुहरावर्दीको। फिर भी मै जो-कुछ करूँगा उसमे मुझे मुसलमानोकी रजामन्दी तो चाहिए ही। मै उन्हे इस बातपर राजी करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ कि वे खुद उस शवको वहाँसे हटा ले। मुझे पूरी आशा है कि वे मेरी बातको अवश्य मान लेंगे।'

हमने तारकेश्वरके मामलेपर भी चर्चा की। फलत हमने एक वक्तव्य[1] तैयार किया और तय हुआ कि आवश्यकता हो तो उसपर हम दोनों हस्ताक्षर करे। हमारी बातचीत डा० बेसेंटके घोषणापत्रपर भी हुई। चूँकि उन्होने उसका उत्तर जल्दी देनेका वचन दिया था, इसलिए उसपर अन्य बातोंसे पहले विचार करना जरूरी था। हमारी बातचीतका परिणाम यह हुआ कि डा० बेसेंटको पत्र लिख दिया गया।[2]

१. देखिए "सत्याग्रहियोंका कर्तव्य", २५-६-१९२५।

२. देखिए "एनी बेसेंटको लिखे पत्रका मसविदा", ४-६-१९२५।

किन्तु चरखा और खादीकी चर्चामे ही हमारा अधिक समय जाता था — खास तौरपर देहातके पुनरुत्थानके सिलसिलेमे। इसके लिए उन्होंने कोई डेढ लाख रुपया भी इकट्ठा कर रखा था। मैंने उनसे कहा कि आपकी योजना इतनी बडी है कि पूरी-की-पूरी एक साथ अमलमे नही लाई जा सकती। मैंने प्रताप बाबूका तैयार किया ढाँचा देखा है और मुझे वह बिलकुल पसन्द नही है, क्योंकि वह मुझे तो बिलकुल अव्यवहार्य मालूम होता है। इसे देशबन्धु नहीं देख पाये थे। सच तो यह है कि देशबन्धु भी सहमत थे कि वह चलने लायक नही है। प्रताप बाबूने स्वय भी मान लिया था कि वह चलने लायक नही है। मैंने देशबन्धुसे कहा कि चरखेको गाँव सम्बन्धी तमाम प्रवृत्तियोका मध्यबिन्दु बनाया जाना चाहिए। अन्य तमाम प्रवृत्तियाँ उसके आसपास घूमती रहे और जहाँ चरखा जम सके वहींसे उनकी शुरुआत की जा सकती है। इसके अतिरिक्त यह ग्राम-संगठनका काम राजनैतिक उखाड-पछाडोंसे तो मुक्त रहे और एक ऐसे लोगोकी समितिके जिम्मे कर दिया जाये जो उसके विशेषज्ञ हो। उसे स्थायी अधिकार दे दिये जाये और उसका एकमात्र काम ग्रामसेवा करना रहे। आप सतीश बाबूसे ऐसी समिति बनाने और काग्रेसकी तरफसे इस कामको सँभाल लेनेका अनुरोध करे। मैंने यहाँ अपने कथनका सार मात्र दिया है। देशबन्धु मेरे कथनसे न केवल सहमत ही हुए, बल्कि उन्होंने उसको नोट भी कर लिया। वे उसे तुरन्त ही कार्यान्वित करनेके लिए उत्सुक थे। उन्होने कहा कि आपके दार्जिलिंग रहते हुए ही मैं सतीश बाबूसे इस सम्बन्धमे बातचीत कर लेना और फिर काग्रेसकी समितिको इसके सम्बन्धमे आवश्यक प्रस्ताव स्वीकृत करनेकी हिदायत दे देना चाहता हूँ। अत: सतीश बाबू तुरन्त बुलाये गये। वे आ गये। पहले तो हम तीनोने साथ बैठकर सलाह की, फिर मैं दूसरे काममे लग गया और देशबन्धु अकेले सतीश बाबूसे विविध बाते करते रहे। तय हुआ कि सतीश बाबू सस्थाके पहले सदस्य हो, सतकौडी बाबू दूसरे हो और दोनों मिलकर एक तीसरा सदस्य चुनें। ग्रामकोषका एक हिस्सा तुरन्त उनके हवाले कर दिया जाये और मैं जलपाईगुडीमें मिलनेवाली थैलीका एक अश उस मण्डल या समितिको दे दूँ। यदि आवश्यक हो तो सस्था लोक हितकारिणी सस्थाओके कानूनके अनुसार रजिस्टर करा ली जाये; जिससे उसकी बुनियाद मजबूत हो जाये। देशबन्धुने कहा था कि वे इस कामके लिए सम्बन्धित कानूनका अध्ययन करेंगे। देशबन्धुने प्रताप बाबूसे इस सारी चर्चा और इस निर्णयका जिक्र किया था और उन्हे इसके अनुसार काम करनेकी हिदायतें भी दे दी थीं।

यह थी चरखेके प्रति और उसके द्वारा ग्रामसगठन करनेकी उनकी धुन। उन्होंने कहा, 'यदि लॉर्ड बर्कनहेड हमे निराश कर देंगे तो मैं नही जानता कि हम कौसिलोमे क्या करेंगे, परन्तु मैं यह अवश्य जानता हूँ कि हमें आपके चरखेके कार्यक्रमको जरूर आगे बढ़ाना चाहिए और अपने गाँवोंका संगठन करना चाहिए। हमे अपने राष्ट्रको फिर उद्यमशील बना देना चाहिए। हमे कौंसिलोको शक्ति देनी चाहिए। मुझे बगालके नवयुवकोंको सँभालना चाहिए। मुझे सम्भव हो तो सरकारकी सहायतासे और आवश्यक हो तो उसके बिना भी, यह प्रत्यक्ष दिखा देना चाहिए कि स्वराज्य

बिना हिंसाके प्राप्त किया जा सकता है। मैंने देशके उद्धारके लए अहिंसाको आपके समान ही अन्तिम रूपसे अपना धर्म बना लिया है। अहिंसाके बिना सविनय अवज्ञा नही की जा सकती। और सविनय अवज्ञाकी शक्तिके बिना स्वराज्य नही मिल सकता। सच पूछा जाये तो हमें सविनय अवज्ञा करनेकी आवश्यकता ही नही होगी, परन्तु हममे उसकी क्षमता अवश्य आ जानी चाहिए। मुझे अपने अधीर नौजवानोके लिए काम जरूर खोजना चाहिए। मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि यदि हम सावधान न रहेगे तो हमारे कार्यकर्त्ता-वर्गमे भ्रष्टाचार फैलनेका खतरा है। मैंने अपने गुरुसे[1] तमाम कार्योमें सत्यके पालनका मूल्य सीख लिया है। आप कमसे-कम कुछ दिन उनके साथ रहें तो अच्छा। आपकी और मेरी आवश्यकताएँ भिन्न-भिन्न हैं। परन्तु उन्होने मुझे वह बल प्रदान किया है जो मुझमे पहले न था। मैं पहले जिन बातोको अस्पष्ट रूपसे देखता था, वे अब मुझे साफ-साफ दिखाई देती हैं।'

पर मैं अब इस बातचीतका अधिक विवरण नही दे सकता। मैं पाठकोसे सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि वह बातचीत अन्तमे आध्यात्मिक चर्चामे अथवा प्रवचन-मे परिणत हो गई है। उन्होने तो इन बातोकी अनन्त धारा ही बहा दी थी कि वे आजकल क्या कर रहे हैं और सशक्त हो जानेके बाद क्या करना चाहते हैं। उनके उस प्रवचनमे मुझे उनकी गम्भीर आध्यात्मिक प्रकृतिके दर्शन हुए। मुझे उनकी इस प्रकृतिके बारेमे अबतक कुछ मालूम नही था। मुझे पता नही था कि उनमे भी यह धुन उतनी ही प्रबल है जितनी अन्य अनेक प्रख्यात बगालियोंमें है। अबसे कोई चार साल पहले उन्होने मुझे गगाके किनारे एक कुटी बनाकर रहनेकी बात कही थी। उन्होने वह बात बादमे सैसून अस्पतालमे भी दुहराई थी। मैं उनकी इस बात-पर मन-ही-मन हँसा था और मैंने उनसे दिल्लगीमें कहा था कि जब आप कुटी बना लेंगे तब उसमे मेरा भी हिस्सा अवश्य रहेगा। परन्तु मैंने दार्जिलिगमे अपनी यह भूल समझी। उनमे कुटीकी इच्छा जितनी प्रबल थी उनका उतना लगाव राजनीतिसे न था। वे राजनीतिमें तो परिस्थितिसे मजबूर होकर ही पडे थे।

पाठकोको यह सोचनेकी जरूरत नही है कि हमारी बातचीत जिन विषयोपर हुई थी वे सब समाप्त हो चुके हैं। मैंने तो याददाश्तसे खास-खास बातें लिखनेकी ही कोशिश की है। उन्होने कुछ यूरोपियो और भारतीयोका चरित्र-चित्रण भी किया था, मैंने वह छोड दिया है।

हम मुख्यत चरखेके सम्बन्धमे नित्य बातचीत करते थे और नियमसे नित्य चरखा भी चलाते थे। वह पूरा घर एक कताई-घर बन गया था। महादेव, सतीश बाबू और मैं कुशल कताई शिक्षकका काम करते थे। हम सभी देशबन्धुको कातना सिखाते। उन्होने पटनामे मन लगा कर कताई सीखना शुरू कर दिया था। उन्होने राजेन्द्र बाबूसे कहा था कि कोई कताई शिक्षक दे। किन्तु वे तब बीमार होनेके कारण उसमे अधिक प्रगति नही कर सके थे। दार्जिलिगमे उन्हे अधिक प्रगति करनेकी आशा थी। वे कहते थे कि मेरे बाँये कन्धेमे दर्द है, किन्तु जब यह चला जायेगा तब मैं अधिक

१. राधास्वामी सम्प्रदायके। देखिए "कुछ संस्मरण", २८-६-१९२५।

कताई करूँगा। किन्तु मैं अपने हाथोंसे काम करनेमे वहुत कच्चा हूँ। मेरी पत्नीसे पूछें कि मैं इस वारेमें कितना लाचार हूँ। वासन्ती देवीने कहा, 'वे ठीक ही कहते हैं। वे अपनी सन्दूकका ताला खोलते हैं तव भी मुझे वुलाते हैं।' मैंने कहा, 'स्त्रियाँ वहुत तेज होती हैं। आप छोटी-छोटी वातोमे भी अपने पतिको लाचार करती हैं, जिससे उनपर आपका प्रभुत्व वना रहे।' इसपर देशवन्धु वहुत जोरसे हँसे। ऐसा लगा मानो उनकी हँसीकी गूँजसे सारी धरती हिल जायेगी। वे फूट-फूटकर रो भी सकते थे और उसी तरह जोर-जोरसे हँस भी सकते थे। किन्तु वे रोते थे एकान्तमे — ऐसे ही जैसे उनकी पत्नी रोती हैं। उन्होने इस गहन शोकमे अपने अत्यन्त प्रिय परिजनोके सम्मुख भी रोना अशोभनीय माना है। किन्तु देशवन्धु विशाल लोक समुदायोके सम्मुख हँस सकते थे और लोगोको हँसा सकते थे। हमारी गम्भीर वातचीत भी मुक्त हँसीसे आरम्भ होती जो घर-भरमे सुनाई देती। वे जानते थे कि मुझे पालथी लगाकर बैठना अच्छा लगता है। वे चारपाईमे लेटे थे। मैं कुर्सीपर वैठा था। मैं कभी अपने पैर लटका लेता और कभी कुर्सीमें ही पालथी लगा कर वैठनेका प्रयत्न करता। वे मेरी इस वेचैनीको वरदाश्त न कर सके। इसलिए उन्होने अपनी चारपाईपर अपने सामने एक तकिया रखवा लिया और विस्तरपर ही एक सूती गलीचा विछवा कर मुझे उसपर विठा दिया। मैंने उसपर आरामसे उनके सामने वैठते हुए कहा, 'इसे देखकर मुझे एक वातकी याद आ गई है, आप जानते हैं किस वातकी? वात चालीस साल पहले की है। मैं और मेरी पत्नी जव हमारा व्याह हुआ तव ऐसे ही वैठे थे। अव केवल एक वात और करनी रहती है — पाणिग्रहण। कह नही सकता, इस सम्वन्धमे वासन्ती क्या कहेगी'। इसपर सारा घर जोरकी हँसीसे गूँज उठा। दु ख है यह हँसी अव कभी सुनाई न देगी।

ये सस्मरण ८ जुलाईको वाँकुडामे लिखे गये थे। 'लॉर्ड वर्कनहेडका भाषण कलकत्ते में ९ तारीखको छपा और मैंने उसे उसी दिन सामान्यत. देखा। मैं ये टिप्पणियाँ १० तारीखको लिख रहा हूँ। मैंने अव यह भाषण गौरसे पढ लिया है। उससे इन सस्मरणोका मूल्य और भी वढ़ जाता है। मै कह सकता हूँ कि लॉर्ड वर्कनहेडके इस भाषणसे देशवन्धुको कितनी चोट लगी होती। किसी भी तरह सही, उनका यह खयाल वन गया था कि लॉर्ड वर्कनहेड कोई वहुत वडा काम कर दिखानेवाले है। मेरी नाकिस रायमे तो इस भाषणसे घोर निराशा होती है, इस कारण नही कि उसके द्वारा हमे कुछ मिला नही है, वल्कि इस कारण कि उससे भारत-मन्त्रीपर तथ्योंसे विलकुल उलटी वात कहनेकी जिम्मेदारी आती है। उनकी हर एक मुख्य वातका देशके प्राय प्रत्येक शिक्षित मनुष्यने खण्डन किया है, फिर चाहे वह किसी भी दलका हो। सवसे भारी दु खकी वात तो यह है कि वे अपनी कही सभी वातोपर शायद विश्वास भी करते हैं। अग्रेजोमे आत्मवचनाकी गजवकी शक्ति होती है। हाँ, इसमे कोई शक नही कि वे इससे कितनी ही दिक्कततलव हालतोमे से निकल जाते हैं; परन्तु उससे दुनियाको, जिसके एक वड़े भागपर उनकी हुकूमत है, अपरिमित हानि पहुँचती है। वे भ्रमवश यह विश्वासकर लेते हैं कि वे यह सव पूर्णत. नही तो मुख्यत. दुनियाके लाभके लिए करते हैं।

यदि हो सका तो मैं इस अनोखे अभिनयकी समीक्षा आगामी अंकमें करनेकी चेष्टा करूँगा। इस बीच हमारा कुछ कर्तव्य उस मृत आत्माके प्रति है जिसने अंग्रेजोंको भारतवर्षके सम्बन्धमें पहलेसे अधिक विचार करनेपर मजबूर किया है। अगर वे जीवित होते तो इस समय क्या करते? इसमें निरुत्साहित होनेका कोई कारण नहीं और न रोष करनेका कोई कारण है। लॉर्ड बर्कनहेडसे कुछ उम्मीद रखनेकी कोई कारण-सामग्री हमारे पास न थी। उन्होंने भारतमें अंग्रेजी शासनकी प्रशंसामें जो-कुछ कहा है वह कोई नई बात नहीं है। कोई परिश्रमी उपसम्पादक भी लॉर्ड बर्कनहेडके ख्यातनामा पूर्वाधिकारियोंके भाषणोंमें से ऐसी ही बातोंके उद्धरण प्रायः इन्हीं शब्दोंमें प्राप्त कर सकता है। यह भाषण क्या है, हमें अपने पक्षको सुव्यवस्थित बनानेकी चेतावनी है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है मैं इसके लिए उनका कृतज्ञ ही हूँ। मेरे सामने देशबन्धुका नुस्खा मौजूद है। मैंने वह पाठकोंके सामने पेश भी कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-७-१९२५

२२५. पत्र: महादेव देसाईको

सिराजगंजसे आते हुए
शुक्रवार [१० जुलाई, १९२५][1]

चि० महादेव,

गाड़ी बहुत हिल रही है। लिखना जरूरी था इसलिए लिख रहा हूँ। 'यंग इंडिया' की सामग्री यहाँसे शायद सीधी भेजनी पड़े। वह अभी तैयार नहीं हुई है; इसलिए शायद असम मेलसे ही भेजी जायेगी। उक्त न्यासपत्र ले रखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:] यहाँ शायद तीन हजारके लगभग रुपये इकट्ठे हो जायेंगे।

गुजराती पत्र (एस० एन० ११४३१) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी १० जुलाई, १९२५ को सिराजगंज गये थे।

२२६. गुरुद्वारा कानून[1]

[११ जुलाई, १९२५]

अकाली आन्दोलनकी शुभ समाप्तिपर सिख और पजाब सरकार दोनों बधाईके पात्र हैं। इसके लिए देशके सैकडो बड़ेसे-बडे वीरोको आत्म-बलिदान देनेकी जरूरत हुई और हजारो वीर अकालियोंको जेल जाना पडा। जेलमे उन्हे क्या-क्या दुःख भोगना पडा, जनता उससे परिचित ही है। ऐसा अद्भुत बलिदान व्यर्थ नही जा सकता था। हमे आशा करनी चाहिए कि गुरुद्वारोका सुधार अब अबाध गतिसे निरन्तर होता रहेगा। सरकारने अकाली कैदियोंको छोड दिया है और अखण्ड पाठ सम्बन्धी शर्तोंकी पाबन्दीमे ढिलाई कर दी है। वह इसके लिए भी बधाईकी पात्र है। मै देखता हूँ कि सरकारने अखण्ड पाठ तथा कैदियोकी रिहाईपर जो शर्तें लगाई हैं उनसे कुछ असन्तोप उत्पन्न हुआ है। अभी मेरे लिए इस सम्बन्धमे कोई राय देना मुश्किल है। इस टिप्पणीको लिखते समय (११-७-१९२५ को) मुझे सिर्फ एक छोटा-सा अखबारी तार ही मिला है। परन्तु यदि वे शर्तें अपमानित करनेवाली न हो और सिर्फ बतौर सावधानीके अथवा सरकारकी प्रतिष्ठा बनाये रखनेके लिए लगाई गई हों तो मै आशा करता हूँ कि अकाली मित्र उनपर अनावश्यक आपत्ति न करेंगे। उनका मुख्य उद्देश्य तो गुरुद्वारोमें सुधार करना था। वह पूरा-पूरा सिद्ध हो गया है। मै दूसरी बाते बहुत छोटी नही तो गौण अवश्य मानता हूँ। ऐसी हालतमे अकाली लोग कैदियोकी रिहाई तथा अखण्ड पाठ सम्बन्धी सरकारकी लगाई शर्तोंका अर्थ बहुत खीचकर न लगाये तो अच्छा होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-७-१९२५

२२७. यह तो बलात् संयम है

एक बाल-विधवाने, जिसने अपना नाम-पता भी लिखा है, अपना रोना इस प्रकार रोया है[2]

मेरे नाम ऐसे पत्र प्राय आते रहते है, यही नही बल्कि मै जहाँ-तहाँ बाल-विधवाओं-की दशा देखता भी रहता हूँ। मै असख्य बहनोके सम्पर्कमे आता हूँ, इसलिए उनके दुःखको समझ सकता हूँ। पुरुष उनके दुःखमे जितना अधिकसे-अधिक हाथ बँटा सकता है, उतना बँटानेके लिए मै स्त्री-सम बन गया हूँ — और वैसा बननेके लिए और भी अधिक प्रयत्न कर रहा हूँ। मै बहुत-सी बहनोकी माँकी कमी पूरी करनेकी कोशिश करता हूँ। इस कारण मैं इस बहनके दुःखको भली-भाँति समझता हूँ।

१. यह १७-७-१९२५ के हिन्दुस्तानमें भी प्रकाशित हुआ था।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। लेखिकाने इसमें गांधीजीसे अनुरोध किया था कि वे विधवाओंके प्रश्नको भी उसी प्रकार उत्साहसे हाथमें लें जिस प्रकार उन्होंने अस्पृश्योंके प्रश्नको लिया है।

मेरा यह दृढ मत होता जाता है कि दुनियामें बालविधवा-जैसी कोई वस्तु होनी ही नही चाहिए। बाल और विधवा, ये दो परस्पर विरोधी शब्द हैं। वैधव्य धर्म नही है, सयम धर्म है। बलात्कार और सयम ये दोनों परस्पर विरोधी हैं—एकसे मनुष्यकी अधोगति होती है और दूसरेसे उन्नति। बलात् पालन किया गया वैधव्य पाप है, किन्तु स्वेच्छासे पालन किया गया वैधव्य धर्म है, आत्माकी शोभा है और समाजकी पवित्रताकी ढाल है। यह कहना कि पन्द्रह सालकी बालिका विवेकपूर्वक वैधव्यका पालन करती है, अपनी उद्धतता और अज्ञान प्रकट करना है। पन्द्रह वर्षकी बालिका वैधव्यके कष्टोको क्या जान सकती है? माता-पिताका धर्म है कि वे उसके विवाहके लिए हर तरहकी सहूलियतें कर दे। एक कुरीतिके अधीन होना कायरता है और उसका विरोध करना पुरुषार्थ।

पाटीदारोकी[1] विवाह-विधिके सम्बन्धमे और उनमे प्रचलित प्रथाओंके सम्बन्धमे मैंने बहुत-कुछ सुना है। अत. मुझे इस बहनके पत्रमे कोई अतिशयोक्ति नही दिखाई देती।

मैं युवती विधवाओको क्या सलाह दूँ? इसका विचार करते समय मुझे अपनी अक्षमताका भान हो जाता है। उन्हे विवाह करनेकी सलाह देना तो आसान है, परन्तु वे विवाह किससे करे? उनके लिए वरकी खोज कौन करे? क्या वे गैर-बिरादरीमे ब्याह कर ले? क्या उन्हे खोजनेसे वर नही मिल सकता है? क्या वे विज्ञापनसे वर ढूँढकर विवाह करे? क्या विवाह कोई सौदा है? जहाँ लोकमत विरुद्ध अथवा उदासीन है वहाँ बाल-विधवाओके लिए वर खोजना लगभग असम्भव है। और यदि सुयोग्य वर न मिले तो मैं उन्हे हर किसीसे विवाह-सूत्रमे बँध जानेकी सलाह कैसे दे सकता हूँ?

इसलिए मैं तो इन बाल-विधवाओके माता-पिताओ तथा अभिभावकोसे ही प्रार्थना कर सकता हूँ। परन्तु 'नवजीवन' उनके हाथोमे कहाँ पहुँचता है? ये लोग तो प्राय: अखबार ही नही पढते। ऐसा धर्म-सकट उपस्थित है।

फिर भी मैं विधवाओको इतनी सलाह तो दे ही सकता हूँ कि वे शान्तिपूर्वक कष्ट सहन करे। वे अपने पुरुष या स्त्री अभिभावकोके सामने अपना हृदय खोलकर रखे और उन्हे अपनी तमाम इच्छाएँ बताये। यदि वे उनकी बात फिर भी न समझे या न माने तो वे इसकी चिन्ता न करे और यदि उन्हे योग्य वर मिल जाये तो उससे ब्याह कर ले। ऐसा वर खोजनेके लिए जिस तरह दमयन्ती, सावित्री और पार्वती ने तप किया उसी तरह वे भी इस युगके अनुकूल और इस युगमे सम्भव तप करे। वह तप क्या है—अभ्यास। विधवाके लिए अभ्यास—शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक अभ्यास—से बढकर मनको स्थिर करनेवाली दूसरी वस्तु नही। वे अपना एक-एक क्षण चरखेको देकर शारीरिक तप करे; अक्षर-ज्ञान प्राप्त करके मानसिक तप करे और आत्म-शुद्धि करके तथा आत्माकी पहचान करके आध्यात्मिक तप करे। उनके बडे-बूढ़े उन्हे इन तीन कार्योंसे नही रोक सकते। और यदि रोकें भी तो उनका वह प्रयत्न व्यर्थ होगा। इन कार्योंको करनेका अधिकार सभीको है। यदि वह अधिकार विधवाओको न दिया जाये तो वे अवश्य सत्याग्रह करे।

१. गुजरातकी पटेल जाति।

मैं जानता हूँ कि यह उपाय भी कठिन है। परन्तु सदुपाय कठिन दिखाई देते हैं, पर वास्तवमें कठिन नही होते। यह भगवद् वाक्य है।

यदि विधवाओके अभिभावक न समझेंगे तो पछतायेंगे, क्योंकि मैं हर जगह दुराचार होता देखता हूँ। विधवासे बलात् सयम सधवानेसे उसकी, कुटुम्बकी या धर्मकी, किसीकी भी रक्षा नही हो सकती। मैं अपनी आँखोके सामने इन तीनोका नाश होता देखता हूँ।

बाल-विधवाओके सरक्षक पुरुष परिस्थितिको समझे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-७-१९२५

२२८. 'नवजीवन' बन्द करें

'नवजीवन' के एक पाठकने लम्बा पत्र लिखा है। मैं उसका सार अपनी भाषामे देता हूँ, क्योकि उसकी भाषा सक्षिप्त नही की जा सकती है। उनका कहना है:

> 'नवजीवन' मे केवल चरखेकी ही चर्चा भरी रहती है, इससे पाठक ऊब गये हैं। आप जैसे प्रति मास एक शिक्षण अक निकालते हैं यदि वैसे ही प्रति मास 'चरखा अक' भी निकाले तो उसमे पैसेकी बचत होगी और लोग शायद उसे पढ़ेंगे भी। चूँकि आप 'नवजीवन' लाभकी दृष्टिसे नही निकालते, इसलिए आपको ऐसी सलाह दी जा सकती है। यदि आपको 'नवजीवन' प्रति सप्ताह निकालना जारी ही रखना हो तो आप उसकी मार्फत लोगोको किसी नई प्रवृत्तिकी जानकारी दे और वह ऐसी हो जिससे अग्रेजोके मनमे भय उत्पन्न हो। आप तुर्कीकी ओर देखे, उसने क्या किया? हम इस ससारमे तो यही देखते हैं; 'भय बिनु होय न प्रीति'।

मुझे ऐसी सलाह देनेवाले लोग विरले नही हैं। कभी-कभी उनकी शकाओका समाधान करनेमे 'नवजीवन' का हेतु स्पष्ट करनेका अवसर मिलता है, इसलिए इस विषयकी चर्चा अप्रासगिक नही। यह तो नही कह सकते कि 'नवजीवन' मे चरखेकी ही चर्चा भरी रहती है, हाँ, यह कहा जा सकता है कि चरखेकी चर्चाको प्रधानता दी जाती है। किन्तु उसके जितने ग्राहक बचे हैं उनकी सख्या देखते हुए मैं कह सकता हूँ कि उन्हे मात्र चरखेकी ही चर्चा भी अप्रिय नही है।

'नवजीवन' द्रव्योपार्जनका साधन नही है। वह प्रत्येक प्रवृत्तिका प्रचार-साधन भी नही है। वह तो केवल मेरे विचारोके प्रचारका ही साधन है। 'नवजीवन' कर्ज लेकर नही चलाया जा सकता, उसका खर्च विज्ञापनकी आमदनीसे भी नही निकाला जा सकता। वह एक या अनेक मित्रोसे दान लेकर पाठकोको मुफ्त भी नही दिया जा सकता। 'नवजीवन' के पाठक खुद अपनेको उसका मालिक समझे। 'नवजीवन' उनके लिए मेरा साप्ताहिक पत्र है। उन्हे जबतक उसमे दिये गये विचार

पसन्द आते हैं तबतक वे उसे मूल्य देकर ले और सँभाल कर रखे, क्योंकि मैं प्रति सप्ताह उसमें अपना आत्मा उडेलता हूँ और जानता हूँ कि जिस रचनामें कोई अपढ मनुष्य भी अपना आत्मा उडेलता है उसको पढने और उसपर विचार करनेमे कल्याण है।

'नवजीवन' सत्याग्रहका अमूल्य मार्ग बतानेका साधन है। कह सकते है कि मै इस सत्याग्रहका उपयोग बतानेके लिए ही जीता हूँ। यह नई चीज नही है; किन्तु मेरा दृढ विश्वास है कि मै पुरानी चीजको ही नई भापामें और नये ढंगसे पल्लवित करके प्रकाशित कर रहा हूँ। मै मानता हूँ कि सत्याग्रहके ही द्वारा स्वराज्य मिल सकता है। स्वराज्य हमारी साँस है। वह हमारे पास नही है, इससे हमारी अवस्था उस मनुष्यकी-सी हो रही है जो साँस ही न ले पा रहा हो। यदि मै लोगोको सत्याग्रहके मूलतत्त्व समझा सकूँ तो मेरा, देशका और ससारका मार्ग सरल हो जायेगा। मै यह बात भली-भाँति जानता हूँ। हाँ, सम्भव है कि उस मार्गके बता पानेके पहले ही मेरा देहान्त हो जाये।

परन्तु ऐसा हो भी तो कोई हानि नही। यह अटल नियम है कि पुण्यकर्मका नाश कभी नही होता।

सत्याग्रह चरखके बिना असम्भव है। अन्न भूखो मरते मनुष्यका ईश्वर है। इसीसे उपनिषद्ने कहा है, 'अन्न वै ब्रह्म' अर्थात् अन्न ही ब्रह्म है। अन्न मनुष्यके शरीर बलसे उत्पन्न होता है। चूँकि हम पूरे शरीरबलका उपयोग नही करते, इसलिए हमे अपर्याप्त अन्न मिलता है। यहाँ लोग सालमे चार महीने आलस्यमे गुजारते है। इसका परिणाम कुल मिलाकर यह हुआ है कि लोग क्षीण हो गये है। चरखा लोगोको सबल बनानेका और उनकी भूख मिटानेका एकमात्र अनुपम साधन है। वर्षाकी एक बूंदका कुछ असर नही होता, परन्तु जब असख्य बूंदे इकट्ठी हो जाती है तब उनकी पोषक शक्ति ऐसी हो जाती है कि वह सारी दुनियाको हर साल नवीन चेतना देती है। इसी तरह एक चरखेका असर भले ही कुछ न होता दिखाई दे, परन्तु चरखा-समुदायकी शक्ति वर्षाके बिन्दुओके समुदायके बराबर तो अवश्य है—और एक तरहसे तो उससे भी अधिक है। यदि पानीकी एक ही बूंद गिरती है तो वह व्यर्थ जाती है। बहुत-सी बूंदे असमय गिरती है तो वे भी हानि करती है। किन्तु चरखा एक भी चलाया जाये तो उससे एक आदमीको तो लाभ पहुँचता ही है। चरखेके लिए असमय तो होता ही नही। इसीलिए इस चरखेके अभिक्रम (प्रारम्भिक उद्यम) का नाश नही और इसमे प्रत्यवाय (हानि) भी नही; प्रत्युत इसके अल्प उपयोगसे भी मनुष्य महाभयसे मुक्त होता है।[1]

मेरा यह दृढ विचार है। इस कारण यदि 'नवजीवन' चरखेकी चर्चाको प्रधानता न दे तो फिर उसके लिए कोई कार्य नही रह जाता।

१. नेहाभिक्रम नाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥ भगवद्गीता २-४०

परन्तु चरखा शान्ति-पाठ है। वह आत्म-शुद्धिका सशक्त साधन है। आत्मशुद्धिके दूसरे साधन भी हैं किन्तु उनका विचार 'नवजीवन' मे प्रसगोपात्त किया जाता है और किया जाता रहेगा। समस्त लेखोका मूल तो एक ही होगा—आत्मशुद्धि, स्वराज्य और सत्याग्रह। 'नवजीवन' का उद्देश्य है आन्तरिक शक्तिको बढाकर स्वराज्य प्राप्त करना। इसलिए यदि 'नवजीवन' मे कौंसिल-प्रवेश और ऐसे अन्य विषयोकी चर्चा भी किसी रूपसे की ही जाती है तो वहीतक की जाती है जहाँतक उसका सम्बन्ध आत्मशुद्धि या आत्मशक्तिके विकाससे है। 'नवजीवन' फिलहाल पाठकोको गरमागर्म तीखी चीजे नही दे सकता, क्योकि उससे कुछ लाभ नही। केवल टीका-टिप्पणीमे समय खोना व्यर्थ है। टीका-टिप्पणी तभी उचित होती है जब उसके पीछे कुछ बल हो। जो लोग इस बातको समझते हैं वे 'नवजीवन' के महत्त्वको अवश्य जान जायेंगे और उसका त्याग नही करेंगे। जबतक उसके पाठकोकी सख्या पर्याप्त रहेगी, वह तबतक चलेगा। किन्तु जब उसकी ग्राहक सख्या एक निश्चित सीमामे कम हो जायेगी तब मुझे उसे बन्द करनेमे न एक क्षणका विलम्ब होगा और न क्षोभ।

और 'नवजीवन' के बन्द हो जानेपर भी मेरा चरखा तो कदापि बन्द न होगा। क्योकि उसको चलानेके लिए तो मुझे मित्रोकी भी आवश्यकता नही होती।

लेखककी दूसरी सलाह यह है कि मैं अग्रेजोके मनमे भय उत्पन्न करनेवाली कोई बात लिखूँ। यह तो मेरे स्वभावके विरुद्ध है, अत. यह मुझसे नही हो सकता। मैं तो अग्रेजोको प्रेमसे जीतना चाहता हूँ। सम्भव है कि हिन्दुस्तान ऐसा न कर सके और भय पैदा करनेका मार्ग ग्रहण करे। वह ऐसा कर सकता है। परन्तु इसके लिए उसे मेरी सहायताकी आवश्यकता नही होगी; क्योकि मैं उस तरहका सिपाही नहीं हूँ। मैं जिन-जिन हथियारोकी तजवीज कर सकता हूँ उन सबका मूल प्रेम अथवा सत्य ही होता है। मेरी तजवीजमे भूल हो सकती है—हेतुमे कभी नहीं।

यह है, 'नवजीवन' की और मेरी मर्यादा।

एक अन्य पाठकने एक दूसरा सुझाव दिया है। मैं यहाँ उसका भी विवेचन कर दूँ। उसका कहना है कि 'नवजीवन' का पाँच पैसा मूल्य पाठकोके लिए बहुत अधिक है। अत यदि उसका मूल्य एक पैसा कर दिया जाये तो उसके ग्राहक बहुत-से लोग बन जायेगे और 'नवजीवन' को पाससे घाटा न देना पड़ेगा। जो हिसाब-किताबके बारेमे कुछ जानते हैं वे समझ सकते हैं कि किसी वस्तुका मूल्य एक निश्चित सीमासे कम रखे तो उस अवस्थामे ज्यो-ज्यो उसकी खपत बढती है त्यो-त्यो उसका घाटा भी बढ़ता है। इसका अर्थ यह है कि जो वस्तु लाभके साथ बेची जा रही हो उसीकी खपत बढ़नेमे लाभ रहता है। जो पत्र हानि उठाकर निकाला जाता हो, उसकी खपत बढ़नेसे तो हानि ही बढ़ेगी। जब 'नवजीवन' का प्रकाशन आरम्भ किया गया तब वह हानि उठाकर ही निकाला जाता था। उसका चन्दा हिसाब लगानेपर जो उचित लगा वही रखा गया है। वह लागतसे कुछ अधिक है, अत. जब उसके ग्राहक बढ़ते हैं तब उसका लाभ भी बढता है। यदि कोई मनुष्य यह कहे कि उसका मूल्य यह लाभका अंश निकालकर रखा जाये तो उसे जानना चाहिए कि यह लाभका अश इतना

नही है कि उसके मूल्यपर उसके निकाल देनेका कोई खास असर हो।[1] 'नवजीवन' एक पैसे या दो पैसेमे बेचा जा सके, ऐसी स्थिति नही है। किन्तु इसके साथ मुझे यह भी वता देना चाहिए कि जहाँ जरूरत जान पड़ती है वहाँ वह विलकुल विना मूल्य ही भेजा जाता है। मेरी जानकारीमे ऐसे लोग अधिक नही है जिन्हे 'नवजीवन' का मूल्य देना भारी पडता हो, किन्तु जो, यदि यह मुफ्त मिल जाये तो, इस पत्रको पढनेके लिए उत्सुक रहते हो। यदि कोई ऐसे लोग हो तो मै उनका नाम और पते अवश्य ही जानना चाहता हूँ। क्योकि कुछ मित्रोने 'नवजीवन' विना मूल्य भेजनेके लिए रुपया देनेका वचन दिया है। मै उसका उपयोग अधिकारी पाठकोको पत्र देनेके लिए अवश्य करूँगा। ऐसे लोग व्यवस्थापकको पत्र लिखे। वे उचित समझेगे तो उन्हे 'नवजीवन' विना मूल्य या कम मूल्यमे दे देंगे। किन्तु पाठकोको जानना चाहिए कि यह खर्च कोई-न-कोई मित्र ही उठायेगा। उसे 'नवजीवन' नही उठायेगा क्यो कि उसमे यह खर्च उठानेका सामर्थ्य नही रहा है।

लेखकका खयाल यह भी जान पड़ता है कि 'नवजीवन' अव भी 'यग इडिया' का घाटा पूरा करता है। ऐसी भी कोई बात नही है। 'यग इडिया' के प्रकाशनमे अब घाटा है ही नही। हाँ, 'हिन्दी नवजीवन' की स्थिति अभी वैसी अवश्य मानी जा सकती है। अभी उसकी ग्राहक सख्या इतनी नही हो सकी है कि वह स्वावलम्बी माना जा सके। अभी उसमे कमी-बेशी होती रहती है। किन्तु उसका खर्च भी अब अकेले 'नवजीवन' के पाठक नही उठाते। उसका खर्च समूचा सस्थान अर्थात् उसके समस्त विभाग उठाते है। इस खर्चको मित्र लोग उठा सकते थे; किन्तु वे जानते है कि यहाँ वह परिवार बाह्य सहायता स्वीकार न करनेकी अपनी प्रतिज्ञा नही त्याग सकता; तब वे इस प्रकारका आग्रह कैसे करें?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-७-१९२५

१. यहाँ नवजीवनके व्यवस्थापककी निम्नलिखित टिप्पणी थी:

गत ३० जूनको नवजीवनके सम्बन्धमें दो परिवर्तन करनेका निश्चय किया गया है:

एक: जब नवजीवनके कागजका वर्तमान संग्रह समाप्त हो जाये तब नवजीवनमें बढिया किस्मके कागजका उपयोग किया जाये।

दो: इस समय नवजीवनमें विशेष सामग्री देनेके उद्देश्यसे कोई परिशिष्टांक निकाला जाता है तो ग्राहकोंसे उसका मूल्य अलग लिया जाता है। अब यह बन्द करके (सितम्बर १९२५ से) नवजीवनका सातवां वर्ष आरम्भ होनेपर जब उसमें विशेष सामग्री दी जाये और उसके अतिरिक्त पृष्ठ छापे जायें तब वे जैसे पहले पाठकोंको बिना मूल्य दिये जाते थे, वैसे ही दिये जायें।

२२९. खादी प्रतिष्ठान

'नवजीवन' के पाठक जानते हैं कि मैं बंगाल खादी प्रतिष्ठानके कार्यसे कितना प्रसन्न हुआ हूँ। मेरे विवरणको पढ़कर भाई लक्ष्मीदासने[1] भाई मथुरादासको प्रतिष्ठानके निरीक्षणके लिए भेजा था। उन्होंने अपनी जाँचके फलस्वरूप अपना मत लिपिबद्ध करके उसकी एक नकल मुझे भेजी है। मैंने अपना निरीक्षण भले ही सावधानीसे क्यों न किया हो, किन्तु वह शास्त्रीय नहीं माना जा सकता। भाई मथुरादासका निरीक्षण शास्त्रीय है, क्योंकि उन्होंने इस विषयका विशेष-रूपसे अध्ययन किया है। उन्होंने अन्य संस्थाओंकी जाँच भी सावधानीसे की है और वे उनका हिसाब जबानी बता सकते हैं। इससे मैं उनके निरीक्षणको अपने निरीक्षणकी अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण समझता हूँ। मेरे निरीक्षणके विवरणसे पाठक मेरा मत जान सकते हैं, उन्हें उसमें प्रमाण कम मिलेंगे किन्तु शास्त्रीय निरीक्षणके विवरणमें पाठकोंको मेरे मतके समर्थक प्रमाण भी मिलेंगे। भाई मथुरादासका निरीक्षणका विवरण ऐसा होनेके कारण इसी अंकमें अन्यत्र दिया गया है।

मैं चाहता हूँ कि खादीके कार्यकर्त्ता उनके विवरणको ध्यानपूर्वक पढ़ें। खादी प्रतिष्ठानमें एक व्यापारिक पेढ़ीकी भाँति कार्यकर्त्ताओंसे विधिवत् काम लिया जाता है और उन्हें पूरा वेतन दिया जाता है। यह उस संस्थाकी विशेषता है। इसके बावजूद उस संस्थामें त्यागी लोग हैं। इसका पहला कारण यह है कि इसके दो मुख्य कार्यकर्त्ता, आचार्य राय और उनके दाहिने हाथ सतीश बाबू दोनों त्यागी हैं। इसका दूसरा कारण यह है कि व्यापारियोंके समान कार्यपद्धति रखनेपर भी इसके पीछे स्वार्थ नहीं है।

मैंने जलपाईगुडीके व्यापारियोंसे कहा था कि व्यापार हिंदुस्तानकी मुक्तिकी चाबी है। हमारे व्यापारियोंने इस व्यापारके लिए ही हिन्दुस्तानको पराधीन बनाया था। इसलिए जब व्यापारी वर्ग ही स्वार्थके बजाय परमार्थकी साधना करेगा तब हिन्दुस्तान जागृत होगा। यदि व्यापारी करोड़ों रुपये दानमें दें तो वह काफी नहीं है। रुपये तो वे दे ही रहे हैं, किन्तु जब वे अपनी बुद्धि भी हिन्दुस्तानकी सेवामें लगा देंगे तभी यह कार्य सिद्ध होगा। ऐसा व्यापारी अपने लिए नहीं बल्कि हिन्दुस्तानके हितार्थ धनसंग्रहका विचार करेगा। फिर वह यह नहीं सोचेगा कि हिन्दुस्तानके हितार्थ भी किस धन्धेमें अधिक धन मिलेगा, बल्कि यह देखेगा कि किस धन्धेसे हिन्दुस्तानके अधिकसे-अधिक लोग गाँवोंमें अपने घरोंमें रहते हुए अधिकसे-अधिक कमाई कर सकते हैं। ऐसे कुछ व्यापारी हमें मिले हैं, इसीलिए तो वह प्रगति हो रही है जिसे हम देख रहे हैं। यह प्रगति साधारण त्रैराशिकसे जानी जा सकती है।

मैं सतीश बाबूके कार्यकी सराहना करता हूँ, क्योंकि उन्होंने अपना लाखोंका व्यापार छोड़ा है और अपनी बुद्धि, कुटुम्ब और धन खादी प्रचारके निमित्त अर्पित

१. साबरमती आश्रमके लक्ष्मीदास आसर।

कर दिये है। किन्तु फिर भी उनको अपने इस त्यागका तनिक भी खयाल नही है, अथवा कहना चाहिए कि उन्हे इसका तनिक भी अभिमान नही है; क्योकि उन्हे इस त्यागमे सुखकी अनुभूति मिली है। वे इस त्यागके बिना रह नही सकते।

पाठक इस सराहनासे यह न समझे कि सतीश बाबूके कार्यकी आलोचना व्यापारिक दृष्टिसे की ही नही जा सकती। किन्तु यदि की जा सकती हो तो इसमें उनका दोष नही है। इसका कारण इस कार्यविषयक उनके ज्ञानकी कमी है। यह कमी अनुभवसे दूर हो जायेगी। हम तो इतना ही चाहते है कि इस तरहके दूसरे बहुतसे कुशल व्यापारी अपना सर्वस्व त्याग कर अपने स्वार्थके लिए नही, किन्तु देशके हितके लिए खादीका व्यापार करने लगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-७-१९२५

२३०. टिप्पणियाँ

पिछले वर्ष अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने सूत कातनेके सम्बन्धमे जो प्रस्ताव पास किया था, उसके अन्तर्गत अखिल भारतीय खादी बोर्डको जो सूत मिला है उसने उसका सक्षिप्त विवरण मुझे भेजा है। विवरण इस प्रकार है :[1]

इस विवरणसे हमें कुछ महत्त्वपूर्ण शिक्षा मिलती है। हर संस्था एक यन्त्रकी तरह होती है। जैसे यन्त्रकी एक भी कील ढीली हो तो यन्त्र उस हदतक कमजोर हो जाता है और कभी-कभी तो टूट भी जाता है। वैसा ही सब संस्थाओके और मुख्यत· रचनात्मक कार्य करनेवाली सस्थाओके सम्बन्धमें है। यदि उनकी छोटीसे-छोटी विगतकी भी सावधानी न रखी जाये तो उनके उत्पादनमे अन्तर आ जाता है। कमजोर सूत, जो ठीक बटा न हो, ठीक तरह अटेरा हुआ न हो और ऐसा प्रत्येक दोष खादीको कमजोर बनाता है, बुनाईका दाम बढाता है और उससे बुनाईमे भी देर लगती है। हम यह भी देखते है कि खादीके उत्पादनमे जो शिथिलता हुई है उसका कारण केवल कताईके दोष ही है।

कातनेवाले चेतें

इस खादीकी कीमत बाजार भावसे रखी गई है। क्योकि इसकी मात्रा इतनी कम है कि उसकी कीमत घटाकर बेचनेका कोई अर्थ नही होता और कीमत घटानेके बाद उस खादीको लेनेका प्रथम अधिकार किसे रहे, यह प्रश्न भी उठता है। ऐसा प्रश्न इस थोडी-सी खादीके सम्बन्धमे नही उठना चाहिए, इस कारण भी मैंने इस खादीको बाजार भावसे बेचनेकी सलाह दी है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १२-७-१९२५

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२३१. सम्मति : दर्शक-पुस्तिकामे[1]

१२ जुलाई, १९२५

अच्छी पुस्तके पढना अच्छा है, पर हम उत्कृष्ट साहित्यमे जो-कुछ पढे उसे अपने जीवनमे उतारना कही अधिक अच्छा है।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोमे मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ६०५१) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य . सार्वजनिक पुस्तकालय, इलाहाबाद

२३२. भाषण : राजशाहीकी सार्वजनिक सभामें[2]

१२ जुलाई, १९२५

मानपत्र तथा भेंट[3] देनेवालोंको धन्यवाद देनेके बाद गांधीजीने बताया कि मेरे इस दौरेके दो उद्देश्य हैं। उनमें पहला देशबन्धु स्मारकके लिए १० लाख रुपया इकट्ठा करना है। मुझे पूरी आशा है कि राजशाहीके बड़े-बड़े जमींदार, वकील और व्यवसायी स्मारक कोषमें समुचित दान देंगे। मैं प्रत्येकसे यथाशक्ति योग देनेका अनुरोध करता हूँ। लाखों लोग देशबन्धु दासके निधनपर दुःखित हैं। देशबन्धुके प्रति इस अगाध प्रेमका उपयोग मैं हिन्दुस्तानकी शक्ति और सामर्थ्यको बढ़ानेकी दिशामें करना चाहता हूँ। हमारा पहला कर्त्तव्य देशबन्धुके स्मारकमें यथाशक्ति दान देकर उनकी इच्छाओंको पूरा करना है।

देशबन्धुके साथ दार्जिलिंगमें हुई अपनी बातचीतका हवाला देते हुए महात्माजीने बताया कि देशबन्धुने जोर देकर यह बात कही थी कि गाँवोंके पुनर्गठनके बिना कुछ भी नहीं किया जा सकता तथा इस पुनर्गठनके लिए सबसे आवश्यक चीज है चरखा। मैं आपसे दिवंगत देशबन्धुकी इच्छाके अनुसार काम करनेका अनुरोध करता हूँ अर्थात् (१) आप नियमसे प्रतिदिन आधा घंटा कातें, (२) खद्दर पहनें और (३) हिन्दू और मुसलमान आपसमें मेलसे रहें। दार्जिलिंगमें मेरे और देशबन्धुके बीच हुई बातचीतका यही एक मुख्य विषय था।

१. गांधीजीने यह टिप्पणी राजशाही सार्वजनिक पुस्तकालयकी दर्शक-पुस्तिकामें लिखी थी।

२. सभामें गाधीजीको स्वागत समिति, नगरपालिका, जिला व स्थानीय बोर्डों तथा अन्य सार्वजनिक संस्थाओंकी ओरसे मानपत्र भेंट किये गये थे। उत्तरमें दिये गये गाधीजीके हिन्दी भाषणका बगलामें अनुवाद सतीशचन्द्र दासगुप्तने किया था। मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

३. कलम नामक जगहमें बने पीतलके बर्तन और एक पेटी चरखा भेंटमें दिये गये थे।

महात्माजीने आगे बोलते हुए कहा कि देशबन्धुको किसी व्यक्तिसे घृणा नहीं थी तथा उन्होंने अपने जीवनसे यह प्रदर्शित कर दिया था कि अस्पृश्यताका धर्ममें कोई स्थान नहीं है। यदि वास्तवमें आपके मनमें देशबन्धुके प्रति प्रेम और अनुभूति है तो मैं आपसे उनकी इच्छाओंके अनुसार कार्य करके स्वराज्य प्राप्त करनेका अनुरोध करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १७-७-१९२५

२३३. प्रश्नोंके उत्तर[1]

जैसोर जाते हुए गाडीमें
[१४ जुलाई, १९२५ या उससे पूर्व][2]

प्रश्न (१) क्या आप यह सोचते हैं कि आप कांग्रेसके सदस्य बने रहें, इसीलिए उसके सिद्धान्तोंको बदल दिया जाना चाहिए। आपके विचारसे क्या यह रद्दोबदल आवश्यक है? आपको जो सिद्धान्त मान्य है, क्या आप उसकी व्याख्या करेंगे।

उत्तर: यदि मताधिकारके नियममें रद्दोबदल किया ही जाना हो तो खरीदकर सूत देना बन्द कर दिया जाना चाहिए।

(२) यदि मतदानकी पात्रताके लिए वार्षिक चन्देके साथ-साथ विकल्पके रूपमें सूतकी एक निश्चित मात्रा देनी भी हो तो क्या यह आपको मान्य होगा?

ऐसी हर बात जो स्वराज्य दलको मान्य है मुझे भी मान्य है।

(३) यदि कांग्रेस सूत सम्बन्धी सदस्यताकी शर्तको समाप्त कर देती है और स्वराज्यवादियोंको विधानसभाओंमें राजनीतिक कार्यको निश्चित करनेका अधिकार देनेके बजाय कौंसिलोंके कार्यके साथ-साथ अपना स्वयंका राजनीतिक कार्यक्रम बनाती है तो क्या आप उसे कार्यान्वित करनेमें मदद देंगे?

इस समय तकके अपने विचारोंको देखते हुए मैं समझता हूँ कि मैं ऐसी संस्थाका नेतृत्व नहीं कर सकूँगा।

(४) आपकी रायमें कौंसिलोंके अन्दर और बाहर कांग्रेसका कार्यक्रम क्या होना चाहिए?

वर्तमान कार्यक्रम ही।

(५) क्या आप यह समझते हैं कि केवल संवैधानिक आन्दोलनके बलपर ही अंग्रेजोंको स्वराज्य देनेपर बाध्य किया जा सकता है?

१. बॉम्बे क्रॉनिकलने विभिन्न राजनीतिक दलोंके नेताओंके पास राजनीतिक एकतासे सम्बन्धित कुछ प्रश्न उनके विचार जाननेके लिए भेजे थे।

२. गांधीजी १३ जुलाईको कलकत्ता और १४ जुलाईको जैसोरमें थे। यह निश्चित नहीं है कि गांधीजी कलकत्तासे जैसोरके लिए १३ जुलाईको रवाना हुए थे या १४ को।

मै ऐसा नही सोचता।

(६) यदि असंवैधानिक आन्दोलन आवश्यक हो तो आप कांग्रेसको किस या किस-किस प्रकारकी सीधी कार्रवाई करनेकी सलाह देंगे? क्या आप करबन्दीको मुद्दा बनाकर विधानसभाओका चुनाव लड़नेकी सिफारिश करेगे?

इस समय तो कर न देनेके बजाय सविनय अवज्ञा ही उपयुक्त सीधी कार्रवाई होगी।

(७) क्या आप स्वयं विदेशी कपड़ा पहनना छोड़नेको तैयार है? यदि आप अब भी इसे इस्तेमाल करते है तो क्या आप स्वदेशी आन्दोलनकी सहायता करनेके लिए इसे छोड़ देंगे?

मै विदेशी कपडा नही पहनता। जहाँतक मेरा सवाल है खद्दर पहनना स्वदेशीके लिए अत्यावश्यक है।

(८) यदि आप अपने जिलेसे कौंसिलके सदस्य चुन लिये जाते है तो क्या वर्तमान परिस्थितियोंमें आप मन्त्रीपद मंजूर करेंगे?

ईश्वरको लाख धन्यवाद; मै कानूनन इसके अयोग्य हूँ।

(९) यदि रीडिंग बर्कनहेडकी बातचीतसे आपको निराशा हुई है तो रोषपूर्ण सभाओं व जुलूसोंके साथ-साथ आप जनताको और क्या कदम उठानेकी सलाह देंगे?

यदि मुझमे शक्ति हो तो इस निराशाका उपयोग मै केवल एक ही सम्भव बातके लिए करूँ, वह है विदेशी कपडेका बहिष्कार।

(१०) यदि भारतीय राष्ट्रमण्डल विधेयककी मुख्य व्यवस्थाएँ आपको सन्तोष-प्रद लगती है तो अक्तूबर, १९२६ से पहले इसके ब्रिटिश संसद द्वारा पास न किये जानेकी हालतमें क्या आप कांग्रेससे कर न देनेके मुद्देको लेकर चुनाव लड़नेकी सलाह देंगे?

इसका उत्तर ऊपर दिया जा चुका है।

(११) क्या आप यह समझते है कि रचनात्मक कार्यक्रमको उत्तेजन देनेके लिए स्वराज्यवादी सरगर्मीसे कार्य कर रहे हैं?

सब जगह और सभी स्वराज्यवादी ऐसा नही कर रहे है।

(१२) आपकी रायमें क्या कांग्रेसियों और इंडिपेंडेंटो अथवा नरमदलीय लोगोके दृष्टिकोणों तथा राजनीतिक तौर-तरीकोंका अन्तर इतना महत्त्वपूर्ण है कि उनमें आपसी समझौता करके कोई संयुक्त कदम नहीं उठाया जा सकता?

दीखता तो ऐसा ही है। पर मै चाहता हूँ कि ऐसा न हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-७-१९२५

२३४. सत्यपर कायम रहो

बकरीदके दिन खिदरपुरमे हिन्दुओं और मुसलमानोमे जो दगा हुआ मैंने उसका हाल देकर पाठकोको चिन्तामे नही डाला, हालाँकि मै खुद दगेके कुछ घटे वाद सयोगसे मौकेपर जा पहुँचा था। मैंने खिदरपुरसे रसा रोड लौटते ही एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे काफी देर मुलाकात अवश्य की थी[1]। उसमे मैंने सोच-विचारके उपरात अपनी यह राय दी थी कि हिन्दू मजदूरोका कार्य बिलकुल अनुचित था। मेरे इस वक्तव्य-को पढ़कर कुछ हिन्दू मुझपर बहुत नाराज हुए है और उन्होने मुझे इस बातपर कि मैंने हिन्दुओका दोष बताया, चिट्ठियाँ लिखकर बहुत गालियाँ दी है और जली-कटी सुनाई है। उनमे से एक लेखक कहते है कि मै अपना कोई मुसलमानी नाम रख लूँ। मै इन पत्रोका उल्लेख यहाँ यह दिखानेके लिए करता हूँ कि हमारे कुछ लोगोमें अपने मजहबके लिए अधा जोश किस हदतक वढ गया है। हम अपना कोई भी दोष देखना ही नही चाहते। जब किसी धर्म-विशेषके बहुसख्यक अनुयायियोकी सामान्य स्थिति ऐसी हो जाती है तब समझ लेना चाहिए कि वह धर्म अस्त हो रहा है; क्योंकि असत्यकी नीवपर स्थित कोई बात अधिक समयतक नही टिक सकती।

मै तो यह कहनेका साहस करता हूँ कि विना किसी रिआयतके हिन्दू मजदूरोका दोष बताकर मैंने हिन्दूधर्मकी सेवा ही की है। मेरी इस स्पष्टोक्तिपर खुद मजदूरोने भी नाराजगी नही दिखाई थी; वल्कि उलटी उसके लिए कृतज्ञता ही व्यक्त की थी। उनको अपने कृत्यपर पश्चात्ताप हुआ, उन्होने अपने कसूरको कबूल किया और सच्चे दिलसे उसके लिए मुआफी माँगी।

मैंने जो-कुछ खुद अपनी आँखोसे देखा और अपने मनमे अनुभव किया, मै उसे न कहता तो क्या करता? क्या मै गुनहगारोको वचानेके लिए सचाईको छिपाता? जब आधी रातके वक्त हर जगह जा पहुँचनेवाले सवाददाता मेरे पास पहुँचे तब क्या मै उनसे वातचीत करनेसे इनकार कर देता? उस समय जब कि सत्य कहनेका प्रसग था, यदि मै सत्य कहनेमे आगापीछा करता तो मै अपनेको हिन्दू कहनेका अधिकार खो देता; अपनेको काग्रेसके सभापति पदके अयोग्य सावित करता और एक सत्याग्रहीके तौरपर अपने नामको धब्बा लगाता। हिन्दू लोग मुसलमानोपर जो अपराध लगाते हुए नही सकुचाते उन्हे चाहिए कि वे स्वयं उसे न करे अर्थात् पहले बुरा काम करना और फिर झूठ बोलकर उसे छिपाना।

एक पत्रलेखक कहते है, जब दिल्लीमें हिन्दुओंने आपकी सहायता चाही तब तो आपने यह कह दिया, 'क्या करूँ, निरुपाय हूँ', जब लखनऊमें आपको बुलाया गया तो आपने टालमटोल कर दी, किन्तु अव जव हिन्दुओको दोषी ठहरानेका अवसर आया तब आप फौरन मौकेपर जा धमके और आपने उनके सम्बन्धमें विना विचारे अपना

१. देखिए "वक्तव्य: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको", २-७-१९२५।

फतवा दे दिया। पाठक इस बातको जान ले कि मैं वहाँ हिन्दुओकी तरफसे एक हिन्दूके द्वारा निमन्त्रण मिलनेपर तथा पहलेसे वहाँ गये हुए श्री सेनगुप्तके बुलानेपर गया था। मेरी बेबसीके रहते हुए भी जब दरअसल लडाई हो रही हो और खासकर जब दोनो पक्षोकी तरफसे बुलावा आये तो मुझे उनको बचानेके लिए वहाँ दौड जाना चाहिए। जब मुझे किसी झगडेको निपटानेके लिए या रोकनेके लिए एक पक्षके लोग बुलाते है, तब चूँकि एक वर्ग-विशेषके हिन्दुओ और मुसलमानोपर अब मेरा प्रभाव नही रहा है इसलिए मैं अपनी लाचारी बता देता हूँ। मैं समझता हूँ कि इन दोनो हालतोका अन्तर इतना साफ है कि उसे खोलकर बतानेकी आवश्यकता नही है।

परन्तु पत्रलेखक कहते है और मुझसे मिलनेके लिए आये हुए हिन्दुओके एक शिष्टमण्डलने भी कहा कि आपने हिन्दुओकी जो तीव्र भर्त्सना की है उससे मुसलमानोको निर्दोष लोगोपर हमला करनेका प्रोत्साहन मिला है और मुसलमान गुण्डोके हाथों बाजारमे हिन्दू दुकानदारोके लुटने-पिटनेका खतरा पैदा हुआ है। यदि मेरे हिन्दुओके कुकृत्योकी निन्दा करनेका फल यह हो कि मुसलमान लोग कुकृत्य करने लगे तो इससे मुझे दु ख होगा। परन्तु इतना होते हुए भी मैं उचित काम करनेसे पीछे न हटूँगा। फिर मुसलमानोकी बदलेकी कार्रवाइयोसे हिन्दू डरे भी क्यो? यदि हिन्दू मेरे अहिंसा और सहिष्णुताके उपायका अनुसरण न कर सके और मैं जानता हूँ कि जमीन-जायदादवाले लोगोके लिए वह मुश्किल है तो हिन्दुओके लिए जो उपाय सम्भव हो उससे आत्मरक्षा करना उचित ही होगा। हम चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलमान, हम जब अपनी भीरुता छोड देंगे और आत्मरक्षा करनेकी कला सीख लेगे, हम तभी मनुष्य कहला सकेगे। जो लोग स्वय अपनी रक्षा करना न सीखकर औरोके द्वारा अपनी रक्षा करना पसन्द करते है उनके सिरपर एक खास खतरा हमेशा मँडराता रहता है और वे चाहे कितनी ही आँखे क्यो न मूँदे, वह टल नही सकता। मेरी खिदरपुरके हिन्दुओकी भर्त्सनासे उन लोगोकी भर्त्सना अवश्य ही नही होती है जो आक्रमण किये जानेपर उनसे अपनी रक्षा करते है। यदि मैं देखता कि हिन्दुओने पहले खुद मार-पीट नही की है, बल्कि आत्मरक्षाके लिए हर तरहके सकटोका सामना किया है और उसमे प्राण भी दिये है तो मैं उनकी वीरताकी प्रशसा करता। परन्तु जहाँतक मुझे पता है, खिदरपुरमे उनकी सख्या बहुत भारी थी और उन्होने खुद मारपीट शुरू की थी। मुसलमानोने उसके लिए कोई कारण नही दिया था। जिस तरह मैंने गुलबर्गा और कोहाटमे किये गये मुसलमानोके कुकृत्योकी, जो मेरी रायमे बिलकुल अनावश्यक थे, सहज ही भर्त्सना की थी, मैं उसी प्रकार उत्तेजनाका कारण मिले बिना की गई इस हिंसाकी भर्त्सना भी बिना झिझके करूँगा। मैं एक बारके जवाबमे दो वार करनेकी बात भी समझ सकता हूँ, परन्तु किसी किस्मकी उत्तेजना या खास मौकेपर उत्तेजनाके कारणके बिना किये गये वारके सम्बन्धमे अपने मनको कैसे समझा सकता हूँ?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-७-१९२५

२३५. 'टमानी हॉल' क्या है?

देशबन्धुकी स्मृतिमे जो श्रद्धांजलि-सभा की गई थी, उसमे मैंने उनपर लगाये गये टमानी हॉलके तरीके बरतनेके आरोपके विरुद्ध जो सफाई दी थी, उसपर आपत्ति की गई है। आपत्तिका आधार है श्रद्धाजलि-सभामें ऐसी बातका उल्लेख करना। मेरा खयाल है कि सुरुचि क्या होती है, मैं यह समझता हूँ। मैं क्या कर रहा हूँ सो मैं जानता था। मैं कलकत्ताके छात्रोके सम्मुख देशबन्धुका जीवनवृत्त प्रस्तुत कर रहा था। मेरे मनमे देशबन्धु द्वारा टमानी हॉलके तरीके अख्तियार करनेकी जो दबी-दबी चर्चा चलती रहती है, मौजूद थी। और चूँकि इस मामलेमे उनके साथ हुई बातचीत भी मुझे बिलकुल स्पष्ट याद थी, इसलिए मुझे ऐसा लगा कि यदि मैं छात्रों-को यह निश्चय न करा दूँ कि वह आरोप निराधार है तो मैं अपने साथीकी पवित्र स्मृतिके प्रति झूठा बनूँगा। आखिर हम अपने प्रसिद्ध देशवासियोकी स्मृतिको उनके दोषोपर आवरण डालकर तो सम्मानित नही करना चाहते। हमें इस बातकी छूट होनी चाहिए कि हम अपने वीरोकी स्मृतिको सदा अपने हृदयमें रखनेके साथ ही उनके प्रमाणित दोषोंको भी स्वीकार करे। झूठी सुरुचि, सुरुचि नही है। यदि देशबन्धु टमानी हॉलके तरीके बरतनेके दोषी है तो हम इस तथ्यको स्वीकार करे और उनके उदात्ततम गुणोंको अपने हृदयमे रखते हुए उनके इन खास तरीकोंसे सावधान रहे। लेकिन चूँकि मेरा विश्वास था कि वे इन तरीकोको बरतनेके दोषी नही हैं, इसलिए इस बातको कहनेका विश्वविद्यालय सस्थानमे मुझे जो अवसर[1] मिला, मैंने उसे एक बहुत उपयुक्त अवसर माना।

लेकिन टमानी हॉलके तरीके क्या है? यदि इनके सम्बन्धमे मेरी जानकारी सही है तो यह उन गुप्त और प्रकट दुरभिसन्धियोको दिया गया नाम है जिनका आश्रय अमरीकामें एक वर्ग-विशेषके लोग अपना स्वार्थ साधनेके लिए तथा निगमों और पदोंपर कब्जा करनेके लिए लेते थे और उसके लिए जालसाजी, रिश्वतखोरी और हर तरहके सार्वजनिक भ्रष्टाचारका उपयोग करनेमे भी नही झिझकते थे। देशबन्धुके अत्यन्त विश्वस्त सहायकोने और दार्जिलिंगमे स्वयं देशबन्धुने इन आरोपोंका तीव्रतम प्रतिवाद किया था और उनकी जाँच करने एवं रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचारका आरोप सिद्ध होनेपर उसकी सार्वजनिक निन्दा करनेके लिए कहा था। यहाँ टमानी हॉलके तरीकोंके पहले अनिवार्य लक्षणका स्पष्ट अभाव है। देशबन्धु और उनके सहायकोंका कोई निजी स्वार्थ नही था। असल बात तो यह है कि ऐसे लोग उनके साथ अधिक टिक ही नही सकते थे; इसलिए यदि किसीने किसीको रिश्वत भी दी थी तो वह निःस्वार्थ-भावसे दी थी। यो मैं स्वय रिश्वतमें ऐसा कोई फर्क नही करता। देशबन्धु भी नहीं करते थे। उन्होंने मुझसे जोर देकर कहा था कि सरकारने रिश्वतखोरी या भ्रष्टा-

१. देखिए "भाषण: युनिवर्सिटी इंस्टीट्यूट, कलकत्तामें", ३०-६-१९२५।

चारका एक पूर्ण शास्त्र ही रच डाला है, इसलिए हम चाहनेपर भी अपने देशको भ्रष्ट तरीकोसे मुक्त नही कर सकते। सच तो यह है कि हमारी वर्तमान पीढीमे हमने एक सुशिक्षित अनुशासनबद्ध और सुगठित राजनैतिक दलको कौसिलो और विधानसभाओमे पहली बार ही काम करते देखा है। इसलिए ऐसा दल रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचारके बिना सुगठित रह सकता है, यह कुछ लोगोको सम्भव ही मालूम नही होता। सरकारने इस दलको बदनाम करनेका यथाशक्ति पूरा प्रयत्न किया है। दलके विरोधी राजनैतिक दलोने उसके विरुद्ध रिश्वतखोरीकी हर अफवाह और चर्चाको ध्यानसे सुना है। इसमे कोई सन्देह नही है कि कुछ लोग सचमुच यह मानते है कि देशबन्धुने दलको सुगठित रखने और कौसिलमे नाजुक मौकोपर दूसरोका समर्थन प्राप्त करनेके लिए जिन साधनोका आश्रय लिया है उसमे से रिश्वतखोरी भी एक है।

जहाँतक मै जानता हूँ, इस आरोपका कोई आधार नही है। अगर कोई व्यक्ति देशबन्धुके विरुद्ध इस आरोपको साफ-साफ सिद्ध कर सकता हो तो उससे देशबन्धुकी स्मृतिको कोई हानि नही पहुँचेगी। जो-कुछ चुपचाप कहा जाता है, यदि उसे जनता निश्चित रूपमे जान ले तो यह ज्यादा अच्छा है। आखिर यह आरोप केवल देशबन्धु के विरुद्ध तो नही है, बल्कि वह स्वय उनके विरुद्ध न हो कर उनके दलके विरुद्ध है। यद्यपि वे अब हमारे बीचमे नही है। लेकिन उनका दल तो मौजूद है? यदि मै दलके बारेमे कुछ भी जानता हूँ तो मुझे इतना मालूम है कि अपने विरुद्ध भ्रष्टाचार-के प्रमाण प्रस्तुत किये जानेपर उसमे कडी कसौटीपर खरा उतरनेकी सामर्थ्य है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-७-१९२५

२३६. कलकत्ताके मेयर

कलकत्ताके मेयरके चुनावके मामलेमे मेरे हस्तक्षेपपर[1] बगालके कुछ मित्रोने रोष प्रकट किया है। सामान्य शिष्टताका यही तकाजा है कि मै इस सम्बन्धमे अपनी स्थिति प्रकट कर दूँ। इस राष्ट्रीय क्षतिके बाद जब मैने यह निश्चय किया कि बगालके इस महानतम सकटके समयमे मै उसको सहारा दूँगा और जहाँतक सम्भव होगा मै उसको ढाढ़स बँधाऊँगा एव बासन्ती देवीको और साथ ही पितृहीन बच्चोको भी सान्त्वना दूँगा, तब मैने यह भी तय कर लिया था कि मै उनमे से किसीसे भी जबरदस्ती अपनी बात नही मनवाऊँगा और फिर भी वे चाहेगे तो नम्रतापूर्वक सेवा के लिए तैयार रहूँगा। एक दिवगत मित्र और साथीके प्रति मेरा यह एक सीधा-सादा कर्त्तव्य था। अखिल भारतीय देशबन्धु-स्मारक कोषकी स्थापनाके कारण, जिसमे मुख्यत. मेरा हाथ था, मेरा बगालमे रुकना लाजिमी हो गया था। बादकी घटनाओसे यह सिद्ध हो गया है कि मेरा यह निर्णय कितना सही था।

१. देखिए "भाषण: स्वराज्यवादी पार्षदोंके समक्ष", ९-७-१९२५।

लेकिन मैंने यह आशा नही की थी कि मुझे देशबन्धुके स्थानमें कलकत्ताके मेयरका चुनाव करनेमे परामर्श देना पडेगा या मार्गदर्शन करना पडेगा। यह एक ऐसा काम था जिससे खुशीके साथ मै अपना हाथ खीच लेता। लेकिन प्राय एक सिपाहीकी कोई मर्जी नही होती। इस चुनावमे दिलचस्पी रखनेवाले दलोने यह मामला मेरे सामने रखा। और मै इस दायित्वको टाल नही सका, क्योकि मै ईमानदारीसे यह नही कह सकता था कि यह कार्य मेरे सामर्थ्यसे बाहर है। और फिर तो इस भँवरमें एक बार पडनेके बाद इसमे से निकलना मेरे लिए तबतक मुश्किल ही हो गया, जबतक कांग्रेस-नगरपालिका दलने इसे विधिवत् तय नही कर दिया।

मैंने जो परामर्श दिया वह सही था या नही, उसमें नगरका हित था या नही, यह नि सन्देह एक ऐसी बात है जिसके बारेमे विभिन्न मत हो सकते है। मै केवल इतना ही कह सकता हूँ कि मैने वही परामर्श दिया जो मेरी रायमें देशके लिए और महलोकी इस नगरीके लिए सर्वोत्तम था। मेरे सामने मापदण्डके रूपमें एक परम्परा और एक नीति मौजूद थी। लेकिन मेरा कर्त्तव्य यह था कि मै वही काम करूँ जिसे मेरी रायमें देशबन्धु जीवित होते तो करते और जो किसी भी तरह सर्व-विदित और सर्वमान्य नैतिक सिद्धान्तोसे विरुद्ध नही है। कांग्रेसने चार वर्ष पूर्व अपने हितकी दृष्टिसे और रचनात्मक कार्यक्रमको बढानेकी दृष्टिसे नगरपालिकाओं और जिला बोर्डोपर कब्जा करनेका फैसला किया था। इस कब्जेके पीछे खयाल यह नही है कि सफाईकी देखभाल ज्यादा अच्छी हो; बल्कि यह है कि और भी अधिक राज-नैतिक सत्ता प्राप्त हो। इस आकाक्षामे कोई बुराई नही है। सरकारने स्वय अपनी बनाई हुई इन सस्थाओका उपयोग सफाईमे सुधारकी अपेक्षा अपनी सत्ता मजबूत करने और अपनी प्रतिष्ठा बढानेके लिए अधिक किया है। मुझे मालूम है कि लन्दन काउटी कौसिलके चुनाव राजनैतिक प्रश्नोको लेकर लडे जाते है। और जब राज-नैतिक उत्तेजना बढ जाती है तब नगरपालिकाके चुनावोका उपयोग राजनैतिक वाता-वरण नापनेके लिए एक सांकेतिकाके रूपमे किया जाता है। और यदि राजनैतिक उद्देश्योके लिए नगरपालिकाओंका उपयोग करना इग्लैंडमें आवश्यक माना जाता है तो इस देशमे जहाँ समस्त जाति एक विदेशी जातिके राजनैतिक शासनके नीचे दबी पडी है, इसकी आवश्यकता और भी अधिक है। यदि हम एक बार सरकार द्वारा निर्मित तन्त्रका उपयोग करना उपयुक्त मान लेते है तो हमारे लिए राजनैतिक सत्ता प्राप्त करनेके उद्देश्यसे नगरपालिकाओकी सस्थाओपर कब्जा करना एक अनिवार्य कदम हो जाता है। देशबन्धुने कलकत्ता नगरनिगमपर इसी उद्देश्यसे कब्जा करके उसका उपयोग कांग्रेसकी या स्वराज्यदलकी, जिसका अर्थ बगालमे एक ही होता है, सत्ता मजबूत करनेके लिए अत्यन्त प्रभावकारी रूपसे किया था। क्या उन्होने ऐसा करके निगमके हितकी उपेक्षा की थी? मै जोरसे यह कहनेका साहस करता हूँ कि उन्होने उसकी उपेक्षा नही की। इसके विपरीत नगरपालिकाके सम्बन्धमे उनकी आकाक्षा इतनी ही ऊँची थी, जितनी राजनीतिके सम्बन्धमे।

तब उनकी जगह निगमका मेयर किसे बनाया जाता? उनका पद किसको दिया जाये, यह तय करना भी उनके द्वारा स्थापित दलके अधिकारकी बात थी।

यह पद उसको देना उचित था जो दलके महान् प्रधानकी परम्पराको सर्वोत्तम रूपसे निभा सकता था और अपने दलकी प्रतिष्ठामे वृद्धि कर सकता था। साथ ही यह भी मानी हुई बात है कि विशुद्ध नगरपालिकाकी दृष्टिसे वह दलमे भी सर्वोत्तम व्यक्ति हो, यही उचित था। मेरी रायमे जे० एम० सेनगुप्त ऐसे योग्यतम व्यक्ति थे, जिनमे ये सब गुण है। और यदि उन्होने स्वराज्यदलका नेतृत्व करनेकी कृपा की तो वे उस निमित्तसे प्राप्त होनेवाली सभी प्रकारकी सहायताके पात्र थे जो उन्हे श्री देशबन्धुके कर्त्तव्योको शोभाजनक रूपसे और प्रतिष्ठापूर्वक वहन करनेके योग्य बनानेके लिए दी जा सकती थी।

लेकिन क्या वे इन तीनो कर्त्तव्योका भार उचित रूपसे उठा सकते है? वे प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष चुने ही जा चुके थे। वे क्या स्वराज्यदलका नेतृत्व करते रहकर कांग्रेसके रचनात्मक कार्यको पूरा कर सकते है और साथ ही कलकत्ताके मेयरके भारी उत्तरदायित्वको निभा सकते है? यदि वे इन तीनों पदोके कार्य-भारके नीचे दब जाये तो उन्हे इन तीनो पदोका सम्मान देनेसे क्या लाभ? मेरा उत्तर यह है कि अपने सामर्थ्यके सम्बन्धमे सर्वोत्तम निर्णय तो श्री सेनगुप्त ही कर सकते थे। यदि वे सत्ताकी आवश्यकता महसूस करके उसे प्राप्त करना चाहते थे तो उनको उसका दिया जाना ही उचित था। उसे उनपर बलात् लादना ठीक नही होता। यदि श्री सेनगुप्त कोई कुचक्री है और देशके हितकी अपेक्षा अपना स्वार्थ ही अधिक सिद्ध करते है तो नि.सन्देह यह प्रयोग एक खतरनाक प्रयोग करना कहलाता। उस अवस्थामे उनको स्वराज्यदलका नेता बनाना भी खतरनाक था। यदि वे सन्देहसे परे है और उनको अपने कामको पूरा करनेके लिए मेयरके पदकी जरूरत है और यदि वे उसके भारको गौरवास्पद रूपमे वहन कर सकते है तो उन्हे मेयरका पद देना उचित है। देशबन्धुके उत्तराधिकारीकी बात तो दूर, कांग्रेसी कहलानेवाला कोई व्यक्ति भी केवल सम्मानकी खातिर सम्मानकी माँग नही कर सकता। मेरी दृष्टिमे श्री सेनगुप्तकी स्थिति मैक्स्विनी-जैसी है जो अपने सम्मानके लिए नही, बल्कि उस खतरेका सामना करनेके लिए जो ऊँचे पदके कारण उनके सामने मौजूद था, कॉर्कके लार्ड मेयर बनना चाहते थे। देशबन्धुके उत्तराधिकारीकी स्थिति सम्भवत मैक्स्विनीकी स्थितिसे भी ज्यादा खतरनाक है। मैक्स्विनीने अपनी जानकी बाजी लगा दी थी। देशबन्धुके उत्तराधिकारीको अपनी समस्त ख्याति दाँवपर लगानी पडी। देशबन्धुने त्याग और सम्मानका जो मापदण्ड छोडा है उससे तनिक भी हटते ही उनके उत्तराधिकारीकी ख्याति जीवन-भरके लिए समाप्त हो सकती है और उनकी यह जीवित मृत्यु शारीरिक मृत्युसे ज्यादा बुरी होगी। श्री सेनगुप्त द्वारा कलकत्ताके मेयरके पदकी माँगका समर्थन करते हुए यह बात मैने अपने मनमे सोची और अपने मित्रोको समझाई और कांग्रेस दल तथा कांग्रेस नगरपालिका दलने मेरे इस तर्कको समझा और सराहा और यह कहते हुए मुझे प्रसन्नता होती है कि थोडे-से लोगोकी असहमतिके साथ श्री सेनगुप्तकी नामजदगीको मजूर किया, मै यह आशा करता हूँ कि वे उनका भार जितना हल्का कर सकते है, उतना करेगे। मुझे अपने मनमे कोई सन्देह नही है कि श्री सेनगुप्त देशबन्धु द्वारा स्थापित ऊँचे मानदण्डके अनुकूल आचरण करनेका प्रयत्न करेगे।

लेकिन कोई इसे सदाके लिए एक मिसाल न समझ ले। विशुद्ध सिद्धान्तकी दृष्टिसे किसी एक व्यक्तिको, चाहे वह कितना ही योग्य क्यो न हो, तीन महत्त्वपूर्ण पद सौंपना अनुचित है। कोई भी आदमी तीन-तीन भारी कामोको पूरी तरहसे नही निभा सकता। हर आदमीके सामने अपनी शक्ति बढ़ानेका प्रलोभन भी बहुत अधिक होता है। जो प्रलोभन टाला जा सकता है उसके प्रति किसीके मनमे लोभ उत्पन्न करना अनुचित है। इसके अलावा, राजनैतिक दल चाहे तो नगरपालिकाओको अपने अधिकारमे ले भले ही ले; किन्तु उनका सक्रिय राजनीतिज्ञोको नगरपालिकाओकी जिम्मेदारी सौंपना अनुचित होगा। इस गुलामीमें भी हमें नगरपालिका-सम्बन्धी मामलोको उनके गुण-दोषके आधारपर ही तय करना चाहिए और नगरपालिका-सम्बन्धी मामलोके ऐसे विशेषज्ञ तैयार करने चाहिए जो नगरपालिका-सम्बन्धी अपने कर्त्तव्योको पूरा करनेमे राजनैतिक पहलूका विचार न करे। यदि हम इन सब दृष्टियोसे सावधान नही रहेगे तो नगरपालिकाओपर कब्जा करनेका हमारा प्रयोग निश्चय ही असफल हो जायेगा। नगरपालिकाओके कार्योंको सँभालनेके लिए एक विशेष प्रशिक्षणकी आवश्यकता है, और उसके लिए एक व्यस्त राजनीतिज्ञ सदा उपयुक्त नही होता। इसलिए नगरपालिकाका सदस्य जबतक नगरपालिकाकी कुर्सीपर बैठा हुआ है तबतक यदि वह राजनीतिसे सर्वथा मुक्त रहे तो इससे सम्बन्धित राजनैतिक दलको अधिकसे-अधिक लाभ पहुँचता है, यह ठीक उसी तरहकी बात है जैसे कोई व्यक्ति न्यायाधीशका पद ग्रहण करनेपर वकील या राजनीतिज्ञ नही रहता। मैंने नगरपलिकाके कार्योंका प्रेमी होते हुए और उनको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जानते हुए भी एक व्यक्तिको इन तीनो पदोका भार ग्रहण करनेकी खतरनाक सलाह क्यो दी, इसका कारण यह है कि मैं मानता हूँ कि यह समय असाधारण है, उसके लिए कोई कड़ा ही नही खतरनाक कदमतक उठानेकी जरूरत है। देशबन्धु दास-जैसे लोग हमेशा पैदा नही होते। उनके निधनसे एक ऐसा स्थान रिक्त हो गया है जिसका भरना किसी आदमीके लिए सम्भव नही है। जिस आदमीको उनका भार उठाना है उसको असधारण सहायकोकी आवश्यकता है और यदि उसमें साधारण योग्यता और ईमानदारी है तो उसे सहायता मिलनी चाहिए। लेकिन जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे आशा है कि यह प्रयोग मेरे जीवनमें पहला और अन्तिम प्रयोग रहेगा। मैंने अपने पूरे दायित्व-को और इस कार्यके खतरेको समझते हुए इसका समर्थन किया है। ईश्वर श्री जे० एम० सेनगुप्तको इसके लिए आवश्यक बुद्धि और शक्ति दे। कलकत्ताके नागरिक विश्वास रखे कि एक सक्रिय राजनीतिज्ञको मेयरकी तरह चुननेमें मशा कलकत्ताके नागरिक जीवनके स्वस्थ विकासमे बाधा पड़ने देनेका नही है। इससे पहले भी ऐसा हुआ है। हमारे सामने श्री फीरोजशाह मेहता इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। निगमका उनसे अच्छा अध्यक्ष या उनसे अच्छा पार्षद पहले कभी नही हुआ। पिछले वर्ष श्री विट्ठलभाई पटेलने उसी परम्पराको निबाहा और उनके विरोधी भी स्वीकार करते हैं कि उन्होने अपने ऊँचे पदका कार्यभार बड़ी योग्यतासे और निष्पक्षतासे वहन किया है जबकि विट्ठलभाई पटेल तो हर तरह एक सक्रिय राजनीतिज्ञ ही हैं। मैंने

अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए वस्तुत नगरपालिकाके आचारका उच्चतम स्वरूप सामने रखा है। हमे इस स्तरका नगरपालिका-आचार भारतमे अभी विकसित करना है और मै आशा करता हूँ कि इसका गौरव काग्रेसको मिलेगा। किन्तु यह बात तभी बनेगी जब हमे ऐसे लोग मिलेगे जो अपनी महत्त्वाकाक्षाकी पूर्ति उसी समय मानेगे जब उनके नगरोकी नालियाँ और पाखाने बिलकुल साफ-सुथरे रहने लगेगे, जब वे सस्तेसे-सस्ते भावोमे शुद्धसे-शुद्ध दूध जुटा सकेगे एव उनके शहर वेश्यागमन और शराबखोरीसे मुक्त हो जायेगे।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-७-१९२५

२३७. टिप्पणियाँ

स्मारकके सम्बन्धमें दौरा

मै इस समय बगालमे जो दौरा कर रहा हूँ वह स्मारक सम्बन्धी दौरा बन गया है। मेरी इच्छा नही थी कि मै इस समय कलकत्ता छोडूँ और जबतक १० लाख रुपये इकट्ठे नही हो जाते तबतक यहाँसे जाऊँ। लेकिन, मैंने जिन जिलोमे जानेका वचन दिया है उन जिलोके लोगोको निराश कर सकनेका मुझमे साहस नही है। लेकिन मैंने उन लोगोको चेतावनी दे दी है कि इस बार मेरा दौरा देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए धनसंग्रह करने और उनका सन्देश देनेके निमित्त होगा। केवल स्मारकके दृष्टिकोणसे मुझे यह दौरा करते हुए प्रसन्नता होती है। गरीब लोगोने — स्त्री-पुरुष दोनोने ही सर्वत्र आश्चर्यजनक तत्परता दिखाई है। उनको समझाने-बुझानेकी कोई जरूरत नही पडी। उन्होने माँगते ही यथाशक्ति पूरा सहयोग किया है। मैंने अकसर देखा है कि बूढी विधवाएँ अपने पल्लेकी गाँठ खोलकर उसमें बँधी हुई रकम दे देती हैं। अकसर मेरी यह इच्छा है कि मै ऐसे दानको लौटा दूँ, लेकिन जब मैंने इसपर दुबारा विचार किया तो मैंने उसके बारेमे अपने मनको समझा ही नही लिया, बल्कि मुझे ऐसा लगा कि उसको स्वीकार करना एक प्रिय कर्त्तव्य ही है। क्या देशबन्धुने अपना सर्वस्व दान नही कर दिया था और जो अस्पताल बनाया जायेगा, क्या उससे सकटग्रस्त स्त्रियोको लाभ नही मिलेगा? क्या जल्दी ही तैयार होनेवाली उस सस्थामे, कुछ गरीब विधवाओंको नर्सें बननेका प्रशिक्षण नही दिया जायेगा? यह ईश्वरीय नियम है कि जो मनुष्य किसी अच्छे उद्देश्यके लिए अपना सर्वस्व दे देता है उसको उससे दस गुना फल मिलता है। मै इस नियमपर सन्देह क्यो करूँ? सम्पन्न लोगोने भी धन देनेमे आनाकानी नही की। मुझे शहरोमे यह आशा न थी कि स्त्रियोकी सभाओंमे जेवर मिलेगे। लेकिन ये नेक बहनें कही भी जेवर देनेमें नही चूकी। सिराजगजमे दो बहनोंने अपनी सोनेकी भारी-भारी जजीरे दान कर दी। यह भी उल्लेखनीय है कि उन चारो जगहोमे जहाँ इन टिप्पणियोको लिखनेके समयतक

में जा चुका हूँ, स्त्रियोंकी सभाओंमें जो धन इकट्ठा हुआ है, वह पुरुषोंकी सभाओंमें इकट्ठी की गई राशिके बराबर ही है; यद्यपि पुरुषोंकी सभाओंमें उपस्थिति हजारोंमें होती थी और स्त्रियोंकी सभाओंमें हजारसे भी कम हुआ करती थी।

गरीबीकी निशानी

इस धनसंग्रहके दौरान मुझे कई बातें देखने और समझनेका मौका मिला है। इसने जनसाधारणकी गरीबीकी मूरत आँखोंके सामने खड़ी कर दी। मैं हजारों लोगोंसे कोषमें चन्दा ले रहा हूँ। सभी सभाओंमें एक-एक पैसा देनेवाले तो बहुतायतसे होते हैं। बहुत-से लोगोंने धेलेतक दिये हैं। इसका कारण यह नहीं है कि लोग इससे ज्यादा रकम देना नहीं चाहते थे; बल्कि इसका कारण, जहाँतक मैं जानता हूँ, यह है कि उनके पास ज्यादा था ही नहीं। उन्होंने मेरे सामने आकर अपनी गाँठ खोली या अपनी जेबें खाली कीं।

मौन कार्यकर्त्ता

सिराजगंजसे ईश्वरदीतक हमने एक पैसेन्जर गाड़ीमें यात्रा की है। यह गाड़ी एक ब्रांच लाइनपर चलती है। इसपर स्टेशन १०–१० मिनट बाद आ पाते हैं। स्टेशनों-पर गाँवोंके लोग सैकड़ों की संख्यामें और कहीं-कहीं तो हजारोंकी संख्यामें इकट्ठे हुए और उन्होंने चन्दा दिया। इस सारे जबर्दस्त प्रदर्शनकी व्यवस्था बंगालके तीन निःस्वार्थ युवकोंने की है। उनके नाम अखबारोंमें कभी नहीं छपेंगे। वे शायद यह चाहते भी नहीं कि उनकी चर्चा की जाये। उनका खरा काम ही उनका विज्ञापन है। यदि वे न होते तो गाँवोंके लोगोंको कुछ पता ही न चलता। ये नवयुवक उनके चलते-फिरते अखबार हैं। क्यों कि ये लोग न तो पढ़ना जानते हैं और न लिखना। जो थोड़े-से लोग पढ़ना या लिखना जानते भी हैं वे इतने गरीब हैं कि अखबार नहीं खरीद सकते। इस व्यवस्थाका सारा श्रेय भारतके इन वीर और त्यागी सेवकोंको प्राप्त है। इन स्टेशनोंपर हुई हर मुलाकात अत्यन्त व्यवस्थित, शान्तिपूर्ण, गम्भीर और काम-काजी ढंगसे हुई। स्वराज्य निश्चय ही इन युवकोंकी मार्फत मिलेगा, जिन्हें अपने देशसे प्रेम है। मुझे रेल अधिकारियोंका उल्लेख करना भी न भूलना चाहिए। बड़े-से-बड़े और छोटे-से-छोटे अधिकारीतक ने मेरी इससे पहलेकी यात्रामें असाधारण शिष्टता और जागरूकता दिखाई है; लेकिन अब मुझे पहलेसे भी ज्यादा उनकी सहायताकी जरूरत है। छोटे स्टेशनोंपर कुछ ही मिनटोंमें हजारों लोगोंसे रुपया इकट्ठा करनेका काम कोई साधारण काम नहीं है; फिर भी वह सफलतापूर्वक किया गया है क्योंकि मेरे कामको यथासम्भव हलका बनानेमें लोगों और स्वयंसेवकोंके साथ इन अधिकारियों-ने भी सहयोग दिया है। यह ध्यान रहे कि मुझे सभी स्टेशनोंपर गाड़ीसे उतरना, भीड़में जाना, रुपया इकट्ठा करना और समयपर अपने डिब्बेमें वापस आना पड़ता था। लोगोंसे अधिकतम योगदान प्राप्त करनेमें देशबन्धु अपने जीवनकालमें जितने शक्तिशाली थे, मरकर वे उससे अधिक शक्तिशाली हो गये हैं। उनके देशवासी यह अनुभव करते हैं कि वे उनके प्रति और इसीलिए अपने देशके प्रति ऋणी हैं।

घरका क्या हो?

लोग इस बातमे सन्देह कर रहे हैं कि अस्पताल उसी इमारतमे जो दो पीढियोसे देशबन्धुके परिवारकी सम्पत्ति है, खोला जायेगा या नही। मेरा खयाल है कि जिस अपीलपर लॉर्ड सिन्हा और अन्य लोगोने हस्ताक्षर किये है उसमे यह बात साफ-साफ बता दी गई थी। वह इमारत अस्पतालके लिए और ऐसे ही दूसरे कामोके लिए न्यासियोके हाथमे आ चुकी है। उसकी कीमत तीन लाखसे ज्यादा है, किन्तु उसपर दो लाखसे ज्यादा कर्ज है। यह कर्ज स्वभावत उस रुपयेमे से चुकाया जायेगा जो इस समय इकट्ठा किया जा रहा है। लेकिन तब स्मारकके न्यासियोके हाथोमें दो लाख रुपये देकर तीन लाखकी सम्पत्ति आ जायेगी। दूसरे शब्दोमे कहूँ तो जब न्यासी १० लाख रुपये इकट्ठे कर चुकेगे तब उनकी पूंजी ११ लाख हो जायेगी।

शंकालुओंसे

क्या मै सचमुच दस लाख रुपया इकट्ठा करना चाहता हूँ? क्या मुझे ऐसा कर पानेकी आशा है? कई व्यक्ति अब भी मुझसे प्रश्न करते है। मुझे अभीतक एक भी व्यक्ति ऐसा नही मिला है जिसने स्मारक कोषके लिए कुछ देनेसे इनकार किया हो। मै तो इतना ही कह सकता हूँ कि अगर बगाल इसके लिए दस लाख रुपये नही देता तो मुझसे उसे ठीकसे पहचाननेमे भूल हुई कहलायेगी। इस रकमको इकट्ठा करनेके लिए सिर्फ समय और सगठनकी आवश्यकता है। मुझे इस विषयमे रत्ती-भर भी सन्देह नही है कि हम यह कोष इकट्ठा कर पायेंगे।

उत्साहप्रद नहीं?

स्मारकका उद्देश्य उत्साहप्रद नही है, इस आरोपका उत्तर मै स्थानीय रूपसे दे चुका हूँ। शंका उठानेवाले लोगोका अभिप्राय यही है कि इस कोषका उपयोग राजनैतिक कार्योके लिए किया जाता तो अच्छा होता। लेकिन मै उन्हे याद दिला दूँ कि अपील निकालनेवालोके सामने कोई विकल्प ही न था। जो लोग देशबन्धुकी स्मृतिका सम्मान करना चाहते है वे यदि उनकी इच्छाका पालन न करते तो वह उनका सम्मान करना न होता। मै यह मानता हूँ कि उनकी स्मृतिको अमर बनानेके लिए उनके पीछे अवशिष्ट हम लोग जो-कुछ इकट्ठा कर सकते है उसमे से पहले वही काम किया जाना चाहिए जिससे उनकी इच्छा पूरी होती हो। देशबन्धुने जब अपनी सम्पत्ति सौपी थी तो वे जानते थे कि वे क्या कर रहे है। उन्होने जान-बूझकर उसे राजनैतिक कार्यके लिए नही बल्कि धार्मिक कार्यके लिए दानमे दिया था। इसलिए उनके पीछे यहाँ रह जानेवाले लोगोका कर्त्तव्य इतना ही नही है कि हम राष्ट्रके लिए इस घरको ले ले, बल्कि यह भी है कि दान करनेवाला जिस-जिस उद्देश्यके लिए उसका उपयोग करना चाहता था उसको उसी उद्देश्यके लिए काममे लाया जाये। इसलिए मेरी रायमे इस इमारतमे स्त्रियोको अस्पताल और नर्सोके शिक्षण-की सस्था बनानेके लिए बगाल नैतिक-रूपसे कर्त्तव्यबद्ध है। मैने सुना है कि बगालो कुछ जगह स्थानीय स्मारक बनानेके लिए रुपया इकट्ठा कर रहे है। मुझे आशा है

कि प्रत्येक नगरमे उस महान् देशभक्तके अनुरूप स्मारक बनाया जायेगा, लेकिन उसके लिए अभी उपयुक्त समय नही आया है। मेरी विनम्र सम्मतिमे हर बगालीकी, जिसे देशबन्धुकी स्मृति प्रिय है, प्रतिष्ठा इसीमे है कि वह स्थानीय स्मारकके लिए एक भी पैसा देनेसे पहले अखिल बगाल स्मारकके लिए १० लाख रुपये इकट्ठा करने-का काम पूरा करे। बगालके बाहर रहनेवाले बगाली सचेत हो जाये। उन सबने अभी अपना रुपया नही भेजा है। वे सब बगाली, जो देशबन्धुसे परिचित थे, पूरा जोर नही लगायेंगे तो रुपया इकट्ठा करनेमे अनुचित विलम्बकी सम्भावना है। इस-लिए मुझे आशा है कि जो बगाली इन टिप्पणियोको पढेंगे वे अपने-अपने क्षेत्रोमे अधिकसे-अधिक चन्दा लेनेके लिए पूरी शक्तिसे जुट जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १६-७-१९२५

२३८. शंका-निवारण

आजकल मुझे देशबन्धु स्मारकके लिए द्रव्य इकट्ठा करने कई सज्जनोके यहाँ जाना पड़ता है। ऐसे धनिक महाशयोंमे श्री साधुराम तुलारामजी भी एक है। उनके यहाँसे चन्दा तो अच्छा मिला ही; साथमे वहाँ कुछ धर्मकी चर्चा भी हुई। चर्चामे अस्पृश्यताका विषय भी आया। किसी महाशयने मुझसे कहा कि अखबारोमे ऐसी खबर छपी है कि जिनको हम अस्पृश्य मानते है, मै उनसे रोटी-बेटी व्यवहार करनेको भी कहता हूँ। इस शकाका मैने जब निवारण किया तो उन भाइयोको जिन्होने प्रश्न किया था, वह आश्चर्यजनक प्रतीत हुआ और उन्होने मुझसे कहा कि जो बात आपने यहाँ कही है उसका साराश आप 'हिं० न० जी०' मे दे दीजिए। मैने उनकी सलाहको मान लिया। उत्तरका सारांश मै यहाँ देता हूँ।

प्रथम तो जनताको मालूम होना चाहिए कि मै अखबार नही पढता हूँ, और यदि पढ भी लेता हूँ तो जो-जो गलत बयानियाँ मेरे नामपर छपती है, उन सबको दुरुस्त करना मेरे लिए असम्भव है। इसलिए जिस किसीके मनमें शंका पैदा हो वह मुझे पूछ लें कि मैने क्या कहा था। जैसे इसी अस्पृश्यताके विषयमे किसीका यह छाप देना कि मै अस्पृश्य भाइयोके साथ रोटी-बेटी व्यवहार चाहता हूँ या मै उसको उत्तेजना देता हूँ, भूल है। मैने हजारों बार स्पष्ट रूपमें कह दिया है कि अस्पृश्यता-नाशका यह अर्थ कभी नही है कि रोटी-बेटी व्यवहारकी मर्यादा तोड दी जाये। रोटी-बेटी व्यवहार किसके साथ किया जाये और किसके साथ नही, यह एक जुदा ही बात है और फिलहाल उसका निर्णय करनेकी कोई आवश्यकता मुझे प्रतीत नही होती। मेरा तो यह भी विश्वास है कि दोनो प्रश्नोको साथ मिलानेसे जिस सुधारको हम आवश्यक मानते है उसमें भी बाधा आ जायेगी। अस्पृश्यताको दूर करना प्रत्येक हिन्दू-धर्मावलम्बीका कर्त्तव्य है। इसके साथ किसी भी दूसरे विषयको मिलानेसे हानि होगी।

हाँ, जल-ग्रहण करनेके विषयमे मुझे कुछ कहना है। यदि हम शूद्रके हाथसे स्वच्छ जल ग्रहण करे, हम करते भी है और हमे करना भी चाहिए तो फिर हम अस्पृश्यके हाथसे भी स्वीकार करे। मै तो चार वर्ण ही मानता हूँ। अस्पृश्य-जैसा कोई पाँचवाँ वर्ण ही नही है। इसलिए हम अस्पृश्यताको मिटाकर अस्पृश्य माने जानेवाले हिन्दुओका दु ख दूर करे, हिन्दू धर्मकी शुद्धि करे और शुद्ध बने। दूसरे शब्दोमे इस बातको कहूँ तो निन्दा और घृणाके लिए किसी धर्ममे स्थान नही है। अस्पृश्यतामे घृणाभाव है। इस घृणाभावको हम मिटा दे। हिन्दू धर्म सेवाधर्म है। अस्पृश्य कहे जानेवाले लोगोको हम सेवासे वचित क्यो रखे?

हिन्दी नवजीवन, १६-७-१९२५

२३९. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

१६ जुलाई, १९२५

प्रिय च० राजगोपालाचारी,

चाहे जो हो, मुझे आपकी कुशलताका पत्र तो मिलते ही रहना चाहिए। इस समय मेरी मन स्थिति ऐसी ही है। शारीरिक और बौद्धिक तौरसे मै जिस वातावरणमें रहता हूँ, मुझपर उसका बिलकुल असर नही पडता, पर वहाँ मेरी परीक्षा तो होती ही रहती है। मेरी आत्मा जिस ससारमे रहती है वह भौतिक दृष्टिसे मुझसे दूर है; पर उसका मुझपर असर पडता है और मै चाहता हूँ कि असर पडे भी। आप उसी ससारमे रहते है, और शायद मेरे सबसे नजदीक है। मेरी यह आन्तरिक इच्छा है कि जो-कुछ भी मै करता हूँ या सोचता हूँ, उसपर आपकी स्वीकृतिकी मुहर हो। हो सकता है कि मै हर बातमे आपकी स्वीकृति न पा सकूँ; पर आपका निर्णय जाननेकी अभिलाषा मुझे अवश्य रहती है।

अब आप समझ गये होगे कि दूसरे बहुत-से कारणोके अतिरिक्त मै आपके पत्रकी किसलिए प्रतीक्षा करता रहता हूँ। आप मुझे हर सप्ताह, पोस्टकार्ड ही क्यो न हो, पत्र अवश्य लिखे। महादेव, देवदास, प्यारेलाल आपको अपने पत्रो द्वारा यहाँकी गति-विधियोसे अवगत कराते रहेगे।

आपको अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना चाहिए।

आपकी साधना इसीमे है कि आप अपने क्षेत्रका विकास करे तथा हाथ-कताईके अपने सिद्धान्तको व्यवहारिक रूप दे। यदि अन्तमे यह व्यावहारिक सिद्ध न हो तो भी इससे हमारी और ससारकी कोई हानि नही होगी क्योकि मै जानता हूँ कि इस कार्य-क्रममे हमारा पूर्ण विश्वास है। यदि इसमे कोई सहज खराबी नही है तो हाथ-कताईका हमारा सिद्धान्त तभी व्यावहारिक माना जा सकता है जब भारतके असख्य गाँवोमें, घरोमे खाना बनानेके समान ही, बिना किसी सरक्षणके हाथ-कताई और खादी अपने पैर जमा लेगी।

जो-कुछ मैं कहना चाहता था, उसके लिए निश्चय ही यह एक बडी भूमिका हो गई। पिटका एक तथा केलप्पनके कई पत्र आये हैं। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि यदि स्थानीय जनताका खयाल कुछ और न हो तो हमे पूर्वी द्वारपर एक सत्याग्रही बिठाये रखना चाहिए। हो सकता है आपका निर्णय कुछ और हो। आप केलप्पनको पत्र लिख दें। वह एक अच्छा और कामका आदमी लगता है।

सस्नेह,

आपका,
बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२४०. पत्र: डब्ल्यू० एच० पिटको

दौरेपर
१६ जुलाई, १९२५

प्रिय श्री पिट,

आपके लम्बे और दिलचस्प पत्रके[1] लिए धन्यवाद। आपके पत्रके बारेमे मैं फिलहाल समाचारपत्रोमे कुछ नही लिखूंगा। पर मुझे लगता है कि सिद्धान्त और अनुशासनकी दृष्टिसे जहाँ प्रवेश निषिद्ध है वहाँ किसी सत्याग्रहीको तैनात करना आवश्यक है। मेरे विचारसे राज्यकी ओरसे इस सम्बन्धमे एक सुस्पष्ट घोषणा की जानी चाहिए। अस्पृश्योकी दशा पराश्रितो-सी नही होनी चाहिए। पर पहले ही की तरह मैं जल्दीमे कुछ भी नही करूँगा और कोई भी अगला कदम उठानेसे पहले आपको लिखूंगा। तथापि मुझे आशा है कि प्रवेश सम्बन्धी निषेध जो अभीतक बरकरार है, बिना किसी सोधी कार्रवाईके शीघ्र ही समाप्त हो जायेगा। और दूसरे मन्दिरोके बारेमे क्या रहा?[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ११०९८) की फोटो-नकलसे।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि इससे पहले पिटने गांधीजीको एक तार भेजा था, जो इस प्रकार था: "विस्तारसे लिख रहा हूँ। अभी कोई फैसला न लें।"

२. पिटके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ३। इससे पहले पिटको गांधीजी द्वारा केलप्पनको भेजे तारकी एक प्रति मिली प्रतीत होती है, जिसमें वाइकोम मन्दिरके केवल पूर्वी द्वारपर धरना देनेका सुझाव था; परन्तु यह तार उपलब्ध नही है।

२४१. पत्र : मणिबहन पटेलको

[कालीघाट
कलकत्ता]
गुरुवार [१६ जुलाई, १९२५][1]

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हे दूसरी चूडियोकी भी अभी जरूरत हो तो लिखना। डाकसे भेज दूंगा। डाह्याभाई कलकत्तेके राष्ट्रीय मैडिकल कालेजमे पढ़ेगा? वह अच्छा चल रहा दीखता है। अथवा डाह्याभाईकी हार्दिक इच्छा क्या है? मै इतना काममे फँसा हूँ कि लम्बे पत्र लिख ही नही पाता।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — ४ : मणिबहेन पटेलने

२४२. प्रस्ताव : स्वराज्यदलकी बैठकमें[2]

कलकत्ता
१६ जुलाई, १९२५

१ स्वराज्यदलकी यह महापरिषद् देशबन्धु चित्तरजन दासकी असमय मृत्युके कठोर आघातपर समस्त राष्ट्रके साथ दु खी है और ऐसा अनुभव करती है कि दलने अपना संस्थापक, उसे कठिनाइयोमे गिरनेसे बचानेवाला, वगालमे उसे एकके वाद एक विजय दिलानेवाला, दलमे आत्मबलिदान और अनुशासनका मानदण्ड स्थापित करनेवाला, सच्चा मार्गदर्शक खो दिया है। दल उनके ऋणसे कभी उऋण नही हो सकता। परिषद् श्रीमती बासन्ती देवी और उनके परिवारके प्रति अपनी सवेदना प्रकट करती हैं।

२ अखिल भारतीय स्वराज्यदलकी महापरिषद् २ मई, १९२५को फरीदपुरमे दलके दिवगत नेता देशबन्धु चित्तरजन दास द्वारा दिये गये भाषणमे प्रकट किये गये हिंसा सम्बन्धी उनके विचारो तथा उसमे हिंसाकी कठोर भर्त्सना, सरकारके साथ सम्मान-जनक सहयोग करने और उनकी शर्तोका पूर्ण समर्थन करती है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. सम्भवत: प्रस्तावोंका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था। अखिल भारतीय स्वराज्यदलकी महा-परिषद्की बैठक प० मोतीलाल नेहरूकी अध्यक्षतामें १४८, रसा रोडपर हुई थी। गाधीजी और सरोजिनी नायडूको उसमें विशेष तौरपर आमन्त्रित किया गया था।

तथापि परिषद् परम आदरणीय भारत मन्त्री द्वारा हाल ही में लॉर्ड सभामें की गई घोषणापर खेद प्रकट करती है, क्योंकि इसमें दिवंगत अध्यक्ष द्वारा पेश किये गये प्रस्तावकी कोई प्रतिक्रिया दिखाई नहीं पड़ती, इतना ही नहीं बल्कि उस घोषणाकी शैली और भाषा कुछ ऐसी है कि उससे सम्मानजनक सहयोग असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो गया है।

इसलिए परिषद् इस घोषणाके आधारपर स्वराज्यदलकी नीतिमें किसी प्रकारका परिवर्तन करनेका कोई कारण नहीं देखती। फिर भी यदि भारत सरकार द्वारा की जानेवाली अन्तिम घोषणा, जिसका जिक्र लॉर्ड बर्कनहेडने किया है, देशकी इस समयकी आवश्यकताओंको देखते हुए उचित हुई तो वह इसपर दुबारा गौर करनेको तैयार है।

[अंग्रेजीसे]

फॉरवर्ड, १७-७-१९२५

२४३. भाषण: स्वराज्यदलकी बैठकमें[1]

कलकत्ता

१६ जुलाई, १९२५

बैठककी कार्रवाई समाप्त होनेपर गांधीजीने उपस्थित लोगोंके सम्मुख सदस्यताके लिए कताईकी शर्त न हटानेके प्रश्नपर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि यहाँ स्वराज्य-वादियोंमें से काफी बड़ी संख्यामें लोग उपस्थित हैं। यदि आप लोग कहें कि कताईकी शर्त हटा दी जानी चाहिए तो इसके लिए मुझे अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक बुलानी होगी। व्यक्तिगत रूपसे मैं यह मानता हूँ कि कताई-सदस्यताके लिए पिछले छः महीनोंमें बहुत काम किया गया है और मुझे आशा है कि शेष आधे वर्षमें और भी अधिक काम होगा। पर फिर भी यदि आप इस शर्तको हटाना ही चाहते हैं तो मैं इसमें और देर नहीं करूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, १९-७-१९२५

१. पण्डित मोतीलालकी अध्यक्षतामें देशबन्धुके निवासपर हुई स्वराज्यदल महापरिषद्की इस बैठकमें गांधीजीको विशेष रूपसे बुलाया गया था। बैठकमें श्रीमती सरोजिनी नायडू, सर्वश्री वि० झ० पटेल, न० चि० केलकर, डॉ० अणे, डॉ० मुंजे, टी० प्रकाशम्, एस० श्रीनिवास आयंगार, रंगास्वामी अय्यंगार और जे० एम० सेनगुप्त भी उपस्थित थे।

२. इसपर जे० एम० सेनगुप्त और प० मोतीलाल नेहरूने कहा कि स्वराज्यवादियोंको कांग्रेसके साथ किये समझौतेपर कायम रहना चाहिए। इसे तोड़ना स्वराज्यवादियोंका, जो सब कांग्रेसी हैं, कांग्रेसकी नीतिसे हटना ही होगा।

२४४. भाषण : स्वराज्यदलकी बैठकमें[1]

कलकत्ता
१७ जुलाई, १९२५

महात्माजीने, जो बैठकमें उपस्थित थे स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि यदि आप सदस्यता-सम्बन्धी कताईकी शर्तको हटाना ही चाहते हैं तो मैं आपकी माँगको एकदम मानकर अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक बुलाऊँगा। किन्तु फिर मेरे सम्मुख कांग्रेसकी कार्य-समितिकी अध्यक्षतासे त्यागपत्र देकर चरखा और खद्दरके प्रसारके लिए प्रचार करनेके अलावा और कोई चारा नहीं रह जायेगा। मैं स्वराज्यवादियोंको समझौतेसे मुक्त करके कांग्रेसके समादेशके प्रति उनके उत्तरदायित्वसे उन्हें पूरी तरह बरी करनेको तैयार हूँ। समझौतेके अनुसार कताई-सदस्यताका पूरे एक सालतक लागू रहना अनिवार्य था और इसी कारण अधिकतर स्वराज्यवादी इसे पूरे एक कार्यकाल तक लागू रखनेके पक्षमें थे। पर बहुमत यदि इस शर्तको हटानेके पक्षमें है तो उनकी इच्छाको ध्यानमें रखते हुए इस समझौतेको तोड़ दिया जाना चाहिए। अन्तमें उन्होंने कहा कि यदि कांग्रेस कताई-सदस्यताको समाप्त कर देती है तो जिस प्रकार कांग्रेसमें रहते हुए देशबन्धु दासने स्वराज्य दलकी स्थापना की थी उसी प्रकार मैं एक कताई-संस्थाकी अलग स्थापना करूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १८-७-१९२५

१. महापरिषद्की यह बैठक कताई-सदस्यताको समाप्त करनेके प्रश्नपर चर्चा करनेके उद्देश्यसे चितरंजन दासके दामाद एस० सी० रायके निवास स्थानपर हुई थी।

२. निश्चित हुआ कि सितम्बरके अन्त या अक्तूबरके प्रारम्भमें कताई सदस्यतापर विस्तारसे चर्चा करनेके लिए अ० भा० का० कमेटीकी बैठक बुलाई जाये। विवरणके अनुसार, "बैठकके अन्तमें गांधीजीने पण्डित मोतीलाल नेहरूको एक पर्चा लिखकर भेजी कि चूँकि कांग्रेसमें बहुमत स्वराज्यवादियोंका है, इसलिए स्वराज्यदलके अध्यक्षके नाते पण्डितजीको ही कांग्रेस कार्यसमितिकी अध्यक्षता भी सँभाल लेनी चाहिए। स्वराज्यवादियोंके खेमेमें इससे हलचल मच गई क्योंकि ज्यादातर स्वराज्यवादी गांधीजीका मार्गदर्शन खो देना पसन्द नहीं करते थे। अन्तमें तय यह हुआ कि वर्षकी शेष अवधितक गांधीजी अ० भा० का० कमेटीके अध्यक्ष बने रहें; किन्तु यदि अ० भा० का० कमेटीकी अगली बैठकमें कताई-सदस्यता हटा देनेका निर्णय लिया जाये तो वे त्यागपत्र दे देंगे और एक कताई-संस्थाकी अलगसे स्थापना करेंगे।"

२४५. वंचनासे भरा भाषण

[१८ जुलाई, १९२५]

लॉर्ड बर्कनहेडका ऐलान दो अर्थोंमें वंचना करनेवाला है। वह दूसरी मर्तबा पढ़नेपर उतना कठोर नही लगता जितना पहली मर्तबा पढ़नेपर लगा था, परन्तु उसे दूसरी मर्तबा पढ़नेपर उससे भी ज्यादा निराशा होती है, जितनी पहली मर्तबा पढ़नेपर हुई थी। उन्होने सोच-समझकर कठोरतापूर्ण बातें नही कही हैं। भारत मन्त्रीने जो कहा है बेसाख्ता कहा है। उन्होंने जो महसूस किया या कहना चाहिए उन्हें जो महसूस कराया गया वही उन्होंने कह दिया है। उनके वादे भी केवल देखनेमें ही लुभावने हैं। यदि हम उन्हे ध्यानसे देखें तो उनसे हमपर यह छाप पडती है कि उन वादोको करनेवाला इस बातको जानता है कि उसे उनको पूरा करनेकी जरूरत कभी नही पडेगी। अच्छा, हम पहले उसी वादेको ले जो सबसे अधिक प्रलोभनकारी है। व्यवहारत. उसका भाव यह है — 'आप अपना सविधान तैयार कर लें और हम उसपर विचार करेगें।' क्या यह हमारा ३५ सालका अनुभव नही है कि हमने अपने खयालके मुताबिक बिलकुल निर्दोष प्रार्थनापत्र भेजे हैं और वे 'गौरसे विचार करनेके बाद' अस्वीकार कर दिये गये हैं? ऐसा अनुभव होनेपर हमने १९२०में भिक्षा-नीति छोड़ दी और निश्चय किया कि हम अपने ही उद्योगपर निर्भर रहेंगे, भले ही हम उस प्रयत्नमें नष्ट-भ्रष्ट ही क्यों न हो जायें। लॉर्ड बर्कनहेड हमसे 'मुशीपन' नही चाहते। वे तो हमे 'तेग बहादुरी' दिखानेका न्यौता देते हैं। वे अच्छी तरह जानते हैं कि इस निमन्त्रणको कोई न तो स्वीकार करेगा — और न स्वीकार कर ही सकता है। इसका प्रमाण उस भाषणमें ही मौजूद है। उनके सामने मुडीमैन समितिके अल्पमतकी अर्थात् डॉ० सप्रू और श्री जिन्नाकी रिपोर्ट मौजूद थी। डॉ० सप्रू और श्री जिन्ना दो निहायत होशियार वकील हैं जिन्होंने कभी असहयोग करनेका कुसूर नही किया है, और उनमें से एक तो वाइसरायकी कौंसिलके कानूनी सदस्य भी रहे हैं। उन्हे तथा उनके साथीको जवाब यह मिला है कि उनमें इस कामकी समझ नही है। उस संविधानपर जिसे पण्डित मोतीलाल नेहरू तैयार करें और परम माननीय श्रीनिवास शास्त्री और मियाँ फजली हुसैन[1]-जैसे लोग पुष्ट करे, अधिक अनुकूल विचार किये जानेकी सम्भावना है? क्या लॉर्ड बर्कनहेडका यह प्रस्ताव असावधान लोगोको फँसानेके लिए बिछाया गया जाल नही है? फर्ज करें कि मौजूदा हालकी जरूरत रफा करनेके लिए सच्चाईसे कोई सविधान तैयार किया जाता है, उसे बेजा बताकर उसके बजाय कोई बहुत ही छोटी-सी चीज देनेका प्रस्ताव नही किया जायेगा? मै जब मुश्किलसे २५ सालका था तभी मुझे यह विश्वास करना सिखाया गया था कि यदि तुम समझो कि तुम चार आनेसे सतुष्ट हो सकते हो तो वह चार आने

१. वायसरायके कार्यकारिणी परिषदके सदस्य।

पानेके लिए तुम्हे सोलह आनेकी माँग करनी चाहिए, किन्तु मै इसे कभी नही सीख पाया, क्योंकि मेरा मत तो यह था कि हमे जितनेकी जरूरत हो हम उतना ही माँगे और उतना न मिले तो उसके लिए लडें। परन्तु यह बात मेरे ध्यानमे अवश्य ही आ गई थी कि पूर्वोक्त व्यावहारिक सलाहमे बहुत-कुछ सत्यांश है।

यदि माँगके साथ बल, फिर वह हिंसात्मक हो या अहिंसात्मक, हो तो बेहूदासे-बेहूदा सविधानपर भी तुरन्त विचार किया जायेगा। यह बात अंग्रेजोके बारेमें, जो कमसे-कम एक प्रकारके बलका मूल्य तो भली-भाँति जानते ही है, खास तौरसे लागू होती है।

भारतकी वह अथक सेविका डॉ० बेसेंट एक विधेयक तो इग्लैंड ले ही गई है। उसपर कितने ही प्रसिद्ध भारतीयोने दस्तखत किये है। यदि कुछ अन्य लोगोने उसपर दस्तखत नही किये है तो उसका कारण यह नही है कि वे उससे सन्तुष्ट नही थे, बल्कि उसका कारण यह है कि वे जानते है कि वह रद्दीकी टोकरीमें डाल दिया जायेगा, उसकी गति इसके सिवा दूसरी न होगी। उसपर दस्तखत न करनेका कारण यह है कि दस्तखत न करनेवाले लोग उसकी बिना सोचे-समझे की जानेवाली रद्दगीसे होनेवाले राष्ट्रके अपमानमे भागी होना नही चाहते। जरा लॉर्ड बर्कनहेड कहे तो कि क्या वे भारतके लोकमतको बहुतायतमे प्रदर्शित करनेवाले किसी एक दल द्वारा या एकाधिक दलो द्वारा तैयार किये गये किसी युक्तिसगत सविधानको मजूर कर लेगे? यदि वे ऐसा कहे तो वह सविधान एक सप्ताहमें ही बनकर तैयार हो जायेगा। वे सार्वजनिक रूपसे डॉ० बेसेटको यह आश्वासन दे दे कि पण्डित मोतीलाल नेहरू और अन्य लोगोके, वे जिनके नाम ले, दस्तखत कर देनेसे उसके स्वीकृत होनेकी पूरी-पूरी सम्भावना है तो मै इस बातका जिम्मा लेता हूँ कि मै उसपर उनके दस्तखत करा दूँगा। पर बात यह है कि लॉर्ड बर्कनहेडके प्रस्तावमे सचाईकी गन्ध तक नही है।

भारतमन्त्रीने जो-कुछ देनेका प्रस्ताव किया है, उसमे ईमानदारी नही दिखाई देती; लेकिन इसमे उनका कुसूर नही है। हम अभीतक किसी बातका दावा करनेके लिए तैयार जो नही है। इसलिए स्वभावत ब्रिटिश सरकारका काम यही हो जाता है कि वह हमे कुछ देनेकी बात करे और हमारा काम है कि हम उसे फिलहाल काफी न समझे तो लेना नामजूर कर दे। नये प्रधान सेनापतिने जिसे अप्राप्य कहा है, हमारे लिए तो वही एक चीज इस लायक है कि हम उसके लिए जिये, लडे और मरे। मनुष्यका जन्मसिद्ध अधिकार कभी अप्राप्य नही हो सकता और लोकमान्यने हमे बताया है कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। स्वराज्यकी परिभाषा है—अपना शासन स्वय करना, भले ही कुछ समयतक वह कुशासन भी हो। हम अंग्रेज और हिन्दुस्तानी, इस समय भारी दिमागी उलझनमे फँसे है। लॉर्ड बर्कनहेड समझते है कि ब्रिटिश सरकार हम भारतीयोके सुख-सुविधाकी न्यासी है, किन्तु हम मानते है कि उसने हमे अपने स्वार्थके लिए गुलामीकी जजीरोमे जकड़ रखा है। न्यासी अपने प्रतिपालितकी आयका ७५ फीसदी मेहनतानामें कदापि वसूल नही करता।

लॉर्ड बर्कनहेड कहते है कि भारतमे ९ मजहब और १३० भाषाएँ है; वह एक राष्ट्र नही हो सकता। हमारा कहना है कि समस्त व्यावहारिक उद्देश्योकी पूर्तिकी दृष्टिसे और बाह्य आक्रमणोसे रक्षाके मामलेमे हम जरूर एक राष्ट्र है। वे समझते है कि असहयोग एक भयकर गलती थी। हममे से बहुसख्यक लोग मानते है कि उसीने इस सोते हुए राष्ट्रको घोर निद्रासे जगाया है और इसीके बदौलत राष्ट्रको अकूत बल मिला है। स्वराज्यदल उसी बलका अप्रत्यक्ष परिणाम है। वे कहते है कि ब्रिटिश सरकारने हिन्दू-मुसलमानोके झगडोमे 'अपने हाथ साफ रखे है।' पर प्राय. हर भारत-वासीका यह निश्चित विश्वास है कि हमारे अधिकाश झगडोके लिए मुख्यत. ब्रिटिश सरकार ही जिम्मेवार है। वे मानते है कि हमे उनसे सहयोग करना लाजिमी है। हम कहते है कि जब उनका हेतु अच्छा होगा या उनका हृदय-परिवर्तन होगा, हम उनके साथ सहयोग करेगे। वे कहते है कि कोई गुणी नेता सुधारोका उपयोग करनेके लिए खडा नही हुआ। हम कहते है कि दूसरोकी बात जाने दें। श्री शास्त्री और श्री चिन्तामणिको ही ले; सुधारोको सफल बनानेके लिए तो वे ही पर्याप्त गुणी पुरुष थे; परन्तु समस्त सद्भावके बावजूद उन्होने अनुभव किया कि वह सम्भव नही है। देशबन्धुने इससे निकलनेका एक रास्ता दिखाया था। उनका वह प्रस्ताव अभी कायम है।

पर उनके प्रस्तावका उत्तर उसी भावसे मिलनेकी क्या कोई आशा है जिस भावसे वह रखा गया है? अग्रेजोको और हमको दृष्टिभेदके कारण एक-दूसरेकी बात उलटी नजर आती है। तब क्या कोई ऐसी योजना प्राप्त करनेकी सूरत है जिसपर हम दोनों सहमत हो सके।

हाँ, ऐसी सूरत अवश्य है।

अभी हम दोनों कौमोकी हालत अस्वाभाविक है — एक शासक है, दूसरा शासित। हम भारतवासियोको यह खयाल करना छोड देना चाहिए कि हम शासित है। यह हम तभी कर सकते है जब हमारे पास किसी किस्मका बल हो। १९२१ मे हमें लगता था कि हम समझते है, वह बल हममे है। इसीसे हमने सोचा था कि स्वराज्य एक सालके भीतर-भीतर मिल रहा है। पर अब तो कोई भविष्यवाणी करनेका साहस नही हो सकता। अत हमे वह बल, सत्याग्रहका शान्तिमय बल, इकट्ठा करना चाहिए। तब हम एक-दूसरेके बराबर हो जायेगे। यह कोई डर या धमकी नही है। यह तो अटल वस्तुस्थिति है। और यदि इन दिनों मै 'शासको' की कार्रवाइयोकी आलोचना नियमित रूपसे नही करता तो इसका कारण यह नही है कि सत्याग्रहीके भीतर रहने-वाली मेरी अग्नि बुझ गई है। बल्कि उसका कारण यह है कि मै वाणी, लेखनी और विचारमे मितव्ययी हूँ। जिस दिन मै तैयार हो जाऊँगा मैं अपनी वाणीका खुला उप-योग करूँगा। मैंने लॉर्ड बर्कनहेडकी इस घोषणाकी आलोचना करनेका साहस खासकर बगालके और आमतौरपर भारतके वियोग-व्यथित लोगोको यह बतानेके लिए किया है कि लॉर्ड बर्कनहेडके भाषणकी अनचाही तीक्ष्णताको मै भी उन्हीकी तरह अनुभव करता हूँ। मै यह भी बताना चाहता हूँ कि पण्डित मोतीलाल जहाँ विधानसभामें

लड़ेंगे और देशबन्धुकी जगह स्वराज्यदलका नेतृत्व करेंगे, वहाँ मैं भी सत्याग्रहके लिए वातावरण तैयार करनेमें कोई कोर-कसर न रखूँगा, और यह ऐसा काम है जिसके लिए मैं और बातोंकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त हूँ। गीताके गायकने कहा भी है

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

स्वधर्म (कर्त्तव्य) के पालनमें मर जाना भी श्रेयस्कर है, परधर्म तो भयावह होता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-७-१९२५

२४६. टिप्पणियाँ

चौर-नीति

मैंने कभी कल्पना भी न की थी कि मुझे इस शीर्षककी टिप्पणी और वह भी गुजरातकी राष्ट्रीय प्रवृत्तिके सम्बन्धमें लिखनी पड़ेगी। किन्तु यह अनसोची बात हो गई है। गुजरात खादी-मण्डलने निम्न प्रस्ताव पारित किया है:

> **चूँकि मण्डलके लिए कुछ उधार रकमोंको वसूल करना कठिन हो गया है और उनकी वसूलीके लिए दावे दायर करनेकी नौबत आ गई है, इसलिए यह निश्चय किया जाता है कि इन उधार रकमोंका विवरण पूरे तथ्यों सहित प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी मारफत गांधीजीको भेज दिया जाये और उनका उत्तर आनेपर इन रकमोंकी वसूलीके लिए उचित कार्रवाई की जाये।**

यह प्रस्ताव एक दो खास व्यक्तियोंके मामलोंको ध्यानमें रखकर पारित किया गया है। इनमें से एक व्यक्तिका नाम और पता मुझे मिल गया है। किन्तु मैं इसी समय उनका नाम प्रकट करना नहीं चाहता। मैं यह भी नहीं चाहता कि फिलहाल खादी मण्डलको अदालतमें दावा दायर करनेकी सलाह दूँ। मैं इस सम्बन्धमें अपना यह विचार प्रकट कर चुका हूँ कि कांग्रेसके प्रस्तावोंका मंशा कांग्रेसको नुकसान पहुँचाना नहीं है। वे प्रस्ताव जब प्रस्तुत किये गये थे तभी यह मान लिया गया था कि सदस्य कमसे-कम एक-दूसरेको तो धोखा न देंगे और कांग्रेसके कार्यके सम्बन्धमें पारस्परिक व्यवहारमें ईमानदारी बरतेंगे। किन्तु अपने सामने मौजूद चिट्ठीसे प्रकट है कि कांग्रेसके सदस्य खादी-मण्डलके विश्वसनीय कार्यकर्त्ता लोग ही, खादी-मण्डल द्वारा उधार दी गई रकमोंको नहीं लौटा रहे हैं। इस सम्बन्धमें मध्यस्थ लोग भी अपना वचन पूरा नहीं कर रहे हैं। यदि कांग्रेसके अदालतोंके बहिष्कारसे सम्बन्धित प्रस्तावको ऐसे लोगोंके मामलेमें ही लागू करना पड़े तब तो कांग्रेसको ही अपना दिवाला निकालना पड़ेगा।

क्या कोई गुजराती इस चौर-नीतिका भी त्याग कर देगा? चौर-नीतिका अर्थ वह नीति जिसका पालन चोर भी परस्पर करते हैं। वे चोरी करते हैं, उनके इस

कार्यमे तो अनीति है ही, किन्तु वे एक-दूसरेकी चीजे नही चुराते। यदि वे एक-दूसरेसे लेन-देन करते है तो उसमे शुद्धता वरतते है। क्या गुजराती इतने पतित हो गये है कि वे नीतिका इतना पालन भी न करेगे? मेरी विनती है कि जिन्होने खादी मण्डलकी उधार रकमे अभीतक न दी हो तो वे जिन रकमोको मंजूर करते है, कमसे-कम उनका हिसाव तो दे ही दे।

सबके-सब ब्रह्मचारी

मेरे अभिमानके कारण कहे या अज्ञानके कारण अथवा दोनोके कारण कहे, मै यह खयाल करता था कि अपने तमाम लडके-लडकियोंको ब्रह्मचारी रखनेका प्रयत्न करनेवाला मै शायद अकेला ही हूँगा अथवा मेरे कुछ साथी ही होगे। परन्तु मेरा यह गर्व चूर-चूर हो गया है और मेरा अज्ञान दूर हो गया है। यहाँ मेरे साथ जो स्वयसेवक है उनमे एक यहाँकी प्रान्तीय कमेटीके मन्त्रीका भतीजा है। वह स्वय ब्रह्मचारी है, यही नही, बल्कि उसके पिताने निश्चय किया है कि वे उसके शेष भाइयोको भी ब्रह्मचारी रखेंगे। जो लडका स्वय ब्रह्मचारी न रहना चाहे वे उसके लिए योग्य कन्या खोजनेके लिए तैयार है; वे उनमे से किसीपर जब्र करना नही चाहते। वे अभी अपने लडकोको ऐसी ही तालीम दे रहे है जिससे वे ब्रह्मचर्यका पालन करे। उनके सब बेटे जवान है और अपने-अपने काम-धन्धेमे लगे है। वे अवतक स्वेच्छासे ब्रह्मचारी है। मै देखता हूँ कि बंगालमे इसी तरह कन्याओको भी तालीम दी जाती है। यद्यपि उनकी संख्या कम है तथापि प्रयत्न तो किया ही जा रहा है। यह प्रयत्न पाश्चात्य सभ्यताके प्रभावका फल नही है, बल्कि ऐसी चेप्टा करनेवाले माता-पिता केवल धार्मिक भावसे प्रेरित होकर ही ऐसा कर रहे है।

दाहिना बनाम बायाँ

कोई भी निश्चयपूर्वक नही कह सकता कि दाहिने और बायें हाथमे भेद कैसे आरम्भ हुआ और कुछ कामोंको दाहिने हाथसे और कुछको बाये हाथसे ही करनेकी प्रथा क्यो पडी? परन्तु परिणाम तो हम देखते ही है कि बहुतेरे कामोमे बायें हाथका उपयोग नही किया जाता। इससे वह बेकाम हो गया है और हमेशा दाहिने हाथसे कमजोर भी रहता है।

किन्तु जापानमे यह बात नही है। वहाँ सभीको लडकपनसे ही दोनो हाथोंसे एक-सा काम लेना सिखाया जाता है। इसलिए उनकी शारीरिक उपयोगिता हमारी शारीरिक उपयोगितासे अधिक हो जाती है।

मै ये विचार अपने वर्तमान अनुभवके फलस्वरूप पाठकोके लाभार्थ उपस्थित करता हूँ। मुझे जापानियोके सम्बन्धमें इस बातको पढे कोई २० सालसे अधिक हो गये है। मैने जबसे यह बात पढी है तभीसे बाये हाथसे लिखनेका अभ्यास आरम्भ कर दिया था और फलत मुझे इसकी थोडी-बहुत आदत हो गई है। मैंने यह मानकर कि मुझे अवकाश नही है, बाये हाथसे दाहिनेके बराबर तेजीसे लिखनेका मुहावरा नही डाला। मुझे इसपर इस समय अफसोस हो रहा है। मेरा दाहिना हाथ मेरी

इच्छाके अनुसार लिखनेका काम नही देता, उसमे अधिक लिखनेसे दर्द होने लगता है। मुझे यह लोभ अभीतक बना ही हुआ है कि जहाँतक हो सके, मैं अपनी हाथसे लिखनेकी शक्तिको कायम रखूँ। इस कारण मैंने अब फिर बाये हाथसे लिखना शुरू किया है। अब मुझे इतना अवकाश तो है नही कि मैं सब-कुछ बाये ही हाथसे लिखूँ और दाहिने हाथकी जैसी तेजी उसमे ला दूँ। फिर भी वह कठिनाईके समयमे मुझे मदद दे रहा है। इस कारण मै अपना यह अनुभव पाठकोके सामने पेश करता हूँ। जिन्हे अवकाश और उत्साह हो वे बाये हाथसे भी अभ्यास करे। समय आनेपर उसकी उपयोगिता सभी सिद्ध कर सकेंगे। बाये हाथसे केवल लिखनेका ही नही, दूसरी क्रियाओका भी अभ्यास कर लेना लाभप्रद है। क्या हमने कितने ही ऐसे लोग नही देखे जिनके लिए चोट आदि लगनेके कारण दाहिना हाथ बेकाम हो जानेपर बायेसे खाना खाना भी मुश्किल हो जाता है? इस लेखका सार कोई यह तो हरगिज न निकाले कि वे बाये हाथसे अभ्यास करनेके पीछे पागल ही हो जाये। साधारण तौरपर बाये हाथसे जितना अभ्यास किया जा सकता है, मै इस टिप्पणीके द्वारा उतना ही करनेकी सलाह दे रहा हूँ। शिक्षकोके लिए यह वाछनीय मालूम होता है कि वे यह सुझाव देकर बालकोको लाभ पहुँचाये।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १९-७-१९२५

२४७. उद्धार कब हो सकता है?

एक 'सेवक' ने अपने पत्रमे लिखा है[1]

इसमे से मैंने वह भाग निकाल दिया है जिसमे 'सेवक' ने देशी राज्योके सम्बन्धमे बहुत-सी बाते लिखी थी।

श्रद्धा किसीके देनेसे नही मिलती। इसलिए 'सेवक' को अपनी वाछित श्रद्धा स्वय ही प्राप्त या अनुभव करनी होगी। परन्तु मै उनका विचार-दोप बता सकता हूँ। राष्ट्रके कर्म-फलका अर्थ है उसके समस्त कर्मोके योगका परिणाम। इसके अतिरिक्त यहाँ स्वराज्यका अर्थ सकुचित किया गया है। स्वराज्यका अर्थ है राजतन्त्रका अग्रेजोके हाथसे जनताके हाथमे आना। अत यहाँ तो अग्रेजो और भारतीयो दोनोकी समाज-नीति अथवा राजनीतिका कर्म-फल निकालना होगा। समाजनीतिमे हमारे समाजकी सगठन शक्ति और निर्भयता आदि गुणोका समावेश होता है। ये गुण जब प्रजामे आ जाये तब हम अपनी शासन-व्यवस्था अपने हाथमे ले सकते है। फिर इस समय तो स्वराज्यका अर्थ 'ब्रिटिश भारतकी स्वाधीनता'-मात्र है। उसका असर देशी-राज्योपर बहुत होगा, इसमे कोई शक नही। फिर भी देशी राज्योका प्रश्न अलग रहेगा

१. यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें लेखकने लिखा था कि देशमें इस समय बहुत-सी बुराइयाँ फैली हुई हैं। जबतक ये बुराइयाँ नहीं जाती तबतक देशका उद्धार कैसे होगा? क्या व्यक्तिकी तरह समाजको भी उसके कर्मोका फल नहीं मिलता?

और बहुताशमें ब्रिटिश भारतकी स्वतन्त्रता मिलनेके बाद अपने-आप हल हो जायेगा। देशी राज्योकी राजनीति कितनी ही बुरी हो, फिर भी ब्रिटिश भारतमे शक्ति हो तो वह आज स्वाधीन हो सकता है। इसलिए कर्म-फल निकालनेमे हमे ब्रिटिश भारतकी प्रजाके कर्मोका भी हिसाब लगाना होगा। यदि हम उस हिसाबमे देशी राज्योको जोड़ेंगे तो फल गलत निकलेगा। वास्तवमे तो देशी राज्य भी अंग्रेजी सत्ताके ही प्रतीक हैं। वे उसीके अधीन हैं। वे उसके प्रति जवाबदेह हैं भी और नही भी हैं। कर देने और उस सत्ताके प्रति वफादार रहनेका जहाँतक सम्बन्ध है, वहाँतक वे उसके प्रति जवाबदेह हैं और प्रजाके और उनके सम्बन्धोका जहाँतक ताल्लुक है वे लगभग स्वतन्त्र हैं। वे प्रजाके प्रति तो बेशक जवाबदेह नही हैं। इससे उनके आसपासके वायुमण्डलमें दोष-ग्रहणकी शक्ति बढती है अथवा दूसरे शब्दोंमे कहे तो उनके सम्मुख अन्यायी बननेके अनेक प्रलोभन रहते हैं। वे जो-कुछ थोडा बहुत न्याय करते हैं उसका भी कारण है उनकी बची-खुची स्वतन्त्र नीति। खूबी तो यह है कि देशी राज्य बिलकुल निरंकुश होते हुए भी और अंग्रेजी सत्ताकी अनीतिके समर्थक होते हुए भी अबतक न्याय-नीतिकी यत्किंचित् रक्षा कर रहे हैं। इस स्थितिका श्रेय हिन्दुस्तानकी प्राचीन गौरवमयी सभ्यताको है।

इस प्रकार मैं देशी राज्योंका बचाव नही कर रहा हूँ। मैं तो वस्तुस्थितिको पहचानकर और 'सेवक' का विचार-दोष दिखाकर उसकी निराशा दूर करनेका प्रयत्न-मात्र कर रहा हूँ। देशी-राज्य चाहे कितने ही बुरे हो परन्तु यदि फिर भी ब्रिटिश सत्ताके अधीन रहनेवाले करोड़ो भारतवासी अपने योग्य सामाजिक गुणोको व्यक्त कर सके तो वे स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं। देशी-राज्य इन गुणोके विकासमे चाहें तो बहुत मदद कर सकते हैं। परन्तु यदि वे मदद न करे और विरोध करे तो भी राष्ट्र उन गुणोको व्यक्त कर सकता है।

वे गुण क्या हैं, इसका विचार हम समय-समयपर कर चुके है — चरखा, खादी, हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता-निवारण। ये गुण अहिंसा द्वारा स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए आवश्यक हैं। यदि हमे तलवारके बलसे स्वराज्य प्राप्त करना हो तो फिर इनमे से किसी भी गुणकी जरूरत नही। परन्तु फिर वह स्वतत्रता जनताकी स्वतन्त्रता न होगी, एक बाहुबल-धारीकी स्वतन्त्रता होगी। जनता तो कढाईसे निकलकर चूल्हेमे गिरेगी। गेहुँवे रगके डायर श्वेतवर्णी डायरसे अधिक ग्राह्य न होगे। तब तो देशी राज्योकी जिस स्थितिका रोना 'सेवक' रो रहे हैं वही स्थिति सारे भारतकी होगी; क्योकि जो समुदाय तलवारके द्वारा अंग्रेजोंसे सत्ता छीनेगा, क्या वह प्रजाके प्रति उत्तरदायी रहेगा? असि, तलवार, शमशीर, 'सोर्ड' सब एक ही वस्तुके पर्याय हैं।

देशी राज्योसे अंग्रेजी राज्य जरूर नरम होगा। यही तो अंग्रेजी राज्यकी खूबी है। अंग्रेजोको तो पक्ष-विशेषको प्रसन्न रखकर ही शासन चलाना पड़ता है। इसीलिए मध्यमवर्गी लोगोको निरन्तर अन्याय नही सहना पडता। अंग्रेजोके अन्यायका क्षेत्र बड़ा है। इससे वह मात्रामें बहुत होते हुए भी व्यक्तिश कम मालूम होता है और हम दीर्घकालसे उसके अभ्यस्त हो जानेके कारण उसको पहचान भी नही

पाते। दक्षिण अमरीकाके गुलामोको चिर अभ्यस्त होनेसे गुलामी इतनी मीठी लगती थी कि जब वे गुलामीसे मुक्त किये गये तब उनमे से कुछ तो रोने लगे थे। वे कहाँ जायेंगे, क्या करेंगे, और किस तरह रोजी कमायेंगे, ये महाप्रश्न उनके सामने आ खड़े हुए थे। यही हालत हममे से बहुतो की है। हम अंग्रेजी राजनीतिके सूक्ष्म परन्तु घातक दुष्प्रभावको अनुभव नही करते। क्षयके रोगी वैद्योके सचेत करनेपर भी, गालोकी लालीसे भुलावेमे पड जाते हैं। वे नही जानते कि यह लाली असली नही नकली है। वे अपने पैरोके पीलेपनपर ध्यान नही देते।

मैं पाठकोको फिर सावधान करता हूँ कि मैं देशी राज्योकी हिमायत नही करता। मैं तो भारतकी दुर्दशा बताता हूँ। देशी राज्य भले ही खराब हो, परन्तु उनकी इस खराबीकी ढाल अंग्रेजी राज्य है। उथला विचार करनेसे अंग्रेजी राज्य भले ही देशी राज्योसे अच्छा मालूम हो, परन्तु वास्तवमे वह देशी राज्योसे अच्छा नही है। अंग्रेजी राज्य-पद्धति प्रजाके शरीर, मन और आत्माका नाश करती है। देशी-राज्य मुख्यत शरीरका नाश करते हैं। यदि अंग्रेजी राज्यके स्थानमे प्रजा-राज्य कायम हो जाये तो मैं देशी राज्योमे सुधार हुआ जैसा ही मानता हूँ। किन्तु यदि अंग्रेजो या श्वेतवर्णियोके बाहु-बलके राज्यकी जगह गेहुँआँ रगके लोगोके बाहु-बलका राज्य हो जाये तो उससे न तो प्रजाको कुछ लाभ होगा और न राज्योमे सुधार होगा। शान्तिपूर्वक विचार करने-वाला हर स्त्री-पुरुष अपने-आप इन दोनो उदाहरणोकी सचाई समझ सकता है।

वातावरणमे अनिश्चितता होनेपर भी मैं चरखेकी और खादीकी प्रगतिको स्पष्ट देख रहा हूँ। अस्पृश्यता दूर होती ही जा रही है और हिन्दू-मुसलमान राजी-खुशीसे नही तो लड़-मरकर ठिकाने जरूर आ जायेंगे। इस कारण स्वराज्यकी शक्यताके विषयमे मेरी श्रद्धा अविचल है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-७-१९२५

२४८. राष्ट्रीय शिक्षा

एक गुजराती सज्जनने राष्ट्रीय शिक्षाकी दयनीय हालतका वर्णन करनेके बाद जो-कुछ लिखा है, उसका सार नीचे दे रहा हूँ

> जहाँ विद्यार्थी राष्ट्रीय विद्यामदिरोको छोड रहे हो, कार्यकर्त्ता शिथिल हो रहे हो और लोग अपने लडकोको पढनेके लिए सरकारी शालाओमे भेज रहे हो, जहाँ शेष बचे विद्यार्थी विद्यामदिरोमे आते वक्त ही खादी पहनते हो और स्नातकोको यह सूझता ही न हो कि क्या धन्धा करे, वहाँ राष्ट्रीय शिक्षा कैसे टिक सकती है? क्या आप कोई मार्ग सुझायेंगे? आप यह तो अवश्य ही नही कहेंगे कि उन्हे चरखा चलाते जाना चाहिए।

सभी प्रवृत्तियोमे सफलतातक पहुँचनेसे पहले उतार और चढ़ाव आते हैं। राष्ट्रीय शिक्षाके सम्बन्धमे भी ऐसा ही हो रहा है। जो लोग उतारके वक्त भी

राष्ट्रीय शिक्षामे अपना विश्वास बनाये रखेंगे, वे ही राष्ट्रीय शिक्षाकी गौरव-वृद्धि करेंगे। मेरा राष्ट्रीय शिक्षामे विश्वास है, इसलिए मैं तो इस उतारसे नही घबराता। मैं जानता हूँ कि जिसमे उतार आता है उसमे चढाव भी अवश्य ही आता है। इसलिए विश्वासी लोग अपना विश्वास न त्यागे। स्नातकोको धन्धा देनेका प्रश्न टेढा है। राष्ट्रीय शिक्षाको अभी ऐसा स्वरूप प्राप्त नही हुआ है कि किसी भी स्नातकको धन्धेकी चिन्ता करनेकी जरूरत ही नही हो। कुछ स्नातक तो राष्ट्रीय शिक्षाके क्षेत्रमे खप जायेंगे। किन्तु अधिकाश स्नातकोके लिए कोई धन्धा चाहिए और वह धन्धा खादीके क्षेत्रमें ही मिल सकता है। केवल यही राष्ट्रीय क्षेत्र प्राणवान है, अत इसीमे अधिकसे-अधिक युवक खप सकते है। इस क्षेत्रके लिए तो बहुत-से स्नातक तैयार किये जाने चाहिये। सूत कातकर आजीविकामे वृद्धि करना निर्धनोका और कताई-का प्रचार करनेके लिए सूत कातना यह मध्यम वर्गका काम है। मैं बगालमें देख रहा हूँ कि इस प्रचार-कार्यको करके सैकडो युवक सामान्यत अपनी आजीविका कमा सकते है। मैं इस सम्बन्धमे आँकडे प्राप्त कर रहा हूँ। इसको जानकर लोगोको हर्ष और आश्चर्य हुए बिना न रहेगा।

किन्तु इस कार्यमे वे ही युवक लग सकते हैं, जिनका खादीकी शक्तिमें विश्वास हो और जिनमे उसका काम सीखनेका धीरज हो। जिनकी चरखे और खादीमें श्रद्धा न हो, मैं मानता हूँ कि उनका राष्ट्रीय शिक्षामे पड़ा रहना व्यर्थ है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १९-७-१९२५

२४९. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

कलकत्ता
१९ जुलाई, १९२५

प्रिय पण्डितजी,

मैं पिछले कुछ दिनोसे यह सोच रहा हूँ कि मैं देशबन्धुकी यादगार कायम रखनेके लिए और लॉर्ड बर्कनहेडके भाषणसे उत्पन्न स्थितिके सम्बन्धमे स्वय अपनी तरफसे क्या विशिष्ट योगदान कर सकता हूँ। मैं इस परिणामपर पहुँचा हूँ कि मुझे स्वराज्यदलको पिछले सालके करारके समस्त दायित्वोसे मुक्त कर देना चाहिए। इस कार्यका फल यह होगा कि अब कांग्रेसके लिए प्रधानत कताई सस्था बना रहना आवश्यक नही रह जायेगा। मैं मानता हूँ कि उस भाषणसे उत्पन्न परिस्थितिमे स्वराज्य-दलके बल और प्रभावको बढानेकी आवश्यकता है। यदि मैं इस दलको मजबूत बनानेके लिए जो भी कदम उठा सकता हूँ उसे न उठाऊँगा तो मैं अपने कर्त्तव्यका पालन न करूँगा। यह तभी हो सकता है जब कांग्रेस प्रधानत राजनैतिक सस्था बन जाये। उस करारके अनुसार कांग्रेसका कार्य रचनात्मक कार्यक्रमतक ही मर्यादित है। मैं

समझता हूँ कि अब परिवर्तित दशामे, जो कि देशके सामने है, इस मर्यादाको कायम रखनेकी आवश्यकता नही है। इसलिए मैं खुद ही आपको इस मर्यादाके बन्धनसे केवल मुक्त ही नही करता बल्कि मैं आगामी अ० भा० कांग्रेस कमेटीसे भी कहना चाहता हूँ कि वह भी ऐसा ही करे और कांग्रेसके समूचे तन्त्रको आपके हवाले कर दे जिससे आप उसमे ऐसे राजनैतिक प्रस्ताव प्रस्तुत कर सके, जिन्हे आप देशके हितके लिए आवश्यक समझे। असलमे मैं यह चाहता हूँ कि मैं जिन-जिन मामलोमे अपनी अन्तरात्माको सामने रखकर आपकी और स्वराज्यदलकी सेवा कर सकता हूँ, आप उन सबमे मुझे अपना वशवर्ती समझे।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २३-७-१९२५

२५०. पत्र : देवदास गांधीको

सोमवार [२० जुलाई, १९२५][2]

चि० देवदास,

इस समय तो कार्ड ही लिख रहा हूँ। यह भी गनीमत है। तुमने मेरी सहायताका अर्थ अधिक समझ लिया है। जैसा तुम कहते हो वैसी सहायताके लिए तुम्हे सुरक्षित रखनेकी आवश्यकता मैं नही समझता। सभी विधान सभाओमे जाते हो तो चले जाये। मैं तो उनमे जानेके लिए अथवा किसीको उनमे भेजनेके लिए तैयार नही हूँ। हमारा काम तो केवल चरखा ही है। यदि देशबन्धु जीवित रहते तो मुख्यतः यही काम करते। चरखेमे उनकी दिलचस्पी इतनी गहरी हो गई थी। किन्तु ये सब बाते तो जब मिलेंगे तब होगी। फिलहाल तो सारा वक्त दस लाखकी रकम इकट्ठी करनेमे और पण्डितजीसे[3] बात करनेमे जाता है। अखबारोकी सामग्री लिखनेके लिए तो शायद ही कुछ वक्त बचता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २१३२) की फोटो-नकलसे।

१. मोतीलालजीके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ५।
२. डाककी मुहरमें "कलकत्ता, २१ जुलाई, १९२५" है। सोमवार २० जुलाईको था।
३. पं० मोतीलाल नेहरू।

२५१. पत्र : राजेन्द्र प्रसादको

२१ जुलाई, १९२५

प्रिय राजेन्द्र बाबू,

समय बचानेके लिए मुझे तुम्हे यह पत्र अंग्रेजीमे लिखना पड़ेगा। मेरा दाहिना हाथ काम नही दे रहा है। बायें हाथसे लिखनेमें बहुत समय लगता है। इसलिए मै इस समय आशुलिपिककी मदद ले रहा हूँ। वैसे मैंने यह आज ही से शुरू किया है। अ० भा० का० कमेटीकी बैठक पटनामे होना असम्भव लग रहा है। महाराष्ट्र और मद्रास एवं विशेषकर मद्रासके लोगोको बहुत सख्त शिकायत है; और उनकी शिकायतोंमें काफी तथ्य है। इसलिए सबने बम्बईमे करना तय किया है। इस बार हम इस बैठकमे पूरी-पूरी उपस्थिति चाहते हैं; क्योंकि ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रस्तावोपर चर्चा करनी है जो सविधान और नीतिमे रद्दोबदलसे सम्बन्धित है। मै चाहता हूँ कि उन प्रस्तावोपर, वे जैसे भी हों, चर्चा उस समय हो जब सभी सदस्य उपस्थित हो। किन्तु यदि मुझे सितम्बरके शुरूमे बिहार बुला सकना सम्भव लगे तो मै तब आ सकता हूँ। पर मै वहाँ कमसे-कम समय लगाना चाहूँगा। यदि तुम पूरे महीने मुझे रोकना चाहो तो वह भी हो सकेगा। यो तो चूँकि तुम मुझे पुरुलिया बुला रहे हो और चूँकि सभी कार्यकर्त्ता वहाँ आ रहे हैं, इस समय तुम्हारा मुझे अन्य केन्द्रोमे ले जाना अनावश्यक ही होगा। पर यह सब तय करना तुम्हारा काम है। जो आदमी तुम्हारा सन्देश लेकर आया था उससे मैंने कह दिया है कि मै १२ को पुरुलिया पहुँच जाऊँगा। फिर भी अगर तुम मेरा इससे भी पहले वहाँ पहुँचना जरूरी समझो तो सूचित तो करना ही। प्रबन्ध ऐसा रखो जिससे मै ३० सितम्बरको बम्बई पहुँच जाऊँ। बिहारके सब सदस्योंको अ० भा० का० कमेटीकी बैठकमे शामिल होना चाहिए। चरखा-सम्बन्धी परिपत्र मैंने अभी नही पढा है, मै इसे अगले एक सप्ताहतक पढ लेनेकी आशा रखता हूँ और 'यंग इंडिया' के अगले अकमे इसके बारेमे लिखूंगा। हाँ, अब अखिल भारतीय स्मारक सम्बन्धी विज्ञप्ति भी प्रकाशित हो जायेगी। जवाहरलाल इसके बारेमे पहले लिख ही चुके है। इस कोषकी पूरी रकम चरखे और खद्दरके प्रचारमें व्ययकी जायेगी। यद्यपि कोषकी अपीलमे ऐसी कोई बात नही कही गई थी पर जहाँतक सम्भव होगा एक प्रान्तमे इकट्ठी की गई रकम उसी प्रान्तमें खर्चकी जायेगी। तथापि सारा खर्चा अ० भा० [का०] कमेटीकी मार्फत होगा . .।[1]

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६७९) की माइक्रोफिल्मसे।

१. पूरा पत्र उपलब्ध नहीं है।

२५२. अखिल भारतीय स्मारक

[२२ जुलाई, १९२५ या उससे पूर्व][1]

हम नीचे दस्तखत करनेवाले लोगोकी यह राय है कि देशवन्धु चित्तरजन दासकी याद अमिट वनानेके लिए अखिल वगाल स्मारककी तरह अखिल भारतीय स्मारक वनाना भी आवश्यक है। जिस तरह वे समस्त वगालके थे उसी तरह समस्त भारतके भी थे। जिस तरह हम उनके अखिल वगाल स्मारकके सम्वन्धमे उनकी आकांक्षा जानते है, उसी तरह हम उनके अखिल भारतीय स्मारकके सम्वन्धमें भी उनकी आकाक्षा जानते हैं। उन्होने एक सालसे कुछ पहले अपना यह विचार स्पष्ट रूपसे प्रकट कर दिया था और अपने फरीदपुरके भाषणमे दुहरा भी दिया था कि उन्हे गाँवोके पुनस्सगठनके द्वारा भारतको पुनरुज्जीवित करना और शान्तिपूर्ण विकासात्मक विधिसे स्वराज्य प्राप्त करना अतिशय प्रिय है। हम यह भी जानते है कि वे मानते थे कि इस कामका आरम्भ देहातोमे हाथ-कताईका पुनरुद्धार और विकास करके तथा घर-घर खादीका प्रचार करके किया जा सकता है और यही ग्रामसगठनका मध्यविन्दु है। यही एकमात्र ऐसी प्रवृत्ति है जो सारे देशके लिए सर्वसामान्य हो सकती है और फिर भी जो वहुत थोड़ी लागतसे चलाई जा सकती है। यही एकमात्र ऐसी प्रवृत्ति मानी जाती है, जिससे तुरन्त फल मिल सकता है, फिर वह चाहे जितना ही कम क्यो न हो? देशके तमाम लोग, वे चाहे अमीर हो या गरीव, वूढे हो या जवान, पुरुष हो या स्त्री, चाहे तो इसमे निजी रूपमें सहायता दे सकते हैं और जुट जा सकते है। देहातियोसे शहरी लोगोको एकरस वनानेका और शिक्षित लोगोको उनसे परिचित करानेका इससे वढकर उपयोगी तरीका दूसरा नही है। यही एक ऐसी प्रवृत्ति है जो कि भारतके तमाम प्रान्तो और पन्थोके लिए सामान्य हो सकती है और जो जवर्दस्त आर्थिक परिणाम उत्पन्न कर सकती है। अन्तमे, यद्यपि इसका राजनैतिक पक्ष भी है तथापि इसका रूप स्पष्टत· इतना आर्थिक और सामाजिक है कि इसमे उन सव लोगोकी, विना दल सम्वन्धी भेद-भावके, सहायता ली जानी चाहिए, जो चरखेको आर्थिक उत्थान और ग्रामसगठनका एक महान् साधन मानते हैं।

ऐसी व्यवस्थामे हम उनका चरखे और खादीके सार्वत्रिक प्रचारसे वढकर कोई अन्य समुचित स्मारक नही सोच सकते और इसलिए हम इस कार्यके निमित्त धन देनेकी प्रार्थना करते है। हम इस स्मारकके लिए आवश्यक राशिकी मात्रा नियत नही कर रहे है, क्योकि इसमे तो जितना धन मिलेगा, सवका-सव खप सकता है।

१. स्पष्ट है कि यह संयुक्त अपील २२ जुलाईको, गाधीजीकी एक दूसरी अपीलके जारी करनेके दिन ही, जिसमें इसका उल्लेख है, लिखी गई थी और उसपर उसी दिन हस्ताक्षर किये गये थे। देखिए अगला शीर्षक।

इसके लिए सर्वसाधारणकी ओरसे जो चन्दा मिलेगा वह इस बातका सूचक होगा कि उनका देशबन्धुके प्रति कितना आदरभाव है, वे उस महान् देशभक्तका स्मारक बनानेके लिए कितने उत्सुक है, वे ऐसे स्मारककी उपयोगितामे कितना विश्वास करते है, तथा उन लोगोंपर उनका कितना विश्वास है जो इस कोषके विनियोगकर्त्ता होगे। वे लोग ये है — मो० क० गाधी, पण्डित मोतीलाल नेहरू, मौलाना शौकत अली, आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय, श्रीमती सरोजिनी देवी, श्रीयुत जमनालाल बजाज और पण्डित जवाहरलाल नेहरू। इन्हे अपने साथ और लोगोंको शामिल करनेका भी अधिकार रहेगा। पण्डित जवाहरलाल नेहरूने न्यासियोकी तरफसे अवैतनिक मन्त्रीका और श्री जमनालाल बजाजने खजाचीका काम करना स्वीकार किया है। चन्दा या तो जमनालालजी बजाजके नाम ३९५, कालबादेवी रोड, बम्बईके पतेपर या पण्डित जवाहरलाल नेहरूके नाम १०७ ह्वीवेट रोड, प्रयागके पतेपर भेजा जाना चाहिए। चन्दादाताओकी सूची हर हफ्ते पत्रोमे प्रकाशित की जायेगी।

मो० क० गांधी

मोतीलाल नेहरू	सरोजिनी नायडू	श्यामसुन्दर चक्रवर्ती
रवीन्द्रनाथ ठाकुर	नीलरतन सरकार	विधानचन्द्र राय
अबुल कलाम आजाद	जे० एम० सेनगुप्त	शरत् चन्द्र बोस
प्रफुल्लचन्द्र राय	सी० एफ० एन्ड्रयूज	नलिनी रजन सरकार
जमनालाल बजाज	वल्लभभाई पटेल	सत्यानन्द बोस
	बी० एफ० भरूचा	

(अन्य लोगोके हस्ताक्षर बादमें दिये जायेंगे)

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-७-१९२५

२५३. अपील: अखिल भारतीय देशबन्धु-स्मारकके लिए

१४८, रसा रोड
कलकत्ता
२२ जुलाई, १९२५

मैं समझता हूँ कि अखिल भारतीय देशबन्धु-स्मारकके लिए की जा रही अपीलसे अखिल बगाल देशबन्धु कोषके लिए धनराशि इकट्ठा करनेमे किसी प्रकार की अड़चन पैदा नही होगी। अखिल भारतीय कोषको इकट्ठा करनेका काम काफी अरसेतक चलेगा। यह देखते हुए कि बंगाल अखिल बगाल स्मारक कोषमें पर्याप्त पैसा दे चुका है, बंगालमे अखिल भारतीय स्मारक कोषके लिए पैसा इकट्ठा करनेका काम तीन महीने और यदि आवश्यकता हो तो और भी अधिक समयतक शुरू नही किया जाना चाहिए। बगालका ध्यान अखिल बगाल कोषकी ओरसे नही हटाया जाना चाहिए। प्रत्येक बंगाली और बगालमे रहनेवाले प्रत्येक प्रवासीके लिए बंगाल

कोषको पूर्ण सफल बनाना आत्मसम्मानकी बात माननी चाहिए। अबतक पाँच लाखसे ऊपर रुपया इकट्ठा हो गया है। मैं यह निश्चित रूपसे कह सकता हूँ कि यदि कार्यकर्त्ताओंने तत्परता नही दिखाई तो शेष रकमको इकट्ठा करनेमें पहले पाँच लाखकी रकम इकट्ठा करनेसे भी अधिक समय लग जायेगा।

श्रीयुत मणिलाल कोठारीने अपने कार्योंसे यह दिखा दिया है कि कोष इकट्ठा करनेमे माहिर लोग इस दिशामे क्या-कुछ कर सकते है। जो लोग चन्दा दे चुके थे उनमे से कुछको दुगुना और चौगुना देनेपर राजी करनेमे उन्होने जो सफलता प्राप्त की है, उसे देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ अन्य लोगोको भी दूसरी बार एक अच्छी रकम देनेके लिए तैयार किया जा सकता है। पर इसके अतिरिक्त स्कूल और कालेज भी है। उनमे इस कामके लिए कोई कोशिश ही नही की गई है। क्या इन सस्थाओके प्रमुख अथवा स्वयं विद्यार्थी, जैसा कि मुझे महीनेके शुरूमें कहा गया था, छुट्टियोके बाद कालिजो आदिके खुलेते ही इस दिशामे काम करेंगे? कलकत्तेके व्यस्त हिस्सोंके बगाली व्यापारियो और व्यवसायियोके बीच अभीतक प्राय कुछ भी नही किया गया है। मुझे इनमें से कुछके पास ले जाया गया था और तब मेरी समझमे आया कि यदि पूरी नही तो कोषकी पर्याप्त राशि यहाँसे इकट्ठी की जा सकती है। फिर विभिन्न सभी जिलोने और कुछ अपवादोको छोड़कर दूसरे प्रान्तोके बगालियोने भी अपना हिस्सा नही भेजा है। क्या समय रहते मै इन सभी भाइयोसे अपने हिस्सेकी रकम भेज देनेकी आशा रखूँ।

अब थोडी अपने बारेमे सफाई भी। मैंने बगालसे इस महीनेके मध्यतक जानेकी आशा की थी; पर अब महीना समाप्त होनेसे पहले जानेकी कोई आशा नही दिखती। जो सज्जन देशबन्धुमे श्रद्धा रखते है और जो स्वय चन्दा देने और दूसरोको चन्दा देनेके लिए राजी करनेमें समर्थ है, मै उनसे शीघ्रातिशीघ्र कोषको इकट्ठा करनेमें मदद देनेकी प्रार्थना करता हूँ।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
फॉरवर्ड, २३-७-१९२५

२५४. पत्र: शौकत अलीको

कलकत्ता
२२ जुलाई, १९२५

मेरे प्यारे दोस्त और बिरादर,

आपके दोनो पत्र मिले। मुझे अभी खुद लिखनेकी कोशिश नही करनी चाहिए। मेरे दाहिने हाथमे कोई भी काम करनेकी ताकत नही है। उसे आराम चाहिए। इसीलिए बोलकर लिखवा रहा हूँ। शुएबसे मेरी लम्बी बात हुई। उसका कहना है कि वह 'कॉमरेड' के कामके लायक है ही नही, और यह सम्पादकीय कामकी अयोग्यताके कारण नही बल्कि इसलिए कि उसके स्वभावका उससे मेल नही बैठता। वह कहता है कि बुरी तरह नाकामयाव होनेके लिए ही वहाँ जानेमे क्या लाभ है। चूँकि अब मै शुएबको जान गया हूँ, मुझे उसकी बातमे काफी वजन मालूम होता है। अगर फौरन और ठीक-ठीक मदद नही मिलती तो मेरा यह निश्चित मत है कि मुहम्मद अलीको दोनो पत्रोको या कमसे-कम एकको बन्द कर देना चाहिए। हार निश्चित ही दिखाई देनेपर अच्छा सिपाही चतुराईसे पीछे हट जाता है। वह पूरी-पूरी बरबादी और कत्लेआमका इन्तजार नही करता रहता। फिर भी इस मामलेमें आप उससे ज्यादा जानते है। आपके व्यावहारिक ज्ञानमे मेरा आज भी वैसा ही अटल विश्वास है जैसा कि पहले था। इसलिए आप तय करके मुहम्मद अलीको उसपर अमल करनेके लिए कहे। मै अखबार पढे बिना जितना हो सकता है आप दोनोकी हलचलोकी खबर रखता हूँ। हमारे लिए बल्कि और भी ठीक कहूँ तो आपके लिए भी लडाई अभी शुरू ही हुई है। मै 'आपके लिए' सिर्फ इसलिए कहता हूँ, कि मै तो लोग जिन्हे मुश्किले, खतरे और शिकस्त कहते है, उनका अबतक आदी हो चुका हूँ। मेरा दिल और मेरी दुआएँ आपके साथ है।

दस लाखकी रकम इकट्ठा होनेतक मुझे कलकत्ता ही रहना है। यह एक कठिन काम है। पर गरीबसे-गरीब बगालीको भी पैसे और धेला देते हुए देखकर मुझे बड़ा अच्छा लगता है। आपको यह तो पता ही होगा कि मै स्वराज्यवादियोके लिए क्या कर रहा हूँ, और अभीतक कितना क्या कर चुका हूँ। मै जो-कुछ मदद कर सकता हूँ, करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ और खुद मुझे तो यही लगा है कि काग्रेसको पूरी तरह उन्हीके हाथमे रहना चाहिए। इसलिए हम लोग जो कौंसिलो-मे जाना ठीक नही मानते वे अगर काग्रेसमे रहते है तो अपने बलपर रहे। इस बार मैने समझौता करनेकी बातको टाल दिया है[1]। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी कोई भी निर्णय लेनेके लिए पूरी तरह स्वतन्त्र होगी, मेरे या किसी दूसरेके हस्त-क्षेपका सवाल नही उठता। मेरी हदतक मुझे इस बातका पक्का विश्वास होता जा

१. देखिए "भाषण: स्वराज्यदलकी बैठकमें", १७-७-१९२५ की पाद-टिप्पणी २।

रहा है कि अन्य सब-कुछ छिन्न-भिन्न हो जानेके बाद भी कताई और खद्दर तो बने ही रहेंगे। बड़ेसे-बड़े तूफानके बीच अडिग रहनेवाली अगर कोई चीज है तो वह है जोरदार और खतरेसे खाली रचनात्मक कार्यक्रम। मेरी समझमें शुएब मेरे मनमें क्या है, सो समझ गया है और शकरलाल भी; वह अभी यहाँ था। बाकीका सब आप उनसे तथा 'यंग इंडिया' से जान सकते हैं, जो दिन-ब-दिन दोस्तोंके नाम मेरे हफ्तेवाराना खतकी शक्ल अख्त्यार करता जा रहा है।

हृदयसे आपका,

मौलाना शौकत अली

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १९३३९) की फोटो-नकलसे।

२५५. पत्र : कृष्णदासको

२२ जुलाई, १९२५

प्रिय क्रिस्टोदास,

मैंने सतीश बाबूसे हरदयाल बाबूके[1] नाम सौ रुपये भेजनेको कहा है। मेरे दायें हाथमें कुछ तकलीफ है। इसलिए पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ।

तुम्हारे बारेमें मुझे सतीश बाबूसे मालूम होता रहता है। तुम्हें जल्दीसे-जल्दी तन्दुरुस्त और तगड़ा हो जाना चाहिए। सारी मानसिक चिन्ताएँ एक तरफ रख दो। उम्मीद है, तुम जल्दीसे-जल्दी कोमिल्ला जा रहे हो। जमनालालजी आतराई जा रहे हैं। चाँदपुर रवाना होनेसे पहले शायद वे कुछ दिन वहाँ रुकेंगे। इसलिए तुम तबीयत सुधार लेनेके ख्यालसे एकदम कोमिल्ला जा सको तो ठीक होगा।

हृदयसे तुम्हारा,

बी० कृष्णदास
द्वारा राधा माधवसिंह
चाँदपुर

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १९३३८) की माइक्रोफिल्मसे।

१. हरदयाल नाग।

२५६. पत्र : निशीथनाथ कुण्डूको

१४८, रसा रोड
कलकत्ता
२२ जुलाई, १९२५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। दीनाजपुर कमेटीकी स्थितिके बारेमें मैंने देशबन्धुसे चर्चा जरूर की थी। उन्होंने मुझे बताया था कि इस समय प्रान्तीय कमेटीके लिए आपकी-जैसी किसी जिला कमेटीको कोई मदद दे सकना कठिन है। कमेटीके पास पैसा नहीं है। ऐसी स्थितिमें मैं यही सलाह दे सकता हूँ कि जिन कार्यकर्त्ताओंका खादीमें पूरा विश्वास है उन्हें चाहिए कि वे खादी प्रतिष्ठानके साथ पत्रव्यवहार करके उसके अन्तर्गत कार्य करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (जी० एन० ८०२१) की फोटो-नकलसे।

२५७. कताई-सदस्यता

गत १७ जुलाईको स्वराज्यवादियों और अन्य लोगोंकी एक अनौपचारिक सभा हुई।[1] उपस्थित जनोंमें सभी विचारोंके लोग थे। उन सभीको और मुझे भी यह जँचा कि मताधिकारमें परिवर्तन करना आवश्यक है और कांग्रेसके मताधिकारमें सूत-कताई विकल्पके रूपमें स्थायी बना दी जाये, केवल प्रयोगके रूपमें न रखी जाये। इसका अर्थ यह हुआ कि मजदूरोंका कांग्रेसमें सीधे प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार स्थायी रूपसे स्वीकृत कर लिया गया। सभी लोगोंकी यह राय थी कि मताधिकारमें दूसरोंका कता सूत लेना बन्द कर दिया जाना चाहिए इससे लोगोंमें दम्भ उपजा है और बेईमानी भी पैदा हुई है। खुद-काता सूत या पैसा कितना दिया जाये यह प्रश्न अभी तय नहीं किया गया है। इसपर भिन्न-भिन्न रायें थीं। उपस्थित जनोंका बहुत बड़ा बहुमत इस बातके पक्षमें था कि खादी पहनना मताधिकारका स्थायी अंग मान लिया जाये। यह मेरी रायमें एक निश्चित लाभ हुआ है। तीसरी बात जो सर्वसम्मतिसे तय हुई यह है कि एक अखिल भारतीय चरखा संघ कायम किया जाये और वह कांग्रेसका एक अभिन्न अंग रहे। उसे इस बातका पूरा अधिकार दे दिया जाये कि वह कांग्रेसके

१. देखिए "भाषण: स्वराज्यदलकी बैठकमें", १७-७-१९२५।

कताईके कामका सचालन करे और काग्रेसके कारकुनके तौरपर कताई-सदस्यतामे भेजे जानेवाले सूतको प्राप्त करे और उसकी जाँच करे। यदि ये सिफारिशे मजूर हो गई तो इनका फल यह होगा कि स्वराज्यवादी काग्रेसके सूत्रधार बन जायेंगे और अखिल भारतीय चरखा सघ स्वराज्य दलका स्थान ग्रहण कर लेगा।

इन प्रस्तावोपर अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी १ अक्तूबरको होनेवाली बैठकमें विचार किया जायेगा। इस बैठकमे सदस्योकी आजादीपर किसी किस्मकी कैद न रहेगी। यहाँतक कि वे लोग भी, जो इस अनौपचारिक बैठकमे शरीक थे, अपनी वहाँ दी हुई रायसे बँधे न होंगे। यदि आगे विचार करनेपर उनकी राय बदल जाये तो वे इन प्रस्तावोके, जो उस बैठकमे रखे जायेंगे खिलाफ राय देनेके लिए आजाद होंगे। अ० भा० काग्रेस कमेटीके सदस्य उनमे अपनी इच्छाके अनुसार सशोधन पेश करने और आलोचना करनेके लिए भी स्वतन्त्र रहेंगे। हर शख्स एक काग्रेसीकी हैसियतसे, अधिक ठीक कहे तो अपनेको एक हिन्दुस्तानी समझकर बिना किसी दल या पक्षके दायित्वका लिहाज किये अपनी राय देगा। पाठक प० मोतीलालजीके नाम लिखे गये मेरे पत्रसे[1] देखेंगे कि मैंने स्वराज्यदलको अपना कर्त्तव्य समझकर पिछले सालके करारके दायित्वसे मुक्त कर दिया है। अ० भा० काग्रेस कमेटीमें उपस्थित किये जानेवाले प्रस्तावोपर गुण-दोषकी दृष्टिसे ही विचार किया जाना चाहिए। मैं नही चाहता कि कोई भी सदस्य, फिर वह स्वराज्यवादी हो या अपरिवर्तनवादी, मेरी मन तुष्टिका खयाल करके अपनी राय दे। हम एक प्रजासत्तात्मक सविधान बनानेके लिए प्रयत्नशील है। हर व्यक्तिको चाहिए कि वह अपनी अन्तरात्माके अनुकूल मत व्यक्त करे, किसी व्यक्ति-विशेषकी बात न सोचे, फिर चाहे वह कितना ही बडा क्यो न हो। मेरे नजदीक न कोई परिवर्तनवादी है और न अपरिवर्तनवादी। वे लोग जो कि कौसिलोमें जानेके हामी है तथा वे लोग जो कि उसके खिलाफ है, दोनो समान रूपसे देश-सेवा करते है, बशर्ते उनका कुछ करना या न करना देशप्रेमसे प्रेरित हो। बेशक, मै तो उन लोगोसे, जिन्हे कौसिलोके प्रवेशमे शुद्ध रूपसे अन्त करणकी आपत्ति नही है, यह भी कहूँगा कि वे स्वराज्यवादीदलमे तुरन्त शरीक हो जायें और उसे मजबूत बनाये।

मैं आशा करता हूँ कि अ० भा० काग्रेस कमेटीका हर सदस्य उसकी अगली बैठकमे उपस्थित होगा और कार्रवाईमें शरीक होकर अपनी राय देगा। जहाँतक मेरी बात है, मै यह नही चाहता कि यह मामला बहुमतसे तय किया जाये। जो-कुछ तय किया जाये वह लगभग सर्वसम्मतिसे तय किया जाना चाहिए।

इस प्रस्तावका हेतु काग्रेसके सविधानमे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करना है। मामूली तौरपर अ० भा० काग्रेस कमेटीको सविधानमें दखल देनेकी जरूरत नही होती। परन्तु ऐसा समय भी आता है जब ऐसा न करना सस्थाके प्रति गैर-वफादारीका काम हो जाता है। यदि देशका भारी लोकमत उसमे परिवर्तन करना चाहता है और उसमे देर-दारकी गुजाइश नही है तो अ० भा० काग्रेस कमेटीके लिए निहायत मुनासिब होगा कि वह उसमे परिवर्तन कर दे और उस परिवर्तनके परिणामोंको एव काग्रेस द्वारा की

१. देखिए "पत्र : मोतीलाल नेहरूको", १९-७-१९२५।

गई अपने कार्यकी निन्दाको अंगीकार करे। जब कोई कारकुन अपने मालिकके हितका काम करता है तब उसे हमेशा इस बातका हक होता है कि वह स्वयं जोखिममें पडकर भी मालिककी इच्छाके विषयमे अनुमान लगाये। आज जो अवस्था है उसमें मै यह बेखटके कहता हूँ कि यदि अ० भा० कांग्रेस कमेटीके सदस्योका एक बडा बहुमत पूर्वोक्त परिवर्तन करना चाहता है तो उसके लिए राष्ट्रका तीन महीनेका कीमती वक्त हिचकिचाहटमे व्यर्थ खोना अनुचित होगा। कांग्रेसके कानपुर अधिवेशनको, जिस मामलेका फैसला अ० भा० कांग्रेस कमेटी ही भली-भाँति कर सकती है, उसकी लम्बी चर्चासे मुक्त रखा जाना चाहिए। उसका समय दूसरे बडे-बडे प्रश्न तय करनेके लिए खाली रखा जाना चाहिए।

और यह बात भी ध्यानमे रहे कि मेरी पूर्वोक्त योजनाके अनुसार कांग्रेस प्रधानतः उस अर्थमें राजनैतिक सस्था हो जायेगी, जिस अर्थमे राजनैतिक शब्द मामूली तौरपर प्रचलित है। स्वराज्यवादी उसके राजनैतिक होनेके बजाय खुद कांग्रेसके बन जायेंगे और यह उचित भी है। यही वह छोटेसे-छोटा जवाब है, जो अ० भा० कांग्रेस कमेटी लॉर्ड बर्कनहेडको दे सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-७-१९२५

२५८. दमनका फल

एक प्रतिष्ठित अमरीकी सज्जनने मुझे डाक्टर मिलरकी 'रेसेज, नेशन्स ऐंड क्लासेज' नामक पुस्तकसे निम्न ज्ञानवर्धक अंश भेजा है :

> किसी भी दलित समूहमें अनेक परस्पर-द्वेषी गुट बन जाते हैं। आयरलैंडके लोग इसके लिए बदनाम हैं। सभी दलित राष्ट्रोंमें मतभेदोंका पाया जाना इसी बातका उदाहरण प्रस्तुत करता है। वहाँ अलग-अलग गुट स्वतन्त्रताके लिए अपने अलग संघर्षमें शक्ति केन्द्रित करते हैं और संघर्षके लिए अपने खास तरीके चुनते हैं। और जब ये गुट यह देखते हैं कि एक संयुक्त उद्देश्य पूरा करनेके लिए उन्हें साथ-साथ काम करनेकी जरूरत है तो तुरन्त ध्यान मतभेदोंकी ओर खींचा जाता है; भले ही ये मतभेद बहुत छोटे-छोटे ही क्यों न हों, फिर भी इन्हें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। स्वतन्त्र होनेपर व्यक्तियों और दलोंमें पाई जानेवाली मानसिक विकृतिका यह विशेष रूप धीरे-धीरे लुप्त हो जायेगा; लेकिन यह बात स्वीकार की जानी चाहिए कि सीमित स्वतन्त्रताका अनिवार्य परिणाम यही होता है।

फिर वे मित्र पूछते हैं, 'इससे क्या भारतकी स्थितिपर प्रकाश नही पड़ता?' इसस सचमुच भारतकी स्थितिपर प्रकाश पड़ता है और यही कारण है कि डाक्टर

बेसेंट जैसे लोग साम्प्रदायिक मतभेदोके बावजूद स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमे लगे है। इस तरह दोनों व्यक्तियोके लिए अवकाश है जो मतभेदोके होनेपर भी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका प्रयत्न करते है उनके लिए भी और जो स्वतन्त्रताका मार्ग प्रशस्त करनेके लिए मतभेदोको मिटाना चाहते है, उनके लिए भी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-७-१९२५

२५९. टिप्पणियाँ

"अलवर हत्याकाण्ड"

लोग जिसे 'अलवर हत्याकाड' कहते है उसके सम्बन्धमे कलकत्तेकी कार्यसमिति-मे श्री जमनालाल बजाजने एक प्रस्ताव उपस्थित किया था कि एक जाँच समिति नियत की जाये। बरसोसे काग्रेसकी यह परम्परा चली आई है कि वह रियासतोके भीतरी मामलोमे हस्तक्षेप न करे। कार्य समितिके सदस्योने अनुभव किया कि यह परम्परा अच्छी है और इसको तोडना नादानी होगी। तब श्री जमनालालजीने इसपर जोर न दिया। फिर भी मैंने उनसे यह कहा था कि मै 'यग इडिया'मे इस प्रश्नकी चर्चा करूँगा। और अपनी इस निजी रायके कारण बताऊँगा कि क्यो काग्रेसको रियासतोके भीतरी मामलोमे दखल न देना चाहिए। यदि कोई चाहे तो इसे समय-साधकता या चतुराई भी मान सकता है। इसमे ये दोनो बाते है ही, शायद इससे कुछ अधिक भी है। यह बात साफ कुबूल कर लेनी होगी कि खुद ब्रिटिश इलाकेमें काग्रेसको अपने आदेशोका पालन करवानेका जितना अधिकार है उतना रियासतोमे उसके पास नही है। इसलिए दूरदर्शिता कहती है कि जहाँ कार्य यदि नादानी नही तो व्यर्थका प्रयत्न हो, वहाँ अकर्म ही श्रेष्ठ होता है। पर यदि अकर्म दूरदर्शितापूर्ण हो तो वह लाभकारी भी है। काग्रेस रियासतोको दिक करना नही चाहती। वह तो उनकी मदद करना चाहती है। वह उनको नष्ट नही करना चाहती, उनमे सुधार करना चाहती है और काग्रेस अपनी इस सदिच्छाका परिचय कुछ भी हस्तक्षेप न करके देती है।

परन्तु काग्रेसके अलग रहनेका यह अर्थ नही है कि काग्रेसजन अपनी तरफसे कुछ न करे। जिनका रियासतोसे कुछ भी सम्बन्ध है वे अवश्य ही अपने प्रभावका उपयोग करेगे। स्थानीय समितियाँ दुःखी लोगोकी सहायता और निर्देशन कर सकती है, जहाँतक राजसत्तासे उनका सघर्ष न आये। काग्रेस वहाँ किसी काग्रेसीके कार्योपर अकुश भी नही रखती और न वह उन्हे नियमित ही करती है। क्योकि जब वे कोई काम वहाँ करते है तब काग्रेसीकी हैसियतसे नही करते है अत. उन्हे काग्रेसको बीचमे नही लाना चाहिए।

तब क्या रियासतोकी प्रजा काग्रेससे जो कि एक राष्ट्रीय संस्था होनेका दावा करती है, किसी तरहकी सहायताकी उम्मीद न करे? मुझे खेद है कि इसका उत्तर

अशत. 'नही' होगा। वे किसी तरहकी प्रत्यक्ष सहायताकी आशा न करे। हाँ, अप्रत्यक्ष सहायता उन्हे जरूर मिलती है। क्योकि जिस दर्जेतक काग्रेस कार्यदक्ष और शक्तिशाली होती चलती है उसी दर्जेतक रियासतोकी प्रजाकी दशा अच्छी होती जाती है। काग्रेसका नैतिक प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे देशके कोने-कोनेमें हुए विना नही रह सकता। ऐसी अवस्थामें मै आशा करता हूँ कि अलवरके दु खी लोग इस बातको समझ लेगे कि यदि काग्रेस उन्हे कोई सीधी सहायता नही पहुँचा सकती तो इसका कारण इच्छाका अभाव नही बल्कि क्षमता और अवसरका अभाव है।

आंग्ल भारतीयोंके लिए

डाक्टर मोरेनोने मुझे नीचे लिखे प्रश्न उत्तरके लिए दिये है·

१. आंग्ल भारतीयोंके वर्तमान कष्ट बहुत शोचनीय है और ज्यों-ज्यों दिन बीतेते जाते है, स्थिति ज्यादा खराब होती जा रही है। जो लोग बेकार है वे दान नहीं चाहते, काम चाहते है। मेरी समझमें औद्योगिक काम-धन्धे उन्हे ज्यादा मुआफिक होंगे। आप क्या उपाय बताते है?

खुशीकी बात है कि ये बेकार लोग दान नही चाहते। पर यह कहनेके लिए मै माफी चाहूँगा कि बेकार लोगोके लिए हाथ बुनाई एक औद्योगिक धन्धा हो सकता है। यो मै यह कुबूल करता हूँ कि आंग्ल भारतीय भाई अपनी मौजूदा तालीमके कारण बुनाईके योग्य नही रहे है, जिनमे असाधारण दृढ सकल्प हो उनकी बात अलग है। अनुमानित बातपर सलाह देना मुश्किल है। उत्साही और दानवीर आग्ल भारतीय भाइयोका काम है कि वे बेकार लोगोकी गणना करवाये और फिर इस बातपर विचार करे कि उनके लिए कौनसा धन्धा मुआफिक होगा और तब उसकी तालीम उन्हे दे।

२. आंग्ल भारतीय जैसी जातिको कताई और चरखेके सम्बन्धमें आपकी विचार प्रणालीके अनुकूल बनानेके लिए काफी लम्बे अर्सेतक बहुत सक्रिय प्रचार कार्यकी आवश्यकता है। पर यदि ये लोग यह दिखा सकें कि ये आपके तैयार किये कार्यक्रमके विरुद्ध नहीं है तो क्या आप इतनेसे संतुष्ट हो सकेंगे?

हाँ, मै इस बातसे सहमत हूँ कि एक व्रतके रूपमे भी कताईको अपनानेमे आग्ल भारतीय भाइयोके समुदायको कुछ समय लग सकता है; परन्तु खादी पहननेमे तो देरी करनेका कोई कारण ही नही है। खादीकी बनी जाकेट उतना ही काम देती है जितना कि विदेशी कपड़ेकी बनी जाकेट; और बिछौनेकी चादरे तो मिलकी मामूली चादरोसे कही मुलायम लगती है। जनताके साथ आत्मीय भावका अनुभव करनेपर ही आग्ल भारतीय भाइयोंको खद्दर पहननेकी इच्छा होगी। मेरी रायमें राष्ट्रीयताकी सच्ची भावनाकी पहली सीढी यही है।

३. आंग्ल भारतीय जाति भारतकी एक अल्पसंख्यक जाति है। आपके सब दलोंको सम्मिलित करनेके कार्यक्रममें उसका क्या स्थान होगा?

जो व्यवहार दूसरी अल्पसंख्यक जातियोके साथ किया जायेगा ठीक वही आग्ल भारतीय जातिके साथ किया जायेगा।

४. भविष्यमें आप भारतके लिए जो संयुक्त कांग्रेस बनाना चाहते हैं उसमें आपकी कताई-सदस्यता और अबतक आंग्ल भारतीयोंको कांग्रेसमें शामिल न किये जानेकी बातको ध्यानमें रखते हुए आप आंग्ल भारतीयोके प्रतिनिधियो-को किस आधारपर चुनेंगे?

हाल ही मे जो परिवर्तन तजवीज हुआ है उसके अनुसार सूतकी बात रद्द करके रुपया लिया जायेगा। यदि अबतक आंग्ल भारतीय भाई कांग्रेसमें शरीक नही हुए हैं तो इसका बडा कारण उनकी अनिच्छा ही है। यदि यह कहा जाये कि कांग्रेसको उनकी सहायता प्राप्त करनेके लिए खास तौरपर उद्योग करना चाहिए था तो मैं इतना ही कह सकता हूँ जो लोग अपनेको विदेशी और हिन्दुस्तानियोसे श्रेष्ठ समझते हो, जैसा कि अबतक आंग्ल भारतीय भाई करते आये है, उनके बारेमे ऐसा उद्योग करना कठिन है।

५. आप जानते ही हैं कि हमारी आंग्ल भारतीय जातिमें इन दिनो दो किस्मकी प्रवृत्तियाँ है—कुछ लोग तो यूरोपीयोकी ओर झुक रहे है और कुछ हिन्दुस्तानियोंकी ओर। आप सारी आंग्ल भारतीय जातिको (अ) अपने लाभके लिए तथा (ब) भारतके लाभके लिए क्या सलाह देते है?

मुझे इस दुःखदायी प्रवृत्तिका पता है। मेरी रायमे तो आंग्ल भारतीय भाइयोके लिए गौरवपूर्ण काम यही हो सकता है कि वे अपना भाग्य उन लोगोके साथ जोड ले जिनके बीच वे पैदा हुए हैं और जिनके बीच उन्हे रहना और जीवन बिताना है। अंग्रेजोका पुछल्ला बनकर रहनेका उनका निरर्थक प्रयत्न उनको स्थायी तथा उन्नतिशील जीवनमार्ग अपनानेसे रोकता है। यूरोपीय बननेकी आकांक्षा अस्वाभाविक है। अपने भारतीय माता या पिताकी तरफ तथा भारतीय वातावरणकी तरफ मुडना उनके लिए अत्यन्त स्वाभाविक और गौरवपूर्ण है। यह उनके लिए तथा उनकी मातृभूमि, भारतवर्ष, दोनोके लिए हर मानीमे लाभदायक होगा।

अनावश्यक अपव्यय

राजशाहीकी महिला सभा एक अत्यन्त सुन्दर आयोजन था। यूनिवर्सिटी इन्स्टी-ट्यूटकी बहनोकी सभाकी तरह वहाँ भी रुपयो और गहनोकी वर्षा हो गई थी। सच तो यह है कि बहनोने सभी जगह ऐसा ही किया है। पर राजशाहीमें तो उनकी वर्षा होती ही चली गई। एक बहुत बडी कताई-प्रतियोगिताका भी आयोजन किया गया था जिसमे कोई दो सौसे ज्यादा महिलाओंने भाग लिया। उनमे एक महिला बारीक सूत कातनेमे बहुत निपुण थी। उनका काता हुआ सूत अपर्णा देवीके, जो हालमे सर्वप्रथम आई है, सूतसे भी बढ़िया था। वे स्वय बहुत महीन सूत-से बुनी हुई एक साडी पहने थी। उन्होने बताया कि यह सूत उन्होने स्वय काता था। पर इस बहनका चरखा भी दूसरे सभी लोगोकी तरह बहुत आवाज करता था। वे सबके सब खिलौने ही थे। जिनपर पर्याप्त सूत काता ही नही जा सकता था। ये चरखे बाबू तारकनाथके बनाये हुए थे। वे इनके प्रति बहुत उत्साही हैं। पर उनका

उत्साह अन्धा है। वे यन्त्रोंकी कुछ थोड़ी जानकारी जरूर रखते हैं पर चरखोंके बारेमें कुछ नही जानते। मुझे लगता है कि वे कताईके सिद्धान्तोके बारेमे भी कुछ नही जानते। मैं उनसे यही प्रार्थना करूँगा कि वे अपने चरखे राजशाहीकी सुसस्कृत और देशभक्त बहनोंपर न लादे। यदि वे लाभकी दृष्टिसे ये चरखे बनाते हैं तो वे इन चरखोको वापस लेकर ठीक चरखे बनाये। यदि उन्हे बनानेका हेतु सेवा है तो इन निकम्मे चरखोको तोड़ दें, चरखोका वैज्ञानिक अध्ययन करें और जबतक सर्वोत्तम चरखेको अच्छी तरह देख न ले तबतक दूसरा चरखा न बनाये। मैंने बगालमे सिर्फ तीन ऐसे नमूनेके चरखे देखे हैं, जिन्हे अच्छा माना जा सकता है। इन तीनोमे से खादी प्रतिष्ठानका चरखा मुझे सबसे अच्छा लगा है। दूसरा यह है जिसे दुआ डण्डोके कार्यकर्ता काममे ला रहे हैं। उसकी विशेषता यह है कि तकुआ तिरछा लगाया जाता है। तीसरा बगालका पुराने ढगका चरखा है जिसकी पाटी छोटी, चक्र भारी और तकुआ लम्बा है। अच्छे चरखेकी पहचान है (१) वह शोर न करे और, (२) साधारण कातनेवाला भी उससे दस अंकका कमसे-कम चार सौ गज सूत प्रति घटा कात सके। मुझे मालूम हुआ है कि दूसरे दोनों नमूनोके चरखोसे प्रति घटा दस अंकका ६०० गज सूत काता जा सकता है। खादी प्रतिष्ठानके चरखेपर तो मेरे सामने ८५० गज सूत प्रति घटा काता गया। इस चरखेपर प्रतिष्ठानके सभी कार्यकर्ता ४०० गज प्रति घटा कात लेते हैं। चरखे बनानेवालोको यह मालूम होना चाहिए कि ऐसे शोर मचानेवाले चरखे, जिनसे औसत सूत भी नही काता जा सकता, बेचकर वे खादी-प्रचारके कार्यका अहित ही करेगे। मैं कार्यकर्त्ताओको चेतावनी देना चाहता हूँ कि वे पेशेवर या स्वेच्छया कताई करनेवालोको ऐसे घटिया किस्मके चरखे न दे। उन्हे मालूम है कि मेरे द्वारा बताये गये स्तरके चरखे उन्हे आसानीसे मिल सकते हैं। यदि बगालमे किसीके पास कोई अच्छा चरखा है तो वह उसे मेरे पास भेज दे। मैं वादा करता हूँ कि उसकी अविलम्ब जाँच की जायेगी और निर्णय तुरन्त बता दिया जायेगा। जनसाधारणके लिए कताई जिन्दगी और मौतका सवाल है। जो इसके प्रचार-कार्यमें लगे हैं वे इस बातका ध्यान रखे कि थोड़ी-सी जानकारीसे जबर्दस्त हानि बचाई जा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २३-७-१९२५

२६०. भाषण: मारवाड़ी अग्रवाल सम्मेलन, कलकत्तामें

[२४ जुलाई, १९२५ से पूर्व]

सभापति महोदय, भाइयो और वहनो,

आपने मुझको यहाँ आनेका निमन्त्रण दिया और अब आप मुझसे कुछ सुनना चाहते हैं। इन दोनो बातोके लिए मैं एहसान मानता हूँ। इस पत्रकमे दिये गये आजके प्रस्तावोका मैंने निरीक्षण कर लिया है। इसमे विधवा विवाहका प्रश्न उठाया गया है। और मेरा हवाला दिया गया है। इसपर मैं यही उचित समझता हूँ कि आपसे कुछ न कहूँ। मैं इसके बारेमे 'नवजीवन' और 'यग इडिया' मे कह चुका हूँ। जो भाई मेरे खयालातोको समझना चाहते हैं तो मैं उनसे यह निवेदन करूँगा कि वे वहाँ जो कहा गया है उसे पढ ले। इससे आपका समय भी बच जायेगा और आपका समाधान हो जायेगा।

सिद्धान्तकी दृष्टिसे हिन्दू समाजके अनेक सुधारोके विषयमे मैं दो बाते आपसे कह देना चाहता हूँ। आपमे से कितने ही भाइयोके साथ मेरा हार्दिक परिचय है। विधवा विवाहके बारेमे जो-कुछ मेरा मत है उसे मैंने 'नवजीवन' और 'यग इडिया' मे प्रकट कर दिया है, पर यहाँपर इतना अवश्य कह देना चाहता हूँ कि मैं एक सुधारक होते हुए भी जिस बातको स्वीकार कर लेता हूँ वह धर्मके विरुद्ध नही होती।

मैं जानता हूँ कि मेरी सुधारवृत्ति पश्चिमसे प्रभावित नही है। कुछ लोग मुझे पाश्चात्य सभ्यताका प्रचारक कहकर मेरी टीका करते है। अपने ऐसे टीकाकारोको मैं नादान समझता हूँ। उन्होने न तो मेरे विचारोको समझा है और न मेरे साथ रहकर मेरे जीवनके रहस्यको ही। जिस बातको मैं स्वीकार कर लेता हूँ — सत्याग्रही होनेके कारण मैं उसपर बराबर दृढ रहता हूँ। यहाँ सत्याग्रहका अर्थ प्रचलित सत्याग्रह नही है। वास्तवमे सच्चे अर्थमे सत्यका ही आग्रह करना सत्याग्रह है। जिस पाश्चात्य सिद्धान्तका मैं प्रचार करना चाहता हूँ उसे मैं स्पष्ट कह देता हूँ। जैसे आयुर्वेदके विषयमे मैंने कहा था कि पाश्चात्य देशोसे आरोग्य प्राप्त करनेके विषयमे जितना हमे सीखना है, सिखाना उससे बहुत कम है।

मैं अपनेको सनातनी हिन्दू समझता हूँ। जब विधर्मियो द्वारा इस धर्मपर चोट की जाती है तब हमे आन्तरिक क्लेश होता है। किन्तु मैंने हमेशा कहा है कि मैं वर्णाश्रम धर्मको मानता हूँ, परन्तु इसमे जो जातीय भेदभाव आ गये हैं उन्हे मैं मिटाना चाहता हूँ। मैं हिन्दू धर्मको अहिंसासे ओत-प्रोत धर्म समझता हूँ।

इस समय जातीय बहिष्कारके हथियारको आप अपने म्यानमे रखे। यह समय जातीय बहिष्कारका नही है। एक आदमीने अपनी अबोध विधवा बालिकाका विवाह कर दिया, इसपर आप उसका बहिष्कार कर देते हैं। परन्तु एक आदमी व्यभिचारी और मासाहारी है, उसका आप बहिष्कार नही करते। इस प्रकारके जातीय बहिष्कृतो-

की एक पृथक् जाति बन जायेगी और आपसमे ही द्वेष फैलेगा। मै १८८७ मे विलायत गया था। जब वापस आया तब — मेरी जातिमे भी कई फिर्के है — उनमें से कुछने तो मुझे मिला लिया और कुछने मेरा बहिष्कार कर दिया। फिर भी मेरा जातिवालोसे कोई विरोध नही है। मै अपना काम अहिंसात्मक नीतिसे लेता हूँ। मै उनको कष्ट नही देना चाहता। मै अन्त्यजोके साथ खा लेता हूँ। मै मुसलमानोके साथ भी खा लेता हूँ। इसपर मेरी जातिके कुछ लोगोने विरोध न किया। जातिवाले भोजमें मुझे नही बुलाते, परन्तु कुटुम्बियोको बुलाते है। हम सुधारककी निन्दा न करे। उसका बहिष्कार न करें। यदि आप हिन्दू सगठन करते है तो छोटी बातोको मोटी न माने और मोटीको छोटी न माने। आज जब जातिके अन्दर वर्णसकर हो गया है और व्यभिचार व्यापक हो गया है, और हम अपनी लज्जाकी रक्षा नही कर पाते तो फिर बहिष्कार किसका करे। इससे बेहतर तो यही है कि हम अपना ही बहिष्कार करे, यही आत्मशुद्धि है। हाँ, मै आपसे यह भी कहना चाहता हूँ कि बहिष्कारके शस्त्रका दुरुपयोग न करे।

मुझे यह देखकर परम सन्तोष है कि हिन्दुओमें मारवाडी समाज धनसम्पन्न समाज है। मै यह जानता हूँ कि यह समाज धन पैदा करना जानता है और धन पैदा करता भी है। मुझसे यह बात भी छिपी नही है कि मारवाडी कौम उदारतामे भी काफी बढी-चढी है। मारवाडी जाति जिस प्रकार धन कमाना जानती है वैसे ही वह उसे खर्च भी करती है। यह बात मै खूब जानता हूँ। पर इतना होते हुए भी इस मारवाड़ी कौममे एक बातकी कमी है, और वह कमी बहुत बडी है। वह है धनका अपव्यय। मारवाड़ी धन भी कमाते है और उसे सत्कार्यमे लगाते भी है। उनकी इच्छा रहती है कि उनके हाथो कोई धर्मकार्य हो। पर तो भी वे साधारणत अपने धनको ठीक तौरपर खर्च नही करते। इसलिए मेरा इस मारवाडी कौमसे अनुरोध है कि वह अपने धनका सदुपयोग करनेकी इच्छासे उसका व्यय करते समय कुछ बातोको ध्यानमे रखा करे। धनका व्यय करनेके पहले विचार बहुत ही आवश्यक होता है। आप धनके व्ययका विचार मनमें लाते समय उसके सदुपयोगपर गहराईसे विचार कर लिया करे। आप दानी और उदार है केवल इसीलिए आपको विचारसे बहुत अधिक काम लेना चाहिए। आप लोगोको मालूम होगा कि अमरीकामे आप लोगोमें से भी बडे-बडे लखपती और करोड़पति मौजूद है। वहाँ कारनेगी नामका एक करोडपति धनी पुरुष रहता था, मुझे मालूम नही कि अबतक वह जीवित है या नही — उसका यह स्वभाव था कि वह सभी काम अपने ही विचारोकी धुनमे आकर करता था; वह दूसरा क्या सोचते है इसपर कोई ध्यान नही देता था। एक बार उसके मनमें यह समाई कि रुपयेका कुछ सदुपयोग करना चाहिए। बस, वह अपना धन स्काटलैंड भेजने लगा — पुस्तकालयोके लिए। पर वहाँके अध्यापकोने कारनेगीको पत्र लिखा कि अपने द्रव्य भेजना बन्द करके स्काटलैंडकी रक्षा कीजिए। इसलिए हमें चाहिए कि हम यह बात पहले ध्यानमे रखें कि धन देना किस प्रकार चाहिए। हमेशा कोई भी कार्य भलीभाँति सोचकर करना चाहिए। आपको धन देते समय विवेक और विचारसे

काम लेना बहुत अधिक आवश्यक है। क्योंकि आपको यह समझ लेना चाहिए कि यदि विवेक और विचारसे काम लिये बिना धन खर्च किया जाये तो उसके सदुपयोगकी सम्भावना बहुत कम हो जाती है। इसलिए आप जैसी उदार कौमके लिए विचार और विवेककी बडी जरूरत है।

पारसी कौमपर तो मैं मुग्ध ही हूँ। मैं आज यहाँ कहना चाहता हूँ कि उदारतामे प्रथम पद पारसियोका और दूसरा यहूदियोका है। मुझे इससे बडा सकोच होता है कि तीसरा हिन्दुओमे मारवाड़ियोका है। पारसी जाति कितनी अधिक उदार है और कमसे-कम धनका व्यय करते समय वह किस विचार और विवेकसे काम लेती है यह मैंने स्वय देखा है। इसलिए यहाँपर अधिक न कहकर केवल इतना ही अनुरोध करता हूँ कि आप (मारवाडी) भाई यह बता दें कि हम हिन्दुओंमे भी एक जाति ऐसी है जो धन कमाने और उसका व्यय करनेमे एक ही है।

गोरक्षाके सम्बन्धमे मेरे विचार सबपर विदित हैं। मैंने बार-बार कह दिया है कि यह कार्य बहुत अच्छा है। पर मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि इस कामकी पद्धतिमे सुधारकी आवश्यकता है। मैंने स्वय इस काममे हाथ डाला है। पर मुझे सहायता नही मिली है। मेरा अनुभव भी इस दिशामें अच्छा है। मैंने कोई ३० वर्षों तक इसे सोचा-समझा है। कुछ तपश्चर्या भी कर ली है। मुझे सहायता मिलनेकी बात तो ऐसी है कि मैंने एक मारवाडी सज्जनसे गोरक्षा-कोषका खजानची बननेका अनुरोध किया और उन्होंने इनकार कर दिया, यद्यपि उनको कोषाध्यक्ष बनानेमें मेरा उद्देश्य उनसे रुपयेकी अत्यधिक सहायता लेना नही था, पर इतना सब होते हुए भी मैं जोर देकर यह बात कह देना चाहता हूँ कि अगर मारवाडी कौम गोरक्षा नही कर सकती अथवा वह गायोको नही बचा सकती तो मैं नही जानता कि दूसरी कौन-सी जाति है जो ऐसा कर सकती है। दूसरे शब्दोमे हिन्दुओमे अगर मारवाडी गोरक्षा नही कर सकते तो कोई नही कर सकता। पर गोरक्षामे अनेक बातोकी जरूरत है। इसमें जितने द्रव्यकी आवश्यकता है उतनी ही बुद्धि और समयकी भी है। इसलिए इस प्रश्नपर विचार करते समय इन तीनो बातोपर और इनसे सम्बन्धित अन्यान्य बातोपर भी पूरा ध्यान रखना चाहिए। तभी हमे अपने इस काममे सन्तोषजनक सफलता प्राप्त हो सकती है।

अन्तमे इतने धैर्य और शान्तिपूर्वक आपने मेरी बातें सुनी इसके लिए मैं आपका एहसान मानता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आप लोगोका कल्याण ही कल्याण करे।

आज, २४-७-१९२५

२६१. पत्र : मेडेलीन स्लेडको[1]

१४८, रसा रोड
कलकत्ता
२४ जुलाई, १९२५

प्रिय बहन,

मुझे आपका पत्र[2] पाकर खुशी हुई। उसका मुझपर गहरा असर हुआ। आपने जो ऊनके नमूने भेजें हैं, वे बढ़िया हैं।

आप जब आना चाहे खुशीसे आ सकती हैं। अगर मुझे मालूम हो जाये कि आप किस जहाजसे आ रही हैं, तो जहाजपर आपको लेने कोई आ जायेगा और साबरमती आनेवाली गाडीतक आपको छोड़ जायेगा। लेकिन इतना याद रखिए कि आश्रम-जीवन आरामका जीवन नही है। वह कठोर है। हरएक आश्रमवासी शरीरश्रम करता है। इस देशकी जलवायुका भी विचार कर लेना चाहिए। ये बाते मैं आपको डरानेके लिए नही, परन्तु सिर्फ चेतावनीके तौरपर लिख रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

चूँकि मेरे दाये हाथको आरामकी जरूरत है, इसलिए पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ।

अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ५१८२) से।
सौजन्य . मीराबहन

१. मीरा बहन (जन्म १८९२–) सन् १९२५ के नवम्बरमें आश्रममें आईं और उसके बाद बराबर गांधीजीके साथ उनकी प्रवृत्तियोंमें भाग लेती रहीं।

२. देखिए परिशिष्ट ६।

२६२. पत्र : कोण्डा वेंकटप्पैयाको

१४८ रसा रोड
कलकत्ता
२४ जुलाई, १९२५

प्रिय वेंकटप्पैया,

आपका पत्र अपनी पूर्णता, स्पष्टता तथा उसे यथासम्भव सयत बनाये रखनेके आपके निश्चयके कारण मुझे पसन्द आया।

मेरी अपनी स्थिति तो साफ ही है। काग्रेसने स्वराज्यवादी दलको अपने राजनीतिक कार्यक्रमको आगे बढानेका कार्य सौपा है। अत प्रत्येक काग्रेसी यह कह सकता है कि स्वराज्यवादी दल उसकी ओरसे राजनीतिक कार्यक्रमको चलाता है और जब भी उसे यह लगे कि वह स्वराज्यवादियोकी गतिविधियोका पूर्णत समर्थन नही कर सकता, वह काग्रेसको छोड सकता है अथवा काग्रेसमे रहकर उसका विरोध कर सकता है। किन्तु मेरी स्थिति तो ऐसी है कि न मै उसे छोड सकता हूँ और न ही उसमे रहकर उसका विरोध कर सकता हूँ। यदि मै कौसिलोमे काग्रेसका किसी प्रकारका राजनीतिक प्रतिनिधित्व चाहता ही हूँ तो मै उसकी लडनेकी सामर्थ्यके कारण केवल स्वराज्यदलको ही यह काम सौप सकता हूँ। ऐसा मै सिद्धान्तत कौसिल-प्रवेशके विरोधमे होते हुए भी कह सकता हूँ। एक भारतीयके नाते मुझे चोर और पुलिसमे से एकको चुनना है; यद्यपि अहिसामे विश्वास रखनेके कारण दोनो ही मेरे लिए समान रूपसे त्याज्य है। एक सामाजिक प्राणी होनेकी अपनी जिम्मेदारीसे मै कभी भी मुँह नही मोड सकता और इसलिए मुझे ऐसा चुनाव तो हमेशा करना ही पड़ेगा। इसी कठिनाईको देखते हुए हमारे ऋषि-मुनियोने उन लोगोके लिए, जो अपने बन्धु-बान्धवोके कार्यके सम्बन्धमे किसी प्रकारका उत्तरदायित्व नही लेना चाहते, गुफाओमें रहनेका विधान किया। वे आदमियोकी बस्तियो-भरसे ही नही बचते बल्कि उनके हाथका पैदा किया हुआ अन्न भी ग्रहण नही करते; वे केवल कन्दमूल-फल खाकर बसर करते है जिनके उत्पादनमे आदमीका कोई निमित्त नही होता। मै अपने आपको उस स्थितिके योग्य नही समझता। मै मानव-समाजमे रहता हूँ और इसलिए जहाँ-कही भी यह अनिवार्य होता है, अपनी मतिके अनुसार, जिनका मै अन्यथा समर्थन नही कर सकता, ऐसे बहुतसे कार्योके लिए अपने-आपको जिम्मेदार मानता हूँ। इसी प्रकार मेरे सामने अभी ऐसी स्थिति नही आई है कि मुझे कहना पडे कि मै काग्रेसमे नही रहना चाहता। स्वराज्यदलको सौपे गये कार्यका क्षेत्र निश्चित रूपसे सीमित है। सामान्य राजनीतिक कार्यकी हदतक ही मै उसे अपना मुख्तार मानता हूँ। उनके व्यक्तिगत चरित्र और व्यवहारकी जिम्मेदारी मै अपनी नही मानता। मालूम नही, मै अपनी बात समझाकर कह सका हूँ या नही। लॉर्ड बर्कनहेडके भाषण और निस्सन्देह देशबन्धुके निधनके कारण मैने जो कदम उठाया है, उससे आप परिचित है। अब मुझे

और अधिक समयतक कांग्रेसको प्रमुख रूपसे एक राजनीतिक दल बननेसे नही रोकना चाहिए, इसीलिए मैंने पण्डितजीको पत्र लिखा।[1] पर जबतक कि वह स्वय भी उसी मतके न हो, किसी भी कांग्रेसीको मेरे इस निर्णयके अनुसार नही चलना चाहिए। यह केवल मेरा अपना व्यक्तिगत विचार है; और चूंकि मैं यह नही मानता कि कोई भी दूसरा उसे किसी भी रूपमे माननेको बाध्य है, मैंने सोचा कि इस समय उसको प्रकट करनेसे स्वराज्यदलको बल मिलेगा और इसीलिए मैंने बिना किसी हिचकके वह पत्र लिख दिया। जहाँतक आपका सम्बन्ध है, अपने यहाँकी परिस्थितियोको तो आप जानते ही है; इसलिए अगर आपको ऐसा लगे कि स्वराज्यदलको आपके अप्रत्यक्ष समर्थन देनेका अर्थ मैं स्वराज्यवादियोके व्यक्तिगत विचार और व्यवहारको समर्थन देना लगा सकता हूँ तो आप स्वराज्यदलके विरोधमें कुछ भी न कहनेके अपने अटल निश्चयकी रक्षा करते हुए कांग्रेससे अपना सम्बन्ध-विच्छेद करनेमे जरा भी न हिचके। इस बारेमे और अधिक 'यग इडिया' में देखिए।

आशा है कि एक अक्तूबरको आप बम्बईमे होगे। इस बीच आप अपने विचार बताते हुए पत्र अवश्य लिखे। मेरे दाहिने हाथको आरामकी आवश्यकता है इसलिए पिछले तीन दिनसे आशुलिपिककी सहायता ले रहा हूँ।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११३४०) की फोटो-नकलसे।

२६३. भाषण: क्रिस्टोदास पालकी पुण्यतिथिपर[2]

२४ जुलाई, १९२५

सभापति महोदय और दोस्तो,

देरीसे पहुँचनेके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ, पर आपको यह तो पता ही है कि आजकल मेरे सम्मुख कितनी कठिनाइयाँ है। मेरे पास ऐसा एक भी मिनट नही है जिसे मैं अपना कह सकूँ और इसी कारण यह विलम्ब हुआ। मैं कार्यक्रममें रुकावट डालनेके लिए आपसे तथा श्री वर्ड्सवर्थसे भी जिनके भाषणको बीचमे रोककर मुझे समय दिया गया, क्षमा-याचना करता हूँ। मैं अपने देशवासियों तथा अन्य लोगोका, जो मेरी स्थितिको देखते हुए मुझे सब जगह इस प्रकारकी सुविधाएँ देते है, अत्यन्त आभारी हूँ।

मैं यह मानता हूँ कि क्रिस्टोदासके बारेमें मुझे बहुत कम मालूम है। मेरे जीवन-का स्वर्णकाल भारतसे बाहर आफ्रिकामे बहुत ही व्यस्ततामे बीता है तथा भारतमें क्या हो रहा है इसकी जानकारी रखनेमे मैं असमर्थ रहा। यद्यपि यह आत्मस्वीकृति

१. देखिए "पत्र: मोतीलाल नेहरूको", १९-७-१९२५।

२. यह सभा क्रिस्टोदास पालकी ४१ वीं पुण्यतिथिके अवसरपर यूनिवर्सिटी इंस्टीट्यूट, कलकत्तामें आयोजित हुई थी।

बडी ही अपमानजनक है, परन्तु आपके सामने मुझे अपना यह अज्ञान स्वीकार करना ही चाहिए। इसके साथ ही यहाँ इस समारोहमे आमन्त्रित किये जानेपर मै अपने-आपको सम्मानित हुआ अनुभव करता हूँ। मेरे लिए यह एक प्रसन्नताका विषय है कि मुझे आप लोगोके साथ अपने एक महान् देशवासीकी स्मृतिमे श्रद्धाजलि अर्पित करनेका मौका मिला। उनके पौत्रने कृपा करके उनकी रचनाओसे सम्बन्धित कुछ साहित्य मुझे दिया और अपने कुछ खाली समयमे कल मै उन्हे देख गया। उनके लेखोमे एक जगह स्वराज्यसे सम्बन्धित एक अनुच्छेद मेरे सामने आया। मुझे यह माननेमे तनिक भी सकोच नही कि अपने उस कठिन समयमे इस महान् व्यक्तिने वे सब बाते सोच ली थी जिन्हे कार्यरूप देनेके लिए आजकल हम यथासम्भव अपना पूरा जोर लगा रहे हैं। उनकी रचनाओमे मैने अन्य विषयोके सम्बन्धमे भी उनके विचार पढे। अपनी युवावस्थामे मै इतना जानता था कि वे अपने समयके एक महान् पत्रकार तथा एक निर्भीक देशभक्त थे। पर उनकी निर्भीकतामे परिष्कृत और शिष्ट विनम्रताका सयोग था, उन्होने जो-कुछ भी लिखा उसमे कही भी कटुताका समावेश नही होने दिया। वर्तमान पीढीको स्वतन्त्रता प्राप्तिके अपने सघर्षके लिए उस महान् आत्मासे मिले इस सन्देशको गाँठमे बाँधकर रखना चाहिए। हमे उनकी निर्भीकता और नम्रताका अनुकरण करना चाहिए, क्योकि नम्रताके विना निर्भीकता मात्र गाल वजाना है।

जो युवक यहाँ उस महान् देशभक्तका सम्मान करनेको इकट्ठे हुए है, उन्हे उनके जीवनका यह एक पाठ याद रखना चाहिए कि उन्होने अपने अन्तिम समय तक नम्रताको कभी नही छोड़ा। उसके विपरीत हमे उनकी स्मृतिको इसलिए भी सँजोये रखना चाहिए कि उन्होने इस सत्यको भी कभी नजरअन्दाज नही किया कि जिस व्यक्तिको विरोधियोसे काम लेना है तथा जिसे अनिच्छुक लोगोसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है, उसे और भी शिष्ट और नम्र बनना चाहिए। इसी वातको मै अपने शब्दोमे कहूँ तो अहिंसायुक्त निर्भीकता ही सच्ची निर्भीकता है। प्राचीन ऋषि-मुनियो द्वारा दिये गये उस एक शब्दमे मैने सारे गुणोको समाविष्ट कर लिया है। यदि यह सत्य है कि हिन्दूधर्म अहिंसासे ससिक्त है तव जीवनके प्रत्येक कार्यमे हमे इसे सर्वोच्च स्थान देना चाहिए।

मेरे वाद आनेवाले वक्ता जो उनके जीवनसे अधिक सम्बद्ध रहे है, निस्सन्देह उनके अन्य गुणोके बारेमे आपको बहुत-सी वाते बतायेगे। पर मेरी तुच्छ रायमे उनकी असख्य विशेषताओमे से कोई ऐसी विशेषता नही बता सकेगे जैसी कि मैने आप लोगोको बताई है। उसे आप जीवनमे उतार सकते है और सँजोकर रख सकते है। उस महान् व्यक्तिकी स्मृतिमे हमारा यहाँ इकट्ठा होना एक उत्तम वात है पर यह और भी उत्तम हो, यदि हम उनके गुणोको, आशिक तौरपर ही सही अपने जीवनमे उतार ले।

ईश्वर आपको और मुझे ऐसा करनेकी शक्ति दे जिससे हम अपने कामको और अधिक सुचारू ढँगसे कर सके।

[अग्रेजीसे]

फॉरवर्ड, २५-७-१९२५

२६४. भाषण : यूरोपीय संघकी बैठकमें[1]

कलकत्ता
२४ जुलाई, १९२५

इसके बाद महात्मा गांधीने भाषण दिया।

उन्होंने खड़े होकर भाषण न देनेके लिए क्षमायाचना की और बताया कि ५ या ६ वर्ष पूर्व मुझे अतिसारका भयानक प्रकोप हो गया था। उसके कारण मेरा शरीर शक्तिहीन हो गया है। मैं आपके संघको मुझे आमन्त्रित करनेके लिए धन्यवाद देता हूँ।

सहयोगके लिए तो मैं व्याकुल हो रहा हूँ।[2]

गांधीजीने आगे कहा कि जब कभी मुझे यूरोपीयोंसे कहीं और किसी भी सिलसिलेमें मिलनेका अवसर आता है तो मुझे सचमुच प्रसन्नता होती है। और चूँकि मेरी नीति अहिंसाकी है इसलिए मुझे स्वयं तो किसी भी प्रकारकी कोई क्षति पहुँचनेका भय नहीं है।

आप लोग जो भी प्रश्न करना चाहे, कर सकते हैं और जो-कुछ कहना चाहे कह सकते हैं। मैं उसे सद्भावपूर्वक ग्रहण करूँगा। विधाताने इंग्लैंड और भारतको एक साथ ला खड़ा किया है और वह भी एक अच्छे उद्देश्यके लिए, अर्थात् मानवताकी सेवाके लिए। मैं व्यक्तिगत रूपसे यूरोपीयोंके दृष्टिकोणको समझनेका अवसर हाथसे कभी जाने नही देता। इसी भावनाको लेकर मैं आज इस शामको आपके पास आया हूँ और आपसे यही भावना अपनानेकी प्रार्थना करता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि इसमें बजाय भारतीयोंके अंग्रेज लोग पहले आगे बढ़ेंगे।

महात्माजीने कहा कि मैं स्पष्ट रूपसे स्वीकार करता हूँ कि जो विषय मुझे दिया गया है वह विशेष आकर्षक नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि यह विषय अन्य अनेक विषयोंके मुकाबिले विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं है। आज मुझे जिस विषयपर बोलना है वह है "कलकत्ताके मेयरके चुनावमें मैंने हस्तक्षेप क्यों किया?"[3] मैंने सुना है कि मेरी कार्रवाईसे यूरोपीय और भारतीय दोनों ही नाराज हैं। किन्तु हस्तक्षेप मैंने अपनी मर्जीसे नहीं किया था।

१. यह बैठक डब्ल्यू० डब्ल्यू० पेजकी अध्यक्षतामें ग्रेंड होटलमें हुई थी; गांधीजीके भाषणके पहले श्री पेजने उनके परिचयमें कुछ शब्द कहे थे।

२. २५ जुलाई, १९२५के इंग्लिशमैनमें प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार गांधीजीने कहा कि कुछ समय पूर्व एक अंग्रेज मित्रने मुझे लिखा था कि यद्यपि आप अपनेको असहयोगी कहते हैं फिर भी आप सहयोगके लिए व्याकुल रहते हैं। मैंने उनको लिखा कि आप ठीक कहते हैं।

३. देखिए "कलकत्ताके मेयर", १६-७-१९२५।

मैंने श्री जे० एम० सेनगुप्तकी नामजदगीका समर्थन क्यों किया, किसी औरका क्यों नहीं? जैसा कि आप लोग जानते हैं, मैं कुछ महीनोंसे कहता आ रहा हूँ कि जहाँतक भारतीय राजनीतिका सवाल है, मैंने स्वराज्यवादियोंको अपना मुख्तार बना दिया है। मैंने देखा है कि वे त्यागकी क्षमता रखते हैं, अपने देशसे तो प्रेम करते ही हैं, और फिर भी अंग्रेजोंसे घृणा नहीं करते। इसीलिए मैंने अपना भाग्य स्वराज्यवादियोंके साथ जोड़ दिया है। मैंने आपके इतिहासका अध्ययन किया है। मैंने आपकी कुछ संस्थाओंको विकसित होते देखा है, उदाहरणके लिए दक्षिण आफ्रिकामें आप लोगों द्वारा संचालित कुछ संस्थाओंको अपनी आँखोंके सामने बढ़ते हुए देखा है। आज भारतमें स्वराज्यवादी दल सबसे शक्तिशाली राजनीतिक दल है। यह नहीं कि हम यह बात जान ही नहीं सकते बल्कि हम यह जाननेकी परवाह ही नहीं करते कि यूरोपीयों और भारतीयोंमें एक दूसरेसे इतना अलगाव क्योंकर पैदा हो गया है।

अंग्रेजोंके सबसे बड़े हितैषियोंमें से एक हमारे बीचसे उठ गया है। उसका स्थान अभी खाली है। उनके अनुयायियोंमें उसका जैसा जादू किसीके पास नहीं है। वे उसका भार उठानेमें असमर्थ हैं।

इन्हीं शब्दोंमें महात्माजीने स्वर्गीय श्री चितरंजन दासका उल्लेख किया।

इसके बाद वे बोले कि मेरे दिमागमें पहला विचार यह आया था कि कलकत्ताका मेयर कोई मुसलमान होना चाहिए। मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ कि मैं हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रश्नमें कितनी दिलचस्पी लेता हूँ।'

यदि आपके बीच कोई योग्य और ईमानदार मुसलमान हो — उसके इन दोनों गुणोंके बारेमें फैसला तो केवल आप ही करेंगे — और यदि वह निगमकी सेवा दत्तचित्त होकर कर सकता है तो मेरा कर्तव्य होगा कि मैं इस पदके लिए उसके नामकी सिफारिश करूँ।

किन्तु दूसरे ही दिन एक मुसलमान नेता, मौलाना अबुल कलाम आजाद, मेरे पास आये। उन्होंने मुझसे कहा कि कोई भी मुसलमान इस पदके योग्य नहीं है, इसलिए उन्होंने मुझसे श्री जे० एम० सेनगुप्तकी सिफारिश करनेको कहा। अब सोचिए मौलाना अबुल कलाम आजादका न तो निगमसे ही कोई सम्बन्ध था और न स्वराज्यवादी दलसे ही। किन्तु वे भारतके योग्यतम मुसलमानोंमें से हैं। मैंने मौलानासे पूछा कि वे श्री जे० एम० सेनगुप्तको क्यों चाहते हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया, "क्या आप स्वराज्यवादी दलमें एकता रहे, यह नहीं चाहते?"

गांधीजीने कहा कि मुझे चटगाँवमें श्री जे० एम० सेनगुप्तसे मिलनेका सुअवसर मिला था। श्री सेनगुप्तने कौंसिलमें विशेष योग्यताका परिचय दिया है। वे बंगाल स्वराज्यवादी दलके नेता तथा बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष हैं। मुझे यह स्वीकार करना होगा कि मेरे विचारमें यदि उन्हें योग्य सहायक मिलें तो वे अपने कन्धोंपर इन तीनों पदोंका भार सँभाल सकते हैं। और यदि श्री सेनगुप्त मेयरका

१. अनुवर्ती दो अनुच्छेद २५-७-१९२५ के इंग्लिशमैनमें छपे विवरणसे लिये गये हैं।

उत्तरदायित्व सम्भाल सकते हैं और कलकत्ताके नागरिकोंकी दृढ़तापूर्वक सेवा कर सकते हैं तो श्री सेनगुप्तका उपर्युक्त पद प्राप्त करना सर्वथा उपयुक्त है।

मेरा खयाल है कि मैंने आपको इसका कारण पूरी तौरपर बता दिया है कि मैंने श्री जे० एम० सेनगुप्तका नाम मेयरके पदके लिए क्यो पेश किया है। मैं उन आपत्तियोसे अपरिचित नही हूँ जो अखबारोमे उठाई गई है। मैं आपको निर्भीकतापूर्वक और सचाईके साथ यह बताना चाहता हूँ कि मैंने उनके नामकी सिफारिश किस कारण की है। यदि आपका यह खयाल है कि श्री सेनगुप्त अपने व्यक्तिगत या अपने दलके स्वार्थको सिद्ध करनेके लिए ही निगममें गये है तो यह सही नही है। यकीन कीजिए कि आप गलतीपर हैं। मैंने सुना है कि इसे 'टमानी हॉल' कहा गया है। किन्तु आप इस बातको अपने दिमागसे निकाल दे। इस प्रकारके तरीकोको त्यागनेवालोमे मेरा नाम सबसे आगे होगा। जिन तरीकोके जरिये मेरा देश ऊपर उठ सकता है, वे ईमानदारीके ही तरीके है। यदि मैंने अपनेको कलकत्ताके मामलोमे डाला है तो मैंने वैसा आपकी सेवा करनेके उद्देश्यसे ही किया है। मैंने इस प्रश्नपर हर पहलूसे विचार कर लिया है। श्री सेनगुप्तमें मेयरके पदका उत्तरदायित्व निभानेकी पूरी योग्यता है और यदि मैं उनकी हिमायतमे यह न कहता तो अन्याय होता कि यदि श्री सेनगुप्तके विरुद्ध कोई बात नही है तो उन्हे कलकत्ताका मेयर चुन लिया जाना चाहिए।[1]

उन्होंने कहा कि मैं सर ह्यूबर्ट कारके 'राजनीतिक सत्ताका दुरुपयोग करके अपना घर भरना' इन शब्दोंको पसन्द नहीं करता, क्योंकि संसारकी राजनीतिमें यह एक बहुत ही प्रचलित सिक्का है।[2] एक आपत्ति यह उठाई गई है कि श्री सेनगुप्त कलकत्ताके लिए एक बिलकुल अजनबी व्यक्ति हैं। मैं यह बात पहले नहीं जानता था। श्री सेनगुप्तकी शिक्षा कलकत्तेमें हुई है और उन्होंने अपने जीवनका सर्वोत्कृष्ट भाग इसी नगरमें व्यतीत किया है।

मैं यह सिद्धान्त निर्धारित करना पसन्द करूँगा कि अन्य सब बातें समान होनेपर राजनीतिक दल जिसे भी सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति समझे, उस व्यक्तिको निर्वाचित करनेका उसे अधिकार है।[3]

१. सर ह्यूबर्ट कार, हैरी हॉब्स तथा अन्य सदस्योंने अपने भाषणोंमें सेनगुप्तके मेयर पदके लिए निर्वाचनके प्रस्तावकी आलोचना की थी। गांधीजीने उन्हें इसका उत्तर संक्षेपमें दिया।

२. २५ जुलाई, १९२५के इंग्लिशमैनमें छपी रिपोर्टके अनुसार गांधीजीने कहा था: "... यदि यह राजनीतिक स्वार्थसाधना है तो यह सारे संसारमें अत्यन्त व्यापक रूपसे प्रचलित है। यह देखकर कि यह राजनीतिक संसारमें दीर्घकालसे प्रचलित है इसके लिए कुछ कम ग्लानिसूचक शब्द प्रयुक्त करना अधिक अच्छा होगा।"

३. इंग्लिशमैनकी रिपोर्टके अनुसार गांधीजीने आगे कहा: "जबतक दलका स्वार्थ निगमके उच्चतम स्वार्थसे नही टकराता तबतक यदि वह राजनीतिक दल अपनी स्थितिको अच्छा बनानेके अवसरका लाभ उठानेसे चूकता है तो वह अपने प्रति हिंसा करता है। . . . गांधीजीने कहा कि आप लोग सर ह्यूबर्ट कारके इस कथनकी ओर जरा भी ध्यान न दें कि यह एक राजनीतिक स्वार्थसाधना है, क्योंकि स्वयं सरकारने राजनीतिक स्वार्थसाधनाका मार्ग अपनाया है।

महात्मा गांधीने आगे कहा कि श्री सेनगुप्तने वादा किया है कि जबतक वे मेयरके पदपर रहेंगे तबतक वे अपने राजनीतिक विचारोंका उपयोग नहीं करेंगे। अब बताइए इस पदके लिए एक प्रशिक्षित वकीलकी अपेक्षा और कौन व्यक्ति बेहतर हो सकता है? उन्होंने स्वर्गीय सर फीरोजशाह मेहताका उल्लेख करते हुए कहा कि सर फीरोजशाह मेहता बम्बई निगमके मेयर थे तथा अपने दलके नेता भी थे।

जिस श्रेष्ठताके साथ उन्होंने बम्बई नगरपालिकाको चलाया वैसे कोई भी नही चला पाया। स्वराज्यवादी दलने भारतमे अनुसरित किसी भी सिद्धान्तका उल्लघन नही किया है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, २५-७-१९२५

२६५. मेरा धर्म

इस ससारमे केवल परमात्मा ही अविचल और निर्विकार है। अन्य सब वस्तुओकी उन्नति अथवा अवनति होती है। जो सस्था परिवर्तनकी आवश्यकता होनेपर भी बदलती नही है, समझना चाहिए कि उसका अन्त निकट आ रहा है। काग्रेस तो अभी अपनी बाल्यावस्थामे है। अभी उसे बहुत ऊँचा उठना है, इसलिए उसमें परिवर्तन तो होते ही रहेगे। इसके सविधानमे जो दोष दिखाई दिये है वे दूर किये जाने चाहिए।

इसके अतिरिक्त देशबन्धुके निधनसे और लॉर्ड बर्कनहेडके भाषणसे स्थिति ऐसी उत्पन्न हो गई है कि काग्रेसके सविधानमे उचित परिवर्तन तो अविलम्ब कर दिये जाने चाहिए।

मै बेलगाँवके अधिवेशनके बाद देख रहा हूँ कि मताधिकारकी धारामे परिवर्तन करनेकी माँग लगातार की जा रही है।[1] मै यह भी देख रहा हूँ कि शिक्षित वर्ग मेरी कार्य-पद्धतिसे असन्तुष्ट रहता है। बहुत-से शिक्षित लोग चाहते है कि काग्रेस कमेटियोको राजनैतिक अर्थात् विधानसभाओसे सम्बन्धित मामलोमे भाग लेना चाहिए।

मै इनमें से किसी भी माँगके आडे नही आना चाहता। इसका अर्थ यह नही है कि मै स्वय इन परिवर्तनोको करवाना चाहता हूँ। किन्तु मै लोकमतको समझने, मानने और उसका मान करनेवाला हूँ। किन्तु जब मुझे लोकमत अनुचित लगता है तब मै स्वय जोखिम उठाकर — लोगोको जोखिममे डाल कर नही — उसका विरोध करना अपना धर्म भी मानता हूँ। इस समय तो मेरे सम्मुख विरोध करनेका कोई कारण नही है। काग्रेसके लोकमतका अर्थ है शिक्षितवर्गका मत। काग्रेस शिक्षितवर्गकी

१. दिसम्बर १९२४ में हुए अधिवेशनमें काग्रेसकी सदस्यताके लिए सूत कातना अनिवार्य कर दिया गया था।

ही कृति है। कांग्रेस अथवा शिक्षितवर्गने देशकी बहुत सेवा की है। शिक्षितवर्गसे मेरा जो मतभेद है, उसके कारण मैं उसकी सेवाओंको नही भुला सकता। मेरी दृष्टिसे तो मुझे शिक्षितवर्गको साथ रखकर ही काग्रेसको ग्रामवासियोकी सस्था बनानेका प्रयत्न करना चाहिए। जबतक हम स्वय शरीरश्रम करके काग्रेसमें सम्मिलित न होगे तबतक काग्रेसमें गाँवोके लोगोका सच्चा प्रतिनिधित्व नही हो सकेगा। किन्तु मैं यह बात शिक्षितवर्गको नही समझा सका हूँ। कुछ थोडे-से व्यक्ति इस बातको समझ गये है, किन्तु पूरा वर्ग तो इसे नही समझा है। मुझे धीरज रखकर शिक्षितवर्गको काग्रेसमें सम्मिलित करनेका मार्ग जितना सरल किया जा सके उतना सरल कर देना चाहिए। मैं अपना दायित्व देशबन्धुके जीवित रहते हुए इतना नही समझता था। वे और मोती-लालजी शिक्षितवर्ग और मेरे बीच कडीके समान थे। उनमे से एकका निधन होनेसे मोतीलालजीकी परेशानीको समझना मेरा स्पष्ट धर्म हो गया है।

मैं देखता हूँ कि शिक्षितवर्गने हाथ-कता सूत खरीद कर देना भी बोझ माना है, क्योकि उन्हे सूत कातनेमे श्रद्धा है ही नही। इसका परिणाम यह हुआ है कि काग्रेसमें दम्भ और असत्यका प्रवेश हो गया है। वही सूत अलग-अलग लोगोने चन्देमे दिया, ऐसा भी हुआ है। इस अनर्थके होनेका भय मेरे सम्मुख बेलगाँवमे ही प्रकट किया गया था। किन्तु मैंने उनकी परवाह नही की थी। मैंने यह मान लिया था कि नियमको तो सभी मानेगे और कोई भी असत्याचरण न करेगा। किन्तु मेरा यह अनुमान झूठा निकला। इसलिए मुझे लगता है कि सूत खरीदकर देनेकी धारा जरूर रद्द की जानी चाहिए। मुझे पण्डितजी और दूसरे स्वराज्यवादियोने बताया था कि स्वराज्य दल और मेरे बीच जो समझौता[1] हुआ है उसके कारण स्वराज्यवादी इस नियमको रद्द करवानेकी इच्छा रखते हुए भी एक वर्षतक उसको रद्द करनेकी माँग नही कर सकते। इसलिए मैंने निश्चय किया है कि मैं उनको इस समझौतेसे मुक्त कर दूँगा, लेकिन मैं स्वयं जैसा परिवर्तन वे कराना चाहते है, उससे सहमत न होऊँगा। मैं उनको इस आशयका पत्र भी लिख चुका हूँ।

मुझे यह मालूम हुआ है कि सब स्वराज्यवादी खरीदकर सूत देनेके बजाय पैसा देनेकी पुरानी प्रथाको फिर बहाल कराना चाहते है। सबका निश्चय यह जान पडता है कि जिन्हे अपना श्रम लोगोको देना है, उनको काग्रेसमे स्थायी रूपसे स्थान दिया जाये। मुझे तो इससे बहुत सन्तोष हुआ। मैं इतनी सहिष्णुताका स्वागत करता हूँ। इसका अर्थ यह हुआ कि काग्रेसमे सूत कताईका स्थान सदाके लिए रहा। अब यह देखना है कि ऐसे श्रद्धालु सूत कातनेवाले कितने निकलते है। यदि अखिल भार-तीय काग्रेस कमेटी यह परिवर्तन[2] कर दे तो सूत कातनेवालोंकी परीक्षा हो जायेगी।

मताधिकारकी धाराका दूसरा भाग खादी पहननेके नियमके सम्बन्धमें है। अधिकांश स्वराज्यवादी इस शर्तको हटाना नही चाहते। यदि शिक्षितवर्ग इस शर्तका सचाईसे पालन कर सके तो मैं इसे हिन्दुस्तानका परम सौभाग्य समझूँगा। अभीष्ट यह

१. गाधी-नेहरू-दास समझौता, जिसकी पुष्टि बेलगाँव काग्रेसमें की गई थी।

२. सितम्बरमें होनेवाली बैठकमें।

है कि अब जो भी परिवर्तन स्वीकार किया जाये वह प्रयोग रूपमे न हो, सदस्योंकी इच्छासे स्थायी कर दिया जाये।

तीसरी बात काग्रेसमे स्वराज्यदलके स्थानके सम्बन्धमे है। इस समय स्वराज्य-दलको काग्रेसके एलची या मुख्तारका स्थान प्राप्त है। दल इसके बजाय काग्रेसके नेता या मुखियाका स्थान प्राप्त करना चाहता है। मुझे ऐसा लगता है कि इस समय हमारे सामने जो स्थिति उपस्थित है उसमे काग्रेसमे स्वराज्यवादियोंकी सभी गति-विधियोका बहिष्कार कायम रखना उचित नही है। इसके बजाय यह उचित मालूम होता है कि स्वराज्यवादियोकी खास प्रवृत्ति ही काग्रेसकी मुख्य प्रवृत्ति बन जाये और सूत कताई और खादी प्रचारका कार्य हमारे इन्ही प्रतिनिधियोकी मार्फत हो। काग्रेसके नामकी नौकाकी जितनी आवश्यकता स्वराज्यवादियोको है या हो सकती है उतनी चरखेकी प्रवृत्तिके लिए नही है। चरखेकी प्रवृत्तिकी सफलता केवल रचनात्मक कार्य-पर निर्भर है। इसके विपरीत स्वराज्यवादियोकी प्रवृत्ति लोकमत तैयार करनेपर निर्भर है। इसलिए मेरा विचार यह है कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी अपनी अगली बैठकमे स्वराज्यवादियोको काग्रेसमे प्रमुख बना दे और सूत कताईकी प्रवृत्तिको चलानेके लिए एक नई सस्था बना दे तथा उसे काग्रेसका अग बनाकर इस प्रवृत्तिकी जिम्मेदारी सौप दे। ऐसा करनेसे खादी-प्रचारमे भी एक प्रकारकी सुविधा होगी और कताई सस्था मतोपर निर्भर न रहनेसे लोकमतके परिवर्तनके जोखिमसे भी बच जायेगी। सूत कताईके पक्षमे लोकमत बन जानेपर उसका प्रचार केवल धन- और व्यवस्थापर अर्थात् व्यापार-कुशलतापर निर्भर रहेगा। इसलिए वह सस्था काग्रेसकी व्यापार सस्था बन जानी चाहिए। ऐसा लगा था कि जो नेता कलकत्तामे इकट्ठे हुए थे[1] उनका मत ऐसा करनेके पक्षमे भी था।

मुझे अपना कर्तव्य तो बिलकुल स्पष्ट दिखाई देता है। मुझे अपनी शक्ति और अपने सिद्धान्तके अनुसार स्वराज्य दलकी सहायता करनी चाहिए, काग्रेसकी प्रधान प्रवृत्ति राजनीतिमे भाग लेना बन जाये, इसका विरोध नही करना चाहिए और अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको इस आशयका सुधार करनेका सुझाव देना चाहिए कि लोग मताधिकारके लिए सूत खरीद कर देनेके बजाय पैसा ही दे। मुझे लगता है कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीमे जो लोग मेरी भाँति अपरिवर्तनवादी है उनका कर्त्तव्य भी यही है। किन्तु कमेटीका इस बैठकमे कोई करार रखनेका विचार नही है। प्रत्येक सदस्य अपनी स्वतन्त्रताका उपयोग कर सकेगा। मैने किसी कार्रवाईसे किसीको बाँधा नही है। मैने स्वराज्यदलको बन्धनसे मुक्त कर दिया है। इसलिए स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादी दोनो अपनी-अपनी इच्छाके अनुसार मत दे सकेगे और देगे, मै भी यही चाहता हूँ।

अब एक प्रश्न विचारणीय बच रहता है। काग्रेसकी प्रतिनिधि समिति, अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी, काग्रेसके बनाये नियममे परिवर्तन कर सकती है या नही?

१. १६ तथा १७ जुलाई, १९२५ को हुई काग्रेस कार्यसमिति और स्वराज्यदलकी बैठकोंके सम्बन्धमें

वह सामान्यतः तो नहीं कर सकती; किन्तु असामान्य स्थितियोंमें कांग्रेसके विशुद्ध लाभकी खातिर परिवर्तन अवश्य कर सकती है। मुख्तार या आढ़तिया मालिककी बाँधी हुई मर्यादासे बाहर नहीं जा सकता। किन्तु मुख्तार अपनी जोखिमपर और मालिकके लाभके लिए बहुत-कुछ करनेका साहस कर सकता है। उसके लिए जोखिम यह है कि मालिक उसका मुख्तारनामा रद्द कर सकता है। यदि मुख्तारको अपने जोखिमपर काम करते हुए आर्थिक हानि हो जाये तो वह उसे अवश्य सहन करेगा, क्योंकि कोई मुख्तार अपने मालिककी मंजूरीके बिना उसे जोखिममें तो नहीं डाल सकता। संक्षेपमें कहें तो अनुमति या अधिकारके बिना किये कार्यका लाभ उठानेका हक तो मालिकको है; किन्तु उससे हुई हानिको सहन करना उसका कर्त्तव्य नहीं है। उसी नियमसे यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अपनी जिम्मेदारीपर बिना अधिकारके चाहे जैसा परिवर्तन करे तो उसके सामने दो जोखिमें आयेंगी। एक जोखिम यह है कि कांग्रेस उसके इस कार्यको अनुचित ठहराकर उनकी निन्दा कर सकती है। दूसरी जोखिम यह है कि यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी संकटके समय नियमसे परे हटकर जो कार्य करना उचित है उसे न करे तो उस हदतक वह भीरु और अशक्त समझी जायेगी।

किन्तु ऐसे परिवर्तन सदा तभी किये जाते हैं जब वे सर्वसम्मत हों। यदि उनका विरोध करनेवाले सदस्योंकी खासी संख्या हो तो ऐसा परिवर्तन करना अनियमित होनेके अतिरिक्त अनुचित भी है।

सदस्य मेरी सलाह या सिफारिशसे कुछ भी न करें। वे कांग्रेसका अर्थात् लोगोंका हित समझकर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें चाहे जो सर्वसम्मत परिवर्तन करें। मैं चाहता हूँ कि बैठकमें कोई भी सदस्य स्वराज्यवादी और अपरिवर्तनवादीकी वृत्ति लेकर न आये। सभी कांग्रेसके सदस्यके रूपमें, अच्छा हो भारतीयके रूपमें, आयें। मुझे आशा है कि इस महत्त्वपूर्ण बैठकमें सभी सदस्य उपस्थित होंगे। मैंने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्योंको व्यर्थ कष्ट कभी नहीं दिया है। मैं उनको इस समय जो कष्ट दे रहा हूँ, वह विवश होकर ही दे रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-७-१९२५

२६६. अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक

जैसे बंगालने देशबन्धुकी स्मृतिको स्थायी बनानेके लिए दस लाख रुपये इकट्ठे करनेकी प्रतिज्ञा की है और उनके पूर्वजोके घरमे एक जनाना अस्पताल बनाने और रोगियोके लिए परिचारिकाएँ प्रशिक्षित करनेका निश्चय किया है, वैसे ही समस्त देशको भी देशबन्धुकी पुण्यस्मृतिको अमर बनानेका निश्चय करना उचित है। यह कार्य किस प्रकार किया जाए इसके सम्बन्धमें मैंने बंगाली भाइयोंसे तो सलाह की ही है किन्तु मैं मोतीलालजीकी सलाह लिये बिना कोई सुझाव नही दे सकता, ऐसा मेरा मत था और इसी कारण मैंने अभीतक इस सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट नही किये थे। अब मैंने पण्डितजीसे, गंगास्वरूप बासन्ती देवीसे और देशबन्धुके मुख्य-मुख्य मित्रो और अनुयायियोसे बात कर ली है तथा कुछ लोगोके हस्ताक्षरोसे अपील निकाल दी है, जिसका अनुवाद पाठक पहले पृष्ठपर पढ़ेगे।[1]

मै यह बता चुका हूँ कि चरखे और खादीके सम्बन्धमे देशबन्धुके विचार इतने सुदृढ हो गये थे कि हम उनका स्मारक बनानेके लिए इनके अतिरिक्त अन्य किसी भी कार्यको हाथमे नही ले सकते।

पूछा जा सकता है कि उनकी मूर्ति आदि क्यो न खड़ी की जाए? इसका उत्तर यह है कि ऐसे स्थानिक स्मृतिचिह्न तो बहुत-से शहरोमे बनाए ही जायेंगे। हमे तो ऐसे कार्यका विचार करना चाहिए जिसके द्वारा उनको बालक-बालिकाएँ और राजा-रंक सभी स्मरण करें और जिससे हिन्दुस्तानका स्थायी हितसाधन हो और साथ ही जो अपनी शक्तिसे बाहर भी न हो। ऐसा कार्य तो चरखे और खादीका प्रचार ही हैं।

किन्तु विधानसभा सम्बन्धी प्रवृत्तिका क्या हो? क्या इसके द्वारा देशबन्धुकी स्मृति स्थायी हो सकती है? यह काम चलेगा, किन्तु यह प्रवृत्ति क्षणिक है, संकुचित है। हमे मालूम है कि देशबन्धुने भी यही कहा था। खादीकी प्रवृत्ति ही एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसमे सभी भाग ले सकते हैं और जो सबतक पहुँचती है।

लोकमान्यके निधनके समय भी जब उनका स्मारक बनानेकी बात शुरू हुई तब ऐसी ही शंकाएँ उठाई गई थी। किन्तु पीछे सबने स्वीकार किया कि लोकमान्यने सारा समय "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है", इस सन्देशके प्रचारमें लगाया था। देशबन्धुका और हमारा काम इस सन्देशको हाथमे लेकर कार्यरूपमे परिणत करनेके लिए व्यापक और स्थायी साधन ढूंढना था। इसमें हमने चरखे और खादीके प्रचारको और उसके द्वारा विदेशी कपड़ेके बहिष्कारको प्रधान स्थान दिया था। इसी-लिए देशबन्धुका काम इन साधनोंका संगठन करना था। इसीलिए उन्होंने पिछले बारह महीनोमें ग्राम-संगठनकी आवाज उठाई थी। यही बात उन्होने विधान सभामें और मेयरके रूपमे भी कही थी। उन्होने अपने फरीदपुरके[2] भाषणमें स्पष्ट कहा था कि विधि-

१. देखिए "अखिल भारतीय स्मारक", २२-७-१९२५ या उससे पूर्व।

२. मई, १९२५ में हुए बंगाल प्रान्तीय-कृषि परिषद्के अध्यक्षपदसे दिया गया भाषण।

शास्त्रीगण विधानसभाओंका कार्य भले ही करते रहें; किन्तु दूसरे लोगोंको तो ग्राम-संगठनमें ही लगना है। देशबन्धु अन्तमें दार्जिलिंगमें इस निर्णयपर पहुँचे थे कि ग्राम-संगठनका अर्थ चरखा और खादी है। स्वराज्यके साधन रूपी सौरमण्डलमें चरखा सूर्य है। यह बात देशबन्धुको स्पष्ट दिख गई थी और उन्होंने अपने अनुयायियोंको इस सम्बन्धमें यह आदेश भी भेजा था कि वे चरखेके द्वारा ग्रामसंगठनका कार्य आरम्भ करें।

यही उनका राजनीतिक वसीयतनामा है। यही उनकी अन्तिम इच्छा है। वे जिस बीजको बोकर चले गए हैं, उसे पोषण देकर अंकुरित करना और वृक्ष बनाना हमारा धर्म है। इसलिए देशबन्धुकी स्मृतिको स्थायी बनानेवाला कार्य चरखेकी प्रवृत्तिमें वृद्धि करना ही हो सकता है।

हम यह विचार करें कि अब कितना धन इकट्ठा किया जाये, कितना धन इकट्ठा करना है, यह मैंने सदाकी भाँति इस बार नहीं बताया है क्योंकि इसकी कोई सीमा नहीं है। इसके अतिरिक्त जब मैं राशि निश्चित करता हूँ तब मेरे मस्तिष्कपर उसका बहुत भार पड़ता है और तब मैं उतनी राशि इकट्ठी करनेका आग्रह भी करता हूँ। इस बार भी मैंने राशि अपने मनमें तो निश्चित कर ली है, किन्तु मैं उसमें अपीलपर हस्ताक्षर करनेवाले मित्रोंको भागी बनाना नहीं चाहता, क्योंकि वे सद्भावसे और श्रद्धाके कारण राशिपर हस्ताक्षर करके मेरे प्रति उत्तरदायी तो बन जाएँगे, किन्तु उसको इकट्ठा करनेके लिए अपना पूरा समय अथवा अधिकांश समय न दे सकेंगे।

किन्तु पाठकोंको यह समझ लेना चाहिए कि हमें साठ करोड़ रुपयेका लेन-देन कर सकने योग्य पूँजीसे व्यापार करना है। इसके लिए तो जितना रुपया मिले उतना कम ही है। किन्तु मेरी अविचल श्रद्धा है कि ज्यों-ज्यों खादीकी प्रवृत्ति सफल होती दिखाई देगी त्यों-त्यों उसमें लोगोंका विश्वास बढ़ेगा और त्यों-त्यों अधिकाधिक पैसा भी मिलेगा।

हमने पत्रिकामें बताया है कि धनकी उपलब्धि तीन बातोंपर निर्भर है, देशबन्धुके प्रति भक्ति, खादी और चरखेमें श्रद्धा और न्यासियोंमें विश्वास। देशबन्धुके प्रति भक्तिका प्रदर्शन समस्त देशमें हुआ है। मेरा अनुभव है कि खादी और चरखेमें लोगोंकी श्रद्धा बढ़ती जाती है। न्यासियोंको लोग जानते हैं। जहाँ जमनालाल-जैसे निर्मल खजांची और जवाहरलाल-जैसा उतना ही सावधान और प्रामाणिक मन्त्री हो, वहाँ अविश्वासके लिए कोई स्थान ही नहीं हो सकता।

मैं चाहता हूँ कि कोई भी, दूसरे क्या देते हैं, इसका खयाल न करे। 'नवजीवन' के पाठक जितना धन देना चाहें वे उतना 'नवजीवन' को भेज दें। उसकी प्राप्ति 'नवजीवन' में स्वीकार की जाएगी। यदि वे जमनालालजीको सीधा भेजें तो 'नवजीवन' में हिसाब रखने और फिर उसे खजांचीको भेजनेकी झंझट कम हो जाएगी।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २६-७-१९२५

२६७. विविध

दृश्य सेवा बनाम अदृश्य सेवा

एक मित्र लिखते हैं[1]

यह विचारसरणी है तो बिलकुल उचित; परन्तु यह मेरे लेखसे उत्पन्न नही होनी चाहिए थी। जानमे या अनजानमें हम सब मुमुक्षु हैं। परन्तु मैंने उस लेखमें सिर्फ सेवकोकी सेवाके मूल्यका विचार किया है। साथ ही मैंने प्रसंगोपात्त इस बातपर भी विचार किया है कि आजकल लोगोको किस प्रकारकी सेवा सुहाती है। दुनिया सच्चे सन्यासियोंको शायद ही पहचान पाती है। वे तो अदृश्य रहकर अपना काम करते हैं। उनकी दृष्टिमे स्तुति और निन्दा तुल्य है अथवा यो कहे कि वे स्तुतिसे बहुत बचते हैं। मैंने उस लेखमे उस प्रकारके लोगोका विचार ही नही किया है। फिर जो स्तुतिके लिए ही सेवा करते हैं उनकी सेवाकी कीमत नहीके बराबर है। ऐसे लोगोके लिए तथा सन्यासी कहे जानेवाले लोगोके लिए भी कीर्तिस्तम्भ स्थापित हुए हैं और स्थापित होते रहेगे। परन्तु यहाँ तो मैंने देशबन्धु-जैसे व्यक्तिकी नि स्वार्थ सेवाका ही उल्लेख किया था और यह भी कहा था कि इस युगमे तो वे लोग पूजे जाते हैं जो लोगोकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेके लिए खडे होते हैं। ऐसे लोग अदृश्य रहें तो उनका काम शायद ही चले। कहनेका तात्पर्य यह है कि राजनैतिक क्षेत्रमे काम करनेवाले सेवक अदृश्य रह ही नही सकते। उन्हे हजारोके सम्पर्कमे आना ही पडता है। इसलिए दुनिया उनकी सेवाकी कीमत आँके बिना नही रह सकती। हमें सिर्फ एक बात जान लेनी चाहिए। पाखण्डी लोग भी पाखण्डके बलपर अपने कीर्तिस्तम्भ बनवा गये हैं; इसलिए हमे चाहिए कि हम कोई भी काम कीर्तिके लोभसे न करे। हमें कीर्तिसे बचना चाहिए। परन्तु हम जब देशबन्धु-जैसे शुद्धभावी सेवकपर लोगोको न्यौछावर होते हुए देखते है तब हम समझते हैं कि लोगोमे पारमार्थिक सेवाको समझनेकी शक्ति बहुत है। इस सम्बन्धमे उनका अन्दाज जहाँ कभी-कभी गलत होता है, वहाँ वह ज्यादातर ठीक भी होता है। अहिंसात्मक और सत्यमय देश-सेवा आजका धर्म है। हमे उसमे स्तुति और निन्दाके विषयमें तटस्थ रहकर योग देना चाहिए।

स्वयंसेवकका धर्म

एक स्वयसेवक इस प्रकार लिखते हैं[2]

मैंने इसमे से एक अंश, जिसमे कुछ तथ्य दिये गये है निकाल दिया है। यह चेतावनी बिलकुल उचित है। इस चिट्ठीका साराश यह है कि मनुष्यको लोभ नही

१. यहाँ नही दिया गया है। पत्र-प्रेषकने नवजीवन, २८-६-१९२५में छपे गाधीजीके "देशबन्धु चिरजीव हों!" शीर्षक लेखपर कुछ टिप्पणी की थी।

२. यहाँ नहीं दिया गया है।

करना चाहिए और ऐसा कोई काम न करना चाहिए जिससे उसके अंगीकृत कार्यको हानि पहुँचे। हम जिनके यहाँ जाकर ठहरते है उसकी घर-गिरस्तीसे हमारा कोई सम्बन्ध नही होता। जहाँ सार्वजनिक सम्बन्ध हो वहाँ व्यक्तिगत सम्बन्धोकी गुंजाइश ही कहाँ है? स्वयसेवक जिस घरमे भी ठहरते है, उसमे खानगी नातेसे नही, बल्कि उसे अतिथि-गृह समझकर अपने कार्यके निमित्त ही ठहरते है। फिर अपनी शीलरक्षाका अभिलाषी पुरुष तो स्त्रीके साथ एकान्त सेवनसे सदा ही बचता है। यह केवल स्वय-सेवकोका ही धर्म नही — यह तो मित्रका, अतिथिका, आश्रितका और सबका धर्म है। दम्पतीके कमरेके आसपास किसीको नही सोना चाहिए — यह सज्जनताका लक्षण है। दुर्भाग्यवश हमारे घरोंमे ऐसी व्यवस्था नही होती और हमें ऐसे विवेकका पालन करनेकी आदत भी नही होती। परन्तु दम्पतीके कमरेसे दूसरे लोगोका सम्पर्क न रहे, इसकी आवश्यकता और औचित्यके विषयमे दो मत हो ही नही सकते। जहाँ ऐसी सुविधा न हो वहाँ स्वयंसेवकको चाहिए कि वह बहुत सावधानीसे रहे और ऐसा सम्भव न हो तो ठहरनेके लिए दूसरी जगह ढूँढ़े।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २६-७-१९२५

२६८. सन्देश: 'फॉरवर्ड' को

२७ जुलाई, १९२६

लोकमान्य स्वराज्यके लिए ही जिये और मरे। उन्होंने हमे यह विश्वास करना सिखाया कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। मै जानता हूँ कि जबतक हम चरखेको उसके प्राचीन गौरवके साथ अपने गाँवोमे पुन स्थापित नही करते, तबतक इस जन्मसिद्ध अधिकारको पुन प्राप्त करना असम्भव है। और ऐसा तबतक सम्भव नही है जबतक हम शिक्षितवर्ग कताईकी सुन्दर और जीवनदायिनी कलाको नही सीख लेते और खद्दर नही पहनने लगते, फिर चाहे वह मोटा हो या महीन, महँगा हो या सस्ता। स्वराज्यके लिए कोई भी कीमत चुकाना महँगा नही है। तब यदि हम लोकमान्यकी स्मृतिका सम्मान करना चाहते है तो हमे प्रतिदिन कमसे-कम आधा घटा कातने तथा खादी पहननेका निष्ठाके साथ सकल्प करना चाहिए और दूसरोको भी इसी प्रकार करनेके लिए प्रेरित करनेकी प्रतिज्ञा करनी चाहिए।

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

फॉरवर्ड, १-८-१९२५

२६९. पत्र: बनारसीदास चतुर्वेदीको

कलकत्ता
श्रावण सुदी ६ [जुलाई २७, १९२५][1]

भाई बनारसीदासजी,

मेरी दाहिनी अगुलीमे दर्द होनेके कारण मै बाये हाथसे लीखता हु तुमारा पत्र मीला है पैसेके लीये मैंने चि० छगनलालको लीखा है कि उसको कुछ उजर न हो तो बाकीके सब पैसे तुमको भेज दे. मै समझता हु कि हिसाब भी पीटीटको सीधा भेजते रहोगे. मैंने यह भी मान लीया है कि इस समय जो हम कर रहे है वह सब ठीक मी० पेटीटके साथके समझौताके अनुकूल है.,

तुमारे पत्रके अतीम हिस्सेमें मुझे रोष और निराशा प्रतीत होते है ऐसा क्यों!

मोहनदासके वं० मा०

पडित बनारसीदास चतुर्वेदी
फिरोजावाद
जिला आगरा

मूल पत्र (जी० एन० २५२०) की फोटो-नकलसे।

२७०. पत्र: डॉ० हनुमन्तरावको

१४८, रसारोड
भवानीपुर
[२८] जुलाई, १९२५

प्रिय हनुमन्तराव,

मेरे दाहिने हाथको आरामकी जरूरत है, इसलिए मैं यह पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ। आपका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। जबतक मैं आपको सबल, स्वस्थ और स्फूर्तिमय नही देखता तबतक मुझे सन्तोष नही होगा। मैं चाहता हूँ कि आप प्राकृतिक चिकित्साके एक चलते-फिरते विज्ञापन बन जाये।

मेरा विचार है और वह प्रतिदिन दृढतर होता जा रहा है कि जल चिकित्सा एक महत्त्वहीन पद्धति है। वास्तविक चिकित्साके रहस्यको समझना तो अभी बाकी ही है, और वह है हवा। हमें अभी एक कदम आगे बढ़ना है, किन्तु वह एक कदम ही बहुत

१. डाककी मुहर २८ जुलाई, १९२५ की है।

दूर है। हम ताजी हवा और जलवायुके परिवर्तनकी उपयोगिताको नही समझते। मै चाहता हूँ कि आप विभिन्न स्थानोंकी जलवायुको तबतक बदल-बदल कर देखते रहे जबतक आपको ऐसा जलवायु नही मिल जाता जो आपको अनुकूल पड़े और जिसमे आप पूर्ण रूपसे स्वास्थ्य-लाभ कर सकें। श्री शर्माको जरूर भेजिए। मै सम्भवत: अगस्तके अन्ततक कलकत्तामे हूँ; मध्यतक तो निश्चित रूपसे हूँ। हो सकता है कि बीचमे दो या तीन दिनके लिए वहाँ न रहूँ। मै जितना फुरसतका समय दे पाऊँगा, देनेका प्रयास करूँगा। कृष्णैया कैसे है?

हृदयसे आपका,

श्री डी० हनुमन्तराव
डिगुमार्टी हाउस
बरहामपुर
गंजम जिला

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०५९३) की फोटो-नकलसे।

२७१. पत्र : डब्ल्यू० एच० पिटको

१४८, रसा रोड
भवानीपुर
[कलकत्ता]
२८ जुलाई, १९२५

प्रिय श्री पिट,

आपका गोपनीय पत्र[1] मिला। मै आपके पत्रमे निहित तर्कके बल और उसके पीछेकी सद्भावनाकी कद्र करता हूँ। हमारा मूलभूत मतभेद तो फिर भी बना ही हुआ है; क्योंकि हम दोनोमें भेद स्वभावका है। इसके अलावा इस प्रश्नपर गौर करनेके हमारे दृष्टिकोणमे भी अन्तर है। फिर भी मेरा काम यथासम्भव, मित्र, शत्रु, तटस्थ उन सभी लोगोसे मिलनेका है जो इस प्रश्नको सुलझानेमें दिलचस्पी रखते है। मै इस समय श्री च० राजगोपालाचारीसे पत्रव्यवहार कर रहा हूँ। आप जानते ही है कि वे इस मामलेमे मेरे सहयोगी है, और उनके निर्णयपर मुझे सबसे अधिक भरोसा है। मै उन्हे लिख रहा हूँ कि यदि आवश्यकता पड़े तो वे वाइकोम या त्रिवेन्द्रम् भी जाये। इस बीचमें सार्वजनिक रूपसे एक शब्द भी न कहूँगा। आपको सूचना दिये बिना तथा भलीभाँति सोच-विचार किये बिना आगे कोई कदम नही उठाया जायेगा। आपने मुझे यह विश्वास दिलाया है कि अधिकारी इस बुराईको दूर करनेके लिए पूरा जोर लगा रहे है और यह मेरे लिए एक बड़ा प्रलोभन है; इसीलिए मैं

१. देखिए परिशिष्ट ३।

आपका सुझाव स्वीकार करनेको तैयार हूँ किन्तु मैं अभी किसीसे परामर्श किये बिना ही इतनी दूर बैठकर निश्चिन्त भावसे अपना निर्णय देना ठीक नही समझता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :] मेरा दाहिना [हाथ] काम नही कर रहा है।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११९००) की फोटो-नकलसे।

२७२. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

१४८ सरसा रोड
भवानीपुर
[कलकत्ता]
२८ जुलाई, १९२५

प्रिय च० रा०,

हाथको कुछ दिनोंतक आराम देनेकी जरूरत है। इसलिए मैं अपने पत्र बोलकर लिखा रहा हूँ। आशा है आपको पिटका वह पत्र मिल गया होगा जिसे मैंने आपके पास भेजा था। मैं यह दूसरा पत्र तथा अपने उत्तरकी नकल[1] आपके पास भेज रहा हूँ। मैं केलप्पनका पत्र भी भेज रहा हूँ। कृपया सलाह दें। यदि चाहे तो आप कमिश्नरसे पत्रव्यवहार कर सकते हैं और स्वयं ही केलप्पनको लिख सकते है। जैसा कि आपको कमिश्नरको लिखे गये मेरे पत्रसे मालूम होगा, मैं उनके सुझावको स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ, किन्तु अभी मेरी समझमे नही आ रहा है कि क्या करूँ। स्वयसेवकोके दृष्टिकोणको समझना आवश्यक है। आपको केलप्पनके इस प्रस्तावपर भी विचार करना होगा कि उन्हे कार्य-विमुक्त किया जाये। मेरा खयाल है कि ऐसा करना आवश्यक होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ११९०३) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० एच० पिटको", २८-७-१९२५।

२७३. : पत्र : के० केलप्पन नायरको

१४८, रसा रोड
भवानीपुर, (कलकत्ता)
२८ जुलाई, १९२५

प्रिय केलप्पन,

आपका पत्र[1] मिला। मुझे श्री पिटका भेजा हुआ एक लम्बा पत्र[2] भी मिल गया है। मैं उस पत्रकी एक नकल भेज रहा हूँ और साथ ही श्री पिट तथा श्री राजगोपालाचारीको भेजे गये अपने पत्रोंकी प्रतिलिपियाँ भी। कृपया श्री राजगोपालाचारीसे पत्रव्यवहार करके उन्हें अपने विचारोंसे अवगत करा दीजिए। यदि आश्रमके काममें इससे कोई व्यवधान न पड़े तो आपको कार्यमुक्त किया जा सकता है। तब आप अवश्य जा सकते हैं और केरल समितिका कार्यभार सँभाल सकते हैं।

आशा है कि अब आप बिलकुल स्वस्थ हो गये होंगे। कार्यकर्त्ताओंको बीमार नहीं पड़ना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ११९०२) की फोटो-नकलसे।

२७४. पत्र : फ्रेड ई० कैम्बेलको[3]

१४८, रसा रोड
कलकत्ता
२८ जुलाई, १९२५

प्रिय नवयुवक मित्र,

मुझे आपके पत्रकी[4] स्पष्टवादिता और निश्छलता पसन्द आयी। उसके लिए धन्यवाद!

१. देखिए परिशिष्ट ४।

२. देखिए परिशिष्ट ३।

३. कैम्बेलने अपनेको अमरीकाके केन्सास नगरका एक १५ वर्षीय किशोर बताया था।

४. कैम्बेलने अपने ४ मईके पत्रमें लिखा था: "कुछ दिन पूर्व मैंने अपने यहाँके ईसाई गिरजाघरमें एक उपदेश सुना था जिसमें पादरी महोदयने हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच मौजूद तनातनीको शान्त करनेके लिए किये जानेवाले आपके उपवासका एक सजीव विवरण दिया था . . . उन सज्जनने बताया था कि यद्यपि आप ईसाई नहीं हैं फिर भी आज आप ईसाके सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं। यह सुननेके बाद मैंने आपके बारेमें अधिक अध्ययन करनेका निश्चय किया। इस प्रयासमें मैंने अंग्रेजोंके साथ चलनेवाले आपके संघर्षके बारेमें पढ़ा। आपका उनके प्रति घृणा करनेका मुख्य कारण क्या है? क्या यह सौदागरीका मामला है? . .

लगता है कि आप यह मान ही बैठे है कि मै अग्रेजोसे घृणा करता हूँ। आप ऐसा क्यो सोचते है? मेरे सैकडो अग्रेज मित्र है। यदि मै अग्रेजोसे घृणा करता हूँ तो मै मुसलमानोसे और उसी कारण हिन्दुओसे भी प्रेम नही कर सकता। मेरा प्रेम बहिष्कारवादी नही है। यदि मै आज अग्रेजोसे घृणा करूँ तो कल मुसलमानो और परसो हिन्दुओसे भी घृणा करने लगूंगा। मै घृणा करता हूँ उस शासन-प्रणालीसे जिसे अग्रेजोने मेरे देशपर थोपा है। इस शासनतत्रने भारतके लोगोका लगभग पूरे तौरपर आर्थिक और नैतिक विनाश कर दिया है। जिस प्रकार मै अपनी पत्नी और अपने बच्चोको उनकी अनेक त्रुटियोके बावजूद प्यार करता हूँ, उसी प्रकार मै अग्रेजोंसे उस हानिकर शासन-प्रणालीके बावजूद प्यार करता हूँ, गलतीसे जिसके लिए उन्होने अपनेको उत्तरदायी बना रखा है। अन्धा प्रेम, प्रेम नही होता। जो प्रेम अपने प्रेमपात्रोकी त्रुटियोकी ओरसे आँखे बन्द कर लेता है, वह पक्षपातपूर्ण और खतरनाक भी होता है। यदि आपको इस पत्रसे सन्तोष न हो तो आप मुझे पुन अवश्य लिखे।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजी पत्र (एस० एन० १०५४७) की फोटो-नकलसे।

२७५. भाषण: ईसाई धर्म प्रचारकोंके समक्ष

२८ जुलाई, १९२५

[मुझे गत मासकी २८ तारीखको कलकत्तेमें ईसाई युवक-सघ (यंग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन) मे मिशनरियोके सम्मुख भाषण देनेका सौभाग्य मिला था। इस भाषण-का सकेतलिपिमे लिखा हुआ विवरण मुझे सुलभ कराया गया है और चूँकि यह भाषण ऐसा था जिसमे सबकी दिलचस्पी हो सकती है, इसलिए इसे सक्षेपमें मैं नीचे देता हूँ। इसमे मैंने किसी भी विशिष्ट विचार या शब्दावलीको नही छोडा है, किन्तु वर्णनात्मक अशोंको छोड दिया है।

मो० क० गाधी]

शायद आपमे से बहुत कम लोग जानते होंगे कि ईसाइयोसे — तथाकथित ईसाइयोसे नही, बल्कि सच्चे ईसाइयोसे मेरा सम्पर्क १८८९ से ही रहा है। तब मै नौजवान था और लन्दनमे रहता था। जैसे-जैसे समय बीतता गया है, इस सम्पर्कमें भी प्रगाढ़ता और परिपक्वता आती गई है। दक्षिण आफ्रिका जाकर मैंने देखा कि मै बहुत प्रतिकूल परिवेशमे पहुँच गया हूँ, किन्तु वहाँ भी मैंने सैकड़ो ईसाइयोको अपना मित्र बना लिया। वहाँ मै दक्षिण आफ्रिका जनरल मिशनके निदेशक स्वर्गीय श्री स्पें-

१. लगता है कि आगे भी कुछ पत्र-व्यवहार हुआ। गाधीजीने उनको दूसरा पत्र भी लिखा था। देखिए खण्ड ३०, "पत्र: फ्रेड ई० कैम्बेलको", २३-४-१९२६।

सर वाटनके सम्पर्कमें आया और बादमें रेवरेड ए० मरे तथा अन्य कई ईसाइयोसे भी मेरा सम्पर्क हुआ।

इसलिए आज इतने सारे मिशनरियोंसे मेरा परिचय होना कोई नवीन बात नही है। मेरे जीवनमे एक समय ऐसा भी आया था जब मुझपर मेरे एक बहुत ही सच्चे और घनिष्ठ मित्रने नजर गडा रखी थी (हँसी)। वे एक बहुत बडे और नेक क्वेकर थे। उनका खयाल यह था कि इतना भला आदमी ईसाई न हो, यह कैसे हो सकता है! लेकिन मुझे बडे दु खके साथ उन्हे निराश करना पडा। दक्षिण आफ्रिकासे एक मिशनरी मित्र मुझे अब भी पत्र लिखा करते है और पूछते है, 'अब आप क्या सोचते है?' मैने इनसे बराबर यही कहा है कि जहाँतक मै जानता हूँ, जो ठीक है मै वही सोच रहा हूँ। अगर इन मित्रोका तात्पर्य यह रहा हो कि मै [ईसाई ढगसे] प्रार्थना करूँ तो उसका जवाब तो मैंने दे दिया है। वह जवाब यह है कि मेरे हृदय-तलसे निकली यह प्रार्थना कि प्रभु, मुझे रास्ता दिखाओ, और उस रास्तेपर चलनेके लिए बुद्धि और साहस दो, रोज ही मेरे कमरेके बन्द दरवाजेको पारकर उस सर्व-शक्तिमानतक पहुँचती है।

अपने एक ऐसे ही मित्रसे किये गये वादेके मुताबिक मुझे लगा कि स्वर्गीय कालीचरण बनर्जीसे मिलना मेरा कर्त्तव्य है। मुझसे कहा गया था कि वे देशके महान-तम भारतीय ईसाइयोमे से है और मै उनसे मिलूँ। सो मै उनके पास गया। यह सब मै आपको यह बतानेके लिए कह रहा हूँ कि सच्चा मार्ग ढूँढनेके लिए मै कुछ उठा न रखूं। इस खयालसे मैंने कितनी गहरी खोज की है। इसलिए स्वभावत मै उनके पास बिलकुल खुला दिमाग लेकर और उनसे जो-कुछ सीख सकूँ, ग्रहण कर सकूँ, उसे सीखने, ग्रहण करने, की वृत्ति लेकर गया। और उनसे मै मिला भी बहुत ही प्रभाव-कारी स्थितिमें। मैंने देखा कि श्री बनर्जी और मुझमें बहुत-कुछ समानता है। उनकी सादगी, उनकी विनय, उनकी हिम्मत और उनकी सत्यनिष्ठा — इन सभी चीजोंकी मैंने सदा सराहना की है। मै जब उनसे मिला तब उनकी पत्नी मृत्यु-शय्यापर पडी थी। इससे अधिक मर्मस्पर्शी दृश्यकी, मनुष्यकी प्रवृत्तियोको इससे अधिक ऊर्ध्वमुखी बनाने-वाली परिस्थितियोकी, आप कल्पना भी नही कर सकते। यह सन् १९०१ की बात है। मैंने श्री बनर्जीसे कहा, 'मै एक सत्यान्वेषीके रूपमे आपके पास आया हूँ। मैंने अपने कुछ अत्यन्त प्रिय ईसाई मित्रोको यह वचन दिया था कि मै सच्चे प्रकाशकी खोजके प्रयत्नमें कुछ भी उठा नही रखूंगा; मै आपके पास अपने उस वचनको पूरा करनेके लिए ही आया हूँ।' मैंने उनसे कहा कि मैंने अपने मित्रोको यह भरोसा दिलाया है कि यदि मै उस प्रकाशको देख-भर सका तो कोई भी सासारिक लाभ मुझको उस प्रकाशसे विलग नही रख सकता। मेरे और उनके बीच जो थोडी-सी बातचीत हुई, उसका वर्णन करनेमें मै आपका समय नही लूंगा। हमारे बीच बहुत ही अच्छी और सौम्य ढंगकी बातचीत हुई। जब मै वहाँसे चला तो मेरे मनमे कोई दुःख, अवसाद या निराशा नही थी, लेकिन यह सोचकर मै कुछ उदास हो गया कि श्री बनर्जी भी मेरा समाधान नही कर पाये। ईसाई धर्मको मेरे सामने जिस रूपमें पेश

किया गया उसे हृदयगम करनेका मेरा यह अन्तिम सचेष्ट प्रयत्न था। उस रूपमें आज मेरी स्थिति यह है कि यद्यपि मै ईसाई धर्मकी बहुत-कुछ बातोकी सराहना करता हूँ, फिर भी मै रूढिगत ईसाईधर्मसे अपना तादात्म्य स्थापित करनेमें असमर्थ हूँ। मुझे आपसे पूरी नम्रताके साथ कहना होगा कि मैने हिन्दू धर्मको जिस रूपमें जाना है, उस रूपमे वह मेरी आत्माको पूरी शान्ति देता है, उससे मेरा समस्त अस्तित्व आप्लावित है, और जो शान्ति मुझे 'भगवद्गीता' और 'उपनिषदो'से मिलती है, वह 'गिरि-प्रवचन'को पढकर भी नही मिलती। यह बात नही है कि मै उसमें बताये गये आदर्शका मूल्य नही समझता, 'गिरि-प्रवचन'के कुछ मूल्यवान उपदेशोकी मुझपर गहरी छाप भी पडी है, किन्तु मुझे आपके सामने स्वीकार करना चाहिए कि जब मेरा मन शकाओ और निराशाओसे घिर जाता है और जहाँतक दृष्टि जाती है, मुझे प्रकाशकी एक किरण भी नही दिखाई देती तब मै 'भगवद्गीता' की शरण लेता हूँ और उसमे मुझे कोई-न-कोई शान्तिदायी श्लोक मिल ही जाता है और तब दारुण दु खके बीच भी मै तत्काल मुस्करा उठता हूँ। मेरे जीवनमे सासारिक दु ख और शोकके न जाने कितने प्रसग आये है, और अगर वे मुझपर कोई खरोच नही छोड पाये तो इसका कारण 'भगवद्गीता' की शिक्षा ही है।

मैने ये सब बाते आपसे इसलिए कही है कि आपको मेरी स्थिति बिलकुल साफ-साफ मालूम हो जाये और तब यदि आप चाहे तो मै आपसे निकटतर सम्पर्क स्थापित कर सकूँ। मै आपको यह भी बता दूँ कि मै 'बाइबिल' और उसकी टीकाओ तथा अपने ईसाई-मित्रो द्वारा दी गई ईसाई धर्मकी अन्य पुस्तकोको पढकर ही नही रुका बल्कि मैने मनमे सोचा कि यदि मुझे तर्क और बुद्धिके द्वारा ही अपने मनका सन्तोष प्राप्त करना है तो मुझे अन्य धर्मोके ग्रन्थ भी पढने चाहिए और तब कोई निर्णय करना चाहिए। तब मेरा ध्यान 'कुरान' की तरफ गया। यहूदी धर्मने ईसाई धर्मसे जितना-कुछ अधिक है उसे भी मै जहाँतक समझ सकता था, मैने समझनेकी कोशिश की। मैने जरथुस्त्रके धर्मका भी अध्ययन किया और अन्तमे मै इस निष्कर्षपर पहुँचा कि सभी धर्म ठीक है, किन्तु उनमे हरएकमे कुछ-न-कुछ कमी है। यह स्वाभाविक है और अनिवार्य भी है। क्योकि उनकी व्याख्या हमने अपनी तुच्छ बुद्धि, और कभी-कभी सकुचित हृदयके धरातलपर की है, और अकसर तो हम उनका गलत अर्थ ही निकाल बैठे है। मुझे यह देखकर बहुत दु ख हुआ कि सभी धर्मोमें कतिपय मूल बातोकी विभिन्न बल्कि परस्परविरोधी व्याख्याएँ की गई है। निदान मैने अपने-आपसे कहा, ना; यह सब मेरे लिए नही है। यदि मै अपनी आत्माको शान्ति देना चाहता हूँ तो मुझे अपना मार्ग स्वय ही टटोल-टटोलकर खोज निकालना होगा। मुझे अपना ध्यान चुपचाप प्रभुपर केन्द्रित करना चाहिए और उसीसे रास्ता दिखानेको कहना चाहिए। सस्कृतमे एक सुन्दर श्लोक है, जिसमे कहा गया है, 'ईश्वर मनुष्यकी सहायता तभी करता है, जब वह सर्वथा असहाय और दीन हो जाता है।' आपमें से कुछ लोग तमिल देशके है। जब मै तमिल सीख रहा था तब मैने डा० पोपकी एक पुस्तकमे एक तमिल कहावत देखी थी, जिसका अर्थ यह है कि 'ईश्वर असहायोका

सहायक है।' मैंने अपने जीवनका यह समस्त अनुभव आपको बता दिया है, ताकि आप उसपर विचार करें।

आप मिशनरी लोग यह सोचकर भारत आते हैं कि आप एक ऐसे देशमें जा रहे हैं जिसमें नास्तिक, मूर्तिपूजक और ईश्वरसे अपरिचित लोग रहते हैं। एक महान् ईसाई महात्मा बिशप हेबरने दो पंक्तियाँ ऐसी लिखी है जो मुझे बराबर खटकती रहती हैं "जहाँकी हर चीज मनको सुख पहुँचाती है, और मात्र मनुष्य ही नीच है।" अच्छा होता, उन्होंने ये पंक्तियाँ न लिखी होतीं। मैंने समस्त भारतकी यात्रा की है और उसमें मैंने जो-कुछ देखा है, वह इसके विपरीत है। समस्त पूर्वग्रहोंको मनसे दूर रखकर, सत्यकी सतत खोज करनेके लिए मैंने इस देशके एक सिरेसे दूसरे सिरे तककी यात्रा की है, और मैं नहीं कह सकता कि गंगा, ब्रह्मपुत्र और यमुनाके पवित्र जलसे अभिसिंचित इस सुन्दर भूमिमें रहनेवाले मनुष्य नीच हैं। वे नीच नहीं हैं, वे सत्य की खोज उतनी ही आकुलतासे कर रहे हैं जितनी आकुलतासे मैं और आप कर रहे हैं, बल्कि शायद मुझसे और आपसे ज्यादा आकुलतासे ही। यह मुझे फ्रेंच भाषाकी एक पुस्तककी याद दिलाता है, जिसका अनुवाद एक फ्रांसीसी मित्रने मेरे पढ़नेके लिए किया था। इस पुस्तकमें ज्ञानकी खोजमें किये गये काल्पनिक अभियानका वर्णन है। इन यात्रियोंका एक दल भारतमें उतरता है और उसको एक परियाकी छोटी-सी कुटियामें सत्य और प्रभुका मूर्तिमन्त रूप देखनेको मिलता है। मैं आपसे कहता हूँ कि अस्पृश्योंकी बहुत-सी ऐसी झोपड़ियाँ हैं, जहाँ आपको निश्चय ही ईश्वरके दर्शन होंगे। वे तर्क-वितर्क नहीं करते, बल्कि अपनी इस आस्थापर दृढ़ हैं कि ईश्वर है। वे सहायताके लिए उसपर निर्भर रहते हैं और उनको वह सहायता मिलती भी है। इन उदात्त-चरित्र अस्पृश्योंके सम्बन्धमें भारत-भरमें अनेक कहानियाँ सुननेको मिलती हैं। उनमें कुछ लोग नीच हो सकते हैं, किन्तु उन्हींमें अत्यन्त उदात्त-चरित्र, आदर्श मनुष्य भी मिलते हैं। किन्तु क्या मेरा अनुभव केवल इन अस्पृश्योंतक ही सीमित है? नहीं। आज मैं आपको यह बात बता देना चाहता हूँ कि यहाँ ऐसे अब्राह्मण और ब्राह्मण भी हैं जो इतने अच्छे मनुष्य हैं, जितने अच्छे मनुष्य आपको पृथ्वीपर कहीं भी मिल सकते हैं। आज भारतमें ऐसे ब्राह्मण मौजूद हैं, जो आत्मत्याग, पवित्रता और विनम्रताकी प्रतिमूर्ति हैं। यहाँ ऐसे ब्राह्मण भी हैं, जो तन-मनसे अस्पृश्योंकी सेवामें लगे हैं। वे अस्पृश्योंसे किसी पुरस्कारकी अपेक्षा नहीं रखते, अलबत्ता सनातनी हिन्दुओंके क्षोभ और घृणाके पात्र जरूर बनते हैं। किन्तु वे इनकी चिन्ता नहीं करते, क्योंकि वे परियाओंकी सेवा करके परमात्माकी सेवा कर रहे हैं। मैं अपने व्यक्तिगत अनुभवोंके आधारपर इस बातके उदाहरण दे सकता हूँ। मैं पूरी विनम्रताके साथ इन तथ्योंको आपके सम्मुख केवल इस कारण प्रस्तुत करता हूँ कि आप इस देशको अधिक अच्छी तरह जान सकें, उस देशको, जिसकी सेवा करनेके लिए आप आये हैं। आप यहाँ इसलिए आये हैं कि आप भारतके लोगोंके कष्टोंको जान सकें और दूर कर सकें। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि आप यहाँ कुछ सोचनेकी वृत्ति लेकर भी आये हैं; और यदि भारतके पास आपको सिखानेके लिए कुछ हो तो आप उस ओरसे अपने

कान बन्द न करे, अपनी आँखें मूँद न लें और अपने हृदयके द्वारोको बन्द न रखे, बल्कि इस देशमे जो भी अच्छी बातें है, उनको ग्रहण करनेके लिए अपने कान, अपनी आँखे, और सबसे बढकर अपने हृदयका द्वार खुला रखे। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि भारतमे बहुत-सी अच्छी बाते है। आप इस भ्रममे न रहे कि 'सेट जॉन' के प्रसिद्ध छन्दको दुहरा जानेसे ही कोई आदमी ईसाई बन जाता है। अगर मैंने 'बाइ-बिल' के मर्मको समझा है तो मै कहूँगा कि ऐसे बहुत-से लोग है जिन्होने ईसा मसीहका नाम नही सुना है या जिन्हें इस धर्मकी, ईसाई धर्मसंस्था द्वारा की गई व्याख्या मान्य नही है, फिर भी, यदि आज ईसा मसीह हमारे बीच सदेह आ जाये तो, जो उन्हे हममें से अधिकाश लोगोकी अपेक्षा शायद वे ज्यादा स्वीकार्य होगे। इसलिए आपसे मेरा निवेदन है कि आपके सामने जो समस्या उपस्थित है, उसपर आप आग्रह-मुक्त मनसे और नम्रताके साथ विचार करे।

आज प्रात कुछ मिशनरियोके साथ मेरी बातचीत हुई थी। बातचीत अनौप-चारिक ढगकी थी। यहाँ मै उसका वर्णन नही करना चाहता। किन्तु इतना अवश्य कहना चाहता हूँ कि वे बहुत अच्छे आदमी है। वे मेरी बातको ठीक-ठीक समझना तो चाहते थे, फिर भी मुझे उनको यह समझानेके लिए करीब-करीब डेढ घटे कोशिश करनी पडी कि मैंने जो-कुछ लिखा है, उसमे से अंग्रेजोके प्रति दुर्भाव या घृणासे प्रेरित होकर कुछ भी नही लिखा है। इतनी-सी बात समझानेमे मुझे बडी कठिनाई हुई। सच तो यह है कि मै उनको यह बात समझा भी सका या नही, सो नही जानता। यदि नमक अपना नमकीनपन छोड दे तो वह दुबारा काहेसे नमकीन बनाया जा सकता है? मेरे भीतर जो सत्य है, उसे यदि मै इन तीन मित्रोको, जो निश्चय ही मेरे पास समझनेकी वृत्तिसे आये थे, नही समझा सका तो दूसरोको समझानेमें मेरा क्या हाल होगा? मुझे प्राय ऐसा लगा है कि सत्यान्वेषीको चुप रहना चाहिए। मै जानता हूँ कि मौनमे कार्य-साधनकी अद्‌भुत क्षमता है। मै दक्षिण आफ्रिकामे ट्रैपिस्ट सम्प्रदायके ईसाइयोके एक मठमे गया था। यह स्थान बहुत सुन्दर था। मठके अधिकतर सदस्य मौन व्रत लिये हुए थे। जब मैंने वहाँके प्रधानसे पूछा कि इस मौनका हेतु क्या है तो उसने कहा कि इसका हेतु स्पष्ट है। 'हम मानव प्राणी दुर्बल होते है। हम प्राय: यह नही जानते कि हम क्या कह रहे है। यदि हम उस मूक और क्षीण स्वरको सुनना चाहते हों, जो हमारे भीतर सदा उठता रहता है, तो स्वयं लगातार बोलते रहकर उसे नही सुना जा सकता।' उनकी सारगर्भित शिक्षाको मैंने समझ लिया। मै मौन-के रहस्यको जानता हूँ। इस समय आपके सामने बोलते समय भी मेरे मनमें यह प्रश्न उठ रहा है कि क्या यह अच्छा नही होता कि मैंने इन मित्रोंसे इतना ही कहा होता, "जब हमारे मनमे व्याप्त सन्देहका कुहासा फट जायेगा तब हम एक-दूसरेको ज्यादा अच्छी तरहसे समझ सकेंगे।" इस समय आपके सामने बोलते हुए अपनी दीनताका अनुभव हो रहा है। मैंने इन मित्रोसे बहस क्यो की? लेकिन मै आपसे ये बाते दो कारणोसे कह रहा हूँ। एक तो यह कि वस्तुस्थितिको स्वीकार करना चाहता हूँ, और दूसरे मै आपसे भी यह कहना चाहता हूँ कि यदि आप दूसरे पहलूको नही देखना

चाहेंगे, यदि आप यह समझनेको तैयार नही होंगे कि भारत क्या सोच रहा है तो आप अपनेको सच्ची सेवाके सौभाग्यसे वंचित कर देंगे। मैंने अपने मिशनरी भाइयोंसे कहा है कि 'आप सत्पुरुष तो हैं, किन्तु आप जिन लोगोंकी सेवा करना चाहते हैं, उन्हींसे आपने अपनेको अलग कर लिया है।' यहाँ मैं आपको उस बातचीतकी याद दिलानेका लोभ संवरण नही कर सकता जिसका वर्णन मैंने दार्जिलिंगमे मिशनरियो द्वारा सचालित भाषा-विद्यालय (लैंग्वेज स्कूल) मे किया था।[1] पादरियोंका एक शिष्टमण्डल अपनी चीन यात्राकी योजनाके सम्बन्धमें लॉर्ड सेलिस्बरीसे मिला था। शिष्टमण्डल अपने इस काममे सरकारका सरक्षण चाहता था। जवावमे लॉर्ड सेलिस्बरीने जो-कुछ कहा वह मुझे शब्दशः तो याद नही है, फिर भी उसका आशय बता देता हूँ। उन्होंने कहा: 'सज्जनो, यदि आप चीन जाना चाहते हैं और वहाँ ईसाई धर्मके सन्देशका प्रचार करना चाहते हैं तो आप राजसत्ताकी सहायता मत माँगिए। आप अपने प्राण हथेली-पर रखकर जाइए और यदि चीनके लोग आपको मार देना चाहे तो आप यह समझिए कि आप ईश्वरकी सेवा करते हुए मरे हैं। लॉर्ड सेलिस्बरीने ठीक ही कहा था। मिशनरी लोग राजसत्ताकी छायामें अथवा यदि आप चाहे तो कहूँ कि राज्यके संरक्षणमे भारत आते हैं और यह तथ्य उनके मार्गमे एक ऐसी वाधा उपस्थित कर देता है, जो अगम्य है।

यदि आप मुझे इस विषयमे आँकड़े दे कि आपने कितने अनाथोका उद्धार किया है और उनको ईसाई धर्ममे दीक्षित किया है तो मैं उनको मान लूँगा। किन्तु उससे मैं यह नही मान पाऊँगा कि यही आपका पुनीत उद्देश्य है। मेरी रायमें आपका उद्देश्य इससे बहुत ही ऊँचा है। आप भारतमे सच्चे मनुष्यकी खोज करना चाहते हैं और यदि आप उनको पाना चाहते हैं तो आपको गरीबोके झोंपड़ोमें जाना होगा और सो भी उन्हे कुछ देनेके लिए नही वल्कि बने तो उनसे कुछ लेनेके लिए ही। मैं मानता हूँ कि मैं भारतके मिशनरियो और यूरोपीयोका सच्चा मित्र हूँ, इसीलिए मैं आपको अपने हृदयतलकी सच्ची भावना बता रहा हूँ। मुझे आपमे सीखनेकी नम्रता और भारतके जनसाधारणसे तादात्म्य स्थापित करनेकी इच्छा दिखाई नही देती। मेरे मनमें जो-कुछ था, मैंने बिना किसी दुरावके आपसे साफ-साफ कह दिया। अब यही मनाता हूँ कि आपके हृदयपर इसकी अनुकूल प्रतिक्रिया हो।

भाषणके अन्तमें लोगोंसे प्रश्न पूछनेके लिए कहा गया। उनमें से सबसे ज्यादा महत्त्वके प्रश्न और उनके उत्तर नीचे दिये जा रहे हैं:

प्रश्न — आपके विचारसे मिशनरी लोग जनसाधारणसे तादात्म्य कैसे स्थापित करें?

यह प्रश्न कुछ चकरानेवाला है। लेकिन मैं कहूँगा, आप चार्ली एन्ड्रयूजका अनुकरण करे।

एक श्रोताने पूछा: जनसाधारणके बीच और जनसाधारणके लिए मिशनरियोंको आप कौन-सा काम करनेका सुझाव देंगे?

१. देखिए "भाषण: ईसाई धर्म-प्रचारिकाओंके समक्ष", ६-६-१९२५।

चूंकि, मुझे चुनौती दी गई है, इसलिए मुझे वेझिझक कहना होगा, "आप चरखे-का काम करे।" आप हँसते हैं, यह स्वभाविक है, किन्तु यदि आप जनसाधारणको मेरी तरह जान ले तो आप इस सीधे-सादे औजारको, जिसे लोग एक तकलीफदेह चीज मानते हैं, (यहाँ श्री गांधीने अपनी तकली दिखाई, जिसे वे अपने पास रखते है) देखकर गम्भीरतासे सोचनेको विवश हो जायेगे। आप भूखी और क्षीण जनताको ईश्वरका साक्षात्कार नही करा सकते। उसका ईश्वर तो भोजन ही है। जब भूखे स्त्री-पुरुष जनरल बूथ द्वारा खोले असंख्य डीपुओमे पहुँचते थे तो वे उन्हे एक-एक तश्तरी सूप पकड़ा देते थे। इस समय उनका क्या कर्त्तव्य था, इसका उन्हे ठीक-ठीक भान होता था। तश्तरी-भर सूप देनेके बाद वे उन्हे अपने दियासलाईके कारखानेके लिए तीलियाँ बनानेका काम दे देते थे और उसके बाद ही फिर कुछ खानेको देते थे। और जब यह सब हो जाता था तभी वे उनसे ईश्वरकी बात, धर्म चर्चा करते थे। भूखकी ज्वालामे भारतके करोडो लोगोके जलते रहनेका कारण यह नही है कि भारतमे काफी अन्न पैदा नही होता। इसका कारण तो यह है कि उनके पास करनेको कोई काम नही है। और जो चीज करोडो लोगोको रोजगार दे सकती है, वह चरखा ही है। मैं कलकत्तेके औद्योगिक मिशन हाउसको जानता हूँ। अपने ढगसे यह एक अच्छी चीज है, लेकिन इससे तो इस समस्याका कुछ भी हल नही होता। समस्या यह है कि १९०० मील लम्बे और १५०० मील चौडे इस विशाल भू-भागमे फैली लाखो-करोडो झोपडियोको रोजगार कैसे मुहैया किया जाये। जबतक आप खुद इस कलाको नही सीखते और जिनका न अपने-आपमें कोई विश्वास रह गया है और न किसी चीज या व्यक्तिमे, उन लोगोके सामने एक उदाहरण पेश करनेके लिए जबतक आप खुद कताई नही करते, तबतक ये लोग चरखेको नही अपनायेंगे। और जबतक आप और मैं खद्दर नही पहनते तबतक चरखा बेकार ही है। इसीलिए मैंने लॉर्ड रीडिंग या लॉर्ड विलिंग्डनसे भी बेहिचक कहा है कि जबतक वे स्वयं और उनके अरदली नीचेसे ऊपरतक खद्दरकी पोशाकमे न होगे तबतक मुझे सन्तोष नही होगा।

एक तीसरे प्रश्नकर्त्ताने पूछा, 'क्या आप निश्चित रूपसे यह अनुभव करते हैं कि आपके भीतर साक्षात् ईसा मसीह विद्यमान है?'

यदि प्रश्नकर्त्ताका सकेत इतिहासमे उल्लिखित उस ईसा मसीहकी ओर है, जो क्राइस्ट भी कहलाते थे तो मुझे कहना चाहिए कि मैं ऐसा अनुभव नही करता। किन्तु यह एक विशेषण है, जो ईश्वरके नामका द्योतक है, तो मुझे कहना चाहिए कि मैं अपने भीतर ईश्वरकी — चाहे आप उसे क्राइस्ट कहे या कृष्ण अथवा राम — उपस्थिति अवश्य अनुभव करता हूँ। हमारे यहाँ ईश्वरके द्योतक सहस्र नाम हैं और यदि मैं अपने भीतर ईश्वरका अस्तित्व अनुभव न करता होता तो मैं प्रतिदिन जो इतना दुःख और नैराश्य देखता हूँ, उससे मैं पागल हो जाता और फिर मुझे हुगली-की धारामे ही शरण लेनी पड़ती।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ६-८-१९२५

२७६. अपील : अखिल बंगाल देशबन्धु-कोषके लिए

अखिल बगाल देशबन्धु स्मारक समितिने आखिर चन्दा लेना बन्द करनेके लिए अन्तिम तारीख ३१ अगस्त निश्चित कर दी है। मै जनताको बतलाना चाहता हूँ कि पहले ऐसी कोई तिथि निर्धारित नही की गई थी। अन्तिम तारीखको अन्तिम ही होना चाहिए और उसे बदला नही जा सकता। फिर भी मैंने सुझाव दिया था कि हमे पहली जुलाईतक या उससे पहले पूरे १० लाख एकत्र करनेके लिए प्रयत्न करना चाहिए। इसमे हम असफल रहे, किन्तु मैं यह नही कह सकता कि यह प्रयत्न किसी कसरके कारण हुआ है। हमारी इस असफलताका कारण संगठनका अभाव है। यदि हम इस सप्ताहके समाप्त होनेसे पहले ६ लाख रुपये एकत्र करनेमें सफल हो गये तो यह देशबन्धुकी स्मृतिके प्रति हमारी एक श्रेष्ठ श्रद्धांजलि होगी। इस सप्ताहके अन्ततक ६ लाख एकत्र करनेकी अवधिके ५ सप्ताह पूरे हो जायेंगे, इससे प्रति सप्ताह सवा लाखसे कुछ कम या करीब १७ हजार प्रतिदिन एकत्र करनेका औसत पड़ता है।

कुछ अधिक परिश्रम करनेपर भी, यद्यपि उसे सन्तोषजनक संगठन तो कदापि नही माना जा सकता, हम उपर्युक्त औसतके हिसाबसे रुपया इकट्ठा करनेमें सफल नही होंगे, क्योंकि बड़ी-बडी रकमोका अधिकाश भाग तो आ ही चुका है। स्मारक समितिने पिछले अनुभवके कारण ही चन्दा प्राप्त करनेकी अन्तिम तारीख ३१ अगस्त निश्चित की थी। उस राशिको एकत्र करनेके लिए जिसे कि बगालके लिए तथा देशबन्धुकी पवित्र यादगारको स्थायी बनानेके लिए एक क्षुद्र-सी राशि समझना चाहिए, यह काफी पर्याप्त समय है। लोग जानते होंगे कि तिलक स्वराज्य कोषके लिए धन एकत्र करनेके लिए केवल ३ मासका समय निश्चित किया गया था। यह मानकर कि ६ लाख रुपये इस मासके अन्तसे पहले ही एकत्र हो जायेंगे, ४ लाख एकत्र करनेके लिए ३२ दिन बचेंगे। इस हिसाबसे ठीक १२,५०० रु० प्रतिदिन एकत्र करनेका औसत आता है। यदि हम आगामी मासके अन्ततक इतने रुपये एकत्र कर ले, तो एकत्र करनेका हमारा औसत कदापि कम न माना जायेगा। जो लोग चन्दा एकत्र कर रहे हैं और जिनको बंगालकी प्रतिष्ठा तथा स्मारककी सफलताकी फिक्र है, मुझे आशा है कि वे दैनिक औसत अर्थात् १२,५०० रुपये प्रतिदिन उपलब्ध करनेको अपनी प्रतिष्ठाका सवाल समझेंगे। मैं बंगाल-भरके स्कूलो और कालेजोके प्रधानाचार्योका उनके कर्त्तव्यकी ओर ध्यान आकर्षित करता हूँ। मै जानता हूँ कि स्कूल जानेवाले लड़के और लड़कियाँ अपना थोड़ा-बहुत योग देनेके लिए उतने ही उत्सुक है, जितने कि अन्य कोई। वे केवल इस बातकी प्रतीक्षामें हैं कि उनसे अनुरोध किया जाये। मुझे यह भी मालूम है कि बहुत-से जमीदारोने जिनपर देशबन्धुका कुछ कम उपकार नही है, अभीतक अपना चन्दा नही भेजा है, क्या मै उनसे यह सविनय कह सकता हूँ कि वे अपना चन्दा बिना माँगे ही भेजनेकी कृपा करे?

सभी महिलाओने अपने हिस्सेका चन्दा अभी नही दिया है। मुझे बताया गया है कि वे अपने चन्देको अपने पतियोके चन्देमे शामिल समझती है। मै इस विचारमे सादर अपनी असहमति प्रकट करता हूँ। जैसा कि मैने तिलक स्वराज्य कोषके लिए चन्दा एकत्र करते समय किया था। मै चाहता हूँ कि प्रत्येक महिला अपने गहने और जेबखर्च चन्देमे दे। उनसे मेरा निवेदन है कि जो-कुछ उनका अपना है उसको चन्देमे दे दे और फिर अपने जीवन साथियोसे उन चीजोकी माँग न करे। ऐसा करनेपर उन्हे हानिका अनुभव नही होगा, केवल दान देनेकी खुशी रहेगी। सैकडो बहने पहले ही इस भावनासे चन्दा दे चुकी है। यदि शेष बहिनोके लिए भी देशबन्धुकी यादगार एक बहुमूल्य निधि है और यदि महिलाओके लिए महिला चिकित्सालय तथा नर्सोके प्रशिक्षणके लिए भी एक इतनी ही अच्छी सस्था खुलवाना श्रेयस्कर कार्य माना जाये तो मेरा सादर निवेदन है कि महिलाएँ उक्त भावनाका अनुकरण करे।

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]
फॉरवर्ड, २९-७-१९२५

२७७. पत्र: शौकत अलीको

१४८, रसा रोड
कलकत्ता
२९ जुलाई, १९२५

मेरे प्यारे दोस्त व बिरादर,

एक पत्रिकाके सम्पादकने मेरे पास पैगम्बर साहबपर लिखा अपना एक लेख भेजा है। इस लेखके कारण अहमदाबादमे अत्यत उत्तेजनापूर्ण वातावरणमे एक सभा आयोजित की गई। सम्पादक महोदयने मेरे पास 'खिलाफत' के २९ मईके अककी एक प्रति भी भेजी है।

यह लेख अशिष्ट अथवा अपमानजनक नही है। मेरे विचारमे इस लेखमे ऐसी कोई बात नही है जिसके कारण इतना तूफान उठ खडा होता। ऐसा नही लगता कि लेखकने पैगम्बरका कोई अच्छा जीवनचरित्र पढा है। साथ ही यह भी कहना होगा कि यह लेख अज्ञानतासूचक जरूर है। उन्होने 'कुरान पाक' तो हरगिज नही पढा है। उन्होने पैगम्बर साहबके जीवनका वैसा ही मूल्याकन किया है जैसा कि हम यूरोपमे प्रकाशित होनेवाली साधारण आलोचनाओमे पाते हैं। लेखकने मेरी राय माँगी है। मैने उनसे उतना ही कहा है, जितना-कुछ आपसे। यदि 'खिलाफत' का उक्त अक मेरे पास न भेजा गया होता तो मै आपको इस बारेमें तकलीफ न देता।

मेरे विचारमे 'खिलाफत' के लेखकने लोगोंके रोषको उकसाया है, जिसकी आवश्यकता न थी। मैने जिज्ञासाके कारण उस अकके अन्य भाग भी पढे है और

मै यह कहे बिना नही रह सकता कि मुझे प्रस्तुत 'खिलाफत' अककी भाषा, या उसकी सामान्य ध्वनि जरा भी अच्छी नही लगी। उसके अनुच्छेदोमे 'मूर्ख, गधा, सरासर झूठ — आदि शब्दोंका खुलकर प्रयोग किया गया है। मेरे विचारमे आपको इस पत्रिकाकी भाषापर नियन्त्रण रखना चाहिए। उसमे मैने एक भी अनुच्छेद ऐसा नही पाया जो सुविचारित ढगसे लिखा गया या शिष्टतापूर्ण हो। मुझे विश्वास है कि लेखक यह भी नही जानता कि उसने जिस भाषाका उपयोग किया है वह अशोभनीय है।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

२७८. भाषण : आंग्ल-भारतीयोंकी सभामें[1]

२९ जुलाई, १९२५

अध्यक्ष महोदय तथा मित्रो,

मै समझता हूँ कि बातचीतके शुरूमें ही आपको यह बतला देना ज्यादा ठीक रहेगा कि चुनिन्दा लोगोके इस छोटेसे सुन्दर समारोहमे मै कोई पहलेसे तैयार, बँधे-बँधाये किस्मका भाषण नही देना चाहता। मै इसे बातचीतका रूप देना चाहता हूँ।[2]

अध्यक्षने जो उद्‌गार[3] अपने भाषणके अन्तमे व्यक्त किया है, मै शुरूमे ही उसके विषयमे स्थिति स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। उन्होने मेरे सामने जो दृष्टिकोण रखा है मै उसकी कद्र करता हूँ। वफादारीके सम्बन्धमे मै भी ऐसे ही उद्‌गार व्यक्त करता था। लेकिन आप जानते ही है कि मैं पिछले ६ सालसे वफादारीकी नही, गैरवफादारीकी बात कहता आ रहा हूँ। बात यह नही है कि मै हर चीजके प्रति गैरवफादार हूँ, किन्तु मै अवश्य ही समस्त असत्य, समस्त अन्याय और समस्त बुराइयोके प्रति गैरवफादार हूँ। मै अपने सम्बन्धमे किसीको धोखेमे रखना नही चाहता और इसलिए यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। मै किसी सस्थाके प्रति तभीतक वफादार रहूँगा जबतक उससे मेरे विकासमे, राष्ट्रके विकासमे, सहायता मिलती है। यह लगते ही कि सस्था राष्ट्रके विकासमें सहायता देनेके बजाय उसमें बाधा डाल रही है, तुरन्त उसके प्रति गैरवफादार हो जाना मै अपना परम कर्तव्य मानता हूँ। मै यह कदापि नही कह सकता कि मैं वर्तमान सरकारके प्रति, अर्थात् वर्तमान शासनप्रणालीके प्रति वफादार हूँ। मै जोर देकर कहता हूँ कि मै जीवनका एक-एक क्षण इस शासनप्रणालीको, जो राष्ट्रके पौरुषको खा रही है, जो उसके सत्य और साधनोंको चूस रही है, जो इस

१. यह सभा शामको वेलेज्ली स्क्वेयरमें हुई थी।
२. यह अनुच्छेद ३०-७-१९२५ के फॉरवर्डमें छपी रिपोर्टसे लिया गया है।
३. डा० मोरेनोने कहा था कि वफादारी आंग्ल-भारतीयोंका धर्म है।

प्रणालीके सचालको और उस प्रणाली द्वारा शासित लोगो, दोनोको समान रूपसे गिराती है, नष्ट करनेमे लगा रहा हूँ।

लेकिन मेरे विचारमे जहाँ हम मानते है कि हममे इस अत्यन्त बुनियादी प्रश्न-पर ही मतभेद हो सकता है वहाँ हमे यह खोजनेका भी प्रयत्न करना चाहिए कि क्या आपके और मेरे बीच — आपके और इस सुन्दर देशमे (यदि मै ऐसा कह सकूँ) रहनेवाले विशाल जनसमुदायके बीच — कई बाते ऐसी नही है जिनपर हम सहमत हो सकते है। भारतका भविष्य अन्तत: क्या होगा, यह हम नही जानते, या जानते है तो केवल इतना ही कि उसके भविष्यका निर्माण करना हमारे हाथमे है। भारतके साथ हम सबका भाग्य बँधा है। हम जैसा चाहेगे उसका भविष्य वैसा ही होगा। किन्तु हम इससे अधिक नही जानते, क्योकि हमारा उन करोडो लोगोके दिमागपर कोई नियन्त्रण नही है, जिनसे भारत बना है। किन्तु प्रत्येक व्यक्तिको आशावादी बनना चाहिए और तभी इस देशका भविष्य उज्ज्वलतम हो सकता है। इसका अर्थ यह है कि आज प्रत्येक व्यक्तिको अपने-आपसे यह कहनेमे समर्थ होना चाहिए कि, 'मै इस देशके लिए जीवित हूँ, मै इस देशके लिए ही मरूँगा।' इसलिए मै चाहता हूँ कि आप इस प्रश्नपर सेवाभावसे विचार करे और जब आपमे वह सेवाभाव होगा तब हम इस विघ्नकारी तत्त्व [वर्तमान शासनप्रणाली]को यहाँ से हटा सकते है। जब कोई आदमी सचमुच, सेवा करना चाहता है, तब उसके लिए 'वफादारी' या 'गैरवफादारी'का महत्त्व अधिक नही रहता।

मै आज यहाँ अत्यन्त विनम्रताके साथ आपके प्रति पूर्ण मैत्री और शुभाकाक्षाकी भावना लेकर आया हूँ। अपने निरन्तर भ्रमणमे मै केवल हिन्दुओसे या केवल मुसल-मानोसे ही नही मिला हूँ बल्कि मैने जानबूझकर सभी प्रकारके और सभी स्थितियोके लोगोसे सम्पर्क स्थापित किया है। मुझे विश्वास है कि मै उन सभी लोगोसे मिला हूँ जो मुझसे मिलना चाहते थे, किन्तु अल्पसख्यकोसे मिलनेके लिए तो मै स्वय अपनी ओरसे आगे बढा हूँ। चूँकि मुसलमान अल्पसख्यक है, इसलिए भारतमे बहुसख्यक लोगोके प्रतिनिधिके रूपमे उनसे मैत्री करना मै अपना कर्त्तव्य मानता हूँ, फिर चाहे वे मेरी सलाहको अस्वीकार ही क्यो न करे। आपका समुदाय सख्याकी दृष्टिसे उतना भी बडा नही है, और इसलिए मुझे जब कभी आपसे मिलनेका अवसर मिला है, मैने आपसे मिलनेमे सकोच नही किया है। किन्तु मुझे यहाँ यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आंग्ल-भारतीयोने मेरी इस भावनाके अनुरूप खुले दिलसे अपना हाथ आगे नही बढाया है।

आंग्ल-भारतीयोसे मेरी मुलाकात सबसे ज्यादा रेलगाडियोमे हुई है। क्योकि कारण कुछ भी हो उन्हे सार्वजनिक सभाओमे आनेमे सकोच होता है। इसका कारण शायद उनका यह खयाल है कि इन सभाओमे गैरवफादार लोग इकट्ठे होते है। वफादारीको अपना सिद्धान्त बना लेनेके बाद आपको इन सभाओमे आनेसे अरुचि होगी ही। किन्तु रेलगाडियोमे तो मै आपसे मुलाकात करनेमे कामयाब रहा हूँ।

आंग्ल-भारतीय भारतीयोसे किस तरह अलग हो गये है, इसका एक उदाहरण देते हुए श्री गांधीने कुछ आंग्ल-भारतीय युवकोंके साथ अपनी भेंटका सजीव वर्णन

किया। उन्होंने कहा कि कुछ आंग्ल-भारतीय युवक और मैं एक ही गाड़ीमें अजमेरसे आ रहे थे। उन्होंने जबतक मुझे नहीं पहचाना तबतक वे अपने आम बोलचालकी अंग्रेजी अपभाषाका उपयोग करते रहे और मुझे उसे सुननेका अवसर देते रहे। किन्तु जैसे ही उन्होंने मुझे पहचाना तो उनका यह सहजभाव लुप्त हो गया और वे शिष्टताका प्रदर्शन करने लगे। और इन लड़कोंके व्यवहारसे भी मुझे आप लोगोंके आम जनतासे पृथक् होनेका पर्याप्त प्रमाण मिला। उनमें से एक युवकको भारतीय मिठाइयाँ अच्छी लगती थीं; किन्तु वह दूसरोंके सामने मिठाई खरीदनेका साहस नहीं करता था। उसने कहा, 'मैं ये मिठाइयाँ केवल तभी खाता हूँ जब कोई दूसरा वहाँ नहीं होता।' वह अपने-आपको भारतीय नहीं मानता था और यह नहीं चाहता था कि भारतीय उसकी गतिविधियाँ देखें। इसका कारण आपकी शिक्षा-दीक्षा है।

आप लोगोके शरीरोमें भारतीय रक्त है; इसपर आपको गर्व होना चाहिए, इसमें लज्जित होनेकी जरूरत नही है, पर मैं जानता हूँ, कि जब कोई आपको इस बातकी याद दिलाता है तो आपको दु ख होता है।

श्री गांधीने इसके बाद एक आंग्ल-भारतीय युवककी चर्चा की और कहा उस युवकने मेरे सामने अपना हृदय खोलते हुए कहा था कि मुझे ४०० रुपये मिल रहे हैं, किन्तु इनसे मैं अपना गुजारा मुश्किलसे कर पाता हूँ। मुझे अपनी आयसे अधिक व्यय करना पड़ता है, क्योंकि मेरे लिए यह आवश्यक है कि मैं पूरा यूरोपीय दिखूँ।

उसकी गाथा सुनकर मेरा कलेजा टूक-टूक हो गया। मैंने अपने मनमें कहा कि यह मानवीयताके प्रति अपराध है। वह युवक ईसाई था और उसके आचरणमें कोई अनुचित बात नहीं थी; और ऊपरसे सब ठीक होनेपर भी उसके हृदयको यह घुन खाये जा रहा था कि वह कृत्रिम जीवन बिता रहा है।

मैंने आपको दो बडे ही सटीक उदाहरण दिये। अब अपना मार्ग आपको ही चुनना चाहिए। आप क्या करेंगे? क्या आप असम्भव कार्यको करनेका प्रयत्न करेंगे या वैसे बनेंगे जैसा आपको होना चाहिए, अर्थात् क्या आप पूरे भारतीय बनेंगे? मैं आपसे एक बात और कह दूँ कि यदि आप दक्षिण आफ्रिका, आस्ट्रेलिया या किसी भी उपनिवेशमे जायें तो वहाँ जैसा व्यवहार मेरे साथ होगा वैसा ही आपके साथ भी होगा। आप रंगदार लोगोके वर्गमे रखे जायेंगे और आपकी कोई सामाजिक प्रतिष्ठा नही होगी। आपमे से जिन लोगोंकी चमड़ी गोरी है वे प्रवास अधिकारीको धोखा दे सकते हैं, किन्तु आपके सम्बन्धियो और सन्तानसे आपका भेद खुल सकता है। स्थिति यही है। वहाँ रंग सम्बन्धी प्रतिबन्ध बडे ही सख्त हैं। वहाँ आपकी गिनती भी नैतिक दृष्टिसे कोढियोमें की जायेगी। श्री मलान अब कहते हैं कि वे हमको दक्षिण आफ्रिकासे भगायेंगे नही, बल्कि हमे भूखो मारेंगे जिससे हम स्वयं भाग जायेंगे। और वे शुद्ध पाखंडका सहारा लेंगे। यह दुर्भाग्यपूर्ण प्रतिबन्ध, जैसा लॉर्ड मॉर्ले कहते हैं, हमपर इंग्लैंडमे भी लागू होता है। अब इसके विरुद्ध लड़ना आपके हाथ है। यदि आप अपने भाग्यको भारतके उस जनसाधारणसे, आप जिसके अंश हैं, जोड़

लें तो आपका, मेरा और उस सरकारका भी, जिसके प्रति वफादार रहना आप अपना कर्त्तव्य समझते हैं, कल्याण ही कल्याण है।

आप एक सेतु बन सकते हैं, एक ऐसा आधार जुटा सकते हैं, जिससे होकर भारतीय और अंग्रेज दोनों कोई हानि या असुविधा उठाये बिना ही एक-दूसरेसे सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं और सास्कृतिक आदान-प्रदान कर सकते हैं। किन्तु यदि आप शिमलाकी ऊँचाई चाहते हैं तो वह ऊँचाई आपको मिल नही सकती। तब आपके भाग्यमे गरीबी ही रहेगी और भारतके भाग्यमे भी। आग्ल-भारतीय-जैसा महत्त्वपूर्ण समाज जो कि बहादुरी और सूझबूझसे सम्पन्न है, इसीलिए सर्वनाशकी ओर जा रहा है कि आप स्पष्ट चीजको देखना नही चाहते और दुराग्रहपूर्वक असम्भवको सम्भव बनानेका प्रयत्न करते हैं। इस प्रक्रियासे आप जनसाधारणसे अलग होते जा रहे हैं। इस प्रकार आप भारतीयों और यूरोपीयो — दोनोके द्वारा बहिष्कृत हो गये हैं।

श्री गांधीने एक और संस्मरण सुनाया जो एक बहुत ही सुसंस्कृत काठियावाड़ी आंग्ल-भारतीयके सम्बन्धमें था। उन्होंने कहा कि ये आंग्ल-भारतीय यूरोपीय ढंगका जीवन बितानेका प्रयत्न कर रहे थे और फिर भी वे सर्वत्र बहिष्कृत होते थे। उन्होंने कहा :

उनके दु:खमय जीवनका चित्र मेरे सम्मुख अब भी सजीव है।

हमारे राष्ट्रीय जीवनमे यह एक नाजुक समय है। मै इस समय आपसे यह अवश्य कहना चाहता हूँ, 'आग्ल-भारतीयो, आप दृढतापूर्वक और साहसपूर्वक यह तय करें कि क्या आप राष्ट्रसे अलग रहना चाहते है और क्या आप यूरोपीय ढगका जीवन बिताना चाहते है।' ध्यान रखिए, मै आपसे यह नही कह रहा हूँ कि आप अंग्रेजोसे अलग हो जाये। चूँकि मै आज स्वाभाविक जीवन बिता रहा हूँ, इसलिए मै अंग्रेजोकी पहले जितनी कद्र करता था, आज उससे भी ज्यादा करता हूँ। एक समय ऐसा था जब मै भी यूरोपीयोकी नकल करता था। तब मै भी बहुत छोटी-छोटी चीजोको अत्यधिक महत्त्व देता था। लेकिन मेरे जीवनमे एक ऐसा अनमोल वक्त आया कि मैने उन सब चीजोको हिन्द महासागरमे फेंक दिया और फिर उनकी ओर मुड़कर भी नही देखा। मैने कहा : 'अब मै ऐसा जीवन नही बिताऊँगा। अब मैं सिजविककी शब्दावलिमे कहे तो, "सभ्यताका स्याहीसोख बनना" स्वीकार नही करूँगा।' इसलिए अब मै ज्यादा स्नेह प्राप्त कर पाता हूँ और लोग ज्यादा आसानीसे मुझसे मिल-जुल पाते है। आज यूरोपमे मेरे जितने मित्र है, उतने मेरे जीवनमे पहले कभी नही रहे। उसका कारण यही है कि मैने अपनी समस्त कृत्रिमताएँ त्याग दी है। मै आपको असंस्कृत दिखाई दे सकता हूँ, पर दिखावटी शिष्टतासे यह गँवारूपन ज्यादा अच्छा होता है। इसलिए मै आपसे कहता हूँ कि आप नकल करनेकी आदत छोड़ दे, जनसाधारणकी बात सोचे और उनमे घुलमिल जाये। इससे आपका उत्थान हो सकता है और हम ससारको भारतीय मानव-समाजका ऐसा सुन्दर नमूना पेश कर सकते है, जिसमे सब जातियाँ अपनी-अपनी खूबियोको कायम रखते हुए तथा अपने सर्वोत्तम गुणोकी रक्षा करते हुए मिलजुल कर

रह सकती है। यह श्रेय आपको ही मिल सकता है, जरूरत इस बातकी है कि आप इसपर अमल करे।

मैंने आपके कर्त्तव्यकी बात कही। आप सम्भवतः जानना चाहेंगे कि मेरा कर्त्तव्य क्या है। हाँ, यदि मैं भारतका वाइसराय बना, जो मेरे खयालसे होनेवाली बात नही है तो मैं आपको और दूसरे अल्पसंख्यक लोगोको चुनावका अधिकार देकर पूछूंगा कि आप क्या चाहते है। मैं सभी दलोके नेताओको बुलाऊँगा और उनके सामने अपना प्रस्ताव रखूंगा। फिर मैं सबसे पहले आपमे से उन लोगोको बुलाऊँगा जो सख्याकी दृष्टिसे सबसे कमजोर है और उनसे पूछूंगा कि आप सब क्या चाहते है। नौकरियोमें मैं एक समुचित परीक्षापर जोर दूंगा, अर्थात् मैं उम्मीदवारसे केवल यह पूछूंगा कि आपमे कितना पुरुषत्व या स्त्रीत्व है? क्या आपमें अवसरके अनुरूप कार्य करनेकी योग्यता है? जो स्त्री या पुरुष इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाते है, मै उनमे से सबसे पहले सबसे छोटे अल्पसख्यकवर्गके व्यक्तिको चुनूंगा। मैं इस तरह सब अल्पसख्यकोको न्यायसगत आधारपर भारतके कल्याणका ध्यान रखते हुए तरजीह दूंगा। जब मैं इस शब्दावलिका उपयोग करता हूँ तब मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं कोई शब्दजाल नही रच रहा हूँ। मेरा उद्देश्य यह नही होगा कि केवल हिन्दुओका कल्याण हो। भारतके कल्याणका अर्थ हिन्दुओ और मुसलमानोका या किसी खास जातिका नही, बल्कि समस्त भारतका कल्याण है। मैं आपकी चापलूसी या मनुहार नही करूँगा, बल्कि जो आपका देय होगा वह आपको दे दूंगा।

श्री गांधीने इसके बाद कहा कि मेरी योजनाके अन्तर्गत सब अल्पसंख्यक जातियोंके हितोंकी तरह आंग्ल-भारतीयोंके हितोंकी भी रक्षा एक स्वैच्छिक समझौतेके द्वारा की जायेगी। इस समझौतेका समर्थन कानून द्वारा नहीं किया जायेगा जिसमें सदा तीसरे पक्षका होना निहित होता है; बल्कि यह समझौता बिलकुल स्वैच्छिक होगा, जैसा मेरा और स्वराज्यवादियोंका समझौता है। यह समझौता ऐसा ही होगा जैसे समझौतेका प्रस्ताव मैंने दिल्लीमें मुसलमानोंके सन्मुख रखा था। जबतक आप लोगोंका बहुसंख्यक जातियोंकी न्यायभावनामें विश्वास नहीं है तबतक आपको ऐसे स्वैच्छिक समझौतेका संरक्षण प्राप्त होना चाहिए। जो पक्ष इस समझौतेमें सम्मिलित होंगे वे उसके अनुसार कार्य करनेके लिए कर्त्तव्यबद्ध होंगे। यदि वे समझौतेकी उपेक्षा करेंगे तो वे स्वयं खतरेमें पड़ेंगे। आप आंग्ल-भारतीयोंसे मुझे यही कहना है कि यदि इस समझौतेका पालन न किया जाये, यदि पवित्र वचनोंको पूरा न किया जाये तो आप उन लोगोंसे, जो समझौतेको तोड़ें, बदला ले सकते हैं। अन्तमें श्री गांधीने कहा:

मैंने अपना हृदय चीरकर रख दिया है। जो-कुछ मेरे मनमें था वह मैंने बिना साज-सँवारके मैत्रीभावसे आपके सन्मुख रखा है। मेरी इच्छा है कि आप भी इसपर ऐसी ही भावनासे विचार करे।

श्री गांधीने इसके बाद लोगोको प्रश्न पूछनेके लिए आमन्त्रित किया। इनमें सबसे पहले यह प्रश्न डाक्टर मोरेनोने किया: ऐसा लगता है कि भारतीयकरणकी

योजनामें आंग्ल-भारतीयोंपर विपरीत प्रभाव पड़ेगा; यदि ऐसा हुआ तो आपका रुख क्या होगा?

यदि यह बात मेरे हाथमे होगी तो मै एक भी आग्ल-भारतीयको नही हटाऊँगा।

आपने कांग्रेस स्वराज्यवादियोंको सौंप दी है। फिर भी आप सर्वदलीय कार्यक्रमकी बात करते हैं। हम आंग्ल-भारतीय स्वराज्यवादियोंके बाधा डालनेके हथकण्डोका साथ कैसे दे सकते है?

मैंने काग्रेस स्वराज्यवादियोको नही सौपी है। मैने तो उनको उस समझौतेसे मुक्त कर दिया है जो उनके और मेरे बीच हुआ था। यदि मै चाहूँ तो भी मै काग्रेसको किसीके हाथमे सौप नही सकता। इसका अर्थ केवल यह है कि प्रत्येक सदस्य मताधिकारको बदलवाने या न बदलवानेके सम्बन्धमें स्वय निर्णय कर सकता है। काग्रेस, जो बेलगाँवमें राजनीतिक सस्था बना दी गई थी, अब प्रधानत राजनीतिक सस्थाके रूपमे परिवर्तित कर दी गई है। इसका परिणाम यह होगा कि उसमे अब राजनीतिक प्रस्ताव रखे जा सकेंगे और उन लोगोके मार्गमे से जो काग्रेसमे उसके अराजनीतिक सस्था होनेके कारण सम्मिलित नही हो पाते थे, प्रतिबन्ध हट जायेगा। वह स्वराज्यवादियोकी सस्था नही रहेगी, वह प्रधानत राजनीतिक सस्था बन जायेगी। यह सही है कि आज उसमे स्वराज्यवादियोकी प्रधानता है; किन्तु उसका कारण यह है कि दूसरे लोग उससे अलग रहे है, और यदि उसमें उनकी अधिकता है तो इसका कारण यह है कि दूसरोके पास कोई सगठन नही है। जहाँतक रुकावट डालनेका सम्बन्ध है, यह बात अनुचित हो सकती है, उचित भी हो सकती है। लेकिन आप निश्चय ही काग्रेससे अलग रहकर स्वराज्यवादियोको प्रभावित नही कर सकते। आप बडी सख्यामे काग्रेसमे शामिल हो और यदि आप चाहे तो उसकी नीतिमे परिवर्तन करा ले।

एक प्रश्नमें उनसे पूछा गया कि जब आंग्ल-भारतीयोंको आनुपातिक प्रतिनिधित्वके अन्तर्गत कुछ मिलेगा ही नहीं, तब श्री गांधी उनके हितोकी रक्षा कैसे कर सकते हैं। इसके उत्तरमें श्री गांधीने अपने स्वैच्छिक समझौतेका प्रस्ताव और भी स्पष्ट किया। उन्होंने कहा:

स्वराज्यकी योजना बनानेसे पहले मै आपसे पूछूँगा कि आप क्या चाहते है। योजनाकी शर्तोंका दस्तावेज सार्वजनिक होगा। यदि हम मान ले कि योजनाके पीछे पर्याप्त लोकमत रहेगा और ईमानदारी बरती जायेगी तो आग्ल-भारतीयो और अन्य अल्पसख्यकोके साथ सम्भवत. अन्यायपूर्ण व्यवहार नही किया जा सकेगा।

श्री गांधीसे यह प्रश्न पूछा गया कि उन्होंने श्रीमती बेसेंटके 'भारतीय राष्ट्रमण्डल विधेयक' (कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल) सम्बन्धी ज्ञापनपर हस्ताक्षर क्यो नहीं किये। इसके उत्तरमें उन्होंने कहा कि मैंने पहले ही कह दिया था कि यदि मुझे लॉर्ड बर्कनहेडका यह तार मिल जायेगा कि ज्ञापनपर मेरे हस्ताक्षर करनेके बाद विधेयक स्वीकार कर लिया जायेगा, तो मैं अपने हस्ताक्षर तारसे भेज दूंगा। लेकिन

मैंने विधेयकके समर्थकोंमें अपना नाम देनेसे केवल इसलिए इनकार कर दिया कि मैं अपमानित होना नहीं चाहता था। जब मैं यह जानता था कि यह बात बिलकुल निश्चित है कि विधेयक कूड़ेके ढेरमें फेंक दिया जायेगा, और विश्वास था कि उसकी कोई दूसरी गति नहीं हो सकती, तब मेरे लिए उसपर हस्ताक्षर करना सम्भव नहीं था। मैं पहले बहुत अपमान सह चुका हूँ, किन्तु मैं स्वयं कभी अपमानित होने नहीं गया। जब भी मेरे ऊपर अपमान थोपा गया, मैंने उसे हँसते-हँसते सहा। लेकिन इस विशिष्ट मामलेमें मेरा खयाल यह था कि यह तो अपमानको आमंत्रित करना होगा और मैं ऐसा करनेके लिए तैयार नहीं था। असलमें मुझे उसी दिन इसका संकेत मिल गया था।

उस संकेतका उल्लेख करते हुए श्री गांधीने कहा:

मैंने भारत सरकारके सम्मुख एक अत्यन्त व्यावहारिक, निर्दोष-सा सुझाव रखा था। पहले देशबन्धु दासने यह प्रस्ताव रखा था। आप जानते हैं कि राजनीतिक बन्दियोंके मामलेमें उनकी दिलचस्पी कितनी गहरी थी। मैंने सरकारसे कहा, 'क्या वह एक अनुग्रहका कार्य करेगी; इससे समस्त राष्ट्रपर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ेगा? क्या वह बन्दियोंको मुक्त कर देगी?' यदि सरकार ऐसा करती तो उससे दो उद्देश्य सिद्ध होते। यदि इन राजनीतिक बन्दियोंके मनमें कोई कटुता होती तो वह इससे दूर हो जाती, क्योंकि वे यह अनुभव करते कि उनको स्व० देशबन्धुके सम्मानार्थ मुक्त किया गया है और उनपर जो विश्वास किया जाता वे उसे भंग न करते। और यह सरकारकी सबसे बड़ी नैतिक विजय होती और उससे बातचीतके लिए वातावरण बन जाता। किन्तु नहीं। लॉर्ड बर्कनहेडने कहा कि वैरभाव दूर करनेके उद्देश्यसे भारतीय जो भी सुझाव दें वे उसपर विचार करनेके लिए तैयार हैं, किन्तु जो सुझाव दिया गया है वह व्यावहारिक नहीं है। मैं आपसे कहता हूँ कि मैंने जो सुझाव दिया है, उससे अधिक व्यावहारिक सुझाव देनेकी सूझबूझ मुझमें नहीं है। किन्तु वह रद्दीकी टोकरीमें फेंक दिया गया है। इसलिए यदि ये छोटी-छोटी चीजें नहीं मिल सकतीं तो उस बड़े भारतीय राष्ट्रमण्डल विधेयकपर विचार करनेसे क्या लाभ? श्रीमती बेसेंट प्रबल आशावादी हैं, और यद्यपि उनकी दिशा विपरीत है, वे मेरी ही तरह यह सोचती हैं कि उन्हें कार्य जारी रखना ही चाहिए।

एक अन्य मित्रने पूछा है कि आप संक्रमण-कालके लिए क्या सुझाते हैं; उदाहरणार्थ यदि हम अपना 'आंग्ल' विशेषण त्याग दें और कांग्रेसमें सम्मिलित हो जायें तो आप क्या करेंगे? उस अवस्थामें कुछ छोटे-मोटे विशिष्ट अधिकार, जो हमें इस समय प्राप्त हैं, छिन जायेंगे और उनके बदले हमें कुछ न मिलेगा।

यह प्रश्न अत्यन्त उचित है। आप कहते हैं कि कुछ बातोंके सम्बन्धमें आप यूरोपीयोंके वर्गमें रखे गये हैं। मैंने आपसे कहा है कि आप इन विशिष्ट अधिकारोंको त्याग दें। आपने 'भारतीय सहायक सेना' के लिए अपनी पात्रताका उल्लेख किया है। मैं सुझाव देना चाहता हूँ कि आप गर्वपूर्वक कहें: 'हम इनमें से कोई विशिष्ट

अधिकार नही लेगे। ये तो हमे पतित और दरिद्र बनाते है।' मै चाहता हूँ कि आप जनसाधारणकी दृष्टिसे विचार करे; आग्ल-भारतीय अधिकारियो और धर्माचार्योंकी दृष्टिसे नही। आप लोगोमे जो उच्चवर्ग है वह यूरोपीयोमे मिलना चाहता है, किन्तु उसकी यह आकांक्षा पूरी होना असम्भव है। इसके विपरीत निम्नवर्ग इच्छा न होते हुए भी भारतीयोमे मिल जायेगा। इस प्रकार अनिच्छापूर्वक मिलनेसे कोई लाभ नही हो सकता। आप पूछेंगे कि स्वेच्छासे कैसे मिले? मै यह तो नही चाहता कि आप अपनी सुरक्षाके सम्बन्धमे कोई झूठा खयाल बनाकर उसमे डूब जायें; मै तो आपसे यह कहूँगा कि आप अपने इस अस्वाभाविक रहन-सहनको त्याग दे। यदि आपके भारतीय हो जानेके बाद स्वय भारतीय आपको धोखा दे तो आप भारतीयोके विरुद्ध विद्रोह कर दे; किन्तु पुन यूरोपीय बननेकी कामना न करे। मेरा अनुरोध है कि आपकी सख्या बहुत कम है, आप इस खयालसे आतकित न हो। यह कभी-कभी एक विशेष लाभ होता है। मैने तो इतनी बार कहा है कि मुझे केवल अकेले रह जाना भी पसन्द है, क्योकि यह कृत्रिम बहुमत, जो मेरे प्रति जनसाधारणकी श्रद्धाका परिणाम है, मेरी प्रगतिके पथमे एक रोडा है। यदि मेरे पथमे यह रोडा न होता तो मै आज ही सरकारकी सत्ता माननेसे इनकार कर देता। मै अन्धा पूजाभाव पाकर तो गर्वसे फूल सकता हूँ और न पूजाभाव प्राप्त करनेके लिए अपने सिद्धान्तका रच-मात्र त्याग ही कर सकता हूँ। यहाँ अंग्रेजोकी सख्या अत्यल्प है। उनको यह भय नही है कि वे हड़प लिये जायेगे। यह सच है कि उनकी सुरक्षाकी भावनाके पीछे सगीनोका बल है। किन्तु यदि उन्हे समय रहते चेतावनी न दी गई तो यह बल उन्हे बर्बाद कर देगा। आप या तो अपने आत्मबलपर निर्भर रह सकते है या शस्त्र-बलपर। किन्तु आप अपने वर्तमान पतनको तो किसी भी हालतमे सहन नही करना चाहेगे।

उनसे एक प्रश्न यह किया गया कि क्या आप आशावादी है और यदि आशावादी है तो आप भविष्यके सम्बन्धमें निराश क्यों है, क्योंकि लॉर्ड बर्कनहेड तो सदा पदारूढ़ नहीं रहेंगे? इसके उत्तरमें उन्होंने कहा:

मै तो अदम्य आशावादी हूँ; क्योकि मै अपने ऊपर विश्वास रखता हूँ। यह बात बहुत बड़ी गर्वोक्ति लगती है; क्या नही लगती? किन्तु मै यह अत्यन्त ही नम्रतापूर्वक कहता हूँ। मेरा विश्वास है कि ईश्वरकी शक्ति सर्वोच्च है। मै सत्यमे विश्वास करता हूँ; अतः मुझे देश या मानवजातिके भविष्यके उज्ज्वल होनेमे कोई सन्देह नही। लॉर्ड बर्कनहेड कुछ भी कहे, मै तो ईश्वरमे विश्वास करता हूँ और वह मनुष्योकी अति-चतुराईको विफल बनाता रहता है। वह जबर्दस्त जादूगर है और मैने अपने-आपको उसीके हाथो अर्पित कर दिया है। किन्तु वह काम लेनेमे बड़ा सख्त है। आप अपनी पूरी शक्तिसे काम करेगे, तभी वह आपको स्वीकार करेगा। मेरी दृष्टिमें सरकारमे परिवर्तन होनेका कोई अर्थ नही है। मै तो आशावादी हूँ, क्योकि मै अपने-आपसे कई चीजोकी अपेक्षा रखता हूँ। मै जानता हूँ कि वे मेरे पास नही है, क्योकि मै अभी पूर्ण नही बन पाया हूँ। यदि मै पूर्ण मनुष्य होता तो आपको

समझानेकी भी मुझे जरूरत नही होती। मैं जब पूर्ण मनुष्य हो जाऊँगा, तब मुझे बात कहनेकी देर न होगी कि राष्ट्र उसे सुन लेगा। मैं इस पूर्णताको सेवाके द्वारा प्राप्त करना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १३-८-१९२५

२७९. टिप्पणियाँ

दादाभाई शताब्दी

दादाभाई नौरोजीकी सौवी जयन्ती आगामी ४ सितम्बरको पडती है। श्री भरूचाने समयपर ही हमें इसकी याद दिला दी है। दादाभाईको उनके जीवनकालमें हम भारतका पितामह कहते थे और यह ठीक भी था। वे भारतीय राष्ट्रीयताके जन्मदाता थे। सबसे पहले उन्होने ही काग्रेसकी शब्दावलिमे 'स्वराज्य' शब्द जोडा था। वे स्वराज्यके उतने ही बडे पैरोकार थे जितने कि स्वय लोकमान्य। देशके प्रति उनकी सेवा सुदीर्घ, अविचल और नि.स्वार्थ थी। उन्होने हमको जनताकी दरिद्रताको ठीक-ठीक समझना सिखाया। इस विषयके सम्बन्धमे लिखे गये उनके लेख भारतीय देशभक्तोके लिए आज भी पाठ्यपुस्तककी भाँति है। उन्होने जो आँकड़े पेश किये थे वे आज भी अकाट्य है। उनके चरित्रपर कही कोई दाग नही। भारतमाताके इस एक उच्चादर्शपूर्ण पुत्र दादाभाई नौरोजीकी जन्म-शताब्दी हम किस रूपमें मनायें? कांग्रेसके झण्डेके नीचे आ चुकनेवाले सभी स्थानोंमे सभाओका आयोजन तो होना ही चाहिए। मैं चाहता हूँ कि ये सभाएँ कामकाजी किस्मकी हो; और हमे निश्चित रूपसे अपने ध्येयकी ओर थोडा आगे ले जा सके। हालाँकि दादाभाई पूरी तौरपर शिक्षित भारतके ही प्रतिनिधि थे, फिर भी उनको जनताका पूरा-पूरा खयाल था और वे उसके हितकी बात ही सोचते थे। उनकी आत्मा जनतामे ही रमी रहती थी। उन्होने जिस स्वराज्यका सपना देखा था उसमें आम जनताका आर्थिक उत्थान भी शामिल था। चरखे और खद्दरके अलावा अन्य कौन-सी ऐसी चीज है जो समाजके उच्च वर्गोको सर्वसाधारणके अधिक निकट ला सकता है? मेरा सुझाव है कि इन सभाओमें देशबन्धु-स्मारक, चरखा और खद्दरके इस्तेमालके बारेमे प्रस्ताव पास किये जा सकते है। जहाँ भी खद्दरका अतिरिक्त भण्डार मौजूद हो, वहाँ स्वयसेवक घूम-घूमकर खद्दर बेचनेके लिए एक पूरा दिन निश्चित कर सकते है। और जिन लोगोके पास अवकाश हो, वे आजसे ही रोज दिनभर बढिया किस्मका सूत कातनेमे लगा सकते है और फिर उसे इन सभाओमे राष्ट्रको अर्पित कर सकते है।

ये मेरे सुझाव ही है। जरूरी नही कि इनको सभी लोग स्वीकार कर ले। जिन लोगोंको ये पसन्द आये वे अपने ढगसे चल सकते है; पर आशा है कि सभी दल इस जन्म-शताब्दीको बिना किसी भेदभावके यथोचित ढगसे मनायेगे।

चीनकी दुर्गति

मैं आशा करता हूँ कि 'यंग इंडिया' के पाठकोने कैंटन (चीन)की राष्ट्रीय सरकारके परराष्ट्र विभागके अधिकारीका भेजा लम्बा तार अन्य पत्रोमे पढ़ ही लिया होगा। यह तो स्पष्ट ही है कि वह दुनियाके कई देशोंमे भेजा गया है।

मैं नही कह सकता कि चीनको उसकी इस विपत्तिमे भारतवर्ष क्या सहायता दे सकता है। हमे तो खुद ही सहायताकी आवश्यकता है। यदि अपने घरके काम-काजमे हमारी कुछ चलती होती तो हम भारतीय सिपाहियोकी बन्दूकोसे चीनके निर्दोष विद्यार्थियो तथा अन्य लोगोके अन्धाधुन्ध भूने जानेके इस अपमान और पतन-कारक दृश्यको — यदि तारमे वर्णित कथाको सच मानें तो — कभी सहन नही कर सकते थे। फिलहाल हम तो सिर्फ परमात्मासे यही प्रार्थना कर सकते हैं कि वह उन्हे इन तमाम विपत्तियोंसे उबारे। परन्तु चीनकी स्थिति हमे इस बातकी याद दिलाती है कि हमारी यह गुलामी अकेले हमको ही हानि नही पहुँचा रही है, हमारे पड़ो-सियोंको भी इससे हानि पहुँचती है। इससे यह बात भी बडे जोरके साथ प्रत्यक्ष होती है कि भारतवर्षको अकेले उसीकी लूटके लिए पराधीन नही रखा जा रहा है, बल्कि उससे ग्रेटब्रिटेन महान् और प्राचीन चीन देशको लूटनेमे भी समर्थ बनता है।

यदि किसी जिम्मेवार चीनवासीके हाथमे ये पक्तियाँ पहुँच जाये तो मैं उसका ध्यान उन साधनों और उपायोंकी ओर दिलाना चाहता हूँ, जिनका उपयोग हम यहाँ भारतमे कर रहे हैं। वे हैं अहिंसा और सत्य। चीनी इस बातको समझ ले कि सख्याके लिहाजसे उनका राष्ट्र पृथ्वीपर सबसे बड़ा है। उनकी प्राचीन परम्परा गौरव-शाली है और वे हमारी तरह पौरुषहीन भी नही बनाये जा चुके हैं। यदि वे सिर्फ अहिंसा और सत्यकी नीतिका अनुसरण करें तो उनकी विजय केवल निश्चित ही नही बल्कि बहुत निकट समझिए। निश्चय ही ४० करोड़ आत्माओके राष्ट्रको यूरोपीयो तथा जापानियोकी महत्वाकाक्षाके बोझसे कुचले जानेकी कोई आवश्यकता नही। चीन अपने बिलकुल आन्तरिक शान्तिमय प्रयत्नोके द्वारा बाहरी लूटसे अपनेको मुक्त कर सकता है। यदि वह विदेशी मालके बहिष्कारमें सफल हो जाये तो इससे विदेशी सत्ताओके सामनेसे, जिस प्रलोभनके लिए वे उसपर अपना आधिपत्य कायम रखना चाहते है, वह दूर हो जायेगा।

अखिल भारतीय चरखा संघ

काग्रेसके मुख्यत राजनीतिक सस्था बन जानेके बाद भी यदि वह किसी-न-किसी रूपमे जनताका प्रतिनिधित्व करना चाहेगी तो भारतमे चरखा सघ स्थापित किये बिना काम न चलेगा। चरखा संघ मताधिकारके कताई-सम्बन्धी अशको नियमित और विक-सित करेगा तथा कताई सदस्योके दिये गये सूतको ग्रहण करेगा और केवल हाथकताई और खादीपर अपनी शक्ति केन्द्रित करेगा।

यदि इसकी स्थापना हुई तो यह सघ एक बिलकुल व्यावसायिक सस्था होगी। उसे एक स्थायी मण्डल होना चाहिए और काग्रेसकी राजनीतिके उतार-चढ़ावका उसपर

किसी तरह कोई असर न होना चाहिए। इसलिए उसका कार्याधिकारी मण्डल भी काफी स्थायी किस्मका होना चाहिए। उसे खादी सेवासंघ भी कायम करना होगा। वह दूर-दूरके देहातमें चरखेका सन्देश ले जाकर ग्राम-सगठनका प्रतिनिधि होगा और उसे विकसित करेगा तथा पहली बार देहातियोसे धन खीचकर शहरोमे ले जानेके बजाय देहातियोंकी आयमे वृद्धि करेगा। इसके द्वारा हम शान्तिके साथ देहातोंमे प्रवेश करेगे और कुछ समय बाद वहाँसे वास्तविक राष्ट्रीय जीवनका प्रवाह शुरू हो जायेगा। इसे एक ऐसा जबरदस्त सहयोगी-प्रयत्न होना चाहिए जैसा कि दुनियामे अभीतक नही हुआ। इसमे यदि बुद्धिका पर्याप्त प्रयोग किया गया, साधारण त्यागसे काम लिया गया, ईमानदारीका अवलम्बन किया गया और धनवानों और मध्यम वर्गके लोगोकी तरफसे साधारण सहायता भी प्राप्त हो गई तो इसकी सफलता निश्चित है। देखे, भारतके भविष्यमे क्या बदा है।

एक गलतफहमी

एक प्रतिष्ठित मुसलमान सज्जनने एक अन्य व्यक्तिकी मार्फत, जो हम दोनों ही का मित्र है, मुझे दो प्रश्न भेजे थे जिनपर १६ जुलाईके[१] 'यंग इंडिया' में चर्चा की गई थी। इनके सम्बन्धमें इस मित्रने मुझे लिखा है कि मैंने दूसरे प्रश्नको गलत समझा है।

> यदि उन्होंने वह प्रश्न पूछा होता तो मैं आपको उसका उत्तर देनेके लिए एक मिनट भी बर्बाद करनेके लिए न कहता। यदि कोई मुसलमान आपसे वह प्रश्न पूछे तो वह स्पष्ट उसकी अशिष्टता ही होगी, लेकिन उस बेचारेने अपना दूसरा प्रश्न उस रूपमें पूछा ही नहीं था। उसने तो यही कहा था, 'महात्माजी दोनों सम्प्रदायोंके बीच प्रेम और एकताकी बात करते है, किन्तु इस समय इससे काम नही चलेगा। उन्हें अभीष्ट एकता प्राप्त करनेके लिए कोई ठोस योजना बनानी पड़ेगी, कोई ऐसी योजना जो बंगालमें श्री चित्तरंजन दास द्वारा किये गये समझौतेसे मिलती-जुलती हो।'

मुझे दु:ख है कि मैंने प्रश्नको गलत समझा, यद्यपि मेरा खयाल यह है कि उस प्रश्नको मैंने जिस रूपमें समझा था उससे मैं इतना चौंक गया था कि मैंने अपने मित्रसे उसे दूसरी बार लिखनेके लिए कहा था। फिर भी यदि प्रश्नकर्त्ता मित्रने दिल्ली सम्मेलनकी कार्रवाई और उसमे रखी हुई मेरी ठोस योजना पढी और समझी होती तो इस प्रश्नको वर्तमान रूपमें भी पूछनेकी जरूरत नहीं थी। मैं उस योजनापर अब भी कायम हूँ और महसूस करता हूँ कि जब हममें फिर समझ आ जायेगी तब हमें इसीका आश्रय लेना पड़ेगा। सक्षेपमें योजना इस तरह है: एक निर्वाचक मण्डल ऐसे मताधिकारके अन्तर्गत बनाया जाना चाहिए जिसमे वे सब लोग आ जाये जो मतदाता सूचीमे शामिल किये जानेकी जिम्मेदारियोको समझ सकते हो और जो सख्याकी दृष्टिसे

१. यहाँ ९ जुलाई होना चाहिए। देखिए "टिप्पणियाँ", ८-७-१९२५का उपशीर्षक "दो कठिनाइयाँ"।

एक जातिका दूसरीके साथ जो अनुपात है उसका ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व करते हो। फिर भी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वको कानूनन मान्यता न दी जाये। मुसलमानोंको कितने अनुपातमे प्रतिनिधित्व दिया जाता है, इसकी चिन्ता मुझे कभी नही रही। मैं केवल एक चीजसे बचना चाहता हूँ और वह है भेदभावको कानूनी मान्यता देना। मैं नही चाहता कि सरकार विभिन्न जातियोके प्रतिनिधित्वको निश्चित करे और उसके अमलकी व्यवस्था करे। हममे आपसमे चाहे फूट भी हो, अगर हममें सच्ची राष्ट्रीय चेतना है तो हम अवश्य ही सरकारके सम्मुख एक मत होकर, एक स्वरसे अपनी बात रख सकते हैं। सरकारकी दृष्टिमे मुसलमान, हिन्दू, ईसाई, सिख, पारसी, ब्राह्मण या अब्राह्मणका कोई भेद नही रहना चाहिए। उसके लिए तो हम सबको राष्ट्रवादी ही होना चाहिए। सम्भव है, यह हल सभीको मजूर न हो; किन्तु यह तो नही कहा जा सकता कि मैं प्रेम और एकताकी बात करता हूँ, पर कोई ठोस योजना पेश नही करता। मै इस योजनाको स्वीकार करानेके लिए आन्दोलन नही करता, क्योंकि मैंने यह बात मान ली है कि दोनो जातियोके नेताओपर मेरा प्रभाव नही रहा है।

कांग्रेसमें भ्रष्टाचार

मेरे पास हफ्ते-दर-हफ्ते शिकायत-भरे ऐसे पत्र आते रहते है जिनमे कांग्रेस कार्यकर्त्ताओमे फैले हुए भ्रष्टाचार और अनुशासन हीनताकी और कुछ स्वार्थसेवियो द्वारा संस्थाका इस्तेमाल किये जानेकी शिकायते रहती है। इस तरहका सबसे हालका पत्र देखिये। पत्रपर लेखकके हस्ताक्षर बाकायदा मौजूद है:

> ...कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष... ने कांग्रेसके लगभग १,३०० सदस्य बनाये, लेकिन उन्होंने न तो चन्दा जमा कराया और न ही कोई हिसाब दिया।
>
> मन्त्री और... उचित-अनुचितका कोई खयाल किये बिना कमेटीकी वार्षिक बैठक बहुत दिनोंसे इसलिए नहीं बुला रहे हैं कि कहीं उनको पदसे हटा न दिया जाये। नियमोंकी कोई परवाह न करते हुए, मंजूरी लिये बिना ही अदायगियाँ कर रहा है; ...काफी बदनाम आदमी है वह चन्दा इकट्ठा करता है पर ऊपरके अधिकारियोंको उसका कोई हिसाब नहीं देता।

उपर्युक्त अभियोगपत्रमे कई अन्य आरोप लगाये गये हैं। यह शिकायत भी आई है कि देशमे कई जगहोपर कांग्रेस कमेटियाँ जनतासे प्राप्त धनको कुछ ऐसी मदोपर खर्च करती रहती है जिनपर वह खर्च नही कर सकती। आशा है कि जिम्मेदार कांग्रेसी लोग अपने-अपने सगठनोकी जाँच करेगे और भ्रष्टाचार या गबन दिखाई पडनेपर उसका भण्डाफोड़ करने तथा उसे दूर करनेका प्रयत्न करेगे।

देशबन्धु और हाथकताई

श्रीयुत प्रिय रायने एक नई किस्मका चरखा तैयार किया है और वे उसे बिलकुल निर्दोष बनानेका प्रयत्न कर रहे है। चरखेके बारेमें उन्होने लिखा है:

> मेरी इच्छा है कि मैं आपको यह भी बतला दूँ कि देशबन्धु मेरे चरखेके बारेमें क्या सोचते थे और उसे किस रूपमें देखना चाहते थे। मैंने उनको

अपने चरखेके सूतसे तैयार कम्बल, दरियाँ, कोटके कपड़े और अन्य कई कपड़े दिखलाये थे और मुझे उनके सामने खुलकर अपनी भावनाएँ व्यक्त करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मुझे भुलाये नहीं भूलता कि उन्होंने कितने उत्साह और ध्यानके साथ चरखे और कताईके बारेमें बातें कीं और सुनी थीं। उन्होंने ही मुझे समझाया था कि शिक्षित नवयुवकोंमें भी चरखेको लोकप्रिय बनानेकी अपार सम्भावनाएँ मौजूद है। चरखेमें मैंने जो थोड़ा-सा सुधार किया है, उसे देखकर उनको सचमुच बड़ी प्रसन्नता हुई थी और अपने स्वभावके अनुरूप ही उन्होंने मुझसे एक ऐसी योजना तैयार करनेका अनुरोध किया था जिसके अन्तर्गत वे मेरे चरखेको शुरूमें प्राथमिक पाठशालाओंमें और बादमें बड़े-बड़े क्षेत्रोंमें चालू करा सकें। इसका खर्च कलकत्ता निगमको उठाना था। मेरे पास तब वैसी कोई योजना तैयार नहीं थी और इसके तैयार होनेसे पहले ही कालने उनको हमसे छीन लिया। अब पता नहीं इस योजनाको अमली रूप दिया भी जा सकेगा या नहीं, पर मैं इतना अवश्य कह देना चाहता हूँ कि जो भी इस कामको आगे बढ़ायें, मैं उनको अपनी विनम्र सेवाएँ अर्पित करनेको तैयार हूँ।

मैं इस चरखेको जानता हूँ। इसे कुर्सीपर बैठे-बैठे पैरोंसे चलाया जा सकता है और दोनो हाथ खाली रह सकते है। परन्तु अभी मैं सार्वजनिक उपयोगके लिए इसकी सिफारिश नही कर सकता, क्योंकि यह प्रति घंटे जितना सूत कातता है वह साधारण चरखेंसे कही कम रहता है।

प्रियबाबूके चरखेसे प्रति घंटे अधिकसे-अधिक ३०० गज सूत काता जा सकता है, जबकि खादी प्रतिष्ठान द्वारा तैयार चरखेसे ८५० गजतक काता जाता है। यदि प्रियबाबू इसमें कुछ ऐसा सुधार कर सके जिससे कि इसके द्वारा खादी प्रतिष्ठानके चरखेके मुकाबले ज्यादा सूत काता जा सके तो फिर इसे लोकप्रिय बनानेमें कोई बाधा नही पड़ेगी।

बहुत महँगा

जमशेदपुरके एक पत्रलेखकने लिखा है कि खद्दर साधारण लोगो या मध्यम-वर्गके लोगोंके लिए बहुत महँगा है; यह ज्यादा नही टिकता, यह बहुत जल्दी मैला हो जाता है और इसे साफ करनेमे अतिरिक्त खर्च आता है। उन्होने आगे लिखा है कि क्या आप कृपा करके विस्तारसे यह बतायेंगे कि इस स्थितिमे हम जैसे लोग खद्दर कैसे पहन सकेंगे?

यद्यपि इस तरहके सवालोंका जवाब इन पृष्ठोंमें पहले दिया जा चुका है, फिर भी उन्हे बार-बार दोहराना व्यर्थ नही जायेगा। इस समय एक गज खद्दर निस्सन्देह मिलके एक गज कपड़ेसे महँगा है। लेकिन मेरा अनुभव प्राय. यह है कि जिन लोगोंने खद्दर अपना लिया है उसकी पोशाकमे जाने या अनजाने सादगी आ गई है। वे जब मिलका कपड़ा पहनते थे तब उन्हे जितने कपड़ेकी जरूरत पड़ती थी, उन्हे अब

खद्दर पहननेपर उतने कपडेकी जरूरत नही रहती। खद्दर मिलके कपडेके बराबर नही चलता, ऐसा अनुभव सभी लोगोका नही है। शुरू-शुरूकी हालतमें हाथका कता सूत कम बटदार होता था। इसलिए उस सूतसे बना हुआ खद्दर निस्सन्देह टिकाऊ नही होता था। लेकिन अब उसकी किस्म बेहतर हो गई है। मैं समझता हूँ कि यदि खद्दर-घरपर धोया जाये तो वह धोबीसे धुलाये जानेकी अपेक्षा दूना ज्यादा चलेगा। मैं मानता हूँ कि यदि खद्दर धुलनेके लिए धोबीको दिया जाता है तो उसकी धुलाई-का खर्च मामूली सूती कपडेकी धुलाईके खर्चसे ज्यादा आयेगा। इसका एकमात्र उपाय यह है कि खद्दर घरपर ही धोया जाये। इसमे परेशानी माननेकी जरूरत नही है। खद्दरको रात-भर साबुनके पानीसे भिगोकर रख देनेसे वह बहुत जल्द बिलकुल साफ हो आता है।

पत्रलेखक जब यह कहते है कि खद्दर बहुत जल्दी मैला हो जाता है तब मेरा खयाल है कि उसका मतलब यही होता है कि सफेद होनेसे उसपर मैल ज्यादा दिखता है। यदि उस मैलको छिपानेका खयाल हो तो इसका उपाय यह है कि जिस तरह मिलके कपडेको रँगा जाता है, बिलकुल उसी तरह इसको भी रग लिया जाये। इस समय रगीन खद्दर बहुत बडी मात्रामे उपलब्ध है। लेकिन मैं यह बात मान लेता हूँ कि यदि मध्यमवर्गके लोग कीमत और दूसरी बातोमे खद्दरकी तुलना मिलके बने हुए कपडेसे करेंगे तो खद्दर लोकप्रिय नही बन सकता। मध्यमवर्गके लोगोको खद्दरके उपयोगकी प्रेरणा राष्ट्रीयताके विचारसे मिलनी चाहिए और उनसे आशा की जाती है कि वे उसको लोकप्रिय बनानेके लिए स्वय असुविधा भी सह लेंगे।

यदि सरकार जनताकी होती तो वह कानून बनाकर खद्दरकी रक्षा करती। लेकिन यह देखते हुए कि सरकार विदेशी है और यदि वह खद्दरकी विरोधी नही है तो उसके प्रति उदासीन अवश्य है। खद्दरके राष्ट्रीय महत्त्वमें विश्वास रखनेवाले लोगो-का कर्त्तव्य है कि वे असुविधाएँ सहन करके और ज्यादा खर्च उठाकर भी खद्दरको जितना चाहिए उतना सरक्षण दे। खद्दरको इस प्रकार सरक्षण देनेकी जरूरत भारतमे उसके सर्वत्र फैल जानेतक रहेगी। केवल ५ वर्ष पहले मैंने बहुत मोटा और खराब बुना हुआ खद्दर १७ आने गज बेचा था। अब उतना बुरा खद्दर कही दिखाई नही पड़ता। इसका विकास आश्चर्यजनक तेजीके साथ हुआ है, यहाँतक कि भारतके उसी भागमे उससे अच्छा खद्दर अब नौ आने गज बिकता है। खद्दरकी कीमत कम करनेका पूरा प्रयत्न किया जा रहा है और यदि अखिल भारतीय देशबन्धु चरखा स्मारक सफल हो जाता है, और जो योजना इस समय विचाराधीन है वह कार्यान्वित कर दी जाती है तो मुझे आशा है कि कीमते और गिर जायेगी।

मै चाहता हूँ कि पाठक उस बातको याद करेंगे जो मैंने चटगाँवमे कही थी। वह यह थी कि यदि खद्दर महँगा है तो स्वतन्त्रता उससे भी ज्यादा महँगी है और जो व्यक्ति जनसाधारणसे सहानुभूति रखता है वह यह नही चाहेगा कि उसे सक्रमण-कालमे खद्दरके लिए जो ज्यादा कीमत देनी पड़ती है वह जनसाधारणको न मिले।

अपमान और चरखा

एक पत्रलेखक लिखता है:

> सौभाग्य या दुर्भाग्यसे एक धनी आदमीकी, जो एक सरकारी पदाधिकारी है, कुछ दिन पहले मुझसे मारपीट हो गई। इससे मेरी भावनाओंको ठेस पहुँची और उसने मुझे हरजाना दिया। मुझे उससे हरजानेके रूपमें १० रुपये लेनेके लिए मजबूर होना पड़ा। मैं यह सोचता हूँ कि इस रकमका सर्वोत्तम उपयोग यही होगा कि मैं इसे आपको भेज दूँ और आप कृपा करके इससे उन लोगोंके लिए, जो सचमुच पात्र हों, चरखा खरीद दें।

दानी व्यक्तिने जो यह बुद्धिमानी-भरा निर्णय किया है इसपर उसे मैं बधाई देता हूँ। चूँकि यह पत्र मुझे उस दिन मिला जिस दिन मैंने अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारकके लिए अपील प्रकाशित की और चूँकि इस स्मारकका उद्देश्य चरखेका सन्देश फैलाना है, इसलिए मैं इस रकमको खजाँचीको भेज रहा हूँ ताकि इस रकमसे जितने चरखे मिल सके खरीदकर सुपात्रोको दे दिये जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-७-१९२५

२८०. कांग्रेस और राजनैतिक दल

मैं श्री सत्यानन्द बोसके पत्रका नीचे लिखा अंश सहर्ष छाप रहा हूँ। बोस महाशय एक परखे हुए कांग्रेसी है और मेरा उनसे परिचय तभीसे है जब मैं दक्षिणी आफ्रिकामे था और जब उन्होंने मेरे स्वर्गीय साथी सोराबजी अडाजानियाको सहायता दी थी।

> आपके कांग्रेसको स्वराज्यदलको सौंपनेके प्रस्तावसे लोगोंके मनमें कुछ आशंका पैदा हुई है।
>
> कहा जा रहा है कि अबसे कांग्रेस स्वराज्यदल संगठनका पुछल्ला बन जायेगी और देशके सार्वजनिक जीवनमें उसका वैसा प्रमुख स्थान नहीं रहेगा। आपने उससे पिछले साल जो करार किया था उसमें कहा गया था कि स्वराज्य-दल केन्द्रीय विधान सभामें तथा प्रान्तीय विधानसभाओंमें कांग्रेसकी तरफसे काम करेगा। उसे देखते हुए यह आशंका और भी समुचित जान पड़ती है।
>
> निस्सन्देह, आपने उस पिछले करारको रद कर दिया है। परन्तु यह आशंका भी की जा रही है कि एक नये करारके द्वारा स्वराज्यदलको 'खुले शब्दो' में कांग्रेसके संचालन और नियन्त्रणका अधिकार दे दिया जायेगा।
>
> मैं खुद तो इस बातपर विश्वास नहीं कर सकता कि आप या पण्डित मोतीलाल नेहरू इस मार्गको अपनानेका विचार करते हैं।

यह बात निर्विवाद है कि कांग्रेसमें और उसके बाहर स्वराज्यदलका बहुमत है; इसलिए अभी तो अंशतः कांग्रेसपर उसीका नियन्त्रण रहेगा। परन्तु यह स्थिति उस करारसे भिन्न है जो उस दलको, अन्य तथ्यों और विचारोंका खयाल न करें तो भी, प्रधान स्थान दे देगा।

कांग्रेस ब्रिटेनकी पालियामेंटकी तरह होनी चाहिए। ब्रिटेनकी पालियामेंटमें विभिन्न राजनीतिक दलोंके लोग रहते हैं और जिनका उस समय बहुमत होता है वे उसके कामोंका संचालन और नियन्त्रण करते हैं। यह स्थिति चुनावके परिणामस्वरूप होती है; वह किसी बाहरी करारके द्वारा उत्पन्न नहीं होती। हमारी राष्ट्रीय कांग्रेसमें भी ऐसी ही वैधानिक व्यवस्था होनी चाहिए।

मेरा अनुरोध है कि आप अपनी स्थिति स्पष्ट करें। जो लोग स्वराज्यवादी नहीं हैं उनकी भी कांग्रेसमें आनेकी प्रबल इच्छा हो रही है। आशा है, उनके रास्तेमें रुकावट डालनेवाला कोई काम नहीं किया जायेगा।

कांग्रेस पहलेकी तरह ही प्रधान राष्ट्रीय संस्था रहनी चाहिए — फिर इस समय उसकी बागडोर चाहे किसी भी दलके हाथमें रहे।

पुनश्च :

लिखित करार कृत्रिम, अवैधानिक और अनावश्यक होते हैं और उनका फल मतभेद और फूट होता है। करार बदले तो जा सकते हैं, परन्तु मैं कहता हूँ कि करारकी जरूरत ही क्या है?

मैं नही समझता कि पण्डित मोतीलाल नेहरूके नाम लिखे मेरे पत्रमे कोई ऐसी बात है जिससे सत्यानन्द बाबूके पत्रमे व्यक्त शका उत्पन्न हो सकती हो। मेरे उस पत्र-का आशय सिर्फ इतना ही था कि मेरे कारण बेलगाँवमें काग्रेसके विशुद्ध राजनैतिक कार्योपर जो रोक लगाई गई थी वह हटा दी जाये।

पिछले वर्ष मेरी यह राय थी कि यदि भारतका शिक्षित समुदाय अपनी सारी शक्ति रचनात्मक कार्यक्रममे केन्द्रित कर दे और उसे अपना प्रधान कार्य बना ले तो हम स्वराज्यके बहुत नजदीक पहुँच जायेगे। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरी यह राय अभीतक कायम है। परन्तु मैं कुबूल करता हूँ कि मैं लोगोको इस बातका पूरी तरह विश्वास करानेमे सफल नही हो पाया हूँ। ऐसी हालतमे मुझ-जैसे आदमी-को, जिसने अपना हित जनसाधारणके हितसे एक कर रखा है और जिसका समस्त शिक्षित समाजके विचारसे मूलभूत मतभेद है, काग्रेसका विकास और मार्गदर्शन नही करना चाहिए, बल्कि शिक्षित भारतीयोको इसे करने देना चाहिए और उनके कार्यमे कोई बाधा नही डालनी चाहिए। मैं उनपर अपने विचारोका असर अब भी डालना चाहता हूँ, परन्तु कांग्रेसका नेतृत्व करके नही; बल्कि इसके विपरीत जहाँतक सम्भव हो चुपचाप उनके हृदयपर अपना प्रभाव डालकर — जैसा कि मैं १९१५ और १९१९के बीच करता था। भारतके शिक्षित समाजने भारी कठिनाइयोके बावजूद देशकी जो महान् सेवा की है, मैं उसे स्वीकार करता हूँ। उनकी अपनी एक कार्यप्रणाली है

और उनका राष्ट्रीय जीवनमे अपना एक विशिष्ट स्थान है। अन्य लोग चाहे कुछ भी कहे, किन्तु मै इस बातकी तरफसे अपनी आँखे नही मूंद सकता कि शासकोके मनपर स्वराज्यदलके अनुशासनबद्ध प्रतिरोधका सिक्का बैठा है। मेरे लिए इस कार्य-मे सहायता देनेका सबसे अच्छा ढंग यही हो सकता है कि मै उनके रास्तेमे से हट जाऊँ और अपनी सारी शक्ति एकमात्र रचनात्मक कार्यमें लगा दूं। मै चाहता हूँ कि मै इसे कांग्रेसकी सहायतासे और उसीके नामपर करूँ; किन्तु वहीतक करूँ जहाँतक भारतका शिक्षितवर्ग मुझे उसकी अनुमति दे।

मै इस बातको मानता हूँ कि भारतके शिक्षित लोग ही कांग्रेसको गति देंगे, न कि मै या वे जिन्होने फिलहाल राजनैतिक दृष्टिसे विचार करना बन्द ही कर रखा है। मेरी रायमे हमारे राष्ट्रीय विकासमे दोनोके लिए स्थान है और हर दल अपने-अपने दायरेमे रहता हुआ एक दूसरेके कार्यका पूरक और सहायक हो सकता है। चरखे और खादीमे मेरी श्रद्धा पूर्ववत् है। यह एक ऐसा कार्यक्रम है जिसमें देशके सबसे ज्यादा आगे बढे हुए नौजवानोकी शक्तियाँ लग सकती हैं। यह एक ऐसा उद्योग है जिसके लिए एक नही, सौ नही, बल्कि हजारो स्त्री-पुरुषोके एकाग्रचित्त से लगनेकी आवश्यकता है। मै चरखे और खादीकी आवश्यकता या उपयोगिताके विवादमे पडना नही चाहता। अब समय आ गया है जब खादीके सम्बन्धमे जो-जो बाते मैंने कही है उनपर अमल करके दिखा दिया जाये और ऐसा करनेमे मै सब इच्छुक लोगोका सहयोग और सद्भाव प्राप्त करना चाहता हूँ। यह तभी हो सकता है जब मै चरखेकी प्रवृत्तिको कांग्रेसके राजनैतिक अखाड़ेसे अलग कर लूं। अतएव चरखा और खद्दर काग्रेसमे अपने उस स्थानपर कायम रहेगे जो कि राजनैतिक वृत्तिके लोग खुशीके साथ उसे दे सकते है। ऐसी अवस्थामे यदि अ० भा० काग्रेस कमेटीकी आगामी बैठकमे मेरी सलाह मान ली गई तो काग्रेसके मार्गमें से राजनैतिक प्रचारकी रुकावट बिलकुल दूर हो जायेगी। और फलत स्वराज्यदल अपने पृथक् सगठनके द्वारा नही, बल्कि खुद काग्रेसके द्वारा ही अपना काम करेगा और यह वह किसी नये करारके अन्तर्गत नही, बल्कि अपने और मेरे बीच मौजूद इस समझौतेके तोड़ दिये जानेके और उसके फलस्वरूप काग्रेसके सविधानमे और काग्रेसके इस समझौतेको अमलमे लाने-वाले प्रस्तावमे सुधार कर दिये जानेके कारण करेगा। उस समझौतेने असहयोगको स्थगित करके तमाम राजनैतिक दलोके लिए कांग्रेसका दरवाजा खोल दिया था। अब उस समझौतेके तोड़ दिये जानेपर वह दरवाजा और विस्तृत हो जायेगा, क्योंकि अब राजनैतिक वृत्तिके लोगोके मार्गमे से काग्रेसकी प्रवृत्तिको रचनात्मक कार्यक्रमतक ही मर्यादित रखनेकी बाधा हट जायेगी। वे स्वराज्यदलमे शामिल होनेसे हिचकते थे और मानते थे कि वे काग्रेसमे अपनी शक्ति और योग्यताका पर्याप्त उपयोग नही कर सकते। परन्तु अब इस प्रतिबन्धके दूर किये जानेपर वे चाहे तो पूरे उत्साहसे काग्रेसमें शरीक हो सकते है, कांग्रेसके मंचसे किन्ही भी राजनैतिक प्रस्तावोंको उप-स्थित कर सकते है और स्वराज्यवादियोसे टक्कर लेकर उनपर तथा देशपर अपना प्रभाव डाल सकते है।

अब उनके रास्तेमे अनिवार्य कताई-सदस्यता बाधा नही डालेगी। उन्हे केवल अनिवार्य रूपसे खादीको अपनी राष्ट्रीय पोशाक मानना होगा। परन्तु सम्भव है कि अ० भा० कांग्रेस कमेटी मताधिकारके खादी-सम्बन्धी अशको भी रद्द कर दे। यदि ऐसा अवसर भी आ जाये तो मै उसके रास्तेमें बाधक न होऊँगा — हाँ, इसमे कोई शक नही कि इससे मुझे बहुत दु ख होगा, क्योकि मै मानता हूँ कि उस अवस्थामे शिक्षित भारत-वासी उस एकमात्र प्रत्यक्ष और ठोस कडीको भी तोड़ डालेगे जो उन्हे आम जनतासे जोड़ती है। इसलिए मैं आशा करता हूं कि अ० भा० कांग्रेस कमेटी खादीको कांग्रेसके मताधिकारमे स्थायी स्थान देगी। क्या हम घरेलू उद्योग-धन्धो और दस्तकारियोको प्रोत्साहन नही देना चाहते? क्या हम उन लाखो बहनोंको, जो बेकार रहती हैं, और जो कुछ पैसे रोजी भी कमा सके तो खुश होगी, चरखेके द्वारा कुछ पैसोकी आमदनी नही करने देना चाहते? मुझे मालूम हुआ है कि हाथकताई कांग्रेसके मता-धिकारमे पैसेके विकल्पके रूपमे कायम रखी ही जायेगी। मै समझता हूँ कि इसपर कोई आपत्ति नही हो सकती। ऐसी अवस्थामे यदि मेरे प्रस्तावोको अ० भा० कांग्रेस कमेटी मंजूर कर लेगी तो हर शिक्षित भारतवासीके लिए कांग्रेसमे सम्मिलित होना और देशबन्धुकी मृत्यु और लॉर्ड बर्कनहेडके भाषणसे उत्पन्न परिस्थितिके अनुरूप एक सयुक्त राष्ट्रीय राजनैतिक कार्यक्रम बनाना शक्य हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-७-१९२५

२८१. कांग्रेसमें बेकारी

जब मैं अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारकके उद्देश्यके सम्बन्धमें मित्रोसे विचार-विमर्श कर रहा था तब कुछ मित्रोने कहा, 'जो लोग जेलमे हैं, या निर्वासित हैं, और कांग्रेसजन असहयोगके कारण बेकार है और भूखो मर रहे है उनके आश्रितोकी सहायता करना इस स्मारकका एक-मात्र नही तो एक उद्देश्य क्यो नही हो?' बगालमें रहते हुए मेरे सामने यही सवाल अनेक रूपोमे आ चुका है। मेरी रायमे इस कार्यके निमित्त जिस कोषका सुझाव दिया गया है उसे देशके तमाम दलोसे और सारे देशमे एकत्र करना सम्भव नही है। राजनैतिक कैदियो और नजरबन्दोके कुटुम्बियोके भरण-पोषणका सवाल ऐसा है जिसके लिए बड़े एहतियातसे काम लेनेकी जरूरत है और यह बात प्रान्तोपर ही छोड देनी चाहिए कि हर प्रान्त उसे, अपनी स्थितिको देखते हुए जिस विधिसे हल करना अधिकसे-अधिक उपयुक्त समझे उस विधिसे हल करना तय करे। इस कामके लिए स्थायी कोष बनानेकी बातको भी मेरी बुद्धि स्वीकार नही कर सकती। मुझे इस विषयका दक्षिण आफ्रिकाका अमली तजरबा है और कुछ-कुछ यहांका भी है। मैंने उससे यह देख लिया है कि बहुत बार कुपात्रोंको सहायता मिल जाती है और पात्र वंचित रह जाते हैं। किसी दूरवर्ती सम्भावित कार्यके लिए स्थायी कोष बनाना उन लोगोके सामने एक प्रलोभन रखना है, जो दानके धनसे निर्वाह

करना बुरा नही समझते। मुझे बेईमानी करनेकी गुंजाइशोंसे बचनेके लिए दक्षिण आफ्रिका-मे एक आश्रम स्थापित करना पड़ा था। उसमे जिन्हे सहायताकी आवश्यकता थी और जो उसके पात्र थे, ऐसे लोगोके रहन-सहन और खानपानका और उनकी देखभालका इन्तजाम था। इस प्रबन्धके द्वारा हजारों रुपयोका अपव्यय बचाया जा सका था। वहाँ हर सच्चे सकटग्रस्तको आश्रय दिया जाता था, प्रत्येक मनुष्यके प्रति पूर्ण न्याय किया जाता था, लोग आदर्श स्थितियोमें रखे जाते थे, उनसे उपयोगी काम कराया जाता था और जो कुटुम्ब वहाँ रहते थे उनके बच्चोको शिक्षा दी जाती थी। वहाँ इतना काम उस एक व्यवस्थासे ही सम्भव हो गया था। मैंने १९२१ की भारी हड़ताल-के बाद चटगाँवमे भी यही पद्धति सुझाई थी। जबतक राजनैतिक कैदियो या नजर-बन्दोंकी व्यवस्थाके लिए मेरे सुझाये उपायो-जैसे शीघ्र-प्रभावकारी उपायोंसे काम न लिया जायेगा तबतक दानके धनके दुरुपयोगका खतरा रहेगा। सच्ची लड़ाई तो, यदि बड़े पैमानेपर होती है, तो आगे आयेगी। हम जो आजादी हासिल करना चाहते है हमें उसकी पूरी-पूरी कीमत चुकानी होगी और यदि हम भविष्यमें आनेवाले सकटकालके लिए सोच-विचारकर कोई समुचित योजना नही बनायेंगे तो हमारे सम्मुख आजादीकी लड़ाईमें भूखसे व्याकुल होकर असम्मानपूर्ण आत्मसमर्पण करनेकी सम्भावना रहेगी। इसीलिए मैं स्मारककी बातसे पृथक्, इस विषयके गुणावगुणके आधारपर, जिसे राज-नैतिक सकट कहा जा सकता है उसमें फँसे लोगोंकी सहायतार्थ कोई स्थायी कोष बनानेके विरुद्ध हूँ।

बेकार काग्रेसजनोका प्रश्न इससे अधिक जरूरी और स्थायी प्रकारका है। यद्यपि हम इस विषयमे प्रस्ताव पास कर चुके है तथापि अबतक हम अखिल भारतीय काग्रेस सेवामण्डल या प्रान्तीय सेवामण्डलतक स्थापित करनेमे सफल नही हो पाये है। इसका कारण सकल्प ही नही, बल्कि योग्यताकी कमी है। मैंने खुद इसे दो बार हल करनेकी चेष्टा की थी; परन्तु मै मानता हूँ कि मै कोई रास्ता नही निकाल सका। मै न तो यह तय कर सका कि इस सेवाके अन्तर्गत अधिकसे-अधिक कितना पैसा दिया जाये और न इस सेवाका वर्गीकरण ही कर सका। ऐसी अवस्थामें जहाँ-कही ऐसी प्रणाली-की स्थापनाका प्रयत्न किया गया वही यह आवश्यक मालूम हुआ कि इस प्रश्नको हाथ न लगाया जाये और हर शख्सका मामला उसके गुणावगुणके आधारपर तय किया जाये। अभी शायद कोई नियमित सेवा मण्डल स्थापित करना तो सम्भव नही है, परन्तु मुझे इसमे कोई शक नही कि उसकी वेतन-दरे और पद्धति दोनो धीरे-धीरे बन रही है।

रचनात्मक कार्यकी दो शाखाएँ ऐसी है जिनमे काग्रेसके सबसे अधिक कार्यकर्त्ता लगे हुए है। एक तो है खादी और दूसरी, जो खादीसे कुछ कम व्यापक है, शिक्षा है। परन्तु इन प्रवृत्तियोंके सम्बन्धमें भी हर प्रान्तको अपनी-अपनी योजनाकी जिम्मेवारी स्वय ही लेनी होगी; और चूँकि ये सेवाएँ भी आम तौरपर स्थानीय लोगों द्वारा दिये गये चन्दोंपर ही निर्भर है, इसलिए यह सिद्धान्त यहाँ भी बहुत हदतक लागू होता है कि वही सेवाकार्य जीवित रहनेके योग्य है जिसके लिए स्थानिक जनोंकी

सहायता मिलती है, क्योंकि उस सेवाकी कद्रदानीकी कसौटी सेवित जनोंकी सहायता ही है। खुद काग्रेसका अस्तित्व भी इसी बातपर अवलम्बित है कि उसके द्वारा एक स्थानिक आवश्यकताकी पूर्ति होती है। यह उस सरकारकी तरह नही है जो ऊपरसे लाद दी जाती है, और इसलिए जिनपर शासन करना चाहती है उनकी सहायतापर निर्भर नहीं होती। खादी-सेवा और शिक्षा-सेवा दोनोंके सम्बन्धमें हम यह मानकर चल रहे हैं कि सम्बन्धित लोगोंको लगातार काम करते जाना है और सेवा करनेकी अपनी योग्यता बढ़ाते जाना है। मैंने स्वयं अपने मार्गदर्शनके लिए सामान्यत: यह मान लिया है कि यदि इन दोनोंमें से किसी भी प्रवृत्तिके लिए स्थानिक सहायता नही मिलती तो इसका कारण उन सेवाकार्योंमें लगे हुए कार्यकर्ताओमे कौशल या योग्यताका अभाव होता है। मेरे सामने ऐसे एक भी मनुष्यकी मिसाल नही है जो पात्र हो; किन्तु जो फिर भी भूखों मरा हो। मेरे सामने काग्रेसके ऐसे कार्यकर्ताओंकी मिसाले मौजूद हैं जिनकी परिस्थिति विकट है, परन्तु जो वृत्तिके अनिश्चित होनेपर भी ईमानदारीसे जिन्दगी बसर कर रहे हैं। मुझे अन्देशा है कि इस स्थितिका सामना हम सबको क्रमश: और-और ज्यादा करना पड़ेगा, और भले ही हममें से कुछ लोगोंने अभीतक राष्ट्रीय जीवनमे आई हुई सादगी और सख्तीको बर्दाश्त करना नहीं सीखा हो और भले ही कुछ अपनी पुरानी आरामतलबीकी आदतोकी वजहसे अपेक्षित सादगी और सख्तीको बर्दाश्त करनेके नाकाबिल हों, किन्तु मै समझता हूँ कि यह बात तो स्पष्ट हो ही गई होगी कि अखिल भारतीय देशबन्धु-स्मारक सकटग्रस्त लोगोंको सहायता देनेवाली या कांग्रेस कार्यकर्त्ताओको धन्धा देनेवाली संस्थाका रूप क्यों नही ले सकता। हाँ, यह मानी हुई बात है कि इस स्मारकके वर्तमान उद्देश्यमे ये दोनों बाते अप्रत्यक्ष रूपसे आ जाती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-७-१९२५

२८२. खेती बनाम खद्दर

एक एम० ए०, बी० एल० लिखते हैं:[1]

इस पत्रमे बेकारीका जो सवाल उठाया गया है उसपर मैंने दूसरी जगह विचार किया है। लेकिन चूँकि इस पत्रलेखकके अतिरिक्त अन्य लोगोने भी खद्दरके सिलसिलेमे खेतीके प्रश्नको उठाया है, इसलिए मेरा अपने इस वकील पत्रलेखकके अनुरोधपर विचार करना शायद ठीक ही होगा।

मैं सबसे पहले उनको यह बता दूं कि उनका यह खयाल गलत है कि उन्हे अपने खेती सम्बन्धी प्रयोगको 'आश्चर्यजनक रूपसे सफल' बनानेके लिए केवल दो हजार रुपये ऋण लेनेकी ही जरूरत है। असल बात यह है कि खेतीके लिए भी

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें एक वकीलने गांधीजीसे बेरोजगारीकी समस्या हल करनेके उद्देश्यसे खेती और लघु उद्योगोंमें लगानेके लिए एक करोड़ रुपया इकट्ठा करनेका अनुरोध किया था।

उतना ही अध्यवसाय और अध्ययन जरूरी है जितना वकालतके लिए। पत्रलेखक इस भ्रममें भी पड़े मालूम होते हैं कि भारतमें खद्दरका सन्देश वस्त्रहीनोंको कपडा देनेके उद्देश्यसे प्रचारित किया जा रहा है। इसके विपरीत खद्दरका प्रयोजन भी ठीक वही है, जो धानका है। चरखेसे लाखो लोगोको अतिरिक्त काम मिलेगा, जिसका अर्थ होगा अतिरिक्त आमदनी और इस आमदनीसे वे अपने उस नाकाफी आहारकी कमी पूरी कर सकेंगे। आज तो उनको पर्याप्त मात्रामे आहार भी सुलभ नही है।

भारतमे खेती कोई मृतप्राय धन्धा नही है। इसकी कमियाँ दूर करके इसमे सुधार करनेकी ही जरूरत है। लेकिन खेतीमे सुधार तभी सम्भव है जब यहाँ राष्ट्रीय सरकार हो। यहाँके जनसाधारणका एकमात्र धन्धा खेती है, पर इससे उन्हे अपने शरीर-निर्वाहके लिये समुचित रूपसे आवश्यक जीविका नही मिल पाती। इसलिये खेतीके क्षेत्रमें व्यक्तिगत रूपसे किये जानेवाले किसी भी प्रयासका जनतापर कोई खास प्रभाव नही पड़ेगा। यदि पत्रलेखक अपने धन्धेसे वस्तुतः ऊब गये है और उसे छोड़ना चाहते है, तो उन्हे शेखचिल्ली-जैसे मनसूबे नही बाँधने चाहिए। उन्हे सूत कातनेमें दक्षता प्राप्त करनी चाहिए और वे देखेंगे कि वे अपने निर्वाहके लिए ही सूत नही कात रहे है, बल्कि वैसी संस्थाओके निर्माणमें लगे है जो बगालमें सूत कातने और खद्दर बनानेका प्रचार करनेके लिए चलाई जा रही हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३०-७-१९२५

२८३. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

३० जुलाई, १९२५

मौलाना अबुल कलाम आजादने मुझे सूचित किया है कि कुछ ही दिन हुए मैंने यूरोपीय संघमें जो भाषण[1] दिया था उसका विवरण अखबारोमे छपा है। उसके फलस्वरूप मुसलमानोंमे काफी वादविवाद उठ खड़ा हुआ है और वे कुछ चिढ भी गये हैं। इसका कारण यह है कि कुछ मुसलमान सज्जनोंने मेरे भाषणका यह अर्थ निकाला है कि मेरी निगाहमें कोई ऐसा योग्य और ईमानदार मुसलमान नही आया जिसे मेयरके पदपर प्रतिष्ठित किया जा सके और मौलाना साहबने भी मुझसे यही बात कही थी। अब मैंने अपने भाषणकी वह रिपोर्ट पढ ली है जिससे यह अर्थ निकाला गया है। यद्यपि यह रिपोर्ट मेरे भाषणकी शब्दशः रिपोर्ट नही है तथापि उस प्रकाशित विवरणसे जो अर्थ निकाला गया है सो नही निकलता।

मैंने जो-कुछ कहा था वह यह था कि यदि किसी मुसलमान सज्जनका नाम पेश किया जाता और यदि उसे मैं स्वयं जानता होता तो उसकी योग्यता और ईमान-

१. देखिए "भाषण : यूरोपीय संघकी बैठकमें", २४-७-१९२५।

दारीका निर्णय उन मित्रोंपर जो मेरे पास आये थे, न छोड़कर मैं स्वयं बिना किसी शर्तके उसका नाम स्वीकार किये जानेकी सिफारिश करता।

यह निश्चित है कि मौलानाने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे कभी मुझसे ऐसा नही कहा कि उन्होंने जे० एम० सेनगुप्तके नामकी इसलिए सिफारिश की थी कि निगम या उसके बाहर कोई ऐसा योग्य और ईमानदार मुसलमान नही है जो इस विशिष्ट पदका अधिकारी माना जाता। उन्होने तो केवल यह कहा था कि उनकी इस सिफारिशके पीछे एक राजनीतिक उद्देश्य है — वह यह कि स्वराज्यवादी दलको उसके सुविख्यात नेताके अभावमे यथासम्भव आकस्मिक सहायता दी जाये। मेरे भाषणकी रिपोर्टसे चाहे कोई भी अर्थ निकाला जा सकता हो, लेकिन जनता मेरे इस आश्वासनको सही मानेगी कि मेरे और मौलानाके विचारमें यह बात कभी भी नही आई कि ऐसा कोई ईमानदार और योग्य मुसलमान है ही नही, जिसके नामकी सिफारिश इस पदके लिए की जा सके। चूँकि कलकतामे मौलानाके अलावा किसी अन्य मुसलमानको मैं पर्याप्त रूपसे नही जानता हूँ इसलिए निस्सन्देह मेरे लिए यह कहना हास्यास्पद होता कि कोई ऐसा ईमानदार ओर योग्य मुसलमान है ही नही, जिसे इस पदपर स्थापित किया जा सके। वस्तुत. यदि मौलाना साहबने मुझे उपर्युक्त सुझाव न दिया होता या वह सुझाव मुझे ठीक न जँचा होता, तो मैं श्री सुहरावर्दीके दावेको पूरा करनेके प्रयत्न जारी रखता, क्योकि मुझे उनकी योग्यताके बारेमे कुछ-कुछ मालूम हो चुका था और उनके डिप्टी मेयरके पदपर प्रतिष्ठित हो चुकनेके कारण उनकी ईमानदारीके बारेमे विश्वास करनेका मुझे अधिकार था।

[अंग्रेजीसे]

फॉरवर्ड, ३१-७-१९२५

२८४. पत्र : 'स्टेट्समैन' को

१४८, रसा रोड
कलकत्ता
३१ जुलाई, १९२५

आजके 'स्टेट्समैन' मे 'सविनय अवज्ञा' शीर्षकसे जो लेख निकला है, मैं यह पत्र उसके उत्तरमें भेज रहा हूँ। आशा है, आप इसे स्थान देनेकी कृपा करेगे। आपको देशमे सविनय अवज्ञाका वायुमण्डल तैयार करनेकी मेरी इच्छामे और यूरोपीय सघमें दिये गये उस भाषणके इन शब्दोमें कि "मैं सहयोगके लिए मर रहा हूँ" — विसंगति दिखाई देती है। मैंने यूरोपीय सघमे वह भाषण २४ जुलाईको दिया था। 'यंग इडिया' गुरुवारको प्रकाशित होता है और मैं उसके लिए लेख उससे पहले, शनिवारको लिखता हूँ। आपने सविनय अवज्ञाका जो हवाला दिया है वह २३ जुलाईके 'यग इडिया' में छपा है। मैंने ये तारीखे इसलिए दी हैं कि आपको यह मालूम हो सके

कि सविनय अवज्ञाकी तैयारीका खयाल यूरोपीय संघमे दिये गये भाषणके बाद पैदा नही हुआ।

मुझे सविनय अवज्ञाकी और सहयोगकी इच्छामे कोई विसगति नही दिखाई देती। आपको याद होगा कि मैंने यूरोपीय संघमे यह बात एक पुरानी घटनाके सिलसिलेमें कही थी। असहयोगके दौरेके जमानेमे एक अग्रेजने मुझे चिढाते हुए कहा था कि आप राग तो असहयोगका अलापते है, किन्तु छटपटा रहे है सहयोगके लिए। मैंने तत्काल उनसे कहा कि बेशक, बात ऐसी ही है और यह बिलकुल ठीक है। और मै कहता हूँ कि मेरी स्थिति आज भी वही है। अन्यायका सविनय प्रतिकार मेरे नजदीक कोई नया सिद्धान्त या आचार-नियम नही है। इसमें मेरा विश्वास सदासे है और मैंने इसपर अपने जीवनमे सदा आचरण किया है। देशको सत्याग्रहके लिए तैयार करनेका अर्थ है अहिंसाके लिए तैयार करना। देशको अहिंसाके लिए तैयार करनेका अर्थ है, उसे रचनात्मक कार्योंके लिए सगठित करना; और रचनात्मक कार्य और चरखा दोनो मेरे लिए पर्यायवाची शब्द है। स्पष्ट ही आपका विचार यह जान पड़ता है कि मुझे असहयोग या सत्याग्रह करनेपर पछतावा हुआ है। यह बात हरगिज नही है। मै अब भी पक्का असहयोगी हूँ। यदि मै भारतके शिक्षितवर्गको अपने मतका बना सकूँ तो मै आज ही पूरा असहयोग घोषित कर दूँ। परन्तु मै ठहरा अमली आदमी। जो हकीकत मेरी आँखोके सामने है, मै उसे देखता हूँ। मै अपने कुछ अत्यन्त आदरणीय साथियोको यह विश्वास करानेमे सफल नही हो सका हूँ कि हमने १९२०में जिस प्रकारका असहयोग शुरू किया था उससे वर्तमान अवस्थामे भी देशका हित-साधन हो सकता है। वह इसीलिए स्थगित है। परन्तु मै आपसे यह हकीकत नही छिपा सकता कि यदि मै अपने उन साथियोको फिर अपने विचारका कायल कर सकूँ तो मै जरूर ही काग्रेससे कहूँ कि वह फिर लड़ाईका शख फूंक दे।

अपने कमजोर रहते हुए मै खुद सरकारसे स्वेच्छापूर्वक सहयोग करनेका इच्छुक नही हूँ; वह तो गुलामका-सा सहयोग होगा। मै अपनी कमजोरी तसलीम करता हूँ; इसलिए केवल सहयोगकी इच्छा करके सन्तोष मान लेता हूँ, और अपनी शक्ति बढ़ाकर उस इच्छाको पूर्ण करना चाहता हूँ। यदि मै हिंसात्मक साधनोंका कायल होता तो मै उसे कभी न छुपाता और उसका जो कुछ नतीजा होता उसे भोग लेता। मै देशसे पुकार-पुकारकर और असन्दिग्ध भाषामे कह देता कि इस देशको तबतक आजादी नही मिल सकती या उसके लिए सरकारसे तबतक सम्मानपूर्वक सहयोग करनेकी कोई गुंजाइश नही है जबतक वह अग्रेजी संगीनोंका मुकाबला अपनी संगीनोंसे करनेके लिए तैयार नही होता। परन्तु बात यह है कि मै तो सगीनोंके सिद्धान्तमें विश्वास ही नही करता। मै तो यह भी मानता हूँ कि दुर्भाग्यसे या सौभाग्यसे, यह सिद्धान्त भारतमे कदापि सफल नही होगा। सो इसके लिए एक दूसरे शस्त्रकी आवश्यकता है, और वह है सविनय अवज्ञा।

आपकी रायमें वह हिंसाकी ही तरह खतरनाक है, और यदि यही राय सरकारकी भी हो, तो उसे मेरी प्रवृत्तियोंपर रोक लगानी होगी, क्योकि मै जेलसे छूटनेके बाद

निरन्तर अपनेको या देशको सत्याग्रहके योग्य वनानेका उद्योग कर रहा हूँ। मै आपको अत्यन्त नम्रतापूर्वक सूचित करता हूँ कि यदि मै अपने क्रान्तिकारी मित्रोका पूर्ण सहयोग प्राप्त कर सकूँ — उनकी प्रवृत्तियोको पूर्णत वन्द करा सकूँ और अहिंसाका सामान्य वायुमण्डल उत्पन्न कर सकूँ तो मैं आज ही सामूहिक सत्याग्रहकी घोषणा कर दूँ और इस तरह सम्मानपूर्ण सहयोगका मार्ग प्रशस्त करूँ। मै मानता हूँ कि मै १९२१मे ऐसा नही कर पाया था और जब मैने देखा कि चौरीचौराके लोगोने मुझे धोखा दिया है तो मैने सत्याग्रहको उसके आरम्भकी घोषणाके चौवीस घटेके भीतर ही मुल्तवी कर देने और उसके वाद उसके फलस्वरूप देशमे फैलनेवाले व्यापक निरुत्साहके परिणामोका जोखिम उठानेमे कोई झिझक नही दिखाई थी।

और मै जो हिन्दू-मुस्लिम एकता, चरखा और खादीकी लगातार इतनी रट लगाता रहता हूँ सो इसलिए कि सत्याग्रहके लिए आवश्यक अहिंसा समाजमे रूढ हो चुकी है, मै इसका इत्मीनान कर लेना चाहता हूँ। मै कवूल करता हूँ कि मैने हिन्दुओ और मुसलमानोंमे अति निकट भविष्यमे एकताकी आशा छोड दी है। हाँ, अस्पृश्यता धीरे-धीरे परन्तु निश्चय ही मिट रही है और चरखा भी धीरे-धीरे परन्तु निश्चय ही प्रगति कर रहा है। परन्तु इस वीच देशका निर्दयतापूर्ण शोषण तो तेजीसे जारी ही है। इसलिए मै किसी-न-किसी तरहकी ऐसी कारगर व्यक्तिगत सत्याग्रहकी योजनापर विचार कर रहा हूँ जिससे इस दरिद्र देशके कष्ट कम न हो तो कमसे-कम उन लोगोको जिन्होने अहिंसाको अपना सिद्धान्त मान लिया है, यह समझकर कुछ तसल्ली हो जाये कि उन्होने अपनी तरफसे देशको उस दासतासे छुडानेमे, जो सारी कौमको निःसत्व वना रही है, कोई वात नही उठा रखी है।

मै यह फिर कवूल करता हूँ कि अभी मेरे पास इसकी कोई योजना तैयार नही रखी है; क्योंकि यदि रखी होती तो मै उसे आपसे या देशसे न छिपाता। परन्तु मै आपके सामने अपने मनकी सारी चिन्तन-विधि रख रहा हूँ। मुझे झूठा दिखावा करके अग्रेजोका सद्भाव प्राप्त करने या वनाये रखनेकी कोई इच्छा नही है। जिस तरह सरकार भारतके राजनीतिज्ञोके सामने शर्तें पेश करते समय अपने अस्तित्व और स्थायित्वको सुनिश्चित करनेके लिए किसी किस्मका एहतियात वरतने या तैयारी करनेमे कसर नही करती, उसी तरह मै चाहता हूँ कि मेरा देश भी उस साधनको प्रखर वनानेमे कोई कसर न रखे, जिसका प्रयोग वह उस समय कर सकता है जवकि सरकार उसकी इच्छाओकी पूर्ति न कर सके।

आप जानते ही होगे (क्योकि अव वह पत्र-व्यवहार प्रकाशित हो चुका है) कि देशवन्धुने डॉ० वेसेटके विधेयक सम्वन्धी घोषणापत्रपर दस्तखत नही किये है। उसका एक कारण यह था कि उसमे उस साधनके प्रयोगकी गुजाइश नही थी, जिसका प्रयोग विधेयकके अस्वीकृत किये जानेकी अवस्थामें किया जा सकता हो। वह साधन सत्याग्रह है। क्या आप यह पसन्द करेगे कि जव देशका सारा पौरुष नष्ट हो जाये और वह हिंसात्मक या अहिंसात्मक किसी तरहके प्रतिकारके लिए सर्वथा अयोग्य हो जाये तव कही जाकर ब्रिटिश सरकार सुलहकी शर्तें पेश करे या स्वराज्यदल या किसी दूसरे दलके

प्रस्तावपर विचार करे? यदि बात ऐसी ही हो तो मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि कोई भी आत्माभिमानी भारतवासी ऐसी गिरानेवाली शर्त स्वेच्छासे कबूल न करेगा।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
स्टेट्समैन, १-८-१९२५

२८५. भाषण: कलकत्ताकी सार्वजनिक सभामें[1]

३१ जुलाई, १९२५

महात्मा गांधीने जो इस सभाके अध्यक्ष थे, कहा कि दिवंगत देशभक्तको जो दो चीजें बहुत प्रिय थी उनमें से एक थी हिन्दू-मुस्लिम एकता; वे निश्छल भावसे, पूर्ण हिन्दू-मुस्लिम एकताके हामी थे। वे स्वदेशीके भी एक जबरदस्त हिमायती थे। जिस जमानेमें रसूल जीवित थे, वह जमाना अपेक्षाकृत पुराना था और मैं आप लोगोंको उनका सन्देश मौजूदा जमानेकी भावनाको सामने रखकर समझाना चाहता हूँ। १९२० में राष्ट्रके लिए जो कार्यक्रम तैयार किया गया था उसमें हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा स्वदेशी, दोनोंपर काफी जोर दिया गया था। किन्तु हमने इन दोनों चीजोको नया अर्थ दिया। हमने तब निर्णय किया कि इतना ही काफी नहीं है कि कुछ शिक्षित भारतीय ही कन्धेसे-कन्धा मिलाकर चलें, साथ-साथ काम करें और सम्भवतः सामाजिक रूपसे भी आपसमें मिले-जुलें। उन दिनों हमें यह आवश्यक जान पड़ा कि उस सन्देशको जनतातक पहुँचाया जाये। हम इस कार्यको अभी आधा भी नहीं कर पाये हैं, सच तो यह है कि उसे प्रारम्भ भी नहीं किया गया है। सभी लोग हिन्दू-मुस्लिम एकता चाहते हैं, किन्तु वह केवल बातोंसे नहीं मिल सकती। जब हिन्दू थोड़े-से भी प्रत्युपकार अथवा पुरस्कारकी इच्छा किये बिना मुसलमानोको सेवा करना सीख लेंगे और मुसलमान लोग भी उसी निष्काम भावसे हिन्दुओंकी सेवा करना सीखेंगे, तभी, केवल तभी हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित होगी। स्वदेशीका नया अर्थ यह नही है कि हम किसी वस्तुके — फर्ज कीजिये घड़ी या हार्मोनियमके — भिन्न-भिन्न पुर्जोको बाहरसे आयात कर लें और फिर यहाँ उनसे पूरी वस्तु तैयार करके उसे स्वदेशीके नामसे पुकारने लगें। अब स्वदेशीका अर्थ यह हो गया है कि वस्तुका प्रत्येक हिस्सा भारतमें ही बनाया गया हो। हमारी समझमें अब यह बात आ गई है कि अगर हम स्वदेशीका विकास चाहते हैं तो हमें सबसे पहले खद्दर अपनाना चाहिए। उसीमें स्वदेशीके सब पहलू सन्निहित हैं। शब्दकोशके अनुसार स्वदेशीका यह आधुनिक अर्थ है और जबतक हम इस चीज — खद्दर — को नहीं अपना लेते तबतक अब्दुर्रसूलके प्रिय स्वप्नको हम साकार नहीं बना सकते।

१. यह सभा अब्दुर्रसूलकी आठवी बरसीके अवसरपर एल्बर्ट हॉलमें आयोजित की गई थी।

महात्मा गांधीने भाषण जारी रखते हुए कहा कि मैंने आज तीसरे पहर देखा कि चोरबागानमें मारबल पैलेस नामक निवासस्थानके सामने सैकड़ों कंगालोंको भोजन दिया जा रहा था। यह दृश्य उन लोगोंके लिए जो कलकत्ताके भूखे लोगोंमें हररोज भोजन बाँटनेका आयोजन करते हैं, न तो उत्कर्षकारी है और न सम्मानजनक ही। वे यही नहीं जानते कि वे कर क्या रहे हैं। वे इस बातसे अनभिज्ञ हैं कि उनके इस भ्रममूलक औदार्यके द्वारा भारतको ऐसी हानि पहुँच रही है जो कभी पूरी होनेवाली नहीं है। जिन स्त्री-पुरुषोंको भोजन दिया जा रहा है उनमें से एक भी व्यक्ति अपाहिज नहीं है। इन भोजन करनेवालोंके हाथ-पैर उतने ही अच्छे हैं जितने इस व्यवस्थाको करनेवालोंके। क्या उनका खयाल है कि जो लोग अपनी आजीविकाके लिए काम कर सकते हैं, उन्हें खाना खिलानेमें कोई पुण्य है? जो लोग इसे पुण्य समझते हैं उनसे मेरा मतभेद है। उन्हें यूरोपीय लेखकों द्वारा अज्ञानवश या नासमझीके कारण कभी-कभी दिये गये प्रमाणपत्रसे हर्षित न हो जाना चाहिए कि भारतमें अनाथालय जैसी कोई चीज है ही नहीं। इन यूरोपीय लेखकोंका विश्वास है कि भारतमें गरीबों और भूखोंको भोजन देनेकी स्वसंगठित प्रणाली है जिसके फलस्वरूप अनाथालय खोलने या चलानेकी जरूरत ही नहीं रहती। यह कथन आंशिक रूपसे ही सच है और इस प्रणालीसे भारतका कोई हित नहीं हुआ है। हम आज निठल्लोंको भोजन दे रहे हैं। उनमें से कुछ तो चोर हैं। यदि यह प्रथा आगे भी जारी रही तो मुझे इस अभागे देशका भविष्य उज्ज्वल नजर नहीं आता। इसलिए हमें इस प्रथासे सावधान हो जाना चाहिए। मैंने ये बातें परोपकारियोंकी आलोचना करनेके लिए नहीं कहीं हैं। क्या ही अच्छा होता कि वे मेरी सुननेको तैयार होते। तब मैं उनसे कहता कि आप अपनी परोपकारिताको इस प्रकार गलत ढंगसे प्रयुक्त न करें बल्कि उन स्त्री-पुरुषोंको कुछ काम दें। क्या आपने कभी इस बातपर गौर किया है कि ये लोग बेकार क्यों हैं? भारतके लाखों लोग अपना समय व्यर्थ ही क्यों खो रहे हैं? भारत वक्तको यों ही बरबाद करनेवालोंका राष्ट्र नहीं है। यदि ऐसा होता तो हमारा राष्ट्र कबका समाप्त हो गया होता। हकीकत यह है कि उनके लिए पर्याप्त काम ही नहीं है और इसलिए हमारा यह शानदार मुल्क हमारी अज्ञानताके कारण, हममें सच्ची देशभक्तिके अभावके कारण ऐसे लोगोंका समुदाय बढ़ा रहा है जिसका खेतोंकी उपजपर गुजारा नहीं हो सकता। इसलिए इसका उपाय यह है कि उनके लिए आजीविकाके साधन उपलब्ध किये जायें। चरखेसे अधिक अच्छा आजीविकाका साधन इन लाखों लोगोंके लिए अन्य क्या हो सकता है? इसलिए यदि भारतके शिक्षित लोग जनताको हीन बनानेवाली गरीबीको दूर करना चाहते हैं तो उन्हें नित्य कमसे-कम आधा घंटा चरखा स्वयं कातना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
फॉरवर्ड, १-८-१९२५

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

सरदार जोगेन्द्रसिंहका पत्र

इधर कुछ वर्षोसे जिन मसलोंसे रात-दिन आपका दिलोदिमाग जूझता रहा है, उन्हीके बारेमें आपको कुछ लिखते मुझे सकोच होता है। मैं सचमुच ही ऐसा मानता हूँ कि उनके बारेमे आपको कोई राय देनेका मुझे शायद हक नही है। अगर है भी तो सिर्फ इस विनापर कि गाँवोंकी जिन्दगीसे मेरा सम्पर्क बहुत पासका रहा है। असल भारत तो गाँवोमे ही बसता है और गाँवोंके जीवनको मैं जितना जानता हूँ, उतना चन्द ही राजनीतिज्ञ जानते होगे। हो सकता है कि गाँवोके उद्गार सुनने-समझनेसे आपको यथार्थको समझनेमे कुछ मदद मिले।

मैं कई बरस पहले लाहौरमे श्री पादशाहके साथ आपसे मिला था। हम लोगोने चरखा और शक्ति-चालित मशीनोके आर्थिक पहलूपर चर्चा की थी। मैं आपकी रायसे सहमत नही हुआ था। और आज भी मेरा वही खयाल है कि मानव-प्रकृति अपने-आपसे, आसपासके वातावरणसे और अब तो सारे संसारमें व्याप्त वातावरणसे ऊपर उठकर उसके विरुद्ध काम करनेमे समर्थ नही हो सकती। मैं इतना जरूर मानता हूँ कि यदि कभी मानव-प्रकृतिको दिव्य प्रकाशकी झलक मिल जाये तो उसके लिए सरल जीवन और उच्च विचार ही मानवीय सुखका सबसे सच्चा मार्ग है। मेरी समझमे यह बात भी आती है कि लोग जिन चीजोको नापसन्द करते है यदि वे उनसे असहयोग करना और कष्ट-सहनको स्वीकार करना सीख ले तो वे अपनी इच्छा-को प्रभावपूर्ण बना सकते है, एक ऐसी शक्ति अपने अन्दर पैदा कर सकते है जो सबको झुका दे और जिसमे विनाश और विध्वसका कोई जोखिम भी न रहे, जैसा कि युद्धो और क्रान्तियोके बाद दिखाई पड़ता है।

ईश्वरने आपको एक सन्देशके प्रचारका काम सौंपा है। वह सन्देश है शान्तिको सुनिश्चित बनानेवाला, सद्भावनापर आधारित स्वतन्त्रताका सन्देश; मानव-सभ्यताको, आज वह अपने अन्दर अपेक्षित शील और नैतिक सयम पैदा किये बिना, प्राकृतिक शक्तियोका अधाधुध उपयोग करते जानेके जिस आत्मघातक रास्तेपर चल रही है, उससे बचानेका सन्देश। प्राच्य देशोमे तो अनादि कालसे शील और नैतिक सयमकी इस आवश्यकताको आधारभूत आवश्यकता माना जाता रहा है। आप अपने सन्देशका प्रचार करते रहे। काल उसे कभी-न-कभी जनताके हृदयमे उतार ही देगा। मातृभूमिके प्रति आपका प्रेम आपको प्रेरित करता है कि आप अपने सिद्धान्तोके जरिए वर्तमान तात्कालिक समस्याओके हल निकालनेका प्रयास करे। आपको इस बातपर भी राजी

कर लिया गया है कि आप दूसरे लोगोंको समझौतो और करारोकी नीतिपर चलकर भी देख लेने दे, क्योंकि राजनीतिज्ञोंको तनिक भी कही झुके बिना सत्यके अनुशीलनका कट्टरपथी मार्ग अपनानेकी बजाय समझौते और करारोका रास्ता कही ज्यादा पसन्द आता है। वे एक लम्बे अर्सेसे किसी एक सर्वसम्मत योजनाके आधारपर लोगोके व्यक्तिगत स्वार्थोंको हल करके उनको एकजुट करनेकी कोशिश करते आ रहे है और सोचते है कि विधानसभाओमें लगातार बाधाएँ खड़ी करते रहकर स्वराज्य हासिल कर लिया जायेगा। यों इन कोशिशोको शुरूसे ही असफलताका मुँह देखना पड़ा है, किन्तु मुझे नही लगता कि इससे उनका भ्रम दूर हो सका है। जो भी हो, आपका धर्म तो यही है कि आप अपने मार्गपर चलते रहे, आप और वे ज्यादा दूरतक साथ-साथ नही चल सकते। आपके निकट सबसे महत्त्वपूर्ण काम है आपका अपनी सारी शक्तिको मूलभूत प्रश्नोमे लगाना। आप दुनियाको दिखा दे कि असहयोग सार-रूपमे सहयोग ही है और सैन्य-शक्तिसे कही अधिक सबल है। न्याय-प्रिय व्यक्ति सहिष्णुता और सद्भावसे प्रेरित होकर विरोधियोमे समझदारी और विवेक जगानेकी खातिर स्वयं कष्ट-सहनको स्वीकार करके अन्यायको पराजित करनेके लिए जो सहयोग करते है, वही असहयोग है। भारतको इसकी जरूरत है, लेकिन भारतसे कही ज्यादा यूरोपको; और सच तो यह है कि सारे ससारको इसकी जरूरत है। यही एक चीज है जो 'लीग ऑफ नेशन्स' को, उसके इरादेको कामयाब बनानेकी शक्ति दे सकती है। यही एक चीज है जो शस्त्रहीन राष्ट्रोको उनकी गरिमा और प्रतिष्ठा बनाये रखने और अपने महत्त्वको सुरक्षित रखनेकी शक्ति प्रदान कर सकती है और यही एक शक्ति है जो शान्ति और सुरक्षाकी परवाह न करके अपना सिक्का जमानेकी धुनमे होड लगाते हुए राष्ट्रोंकी आँखोके आगेका वह अन्धकार दूर कर सकती है जो उनको युद्धोंके गर्तमे ढकेल देता है। नया विश्व इस नूतन सन्देशकी राह ताक रहा है। ईश्वरने आपको जितनी भी शक्ति दी है, उस समूची शक्तिके साथ इस सन्देशका उद्घोष कीजिए।

भोजनकी समस्या भी उतनी ही अहम है जितनी कि शान्तिकी समस्या। आपने अपने ध्वजपर चरखा अकित करके छोटे-बडे सभी राष्ट्रोकी आर्थिक स्वाधीनताके प्रतीकको सर्वोच्च स्थान दिया है। शारीरिक सुखों, भौतिक वैभव और असीमित उत्पादनके लक्ष्यके पीछे आँखें मूँदकर बेतहाशा भागते-फिरनेसे मानवको सुख नही मिलेगा। ये चीजें तो मानवकी लिप्साकी अग्निको और अधिक प्रज्वलित कर देती है। हर परिवारको अपनी जरूरतके लायक ही पैदा करना चाहिए और जिन जरूरी वस्तुओंका उत्पादन वह स्वय नही कर सकता, उनको उसे अपने पास-पडोसके क्षेत्रोंसे हासिल करना चाहिए। व्यापारको वस्तु-विनिमयका रूप दीजिए, उसे एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्रोके अन्धाधुन्ध शोषणका, ऐसी सगठित प्रतियोगिताका, रूप मत लेने दीजिए, जिसका नये सिरेसे विश्वके आर्थिक सम्बन्धोके उदारतापूर्ण समायोजनके बिना असफल होकर रह जाना एक निश्चित बात है। आप अपने अमलमे चरखेको एक प्रतीकके रूपमे ही रखिए। उसे गाँवोंके आधुनिकीकरणका प्रतीक बनाइये। हमें गाँवोमें विद्युत-शक्ति

पहुँचाकर, कपडेकी बुनाई, जलकी व्यवस्था, तेल निकालने और ऐसे हजारों अन्य उद्यमोंमे उसका उपयोग करना चाहिए। हमारे घने बसे गाँवोंमे इनकी बडी जरूरत है। विद्युत शक्तिका उपयोग हमे गाँवोंके लिए पर्याप्त भोजन और वस्त्र जुटानेमे करना चाहिए। आप इस बातसे बिलकुल ही बेखबर कैसे हो सकते है कि कोई भी देश अब इस नये युगके प्रभावसे सर्वथा अछूता नही रह सकता। यह नया युग आश्चर्यजनक करतबो और यन्त्रोंका युग है और अब इसे नित-नये आविष्कार और मानवीय प्रकृति दोनों मिलकर सचालित कर रहे है। आप गाँवोंके कार्यकर्त्ताओको गाँवोंमे ही नये-नये आविष्कारोसे, नये-नये यन्त्रोसे लैस कर सकते है, मानवीय प्रकृतिको अधिक उदात्त बनानेके लिए आप उनमे एक आध्यात्मिक सेवाभाव सचरित कर सकते है और अनेक सदियोतक प्रतिकूल परिस्थितियोमे भी भारतको सीधा खडा रहने योग्य बनानेवाले आदर्शो और परम्पराओको जीवन्त बनाये रखनेके लिए कथाओकी पुरानी पद्धतिको पुन अपनाकर आप कर्म, प्रेम और श्रमके आचार-नियम उनके मनमे बैठा सकते है।

आपने जिन समस्याओंके हलका बीडा उठाया है उनमे सबसे प्रधान है — हिन्दुओ और मुसलमानोंके बीच अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना। मुझे पूरा यकीन है कि हृदय और बुद्धिमे महान मैत्रीभावको आप अग्रेजोंतक विस्तृत रखना चाहते है। मेरा खयाल है कि आप अपने तई स्वय सहमत न होते हुए भी समझौतो और राजनीतिक दृष्टिसे की गई सुलहोकी कामयाबीकी गुजाइशके बारेमे सोचने लगे है और आप इस बातपर सहमत हो गये है कि आपके मित्रगण अपने-अपने तरीकोको इस्तेमाल करके देख ले। वे लोग इस मामलेमे नाकामयाब हो चुके है, इसलिए अब आप उनसे कह सकते है कि वे आपको अपने ही तरीकेसे काम करने दे। हो सकता है कि जनता आज आपके पीछे न चले, पर अन्तमे सत्यकी ही विजय होगी। आप अपना एक मूर्त उदाहरण पेश करके लोगोंमे सौहार्द और समझदारीका दीप जला सकते है और स्वय एकताकी भावनापर अमल करके एकता पैदा कर सकते है। इससे अधिक कुछ करना तो किसी भी मनुष्यके वशमे नही है। अवसरवादी हिन्दू और मुसलमान मुँहसे तो एकताकी बात करते है, किन्तु यह तोता-रटन्त ही है; उनका वास्तवमे इसपर कोई विश्वास नही है। ऐसे लोगोके मनमे कभी एकताकी भावना नही आयेगी। वे शक्ति और पद हथियाना चाहते है। ऐसे लोगोको आप उनके मनकी अन्ध गुहाओमे ही रहने दीजिए, जिनमे युगों-युगोसे अधेरेका ही राज है। फूट पैदा करनेवाली बातोकी छानबीन करके उनके कारणोंको दूर किया जाना चाहिए; धर्मके नामपर प्रचलित अन्ध-श्रद्धाओंका निराकरण किया जाना चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोके बीच खान-पानकी छुआछूत मिटाइये, मुसलमान यदि यही चाहे तो उनको गायकी कुरबानी देने दीजिए, यदि वे मन्दिरोंको सचमुच अपवित्र करना चाहे तो मन्दिरोके द्वार खोल दीजिए। मन्दिरोके द्वार खोलकर मित्रोके रूपमे उनको आमन्त्रित कीजिए और वे जहाँ भी अपने धार्मिक जुलूस ले जाना चाहे, उन्हे ले जाने दीजिए और पीपलके वृक्षोको काटने दीजिए। हिन्दुओको यह सब बर्दाश्त ही नही करना चाहिए, बल्कि

इन जुलूसोमे स्वयं भी शामिल होना चाहिए। मुसलमानोको भी चाहिए कि वे हिन्दुओको उनकी इच्छानुसार शख बजाने और ध्वजाएँ लेकर चलनेकी आजादी दे। मुसलमानोको इकबालके ये शब्द सदा याद रखने चाहिए "ये दोनो एक बडी लम्बी मजिलके हमराही है और दोनो रातके अघेरेमे भटक गये है।"

इतना कीजिए, बाकी सब अपने-आप हो जायेगा। इस कामकी जरूरत गाँवोमे, मन्दिरोमे, मस्जिदोमे और शहरोंमे — उन सभी जगहोपर है जहाँ कुछ अधिक सद्भावनापूर्ण लोग मिल सकते हो। इस बातकी मुनादी फिरवा दी जानी चाहिए कि अब आगेसे हम इन बातोको लेकर आपसमे नही लडेंगे और हिन्दू अपने मन्दिरों तथा मुसलमान अपनी मस्जिदोके द्वार एक-दूसरेके लिए खोल देंगे और दोनो एक-दूसरेके त्यौहारोंमे खुलकर हिस्सा लेगे।

राजनीतिक समस्या महत्त्वपूर्ण तो है, लेकिन इससे कही अधिक महत्त्वपूर्ण है जनताकी जरूरते पूरी करना, उनकी सेवा करना। एक मौसम हल चलानेका होता है, एक बीज बोने और फिर एक फसल काटनेका होता है। बुरे ढगसे खेती करनेवाला किसान अपने खेतको गलत ढगसे जोतता-बोता है और फिर जब कटाईके वक्त खेतमे जाता है तो रोता है। कुशल किसान बडे धीरजके साथ बार-बार जुताई करता है और बडी भरी-पूरी फसल काटता है। हम अभी जुताईके मौसममे ही है। हमे ज्यादा अच्छी शिक्षा, अधिक भोजन, बेहतर मकानो और अधिक बडे पैमानेपर जातियो तथा धार्मिक आस्थाओके हेल-मेलकी जरूरत है। यदि आधुनिक उपकरणो और साधनोको पूरी तौरपर मनुष्यके वशमे रखकर नियन्त्रित किया जाये तो उनसे खेतीके उत्पादनमे और मनुष्यको नैतिक एव शारीरिक रूपसे अधिक उन्नत बनानेमे बडी सहायता मिल सकती है। इस दिशामे भी कुछ काम कीजिए। विद्युत-शक्तिको झोपडियो और मकानो और खेतोमे मानवकी सेवामे लगाइए और हर मनुष्यको परिपक्व होनेमे मदद दीजिए। प्रेम, आत्म-निर्णय और स्वतन्त्रताके अपने सन्देशका खूब प्रचार कीजिए। मानव ही अपने भाग्यका विधायक है और जब वह इस सत्यकी अनुभूति कर लेगा तब सभी तात्कालिक समस्याएँ सरलतासे अपने-आप हल होती चली जायेगी। मैने यह सुझाव सिर्फ इसलिए रखे है कि आपको यह समझनेमे आसानी पडे कि जनताको जरूरत किस चीजकी है, इसलिए नही कि मै इन चीजोके बारेमे कोई बहुत अधिक ज्ञान रखता हूँ। राजनीतिकी खूबी यह है कि वह अकसर सत्यपर एक रहस्यका आवरण चढा देती है और इस प्रकार स्थायी तथा प्राथमिक महत्त्वकी चीजोकी अपेक्षा अस्थायी तथा महत्त्वहीन चीजोको अधिक उभारकर पेश कर देती है।

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

परिशिष्ट २

बी० सी० चटर्जीका पत्र

३-७-१९२५

सम्पादक,

यंग इंडिया,

महोदय,

आपने हालमें घोषणा की है कि भविष्यमें देशबन्धुके फरीदपुरके भाषणको आधार मानकर ही कार्य किया जायेगा। इस घोषणासे लोगोंके हृदयोंमें आशा और प्रेरणाका संचार हुआ है। कारण यह कि घोषणामें यह बात स्पष्ट दिखाई पड़ती है कि आपने देशके सभी कार्यकर्त्ताओंको फिरसे एक मंचपर खड़े होनेकी दावत दी है। फरीदपुर सम्मेलनके अध्यक्षीय भाषणमें यह महान् उद्देश्य बड़े ही स्पष्ट रूपमें सामने रखा गया था। उस भाषणकी आपके द्वारा ताईद किये जानेका अर्थ यही लगाया जा सकता है कि आप उस उद्देश्यको स्वीकार करते हैं। मैं अपनी बात थोड़ी स्पष्ट कर दूँ। देशबन्धुने अपना यह सुविचारित मत सभीको जता दिया था कि यदि सरकार मुडीमैन कमेटीके अल्पमत द्वारा की गई सिफारिशोंपर अमल करने लगे और बंगाल आर्डिनैंसके अधीन नजरबन्द किये गये लोगोंको रिहा कर दे तो अच्छा यही रहेगा कि देश 'सुधारों' को स्वीकार कर ले। उन्होंने अपनी इस एक घोषणासे ही स्वराज्य दल और अन्य राजनीतिक दलोंके बीच मतभेदोंकी गुंजाइश खतम कर दी है। समूचा 'लिबरल' दल (उदारपंथी दल), और सच कहें तो सुधारोंमें विश्वास करनेवाले वे सभी लोग जिनमें आत्म-सम्मान और देशाभिमानकी भावना है, तबतक मॉंटेग्यु चेम्सफोर्ड योजनासे अपनेको अलग रखनेके लिए वचनबद्ध हैं जबतक कि सरकार अल्पमत द्वारा तैयार की गई रिपोर्टको वैधानिक रूप देकर उसे लागू नहीं कर देती। क्योंकि उस रिपोर्टके पीछे उन लोगोंका व्यावहारिक अनुभव है जिन्होंने 'सुधारों' को पूरी ईमानदारीके साथ क्रियान्वित करनेमें अपनी लोकप्रियताको बरकरार रखनेकी भी कोई परवाह नहीं की। और दूसरी चीज यह है कि भारतीय कहलाने योग्य कोई भी व्यक्ति 'बंगाल आर्डिनैंस' जैसे कानूनका कष्ट भोगते हुए ग्रेट ब्रिटेनके साथ सहयोग करनेकी बात मनमें नहीं ला सकता। मतभेदोंके बावजूद आपके प्रति हार्दिक श्रद्धा व्यक्त करनेवाले समस्त राष्ट्रवादी भारतीयोंकी ओरसे, मैं अपने अन्तरकी पुकार और उत्कट भावातिरेकके साथ आपसे आग्रह करता हूँ कि आप अपनी स्वाभाविक स्पष्टवादिताके साथ सारे देशको स्पष्ट बतला दें कि सरकार यदि वास्तवमें देशबन्धुके दोनों सुझावोंको क्रियान्वित कर दे तो आप 'सुधारों' का समर्थन करेंगे या नहीं।

आपका स्वीकृति-सूचक उत्तर आपके अपने व्यक्तित्व और भारत देशके भाग्यके इतिहासमें एक सर्वथा नवीन और, मुझे कहनेकी अनुमति दीजिए कि, एक अधिक

महत्त्वपूर्ण अध्यायका सूत्रपात करेगा। उसके परिणामस्वरूप आपके ध्वजके नीचे समूचा भारत आ खड़ा होगा; सभी स्वराज्यवादी, लिबरलपन्थी तथा राष्ट्रवादी, वास्तवमें भारत माताके सभी सपूत मिलकर आपके उद्देश्यके प्रति सच्चे रहनेकी एक बार फिर प्रतिज्ञा करेंगे। इसमें यदि कुछ लोग पीछे रह भी जायेंगे तो वही जो चाँदीके चन्द टुकड़ों या कुछ तमगोंके लिए अपने भाइयोंका साथ छोड़ सकते हैं। इतिहासने ऐसे व्यक्तियोंको कभी नहीं गिना और न वह कभी गिनेगा ही। आप अपनी एक ही घोषणासे ग्रेट ब्रिटेन और एकताबद्ध भारतके बीचकी मौजूदा स्थितिको स्पष्ट कर देंगे; आप स्पष्ट कर देंगे कि भारतके लिए उत्तरदायी शासनकी व्यवस्था करनेके प्रश्नपर कौन-सा पक्ष अधिक सच्ची भावनासे काम कर रहा है। ग्रेट ब्रिटेन सचमुच ही भारतको उत्तरदायी शासनके मार्गपर आगे बढाना चाहता है या वह अपने जी हुजूरोंको ही तरह-तरहसे पुरस्कृत करना चाहता है? फरीदपुरमें दिये गये देशबन्धुके अन्तिम सन्देशकी आपकी इस पुष्टिके फलस्वरूप पुनः एकताबद्ध हुए देशभक्तोंके आगामी सम्मेलनके मंचसे आप इसी एक प्रश्नका उत्तर सरकारसे माँगेंगे। ग्रेट ब्रिटेनकी ईमानदारीकी कसौटी यही होगी कि वह मन्त्रियोंके मार्गमें आड़े आनेवाली छोटी-मोटी बाधाओंको दूर करने और एकता-बद्ध भारतकी बिना मुकदमे नजरबन्दोंकी रिहाईकी माँगों पर कितनी तत्परतासे अमल करता है। और आपके नेतृत्वमें चलनेवाले हम लोगोंकी सत्यनिष्ठाकी कसौटी यह होगी कि इंग्लैंड द्वारा भारतकी दोनों माँगें स्वीकृत होनेके बाद हम 'सुधारों' को क्रियान्वित करनेमें कितना हार्दिक सहयोग देते हैं।

कृपया उन लोगोंकी बातोंपर कान मत दीजिए जो प्रतिष्ठाको लेकर लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं। मुझे यकीन-सा है कि आपके कुछ अनुयायी आपसे कहेंगे कि आप इंग्लैंडके सामने कोई प्रस्ताव न रखें, क्योंकि उससे आपकी प्रतिष्ठापर आँच आयेगी। परन्तु मुझे आपपर पूरा भरोसा है और इसीसे मैं आश्वस्त हूँ कि व्यक्तिगत प्रतिष्ठाका प्रश्न — जो अहम्मन्यतासे पीड़ित इस देशके लिए एक अभिशाप है — आपके सीधे-सच्चे जीवन-पथको कभी मोड़ नहीं सकता, न मोड़ पायेगा। अन्तमें मैं एक बार फिर आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इंग्लैंडको अपनी ईमानदारी सिद्ध करने और भारतको अपनी खोयी हुई एकता पुनः प्राप्त करनेका यह एक अवसर अवश्य दें।

वी० एस० चटर्जी

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

परिशिष्ट ३

डब्ल्यू० एच० पिटका पत्र

प्रियवर श्री गाधी,

मै आपको एक लम्बा-सा पत्र लिख रहा था कि तभी डाकिया आपका १६ तारीखका पत्र लेकर आया। पत्रके लिए धन्यवाद! आपका बडा सौजन्य है कि आपने बंगालमे अनेक और इतने महत्त्वपूर्ण कामोमे व्यस्त रहते हुए भी मुझे पत्र लिखनेका समय निकाल लिया।

१. मुझे श्री केलप्पन नायरके नाम आपके उस तारकी प्रति मिल चुकी है, जिसमें आपने उनको वाइकोम मन्दिरके केवल पूर्वी द्वारपर धरना देनेकी सलाह दी है। मै उसीके बारेमे आपको लिख रहा हूँ। मेरा खयाल था कि आपने पूरी स्थिति-को और मेरे सुझावको गलत ढँगसे समझा है, परन्तु आपके पत्रसे मैंने देखा कि आपने उक्त सलाह अपने सामने मौजूद सभी तथ्योपर पूरी तरहसे विचार करनेके बाद और अपने तई कुछ समुचित कारणोसे ही दी थी।

२. आप चाहते है कि सरकार सडकोके उपयोगके बारेमे एक बिल्कुल ही स्पष्ट घोषणा करे। आपको शायद यह मालूम नही है कि त्रावणकोरमे सम्राट्की ओरसे एक प्रख्यापन पहले ही जारी किया जा चुका है और उसे कानूनी सत्ता प्रदान की गई है। उसमे सभी सार्वजनिक सडकोंको महाराजाकी प्रजाके लिए समान रूपसे सुलभ घोषित किया गया है। वह प्रख्यापन विस्तारित किया जा सकता है अथवा नही या न्यायालयोने कभी भी प्रामाणिक तौरपर उसकी व्याख्या की है अथवा नही, यह बात सन्दिग्ध है। बडे-बडे कट्टर सनातनी लोग अब न्यायालयमे जाकर एक ऐसा आदेश निकलवानेकी कोशिश करनेकी बाते कर रहे है कि वाइकोम मन्दिरके आसपासकी सभी सडके अवर्ण हिन्दुओके लिए बन्द कर दी जाये। मै समझता हूँ कि उन्होने ऐसा किया तो उनको सफलता नही मिलेगी और इस प्रश्नका सदाके लिए निबटारा हो जायेगा और जो भी हो, मेरी अपनी जानकारीके मुताबिक तो अभी दूसरा कोई प्रख्यापन जारी होनेकी सम्भावना नही है। और खुद मै इसकी आवश्यकता भी नही समझता।

३ एक मुद्दा और है। इसका मैंने अभीतक आपसे उल्लेख नही किया है, मगर आपको इसपर गौर करना चाहिए। त्रावणकोरके अधिकारियोको इस बातका ध्यान तो रखना ही पड़ेगा कि राज्य जिस धर्मको मानता है उससे सम्बन्धित परम्परागत पूजा और विधियोका काम विना किसी बाधाके विधिवत् सम्पन्न हो। वास्तवमे, कुछ अधिकारियोने वचन दे रखा है कि यदि मन्दिरको जानेवाली सडकोके इस्तेमालके बारेमे कुछ हेरफेर कर दिया जाय तो भी उनके कारण सार्वजनिक पूजामे कोई

व्यवधान उपस्थित नही होगा। फिलहाल इस वचनको पूरा करनेमें कुछ कठिनाईका सामना करना पड़ रहा है और सचमुच यह वचन अभी हर मायनेमे पूरा भी नही किया जा सका है। यदि थोडा और समय मिले तो अधिकारी लोग सभी कठिनाइयो पर पार पा लेगे, लेकिन उनको सावधान रहना पडेगा और फूंक-फूंककर ही कदम आगे बढाना होगा।

ऐसी कोई कार्रवाई करनेका तो प्रश्न ही नही उठता, जिससे सार्वजनिक पूजामे आम तौरपर कोई बाधा खडी हो जाये। पूर्वी मार्गपर आपके स्वयसेवकोके अधिकारको लेकर तो वे सनातनी हिन्दू भी खतरा महसूस करने लगे है जो इस बातपर सहमत हो गये थे कि स्वयसेवक जहाँतक आगे बढ चुके थे, वहाँ बने रहे। पूर्वी द्वारमे प्रवेश करनेकी आपकी इस मूक धमकीसे अधिकारियोको भी परेशानी हो रही है। अधिकाश लोग इस बातको स्वतः सिद्ध मानते है कि आप वहाँ प्रवेश करनेमे पूर्णत: समर्थ है, लेकिन आगे बढना तो क्या, आगे बढनेकी धमकी देनेका भी यह उपयुक्त अवसर नही है।

मै निस्सकोच भावसे स्पष्ट कह सकता हूँ कि पूर्वी मार्गपर धरना देना आपके अपने लक्ष्यके लिए अत्यन्त हानिकारक होगा और मै पूरे आत्मविश्वासके साथ कहता हूँ कि अधिकाश स्थानीय लोकतन्त्रवादी लोग और सभी अवर्ण हिन्दू नेता मेरे इस कथनका समर्थन करेगे। अधिकारियोको शान्त वातावरणकी जरूरत है, क्योंकि ऐसे ही वातावरणमे वे उन सनातनी हिन्दुओके साथ सफलतापूर्वक निवट सकते है जिनको अपने धर्म या समुदायके हितोंपर आँच आती दिखाई दे रही है। ऐसी हर चीज, जिससे वातावरणमे अविश्वास फैलनेकी सम्भावना है, प्रगतिके मार्गमे बाधक है, मै आपकी इस बातकी कद्र करता हूँ कि सिद्धान्त और अनुशासनका तकाजा है कि स्वयसेवकोको पीछे नही हटना चाहिए, परन्तु मुझे इस बातपर शका है कि क्या मुट्ठीभर स्वयसेवकोके नैतिक धर्मको बीस लाख अवर्ण हिन्दुओके हितोसे अधिक महत्त्व देना चाहिए। इसे देखते हुए, मै आपके सामने ये मुद्दे रख रहा हूँ

(१) कि पूर्वी मार्गके धरनेसे अधिकारी लोगोंको सनातनी हिन्दुओको शान्त करनेमे कठिनाई महसूस होती है।

(२) कि अधिकारी लोग हिन्दुओके विशाल बहुमतको अपने साथ लिये बिना कोई भी कदम नही उठा सकते और न वे उठायेगे ही।

(३) कि यदि आप स्वयसेवकोको पीछे हटा ले तो प्रगति सुगम हो जायेगी और मै कहूँगा कि आप कृपया इस बातपर गौर करे कि क्या आपके विचारसे स्थानीय रूर *Ruhr* पर कब्जा बनाये रखना आप अभी भी जरुरी समझते है? क्या आप स्थायी धरनेको वापस लेकर मन्दिरके पूर्वमे सभी प्रदर्शनोको बन्द नही करा सकते?

देवस्वोम कमिश्नर, श्री आर० कृष्ण पिल्ले मन्दिरोवाले अन्य स्थानोके सनातनी हिन्दुओके साथ बातचीत कर रहे है। उनको विश्वास है कि यदि वातावरण शान्त

रहा तो वे उनको कमसे-कम सार्वजनिक उपयोगकी आम सडकोके इस्तेमालपर केवल अपने ही अधिकारके दावेसे विरत कर ही लेंगे।

सादर,

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ११०९९) से।

परिशिष्ट ४

के० केलप्पनका पत्र

सत्याग्रह आश्रम
वाइकोम
१८ जून, १९२५

प्रियवर महात्माजी,

फर्स्ट क्लास (प्रथम श्रेणी)के मजिस्ट्रेट और पुलिसके असिस्टेंट सुपरिटेंडेंट (सहअधीक्षक) देवस्वोम अधिकारियोंके साथ यहाँ पहुँच गये है। उनका कहना है कि यदि मैं सत्याग्रह बन्द कर दूँ तो वे विवादग्रस्त मार्गोमे से आधे मार्गोको (सलग्न मानचित्र देखिए)[1] सार्वजनिक घोषित करनेके लिए तैयार है। हम इस हलको स्वीकार नही कर सकते, क्योकि यह वास्तवमे कोई हल ही नही है। वाइकोमके मन्दिरोके इन मार्गोसे तो हमे कभी कोई निस्वत ही नही रही। हम तो एक सिद्धान्तके लिए लड रहे है। हम तो शुरूसे यही कहते आ रहे है कि किसी भी व्यक्तिको अन्त्यज होनेके आधारपर सार्वजनिक मार्गोके उपयोगसे वचित नही किया जाना चाहिए। अब आधे मार्गोको उनके लिए बन्द रखकर सरकार सचमुच इसी मतकी पुष्टि करेगी कि एक जाति-विशेषके लोगोंके लिए कुछ मार्ग बन्द किये जाने चाहिए। सत्याग्रह बन्द करनेका अर्थ यही होगा कि हम उसी पुराने सिद्धान्तको स्वीकार कर लेंगे जिसका प्रतिपादन अब त्रावणकोर सरकार एक नये सिरेसे कर रही है। हम कतई ऐसा नही कर सकते। इसीलिए मैंने कह दिया है कि हम सघर्ष बन्द नही कर सकते।

यह इलाज तो रोगसे भी बदतर है। हम अभीतक लोगोंको यह आशा तो बँधाये रख सकते थे कि अन्तमे विजय हमारी ही होगी। लेकिन सत्याग्रह बन्द करनेके बाद तो हम लोगोंके सामने सिर सीधा करके भी नही चल सकेंगे। पूर्वी मार्ग क्यो नही खोला गया? यह तो नही है कि इस व्यवस्थासे किसी भी मार्गपर हमारे प्रवेशका विरोध करनेवाले सवर्ण लोग सहमत हो गये हो। यदि ये तीनो मार्ग उनके विरोधके बावजूद खोले जाने है तो चौथा मार्ग खोल देनेपर भी उनको आपत्ति नही

१. यह नहीं दिया जा रहा है।

हो सकती। तब फिर सरकारने ऐसा मूढ हल क्यो अपनाया है जिससे किसी भी पक्षको सन्तोप नही होगा। मै तो इसका कोई भी कारण नही समझ पाया, सिवाय इसके कि सरकार भी अन्त्यज प्रथाको बरकरार रखना चाहती है। यदि यह डर हो कि मौजूदा पुजारी पूजा नही करायेंगे, तो यह डर भी ठीक नही है, क्योकि सरकारने मौजूदा पुजारियोंकी हडतालकी सम्भावना देखकर उनसे भी कही अच्छे लोग पूजा करानेके लिए ठीक कर लिए है। सरकार इससे कोई अधिक मूर्खतापूर्ण हल नही सोच सकती थी।

ऐसी परिस्थितियोमे सघर्षको त्याग देना जनताकी नजरोमे बहुत ही गिर जाना होगा। कृपया बताइये कि हम क्या करे। तार द्वारा आपके उत्तरकी प्रतीक्षा है।

आपका आज्ञाकारी
के० केलप्पन

[पुनश्च .]

मैंने आज आपकी हिदायते पानेके लिए एक तार भी भेजा है।

परिशिष्ट ५

मोतीलाल नेहरूका पत्र

कलकत्ता
२१ जुलाई, १९२५

प्रिय महात्माजी,

अपने महान नेता, देशबन्धु चित्तरजन दासकी अकाल मृत्युसे स्वराज्यवादी दलको अपूरणीय क्षति पहुँची है। आपने दलको ऐसे गाढ समयमे इतनी उदारतापूर्वक जो समर्थन और सहारा दिया है, उसके लिए हमारा दल आपके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है। १९ जुलाईके अपने पत्रमे आपने जो एक अत्यन्त ही सदाशयतापूर्ण प्रस्ताव किया है, उससे तो आपके आभारका यह ऋण कई गुना बढ गया है। मुझे लगता है कि आपके इस ऋणसे मुक्त होनेका बस एक ही उपाय रह गया है—यह कि आपका प्रस्ताव पूरी विनम्रताके साथ हम स्वीकार कर ले और देशबन्धुके फरीदपुरवाले अन्तिम भाषणमे निहित भावनाके साथ, आपकी सहायतासे लॉर्ड बर्कनहेडके भाषणसे उत्पन्न हुई स्थितिका सामना करनेकी कोशिश करे।

लगता है कि लॉर्ड बर्कनहेडने देशबन्धु द्वारा रखे गये सम्मानप्रद सहयोगके प्रस्तावको ठुकरा दिया है और यह स्पष्ट कर दिया है कि हमे स्वतन्त्रताके अपने इस सघर्षमे अभी भी कई अनावश्यक बाधाओं और गलत-सलत जानकारी रखनेवाले विरोधियोसे लोहा लेना पडेगा। इसलिए इस अवस्थामें हमारा कर्त्तव्य यह है कि

हम अपने पूर्व-निर्धारित मार्गपर आगे बढते रहे और देशको इस दायित्वहीन एवं अहम्मन्य शासनकी चुनौतीका कारगर जवाब देनेके लिए तैयार करे, फरीदपुरके उस महत्त्वपूर्ण भाषणके शब्दोका प्रयोग करे तो हम कह सकते है कि "हम सघर्ष करेंगे, लेकिन औचित्यपूर्ण साधनोसे, यह ध्यान रखते हुए कि जब समझौतेका समय आये, जो निश्चय ही आयेगा, तब हमे दम्भकी भावनासे नही, बल्कि शोभनीय विनम्रताके साथ सुलह वार्तामे भाग लेना है, जिससे कि हमारे बारेमे यह कहा जा सके कि सकट कालकी अपेक्षा सफलताके अवसरपर हमारा आचरण अधिक शालीनतापूर्ण रहा।" अब आपने हमे कांग्रेसकी एकजुट शक्तिका सहारा देकर इस योग्य बना दिया है कि हम देशबन्धुका सन्देश पूरा कर दिखाये। अब ऐसी शुभ परिस्थितियोमे हमे परिणामके बारेमे कोई भी शका नही रह गई है, क्योकि परिणाम तो वही हो सकता है जो सभी युगोमे, सभी देशोमे निरपवाद रूपसे देखनेको मिला है — अर्थात् अन्तत. शक्तिपर सत्यकी विजय।

आपने स्वराज्यवादी दलको समझौतेके दायित्वसे बडी उदारताके साथ बरी कर दिया है। मै उस समझौतेके बारेमे दो शब्द कहना चाहता हूँ। आप जानते ही है कि मै और देशबन्धु दोनोने ही वर्ष-भरके दौरान समझौतेकी शर्तोमे किसी भी फेर-बदलकी बात नही सोची थी। हम चाहते थे कि उसपर पूरे तौरपर अमल करके देखा जाये। व्यक्तिगत रूपसे हम उसकी सफलतामे हर तरहसे योग देना चाहते थे। हम दोनों ही व्यस्तता और बीमारीके कारण इस दिशामे उतना-कुछ नही कर पाये जितना कि हम चाहते थे, परन्तु मै आपकी इस बातसे सोलहो-आने सहमत हूँ कि हालकी घटनाओके फलस्वरूप एक बिल्कुल ही नई परिस्थिति पैदा हो गई है और इस परिस्थितिमे काग्रेसको तत्काल प्रमुख रूपसे एक राजनीतिक सगठन बनकर अपने आपको इस स्थितिके अनुरूप ढाल लेना चाहिए। इसलिए मै आपके प्रस्तावका स्वागत करता हूँ। लेकिन इसका यह अर्थ नही होता कि काग्रेसको किसी भी मामलेमें अपना रचनात्मक कार्यक्रम त्याग देना चाहिए। हमारे सारे प्रयत्न विफल हो जायेंगे, यदि उनको समूचे राष्ट्रकी सगठित शक्तिका बल न मिला।

अब हम पूर्ण आत्मविश्वासके साथ विधान-परिषदोमे और उनके बाहर देशमे अपना काम कर सकेगे और यदि देशमे कभी सगठित कार्रवाईकी जरूरत पडी तो कहनेकी जरूरत नही कि स्वराज्यवादी दल उसमे पूरे मनसे सहायता देगा।

हृदयसे आपका,
(ह०) मोतीलाल नेहरू

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २३-७-१९२५

परिशिष्ट ६

मेडेलिन स्लेडका पत्र

६३, वेडफोर्ड गार्डन्स
कैम्पडेन हिल,
लन्दन, वेस्ट–८
पेरिस
२९ मई, १९२५

परमादरणीय गुरुदेव,

अपने प्रथम पत्रके उत्तरके लिए मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देती हूँ। मैंने तो ऐसी आशातक करनेका साहस नही किया था कि आप उत्तर देंगे। आपका एक-एक शब्द मैंने बडी ललकके साथ हृदयगम कर लिया है, और अब मैं आपको फिर पत्र लिखनेका साहस कर रही हूँ। क्योकि मैंने स्वय ही अपने लिए परीक्षाका जो वर्ष चुना है, उसका आधेसे-अधिक बीत चुका है।

मेरी प्रथम प्रेरणामे किंचित भी कमी नही आई है, बल्कि आपकी सेवा करनेकी मेरी इच्छा अधिकाधिक उत्कट होती गई है। मेरे अन्तरको प्रेरित करनेवाली प्रेरणाकी तीव्रताको व्यक्त करना शब्दोके वसका नही, इसीलिए मैं अपने समूचे हृदयसे ईश्वरसे यह माँगती हूँ कि मुझे अपने हृदयका प्रेम आचरणमे व्यक्त करनेकी सामर्थ्य दे। मैं जो भी काम करूँगी वह कितना ही तुच्छ क्यो न हो पर उसके पीछे एक बिलकुल ही सच्चा मन, एक परम शुद्ध भावना तो होगी ही।

और अब मैं आपसे एक अनुरोध करती हूँ—अन्तरकी गहराइयोसे निकला एक अनुरोध

आप मुझे अपने आश्रममे आनेकी अनुमति दीजिए ताकि मैं वहाँ रहकर कताई और बुनाई सीख सकूँ, और नित्य प्रतिके जीवनमे आपके आदर्शो और सिद्धान्तोंपर अमल करना सीख सकूँ, और बेशक, यह सीख सकूँ कि मैं भविष्यमे आपकी सेवा किस रूपमे करनेकी आशा कर सकती हूँ। आपके उद्देश्यकी एक सुयोग्य सेविका बननेके लिए मैं ऐसी तालीम निहायत जरूरी समझती हूँ, और यदि आप मुझे इस रूपमे स्वीकार करे तो मैं अपनी ओरसे भरसक प्रयत्न करूँगी कि आपकी बिलकुल ही अयोग्य शिष्या सिद्ध न हो पाऊँ।

इस बीच मेरी तैयारी यथा-शक्ति जारी है। मैं कताई और बुनाई करती हूँ (केवल ऊनसे ही, क्योकि फ्रास और इग्लैंडमे रुईसे कातना-बुनना शायद कोई जानता ही नही)। मैं अनेक कृपालु भारतीय मित्रोंकी सहायतासे हिन्दुस्तानीके पाठोंको पढती हूँ। और इससे कितनी नई बाते सामने आ रही है। मैं भारतीय विचारधारासे जितनी अधिक परिचित होती जाती हूँ उतना ही अधिक मुझे ऐसा लगता है मानो बहुत

भटकनेके बाद आखिरकार अपने घरमें पहुँच रही हूँ — वह घर जो मुझसे कबका छूट गया था।

मैं अपना जीवन अधिकसे-अधिक सरल बनाती जा रही हूँ — जितना कि इन परिस्थितियोंमें सम्भव है। मैंने सभी किस्मकी शराब, बीअर इत्यादिका पान करना बिलकुल छोड़ दिया है, और मैं अब किसी भी तरहके मासका सेवन नही करती।

मेरे हृदयमें अपार आह्लाद और तीव्र विकलता है — आह्लाद इस बातका कि मैंने अपना सर्वस्व आपको और आपकी जनताको अर्पित कर दिया है और विकलता इस बातकी कि मेरे पास न्यौछावर करनेके लिए इतना कम — एक कण-मात्र है।

मैं उस दिनके लिए ललक रही हूँ जब मैं भारत-भूमिपर पैर रखूँगी। लेकिन अभी तो पाँच लम्बे महीने पड़े हुए हैं। मैं ६ नवम्बरको बम्बई पहुँचूँगी और यदि आश्रम आनेकी अनुमति मिल गई तो उसी शाम गाडी पकडकर दूसरे दिन सुबह अहमदावाद पहुँच जाऊँगी।

तो अनुमति है आदरणीय गुरुदेव?

इस पत्रका उत्तर स्वय लिखनेका कष्ट उठानेकी बात कृपया मत सोचिए, पर आप इसके उत्तरमें किसीके जरिये एक-दो शब्द शायद कहलवा दे सकते हैं।

सदा ही आपकी विनम्र और सबसे निष्ठावान सेविका,

मेडेलिन स्लेड

[पुनश्च :]

अपने काते हुए ऊनके दो छोटे-से नमूने साथ भेज रही हूँ।

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० १०५४१) से।

सामग्रीके साधन-सूत्र

'अमृतबाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक। सर्व प्रथम १८६८ मे इसका प्रकाशन बंगला साप्ताहिकके रूपमे प्रारम्भ किया गया था। १८९१ से इसे दैनिक पत्रका रूप दे दिया गया।

'आज': वाराणसीसे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और, गांधीजीसे सम्बन्धित कागज-पत्रोंका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

'नवजीवन' (१९१९-३१): गांधीजी द्वारा सम्पादित अहमदाबादसे प्रकाशित गुजरातीका एक साप्ताहिक, जिसका प्रकाशन कभी-कभी सप्ताहमे दो बार भी होता था। इस पत्रका प्रकाशन ७ सितम्बर, १९१९ को प्रारम्भ किया गया, किन्तु मूलत यह 'नवजीवन अने सत्य' नामक गुजराती मासिक (१९१५-१९१९) था। १९ अगस्त, १९२१ से इसका हिन्दी संस्करण भी प्रकाशित होने लगा।

'फॉरवर्ड': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक। इसके संस्थापक चित्तरंजन दास थे।

'बापुना पत्रो — मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): स० मणिबहेन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) अनु० मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, जो स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमे सुरक्षित है।

'यंग इंडिया' (१९१८-३१): बम्बईमे जमनादास द्वारकादास द्वारा प्रारम्भ किया गया अंग्रेजीका साप्ताहिक, ७ मई, १९१९ से गांधीजीकी देख-रेखमे यह सप्ताहमे दो बार प्रकाशित होने लगा, अक्तूबर, १९१९ से गांधीजीके सम्पादनमे अहमदाबादसे साप्ताहिकके रूपमे छपने लगा।

'सर्चलाइट': पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय तथा संग्रहालय, जिसमे गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित है।

'स्टेट्समैन': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक। १८७८ में इसका प्रकाशन साप्ताहिकके रूपमे शुरू हुआ था, फिर १८८३ से यह सप्ताहमे तीन बार छपने लगा और १८८९ से दैनिक बन गया।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ मईसे ३१ जुलाई, १९२५ तक)

१. मई: गांधीजी सुबह कलकत्ता पहुँचे।

'अमृतबाजार पत्रिकामें' प्रकाशित सन्देशमें जनतासे खद्दर खरीदनेका अनुरोध किया।

'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिके साथ हुई भेंटमें निकट भविष्यमें हिन्दुओं और मुसलमानोंमें एकता स्थापित हो जानेकी आशा व्यक्त की।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट की।

मिर्जापुर पार्कमें आयोजित सार्वजनिक सभामें दिये गये भाषणमें जनतासे हिन्दी सीखनेका अनुरोध किया और कहा कि यदि जनता रचनात्मक कार्यक्रम-को सफल बनानेमें सहायता करे तो "हमारी बेडियाँ स्वयमेव टूटकर गिर जायेंगी।"

२. मई. फरीदपुरमें औद्योगिक प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

अखिल बंगाल हिन्दू सम्मेलनमें दिये गये भाषणमें अस्पृश्यताको दूर करनेकी अपील की तथा शिक्षित लोगोंसे चरखा और खद्दर अपनानेको कहा। बंगाल प्रान्तीय युवक सम्मेलनमें भाषण करते हुए तरुणोंको ब्रह्मचर्यका पालन करने तथा शुद्ध जीवन बितानेकी सलाह दी।

३. मई: मुसलमानोंकी सभामें भाषण दिया।

छात्रों द्वारा मानपत्र भेंट करनेपर उनसे सूत कातनेका अनुरोध किया, अस्पृश्योंके साथ हुई बातचीतमें उन्हें राष्ट्रीय कार्योंमें लग जानेकी सलाह दी।

फरीदपुर नगर निगमने अभिनन्दन-पत्र भेंट किया।

चित्तरंजन दासकी अध्यक्षतामें हुई बंगाल प्रान्तीय परिषद्में गांधीजीने कहा कि स्वराज्य-प्राप्ति केवल अहिंसा और कताई द्वारा ही सम्भव है।

४. मई: बंगाल प्रान्तीय परिषद् की बैठकमें भाग लिया।

५. मई· प्रवर्तक आश्रम, चन्द्रनगरमें भाषण दिया।

६ मई: सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जीसे उनके निवास स्थानपर मिले।

अष्टांग आयुर्वेद विद्यालय अस्पतालका शिलान्यास किया।

७ मई: कवि-गुरुके जन्म-दिवसपर उन्हें शुभकामनाएँ दी।

बौद्ध विहार, कलकत्तामें आयोजित बुद्ध जयन्ती समारोहकी अध्यक्षता की।

पूर्वी बंगालकी यात्रा आरम्भ की।

८. मई: लोहागंज (ढाका) में भाषण दिया और वहाँ उन्हें ५,५०० रु० की थैली भेंट की गई।

मलिकन्दाकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

९. मई · दिघीरपुरकी राष्ट्रीय पाठशाला देखने गये। सार्वजनिक सभामे सघ निकायने अभिनन्दन-पत्र भेट किया।
तालटोलाके कार्यकर्त्ताओकी सभामे भापण दिया।
मलखानगरमे भाषण दिया।
एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाके प्रतिनिधिसे भेट की।

१०. मई : पूरन बाजारके व्यापारी सघकी सभामे भापण दिया।
चाँदपुरकी सार्वजनिक सभाओमे मानपत्र प्राप्त किये और भाषण दिये।
चाँदपुरकी राष्ट्रीय पाठशालामे छात्रोसे मिले और उनसे प्रतिदिन सूत कातनेका आग्रह किया।

१२ मईसे पूर्व . हरदयाल नागके साथ हुई भेटमे स्वराज्यवादियोसे मौलिक विपयोपर मतभेद होनेका खण्डन किया।

१२ मई : सुबह चटगाँव पहुँचे।
सार्वजनिक सभामे कहा, "खद्दरके विना सविनय अवज्ञा असम्भव है।"

१३ मई : विद्यार्थियो और व्यापारियोकी सभाओमे भापण दिये।
लॉर्ड मैस्टन ब्रिटिश ससदके दोनो सदनोंकी भारतीय मामलोसे सम्बन्धित सयुक्त समितिके अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

१४ मई . गाधीजीने नवाखलीमे सार्वजनिक सभा और स्त्रियोकी सभामे भाषण दिये।
जिला अध्यापक सघके प्रतिनिधियोसे भेट की।

१५ मई : कोमिल्लाकी सार्वजनिक सभामे अभिनन्दन-पत्र भेट किये गये;
गाधीजीने विद्यार्थियोंके समक्ष भाषण दिया।
कोमिल्लाके अभय आश्रममे गये।
विक्रमपुरके कार्यकर्त्ताओके समक्ष भापण दिया और घोपणा की कि मै काग्रेससे अलग सगठन बननेके खिलाफ हूँ।

१६ मई : कोमिल्लामे स्त्रियोकी सभामे वोलते हुए उन्हे सीताके आदर्शका अनुकरण करनेको कहा।

१७ मई · ढाकाकी सार्वजनिक सभामे लोगोसे अपना काम अपनी मातृभाषा या हिन्दीमे चलानेका अनुरोध किया।
श्यामपुरमे नेशनल कालेज अस्पतालकी इमारतका शिलान्यास किया।

१९ मई · मैमनसिंहमे महिलाओंकी सभामे भापण दिया।
महाराजाके महलमे आयोजित एक सभामे साम्प्रदायिक एकता तथा कताईकी आवश्यकतापर भाषण दिया।
जमीदारोसे बातचीत की।

२१ मई : दीनाजपुरके अस्पृश्योको अपनी दशाके सम्बन्धमे अधीर न होनेकी सलाह दी।
सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

विद्यार्थियोंके समक्ष भाषण दिया।

स्थानीय जमीदारोंसे दी गई भेटमे चरखेके आर्थिक और राजनैतिक महत्त्वपर जोर दिया।

२२ मई: बोगूड़ामे कार्यकर्त्ताओके स्कूलमे भाषण दिया।

सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

तलोड़ामे डॉ० प्रफुल्लचन्द्र राय द्वारा सचालित खादी केन्द्रका निरीक्षण किया।

२५ मई: 'फॉरवर्ड' को दिये सन्देशमे चरखा कार्यक्रमको आगे बढानेकी आवश्यकतापर जोर दिया।

२८ मई: कलकत्ता लौटकर एक सभामें युवकोंसे गाँवोंमे जाने तथा जनताके साथ मिलकर काम करनेका अनुरोध किया।

२९ मई: बोलपुर पहुँचकर शान्तिनिकेतनके लिए रवाना हुए।

३० मई: रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मिले और उन्हे चरखा तथा खद्दरका कार्यक्रम विस्तारपूर्वक समझाया।

३१ मई: शान्तिनिकेतनके विद्यार्थियोके समक्ष भाषण करते हुए उनसे आधा घटा चरखा कातनेके लिए कहा।

डॉ० मोरैनोके साथ आग्ल-भारतीय प्रश्नपर सविस्तार बात की।

३ जून: दार्जिलिंग पहुँचे; चित्तरजन दासके साथ रहे।

६ जून: ईसाई धर्म प्रचारिकाओके समक्ष भाषण देते हुए अपने आन्दोलनका उद्देश्य आत्मशुद्धि बताया तथा लोगोंकी सेवा करनेपर जोर दिया।

१० जून: जलपाईगुड़ीमें व्यापारियो और व्यवसायियोसे अनुरोध किया कि वे अपने धनको और सूझबूझको भारतके कल्याणके लिए इस्तेमाल करे।

११ जून: नवाबगज में विद्यार्थियोंके समक्ष भाषण दिया।

१२ जून: नवाबगज जिलेमे उपशीके बिझारी स्कूलमें गये।

भोजेश्वरकी सभामे भाषण दिया।

१३ जून: मदारीपुरकी सार्वजनिक सभामे भाषण दिया और सार्वजनिक पुस्तकालयका निरीक्षण किया।

१४ जून: बारीसालकी सार्वजनिक सभामे भाषण दिया।

ऑक्सफोर्ड मिशनका बुनाई विभाग देखने गये और कहा कि कताई ही एकमात्र पूरक धन्धा बन सकता है, बुनाई नही।

१६ जून: दार्जिलिंगमे चित्तरजन दासका देहावसान।

१७ जून: खुलनामें गाधीजीको चि० र० दासके स्वर्गवासका समाचार मिला; देशभाइयोंसे अपील की: "उन्होंने (चि० र० दासने) काम जहाँ छोड़ा है, वहीसे उसे हमे उठा लेना चाहिए।"

सार्वजनिक सभामे चि० र० दासको श्रद्धाजलि अर्पित की।

१८ जून: कलकत्तामे चित्तरजन दासकी शवयात्रामे शरीक हुए।

२२ जून: देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए अपील जारी की।

२३ जून. म्युनिसिपल मार्केट, कलकत्ताकी सभामे शामिल हुए।

२४ जूनसे पूर्व: 'स्टेट्समैन' और सर्चलाइट' के प्रतिनिधियोसे भेट दी।

२४ जून: 'इग्लिशमैन'के प्रतिनिधिको दी गई भेटमे स्वराज्यवादी दलमें कोई फूट होनेका खण्डन किया तथा कलकत्तामे एक महीना और ठहरनेकी इच्छा व्यक्त की।

२६. जून. चित्तरजन दासकी मृत्युपर गुजरातियो द्वारा आयोजित एक शोकसभाकी अध्यक्षता की।

२८ जून: 'नवजीवन'मे पहली जुलाई (देशबन्धुका श्राद्ध-दिवस) को देशभरमे शोक-सभाएँ आयोजित करने तथा चरखा चलानेकी प्रतिज्ञा लेनेके लिए अपील की।

३० जून: यूनिवर्सिटी इन्स्टीट्यूट, कलकत्तामे शोक-सभाकी अध्यक्षता की।
प्रोफेसर सुशील कुमार रुद्रका देहान्त।

१ जुलाई: चित्तरजन दासके श्राद्धमे भाग लिया।
सार्वजनिक सभामे भाषण दिया, स्त्रियोकी सभामे देशबन्धु-स्मारक कोषके लिए चूड़ियाँ और धन प्राप्त हुआ।

२ जुलाई: खिदरपुर, कलकत्तामे बकरीदके मौकेपर हिन्दू-मुस्लिम दगा भडक उठा। गाधीजी अबुल कलाम आजादके साथ दगाई क्षेत्रोमें गये और दोनो सम्प्रदायोके लोगोको शान्त किया।
एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको दिये गये वक्तव्यमे हिन्दुओको दोषी ठहराया।

४ जुलाई: खड़गपुरमे इडियन इन्स्टीट्यूटका निरीक्षण किया, बादमे इडियन रिक्रिएशन ग्राउडमे आयोजित विशाल सभामे भाषण देते हुए हिन्दू-मुस्लिम एकताकी आवश्यकतापर जोर दिया।

५ जुलाई: 'नवजीवन'में "दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास" का धारावाहिक प्रकाशन, जो उपवास तथा अन्य कारणोसे रुक गया था, फिरसे आरम्भ किया।

७ जुलाई: मिदनापुरमे छात्रोकी सभा, महिलाओकी सभा तथा सार्वजनिक सभाओमे भाषण दिये।

९ जुलाई: स्वराज्यवादी पार्षदोंकी सभामे उनसे जे० एम० सेनगुप्तको मेयर चुननेका आग्रह किया।

१२ जुलाई: राजशाहीका सार्वजनिक पुस्तकालय देखने गये; सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

१६ जुलाई: स्वराज्यवादी दलकी महापरिषद्की बैठकमे भाषण दिया। इसमें मोतीलाल नेहरू भी उपस्थित थे।

१७ जुलाई : स्वराज्यवादी दलकी महापरिषद्की बैठकमे कहा कि यदि स्वराज्यवादी कताई सदस्यताको समाप्त करना ही चाहते हैं तो मैं उनकी माँगको मान लूंगा, लेकिन फिर काग्रेसकी अध्यक्षतासे त्यागपत्र दे दूंगा।

१९ जुलाई : मोतीलाल नेहरूको बेलगाँव समझौतेके समस्त दायित्वोसे मुक्त करते हुए पत्र लिखा।

२४ जुलाईसे पूर्व : कलकत्तामे मारवाड़ी अग्रवाल सम्मेलनमे दिये भाषणमें बाल-विवाह-की निन्दा की।

२४ जुलाई : क्रिस्टोदास पालकी पुण्यतिथिके अवसरपर युनिवर्सिटी इन्स्टीटयूटमे आयोजित सभामें भाषण दिया।

ग्रैंड होटलमे हुई यूरोपीय सघकी बैठकमे भाषण देते हुए कलकत्ताके मेयरके चुनावमे अपने हस्तक्षेपका स्पष्टीकरण किया।

२७ जुलाई : 'फॉरवर्ड'को दिये सन्देशमे लोकमान्यकी स्मृतिका सम्मान करनेके हेतु कातने और खद्दर पहननेका अनुरोध किया।

२८ जुलाई : कलकत्तामे यग मैन्स क्रिश्चियन एसोसिएशनमे ईसाई धर्मप्रचारकोके समक्ष भाषण दिया।

२९ जुलाई. वेलेजली स्कवेयरमे हुई आग्ल-भारतीयोकी सभामे भाषण दिया।

३१ जुलाई : कलकत्ताकी सार्वजनिक सभामे हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा गरीबीको दूर, करनेके लिए चरखा कातनेकी आवश्यकतापर जोर दिया।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

ड

त

द

ध

न